मासिक प्रकाशन

कादम्बिनी

भारतीय भाषाओं की विशिष्ट पत्रिका

अप्रैल १९७३

हिन्दुस्तान टाइम्स प्रकाशन

110510

शुद्ध खाद्य पदार्थों के लिये एगमार्क मुहर देखिये

एगमार्क मुहर लगा घी,
मक्खन, तेल, पिसे मसाले, गेहूं का आटा,
शहद, अंडे और रोजाना के प्रयोग की
अन्य कई चीजें शुद्ध
होती हैं।

शुद्ध खाद्य पदार्थ काम में लाइये
एगमार्क वस्तुएं खरीदिये

davp 72/553

शेवर स्विश
हाईजेकर
यात्री आतंकित हो उठे हैं।
हमेशा की बात है : स्विश से दाढ़ी
मात नहीं दे सकता!

निम्नलिखित शब्दों के जो सही अर्थ हों उन पर चिह्न लगाइए और पृष्ठ ८ पर दिये गये उत्तर से मिलाइए

• विशालाक्ष

१. **चरम**—क. अंतिम, ख. चमड़ा, ग. मृत्यु, घ. एकमात्र।

२. **रंगरलिया**—क. रंगरेज, ख. आमोद-प्रमोद, ग. होली, घ. हुल्लड़।

३. **अंचल**—क. छाती, ख. मध्य स्थान, ग. पल्ला, घ. प्रदेश।

४. **प्रवर्तन**—क. स्थापना, आरम्भ या प्रचलित करना, ख. अनुसंधान, ग. विधान, घ. सद्व्यवहार।

५. **विक्षिप्त**—क. क्षुब्ध, ख. दुःखी, ग. बीमार, घ. जिसका दिमाग ठिकाने न हो।

६. **उचक्का**—क. बदमाश, ख. उचकने वाला, ग. तमाशबीन, घ. उचक-उचककर, घात लगाकर चीजें ले भागने वाला।

७. **द्वारिका**—क. प्रहरी, ख. एक नगरी, ग. दरवाजा, घ. भारत का द्वार।

८. **सतीर्थ**—क. प्रसाद-प्राप्त, ख. गंगाजल-सहित, ग. गुरुभाई, घ. तीर्थ-यात्री।

९. **अलबेला**—क. सुंदर, ख. प्रसन्न, ग. विचित्र, घ. छैलछबीला।

१०. **लघुचेता**—क. क्षुद्र विचारों-वाला, ख. सूक्ष्मदर्शी, ग. सरलता से जाग जाने वाला, घ. भक्त।

११. **प्रमाद**—क. असावधानी, ख. पागलपन, ग. उत्तेजना, घ. भीरुता।

१२. **चर्वित-चर्वण**—क. चबाया हुआ चबेना, ख. वही बात या काम बार-बार कहना या करना, ग. पागुर करना, घ. पारायण करना।

उत्तर में प्रयुक्त संकेत-चिह्न

तत्.—तत्सम, सं.—संज्ञा। पुं.—पुंलिंग। स्त्री.—स्त्रीलिंग। उ.—उभयलिंग। अ.—अव्यय। हि.—हिंदी।

आपके शब्द-ज्ञान की परीक्षा

१० या अधिक सही........ जीनियस
९–७ सही.............. उत्तम
६–५ सही............. साधारण

> **अच्छा शब्द बोलना एक तरह का अच्छा कार्य है, फिर भी शब्द कार्य नहीं है। —शेक्सपियर**
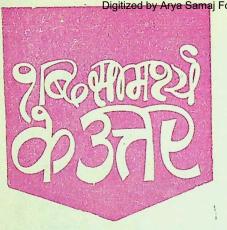
१. **चरम**--क. अंतिम, पराकाष्ठा का, चोटी का, चूड़ांत। **चरम** सीमा, **चरम** उत्कर्ष, **चरम** लक्ष्य, **चरम** पंथी। तत्., वि., उ. लि.। **चर्म, परम, चरमर।**

२. **रंगरलिया, रंगरली, रंगरेलियां**--ख. आमोद-प्रमोद, क्रीड़ा, केलि में मग्न हो जाना। मां बीमार पड़ी है, इन्हें **रंग-रलिया,** सूझी है। हि., सं., स्त्री.। **रंग-रलना,** या **रेलना, रंग-रस, रंग-रसिया, रंगराता, रंगमहल।**

३. **अंचल**--ग. साड़ी का पल्ला, आंचल, देश का सीमावर्ती क्षेत्र। वहू का **अंचल** भर दिया; हिमालय का या चम्बल का **अंचल**। तत्., सं., पुं.।

४. **प्रवर्तन**--क. स्थापना, आरम्भ या प्रचलित करना। उन्होंने नयी संस्था, धर्म, नीति का **प्रवर्तन** किया। तत्., सं., पुं.। **प्रवर्तित, प्रवर्तनीय, प्रवर्तक।**

५. **विक्षिप्त**--घ. जिसका दिमाग ठिकाने न हो, विभ्रांत, पागल, व्याकुल। वह तो **विक्षिप्त** हो गया है, उसकी सलाह का क्या मूल्य! **विक्षिप्तता, विक्षेप।**

६. **उचक्का**--घ. उचक-उचककर, घात लगाकर चीजें ले भागने वाला--"चले **उचक्के** देदे धक्के लूटें माल मवासी कै।" कभी-कभी --अति कुतूहली। हि., सं.-वि., पुं.।

७. **द्वारिका, द्वारका**--ग. दरवाजा, द्वार, इस नाम की नगरी, जो एक मनीषी के कथनानुसार 'भारत का द्वार' के रूप में विकसित हुई थी। सं., स्त्री.।

८. **सतीर्थ**-- ग. गुरुभाई, धार्मिक शिक्षा में सहपाठी। सुदामा कृष्ण के **सतीर्थ** थे। तत्., सं.--वि., पुं.। **सतीर्थ्य, सातीर्थ्य।**

९. **अलबेला**-- घ. छैलछबीला, बांका, बनाठना, मनमौजी, अनोखा। वह **अलबेला** जवान है। हि., वि., पुं.। **अलबेली, अलबेलापन।**

१०. **लघुचेता**--क. क्षुद्र विचारों वाला, ओछा व्यक्ति, जो हर बात की बुराई या कमी ही देखता हो। यदि नेता **लघुचेता** हों तो समाज रसातल को ही चला जाएगा। तत्., वि., पुं.। **लघुता, लघुमति।**

११. **प्रमाद**--क. असावधानी, भूल। **प्रमाद** के कारण यह अपराध हो गया। तत्., सं., पुं.। **प्रमादी, प्रमादिका, प्रमद, प्रमदा।**

१२. **चर्वित-चर्वण**--ख. वही बात या काम बार-बार करना, पिष्टपेषण। यह **चर्वित-चर्वण** बहुत हो चुका, अब कोई नयी बात हो तो बोलिए। तत्., सं., पुं.। **चर्व्य, चर्वित, चर्वण।** ●

'समय के हस्ताक्षर' अमिट होते हैं, इसका प्रमाण है मार्च अंक में प्रकाशित 'आज की हिंदी कहानी : कुछ नये प्रश्न' विषय पर टिप्पणी। समकालीन कहानीकार को सर्वथा अपनी स्थिति को गम्भीरता से पहचानने और समझने की आवश्यकता है, क्योंकि इतने विराट, व्यापक परिवेश के बावजूद समकालीन कहानी-विधा कुछ संकुचित दायरों में ही घूमती नजर आती है।

'नवगीत : एक परिचर्चा' कई पहलुओं से विचारणीय थी। उपलब्धि से अधिक सम्भावनाएं ही विचारणीय हैं। पहली बार का दावा बिलकुल झूठ है। इसके अनेक साक्ष्य हैं। कितने नवगीतकार हैं जो नये ढंग के गीत लिखते हैं? बिलकुल साफ बात है कि चाहे गीत हो या नवगीत, यदि आज के जीवन के लिए उसमें प्रतिबद्धता नहीं है तो वह आज का गीत नहीं रहेगा। नवगीत ही क्यों, गीत नामक विधा ही मेरे लिए अंतरंगता का एक पहलू है। समकालीन जटिल और निर्मम स्थिति को नवगीत कहां तक ढो सकेगा, कहना कठिन है। गीत की मूल प्रकृति ही इसके अनुकूल नहीं है। गिरिजाकुमार माथुर का वक्तव्य विशेष विचारोत्तेजक है। उनका यह कथन पूर्णतया सत्य है कि 'आज के गीत का दुर्भाग्य है कि गीत दिन-ब-दिन बाजारू होता जा रहा है।'

आज के युग में बौद्धिकता भले ही किसी भी विधा में व्यंजित हो रही हो किंतु उसकी रागात्मकता का सच्चा सम्वाहक इस समय गीत ही है। और यों तो सभी स्वयं को मसीहा ही मानते हैं—मनाही कहां है!

डॉ. कर्णसिंह का लेख और अज्ञेयजी के उत्तर विशेष पसंद आये। शेष रचनाएं भी स्तरीय हैं, जो पत्रिका के बदलते तेवर के अनुरूप ही हैं।

—मीना भारती, मुजफ्फरपुर

अज्ञेयजी ने अपने लेखन में सदैव पाठक को प्रबुद्ध और महत्त्वपूर्ण माना है और लेखन को उत्तरदायित्वपूर्ण।

'खंडित इकाइयां और अज्ञेय' ने फिर इसका अनुभव कराया। अज्ञेय के पाठक के लिए 'अपने-अपने अजनबी' वाले उत्तर को छोड़कर वैसे तो इसमें कुछ विशेष नया नहीं है, फिर भी प्रश्नोत्तर मूल्यवान और पाठक-लेखक की दूरी को कम करने वाले हैं। आशा है इस स्तम्भ के भावी लेखक भी इसे एक उपयोगी और गम्भीर सम्वाद का मंच बनाएंगे। स्व. राकेश के बहुमुखी व्यक्तित्व के एक अप्रकाशित पहलू से परिचित कराने के लिए

'कादम्बिनी' का आभार मानता हूं।

—जयदेव तनेजा, नयी दिल्ली

'कादम्बिनी' के फरवरी अंक में 'समय के हस्ताक्षर' स्तम्भ में सम्पादकीय लेख 'नारों की खेती का वर्ष' पढ़कर बड़ी प्रसन्नता हुई। देश की ज्वलंत एवं सबसे बड़ी समस्या को कम से कम शब्दों में जिस साफगोई एवं साहस के साथ जोरदार ढंग से प्रस्तुत किया गया है, उसके लिए मैं सम्पादक को अनेकशः साधुवाद देता हूं। आशा है भविष्य में भी सम-सामयिक समस्याएं इसी तरह चित्रित की जाएंगी।

—राधेश्याम उपाध्याय, इलाहाबाद

आपके सम्पादकत्व में पत्रिका का स्वरूप निखर आया है, विशेषकर सम्पादकीय तो समाज की बुराइयों का पर्दाफाश करने में सक्षम सिद्ध हुए हैं। सभी रचनाएं सुरुचिपूर्ण एवं समाजोपयोगी हैं। बधाई!

—रामनारायण सिंह 'मधुर', होशंगाबाद

'कादम्बिनी' के तीव्रतर विकास, लोकप्रियता एवं उच्चस्तरीयता के हेतु सफल प्रयासों पर आपको हार्दिक बधाई। आपने इस पत्रिका को हिंदी साहित्य के सर्वोच्च स्थान पर ला दिया है।

—हनुमानप्रसाद बोहरा, टोंक

'बुद्धि विलास' काफी पसंद आया। विश्वास है कि आपके सम्पादन में 'कादम्बिनी' दिन-पर-दिन निखरेगी और मासिक पत्रिकाओं में 'कादम्बिनी' का प्रथम स्थान बना रहेगा।

—विष्णुचन्द्र खरे, महोबा

क्यों और क्यों नहीं?

आठवें लेखक : दिनकर

इस लेखमाला के अंतर्गत अमृतलाल नागर, सुमित्रानंदन पंत, अज्ञेय, यशपाल, डॉ. बच्चन, डॉ. भारती एवं जैनेन्द्रकुमार के सम्बंध में पाठकों के प्रश्न अब तक आमंत्रित किये जा चुके हैं, अब आठवें लेखक हैं डॉ. रामधारीसिंह 'दिनकर'।

इस लेखमाला का उद्देश्य लेखक तथा पाठक को आमने-सामने लाने का प्रयास है। प्रत्येक अंक में हम एक लेखक के नाम की घोषणा करेंगे, पाठक उस लेखक के साहित्य, जीवन, जीवन-दर्शन, पात्र और पात्रों की कमियों अथवा अच्छाइयों, कृतियों में उपलब्ध विरोधाभासों अथवा जीवन से सम्बंधित किसी भी विषय पर प्रश्न पूछ सकते हैं।

एक प्रश्नकर्त्ता दो से अधिक प्रश्न नहीं पूछ सकेगा। लिफाफे के ऊपर एक कोने पर यह अवश्य लिखिए—'क्यों और क्यों नहीं' स्तम्भ के लिए।

आपके प्रश्न सम्पादक के पास पहुंचने की अंतिम तिथि है १५ अप्रैल, १९७३।

इस अंक के लिए

डॉ. रामधारीसिंह दिनकर

प्रमुख कृतियां : रेणुका, हुंकार, कुरुक्षेत्र, रश्मिरथी, रसवंती, नीलकुसुम, उर्वशी, परशुराम की प्रतीक्षा, संस्कृति के चार अध्याय।

वर्ष १३ : अंक ६
अप्रैल, १९७३

आकल्पं कवि नूतनाम्बुदमयी कादम्बिनी वर्षतु

निबंध एवं लेख

१८. राम-जन्मभूमि और उसका संघर्ष-पूर्ण अतीत
—सुरेशव्रत राय

२२. जलियांवाला बाग के बाद
—मलिक अब्दुल अजीज

२५. गांधी को यह सम्मान क्यों?
—राजशेखर

२८. गाथा एक आदमी की
—विवेकी राय

४६. समस्या जगत के तापों की
—हरिभाऊ उपाध्याय

४९. गुफाओं में बंद लेखकों की दुनिया
—अमृता प्रीतम

५४. प. पद्मसिंह शर्मा के पत्र
—वियोगी हरि

५९. नयी कहानी : एक पुनर्मूल्यांकन
—राजेन्द्र यादव

६२. स्वतंत्र भारत की चित्रकला के पच्चीस वर्ष
—जगदीश चंद्रिकेश

६६. क्षमा करें, लेखन से संन्यास ले रहा हूं
—डॉ. हरिवंश राय बच्चन

८७. चंद्र-उन्माद
—डॉ. श्रीनिवास द्विवेदी

९२. संसार का सबसे धनी व्यक्ति
—रामेश्वर टांटिया

९६. आत्माओं का रहस्यमय संसार
—आचार्य गोपालचरण शुक्ल

११०. नये लेखकों को सलाह
—अर्नेस्ट हेमिंग्वे

११५. संगीत-प्रेमी औरंगजेब
—महेश्वर दयाल

१२०. तमिल साहित्य की आधुनिक पीढ़ी
—शौरीन भारती

१२६. फिल्मी समाज
—ख्वाजा अहमद अब्बास

१३०. कालेपानी के द्वीप
—दुर्गाप्रसाद शुक्ल

१३४. चिरकुंआरी नदी की वयःसंधि
—कैलाश नारद

हिन्दुस्तान टाइम्स प्रकाशन, नयी दिल्ली-१

सम्पादकः राजेन्द्र अवस्थी

१४८. नोबल पुरस्कार-विजेता महिलाएं
--आशारानी व्होरा

१५४. मकराना--जहां संगमरमर निकलता है
--राजेंद्र छाबड़ा

१५८. विश्व की सर्वप्रथम हिप्पी महिला
--ब्रजेश कुलश्रेष्ठ

१६४. रुद्र के अवतार--महर्षि दुर्वासा
--रामप्रताप त्रिपाठी

१६७. ये सरकारी प्रतिष्ठान (७)
--बलदेव वंशी

कविताएं

३१. बर्फानी आग
--रामानन्द 'दोषी'

६१. ऋतु-चक्र
--भवानीप्रसाद मिश्र

९१. क्या तुम यकीन करोगे ?
--केशव कालीधर

कथा-साहित्य

३५. मैं बनाम मैं
--कृष्णचंद्र शर्मा 'भिक्खु'

७५. वाचाल-समागम
--गिरिराज किशोर

१०१. भोंपू
--अमृतराय

१२४. मंत्री का हृदय
--विनोद भट्ट

१२५. घर
--डब्लू. ओ. गुडविन

१४०. फटा कुरता
--गोविंदमूर्ति देसाई

सार-संक्षेप

१८६. पीले आकाश की दुलहन
--स्टीफन क्रेन
--प्रस्तोता : भालचंद्र ओझा

स्तम्भ

शब्द सामर्थ्य--७, आपके पत्र--९, समय के हस्ताक्षर--१५, प्रेरक प्रसंग--३३, हंसने का मौसम--४४, बुद्धि-विलास--८५, कालेज कम्पाउंड से--१०७, क्षणिकाएं--११९, वचन-वीथी--१२५, प्रवेश--१६३, ज्ञान-गंगा--१७१, गृहिणी-जीवन की समस्याएं--१७२, नयी कृतियां--१७५, आपका भवितव्य--१७८, गोष्ठी--१८३

मुखपृष्ठ के चित्रकार : सुकुमार चटर्जी

सभ्यता के हस्ताक्षर

समाचार है कि टर्की ने डॉ. राधाकृष्णन् की पुस्तक 'द हिंदू वे ऑव लाइफ', 'गीता', 'उपनिषद्' तथा 'महाभारत' का प्रवेश अपने देश में निषिद्ध कर दिया है। इस घटना को लेकर भारत-सरकार ने रोष व्यक्त किया है।

टर्की एक छोटा-सा इस्लामी देश है। वहां जो कुछ हुआ है, उसके साथ-साथ हमें अपने ही देश में हुई कुछ घटनाओं का पता चला है। महाराष्ट्र के एक नगर चंद्रपुर में दो प्राध्यापकों ने हिंदुओं के धर्मग्रंथ 'श्रीमद्‌भगवद्‌गीता', 'ज्ञानेश्वरी' और 'दासबोध' का विरोध किया है। अपना विरोध प्रकट करने के लिए उन्होंने इन ग्रंथों को जलाया और पैरों से रौंदा है।

राष्ट्रीयता को चुनौती: उभरते हुए नये प्रश्न

ये दो अध्यापक हैं टी. जी. मेश्राम और कमलेश पाटील। इस घटना पर सतारा के वारकरी सम्प्रदाय ने रोष प्रकट करते हुए कहा है कि ऐसा करने से अस्पृश्यता-उन्मूलन में सहायता नहीं मिलेगी। संत ज्ञानेश्वर विरचित 'ज्ञानेश्वरी' और 'दासबोध' दोनों का महत्त्व 'श्रीमद्‌भगवद्‌गीता' से कम नहीं है। संत ज्ञानेश्वर जीवन भर हरिजनों और अस्पृश्यों के उत्थान के लिए संघर्ष करते रहे। उन्हीं की उदात्त रचनाओं के प्रति इस तरह का दृष्टिकोण एक प्रश्न-चिह्न छोड़ जाता है!

इन दो घटनाओं के साथ एक तीसरी घटना भी है। यह बम्बई की है। बम्बई महानगर परिषद के एक मुसलमान कांग्रेसी सदस्य ने कहा है कि 'वंदेमातरम्' गीत को हम नहीं गाएंगे, क्योंकि इस्लाम धर्म के अनुसार हमारा मस्तक केवल अल्लाह के सामने झुक सकता है। यह स्मरणीय है कि संविधान में 'वंदेमातरम्' को रवीन्द्रनाथ के गीत 'जन गण मन अधिनायक जय हे' के बराबर ही राष्ट्रगीत का दर्जा दिया गया है।

हम एक विदेशी सरकार को अपना रोष प्रकट कर सकते हैं, लेकिन

जो कुछ हमारे देश में हो रहा है, उसके लिए हम क्या कर रहे हैं? इन घटनाओं के साथ राष्ट्रीय चेतना और राष्ट्रीयता का प्रश्न जुड़ा है? जो सदस्य अपनी मातृभूमि के सामने नतमस्तक नहीं हो सकता, उसके सम्बंध में यह कैसे स्वीकार किया जाए कि वह 'नेशनलिस्ट' है? धर्म की आड़ लेकर मनमाना नहीं किया जा सकता।

पच्चीस वर्षों के बाद जो उपलब्धियां हैं, उनमें इन घटनाओं को जोड़ना गलत नहीं होगा। अंगरेजों के शासनकाल में शायद हम अधिक राष्ट्रवादी थे। तब ऐसी घटनाएं नहीं होती थीं।

देश में जब राष्ट्रीय एकता और समाजवाद तथा समान हितों की बात की जा रही है, तब ये सब तत्त्व विघटनकारी हैं और हमारी राष्ट्रीयता के विरुद्ध हैं। जब हम घोर भावुकता के साथ धर्म पर विश्वास करते हैं हमारी दृष्टि ही बदल जाती है। और कुछ भी किया जा सकता है। इन घटनाओं का सम्बंध अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता से कितना है, यह भी एक विचारणीय प्रश्न है। किसी विषय पर विभिन्न विचारों का प्रतिपादन करना एक बात है, किसी के प्रति अशिष्ट होना और उसे अपमानित करना दूसरी बात। इस दूसरी घटना से प्रतिक्रियाओं का एक तांता शुरू हो सकता है, जो समूचे देश की एकता के लिए एक खतरा बन सकता है।

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता हमारे देश में कितनी है, इसकी चर्चा हम कभी और करेंगे। एक बात निश्चित है, वह जरूरत से ज्यादा है, अन्यथा महात्मा गांधी-जैसे व्यक्तित्व को खुले आम गाली देने वाले रित्विक घटक को राष्ट्रीय सम्मान न दिया जाता।

इसी संदर्भ में हमें दो नाटकों का ध्यान आता है। एक है 'सखाराम बाइंडर' और दूसरा 'घासीराम कोतवाल'। दोनों नाटक मूलरूप से मराठी में लिखे गये हैं। पहला एक निम्न परिवार के एक व्यक्ति और उसकी निरंकुश काम-वासनाओं को खुले रूप से रंगमंच पर प्रस्तुत करता है। 'घासीराम कोतवाल' का सम्बंध पेशवाओं के प्रभावशाली मंत्री नाना फड़नवीस से है। नाटक में दिखाया गया है कि वह दुराचारी और फूहड़ प्रशासक था। उसने उत्तर भारत से नौकरी की तलाश में आये घासीराम की सुंदर युवा कन्या को अपनी वासना का शिकार बनाया और इसके बदले उसने घासीराम को पूना शहर का कोतवाल नियुक्त किया।

'सखाराम बाइंडर' को लेकर अदालत में मामला भी चल चुका है

और उसे न्यायाधीश ने यह कहकर मुक्त कर दिया कि यह लेखकीय अभि-व्यक्ति की स्वतंत्रता का प्रश्न है, इसलिए इस पर अंकुश नहीं लगाया जा सकता। 'घासीराम कोतवाल' को लेकर 'युवक संगठन' ने तीव्र विरोध प्रकट किया है। इसी नाटक को राज्य-सरकार ने पुरस्कृत भी किया है।

हमारी दृष्टि में इतिहास के सही तत्त्वों को यदि रखा जाए तो वह न तो निंदनीय है और न उस पर रोष व्यक्त करना उचित है। लेकिन सबसे बड़ा प्रश्न-चिह्न तो हमारे इतिहास के सामने है। सही इतिहास क्या है? जो कुछ अभी इतिहास के नाम पर है, वह अंगरेजों द्वारा जबरन थोपा गया सत्य है। उदाहरण के लिए शिवाजी या राणा प्रताप को लें, अथवा अकबर और औरंगजेब को, अंगरेज इतिहासकारों ने इन चरित्रों के साथ मनमाना खिलवाड़ किया है। यहां तक कि सन् १८५७ की राज्यक्रांति को अधिकांश इतिहासकारों ने मात्र एक गदर कहकर नजरअंदाज करने की कोशिश की है। इसके विरुद्ध मजदूर नेता अर्नेस्ट जोन्स ने अपनी कविता 'द न्यू वर्ल्ड' में लिखा है :

और सिपाही जागते हैं,
एक के बाद एक दूसरी पल्टन जागती है,
अंत में उन्हें याद आ गया है
कि उनके भी एक मातृभूमि है!
तब वहां से भागते हैं—
पैसे के लोभी जज, ऐयाश लार्ड,
वे मुफलिस अंगरेज जो यहां आकर लार्ड बन गये थे!
जब सारे देश में स्वतंत्रता का दुंदुभिघोष फैल जाता है!

अर्नेस्ट जोन्स को १३ फुट लम्बी और छह फुट चौड़ी कालकोठरी में रखकर यातनाएं दी गयी थीं। उन्होंने कहीं समझौता नहीं किया और भार-तीय स्वतंत्रता को एक नयी नजर से देखा।

इतिहास के बाहर जो धर्म और धार्मिक मान्यताओं के साथ खेलते हैं, वे समाज में एक व्यापक अराजकता फैलाने के लिए उत्तरदायी हैं। यदि एक सामाजिकता की अपेक्षा जनता से की जाती है तो उतनी ही अपेक्षा उस शासन से भी, जिसके हाथ समूची सुरक्षा की बागडोर है। ऐसा न हो कि किसी शायर को फिर यह लिखना पड़े:

'हर तरफ रात है अंधेरा है, सिर्फ मेरा चिराग जलता है!'

राम-जन्मभूमि और

रामनवमी के अवसर पर

आज से सहस्रों वर्ष पूर्व, त्रेता-युग में पावन सरयू के तट पर बसी अलकापुरी को भी लज्जित करने वाली मंगलमय अयोध्या नगरी, स्वर्ण एवं मणिजटित होने के कारण सूर्य के प्रकाश को भी निस्तेज करने वाला जगमगाता हुआ दशरथ का गगनचुम्बी राजभवन, जिसके लिए तुलसी ने एक पंक्ति में ही सब कुछ कह दिया, 'सोभा दसरथ भवन कइ, को कवि बरनै पार' और उस पावन अयोध्या नगरी के राजभवन का वह परम पवित्र भूखंड, जहां श्रीराम ने लोट-लोट कर बाललीला की। ऐसी परम पुनीत एवं मंगलदायिनी रामजन्म-भूमि और फिर सृष्टि के शाश्वत नियमानुसार कालचक्र की गति के साथ घूमती हुई बीसवीं शताब्दी की अयोध्या। राम-जन्मभूमि पर खड़ी है विशाल बाबरी मस्जिद—'बाराबंकी गजेटियर' के लेखक हैमिल्टन के शब्दों में "राम-जन्मभूमि की रक्षा में असंख्य वीरों के रक्त को गारा बनाकर उससे चुनी गयी मस्जिद।"

इसी मस्जिद के एक कोने में है चारों ओर सुदृढ़ लौह कपाटों और जंगलों में बंदी वर्तमान राम-जन्मभूमि। हर समय पी.ए.सी. के संगीन एवं बंदूकधारी जवानों का पहरा और भक्तों द्वारा इस जंगले के बाहर से ही दर्शन एवं वंदना . . .

श्रीराम तथा लव-कुश के पश्चात उन-जैसा पराक्रमी एवं चक्रवर्ती नरेश नहीं हुआ। स्वभावतः सूर्यवंशी साम्राज्य के साथ अयोध्या का वैभव तथा महत्त्व शनैः-शनैः घटता गया। अयोध्या-स्थित राज-महलों ने धीरे-धीरे स्मारकों का रूप लिया। कालांतर में ये स्मारक भी खंडहर बन गये। राजभवन-स्थित राम-जन्मभूमि-मंदिर भी जीर्ण-शीर्ण खंडहर मात्र रह गया। लगभग १०० वर्ष ई. पू. सम्राट विक्रमादित्य ने इस मंदिर का बड़े पैमाने पर जीर्णोद्धार कराया और विशाल मंदिर का निर्माण हुआ।

विक्रमादित्य द्वारा बनवाया गया यह विशाल मंदिर श्रीराम की महानता के अनुरूप था। यह न केवल एक अर्चना-स्थल था बल्कि देश में धर्म के प्रचार और प्रसार का स्रोत भी। अपनी सफल योग-सिद्धि के लिए देश के कोने-कोने में विख्यात

उसका संघर्षपूर्ण अतीत

श्यामानंददास नामक महात्मा भी इस मंदिर में रहते थे। वे बिना भेदभाव के समस्त शिष्यों को योग की शिक्षा दिया करते थे। अनेक अहिंदू भी उनके अनन्य शिष्य थे।

बाबा श्यामानंददास की ख्याति सुनकर हजरत कजल अब्बास मूसा आशिकान कलंदरशाह नामक एक फकीर ने श्यामानंदजी से शिष्य बना लेने की प्रार्थना की। उन्होंने कजल अब्बास की धर्म-पद्धति के अनुरूप ही योग एवं सिद्धि-साधना की शिक्षा देनी आरम्भ की। थोड़े ही दिनों में वह अपनी साधना में सफल हो गया और उसकी ख्याति दूर तक फैलने लगी। इसी बीच जलालशाह नामक एक अन्य फकीर ने भी श्यामानंदजी से दीक्षा ग्रहण कर ली। 'राम-जन्मभूमि' में योग सीखते हुए उन्हें ऐसा लगा कि गुरु श्यामानंददास की योगसिद्धि का मुख्य श्रेय उनकी साधना की अपेक्षा 'राम-जन्मभूमि' को है, जो स्वयं एक सिद्धपीठ है। अतः उनके मन में श्यामानंदजी को किसी प्रकार इस स्थान से दूर हटा देने और 'जन्मभूमि' पर अपना अधिकार कर इसे खुर्दमक्का और सैकड़ों सिद्ध-नबियों का

● सुरेशव्रत राय

स्थान सिद्ध करके लाभ उठाने का लोभ उत्पन्न हुआ। उन्होंने योजनाबद्ध रूप में मंदिर की सीमा से हटकर, समीपवर्ती प्रदेश में कुछ पुराने ढंग की कब्रें बनवायीं।

इस बीच फतेहपुर सीकरी के पास खानवा नामक स्थान में राणा सांगा और बाबर की सेनाओं के बीच घमासान युद्ध हुआ। इस युद्ध में बाबर की पराजय हुई। हताश और दुःखी बाबर आया अयोध्या के जलालशाह और कजल अब्बास मूसा की शरण में। फकीरों ने सांत्वना देने के साथ उस युद्ध में विजयी होने का भी आशीर्वाद दिया। बाबर ने अपनी सेना को पुनः संगठित कर फिर राणा सांगा पर आक्रमण किया। इस बार राणा सांगा की पराजय हुई। इस संयोगात्मक विजय के कारण बाबर की फकीरों के प्रति श्रद्धा और भी बढ़ गयी। कृतज्ञताज्ञापन के लिए वह उन्हीं दोनों फकीरों के पास गया। फ़कीरों ने बाबर से 'राम-

जन्म-भूमि मंदिर' विध्वंस कर उसके स्थान पर मस्जिद बनवाने का वचन ले लिया। वचनबद्ध बाबर अपने विश्वासपात्र मंत्री मीरबांकी को मंदिर नष्ट करने का आदेश देकर चला गया।

श्रीराम-जन्मभूमि मंदिर के विध्वंस का समाचार दूर-दूर तक बिजली की भांति फैल गया। संयोग से इसी समय भीटी नरेश राजा महताबसिंह अपनी सेना समेत तीर्थयात्रा पर निकले थे। यह समाचार मिलते ही उन्होंने अपनी तीर्थयात्रा स्थगित करके अंजना बाग में पड़ाव डाला और चारों ओर संदेशवाहक भेज दिये। सूर्य की प्रथम किरण के साथ 'राम-जन्मभूमि' की रक्षा के लिए सन्नद्ध हजारों राजपूतों ने चारों ओर से 'जन्मभूमि' को घेर लिया। इस युद्ध में मुगल सेना के कई बार पैर उखड़े परंतु लम्बी मार वाली तोपों के कारण मुगलों की विजय हुई। 'लखनऊ गजट' में इतिहासकार कनिंघम द्वारा लिखे एक लेख के अनुसार 'जन्मभूमि' के श्रीराम-मंदिर को बाबर के वजीर मीरबांकी ताशकंदी द्वारा गिराये जाने के अवसर पर हिंदुओं ने जान की बाजी लगा दी। एक लाख छिहत्तर हजार हिंदुओं की लाशें गिर जाने के बाद ही मीरबांकी खां मंदिर गिराने में सफल हो सका।

मंदिर के मलबे से मस्जिद का निर्माण आरम्भ हुआ। पर कड़ी घेराबंदी के बावजूद दिन भर चुनी गयी दीवार सायंकाल अपने-आप गिर जाती थी। हारकर मीरबांकी ने बाबर को इसकी सूचना दी। इस पर बाबर ने मस्जिद का निर्माण कार्य बंद कर दिल्ली वापस चले आने का निर्देश दिया, किंतु कजल अब्बास की प्रेरणा से जलालशाह ने काम बंद करने की अपेक्षा बाबर को मौका-मुआयना का सुझाव दिया। बाबर आया तो संतों ने कहा, "मस्जिद को इस रूप में तो हनुमान-जी बनने नहीं देंगे। हां, मंदिर के रूप में बनवाइए तो बात और है। इसके ऊपर 'सीता पाक स्थान' लिखिए। मीनारें भी नहीं होनी चाहिएं। प्रस्तर खम्भों पर बनी मूर्तियों को भी विकृत न किया जाए। कौशल्या के ध्वंसस्थान का परिक्रमा-वेदी

राम-जन्मभूमि का रेखाचित्र
सामने मसजिद है
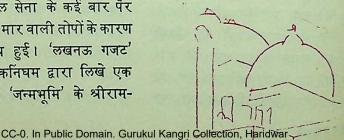
सहित पुनर्निर्माण हो और मंदिर में पूर्ववत पूजा-पाठ करने पर कोई रोक न हो।" फलतः चारों ओर की मीनारें गिरवा दी गयीं। मंदिरों के नियमानुसार सदर दरवाजे के ऊपर चंदन की एक सिल्ली लगवा कर, मध्यद्वार पर फारसी और मुड़िया में 'सीता पाक स्थान' लिखवाया गया। प्रस्तर खम्भों को विकृत न करके यथावत लगाया गया। इस नयी व्यवस्था में शुक्रवार को नमाज के दो घंटे छोड़कर हिंदुओं को पूजापाठ की पूरी स्वतंत्रता दी गयी।

महेश्वरानंद ने जन्मभूमि के उद्धार के लिए एक बड़ी सेना तैयार कर ली। श्रीराम-जन्मभूमि की रक्षा में आत्माहुति देने वाले हंसवर-नरेश राजा रणविजयसिंह की पुत्री जयराजकुमारी ने तीन हजार स्त्री सैनिकों की सेना तैयार करके गुरिल्ला-युद्ध छेड़ दिया। संघर्ष में एक बार जयराजकुमारी ने जन्मभूमि पर पूर्ण अधिकार कर लिया, परंतु तीसरे दिन शाही सेना ने आक्रमण करके उसे छीन लिया।

अकबर के काल में बीस बार संघर्ष हुआ। अंतिम संघर्ष में जयराजकुमारी अपने गुरु महेश्वरानंद सहित युद्ध में बलिदान हो गयी, पर जन्मभूमि पर हिंदुओं का अधिकार हो गया। मस्जिद की दीवार गिराकर बीचोंबीच एक चबूतरा बनाया गया और चबूतरे पर खस की टट्टी के मंदिर में मूर्तियों की प्राणप्रतिष्ठा कर दी गयी। बीरबल, टोडरमल के परामर्श और अपनी नीति के अनुसार अकबर ने फरमान जारी किया कि खस की टट्टी के मंदिर एवं पूजापाठ में किसी प्रकार की बाधा न पहुंचायी जाए।

औरंगजेब ने सेनापति सैयद हसनअली खां के अधीन पचास हजार सैनिक भेजे। अतः वैष्णवदास ने गुरु गोविंदसिंह को सूचना भेज दी। उत्तर में गुरु गोविंदसिंह ने अपनी सेना सहित कूच कर दिया और ठीक समय पर जा पहुंचे। फैजाबाद के समीप शहादतगंज नामक स्थान में उनकी सेना ने शाही सेना से लोहा लिया और व्यूहरचना करके ऐसी मारकाट की कि एक भी मुगल सैनिक जीवित नहीं बच सका। सैयद हसनअली खां को मौत के घाट उतार दिया गया।

अंगरेजों के राज्यकाल में १९१२ ई. और १९३३ ई. में जन्मभूमि को पुनः अपने

अधिकार में लेने के लिए संघर्ष किये गये। इस प्रकार श्रीरामजन्मभूमि के उद्धार के लिए ७८ बार युद्ध हुए।

—३६७, अतरसुइया, इलाहाबाद

जलियांवाला कांड की स्मृति में

जलियांवाला बाग के बाद

● मलिक अब्दुल अजीज
(जलियांवाला बाग कांड के एक अभियुक्त)

हमारा मुकदमा उस विशेष अदालत में पेश हुआ जो 'अमृतसर लीडर्स केस' की सुनवाई के लिए नियुक्त की गयी थी।

इस अदालत में तीन न्यायाधीश थे और इसके अध्यक्ष थे न्यायमूर्ति ब्रॉडवे। अमृतसर के सेशन जज क्राउन और गुजरांवाला के डिप्टी कमिश्नर शेख रहीमबख्श अन्य दो न्यायाधीश थे। हम देशभक्तों को डराने के लिए विशाल स्तर पर वातावरण को आतंकपूर्ण बनाने का प्रयत्न किया गया था।

पूरे दस बजे हमें उस कमरे में दाखिल कर दिया गया जहां हमारी जिंदगी और मौत का फैसला होने वाला था। आवेश से तमतमाते चेहरे! हृदय तूफानी भावनाओं से ओत-प्रोत! तरह-तरह के विचार दिमाग में उमड़ रहे थे। हम नम्बरवार एक लम्बी बेंच पर बिठा दिये गये। हमें बैठे हुए अधिक देर नहीं हुई थी कि एक मनहूस घंटी-सी बजी। यह इशारा था कि 'मौत के फरिश्ते' पधार रहे हैं। आगे-आगे एक लम्बे कद का चोबदार और उसके पीछे-पीछे तीन न्यायाधीश प्रकट हुए। उनको देखकर हममें से किसी ने दब स्वर में कहा, "गोरे जुल्म की मंडियों के आढ़ती आ गये!" मैंने कहा, "जी हां, जिसे-इनसाफ के डंडीमार तशरीफ ले आये!" डॉक्टर किचलू ने हमसे कहा, "भई, यों कहो कि अद्लो-इनसाफ के तिजारती और तहजीब व इनसानियत के दावेदार आ गये!" उन्होंने बड़ा सशक्त व्यंग्य किया था। न्यायाधीश कुरसियों पर बैठ चुके तो ब्रॉडवे ने घंटी बजायी और मुकदमे की कार्रवाई का आरम्भ हो गया।

हमारे हितैषियों ने जिन वकीलों का प्रबंध कर रखा था, उनमें से कुछ नाम याद रह गये हैं—बैरिस्टर सैयद हसन अमृतसरी, लाला प्रतापराय, बैरिस्टर गुलाम रसूल (अफ्रीका वाले), पीर ताजुद्दीन साहब! सरकार की ओर से पंडित जगन्नाथ, जो एक बहुत चालाक, धूर्त और अनुभवी वकील था, मुकदमे की पैरवी के लिए नियुक्त किया गया था।

जिन अठारह राष्ट्रीय कार्यकर्ताओं

पर मुकदमा चलने वाला था, उनके नाम भी सुन लीजिए—डॉक्टर सैफुद्दीन किचलू, डॉक्टर सत्यपाल, डॉक्टर हाफिज मुहम्मद बशीर, लाला कोटोमाल, लाला नारायणदास खन्ना, लाला मोतीराम, डॉ. गुरबख्शराय, लाला दीनानाथ दर्द, बैरिस्टर बदरुस्सलाम, अब्दुल अजीज, गुलाम मुहम्मद अजीज हिंदी, मुहम्मद इस्माइल हिंदी, स्वामी अनुभवानंद, कवि साहब, बैरिस्टर गुरदयाल सिंह, लाला मदनगोपाल, हंसराज मल्होत्रा (सुलतानी गवाह), अठारहवां नाम इस समय याद नहीं आ रहा ।

मुकदमे की कार्यवाही यों शुरू हुई कि हमारे हाथों में अपराधों की छपी हुई सूची थमा दी गयी और पढ़ डालने के लिए पांच मिनट का समय दे दिया गया । हम पर बगावत, कत्ल, डाकाजनी, साजिश, आग लगाना, हुजूम को भड़काना आदि-आदि अभियोग लगाये गये थे ।

ठीक पांच मिनट के बाद ब्रॉडवे ने अपराधियों से पूछना शुरू किया कि उन्होंने ये अपराध किये हैं या नहीं । सबसे पहले डॉक्टर किचलू से पूछा, "जुर्म किया है या नहीं ?" डॉक्टर साहब ने कड़ककर जवाब दिया, "मैं कौम और वतन का मुजरिम हूं कि कौम और वतन की इज्जत पर कुर्बान न हो सका, बाकी इस अदालत ने जिन जुर्मों का मुझे मुजरिम ठहराया है, वे जुर्म मुझसे कभी नहीं हुए ।"

सबके जवाब तो मुझे याद नहीं, मगर उस दौरान सभी अभियुक्तों और न्यायाधीशों में बहुत दिलचस्प नोक-झोंक होती रही । जब स्वामी अनुभवानंद से प्रश्न किया गया कि जुर्म किया है या नहीं, तो जवाब में उन्होंने केवल 'हिंदू-मुसलमान की जय' का नारा लगा दिया । ब्रॉडवे ने आपे से बाहर हो कहा, "तुम पर अदालत के अपमान का मुकदमा क्यों न चलाया जाए ?"

स्वामीजी ने जवाब दिया, "हां, अवश्य चलाया जाए, मगर मेरी लाश को जवाब-

अंगरेज जनरल डायर फौजी सिपाहियों के साथ गोली चलवाने के लिए इस रास्ते से जलियांवाला बाग के अंदर आया था
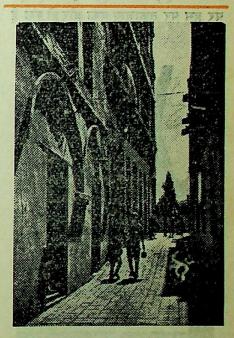
देही के लिए कैसे मनवाया जाएगा जो जलकर राख का ढेर हो चुकी होगी ?" (उस समय हमें यकीन हो चुका था कि हमें फांसी से कम सजा न मिलेगी।)

मुख्य न्यायाधीश ब्रॉडवे ने मेरी ओर इस तरह देखा मानो वे समझते हों कि इधर से भी कोई तीर ही छूटेगा । मैंने उनकी इस आशा को पूरा कर दिया । संयोगवश मुझे मौलाना मुहम्मदअली की गजल का यह शेर याद आ गया--

सरकश नहीं, बागी नहीं, गद्दार नहीं हम
पर हम पर तक़ाज़ाए वफा और ही कुछ है
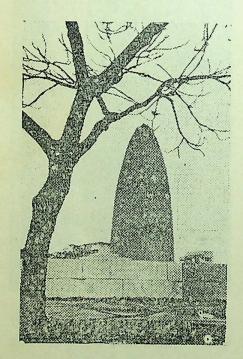
जलियांवाला बाग में शहीद-समाधि

मेरे साथ मुहम्मद इस्माइल मुश्ताक खड़े थे । उन्होंने मेरा दामन खींचकर धीरे से कहा, "अरे, अरे ! यह कोई महफिल है ? सीधी तरह 'हां' या 'न' क्यों नहीं कहते ?" मगर उनकी आवाज कहकहों में दबकर रह गयी, क्योंकि मैंने हाथ बांधकर और मसकीन सूरत बनाकर वह शेर इस तरह पढ़ा था कि श्रोता अपनी हंसी जब्त न कर सके। और तो और, शेख रहीमबख्श भी होंठों में मुसकराने लगे ।

मुकदमे के दौरान का यह लतीफा भी वर्णनीय है कि जेल की तंग-अंधेरी फांसी की कोठरियों में सख्त गरमी के दिनों में रात भर नींद नहीं आती थी। जब हम अदालत में आते तो बिजली के पंखों की हवा में नींद आ जाती। मुकदमे की कार्रवाई से बेपरवाह होकर मैं और गुलाम मुहम्मद अजीज हिंदी फर्श पर ही सो जाते। एक हिंदू बजाज जो करमूं ड्योढ़ी में सौदागरी करता था, अजीज हिंदी के खिलाफ बहुत कुछ कह गया। ब्रॉडवे ने अजीज हिंदी को जगाकर कहा, "क्या तुम गवाह से कुछ कहना चाहते हो ?" (मतलब था कि कुछ जिरह करना चाहते हो ?) अजीज हिंदी ने कहा, "जी हां ! उन्हें कह दीजिए कि बाहर जाकर ठंडे पानी का एक गिलास भिजवा दें। सख्त प्यास लग रही है।"

इस तरह आसन्न मौत की छाया में भी देशभक्त मुसकराते रहे। ●

• राजशेखर

गांधी को यह सम्मान क्यों?
लार्ड वेवेल की परेशानी

लार्ड वेवेल अक्तूबर, १९४३ से मार्च, १९४७ तक भारत के वाइसराय और गवर्नर जनरल रहे। इसी अवधि में भारत, पाकिस्तान और ब्रिटिश साम्राज्य के भाग्य का निर्णय हुआ।

वेवेल ने यथाशक्ति मुस्लिम लीग और कांग्रेस में समझौता करवाने का प्रयत्न किया। यह कार्य सरल नहीं था। ब्रिटेन में अक्खड़ चर्चिल और उनकी टोरी पार्टी के हाथ में सत्ता थी। फिर लगभग उतने ही 'संकीर्ण' तथा 'अभद्र' ऐटली और उनकी लेबर पार्टी के हाथ में सत्ता आयी। कांग्रेस ने 'हिज मैजिस्टीज गवर्नमेंट' को मानो अपनी जेब में रख लिया था, और मुस्लिम लीग इस भय से हताश थी कि उसे बेचा जा रहा है।

लार्ड वेवेल ने अपनी डायरी में उस ऐतिहासिक नाटक को उद्घाटित किया है जो परदे के पीछे खेला गया था। उसमें सबसे अधिक आलोचना के पात्र चर्चिल हैं, और फिर गांधीजी। चर्चिल के बारे में वेवेल कहते हैं, "उन्हें भारत और भारत से सम्बंधित हर चीज से घृणा है।"

चर्चिल को सबसे अधिक चिढ़ शायद इस बात से हुई कि उन्होंने वेवेल को भेजा तो था भारत में 'शांति बनाये रखने के लिए' किंतु वेवेल ने स्वयं हंगामा पैदा कर दिया। "उन्हें (चर्चिल को) यह जानकर धक्का लगा कि भारत के सम्बंध में मेरे विचार उदार हैं और मैं उन्हें अभिव्यक्त करने को उद्यत हूं," वेवेल बताते हैं।

बंगाल में अकाल के दौरान वेवेल ने अनेक तार भेजे कि अनाज तत्काल भेजा जाए किंतु चर्चिल ने इन तारों की उपेक्षा कर दी और यह सुझाव दिया कि २५,००० टन चावल प्रति-मास श्रीलंका को निर्यात किया जाए, जिसके बदले में कुछ महीने बाद गेहूं और आटा ले लिया जाएगा।

गांधीजी जेल से इस कारण छोड़ दिये गये थे क्योंकि डॉक्टरों ने उन्हें मरणासन्न समझा था। लेकिन जब वे जीवित रहे तब चर्चिल आपे से बाहर हो गये। झुंझलाकर वेवेल को तार भेजा कि 'गांधी अभी मरा क्यों नहीं' ?

वेवेल ने भारत को समझने का प्रयास किया था। उन्होंने अपनी सरकार पर आरोप लगाया था कि वह भारत के प्रति शत्रुता और घृणा की नीति बरत रही है।

पच्चीस अक्तूबर, १९४४ को उन्होंने प्रधानमंत्री को लिखा—"हमारा कोई भी कदम तभी प्रभावकारी हो सकता है जब कि वह भारतीयों के दिमाग को जीतने वाला हो। यदि हम भारत पर जोर-जबरदस्ती से हुकूमत नहीं करना चाहते तो उचित यही है कि हम दिमाग की अपेक्षा दिल से हुकूमत करें। हम जो कुछ भी करें ईमानदारी और मैत्रीपूर्ण ढंग से करें। भारत के प्रति हमारा दृष्टिकोण इसी के अनुरूप बदलना चाहिए।" ९ अगस्त, १९४४ को उन्होंने लिखा, "मुझे लगता है कि इस देश में हमारी सबसे बड़ी गलती यह है कि हमने यह महसूस नहीं किया कि भारतीय लोगों के मस्तिष्क में शिष्टाचार और सम्मान का कितना महत्त्व है।"

कांग्रेस के प्रति वेवेल का सम्मान तेजी से घटता गया। आरम्भ में (७ अक्तूबर, १९४३) उन्होंने कांग्रेस और उसके सभी कार्यों के विरुद्ध चर्चिल के जेहाद की निंदा की थी, लेकिन बाद में (२ नवम्बर, १९४६) मुस्लिम लीग की कीमत पर कांग्रेस की सनक को बढ़ावा देने के लिए सरकार की निंदा की।

जिन्ना के बारे में वेवेल कहते हैं, "वे गांधी से अधिक स्पष्ट हैं, लेकिन अक्खड़, दुराग्रही और बहुत घमंडी हैं . . . शिमला-सम्मेलन में जिन्ना बड़े दुरूह और तार्किक सिद्ध हुए। वे वकील की तरह मुझे फांसने की कोशिश करते रहे, कोई सीधा उत्तर नहीं दिया।"

नेहरू के विषय में वेवेल ने लिखा है—"व्यावहारिक राजनीति के स्तर पर उन्हें ले आना आसान नहीं था . . . उनका रुख सदा मैत्रीपूर्ण और शांत रहा है और मैं उन्हें पसंद किये बिना नहीं रह सकता, लेकिन उनमें हठधर्मी है। उनका खयाल है कि वे देश को इस हद तक उकसा सकते हैं कि उसे दबाना हमारे लिए कठिन होगा।"

२४ मार्च, १९४६ को जो कैबिनट मिशन भारत आया था उसकी सफलता के बारे में वेवेल को अत्यधिक संदेह था। उसके सदस्यों में सर स्टैफर्ड क्रिप्स, सर ए. वी. एलेग्जेंडर (फर्स्ट लार्ड ऑव-एडमिरल्टी) और लार्ड पैथिक लारेंस (विदेश सचिव) थे।

"कैबिनट मिशन का अपने कार्य के बारे में कोई रचनात्मक दृष्टिकोण नहीं था। इससे मैं परेशान था। वह पूर्णतया अवसरवादी प्रतीत हुआ। आरम्भ से ही मुझे यह लगने लगा था कि क्रिप्स कांग्रेस के दृष्टिकोण को बढ़ावा देंगे। मुझे पता था कि मिशन के आने से पहले ही उद्देश्यों के बारे में क्रिप्स का नेहरू के साथ व्यक्तिगत पत्र-व्यवहार हो चुका था। इसे मैं ईमानदारी नहीं कहूंगा, भले ही यह राजनीतिज्ञों के लिए एक सामान्य बात मानी जाती हो। . . . कोई हिंदू यह मानने को तैयार नहीं था कि मुसलमानों को कांग्रेस के लोक-

तंत्रीय प्रभुत्व से कोई शिकायत होगी या वे उस पर अविश्वास करेंगे। न किसी मुसलमान ने ही यह माना कि हिंदुओं से न्याय मिलेगा। जिन उपायों से दोनों पार्टियों को शिमला-वार्त्ता के लिए तैयार किया गया था वे अशोभनीय और कुटिल थे। किंतु एक सैनिक पर्यवेक्षक की दृष्टि से मुझे लगा कि हम अपना निर्णय देने से पीछे हट गये और पहल दूसरों के हाथों में सौंप दी. . . बातचीत वहुत लम्बी खिच गयी। उसे तभी समाप्त हो जाना चाहिए था जब जिन्ना और नेहरू मध्यस्थता की वात पर सहमत नहीं हुए थे। हमने दोनों पार्टियों से अपने-अपने दावे लिखकर देने को जो कहा था वह एक हास्यास्पद त्रुटि थी।"

वेवेल इस बात से बहुत खिन्न हुए कि गांधीजी को अनुचित सम्मान दिया गया—"जब उन्होंने एक गिलास पानी मांगा तो चपरासी के बजाय एक सचिव को पानी लाने भेजा गया और जब पानी आने में तनिक देर हुई तो क्रिप्स स्वयं उठकर देखने गये।" वेवेल को इस बात से भी खीज हुई कि "इस अनुदार बूढ़ राजनीतिज्ञ (गांधी) के प्रति विदेश-सचिव ने भावभीनी उदारता बरती।"

लार्ड वेवेल विफल रहे और वाइसराय के तौर पर उनकी सेवाओं को एक महीने के नोटिस पर समाप्त कर दिया गया, जब कि प्रचलित रिवाज के अनुसार छह महीने का नोटिस दिया जाना चाहिए था। उन्होंने लिखा है—"शिष्टाचार का भी ध्यान नहीं रखा गया। पद की गरिमा के भी अनुकूल नहीं था।" ●

गाथा एक आदमी की

• विवेकी राय

पानी बरस गया। आदमी फंस गया, बुरी तरह। चला नहीं जा रहा। पचर-पचर पानी! शुद्ध रास्ता नहीं। सुराज हुआ, खाक हुआ! बढ़िया छवर थी, लोग चांपकर दोनों ओर से दबा लिये। अब बित्ता भर से सांसत है। जानवर चलते हैं, खांच देते हैं। आदमी भी कम जानवर नहीं। सगरे गांव जनवरे-जनावर!

वह फाल-फाल पर करेजा लड़ा रहा है। हांफ रहा है, कांप रहा है। थरथरा-थरथराकर बढ़ रहा है। बोझ भारी है, कुआरी धान है। पानी से लदर-फदर होकर और गहू हो गया है। कांवर टांगकर ला रहा है। लाठीमोटी है, टूटेगी नहीं, पर बोझ खुल न जाए। खुल जाएगा तो तो छितरा जाएगा, कानों-कीच में फिर कैसे बांधेगा?

लाठी ऊपर को सरकती जाती है। बोझ नीचे झूलते जा रहे हैं। वह बार-बार उन्हें देखता है। क्या-क्या देखे? पीछे से भैंस आ रही है, सुर बांधकर, वह हटेगा नहीं तो हूल देगी। हेंक-हेंक करती अफनाई-धाई आ रही है। चरने गयी थी सरेहि की तकदीर। जहां-जहां खुरों से खच जाएगा, चौपट। बोने के वक्त चितरा में पानी, यह दइब की टिसाई? गयी अगहनियां। जा चितरा! चढ़ते चितराने लगी और संझा उतरते एक झोंक झम-झमा गयी। अब जा! जहर मत उझिल। सवा लाख मन का एक कौर...

वह डगमगाकर गिरते-गिरते बचा और रास्ता छोड़कर खेत में खड़ा हो गया। भैंस-भैंसवार हरहराते हुए निकल गये। तब उसने कंधा बदलना चाहा। लाठी मरमरा उठी। ससुरे बोझ मन-मन भर के हो गये—पराये बोझ!

वह एक बनिहार, बोझ उसके मालिक

के, खलिहान में जा रहे हैं। वहां से वह खाली हाथ घर जा सकता है। बन्नी कल भी मिल सकती है और परसों भी।

वह यह कह सकता है कि मालिक, आज तो मर गये। कचूमर निकल गया। बीस खेप की कसर एक बार में निकल गयी। फिर वह यह देख सकता है कि उसका मालिक उससे भी अधिक दुखी है।

वह पहला बनिहार और उसे वह झिड़की भी सुना सकता है, जल्दी-जल्दी ढो-ढाकर खलिहान धरा देना चाहिए तो तुम लोग मालूम होता है कि उधर ही सड़ाकर जमा हलाल कर दोगे... नुकसान हुआ तो एक दाना नहीं देंगे। जोर से मत पटको। सब धान झड़ जाएंगे।

लेकिन अभी तो वह रास्ते में ही है। खलिहान दूर है। सूरज डूबा नहीं है मगर लगता है अंधेरा घिर आया है। वह घबराकर जल्दी-जल्दी पैर बढ़ाना चाहता है मगर ऊपर से भार चांप रहा है। इधर नीचे पैर कांप रहा है।

यह तो ईश्वर की कृपा है कि उसके पैर टट्टू के पैर की भांति सधे हुए और कड़े हैं। उसका कलेजा बैलों की भांति पुख्ता है। उसके पैरों की अंगलियां नाव के लंगर की भांति छलके-कीचड़ में जहां पड़ती हैं धंस जाती हैं।

लेखक

उसकी कमर आंधी में झकझोरा खाते पेड़ के तने की भांति सारे शरीर के झिझोड़ जाने पर भी दृढ़ता से तनी रहती है। लाठी का वजनी रेला रेल की पटरी की भांति उसके सुदृढ़ कंधे पर इस प्रकार जीवन भर टूटता आया कि ठेला पड़ गया। उसके कंधे पर ठेला, उसके कलेजे पर ठेला, वह स्वयं एक बीहड़ 'ठेला'।

उसका काला कठोर रूप ऐसा भीषण है जैसे भैंसे का मानवीकरण हो गया है। कांवर ढोते समय मुड़ी हुई दो काली-काली मजबूत भुजाएं जो लाठी पर बल लगाये
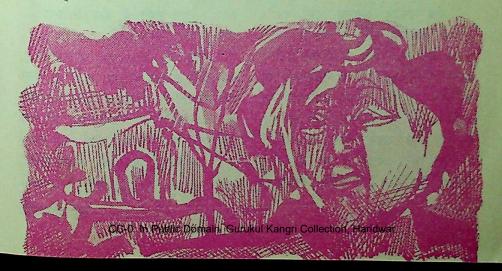
हैं, सींगों की तरह प्रतीत होती हैं। सच, इस जानवर के वे निरामिष सींग!

हलके अंधेरे में वह अभिशापग्रस्त प्रेत की तरह लग रहा है, जो काले-काले, भारी-भारी बोझ ढोता, टूटता, उखड़ता, कदम-कदम पर लड़खड़ाता, गिरते-गिरते बचता चला जा रहा है। स्वराज्य का वरदान क्या मिलेगा? खेत में मिल चुका, दो दशक की मंजिल हांफते-हांफते कटी, अब भविष्य के खलिहान में मिलेगा। मिलेगा... लेकिन खलिहान में पसीना गिरने के पूर्व वह इनसान न गिर जाए! वह चल रहा है, एक-एक डगर काट रहा है।

वह एक, उसके पीछे एक, उसके पीछे कतार—औरतें हैं, लड़कियां हैं, लड़के हैं, माथ पर, हाथ में, लाठी में धान के बोझ हैं, एक जुलूस हैं। लेकिन जलसा बिगड़ गया है। भीगे कपड़े माटी में सन गये हैं। लेकिन उसमें गंध माटी की नहीं पसीने की है। धान का बोझ साथ है परंतु वे सब मिलकर पुवाल की तरह लग रहे हैं। पानी में भीगा पुवाल! सड़ता हुआ!

सब उपद्रव असमय वर्षा का। दुनिया सामान्य गति से चलती रहे। शरद ऋतु मुसकराती रहे। 'पंक न रेणु' वाली धरती जुड़छांहीं में गहगहाती रहे तो क्यों वह इस प्रकार सांस-सांस पर संघर्ष करता रहे? क्यों ऐसी अवशता कि कहीं कांवर रखकर सुस्ता भी न सके?

वह कंधा बदलने में एक बार पीछे घूमकर देख लेता है। उसकी निकल-सी पड़ती हुई आंखों की लाल-लपक में पीछे की बोझिल शक्ल उभरती हैं। वह बुरी तरह कांख उठता है। एक बोझ की यह गति, तिस पर अनगिन बोझ निखत्तर! करमी, जगनी, सुरता, भुरता... वह एक अनाम, वह एक अभी पेट में, उसके साथ 'वह' भी आयी है। खाली हाथ चली आ रही है। अभी ये बोझ पटककर 'उसके' बोझ के लिए एक खेप और जाना है। एक बोझ सरिया कर होगा। कपार पर लेकर अंधेरे में यही विपत्ति दोहरानी है।

बोझ खेत में रह गया तो परलय हो जाएगी। जिनगी में चाहे जितनी परलय हो, बोझ खेत से आयेगा। कोई नयी बात नहीं। इस गांव के डीह पर उसके बाप का बाप आया। उसने भी इसी प्रकार कुआरी धान की कटिया की। उसके बाद उसका बाप उपटा और इसी प्रकार कांवर ढो-ढोकर खप गया। अब उसका समय है।

बहुत खराब हैं। एक दिन की कटिया में एक दिन के खाने भर भी अन्न नहीं उटा। लोग कहते हैं, खेत मिलेगा... छोड़ पचड़ा, मिलेगा।

लगा एक जोर, वह खलिहान है, वह सुर्ती ठोकता मालिक खड़ा है, मना देवी-देवता कि गालियों की नयी पनियारी से रक्षा करे। चल, भूख-प्यास की मत सोच, कुछ मत सोच, बस, बोझ ढोता चल।

—प्रोफेसर्स कालोनी, सकलेनाबाद,
गाजीपुर (उ. प्र.)

बर्फानी आग

निगाहों की बंदिश के परे तक
किसी अजाने सिरे से
किसी अजाने सिरे तक
धौली, उजली, बर्फानी आग का
ठंड से सुलगता अलाव !
जमी हुई लपटों का निर्मम ठहराव !
शीत की लहर का बेहिसाब फैलाव !
हिम ! हिम !! केवल हिम !!!

जम गयी ध्वनि
प्रतिध्वनि
जम गये शब्द
केवल अर्थ का पक्षी रह-रह कर
फड़फड़ाता है
चेतना का क्षीण गात
सिहर-सिहर जाता है
ठंडी आग छूते ही
छिटक-छिटक जाता है
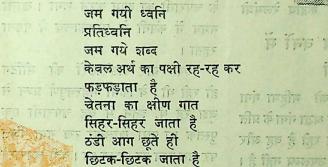
पांव इस ठंड की तपन को सह नहीं पाता है,
उठता है
डग बन जाता है
मैं तो मजबूरी में कदम - कदम चलता हूं
पर इस दहकते हिम की आंखों में
बहुत-बहुत करकता, खलता हूं

यों तो यह हिम
मुझे देर-सबेर डसेगा
धृतराष्ट्र की तरह
मुझे टूटने तक कसेगा
बिखरने की सीमा तक
मुझमें जमेगा
पर आज तो कमजोरी ही मेरा बल है
यह विवशता ही संबल है
कि आखिर इस ठंडी आग पर मैं
नंगे पांव खड़ा भी तो नहीं रह सकता !

स्व. रामानन्द 'दोषी' की यह कविता 'कादम्बिनी' के दूसरे अंक (दिसम्बर, १९६०) में प्रथम बार प्रकाशित हुई थी। तब श्री बालकृष्ण राव सम्पादक थे और स्व. 'दोषी' उनके सहयोगी।

स्व. 'दोषी' की मृत्यु हुए एक वर्ष पूरा हो गया (निधन : १३ अप्रैल, १९७२)। उनकी बरसी पर स्मृति - स्वरूप यही पहली कविता हम यहां प्रकाशित कर रहे हैं।

—सम्पादक

आगामी अंक के आकर्षण

जो आदमी जितना अधिक काम करेगा, उसका उतना ही विरोध होगा और जब अधिक विरोध हो, तब समझना चाहिए कि तुम्हारे कामों का प्रभाव हो रहा है।

गेहूं और गुलाब--स्मृतियां जवाहरलाल की

--ललितनारायण मिश्र, केंद्रीय रेलमंत्री

गंगोत्तरी के सुरम्य वनों में घूमती हुई स्मृतियां

नदियां अनेक हैं, पर जो महिमा गंगा की है और जो भक्ति और श्रद्धा गंगा के प्रति हजारों साल से चली आ रही है वह और किसी नद और नदी को उपलब्ध नहीं है।

--घनश्यामदास बिरला

आधुनिक हिंदुत्व के निर्माता तथागत बुद्ध --डाक्टर राधाकृष्णन

खोयी हुई कहानी: मृदुला गर्ग

कुछ अन्य रोचक रचनाएं :

हजारों साल पहले ० चीता जंगल का राजकुमार ० फैशन का मनोविज्ञान ० सम्वादों की दुनिया ० उड़ीसा के मंदिर

कुछ अन्य विशिष्ट लेखक

भीष्म साहनी ० डाक्टर इंद्रनाथ मदान ० अर्नेस्ट हेमिंग्वे ० एस. के. पोट्टेकाट

लगभग १२५ वर्ष पूर्व स्काटलैंड के डनफर्मलाइन नामक गांव में एक बालक का जन्म हुआ। बालक के माता-पिता केक बनाकर किसी तरह जीवन-निर्वाह करते थे। लड़के ने गरीबी के कारण आत्महत्या तक करने की कोशिश की। फिर एक दिन वह गरीबी से घबराकर किसी जहाज में कुली का काम करके अमरीका चला गया। वहां एक इस्पात-कंपनी के चपरासी का काम करने लगा। खाली समय में कंपनी के पुस्तकालय में पढ़ता रहता।

एक बार डाइरेक्टरों की मीटिंग हो रही थी। वे किसी महत्त्वपूर्ण प्रश्न से जूझ रहे थे, इतने में वह चपरासी एक पुस्तक का पन्ना खोलकर रख गया, जिस पर उस प्रश्न का उत्तर था। वही चपरासी करोड़पति बना। उसका नाम था एंडरू कार्नेगी।

सुभाषचंद्र बोस जब तेरह-चौदह वर्ष के थे कि नगर के पास के कुछ गांवों में हैजा फैला। सुभाष ने रोकथाम के उपाय करने का निश्चय किया। वे घर पर किसी को बताये बिना ही चले गये।

लौटकर उन्होंने बताया कि वे उन लोगों की सेवा-टहल करने गये थे जिनकी देखभाल करने वाला कोई नहीं था।

बालक सुभाष के साहस तथा अपने जीवन को जोखिम में डालकर भी दूसरों की सेवा करने के कार्य पर सभी चकित हुए।

देशबंधु चित्तरंजन दास में परोपकार के अंकुर बचपन से ही पड़ चुके थे। उनकी अवस्था लगभग ग्यारह वर्ष की थी। एक दिन उन्होंने अपने पिता से कुछ रुपये मांगे। पिता ने स्नेहवश कुछ रुपये दे दिये। रुपये लेकर बालक चित्तरंजन अपने एक गरीब साथी के यहां पहुंचा। फिर उसके साथ एक किताबों की दूकान पर गया और उसे कुछ जरूरी किताबें खरीदवायीं। उसके बाद वह अपने साथी को जूतेवाले के यहां ले गया और उसके लिए जूते खरीद लिये। पिता से मिले सब रुपये अपने गरीब मित्र की सहायता में खर्च करके चित्तरंजन घर लौट आया।

आगे चलकर इस बालक ने देशसेवा के लिए अपना जीवन ही अर्पित कर दिया।

अमरीकी राष्ट्रपति अब्राहम लिंकन से एक दिन उनके एक मित्र ने कहा, "आप अपने शत्रुओं के साथ बहुत ही उदारता का बरताव करते हैं, उन्हें अपने सिर पर चढ़ाते हैं। आप उन्हें जड़-मूल से उखाड़ फेंकिए और फिर देखिए कि आपसे कौन दुश्मनी रख सकता है!".

लिंकन ने मुसकराते हुए उत्तर दिया, "मैं दुश्मनों को यों ही नहीं छोड़ देता। उन्हें मार डालने से शत्रुता और हिंसा की भावना क्या समाप्त हो जाएगी? मैं तो प्रेम से दुश्मनों के दिल जीतकर उन्हें अपना मित्र बना लेता हूं। ऐसा करके क्या मैं अपने शत्रुओं का नाश नहीं करता?"

देश में अंगरेजी शासन की नींव पड़ चुकी थी और अंगरेज नित नयी-नयी साजिशें रचकर उसकी जड़ें मजबूत करने में लगे थे। वे यहां के उद्योग-धंधों को भी चौपट करने पर तुले थे। बंगाल
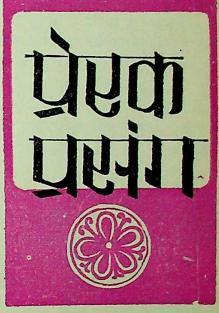
कपड़ा बुनने के काम के लिए मशहूर था। ढाके की मलमल का तो कोई जवाब ही नहीं था। वह इतनी बारीक होती थी कि उसके थान छोटी-सी डिबिया में बंद किये जा सकते थे। साड़ियों पर सजावट का काम करने में वहां के जुलाहे बहुत कुशल थे। इन जुलाहों के मुखिया को एक दिन अंगरेज अधिकारी ने बुलाकर आदेश दिया कि अपना हुनर हमारे लोगों को सिखा दो।

मुखिया ने कहा, "हुजूर, हमारे देश का यह मुख्य धंधा है। यह भी चला गया तो

मेरी जाति भूखों मर जाएगी। इसलिए मैं अपना हुनर किसी विदेशी को नहीं सिखा सकता।"

अंगरेज अधिकारी ने पहले तो लालच देकर उसे राजी करना चाहा, पर जब वह न माना तो उसने धमकी दी,

"तुम्हारी इस जिद का परिणाम यह होगा कि तुम्हें तो शिकारी कुत्तों से नुचवाया ही जाएगा, तुम्हारे स्त्री-बच्चों, भाई-बंधुओं और मित्र-सम्बंधियों के भी हाथ कटवा दिये जाएंगे।"

मुखिया पर इस धमकी का जरा भी असर न हुआ। उसने दृढ़ता से उत्तर दिया, "मैं मृत्यु से नहीं डरता। आप जान से ही क्यों न मार डालें, पर मैं अपने देश और जाति को कलंकित नहीं करूंगा।"

अंगरेजों ने उसे धरती में आधा गड़वाकर उस पर कुत्ते छोड़ दिये। कुत्तों ने मुखिया की बोटी-बोटी नोंच डाली, पर मरते-मरते वह अपने जाति-भाइयों से कह गया, "भाइयो, मृत्यु एक बार ही आती है। तुम इन विदेशियों के भय या लोभ में आ अपनी जाति और अपने देश को न बेचना। प्राण देकर भी अपने हुनर और धंधे की रक्षा करना।"

कहते हैं कि अंगरेजों ने सैकड़ों शिल्पियों के हाथ और अंगुलियां कटवा डालीं, पर किसी ने भी अपने मुखिया के अमर बलिदान को कलंक न लगने दिया।

—श्रीकृष्ण

गांधीजी के लेखन-स्थान की सफाई करते समय मनु बहन ने बापू की एक बहुत छोटी-सी पेंसिल हटाकर उसके स्थान पर दूसरी बड़ी पेंसिल रख दी। जब बापू कुछ लिखने बैठे तो छोटी पेंसिल न पाकर मनु बहन से उसके सम्बंध में पूछा। मनु ने कहा, "पेंसिल बहुत ही छोटी थी; इस कारण मैंने उसके बदले बड़ी पेंसिल रख दी है। वह पेंसिल इतनी छोटी थी कि आपको लिखने में भी बहुत कष्ट होता।" इस पर बापू बोले, "मनु, यदि मैं इतना-सा कष्ट भी सहन न कर सका तो अहिंसा की कड़ी कसौटी पर कैसे खरा उतरूंगा? आज भारत के लाखों गांवों में ऐसे करोड़ों माता-पिता हैं जो स्कूल जाने वाले अपने बच्चों के लिए पेंसिल का टुकड़ा भी नहीं ले सकते। पेंसिल का इतना-सा टुकड़ा हमारे कंगाल देश में सोने के टुकड़े का महत्त्व रखता है। जब तक हम कौड़ी-कौड़ी का मोल नहीं समझेंगे, हमारा हिंदुस्तान गरीबी व भुखमरी से उबरेगा नहीं।"

—तिलकराज गोस्वामी

मैं बनाम मैं

● कृष्णचंद्र शर्मा 'भिक्खु'

मैं डॉक्टर अविनाश हूं।

एम.बी.बी.एस., एफ.आर.सी.एस., एम.डी. (लंदन), एम.एस. (बम्बई), मकान-नम्बर ६०,०००।

(इस नम्बर को पोस्टल पिन कोड न समझें)।

केमिल्स बैंक रोड,

नयी और पुरानी दिल्ली का संधि-स्थल।

(नो मैंस एरिया नहीं— मिक्स्ड दिल्ली भी नहीं)।

(फुटनोट : दिल्ली नगर-निगम या नयी दिल्ली नगरपालिका के नक्शों में इस नाम की कोई सड़क नहीं है।) और मसूरी में इस नाम की जो सड़क है, उससे इसका कोई वास्ता नहीं है।

खैर किसी कहानी में चाहे वह आत्मकथा ही क्यों न हो, इस प्रकार के विवरणों का कोई महत्त्व नहीं। मैं कह रहा था कि मैं डॉक्टर अविनाश हूं। पर शायद कहानी को उलझन से बचाने के लिए यह कहना अधिक सही होगा कि मेरा नाम डॉक्टर अविनाश है।

मेरठ म्युनिसिपैलिटी के बर्थ-रिकार्ड्स के मुताबिक मैं और डॉक्टर अविनाश एक ही व्यक्ति होने पर भी अब दो

व्यक्ति हो उठे हैं। यह दुर्घटना पुरानी है, पर उभरकर ठीक उस दिन आयी जिस दिन डॉक्टर अविनाश ने अखंडित ब्रह्मचर्यपूर्वक बिताये, जीवन के पचास साल पूरे कर इक्यावनवे साल में पदार्पण किया! पर पदार्पण क्यों, सही तो होगा यह कहना कि आत्मार्पण किया।

डॉ. अविनाश अपने मित्र-समाज में सदा ब्रह्मचारी की ख्याति रखता था। यह सदा सदानंद का संक्षिप्त रूप नहीं है, नये परिचितों के लिए यह कभी-कभी स्पष्टीकरण का विषय बन जाता था। मिस एलिजाबेथ ब्लेकमैन (पता नहीं इस गौरांगना के साथ ब्लैकमैन शब्द कैसे जुड़ा था) उसी मेडिकल कालेज में गायनोको-लाजी की प्रोफेसर थी, जिसमें डॉ. अविनाश हृद्‌रोगों का विशेषज्ञ था। मिस ब्लैकमैन डॉ. अविनाश की चर्चा करते हुए प्रायः कह बैठती, 'डॉ. अविनाश इज़ ए कन्फर्मड् बेचलर।'

जो हो डॉ. अविनाश का ब्रह्मचर्य जगजाहिर था। दूसरे जो भी राय रखते हों उसके ब्रह्मचर्य के बारे में मैं खुद उसका आलोचक ही था। जब डॉ. अविनाश हर तरह से अकेला होता—मतलब कि डॉक्टरी की कोई किताब तक उसके पास नहीं होती—तभी मेरा उससे वार्त्तालाप सम्भव होता। उसके डॉक्टर होने के बाद से हर ऐसे मौके पर बरसों बाद तक मैं उसे यही सलाह देता रहा कि 'माई डियर गुड सेल्फ, अब शादी कर ही डालो।' फिर कुछ बरस बाद मेरी यही सलाह कुछ यूं हो उठी थी, 'माई डियर गुड सेल्फ, अब शादी और मत टालो। कानन अच्छी लड़की है। तोषी भी तुम्हारे लिए आदर्श पत्नी सिद्ध हो सकती है।'
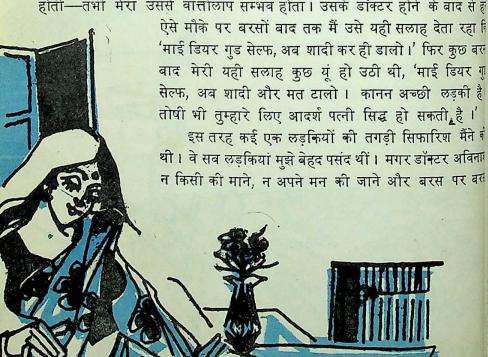
इस तरह कई एक लड़कियों की तगड़ी सिफारिश मैंने की थी। वे सब लड़कियां मुझे बेहद पसंद थीं। मगर डॉक्टर अविनाश न किसी की माने, न अपने मन की जाने और बरस पर बरस

बीतते गये ।

एक दिन मैंने उसे अकेला पाकर कहा था, 'देखो मालती को खोकर तुम जिंदगी भर पछताओगे ।'

डॉ. अविनाश ने मुझे पहचानने तक की कोशिश नहीं की और कह दिया, 'पर इन बातों से तुम्हारा क्या ताल्लुक है ।'

सुनकर मैं चौंक उठा था । मुझे फिक्र नहीं तो किसे होगी ? कुछ नाराजगी के साथ कहा, 'लगता है, अब तुम खुद को भी नहीं पहचानते । खैर 'मैं-तू' का यह झगड़ा तो छोड़ो, पर यह बताओ कि मालती में क्या कमी है ? पढ़ी-लिखी है । बड़े बाप की बेटी है । खूबसूरत है । लाखों में एक है ।'

पर उसने मेरी इस नेक सलाह पर ध्यान न देते हुए कहा था, 'औरत की खूबसूरती एक भ्रम है । दीखने में खूबसूरत औरतों की असलियत जानता हूं । मेरे अपने बेडरूम के कोने में जो कंकाल देखते हो, जानते हो किसका है ?'

'किसका है ?'—मैंने अनायास पूछ लिया था ।

उसने गाज-सी गिराते हुए कहा, 'क्लियोपैट्रा का !'

'क्लियोपैट्रा !' मैंने कुछ ऐसे कहा जैसे चीख रहा होऊं ।

पर वह हंस रहा था । मुझे बौखलाहट से भरकर वह हमेशा खुश हो उठता था ।

फिर हंसते-हंसते ही उसने कहा, 'हर खूबसूरती की रियलिटी यही है । मैं डॉक्टर हूं । हर देह का आदि और अंत जानता हूं ।'

मैंने कुतर्क किया, भले ही अच्छी नीयत से— 'और मध्य !'

'वह तो उन दोनों से भी गलीज है ।' —यह कहकर उसने मुंह कुछ ऐसे बनाया, जैसे जीभ कड़वी चीज से छू गयी हो ।

इस तरह का कनफ्रंटेशन होता ही रहता, मौके-बेमौके और हर बार मैं ही मात खाता । वह ठठाकर हंस पड़ता । एक बार ऐसे ही वार्तालाप के अंत में उसने कहा था, 'कल मेरे साथ अस्पताल चलना । मैं तुम्हें तुम्हारे सपनों की सुंदरी दिखाऊंगा । बड़ी-बड़ी आंखें । मक्खन-सी त्वचा . . . '

निराशा में भी मेरे मन में आशा का उदय

हुआ। मुझे लगा कि डॉ. अविनाश को अभी भी डूबने से बचाया जा सकता है। उसका सौंदर्य बोध अभी एकदम ही नहीं मर गया है। पर तभी मुझे निराशा के भंवर से उबरते देखकर उसने कहा था, 'पर कल मैं उसके एक स्तन को रिमूव कर दूंगा।'

मैंने डूबते हुए व्यक्ति की तरह चिल्लाने की व्यर्थ कोशिश की, 'तुम राक्षस हो—अमानव ! इनह्यूमन।'

उत्तर में मैंने सुना था, 'नो, वेरी मच ह्यूमन। एक उदार इंसान। उसे ब्रैस्ट-कैंसर है। मैं उसे मरने से बचा लूंगा, पर तब क्या वह सुंदर बनी रहेगी ? क्या तब भी तुम उससे शादी करोगे।'

और मैंने डॉक्टर अविनाश को ला-इलाज मान लिया था। इस मामले में लाइलाज। खास तौर से उस दिन जब उसने मुझे एक ऐसी औरत को दिखाया, जिसका चेहरा ढका हुआ था, पर जो बदन से निहायत खूबसूरत थी। सुंदर ढंग से लम्बी। बिहारी की नायिका, और मदुरा की मीनाक्षी-जैसी सुंदरी।

हास्पिटल में बेड पर लेटी हुई वह औरत अस्पताल में व्याप्त आयोडीन की बू पर गुलाब की महक-सी तिर रही थी।

डॉ. अविनाश ने पूछा, 'एनी कमेंट !'

मैंने कहा, 'रति।'

और तभी उसने उस औरत के चेहरे पर से कपड़ा हटा दिया था। मैं कांप उठा। जलकर स्याह और बदरंग चेहरा। पलकों और भंवों के बाल नदारद। नाक की हड्डी दांत-सी चमकती हुई। सिर के बाल झुलसे हुए। एक गाल गली-सड़ी गलगल-सा। मैंने भय से आंखें बंद कर ली थीं और चाहा कि बंद आंखों से ही कुछ इतना तेज भागूं कि उस बद-सूरत चेहरे की याद भी न पकड़ पाये मुझे।

तभी डॉ. अविनाश की व्यंग्य भरी आवाज सुनायी दी, 'डर गये ! छोटे-से यथार्थ का भी मुकाबला नहीं कर पाये ? लो आंखें खोल लो, मैंने इस औरत का मुंह ढक दिया है। यह मार्फिया के इंजेक्शन से बेहोश है। चाहकर भी तुम्हारा पीछा नहीं कर पाएगी।'

मैंने इस पर भी डरते-डरते ही आंखें खोली थीं। डॉ. अविनाश मुसकरा रहा था। मैंने हिम्मत करके पूछा, 'क्या हुआ इसे ?'

डॉ. अविनाश ने कहा, 'इसे खूब-सूरती डस गयी।'

पर जब मैं मूर्ख की तरह उसे देखता ही रहा तो बोला, 'सच ही, तुम्हारे मूल्यों के अनुसार यह एक बहुत ही खूबसूरत चेहरेवाली औरत थी। मैंने इसे पहले भी देखा है। पर खूबसूरत होने पर भी यह बेवफा थी। यह अपने पति से भी इसलिए नफरत करती थी, क्योंकि वह बदसूरत था। इसने अपने लिए एक खूबसूरत प्रेमी को चुन लिया था पर इसका राज खुल गया। वह तेजाब लाया और उसने भरी बोतल इसके मुंह पर उंड़ेल दी।'

यह सुनकर मुझ पर कुछ ऐसी

हैवानगी सवार हुई कि अगर उस वक्त मेरे अपने हाथ में तेजाब की बोतल होती तो मैं डॉ. अविनाश के हंसते हुए खूबसूरत चेहरे को उस औरत के जले हुए चेहरे से भी बदतर बना देता। मैंने दांत किट-किटाकर कहा भी—'यह भयंकर है। उसके पति को फांसी की सजा मिलनी चाहिए। नहीं, उसे जमीन में आधा गाड़-कर भूखे शिकारी कुत्ते छोड़ देने चाहिए। जो भी सुंदरता का विरोधी है वह मान-वता का विरोधी भी है।'

डॉ. अविनाश ने कहकहा लगाकर कहा था, 'खूब। एकदम नयी फिलासफी।'

फिर कुछ सामान्य होकर बोला, 'ओ. के. चिंता न करो! मैं प्लास्टिक सर्जन भी हूं। मैं उसे सुंदर चेहरा दूंगा, पहले से भी अधिक सुंदर चेहरा। पर उसके लिए मैं अपने आप से नफरत करने लगूंगा।'

मैंने बदला-सा चुकाते हुए कहा, 'तुम हमेशा सुंदरता-विरोधी रहे हो।'

उसने कहा, 'पर मैं सचाई का, वास्त-विकता का विरोधी नहीं रहा हूं। सुंदरता कभी वास्तविकता नहीं हो सकती।'

वह हंस दिया था, पर मैं नफरत से भर उठा था।

और इसी तरह डॉ. अविनाश ने उम्र का पचासवां साल भी पार कर लिया। उसकी डिग्रियों में और वृद्धि हुई। नौकरी में तरक्की हुई। पुराने बंगले की जगह नयी आलीशान कोठी बन गयी, पर वह कोठी घर नहीं बन सकी। जैसे कोई शीशे का बड़ा-सा केस हो जिसमें आदमी की शक्ल का कोई जानवर बंद हो। उस जिंदगी को जीना नहीं कहा जा सकता। होटल से खाना होटल का ही नौकर दे जाता। झाड़ू-बुहारी के लिए एक बुढ़िया सुबह-शाम आ जाती, जिसे वह कभी-कभी मजाक में 'मिस ब्लेकमैन' कहकर पुकार उठता। डॉ. अविनाश की जिंदगी घड़ी की सुइयों की तरह बंधकर चलती रहती। मेरी उसकी बहुत कम बात होती। हमने एक-दूसरे के विरोधी व्यक्तित्वों को सह-अस्तित्व की भावना के साथ उदार स्वीकृति दे दी थी। चारा भी तो कुछ न था।

और तभी एक चमत्कार हुआ। इक्यावनवे बरस के ठीक पहले ही दिन डॉ. अविनाश अपनी स्टडी से निकलकर ड्राइंगरूम में आया तो नौकरानी को देखता ही रह गया। वह झाड़ू-बुहारू देकर झाड़न से फरनीचर झाड़ रही थी। कभी खड़ी होकर, कभी झुककर, कभी सीधे, कभी आड़े, हर तरह की सम्भव मुद्रा अपनाती और छोड़ती।

सब कुछ भूलकर डॉ. अविनाश उसे देखता रहा। ठीक-ठीक कहूं तो घूरता रहा और मैं खुद अचकचा कर डॉ. अविनाश को देखता रहा। उस दिन बुढ़िया नहीं आयी थी। उसकी युवा लड़की आयी थी काम पर। वह हाल ही में ससुराल से लौटी थी और बूढ़ी मां को बुखार आ जाने की वजह से उसकी जगह काम पर चली आयी थी। वैसे तो वह पहले भी कभी-

कभी आती रही थी, पर वह युवा हो उठी है, इसका एहसास उसकी शादी की जानकारी के बावजूद मुझे भी आज ही हुआ था। गदराया हुआ वदन। गंदुमी रंग। ठोड़ी और गाल पर गोदने का नीला निशान। कसा हुआ ब्लाउज।

डॉ. अविनाश निर्लज्ज भाव से उसे ताकता ही रहा। उसकी इस हरकत पर मैं हैरत में पड़ गया था।

सफाई कर वह नीचे उतरी तो मैंने देखा, धीरे-धीरे डॉ. अविनाश अब नार्मल हो रहा है। पर तभी डर भी लगा, यह सोचकर कि पचास की उम्र के बाद भी क्या किसी ऐसी हरकत को नार्मल होने का लक्षण मानना ठीक होगा!

मेरी कड़ी निगरानी के बावजूद डॉ. अविनाश अजीबोगरीब आदतों का शिकार होता गया। एक दिन वह ऐसी ढेरों रंगीन तसवीरें लाया जो भले लोग अपनी उमर में भी छिपाकर देखते हैं और वह उन्हें मेज पर फैलाकर कुछ ऐसे देखने लगा, जैसे 'मैटीरिया मेडिका' का अध्ययन कर रहा हो। मगर उस दिन तो गजब ही हो गया!

डॉ. अविनाश अपने डिपार्टमेंट के कमरे में अकेला था। वहीं उससे मिलने एक रोगिणी आयी। उस औरत की शक्ल देखकर उसे रोगिणी कहना मुश्किल था। उसने डॉक्टर को अपनी बीमारी के बारे में बताया। डॉक्टर ने सुनकर कहा, 'लंग्स का कनजेशन लगता है।' और फिर कमरे में बिछे एक बेड की ओर इशारा करते हुए बोला, 'ठीक है, आप लेट जाइए।'

उस औरत ने आज्ञा का पालन किया। डॉ. अविनाश अपनी कुरसी पर से उठा। स्टेथेसकोप उठाया और उस औरत के पास आया, और फिर कानों में स्टेथेसकोप की नलियां लगाकर उसके सीने की जांच करने लगा। जांच में जरूरत से ज्यादा देर से मेरी छाती धड़कने लगी। डॉ. अविनाश का हाथ कांप रहा था।

औरत की आंखों में आग की लपटें कौंधी।

स्थिति की गंभीरता को समझते देर न लगी थी मुझे। आत्म-सम्मान की रक्षा का भाव जब किसी कायर में प्रबल होता है तब वह जो करता है, वही मैंने किया। मैं उस औरत के पांवों में गिरकर माफी मांगने लगा। और इस तरह उस दिन डॉ. अविनाश के सुनाम की रक्षा हुई। वह भली औरत भरी आंखों से कमरे से बाहर चली गयी थी। मेरी जान में जान आयी। डॉ. अविनाश पत्थर-सा हो उठा था।

उस दिन से मेरी चिंता और बढ़ चली। डॉ. अविनाश से मेरा मूक डॉयलॉग भी बढ़ चला।

और फिर एक दिन मैंने डॉ. अविनाश को अपनी ही एक छात्रा के साथ उसके अपने बेडरूम में पाया। यह घटना अचानक गम्भीर रूप ले गयी। डॉक्टर ने कई तरह से बचना चाहा परन्तु कुछ काम न आया। उसने जोर देकर कहा,

'तुम्हें मेरे साथ शादी करनी होगी।'

वह मुझे एक साथ कोमल और कठोर लगी। पर डॉक्टर अविनाश केवल कठोर। उसके होंठ सिकुड़े और फैले। आंखें लाल हुईं और उनकी ज्योति बर्फ-सी ठंडी पड़ गयी। लगा, जैसे वह लड़की पर आक्रमण कर बैठेगा। पर वह तत्क्षण मेज की तरफ घूमा। मुझे राहत मिली। मगर दूसरे ही क्षण मैं सकते में आ गया। डॉ. अविनाश ने फिर मेज का ड्रॉअर खोला और इस बार उसके हाथ के रिवाल्वर की नली लड़की की दिशा में स्थिर थी। मैं आसन्न हत्या के भय से कांपा। डॉ. का हाथ भी कांप रहा था। फिर भी रिवाल्वर लड़की की ओर ही तना था। वह उसी मुद्रा में बोला, 'मैं तुम्हें दो मिनट का समय देता हूं। बेकार बातें नहीं सुनना चाहता। तुरंत यहां से निकल जाओ, नहीं तो रिवाल्वर की छह की छह गोलियां तुम्हारे कलेजे में होंगी।'

मृत्यु से आक्रांत जीवनों की रक्षा करने वाला डॉ. अविनाश मृत्यु की धमकी दे रहा था! लड़की में परिवर्तन आया। वह पत्ते-सी कांपती उठ खड़ी हुई।

कुछ ही क्षणों में मैं और डॉक्टर अकेले रह गये। हम दोनों मौन से बंधे थे। फिर मैंने ही कुछ कहने का प्रयास किया। एक शब्दीय प्रश्न— अब?

डॉ. अविनाश ने उत्तर का प्रयास किया, पर होंठ कांपकर रह गये। मैंने फिर पूछा—'तो अब?'

इस बार वह बोला, 'अब मुझसे अकेलापन नहीं सहा जाता। तुम्हारी सलाह न मानकर मैंने भारी भूल की।'

मैंने सोचते हुए कहा, 'तो मेरी सलाह मानोगे?'

डॉ. अविनाश ने कहा, 'तुम्हीं मेरी आत्मा की आवाज हो? तुम्हारी न मानूंगा तो किसकी?'

मैंने कह दिया था, 'तब शादी न करके तुमने मूर्खता की। अब शादी करके मूर्खता करोगे।'

'नहीं, नहीं, अब कोई और सलाह न दो', डॉक्टर अविनाश कहते-कहते रो पड़ा था। मैं खुद उसके साथ-साथ रोने लगा था। उसके आंसुओं में मेरी समझ डूब गयी थी और मेरे अपने आंसू मुझे अंधा कर रहे थे।

डॉ. अविनाश का रिवाल्वर उसके पास ही पलंग पर पड़ा था। मैंने उसे उठाते हुए डॉ. अविनाश की कनपटी को निशाना बनाया। वैसा करते-करते मैं सोचने लगा था कि जब कल अखबारों में मोटी सुर्खियों में यह छपेगा कि प्रसिद्ध डॉक्टर प्रो. अविनाश ने आत्महत्या कर ली है तो इस कहानी को कौन जान पाएगा? तब मेरे लिए आत्महत्या से महत्त्वपूर्ण यह कहानी हो उठी थी, जो आज आप पढ़ रहे हैं और डॉ. अविनाश यानी मैं, मैं यानी डॉ. अविनाश नये नामों से नयी जिंदगी मर रहे हैं कि नयी मौत जी रहे हैं। अविनाश जो ठहरे।

—स्टेशन डायरेक्टर, आकाशवाणी, पटना

हँसने का मौसम

झनकूजी सुबह की चाय पीने बैठे ही थे कि अखबार में अपनी मृत्यु की खबर पढ़कर हैरान रह गये। उन्होंने तुरंत उठकर अपने मित्र चोपड़ा साहब को टेलीफोन किया, "हलो चोपड़ा साहब, आपने अखबार में मेरी मृत्यु की खबर पढ़ी ?"

चोपड़ा साहब ने उत्तर दिया, "हां, मगर आप बोल कहां से रहे हैं ?"

★

एक नीम-हकीम अपना नया टानिक बाजार में बेचते समय कह रहा था, "भाइयो और बहनो! मैं इस टानिक को पच्चीस साल से बेच रहा हूं, और इस अरसे में मुझे इसके बारे में एक भी शिकायत सुनने को नहीं मिली।"

"मुरदे शिकायत करने आएंगे क्या ?" भीड़ में से किसी ने कहा।

★

एक मरीज को अच्छी तरह देखभाल कर डॉक्टर ने कहा, "मुझे सख्त अफसोस है, मगर मुझे सच बोलना ही पड़ेगा। तुम्हारी हालत बहुत खराब हो चुकी है। अब अंत में तुम किससे मिलना चाहोगे ?"

मरीज ने कुछ सोचकर कहा, "किसी दूसरे डॉक्टर से।"

पति : "दृढ़ निश्चय हो तो कठिन और असम्भव से असम्भव कार्य भी सुगम हो जाते हैं।"

पत्नी : "तो जरा इस टूथपेस्ट को इस ट्यूब में वापस रख दो न !"

★

दो मित्र मिले। परस्पर अभिवादन के पश्चात एक ने कहा, "कल मैंने अपनी पत्नी को बड़ा परेशान किया।"

"किस तरह ?" दूसरे ने पूछा।

"उसे एक नयी साड़ी लाकर दी और घर के सब शीशे छिपाकर रख दिये।"

कब्रिस्तान के चारों ओर बाड़ लगाने के लिए चंदा वसूल किया जा रहा था। सभी लोग अपनी-अपनी सामर्थ्य के अनुसार चंदा दे रहे थे। एक व्यक्ति ने चंदा देने से इनकार कर दिया और बोला, "बाड़ लगाने की जरूरत क्या है? कब्रिस्तान के अंदर ऐसा कोई नहीं जो उससे निकल सके और कब्रिस्तान के बाहर ऐसा कोई व्यक्ति नहीं जो अंदर जाना चाहे।"

★

सम्पादक ने एक महत्त्वाकांक्षी युवा से कहा, "आप कोई कारण बताइए, जिसके आधार पर मैं आपकी कविता प्रकाशित करूं।"

कवि ने कहा, "मैं अपनी कविता के साथ वापसी के लिए टिकट रख देता हूं।"

"तो उससे क्या ?"

"यदि आप कविता छापेंगे तो टिकट आपके पास रह जाएगा।"

*

एक नये तरक्की पाये हुए लेफ्टिनेंट के पास से एक नया रंगरूट निकला, पर उसने लेफ्टिनेंट को 'सैल्यूट' नहीं किया। इस पर लेफ्टिनेंट ने मुड़कर कहा, "तुम्हें फौजी कायदों का जरा भी ज्ञान नहीं। मैं तुम्हें सौ बार 'सैल्यूट' करने का दंड देता हूं।"

इतने में ही जनरल उधर से गुजरा और उसने लेफ्टिनेंट से पूछा कि क्या बात है। लेफ्टिनेंट ने कहा, "इस रंगरूट ने मुझे सैल्यूट नहीं किया। मैंने इसे सौ बार सैल्यूट करने का दंड दिया है।"

जनरल ने (मुसकराकर) कहा, "पर आपको भी तो उतनी ही बार सैल्यूट का जवाब देना होगा।"

*

"बेकार कपड़ा है जी यह ! दो, तीन धुलाइयों में ही सिकुड़ जाता है," झनकू ने कहा।

"दो, तीन धुलाइयों में यह फट भले ही जाए, पर सिकुड़ेगा नहीं", दूकानदार ने आहत स्वर में जवाब दिया।

*

गवाह से जिरह करते समय एक वकील ने पूछा, "तुम्हारा धंधा क्या है ?"

"मैं साधारण बढ़ई हूं," जवाब था।

"साधारण बढ़ई कैसे होते हैं ?"

"वे प्रथम कोटि के बढ़ई के समान नहीं होते।"

"जरा और साफ-साफ बताओ कि साधारण बढ़ई और प्रथम कोटि के बढ़ई में क्या अंतर होता है ?"

"मेरा मतलब है कि एक साधारण बढ़ई और प्रथम कोटि के बढ़ई में उतना ही अंतर होता है जितना कि आप और एक प्रथम कोटि के वकील में।"

"डॉ. साहब मेरी वजह से मेरे खानदान की नाक नीची हो रही है, इसलिए मेरी नाक ऊंची कर दीजिए।"

● हरिभाऊ उपाध्याय

प्रसिद्ध गांधीवादी विचारक और लेखक स्व. हरिभाऊ उपाध्याय का अंतिम लेख हम यहां प्रकाशित कर रहे हैं ।

समस्या जगत के तापों से बचने की है

जगत् को छोड़ो और ईश्वर को पकड़ो—साधु-संतों का यही उपदेश रहा है। जगत को छोड़ो—इसलिए कि जगत मिथ्या है, नाशवान है, त्रिविध तापकारक है। ईश्वर को पकड़ो—इसलिए कि वह सत् है, अविनाशी है, मंगलमय है। जगत को इसलिए छोड़ो कि वह मिथ्या और नाशवान है, यह तो समझ में आता है; परंतु इसलिए छोड़ें कि वह त्रिविध तापकारक है, इस पर विचार करने की आवश्यकता है। प्राकृतिक ताप है सर्दी-गर्मी, वर्षा, आंधी, तूफान हिमपात, वन्य पशु, कांटे आदि। मानुषिक ताप है अन्याय, अत्याचार, चोरी-डाका, खून, मार-काट, बलात्कार आदि। यदि हम ईश्वर को पकड़ लेते हैं तो सचमुच क्या इन तापों से हमारा छुटकारा हो सकता है? और जगत को छोड़ देने का भी आखिर क्या अर्थ है? शरीर के रहते हुए जगत से छुटकारा कैसे हो सकता है? यदि 'छुटकारे' से मतलब 'मन से छुटकारा' है तो आपके यह मान लेने से कि 'मैं जगत में नहीं हूं' आप जगत से बाहर, जगत के सम्बंधों से पृथक, जगत के प्रभावों से परे नहीं हो सकते। इतना ही हो सकता है कि यदि आपका मन उसमें नहीं है तो उसके सुख, दु:खों, तापों और प्रभावों की तीव्रता या उग्रता आपको प्रतीत नहीं होगी। अतः जगत को छोड़ने के बजाय जगत से उदासीन रहने के लिए यदि कहा जाए तो यह समझ में आने लायक है—उदासीन का अर्थ भी यह कि उसमें से अपने सुख-भोग की इच्छा को हटा लेना या संयम में ले आना। दूसरे शब्दों में जगत के प्रति अनासक्ति रखना उचित है। अनासक्ति में जगत से सम्बंध रखते हुए, जगत को प्रभावित करते और जगत से प्रभावित होते हुए भी मन को उससे अलग रखा जाता है, अर्थात जगत के प्रभाव हमारे शरीर को ही स्पर्श करके या अभिभूत करके चले जाते हैं। हमारे मन-आत्मा उससे अछूते रह जाते हैं चूंकि सुख-दु:ख, ताप-शीत आदि शरीर के द्वारा प्रविष्ट करके असल में मन को प्रभावित करते हैं, अतः मन को उधर से हटा लिया उनमें न लगने दिया, तो फिर अकेले शरीर को जगत के प्रभाव अधिक तापदायी नहीं

मालूम हो सकते। हवा के झोंके पेड़ों के पत्तों, टहनियों को हिलाकर चले जाते हैं किंतु उनकी जड़ और तने ज्यों-के-त्यों खड़े रहते हैं।

लेकिन यह तो 'स्वलक्ष्यीय' दृष्टि हुई। हमने अकेले अपने मन को साध लिया तो क्या यह काफी है? अच्छा साध लिया, आप जगत के ताप से अछूते रह गये तो एक लाभ अवश्य हुआ। वह यह कि आपके कारण घर या समाज को जो कष्ट होता उससे वह कुछ बच गया, लेकिन आपने जो यह एक सिद्धि या शक्ति पायी है उसे आप घर, संस्था, संगठन, समाज के काम में नहीं लाते या नहीं लगाते तो क्या आप उस कंजूस की तरह नहीं हैं जो करोड़ रुपया कमाकर, थैली सीकर उस पर सांप बनकर बैठ जाता है। वह धन को न अपने काम में लाता है न दूसरों को उसका उपयोग करने देता है। यह एक किस्म की स्वार्थ-साधना ही हुई। जगत के ताप से बचने का यदि हमें मार्ग मिल गया है तो हमें औरों को भी उस ताप से बचाने का प्रयत्न करना चाहिए। यदि हम मन को जगत से नहीं हटाते हैं, उसमें लिप्त नहीं रहने देते, या मन से अलिप्त रहकर भी अपने घर और समाज के लोगों को उससे लाभ नहीं पहुंचाते और फिर भी कहते रहते हैं कि 'जगत् को छोड़ो', तो इसका अर्थ कायरता के अतिरिक्त और कुछ नहीं हो सकता। जगत के ताप के डर से जगत से भागना कोई पुरुषार्थ नहीं है। जगत के तापों का मुकाबला करना, उनकी तीव्रता को कम करने के मार्ग और साधना खोजना, खोज लेने और पा जाने पर दूसरों को उससे लाभ पहुंचाना—यह पुरुषार्थ है। हमें कायर नहीं पुरुषार्थी बनाना है। पलायनवादी नहीं, कर्मवादी, साहसी, वीरात्मा, संकट और विपत्ति का सामना करने वाले बनना है।

अच्छा, अब ईश्वर को पकड़ने का क्या अर्थ है? ईश्वर की ओर उन्मुख होना। जगत में रहते हुए ईश्वर को प्रधान मानना, जगत को गौण, इसका अर्थ यह नहीं कि जगत व्यर्थ, बेमानी, त्याज्य, निंद्य वस्तु है। जगत प्रत्यक्ष है, इससे हम शरीर रहते हुए

सर्वथा पृथक नहीं हो सकते, इसके सम्बंध, प्रभाव, ऐकांतिक रूप से दुख या तापदायी नहीं हैं, बल्कि कई स्थितियों में सुख, लाभ, आनंद, उल्लास, और हर्ष देने वाले भी हैं। इसलिए उसके ऐकांतिक त्याग का उपदेश सही भी नहीं हैं, अलबत्ता ईश्वर के रूप में हमने एक ऐसी कल्पना की है या हमें ऐसी वस्तु की प्राप्ति हुई है जो जगत के मुकाबले में अच्छी, सुख-शांतिदायी, मंगल-कारक मालूम होती है। इसलिए संतों ने कहा, 'ईश्वर को पकड़ो।' अब ईश्वर भी है क्या जिसे पकड़ें? इस प्रश्न का समाधान कारक, उत्तर अभी तक किसी ने नहीं दिया।

मनुष्य कदम-कदम-पर अपनी अल्पता-ज्ञान, क्रिया और शक्ति तीनों में अनुभव करता है। अल्पता का यह भाव उसे यह मानने के लिए विवश करता है कि ज्ञान, क्रिया और शक्ति में उससे कोई महान शक्ति या सत्ता संसार में अवश्य है। इसी को उसने ईश्वर नाम दिया है। जब तक अल्पता का यह भान रहेगा, तब तक ईश्वर भी रहेगा।

यह सही है कि पूर्वोक्त अर्थ में ईश्वर को माने बिना छुटकारा नहीं है, परंतु ईश्वर को बुद्धि से मानना एक बात है और उसे पकड़कर सब जगत को छोड़ना दूसरी बात है। यह जगत भी आखिर क्या है? यदि इसे ईश्वर ने ही बनाया है तो फिर इससे इतने घबराने और भागने की क्या बात है? जो वस्तु ईश्वर-निर्मित है, उसे आप अनिष्ट, बुरी, निंद्य, त्याज्य कहकर क्या ईश्वर को ही गाली नहीं देते हैं? यदि ईश्वर से इसका कोई नाता-रिश्ता नहीं है तो जगत में रहते हुए वह हमें नहीं मिल सकता। शरीर के रहते हम जगत से नहीं छूट सकते, अतः शरीर के रहते हम भगवान को भी नहीं पा सकते। यदि शरीर और जगत को छोड़ने के बाद ही भगवान मिल सकता है तो फिर जीवित मनुष्यों को उसका विचार करने की आवश्यकता भी क्या है और उसका उपयोग ही क्या है? मनुष्य संसार के ताप से छूटना चाहता है और ईश्वर की गोद में जाकर सुख की नींद सोना चाहता है। इसीलिए तो वह ईश्वर को मानता है, पूजता है, पकड़ना चाहता है। यदि ईश्वर को छोड़-कर उसके हाथ जगत से तापों से छूटने की कुंजी लग जाए तो उसके लिए ईश्वर का क्या मूल्य रह गया? कुछ अनुभवियों ने ऐसी कुंजी बतायी भी है और इसलिए कुछ लोग यह कहते भी हैं कि ईश्वर-वीश्वर के चक्कर में क्यों पड़ते हो? बस तुम स्वार्थ छोड़ो, परोपकार और परमार्थ करो, तुम जगत के तापों से बच जाओगे।

तो मनुष्य की असली समस्या जगत के तापों से बचना है, न कि स्वतंत्र रूप से ईश्वर को पाना। ईश्वर को पाने से उसे जगत के तापों से छूटने की आशा हुई है, और यह आशा अभी भी है इसीलिए वह बार-बार जगत से विरत होकर ईश्वर तक पहुंचने का प्रयास करता है। ●

गुफाओं में बंद लेखकों की दुनिया

• अमृता प्रीतम

पांच बरस पहले जब सतरुगा (यूगोस्ला-विया में) आयी थी, सर्वदेशीय लेखक-घर एक सपना मात्र था। सतरुगा का अर्थ है 'बैंड ऑव रिवर'। इस बार सरकार की ओर से इस घर के लिए जमीन देने की स्वीकृति मिल चुकी थी। इसके लिए तकाजा यह था कि हर देश अपने नाम पर एक पैवी-लियन बनाये। खैर यह फैसला तो, हर देश के सरकारी स्तर पर होता है—पर पड़ोसी देशों के लेखकों के लिए यह सपने-सरीखा लग रहा था।

गांवों, कस्बों और कई शहरों के साथ लगती पहाड़ियों पर कुछ गिरजें हैं, जो समय-समय पर काव्य-मंच भी बना जाते हैं, जैसे नोबल-पुरस्कार-विजेता पाब्लो नेरूदा की काव्य-संध्या एक गिरजे में मनायी गयी थी। आखरिद से लौटते हुए रास्ते में परीलैप नगर का हमें बुलावा था। एक ऊंची पहाड़ी पर बने गिरजे में कुछ कविताएं पढ़ी गयीं और मानेस्टरी में कवियों को दावत दी गयी। पत्थर की पुरानी दीवारें और शहतीरों की छतों वाले कमरों में जलती आग के गिर्द पीढ़े बिछाकर मेहमानों का बैठना बड़ा सुखद था।

इसी तरह मेसीडोनिया की राजधानी स्कोपिया में एक खूबसूरत हाल में कविता-पाठ के बाद, रात का खाना निकट की पहाड़ी पर बनी मानेस्टरी में था।

लोकगीतों में संदल

मेरे पास संदल की कुछ पेंसिलें और पेपर-नाइफ थे, जो मैंने कुछ लेखकों को अपने देश की ओर से सौगात में दिये। स्कोपिया में विदेशी सम्बंधों के निदेशक मिखोविच ने बताया कि मेसीडोनिया के लोकगीतों में भारत के संदल का जिक्र आता है। ये लोकगीत सिकंदर से सम्बंधित हैं—**सिकंदर तो बैठा संदल की कुरसी...**

"भारत के लोकगीतों में सिकंदर का जिक्र आता है?" मिखोविच ने पूछा।

"सिकंदर, तुर्क और मुगल, हमारे देश में हमलावर थे, इसलिए लोकगीतों में उनका वर्णन उपेक्षित है। उनका पहला हमला मेरे प्रांत (पंजाब) को भुगतना

पड़ता था, इसलिए उस दर्द के गीत सिर्फ मेरी भाषा (पंजाबी) में हैं, जैसे—'**मुगलां दां पानी न पियां—चीरे वालियां, रखांगी तेरी लाज**...और हर युद्ध की भयानकता की चरम परिणति मासूम और अज्ञात औरतों की तबाही में होती है, जैसा अभी बंगला देश की जवान लड़कियों के साथ घटा और जैसा इतिहास में हर देश की लड़कियों के साथ घटित हुआ है।"

"मैंने पंजाब देखा है, उसके इतिहास तथा उसकी सभ्यता से मैं परिचित हूं— बस यह समझ लो कि मौंटेनीग्रो यूगोस्लाविया का पंजाब है। जैसे हर बाहरी हमले को पंजाब झेलता रहा, मौंटेनीग्रो के लोग भी कई सदियों तक हमलावरों से जूझते रहे। यूगोस्लाविया में पांच सौ बरस तक तुर्की की हुकूमत रही, पर इस हिस्से में हुकूमत दखल नहीं दे सकी थी। यहां के लोगों का

लेखिका चेकोस्लोवाकिया म

मिखोविच ने संदल की पेंसिल को सूंघते हुए कहा, "हर जंग में सब से पहले हर दिल की खुशबू कत्ल होती है!"

यूगोस्लाविया का पंजाब

टीटोग्राद में जब विदेश-मंत्रालय के निदेशक से मुलाकात हुई तो उन्होंने कहा,

कद सबसे ऊंचा है—और सिर तो और भी ऊंचा है कि वे पांच सौ बरस तक तुर्की की फौज से लड़ते रहे, पर अधीन नहीं हुए।"

टीटोग्राद बहुत-कुछ नया बसा शहर है, पर पहाड़ियों पर बसा सेटीनेय सारे मौंटेनीग्रो की सभ्यता का केंद्र है।

मौंटेनीग्रो का कालिदास

पैत्र पेत्रोविच नेयगोश—बड़े आकर्षक व्यक्तित्व के कवि हुए हैं। सत्रह बरस की उम्र में ही वे अपने क्षेत्र के नेता बन गये थे। वे गिरजे के बिशप भी बने, और शासक भी। साथ ही वे अपने समय के सबसे बड़े लेखक और दार्शनिक भी थे। उनके स्मृति-भवन में जहां उनके हथियार सुरक्षित हैं, वहां उनका पादरी-चोगा और रचनाएं भी हैं। लोग उन्हें मौंटेनीग्रो का शेक्सपीयर कहते हैं। निदेशक ने, जिन्होंने भारतीय साहित्य का अध्ययन किया है, उन्हें यूगोस्लाविया का कालिदास बताया।

मोराचा नदी, सकादर झील और समुद्र का एक भाग सब मौंटेनीग्रो के पैरों में बिछे हुए हैं। संकरी सड़कों के दोनों ओर कई जगह विशाल पहाड़ हैं कि एक भयावह सौंदर्य का अनुभव होता है। घने रास्तों और गुफाओं से होकर गुजरने पर अचानक कोई किला या गिरजा दिखायी दे जाता है, तब दानवीय सौंदर्य देखने के बाद दैवी सौंदर्य देखने का अहसास होता है।

भाषाओं की त्रिवेणी

मौंटेनीग्रो के बाद मुझे कोसोवो का बुलावा था। भारतीय इतिहास के ज्ञाता शेगानेविच ने बताया कि कोसोवो एक त्रिवेणी है जहां सर्बियन, तुर्की और अल्बानियन तीन भाषाओं का संगम है। यहां के शहीदों की कब्रों पर बेजूर फूल उगता है। हर साल सिर्फ छह हफ्तों के लिए यह फूल खिलता है, पर यह टहनी से तोड़ा नहीं जाता। तोड़ते ही मुरझा जाता है। सोचती हूं—यह शायद मानव-मन की एक नाजुक और गहरी जगह का चिह्न है, जो वतन के लिए मर मिटता है, पर उससे टूट नहीं सकता।

कोसोवो जिले का नगर परिसतिना हमलावरों के साथ लड़-लड़कर मरने वाले लोगों की यादों से भरा है। परिसतिना में मेरी कविताएं सुनने के लिए एक सांध्य-गोष्ठी का आयोजन हुआ। अमरीकी कवि हर्बर्ट कूनर मेरे अतिथि के रूप में वहां उपस्थित थे। थियेटर हाल के बाहर, अंदर परदे पर और मंच पर भी भारत का नाम और भारतीय तसवीरें लगी हुई थीं। पृष्ठभूमि में भारतीय संगीत बजता रहा। मेरी यूगोस्लाव-मित्र इलीयाना चूरा ने श्रोताओं को मेरा परिचय दिया। वे लाल रंग की साड़ी पहने थीं। मैं पंजाबी में कविता पढ़ती, वहां के अभिनेता उसका अपनी भाषा में अनुवाद सुनाते।

आतिशबाजी के बाद

सतरुगा फेस्टीवल (समारोह) के चौथे दिन, जब ट्रिम नदी के पुल पर सर्वदेशीय कवि-सम्मेलन था, कुछ ऊंची इमारतों से आतिशबाजी छोड़ी गयी। आतिशबाजी की आवाज से पुल के पास खड़ा एक घोड़ा बिदक गया और उस तरफ भागा जिधर सब कवि बैठे हुए थे। उस पर जल्दी काबू पा लिया गया, किंतु कुछ कुरसियों के उलटने से दो कवियों को चोटें आ गयीं। हर्बर्ट कूनर ने कहा कि कवियों पर हमला करने के लिए यह घोड़ा जरूर किसी 'क्रिटिक' ने भेजा था।

स्कोपिया में एक बैंक की ओर से कवि-गोष्ठी का आयोजन किया गया। बाद में काकटेल दी गयी। यहां फिनलैंड के कवि लासीनूमी ने टोस्ट पेश किया।

जिप्सी इंस्टिक्ट

"नेयगोश के इस स्मृति-भवन में पुश्किन की तसवीर कैसे आ गयी ?" मैंने पूछा।

"पुश्किन जब सोलह बरस का था,

पेत्रोविच नेयगोश
मौंटेनीग्रो का कालिदास

जिप्सियों की टोली के साथ हमारे देश आ गया। सर्बिया उसे इतना अच्छा लगा कि पांच बरस वह यहां ही रहा। अमृता, तुम यहां कब तक रहोगी ?"

"बीस दिन।"

"सिर्फ बीस दिन ! पुश्किन तो पांच बरस रहा था।"

"मेरी 'जिप्सी इंस्टिक्ट' सिर्फ बीस दिनों के लिए है।"

ख्वाजा खिजर की महबूबा

परीलैप में सिगरेट की फैक्टरियां हैं, जहां शायरी की दावत एक फैक्टरी की तरफ से थी। कई ब्रांड दिखाये गये, तो एक बार मैंने हंसकर कहा, "तुम कुछ ब्रांड अपने बड़े लेखकों के नाम पर क्यों नहीं बनाते ?"

"बात तो ठीक है," मुखियाओं में से एक कह रहा था कि स्लोवीनियन लेखक सिरल कासमच ने एक ब्रांड पर लिखा एक शेर सुनाया जो एक लोककथा पर आधारित था। उसका तात्पर्य यह था कि एक स्लोवीनियन लड़की सारी रात दरिया के किनारे नाचने का प्रण करती है ताकि उसका महबूब उसे मिल जाए। रात जब बीतने पर आती है तब उसका महबूब, दरिया का पीर, दरिया में से प्रकट होता है और उसको अपनी बांहों में लेकर दरिया में लौट जाता है।

"तुम्हारी जबान में दरिया के पीर का क्या नाम है ?" मैंने पूछा।

"हमें लड़की का नाम पता है—उर्सका, पर उसके महबूब का नाम नहीं मालूम। हम उसे सिर्फ दरिया का पीर कहते हैं।"

"हमें उसका नाम मालूम है," मैंने कहा, "हम उसको ख्वाजा खिजर कहते हैं। सो हमारे ख्वाजा खिजर की महबूबा उर्सका थी, तुम्हारे देश की लड़की..."

प्राह (प्राग) : दहलीज

कहते हैं कि कुछ कबीले भटककर थक गये, तो एक जगह दरिया के किनारे बहुत खूबसूरत घाटी देखकर बैठ गये। उनके पास कोई ऐसा नेता नहीं था जो उनका मार्गदर्शन करता। आपसी तनाव की हालत में एक प्रौढ़ स्त्री ने भविष्यवाणी की कि यहां पास ही कहीं तुम्हें एक आदमी मिलेगा—तुम्हारा राजा, जो तुम्हारा राज बसायेगा। कबीले उसे ढूंढ़ने लगे। एक दिन उन्हें एक झोपड़ी मिली, जिसका दरवाजा बहुत नीचा था। वे झुककर अंदर गये और झोपड़ी के मालिक को अपना राजा मान लिया और उस जगह को, जहां झोपड़ी की दहलीज थी, 'प्राह' कहकर छोटा-सा गांव बसा लिया। यही अब पहाड़ी सौंदर्य से घिरा—किलों और गिरजों में लिपटा नगर चेकोस्लोवाकिया की राजधानी प्राग है।

जिस दिन मैं प्राग पहुंची—सारा शहर चेक और रूसी झंडों से लाल दिखायी दे रहा था। पता चला एक खास परेड का दिन निकट है। मैं किले, गिरजे, म्यूजियम और आर्ट-गैलरियां देखती, राइटर्स-यूनियन में जाकर कुछ साहित्यकारों से मिली। संयोग था कि आंध्रप्रदेश की लेखिका ऊट्कूरी लक्ष्मी कांतम्मा और कश्मीर के लेखक प्रोफेसर पुष्प भी वहां थे। हम तीनों भारतीय लेखकों का एक-जैसा अनुभव था—उन दर्शकों-सरीखा जो जबान के बंद दरवाजे को कभी इधर से खटखटाते हों, कभी उधर से।

उस शाम झील के किनारे मेरे कमरे में कश्मीरी, संस्कृत और पंजाबी की एक प्यारी-सी महफिल थी—आखिरी नज्म थी—"मैं खुश हूं—पर यह मुझसे क्यों पूछते हो कि कुछ खुशियां इतनी उदास क्यों होती हैं?"

रात कमरे में बैठी कितनी देर तक उस झील को देखती रही जिसमें चितकबरी बतखें चितकबरी खामोशी की तरह तैर रही थीं! कभी-कभी यह खामोशी धीमे से कानों में कहती थी—यह दर्द समझने के लिए चेक होना जरूरी है।

और फिर वक्त आया, धरती के लावे की तरह एक 'वह' मुझे मिली, जिसका सिर पहले प्राग के किसी गिरजे की तरह ऊंचा हुआ, और फिर प्राग के किसी किले के दरवाजे की तरह उसके भिंचे होंठ कांपे—तू किससे मिलने आयी है? यहां कोई लेखक नहीं, जो थे, उनमें से बहुत-से देश से चले गये! जो थोड़े-से रह गये हैं, वे गुमनाम गुफाओं में बैठे हुए हैं। उन तक नहीं पहुंच सकती, न तुझे कोई उन तक पहुंचने देगा। ये पहाड़ उनके इंतजार में खड़े हैं, बस उन्हें देख ले...

और मैं जैसे किसी पहाड़ के पत्थर की तरह पत्थर हो गयी हूं—लगा, न कुछ बोलने लायक रह गया है, न लिखने लायक।

—के-३५, हौजखास, नयी दिल्ली

पं० पद्मसिंह शर्मा के कुछ पत्र

● वियोगी हरि

निजी चिट्ठियां लेखक के वास्तविक व्यक्तित्व की परिचायक होती हैं। अंगरेजी तथा अन्य विदेशी भाषाओं में प्रायः सभी महान पुरुषों के पत्र-संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं—हिंदी में इस दिशा में पर्याप्त काम नहीं हुआ है। पंडित पद्मसिंह शर्मा पत्र-लेखन में भी सिद्ध-हस्त थे। प्रस्तुत हैं उनके कुछ पत्र—

पत्र - व्यवहार स्वभावतः बुजुर्गों तथा बराबरी के मित्रों के साथ मेरा कम ही रहा है। जो पत्र मैंने लिखे होंगे उनकी प्रतिलिपियां अपने पास नहीं रखीं, और जो पत्र—बहुमूल्य पत्र भी, आये उनकी कोई फाइल नहीं बनायी, संभालकर नहीं रखा। बहुत करके मेरी यह लापरवाही थी।

कुछ वर्ष पहले गांधीजी, विनोबाजी, टंडनजी आदि के थोड़े-से प्रेरणादायक पत्रों का एक छोटा-सा संकलन, अपनी टिप्पणियों के साथ 'बड़ों के कुछ प्रेरणा-दायक पत्र' नाम से प्रकाशित कराया था।

साहित्यसेवी मित्रों के भी थोड़े-से पत्र बेतरतीब रखे हुए थे। अधिकांश पत्र पं. पद्मसिंह शर्मा तथा पं. बनारसीदास चतुर्वेदी के हैं। एक-एक-दो-दो पत्र आचार्य द्विवेदी, गोस्वामी राधाचरणजी, रत्ना-करजी प्रभृति श्रद्धेय साहित्य-महारथियों के भी पुराने कागजों में मिले हैं।

बस, कुल इतनी ही सम्पदा है। मन हुआ कि इन पत्रों को अपनी टिप्पणियों के साथ प्रकाशित करा देना चाहिए, यद्यपि कतिपय पत्रों को प्रकाश में लाते हुए कुछ संकोच होता है।

पं. पद्मसिंह शर्मा के पत्रों को यहां अपनी टिप्पणियों के साथ उद्धृत कर रहा हूं, यद्यपि इनमें से कुछ पत्र अन्यत्र कई वर्ष पहले प्रकाशित हुए थे। ये पत्र संवत् १९८१ से सं. १९८५ तक के हैं।

हिंदी - साहित्य - सम्मेलन की मुख-पत्रिका 'सम्मेलन-पत्रिका' का सम्पादन मैंने प्रयाग में रहते हुए लगभग ३ वर्ष तक किया था, जबकि उसका आकार और कलेवर बहुत छोटा था। श्रद्धेय टंडनजी का एक दिन विचार हुआ कि पत्रिका परि-वर्धित रूप में निकालनी चाहिए। अनेक साहित्यसेवियों को लिखा कि सम्मेलन-पत्रिका के लिए वे अपने लेख भेजने की कृपा करें। तब तक पं. पद्मसिंहजी से प्रत्यक्ष मिलने का अवसर नहीं आया था, और शायद उनको कभी कोई पत्र भी नहीं लिखा था, यद्यपि उनके विद्वत्तापूर्ण समीक्षात्मक

लेखों का मैं बड़ा प्रशंसक था। शर्माजी ने जो पत्र लिखा था उसका उत्तर मैंने आलस्यवश न दिया होगा, जिसकी उन्होंने अपने पत्र में मीठी शिकायत की है :

काव्य कुटीर, नायक नंगला,
पो० चांदपुर (बिजनौर)
भाद्रपद कृ. १३,१९८१

श्री वियोगी हरिजी महाराज, प्रणाम।

क्षमा कीजिए आपके श्रावण कृ. ११ के कृपा-पत्र का उत्तर आज एक महीने बाद लिख रहा हूं। चार महीने बाहर ज्वालापुर हरद्वार बिताकर मैं अभी ४–५ दिन हुए, लौटा हूं, आपका पत्र यहां रहा, आकर पढ़ा, बड़ी प्रसन्नता हुई, 'जन्म-दरिद्र मनहु निधि पाई।' लेख की मांग के पत्रों से मैं बहुत डरता हूं, पर आपका पत्र पाकर सचमुच हर्ष हुआ, इसी बहाने आपका पत्र तो मिला। बहुत दिन हुए पुस्तक के साथ एक पत्र भी सेवा में भेजा था; उसका उत्तर न पाकर मैं समझ बैठा था कि वियोगी हरिजी अपने प्रपन्न भक्तों से भी पत्र-व्यवहार नहीं करते। कई बार पत्र लिखने की इच्छा हुई, इसी कारण न लिख सका। 'सम्मेलन-पत्रिका' में परिवर्धन हो रहा है, यह जानकर हर्ष हुआ। यहां आते ही मुझे ज्वर आने लगा है, पहले अंक का समय भी निकल गया है, हो सका तो दूसरे अंक के लिए कुछ लिखूंगा। आशा है सानंद हैं।

कृपाभिलाषी,
पद्मसिंह शर्मा

डढ़ या दो वर्ष तक पत्र-व्यवहार नहीं हुआ। इलाहाबाद से मैं पन्ना चला गया था, जहां लगभग ६ वर्ष रहा। वहीं पर 'वीर-सतसई' और 'प्रेमयोग' ये दो पुस्तकें लिखीं। वीररस की चुनी हुई कविताओं का एक संग्रह भी पन्ना में ही किया था, जो बाद में 'वीर-विरुदावली' के नाम से काशी से प्रकाशित हुआ।

पं. पद्मसिंह शर्मा

शर्माजी साहित्यिक रत्नों के वस्तुतः एक ऊंचे पारखी थे। 'मुदित होहिं पर संपति देखी' यह उनका स्वभाव था। काव्य-सूक्तियों को सुनते ही फड़क उठते थे और खूब दाद देते थे। अनेक लेखकों को जिस सहज प्रेम से उन्होंने अपनाया था उसे भुलाया नहीं जा सकता। उनकी विद्वत्ता और उनकी नम्रता के बीच प्रति-स्पर्धा होती थी, और अंत में नम्रता ही जीतती थी। मुझे भी उन्होंने सहज ही अपना लिया, यों मैं किस गिनती में था? आगे के पत्र में शर्माजी के हृदय की निर्म-

लता एवं शालीनता प्रकट होती है :

काव्य कुटीर, नायक नंगला,
पो. चांदपुर (बिजनौर)
माघ कृ० १, १९८४

प्रिय वियोगी हरिजी, सप्रेम प्रणाम।

आपका ३-१२-२७ का पत्र यथासमय पहुंचा था, पर उसका उत्तर मैं बहुत विलम्ब से दे रहा हूं। इस अपराध के लिए लज्जित हूं और क्षमा चाहता हूं।

बहुत दिनों में आपका पता चला, इस बीच में कई सज्जनों से पूछा, पर किसी ने नहीं बतलाया कि आप कहां हैं। अंत में श्री गुरुप्रसाद टंडन ने मेरे पत्र का उत्तर दिया। फिर आपका कृपा-पत्र आया। यह जानकर हर्ष हुआ कि वीर-भवन (पन्ना) में बैठकर आप वीररस की सामग्री जुटा रहे हैं। ब्रजभाषा का एक कलंक मिटा रहे हैं। 'वीर-सतसई' में आपने खूब बांकपन दिखलाया है। मैं उस पर एक छोटी-सी समालोचना लिख रहा हूं। आज ही प्रारम्भ की है। ब्रजभाषा में भी वीररस की सुंदर कविता हो सकती है, यह उद्देश्य सामने रखकर लिख रहा हूं। 'विशाल भारत' में भेजूंगा। 'विशाल भारत' को आप भी अपना कुछ प्रसाद भेजिए, तो अच्छा हो। चतुर्वेदीजी ने लिखा है कि इसके लिए मैं आपसे प्रार्थना करूं।

ब्रजभाषा के प्राचीन कवियों के काव्यों से वीररस की कविताओं का एक संग्रह आप कर दें तो बड़ा काम हो। इस ओर अवश्य ध्यान दीजिए।

हां, खूब याद आया, कवीन्द्र रवीन्द्र बुंदेलखंड के एक कवि की बहुत प्रशंसा किया करते हैं। (नाम इस समय विस्मृत हो गया है। आप शायद जानते हों।) क्या रवीन्द्र-प्रशंसित उस कवि की कविता प्राप्य है? कहां मुद्रित हुई है? आपने देखी है? उसे प्रकाशित कराने का प्रयत्न आप उचित समझते हैं क्या? रवीन्द्र तो उसके सर्वाधिक प्रशंसक हैं। भरतपुर-सम्मेलन में रवीन्द्र ने अपने भाषण में हिंदी-वालों को उपालम्भ दिया था कि अपने ऐसे सर्वोत्तम कवि का हिंदीवाले नाम भी नहीं जानते! उक्त विस्मृत कवि के कुछ पद्य आप मुझे भिजवा सकेंगे?

बहुत दिन हुए, आपने भक्तिरस के ऊपर एक बड़ा ग्रंथ लिखने का विचार प्रकट किया था, उसका क्या हुआ?

'बिहारी-सतसई' वहीं है, जहां छोड़ी थी। आगे कुछ नहीं हुआ। आशा भी नहीं। मैं इस समय कुछ ऐसी परिस्थिति में आ पड़ा हूं, चिंताओं ने चित्त को इस तरह बेचैन कर रखा है कि लिखने-पढ़ने का उत्साह 'दरिद्र के मनोरथ' की तरह नष्ट हो गया। मेरी दशा ज़ौक़ के इस पद्य के सर्वथा अनुरूप है—

"किताबे मुहब्बत में ऐ हजरते दिल,
बताओ कि तुम लेते कितना सबक हो?
कि जब आनकर तुमको देखा तो वोही,
लिये दस्ते अफसोस के दो वरक़ हो।"

आपसे मिले बहुत दिन हो गये। देखिए कब दर्शन होते हैं। कृपा-दृष्टि

रखिए, कभी-कभी कुशल समाचार लिखते रहिए।

आपका,
पद्मसिंह शर्मा

नीचे जो पत्र उद्‌धृत कर रहा हूं, उस पर तिथि या तारीख नहीं है :

प्रिय वियोगी हरिजी महाराज, नमोनमः ।

८-१२-२८ का कृपा-पत्र मिला, मेरे 'दस्ते अफसोस के दो वरक़' वाले फिकरे से मालूम होता है आप नाराज हो गये, पर बात बिलकुल ठीक है। जब वही 'दस्ते अफसोस के दो वरक' हों तो उन्हें मुराद का गुलदस्ता कैसे कहा जाए ?

बहुत अच्छा जनाब, 'प्रेमयोग' को प्रेमियों के दिलों की नुमायश में भेजिए, मैं कब कहता हूं कि न भेजिए। मेरे पास भी तो प्रेमी का दिल है, वह भी उस नुमायश में होगा। 'प्रेमयोग' कहां छपेगा ? आशा है, आप प्रसन्न हैं।

भवदीय,
पद्मसिंह शर्मा

काव्य कुटीर, नायक नंगला
पो० चांदपुर (बिजनौर)
माघ कृ. १०, १९८४

प्रिय वियोगी हरिजी, सप्रेम प्रणाम ।

९-१-२८ का कृपा-पत्र पाकर कृतार्थ हुआ। आपके पहले पत्र का उत्तर मा. कृ. १ को भेज चुका हूं। आशा है, पहुंचा होगा। उसमें पत्रोत्तर के विलम्ब का कारण लिख चुका हूं, वही, 'प्रमादालस्य-निद्राभिः'।

पत्र लिखने के पश्चात् मैं कई दिन तक 'वीर-सतसई' को थोड़ा-थोड़ा देखता रहा। जिन दिन आपका यह दूसरा पत्र मिला है, उससे पहली रात में 'वीर-सतसई' पढ़ते-पढ़ते भावोद्रेक से अधीर-सा हो उठा। चित्तौड़ और गठेवरा आदि का वर्णन बड़ा ही उत्तेजक प्रतीत हुआ। वास्तव में, आपने बड़ा सजीव वर्णन किया है—हृदय निकालकर रख दिया है—'कागज पै रख दिया है कलेजा निकालके'—मैंने पहले पत्र में भी प्रार्थना की थी—अब फिर अनुरोध करता हूं। वीररस की जितनी भर कविता मिल

पं. पद्मसिंह शर्मा की हस्तलिपि

सके बुंदेलखंड से, राजपूताने से—उसका एक संग्रह आप कर दीजिए। इधर हमारे रुहेलखंड में आल्हे का बहुत प्रचार है। अब कुछ दिनों से कम है, पहले बहुत था। बरसात भर आल्हे की धूम रहती थी। एक बार, कोई ४० वर्ष हुए, मेरे बचपन की बात है, आपके बुंदेलखंड से 'वाज' जाति के नट आये थे, उन्होंने जो बुंदेलखंडी भाषा का आल्हा सुनाया था वह बहुत ही मधुर, रोचक और उत्तेजक था। वैसा फिर कहीं नहीं सुना। इधर आल्हा-चरित अनेक तुक-बंदों ने अपने-अपने ढंग पर गढ़ रखे हैं। आल्हा-चरित की कोई प्राचीन पुस्तक उधर मिल सके या गानेवालों से संग्रह की जा सके, तो उसका एक संशोधित संस्करण प्रकाशित होना चाहिए।

'वीर-सतसई' का साइज मुझे पंसद नहीं आया, पाकेट साइज होना चाहिए था या १६ पेजी। आपने 'सतसई' में 'विरह-वीर' की नयी कल्पना की है, बात अच्छी है—सूझ नयी है। पर उनमें साध्वी 'वीर विधवाओं' की गणना आपने क्यों नहीं की? मैं तो समझता हूं 'विरहिणी ब्रजांगनाओं' से हिंदू-विधवाएं वीरत्व में कुछ कम नहीं हैं। 'वीर-सतसई' पर मैं संक्षिप्त समालोचना लिखना चाहता था, जैसा कि पहले पत्र में लिखा था। पर अब देखता हूं समालोचना लम्बी हो जाएगी, 'ब्रज-भाषा में वीररस' शीर्षक रखा है—लेख का। मुख्य उदाहरण 'वीर-सतसई' होगी।

'सतसई' के ७३वें पृष्ठ पर 'सती-प्रताप' शीर्षक दोहे पर जो फुटनोट है, वह समझ में नहीं आया। दोहे में वर्णित घटना और इंद्रजीत-पद तो सुलोचना के चरित की ओर इशारा करते हैं, लक्ष्मी-बाई की ओर नहीं। 'दुवन' शब्द, जिसका प्रयोग कई बार 'सतसई' में हुआ है, 'द्विषन्' शत्रु ही के अर्थ में है न?

५१ पृष्ठ पर जो १८वां दोहा है, उसका तीसरा चरण यदि यों बदल दिया जाए, 'वृद्ध रोगि-संन्यासि वधि' तो हाल की दिल्ली के भी हस्बहाल हो जाए। खैर, यह तो मजाकिया मशवरा है।

'संजीवन भाष्य' अब पूरा नहीं होगा, चित्त नितांत निर्विण्ण हो गया है, उत्साह ही नहीं होता। हिंदी में अब बड़े-बड़े महारथी पैदा हो रहे हैं। 'महारथी' के नवीन अंक में, जिसमें आपका कड़खा छपा है, एक महारथी ने बिहारी और दास के एक दोहे की तुलनात्मक समालोचना लिखी है। कितना अत्याचार और अज्ञान है! दास का दोहा बिहारी की बिलकुल नकल है। काव्य-साम्य बिलकुल ही नहीं। हिंदी में तुलनात्मक समालोचना का रोग संक्रामक होकर फैल रहा है। दूसरे महारथी 'समालोचक' के नवीन अंक में फरमाते हैं— 'मतिराम - सतसई के प्रकाशन से बिहारी का आसन छिन गया।' जहां ऐसे विवेचक हों, बस साहित्य का बेड़ा पार है।

भवदीय,

पद्मसिंह शर्मा

—एफ-१३/२ माडल टाउन, दिल्ली-६

(अगले अंक में समाप्त)

● राजेन्द्र यादव

(१)

मार्च के अंक में हमने 'नयी कहानी' को लेकर अपने सम्पादकीय 'समय के हस्ताक्षर' में एक प्रश्न उठाया था। इस सम्बंध में हम 'नयी कहानी' के उन समर्थ कथाकारों के विचार प्रकाशित कर रहे हैं, जिनका कहानी के विकास में महत्त्वपूर्ण योग रहा है। इस अंक में प्रस्तुत है राजेन्द्र यादव का लेख। अगले अंक में भीष्म साहनी।

सवाल को इस तरह रखना ठीक होगा कि 'आज का मौलिक हिंदी-कथा-साहित्य लोकप्रिय क्यों नहीं हैं ?'

बात यहां से उठती है कि आज जो रचनाएं पाठकों में बेहद प्रिय हैं वे कैसी हैं ? 'लाखों पाठकों के लेखक' की सफलता कहां है ? इसी दृष्टि से कुछ रचनाओं को पढ़ते हुए मैंने जो नतीजे निकाले हैं वे नये नहीं हैं—सेक्स, सस्पेंस और वॉयलेंस पाठक-प्रिय होने के अचूक नुस्खे हैं। विदेशी लोकप्रिय लेखक नयेपन के साथ और भारतीय लेखक बेहूदे ढंग से इस नुस्खे का प्रयोग करता है—वह शिक्षा और मानसिक-स्तर का अंतर है। इस तरह के लेखक की हर रचना किसी-न-किसी विदेशी लेखक की सफल पुस्तक के आधार पर या सीधे 'भारतीय अनुवाद' के रूप में होती है। 'मेरी कारेली' और 'दूफ्ने दु मौरियर' ने न जाने कितनों को 'आसमान फाड़' लेखक बना दिया है। इस तरह की कहानियां हिंदी फिल्म का जेबी रूप हैं। इसलिए कोई आश्चर्य नहीं कि 'सफल फिल्में' भी इन्हीं कहानियों पर बनती हैं।

हिंदी का दूसरा पाठक-प्रिय लेखन है 'भारतीयता' के नाम पर दी जाने वाली फूहड़ कहानियां। इन कहानियों के भी दो फार्मूले हैं—लेखक अपने मन से तय कर लेता है कि यह 'भारतीय' है और यह 'विदेशी'। अब जो विदेशी और पश्चिमी है उसे गालियां देना, उसका मजाक उड़ाना; 'भारतीय' का समर्थन और प्रतिपादन—उनके चरित्र भी उसी सफाई से बंटे रहते हैं।

'अगर यह अफीम खाने वाला मूर्ख पाठक अफीम चाहता है तो हम अफीम देंगे' के सिद्धांत वाला लेखन निश्चय ही पाठक को बेवकूफ समझता और बनाता है। इस 'लोकप्रिय' लेखक के पाठक और लेखक, दोनों की जिंदगी में कहीं भी वह

सब कतई नहीं है जो ये लिखते या पढ़ते हैं।

अगर लोकप्रिय लेखकों का यह वर्ग पाठक को बेवकूफ समझता है तो दूसरा वर्ग है जिसके लिए पाठक हैं ही नहीं। इन्होंने भी अपने मन में बड़ा सुविधाजनक विभाजन कर लिया है। एक साहित्यिक और कलात्मक लेखन, दूसरा लोकप्रिय और घटिया लेखन, और चूंकि उनकी रचनाओं के पाठक बहुत कम हैं इसलिए लामुहाला वे कलात्मक लेखक हैं। कैसा सीधा और सपाट तर्क है! इन साहित्यिक लेखकों की कोई रचना पाठकों को पसंद आने लगती है तो इन्हें खुद अपने पर शक होने लगता है कि कहीं उन्होंने घटिया तो नहीं लिख दिया ... पाठकहीनता को रचना का कलात्मक आंतरिक मूल्य मानने की सादगी इन्हें इसलिए दयनीय बना देती है कि इनके सामने दूसरा एक-मात्र मूल्य वह लोकप्रियता है जिसका अर्थ घटिया हो जाना है। पाठकों को मूर्ख और अछूत समझकर 'हटो-बचो' करके ये वे कथाकार हैं जो मूलतः कवि हैं और अपनी 'पवित्रता' या साहित्यिकता से आक्रांत हैं! इनके लिए या तो लाखों को बेवकूफ बनाता गलेबाज कवि है या फिर बाथरूम में गुन-गुनाता साहित्यिक... सहज ढंग से लोगों के बीच घूमता-फिरता आदमी नहीं है।

मैं निर्भ्रांत रूप से मानता हूं कि पाठकों से कटकर कहानी ही क्या, कोई साहित्य नहीं जी सकता। अशिक्षा और मानसिक स्तर की समस्या हमारे पाठक और लेखन के बीच आ सकती है, लेकिन उसे कहीं-न-कहीं आज के कथा-लेखन से जुड़ना तो होगा ही। और मेरा खयाल है कि इस कार्य को सबसे अधिक गम्भीरता से 'नयी कहानी' के लेखकों ने ही किया है—यही कारण है कि इन लेखकों ने अपने लेखन को निरंतर एक बढ़ते हुए पाठक-वर्ग के बीच स्पंदित पाया है। हमने न पाठक को 'भीड़' मानकर उसके 'सामूहिक अतीत गौरव' की दुहाई देकर उसे बहकाया; न भेड़ मानकर हिकारत से अपने को हाथीदांती मीनारों में बंद किया; हमने उसे आज के समय में जीने वाले मनुष्य की तरह सम्बोधित करने की कोशिश की; उसके तनावों और दबावों में साथ-साथ जीने का प्रयास किया है। पहली बार हमने उसे मनुष्य और व्यक्ति माना है। जिन आश्वासनों और सम्भावनाओं से हमने उस पाठक-वर्ग को विश्वास में लिया था—उस सबको पूरा कहां किया? हम सभी तो अपनी-अपनी मजबूरियों के नाम पर चुप हो गये हैं।

इसके लिए पाठक को दोष देने के बजाय हमें इस सचाई को दोबारा जांचना होगा कि क्या कारण था : चित्रलेखा-जैसी रचनाएं प्रकाशित होने के साथ ही पाठकों द्वारा हाथोंहाथ ले ली गयी थीं, 'मैला आंचल' अचानक ही चर्चा का विषय बन गया था।

—२९/१७ शक्तिनगर, दिल्ली-७

● भवानीप्रसाद मिश्र

ऋतु-चक्र

मौसम ने आकार दिया था नदी को
और उसी ने छीन लिया
उबलती और उफनती धारा से
बूंद-बूंद बीन लिया
और लोग अब न सींच पा रहे हैं
अपने खेत
न चला पा रहे हैं कारखाने
और तो और जला नहीं पा रहे हैं
घरों में दिये
याने कुछ नहीं होता
हमारे किये
जो होता है, सो मौसम से होता है
नाराज हो जाए मौसम
तो पटक देता है हमें खाई में
खुश हो जाए तो हमें
अपने सिर पर ढोता है
और हम फिर बेफिक्र होकर
जीने लगते हैं
एक अंजुलि जल की जगह
गैलन-गैलन शराब पीने लगते हैं

(२७९५, नेताजीनगर, नयी दिल्ली)

स्वतंत्र भारत की चित्रकला के पच्चीस वर्ष

● जगदीश चंद्रिकेश

पच्चीस वर्ष का समय वैसे तो काफी लम्बा होता है लेकिन किसी कला, संस्कृति और समाज के विकास और उसकी समृद्धि के लिए यह समय काफी कम होता है, विशेषकर उन स्थितियों में जब कि वे संक्रांति काल के दौर से गुजर रही हों। स्वतंत्र भारत की चित्रकला के साथ भी यही स्थितियां रही हैं। फिर भी इन पच्चीस वर्षों में भारतीय, चित्रकला ने उल्लेखनीय प्रगति की है। कला में प्रगति की गति तीव्र रही है जब कि जनता अपने सौंदर्य-बोध और कला के प्रति समझ में उतनी तीव्र गति से विकास नहीं कर सकी। यही कारण है कि आज की चित्रकला, जिसे आधुनिक चित्रकला कहा जाता है, जनता की समझ से परे की चीज बन कर रह गयी है।

इस तथ्य की ओर चित्रकारों का ध्यान आकर्षित कराने पर जो आम उत्तर मिलता है, वह यह है कि 'उनके सामने अहम् समस्या, सृजन प्रक्रिया की रहती है। उन्हें इससे कोई सरोकार नहीं है कि दर्शक उनके चित्र से कितना कुछ ग्रहण कर पाता है।'

पिछले कुछ वर्षों तक चित्रों की प्रदर्शनियां प्रायः ऐसी गैलरियों में हुआ करती थीं, जहां मध्य-वर्गीय जनता आसानी से पहुंच सकती थी। लेकिन इधर एक नया दौर चला है और अब प्रदर्शनियां बड़े-बड़े होटलों की गैलरियों में होने लगी हैं। इसके पीछे व्यावसायिक लाभ का उद्देश्य है। प्रदर्शनी के आयोजक चाहते हैं कि होटल में ठहरे विदेशियों की निगाह इन चित्रों पर पड़े और वे आसानी से इन्हें खरीद सकें। यह एक कड़वा सच है कि इन चित्रों के अधिकांश खरीदार विदेशी ही होते हैं, क्योंकि विदेशियों के लिए ये चित्र विदेशी बाजार की अपेक्षा बहुत सस्ते पड़ते हैं। सच कहा जाए तो कभी-कभी ऐसा मालूम होता है आज का चित्र कला और संस्कृति का अंग नहीं बल्कि एक्सपोर्ट-बिजनेस का एक आइटम है।

"क्या देश की स्वाधीनता ने कला-जगत पर कोई प्रभाव डाला ?" प्रश्न मैंने एक परिचर्चा में चित्रकारों और कला-समीक्षकों के सामने रखा। उनका उत्तर था कि देश की स्वाधीनता से कला-जगत प्रभावित हुआ है लेकिन अपरोक्ष रूप से।

स्वतंत्र राष्ट्र के एक नागरिक की हैसियत से चित्रकारों में एक स्वाभिमान जागा, उनमें आत्म-सम्मान और आत्म-विश्वास पैदा हुआ। विश्व के सभी देशों

से सांस्कृतिक आदान-प्रदान के रास्ते खुल जाने से काम करने के तरीकों और तकनीकों में विकास हुआ इन सब प्रक्रियाओं की छाप चित्रों में देखी जा सकती है।

आधुनिक चित्रकला के विकास-क्रम को खोजने के लिए जरा पीछे लौटें। सन १९४० से पहले की बात है। बम्बई में चंद चित्रकारों : मजीद, भोपले और रेड्डी का एक ग्रुप बना। यह अपने तरह का देश में पहला ग्रुप था, जिसने चित्रकला में सृजन के नये तत्त्वों का समावेश किया लेकिन जनता की असहानुभूति के कारण इनका यह प्रयास सफल नहीं हो सका। परंतु इस ग्रुप से चित्रकारों में ग्रुप बनाने की परम्परा चल निकली, और इसके बाद देश के विभिन्न भागों में ऐसे ही ग्रुप बने। इन ग्रुपों में कभी-कभी चित्रकार अपने सामने कुछ सामान्य उद्देश्य और मान-मूल्यों को लेकर चले तो कभी बिना मान्य-मूल्यों के वैसे ही एकजुट होकर आगे बढ़े। उन्होंने प्रायः मिल-जुलकर सामूहिक प्रदर्शनियों का आयोजन किया और कभी-कभी एकल प्रदर्शनियां भी कीं।

आजादी के दो-तीन साल बाद दिल्ली में भी एक ग्रुप दिल्ली शिल्पी चक्र के नाम से बना जिसमें दिल्ली के 'प्रोग्रेसिव' चित्रकार कंवल कृष्ण, बी. सी. सान्याल, के. एस. कुलकर्णी, दिनकर कौशिक, धनराज भगत आदि शामिल हुए।

इस दौर में कुछ ऐसे चित्रकार भी उभरे, जो किसी भी ग्रुप के नहीं थे। इनमें विनोदबिहारी मुखर्जी, एन. एस. बेंद्रे और शैलोज मुखर्जी का नाम उल्लेखनीय हैं। इनके बाद की अगली पीढ़ी में देश के विभिन्न भागों में ऐसे अनेक चित्रकार उभरे, जिन्होंने अपनी कला द्वारा मौजूदा कला-प्रवाह को आगे बढ़ाया और उसे समृद्ध किया। इनमें बम्बई के पलसीकर, गायतोंडे, सामंत, अकबर पदमसी, तैयब मेहता और जहांगीर सबावाला प्रमुख

पद्मभूषण मकबूल फिदाहुसैन की प्रसिद्ध कृति--देवी। हुसैन ने भारतीय अमूर्त कला को एक नयी दिशा दी है।

सतीश गुजराल की कृति 'स्मृतियों के सहभागी'। गुजराल चित्रों में अनुपम रंग-संयोजन देने के लिए विख्यात हैं।

हैं। इन चित्रकारों ने विविध शैलियों में और तकनीकों में प्रयोग किये और नये मूल्य स्थापित किये। कलकत्ता में पहले ग्रुप के टूट जाने के बाद कुछ वर्षों के लिए वहां शिथिलता आ गयी। इस शिथिलता को तोड़ने की कोशिश एक दूसरे ग्रुप ने की जिसमें चितामणि कार, सोमनाथ होर, सर्वरीराय चौधरी, प्रकाश कर्मकार और गणेश पाइन आदि चित्रकार थे।

आजादी से पहले चित्रकला आंदोलन केंद्र थे कलकत्ता, बम्बई और मद्रास। लेकिन आजादी के बाद इनका मुख्य केंद्र राजधानी होने की वजह से दिल्ली बन गया। इस समय आल इंडिया फाइन आर्ट्स एंड क्राफ्ट्स सोसाइटी ने अधिक सक्रिय रूप से काम किया, सन १९५४ में राष्ट्रीय नव-कलावीथि (नेशनल गैलरी ऑव मॉडर्न आर्ट) तथा सन ५५ में ललित कला अकादमी की स्थापना से कला के विकास के लिए एक वातावरण और कलाकारों को उचित सुविधा, प्रोत्साहन व संरक्षण मिला और दिल्ली से रामकुमार, सतीश गुजराल, अमरनाथ सहगल, लक्ष्मण पाई, बीरेन डे, जे. स्वामीनाथन, कृष्ण खन्ना, शांति दवे, जी. आर. संतोष, विमलदास गुप्त आदि चित्रकारों ने अपने लिए स्थान बनाया।

आजादी के बाद हैदराबाद और अहमदाबाद भी कला जगत के नक्शे पर उभरे। हैदराबाद के विद्या भूषण, सूर्यप्रकाश, लक्ष्मा गौड़ तथा पी. टी. रेड्डी प्रकाश में आये। अहमदाबाद में रविशंकर रावल और बड़ौदा में शंखो चौधरी के नेतृत्व में कई चित्रकार उभरे।

सन १९६३ में एक और ग्रुप आया—'ग्रुप १८९०'। विविध विधाओं में काम करने वाले चित्रकार आपसी मैत्री सम्बंधों के आधार पर इकट्ठे हुए। इनका झुकाव अमूर्त चित्रण की ओर था। अम्बा दास, हिम्मत शाह, ज्योति भट्ट, जेराम पटेल, राघव कनेरिया, जे. स्वामीनाथन, गुलाम शेख और राजेश मेहरा आदि इस के माध्यम से सामने आये।

इसके बाद वैसे तो कई छोटे-बड़े ग्रुप आये-गये लेकिन वे अपने लिए कोई विशेष स्थान नहीं बना सके। ग्रुप से इतर अलमेलकर, वाई. के. शुक्ल, अम्बादास,

बद्रीनारायण, जयंत पारेख, रतन परिमू, विनोद शाह, भूपेन खख्खड़, पीरजी सागरा, प्रद्मन्यु ताना, पी. खेमराज, गौतम बघेला, जीवन अडलजा आदि का उल्लेख किया जा सकता है।

ग्राफिक कला की विभिन्न तकनीकों पर यहां काम तो बहुत पहले से हो रहा है लेकिन ग्राफिक अभी हमारे लिए एक नयी विधा ही है। इसीलिए उसका उचित विकास नहीं हो सका है। लेकिन जो काम हुआ है उसमें कृष्ण रेड्डी और कंवल कृष्ण के ग्राफिक-चित्र अंतर-राष्ट्रीय स्तर पर सम्मान और मान्यता प्राप्त कर चुके हैं। तकनीकी क्षमता और गुणात्मक स्तर की दृष्टि से सोमनाथ होर, जगमोहन चोपड़ा, जरीना, ज्योति भट्ट, डी. डोरास्वामी, देवयानी कृष्ण, वरदा राजन आदि बहुत अच्छा काम कर रहे हैं।

इस तरह आजादी के बाद चित्रकला के क्षेत्र में बहुत काम हुआ है और काफी तेजी के साथ हुआ है। देश की जनता में कला और सौंदर्य के प्रति रुचि में विकास और दृष्टिकोण में बदलाव आया है। सरकार और जनता का भी उचित संरक्षण चित्रकारों को मिला है। अंतर-राष्ट्रीय प्रदर्शनियों में भारतीय चित्रकारों ने भाग लेकर अपने मूल्य स्थापित किये हैं।

भारतीय चित्रकला के पच्चीस वर्षों की चर्चा में यहां ललित कला अकादमी द्वारा आयोजित उस चित्र-प्रदर्शनी का जिक्र करना अनुचित न होगा, जो स्वाधीनता की रजत-जयंती के उपलक्ष में 'स्वातंत्र्योत्तर काल के पच्चीस वर्ष की भारतीय चित्रकला' शीर्षक से दिल्ली में की जा चुकी है तथा मद्रास, कलकत्ता और बम्बई में प्रदर्शित की जाएगी।

इस प्रदर्शनी के अंतर्गत विगत पच्चीस वर्ष की चुनी हुई १९२ कलाकृतियां नयी दिल्ली की रवींद्र गैलरी में प्रदर्शित की गयीं। इन कलाकृतियों में १३५ चित्र, ३५ मूर्ति-शिल्प तथा २२ ग्राफिक चित्र थे। यह प्रदर्शनी अपने उद्देश्य में किसी हद तक सफल रही तो किसी हद तक अधूरी होने के कारण असफल भी। इस प्रदर्शनी में बहुत से चित्रकार चयन के कारण छूट गये। इस प्रदर्शनी में कुल १२९ चित्रकारों के चित्र प्रदर्शित किये गये। जिन चित्रकारों के चित्र इसमें प्रदर्शित थे उनमें से बहुत-सी कृतियां ऐसी थीं जो कि उन चित्र-

'दार्शनिक'—भारतीय चित्रकला को नये प्रतिमान देनेवाले चित्रकार : एफ. एन. सुजा
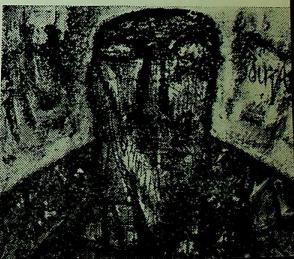
कारों की शैलीगत विशषताओं का प्रतिनिधित्व नहीं करतीं, क्योंकि वे उनके श्रेष्ठ चित्रों में से नहीं हैं। इतने बड़े देश में फैले इतने सारे चित्रकारों की श्रेष्ठ कृतियों का चयन और उन्हें प्रदर्शन के लिए उपलब्ध कर पाना निश्चय ही आसान काम नहीं था, फिर भी वह जरूरी था—जिसके अभाव में यह प्रदर्शनी अधूरी रही।

इस प्रदर्शनी के चित्रों में हुसैन का 'नर्तकी', सुजा का 'दार्शनिक', रजा का' 'अंबर', अकबर पदमसी का 'दो आकृतियां', गायतोंडे का 'ब्लू-पेंटिंग', परितोष सेन का 'बड़े गुलाम अली खां' बेंद्रे का 'कुंए पर', प्रकाश कर्मकार का 'यातना', पलसीकर का 'आकार', गणेश पाइन का 'मछेरा', सतीश गुजराल का 'कोलाज', 'हाथी की सवारी,' मोहन सांवत का 'लाल गलीचा', रामचंद्रन का 'इकोनेग्राफी', स्वामीनाथन का 'परसेपशन' और परमजीत का 'सुनहली पहाड़ी' आदि शीर्षक चित्र विशेषकर उल्लेखनीय रहे।

हेब्बर अमूर्त चित्रांकन को एक विशिष्ट स्वरूप देकर प्रस्तुत करने में दक्ष हैं।

तरुण चित्रकारों में विकास भट्टाचार्य, गौरीशंकर, प्रभाकर बर्वे, शैल चोयल और अरनवाज आदि उल्लेखनीय हैं।

—पोस्टबाक्स २८१७, नयी दिल्ली-६०
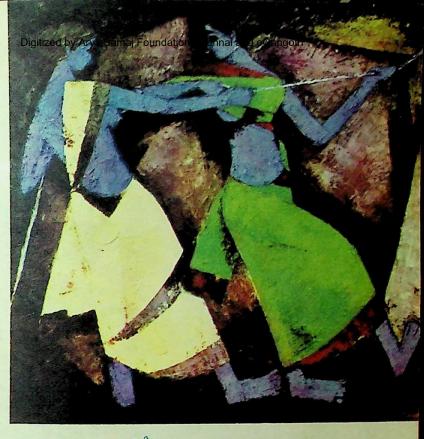
कुएं पर लड़कियां : एन. एस बेंद्रे

"देश की स्वाधीनता से कला-जगत प्रभावित हुआ है, लेकिन अपरोक्ष रूप से। स्वतंत्र राष्ट्र के एक नागरिक की हैसियत से चित्रकारों में एक स्वाभिमान जागा, आत्म-सम्मान और आत्म-विश्वास पैदा हुआ। उनके सोचने-विचारने का दृष्टिकोण बदला। विश्व के सभी देशों से सांस्कृतिक आदान-प्रदान करने के रास्ते खुल जाने से हम विश्व-कला समुदाय के अंग बने, जिससे हमने दूसरे देशों की कला से प्रेरणा और प्रभाव ग्रहण किया।"

शीर्षकहीन : जी. आर. संतोष

छाया० परमजीत

जो न जीवन की गत प
उसे नहीं जीने का
जिसे माटी की महक न
उसे नहीं जीने का

क्यों और क्यों नहीं?

इस लेखमाला के अंतर्गत अब तक अमृतलाल नागर, सुमित्रानंदन पंत एवं अज्ञेय पाठकों के प्रश्नों के उत्तर दे चुके हैं। इस अंक में प्रस्तुत हैं डॉ. बच्चन के उत्तर

क्षमा करें, लेखन से संन्यास ले रहा हूं...

बच्चन

सुभाषचन्द्र 'सत्य', दिल्ली : जब अन्य कवि और लेखक प्रगतिवाद तथा राष्ट्रीय विचारधारा को अपनी रचनाओं द्वारा अभिव्यक्त कर रहे थे, तब आप हाला, मधु और प्यालों में ही खोये रहे, ऐसा क्यों? क्या आप सामयिक कर्तव्य से विमुख नहीं रहे?

बच्चन ने किसी वाद का झंडा उठाकर अथवा नारा लगाकर रचनाएं नहीं कीं। प्रगतिवाद और राष्ट्रीय विचारधारा उनकी मधु-प्रतीकी कविताओं में भी पर्याप्त है। व्यक्ति के सुख, दुःख, संघर्षों को वे अधिक गहराई से, निश्चय ही, अनुभव करते और वाणी देते हैं। हाला, प्याला, मधुबाला केवल प्रतीक हैं; बच्चन इनमें खोये नहीं, इन प्रतीकों के द्वारा उन्होंने अपने को पाया; और उनके बहुत-से पाठकों ने भी पाया। वाद को तो उनकी कविता में इतना प्रगतिवाद देखा गया कि प्रगतिवाद का सबसे बड़ा पुरस्कार (लोटस पुरस्कार) ऐफ्रो-एशियाई राइटर्स कान्फ्रेंस की ओर से उन्हीं को दिया गया। निःसंदेह इसके बीज उनकी आरम्भिक कविताओं में भी मौजूद हैं।

मीना भारती, मुजफ्फरपुर : (१) दो दशकों की हिंदी-कविता (५० से ७० तक) की कौन-सी सही संज्ञा हो सकती है? आपके विचारानुसार कौन-कौन प्रतिनिधि कवि माने जा सकते हैं?

दो दशकों (५० से ७० तक) की हिंदी-कविता को निर्विवाद रूप से 'नयी कविता' की संज्ञा दी जा सकती है। 'अज्ञेय' और मुक्तिबोध इसके प्रतिनिधि कवि माने जा सकते हैं।

(२) स्वातंत्र्योत्तर हिंदी कविता की सही उपलब्धि के सम्बंध में एक प्रमुख हस्ताक्षर होने के नाते आपकी क्या धारणा है?

वास्तव में पिछले पच्चीस वर्षों का समय कविता के लिए उपलब्धियों का रहा ही नहीं, वह व्यापक प्रयोगों का समय रहा है। सच्चाई यही है कि इस काल में जितने प्रयोग किये गये, उतने पहले कभी नहीं

किये गये थे। भारत की स्वतंत्र मनीषा की यह बड़ी साहसिक अभिव्यक्ति थी और उसके दूरगामी परिणाम होंगे।

अवध श्रीवास्तव, विदिशा : 'क्या भूलूं क्या याद करूं,' एवं 'नीड़ का निर्माण फिर' के अध्ययन के पश्चात लगा कि साहित्य-कार संघर्षों, वेदनाओं एवं असामान्य परि-स्थितियों में ही विलक्षण कृतियों की रचना कर सकता है। यदि आपको परिस्थितियां सामान्य मिली होतीं तो 'मधुशाला' या 'निशा निमंत्रण' की रचना हो सकती थी ?

सृजन व्यक्तित्व और परिस्थितियों दोनों से प्रभावित होता है। असामान्य परिस्थितियां मात्र किसी को रचना करने की प्रेरणा नहीं दे सकतीं। सृजनशील व्यक्तित्व सामान्य परिस्थितियों से भी असामान्य अथवा विलक्षण अनुभूतियां संजो सकता है। जरा गौर करके देखें तो 'क्या भूलूं क्या याद करूं' और 'नीड़ का निर्माण फिर' में ऐसा क्या है जो असामान्य है! इससे अधिक असामान्य बहुतों के जीवन में आया है और वे मूक ही रहे हैं। सृजन में व्यक्तित्व और परिस्थिति, दोनों का योग स्वीकार करते हुए भी व्यक्तित्व को अधिक महत्त्व देना चाहूंगा।

रवि डफरिया, रतलाम : एक उभ-रते हुए रचनाकार को देखकर एक घिसा हुआ लेखक अथवा कवि क्या सोचता है?

कि एक दिन मैं भी ऐसा ही था। मुझे तो उसे देखकर ईर्ष्या होती है। काश, मैं फिर उसी की आंखों के सपनों को लेकर चल सकता! हर प्राप्ति निराश करती है, हर कामना उल्लसित।

साहु मधुप, अशोकनगर : (१) राष्ट्रीय चरित्र पैदा करने में हिंदी साहित्य दायित्वहीन एवं असफल प्रतीत होता है। आप कहां तक सहमत हैं ?

यह बहुत अंशों में ठीक है कि हिंदी का पुराना साहित्य अध्यात्म-आतंकित है और वह साहित्य साधारण जनता तक पहुंचा है। उसमें राष्ट्रीय चरित्र पैदा करने की शक्ति कम है, अगर राष्ट्रीय चरित्र का आप साधारण अर्थ लें। व्यापक अर्थ में राष्ट्रीय चरित्र का निर्माण उससे भी होता है। हिंदी का आधुनिक साहित्य निश्चय ही राष्ट्रीय चरित्र-निर्माण में समर्थ हो सकता है; आवश्यकता है उसके काव्य रूप से जनता तक पहुंचने की। खेद है

> हिंदी का पुराना साहित्य अध्यात्म-आतंकित है। वह साहित्य साधारण जनता तक पहुंचा है। आधु-निक साहित्य केवल पाठ्य-पुस्तकों तक सीमित है, साधारण जनता न उसमें रस लेती है, न उससे प्रेरणा

कि हिंदी का आधुनिक साहित्य केवल पाठ्य-पुस्तकों तक सीमित है। साधारण जनता न उसमें रस लेती है न उससे प्रेरणा।

(२) 'मधुशाला' ने आपको ज्यादा 'नाम' दिया या 'अमिताभ बच्चन' ने ?

मधुशाला के द्वारा मैं साहित्य-क्षेत्र में जाना गया और अमिताभ के द्वारा फिल्मी क्षेत्र में।

निश्चय है कि साहित्य के क्षत्र से फिल्म का क्षेत्र बहुत बड़ा है। किताबों की दूकान पर इतने पात्र कहां दिखायी देते हैं जितने सिनेमा हॉल की टिकट-खिड़कियों पर ?

श्रद्धानन्द पाण्डेय, बोकारो : आप अपने जीवन की कौन-सी उपलब्धि सबसे बड़ी मानते हैं और क्यों ?

इसे कि आज इकतीस बरसों से तेजी-जैसी नारी मेरी जीवन-सहचरी है।

उन्होंने मेरे अतीत को मान दिया, मेरे वर्तमान को समझा और मेरे भविष्य को संवारा।

दीनेन्दु भारती, मुजफ्फरनगर : पच्चीस वर्ष की आजादी के बाद भी हिंदी अभी तक राष्ट्रभाषा क्यों नहीं बन सकी ? इसके लिए व्यवस्था उत्तरदायी है या हिंदी की रोटी खाने वाले और कुरसी पर विराजमान देश के बुद्धिजीवी ? अगर कोई साजिश है तो उसमें किसका हाथ है—व्यक्ति का, वर्ग का, व्यवस्था का या संविधान का ?

हिंदी को राष्ट्रभाषा बनाने में ही भूल थी। उसे सम्पर्क-भाषा भर मानना था।

भारत की कोई एक भाषा समूचे भारत की राष्ट्रभाषा बनने के लिए अक्षम है—संख्यागत व्यापकता की दृष्टि से ही नहीं, आंतरिक शक्ति-समृद्धि की दृष्टि से भी।

अमिताभ बच्चन, मां तेजी बच्चन के साथ

भारतीय भाषाओं की यही दुर्बलता अंगरेजी को अपदस्थ नहीं कर सकी।

व्यवस्थाएं भाषाओं को सशक्त नहीं बना सकतीं। 'हिंदी की रोटी खाने वालों' को दोष देना ऐसा ही है जैसा किसी पुख्ता दीवार के गिर पड़ने के लिए दीमकों को दोषी ठहराना। भाषाओं को सशक्त बनाना है तो हमें नींव से चलना होगा, कंगूरों से नहीं।

भेरूलाल शर्मा 'किरण', रतलाम : क्या आपके फिल्मी गीत साहित्य के उतने ही निकट हैं, जितने आपके अन्य साहित्यिक गीत ? फिल्मांकन में उन गीतों का कितना सही मूल्यांकन हो पाया है ?

मैंने आज तक फिल्मों के लिए कोई गीत नहीं लिखा । मेरे दो पूर्व-लिखित गीत ही फिल्मों में लिये गये । एक गीत तो मेरे ही स्वर में ले लिया गया—'मेले में खोयी गुजरिया' । दूसरे को स्वरबद्ध किया गया—'सांझ खिले प्रात झरे फूल हरसिंगार के' । मेरा विचार है कि संगीत से उसकी आत्मा कुछ अधिक निखरी ।

अशोक, विदिशा : आप साहित्यकार की स्वतंत्रता अथवा प्रतिबद्धता को किस सीमा तक स्वीकारते हैं ?

मैं साहित्यकार की स्वतंत्रता का पक्षपाती हूं, पर स्वेच्छया स्वीकृत प्रतिबद्धता का विरोधी नहीं ।

लादी गयी प्रतिबद्धता के प्रति मैं विद्रोह करना चाहूंगा ।

आजाद को मैं उतनी आजादी भी देना चाहूंगा कि वह गुलामी भी स्वीकार कर सके । आजाद की स्वीकार की हुई गुलामी और गुलाम की स्वीकार की हुई गुलामी में बड़ा फर्क है ।

रवींद्रकुमार, हिलसा (नालंदा) : कविता एवं संस्मरण के क्षेत्र में आपने बहुत कुछ दिया । अब क्या हिंदी-आलोचना की श्रीवृद्धि करना पसंद नहीं करेंगे ?

पीठ ठोंकने के लिए धन्यवाद । अब मैं लेखन से संन्यास ले रहा हूं । क्षमा करेंगे ।

वीरेन्द्रकुमार शर्मा, निवाड़ी (टीकमगढ़) : एक निहायत व्यक्तिगत प्रश्न ? आपने अपनी किसी रचना (शायद 'नीड़ का निर्माण फिर') में लिखा है कि तेजीजी से प्रथम आमना-सामना होते ही आप दोनों एकाएक अश्रुप्लावित हो उठे (रो पड़े) और यही आंसू आप दोनों के प्रणय-बंधन का मार्ग प्रशस्त कर गये । क्या यह कथन स्वाभाविक है ? यदि हां, तो फिर चम्पा को, उसके विधवा होने पर, आपने साहसपूर्वक स्वीकार क्यों नहीं कर लिया ?

आपको अस्वाभाविक लग सकता है, पर मेरे जीवन की तो घटना है । पर घटना को स्वाभाविक और सत्य मान लें तो भी किस तर्क से वह परिणाम निकलता है जो आपने निकाला ?

सीधी-सी बात यह है कि ३५ वर्ष की अवस्था में मुझमें जितना साहस था उतना १७ वर्ष की अवस्था में नहीं था । नहीं था, तो नहीं था । जैसा था वैसा बताने के लिए आत्मकथा लिखी है, साहस की डींग मारने के लिए नहीं ।

मैं साहित्यकार की स्वतंत्रता का पक्षपाती हूं, पर स्वेच्छया स्वीकृत प्रतिबद्धता का मैं विरोधी नहीं ।

दुर्गाप्रसाद अग्रवाल, चित्तौड़गढ़ : आपकी नयी कविताओं में पाठकों को अब जरा भी रस नहीं मिलता। स्पष्ट पूछूं तो चुक जाने के बाद ऐसी कौन-सी मजबूरी है जो आपको लिखते रहने के लिए विवश कर रही है ?

मेरी नयी कविता के प्रति अपनी और मेरे अन्य पाठकों की प्रतिक्रिया देने के लिए आभारी हूं। पता नहीं मेरे अन्य पाठकों की प्रतिक्रियाएं जानने का माध्यम आपके पास क्या है ! खैर, आपको इस सूचना से संतोष होना चाहिए कि मैंने अब कविता लिखना बंद कर दिया है, वैसे मेरे लिखे को न पढ़ने के लिए आप पहले भी स्वतंत्र थे। फिर भी आप चाहें तो कह सकते हैं कि मुझको अपने चुकने का एहसास देर में हुआ। हुआ तो, बहुतों को होता ही नहीं; न अपने चुकने का, न चुके हुए ही होने का ! चुकना कोई लज्जास्पद प्रक्रिया नहीं। जो भरा है वही तो चुकेगा। चुकना भरे होने की परिणामी स्थिति है। जो भरा-भरा ही रहा, उसने कभी उंडेला ही नहीं। यहां तो अंतिम बूंद तक उंडेलता गया। जो भरा ही नहीं था वह खाली क्या होगा ! जो भरा है वह एक दिन खाली होता है—एक दिन गांडीवधारी अर्जुन का तरकस भी खाली हो जाता है, और पिद्दे-पिद्दे अहीर उन पर व्यंग्य-बाण छोड़ते हैं, पर अर्जुन अर्जुन ही रहेंगे और अहीर अहीर ही।

देवेन्द्रकुमार, नरकटियागंज (चम्पारन) : हिंदी काव्य में भारतीय सांस्कृतिक परम्परा के प्रतिकूल फारसी हालावाद के प्रयोग की प्रेरणा आपको कैसे मिली ? हिंदी काव्य में यह कहां तक सफल हुआ ?

ये सारी बातें मैं 'खैयाम की मधुशाला' की लम्बी भूमिका में बता चुका हूं। जिज्ञासा हो तो देखें। हालावादी तो मैं न कहूंगा, पर हाला, मधुबाला आदि के प्रतीकों से लिखी मेरी कविताएं ही हिंदी की वे कविताएं हैं जो साधारण से साधारण जनता तक पहुंचीं—शेष या तो पाठ्य-पुस्तकों तक सीमित रहीं या लेखन के पेशे से सम्बद्ध लोगों तक पहुंचीं।

कुन्दनसिंह सजल, सीकर : आज से लगभग १२–१३ वर्ष पूर्व आपने लोकगीतों की धुनों पर आधारित गीत लिखने का प्रयोग शुरू किया था और आपके कुछ बहुत अच्छे गीत उस समय छपे थे। आपने यह प्रयोग बंद क्यों कर दिया ?

यह बहुत खतरे का काम था। 'लय' में बड़ी आकर्षक शक्ति होती है। लोक-लय के साथ लेखक या कवि लोक-मानस में खिंच जाता है, जो बहुत सीमित-संकुचित है। मेरी अभिव्यक्ति जो व्यापक क्षेत्र चाहती थी उसमें लोक-लयों को लेकर प्रवेश करना सम्भव न था।

परमानन्द अश्रुज, डुंडी (जबलपुर): आज के सामान्यजन का झुकाव कविता की ओर नहीं है। क्या कारण है—कविता में लयात्मकता की कमी, नित नये अरुचिकर प्रयोग या कविता की अपेक्षा कहानी

की अधिक ग्राह्यता? आने वाले कल में कविता का स्वरूप क्या होगा?

काव्य में प्रयोग हो रहे हैं, उपलब्धियां नहीं। सामान्यजन प्रयोग में रुचि नहीं लेते।

इस प्रयोग-कार्य में गद्य अधिक आकर्षक होगा। यह गद्य का युग है। कविता का युग तब फिर आएगा जब आज के सारे प्रयोगों को आत्मसात कर कोई नयी उपलब्धि करेगा। भविष्य की कविता के स्वरूप की कल्पना अभी से नहीं की जा सकती, पर निश्चय ही वह दिव्य होगा।

नाटकों का अनुवाद किया। यीट्स पर मैंने शोधग्रंथ लिखा —उनकी शतोर्ध कविताओं का मैंने अनुवाद किया। आधुनिक हिंदी के कवियों में पंत को मैंने सबसे अधिक पढ़ा। उनकी भाषा ने मुझे नहीं छुआ, पर उनकी कविताओं का गठन मुझे बहुत पसंद आया। दार्शनिकों में मेरी विशेष रुचि नहीं रही।

मेरी कविताओं में कोई दर्शन तो जीवन-दर्शन। जीवन जी-भोगकर जो मेरी प्रतिक्रिया हुई वह कविताओं में है।

जगदीश श्रीवास्तव : विदिशा क्या बिना प्रेम किये, अथवा प्रेम में

कवि होने के लिए वियोगी होना ही काफी नहीं ... सृजन तो एक करिश्मा है।

लक्ष्मीनारायण शर्मा 'मुकुर', बरौनी (बेगूसराय) : आपके कवि को किन-किन कवियों, दार्शनिकों ने प्रेरित और उद्‌बुद्ध किया है और किन रूपों में?

तुलसी मुझे घुट्टी में मिले थे। भक्ति-भाव के अन्य कवि भी।

उमर खैयाम ने मेरे कवि-जीवन के प्रारम्भ में अद्‌भुत रूप से मुझे प्रेरित, फिर उद्‌बुद्ध किया। मैं 'उमर खैयाम' पर एक कविता लिखकर उनके प्रति अपना ऋण व्यक्त कर चुका हूं—कविता 'आरती और अंगारे' में है। अंगरेजी के पुराने कवियों में शेक्सपियर और आधुनिक कवियों में डब्ल्यू. बी. यीट्स मेरे प्रिय कवि रहे। मैंने शेक्सपियर के चार

असफलता की पीड़ा भोगे कविता का सृजन सम्भव है? क्या आप मानते हैं कि 'वियोगी होगा पहला कवि'? आपने भी यह वियोग भोगा या नहीं?

अगर आप हास्य-व्यंग्य और बौद्धिक कविता को कविता मानते हैं तो बिना प्रेम के अनुभव के भी कविता लिखना सम्भव है। भावना-प्रेरित कविताएं लिखने के लिए प्रेमानुभूति अनिवार्य है।

वियोगी और कवि दोनों होना पड़ेगा तभी उसकी भावनाएं अभिव्यक्ति पा सकेंगी। सृजन कोई सरल काम तो नहीं, बहुत कठिन काम है—करिश्मा है।

—२० प्रेसीडेंसी सोसाइटी, नार्थ-साउथ रोड नं. ७, जुहू पार्ले स्कीम, बम्बई-५६

● गिरिराज किशोर

इस अंक से एक नया स्तम्भ—खोयी हुई कहानी। पिछले कुछ वर्षों में कहानी भटक गयी है। अब जो नये कहानीकार उसका नया सूत्र खोजने की कोशिश कर रहे हैं, उनकी तलाश हमारा उद्देश्य है। इस क्रम में सबसे पहले गिरिराज किशोर की यह कहानी।

—सम्पादक

वाचाल-समागम

सुगमसिंह ने डिबिया से तम्बाकू लेकर अपने निचले होंठ और दांतों के बीच की दराज में दबा लिया और ऊं...ऊं...करके दूसरों को भी लेने के लिए उकसाया। छेदीलाल ने भी तम्बाकू लेकर दूसरों की तरफ उसी ढाल ऊं...ऊं...किया। रामी और कादिर खी...खी...करके हंस दिये। तब तक सुगमसिंह हाथ-वाथ पोंछकर कलम

उठाते हुए बोले, "अच्छा तो गिरजा बाबू, डाइरेक्टर साहब का परोगराम कैसे बनाया जाए। एक तो इंसपैक्टर साहब ने कहा, दूसरे डाइरेक्टर साहब का डाइरेक्टर बनने के बाद पहला दौरा—" फिर रुक कर थोड़ा शरमाये और धीमे से बोले, "जब डाइरेक्टर साहब यहां इंसपैक्टर थे तब मैं उनके नीचे जूनियर बाबू था।"

छेदीलाल बाबू आंख मिचमिचाकर बोले, "माफ कीजिए ठाकुर साहब, आपने इसी डिबिया से डाइरेक्टर साहब को तम्बाकू खिलाया है, ही ऽ ऽ।"

कादिर ने रामी के कान में धीरे से कहा, "कहो तो कह दूं, छेदीलाल बाबू आप आंखें ही मिचमिचा लिया करो। साला पलक पीटना।" रामी ने उसका हाथ दबा दिया—"रहने दो।"

सुगमसिंह को उन लोगों की बात पर ध्यान देने का मौका नहीं मिला। बल्कि छेदीलाल की बात पर देर तक हंसते रहे। चश्मा उतारकर कुरते के छोर से आंखें मलते हुए धीरे से बोले, "उनकी किरपा थी। नहीं तो कुजा हम, कुजा वो।"

उन दोनों सरकशों में से रामी बोला, "ये डिबिया क्या उसी जमाने की है? अरे फेंकिए!"

गिरजाबाबू बोले, "... तुम क्या समझोगे इस डिबिया की कदर! यही वो डिबिया है, जिसने भसीन साहब को इंसपैक्टरी से डाइरेक्टर बना दिया...जी हां! और इसी ने शर्माजी को डिप्टी

आत्म-कथ्य

जन्म-स्थान : मुजफ्फरनगर, आयु : ३८ व
सम्प्रति : नौकरी में व्यस्त।
कहानी-संग्रह : १. नीम के फूल, २. चा मोती बेआब, ३. पेपरवेट, ४ रिश्ता और अन्य कहानि
उपन्यास : १. लोग, २. चिड़ियाघ ३. यात्राएं, ४. जुगलबं

मुझे भी अपने लेखन का 'क' 'ख', 'ग' कुछ इस रूप में याद आत है कि नवीं क्लास में दो तरह व रचनाएं पढ़ने को मिलती थीं—साहित्यि और साहित्येतर यानी मनोरंजक औ साहित्यिकनुमा। जो रचनाएं आकर्षि करती थीं, बाद में पता चला, उन्हें साहि त्यिक माना जाता था और जो विकर्ष पैदा करती थीं, वे सस्ती थीं।

वात्स्यायन की कहानी 'रोज' ने मु उस समय भी आकर्षित किया था। शाय उस समय उसका नाम 'गैंगरिन' था प्रेमचंद मुझे तब भी कहानी-सम्राट लगे

नागरजी की जो इमेज 'बूंद औ समुद्र' पढ़ने के बाद बनी थी, उ इमेज में उनका कोई दूसरा उपन्या कुछ जोड़ नहीं सका। 'मुगलों ने सलतन बख्शी' या 'दो बांके' कहानी ने जि साहित्यिक प्रबुद्धता का परिचय दि उस लेखक का वही परिचय मेरे साम अभी भी है।

मेरी एक हमउम्र षोडषी मित्र

पढ़
कुः
का
जर
था
डा
ता
उस
लेर
हुई
के
दि

भव
अन्
मुि
रह
बि
लेख
ही
सूज
अप्र

गिरिराज किशोर

पढ़ने के लिए मुझे दो उपन्यास दिये थे। कुशवाहाकांत का 'लाल-रेखा' और भारती का 'गुनाहों का देवता'। उस मित्र का उस जमाने में मेरे लिए भावनात्मक महत्त्व था। इसलिए उन्हें रात-दिन लगकर पढ़ डाला था। अपनी उस मित्र से मैंने उनकी तारीफ भी की थी। मुझे लगता रहा उस वक्त 'गुनाहों का देवता' के पात्रों को लेकर जो अंदर ही अंदर मुझ पर प्रतिक्रिया हुई, उसने उस तरह के पात्र निर्मित करने के लिए हमेशा के लिए अशक्त कर दिया।

अब जब रचनात्मक स्तर पर अनुभवों के अलगाव के साथ जीना जाना तो अनुभव हुआ कि रचनात्मक स्तर पर मुक्ति का संघर्ष दिन-पर-दिन बढ़ता जा रहा है। और पूर्ववर्ती लेखन को ही नहीं, बल्कि अपने लेखन को, अपने समकालीन लेखन के प्रभावों को भी नकारने के बाद ही जीवन के नये-नये अनुभवों के साथ सृजनात्मक स्तर पर जुड़ा जा सकता है।

इंसपैक्ट्टरी से डिप्टी डायरेक्टरी दिला दी।"

सुगमसिंह के बीच में बोल देने से वे वहीं थम गये, "छोड़ो गिरजा बाबू बच्चे हैं। जान जाएंगे।"

"नहीं जानेंगे तो पछताएंगे।" छेदीलाल ने अपनी उसी मर्दानगी से बात को पटकी दी।

आंखें मिचमिचाकर फिर बोला, "डाइरेक्टर साहब तो इंसपैक्टरी के जमाने में भी आपको बहुत मानते थे। सुना है, जहां जाते थे वड़े बाबू की जगह आपको साथ ले जाते थे। जब मन हुआ, हाथ फैला दिया और ठाकुर साहब की यह डिबिया उनके हाथों में पहुंच गयी। इसी डिबिया को डाइरेक्टर बनाने का सौभाग्य प्राप्त है।"

सुगमसिंह ने कलम फिर उठा लिया, "अच्छा-अच्छा, काम करो। बड़े आदमियों ही की बात करने से आदमी कमजोर पड़ता है। उनकी तो बात ज्यों केले के पात, पात में पात! हां तो डाइरेक्टर साहब की पहुंच किस वक्त है?"

रामी बोला, "साढ़े आठ बजे पहुंचेंगे।"

सुगमसिंह ने आंखें ऊपर को उलटकर सोचा फिर बोले, "हूं, ऽ ऽ, अब बनी बात! लिखिए गिरजा बाबू। डाइरेक्टर साहब की गंगा ब्रिज पर आठ बजे पहुंच। फिर थोड़ी जगह छोड़ कर लिखिए—इंसपैक्टर साहब द्वारा अगवानी।"

छेदीलाल के चेहरे पर दिमाग लगा कर सोचने का पूरा तामझाम नजर आ रहा था। धीमी आवाज में बोले, "जरा

ठहरिए। इंसपैक्टर साहब क्या अकेले ही गंगा ब्रिज पर जाकर अगवानी करेंगे?"

सुगमसिंह फिर गम्भीर होकर गरदन हिलाने लगे। कुछ देर हूं...हूंहूं,...हूं...हूंह...करते रहे। फिर बात पर आये, "छेदीलाल, तुम अच्छा सोचते हो। हां, तो छेदीलाल बाबू, ये तुम ही लिखो—रामो देवी कन्या स्कूल की प्रिंसपिलानी लछमी—शक्ल-सूरत से भी अच्छी है। डाइरेक्टर साहब के पास आती रहीं। इसमायिलिया कालिज का प्रिंसपिल वजहद अली, रैदास इंटर कालिज का...वो क्या नाम...वो बालिमकीवा और तीनों कालिजों के मैनेजर—माले ले-लेकर साढ़े सात बजे गंगा ब्रिज पर पहुंच जावें। चिट्ठी लेकर किसी होशियार चपरासी को भेजना। गिरजा बाबू बीच ही में बोल दिये, "दो चार को और कहला दीजिए..."

कादिर बोला, "हां माले पहन लेने के बाद डाइरेक्टर साहब सरकिट हाउस पहुंचे, साढ़े आठ बजे। क्यों ठाकुर साहब?"

सुगमसिंह ने गरदन हिलाकर कहा, "तो गंगा ब्रिज पर अगवानी का परोगराम पूरा। ये हुई ना बात। आगे...?"

सुगमसिंह ने दूसरी बात शुरू कर दी, "गिरजा बाबू, डाइरेक्टर साहब हमारे इंसपैक्टर थे। कर्नल पोलवुड डाइरेक्टर थे। आखरी अंगरेज डाइरेक्टर। आग का गोला। ना छुआ जाए न बुझाया जाए। दौरा हुआ। अंगरेज का मामला। खुश हो जाए तो तख्त और नहीं तो तख्ता। हम ठहरे अपने इंसपेक्टर साहब के सा[थ] परछाईं की तरह लगे रहने वाले। एक रोज तो यहां तक हुआ, दिन [भर] गाड़ी में घूमते रहे। ना ये बोले, ना हम। उस रोज सबेरे से रात तक एक बा[र] भी डिबिया नहीं मांगी। हम सोचें, साह[ब] नाराज हो गये? या हम से कोई गल[ती] हो गयी? हिम्मत पड़े नहीं जो पूछ लें। दिन भर चक्कर काटने के बाद रा[त] को जब बंगले पहुंचे तो साहब ने हमा[री] तरफ देखा। हम रुआंसे। अब रोये अ[ौर] तब रोये। साहब ने ही कहा, 'सुगम सि[ंह] आज तो डिबिया ही नहीं खुली।' हम[ने] फौरन डिबिया निकालकर बढ़ा दी, अ[ब] तक भरी। हमसे पूछा, 'आज तुमने भी न[हीं] खाया?' हमारा कंठ ही ना फूटे। साह[ब] बोले कुछ नहीं। पहली चुटकी हथेली प[र] मली और हमारी तरफ बढ़ा दी। बस भ[ैया] गिरजा बाबू, हम पानी-पानी।"

कादिर बीच ही में बोला, "हां, [तो] डाइरेक्टर साहब की साढ़े आठ बजे सरकि[ट] हाऊस पहुंच..."

"वहां का इंतजाम?" छेदीलाल फिर उसी ताम-झाम के साथ माथे पर ती[न] तेवड़ी डालकर पूछा।

"वहां का इंतजाम...!" सुगमसि[ंह] अपने आप ही बोले, "वहीं का इंतजाम [तो] असली इंतजाम है। एक तो पहला दौरा, दूसरे दबंग आदमी। नाराज हो जाए [तो] कुरसियों से उखड़वाकर फिंकवा दे।"

कादिर ने फिर कहा, "बड़े बा[बू]

आगे लिखवाइए ना। हमें तो अभी कुरसी मिली ही नहीं, हमारा क्या उखड़वा देगा।''

सुगमसिंह ने चश्मा उतारकर उनकी तरफ देखा, ''अभी बहुत दिन नौकरी करनी है। ये जुआ है जुआ, कंधे पर धीरे-धीरे निशान बनाता है।''

फिर गिरजा बाबू से बोले, ''हां तो लिखो, सब सरकी स्कूल के हेडमास्टर, डिप्टी साहबान, प्राइवेट कालिजों और स्कूलों के मैनेजर और प्रिंसिपल सरकिट हाऊस आठ बजे पहुंचेंगे। छेदीलाल, इसकी चिट्ठियां तुम्हें तैयार करनी हैं। नोट कर लो।...और हां, अनाथालय के लड़कों का बाजा। बस, फिर काम फिट।''

सुगमसिंह बोले, ''अंगरेज ये सब ताम-झाम पसंद नहीं करते थे।''

छेदीलाल बोले, ''उनकी बात और थी। अब तो सब अपने हिंदुस्तानी भाई हैं। हिंदुस्तानी ही इंतजाम भी होना चाहिए। बच्चों से दो चार नारे भी लगवा दें। एक-आध गाना गवा दें। सरकी जूनियर स्कूल में एक मास्टर कविता लिखता है। उसे कहला दें।''

''बस—बस, एक-एक परोगराम को फिट करते चलो। पहले शिक्षक संघ वालों को निपटाओ। बड़े दुष्ट हैं। इन लोगों की पहुंच मिनिस्टर और चीफ मिनिस्टर तक है। पता नहीं, नौकरी से किसकी फुरसत करा दें। अच्छा पहले घंटा भर आराम का दो। लिखो साढ़े आठ बजे से साढ़े नौ बजे तक रेस्ट।''

''रेस्ट!'' कादिर ने आश्चर्य से दोहराया, फिर बोला, ''आते ही रेस्ट?''

सुगमसिंह ने नजर अंदाज करते हुए कहा, ''आप लिखो गिरजा बाबू। लिखा? अरे, उनके कुछ प्राइवेट लोग होंगे, उनसे मिलेंगे, बातें करेंगे। या नहीं? आराम

का मतलब ये थोड़े ही है कि आते ही लमलेट हो जाएंगे। फिर लिखो, साढ़े नौ बजे से दस बजे तक शिक्षक संघ से मुलाकात।"

कुछ रुककर सुगमसिंह ने फिर बोलना जारी कर दिया, "जब ये डाइरेक्टर साहब यहां इंस्पैक्टर थे ... ये आपका इसमायिलिया कालिज नया-नया हाईस्कूल हुआ था। चार साल से गरान्ट के लिए दौड़ रहे थे। उस जमाने में हमारे बड़े बाबू बनत बाबू थे। बनत उनके गांव का नाम था। कलम के पुख्ता। जो लिख दें आखिर तक की खबर लाये। इसमायिलिया कालिज का मैनेजर था अव्वल नम्बर का खसीस। बनत बाबू लेते-देते नहीं थे। पर कभी-कभाक आदमी फल-फुलैरी को कह भी देता है। वे उससे बहुत नाराज। एक रोज आये और अंदर। साहब भी समझते थे। बोले, 'कहिए खां साहब ?' उन्होंने सीधे अपनी बात शुरू की, 'सरकार हमारा स्कूल कैसे चलेगा ? जमा-पूंजी तो सब शर्तों को पूरा करने में लगा दी, गरांट मिलनी शुरू नहीं हुई।' हमारे यही डाइरेक्टर साहब बहुत जोरों से विगड़ गये, 'तुम्हारे यहां है कुछ, जिस पर ग्रांट मांगते हो। ना बिल्डिंग, ना मास्टर, ना कायदे का प्रिंसिपल और ना वक्त पर कोई रिटर्न ?' 'तो सरकार आप ही बताएं, हम क्या करें। कहिए कालिज बंद करके चाबी आपको दे जाएं।' साहब बोले, 'तुम एक काम करो। पचास रुपया महीना हमको दिया करो।' वो मुंह बाकर देखने लगा। इतना बड़ा अफसर पचास रुपया महीना मांग रहा है इन्होंने फिर कहा, 'और साल में दो रोज के लिए अपने बड़े बाबू को हमारे दफ्तर भेजा करो।' बस, हर महीने लिफाफा आ जाता। अपनी डायरी खोली, घंटी दबायी —फलां बाबू को बुलाओ। बाबू आया वो डाटकर बोले, 'उठाओ लिफाफा। वह आनाकानी करे तो डाट दें, 'उठाओ और दफा हो!' बाहर खोलकर देखे तो पचास रुपये। हर महीने एक बाबू को सीनियारिटी से लिफाफा मिल जाता। गरान्ट का मौका आये तो साहब बुलाकर बनत बाबू से कह दें, 'जरा देख लेना बनत बाबू।' तो इस प्राइवेट मैनेजमेंट को हम क्या समझें। नंगा-उघाड़ा सब तो हमने देखा है।

"गिरजा बाबू, लिखो गवर्मेन्ट कालिज साढ़े दस बजे," रामी को डाटकर बोले, "मेरा मुंह क्या देख रहे हो ? गवर्मेन्ट कालिज से आयी है ना चिट्ठी ! अरे भाई बोलो ना। अगले साल वहां के प्रिंसिपल क्लास वन में आ जाएंगे। कौन जाने यहीं इंसपेक्टर बनकर आ जाएं।"

कादिर सरकशी से बाज आये बिना बोला, "आपको भी तो मिलता रहा होगा वो लिफाफा ?"

तुरंत ही रामी ने पूछा, "हम लोगों को नहीं मिल सकता ?"

"चिट्ठी पढ़ो बरखुदार। नहीं तो वाकई लिफाफा मिल जाएगा। बोलो, वहां क्या जलसा है ?" सुगमसिंह ने गौर से

उनकी तरफ देखा।

"जलसे का नाम नहीं लिखा। होगा स्कूल के बच्चों को चने-वने बांटने के कार्य-क्रम का उद्‌घाटन।" रामी तलखी से बोला।

सुगमसिंह गिरजा बाबू की तरफ देख-कर बोले, "लिख दो—विजिट।"

गिरजा बाबू लिखकर बोले, "इंस-पैक्टर साहब से भी पूछ लें तो अच्छा हो!"

छेदीलाल ने बात को बदला, "चना तो हमारे जमाने से बंटता है।"

कादिर बोला, "तब रोज बंटता था, अब उसी दिन बंटेगा।"

"अगला परोगराम?" सुगमसिंह ने चश्मा उतार लिया।

"लंच।" गिरजा बाबू ने मौका ताड़ कर प्रोग्राम झांक लिया।

"हां, एक तो बज ही जाएगा। प्रिंसि-पल साहब से कहला देना, गिरजा बाबू, बढ़िया जलसा करायें। ऐसा-वैसा जलसा डाइरेक्टर साहब को पसंद नहीं आता। रामो देवी कालिज के जलसे से उठ आये थे। ये इंसपैक्टरी के जमाने की बात है।

"हां तो लंच के बाद?" रामी ने पूछा।

छेदीलाल बोला, "आराम!"

कादिर ने तुरंत कहा, "ये दूसरा आराम!"

"हां आराम करने की डाइरेक्टर साहब की पुरानी आदत है।"

"तो आराम का एक घंटा?"

"एक घंटा नहीं डेढ़ घंटा कर दो। ये डाइरेक्टर साहब दोपहर में कुछ देर सोने के आदी हैं। दोपहर को लंच वगैरह लेकर मंत्रीजी सर्किट हाऊस गये तो साहब ने सोचा, हम भी आधा घंटा कमर सीधी कर लें। जल्दी-जल्दी जाकर कपड़े पहने-पहने ही लेट गये। साहब को आ गयीं नींद। ढाई बजे, तीन बजे साढ़े तीन बजे...! साढ़े तीन बजे, तो हमें परेशानी शुरू हुई। चार बजे मंत्रीजी का परोगराम। अब कैसे हो? आव देखा न ताव, घुस लिये अंदर। एक कमरे से हल्की-हल्की नाक बजने की आवाज आ रही थी। हम वहीं चिल्लाये, 'साहेब... साहेब...' साहब हड़बड़ा के उठे और उसी घबराहट में वाहर। साहब पूछें, 'कहो सुगम-सिंह?' हम क्या कहें...बस मुंह से यही निकला, 'सरकार, चार बजने में बीस मिनट रह गये।' साहब को एकदम ध्यान आया। बोले, 'सुगमसिंह, आज तुमने हमारी नौकरी बचा ली। जल्दी से चलो सुमित्राजी के घर।' सुमित्रा देवी और मंत्री-जी का पुराना मामला था।

छेदीलाल ने गम्भीरतापूर्वक कहा, "बड़े लोगों को अपने बचाव के लिए सब कुछ करना पड़ता है।"

"साढ़े चार बजे का प्रोग्राम—जिला बोर्ड के अध्यापकों से मुलाकात, जिला पुस्तकालय का निरीक्षण।" रामी एक सांस में बोल गया। उसके बोलने से सुगमसिंह सम्भले।

"तो ऐसा करो, पांच बजे अगला परोगराम लगाओ। जिला पुस्तकालय

का निरीक्षण रखो । वहीं बाकी सब परोगराम लगा दो। हॉल बहुत बड़ा है ।"

"मुलाकात तो हम लोगों की भी होनी चाहिए, ठाकुर साहब ।"

गिरजा बाबू की बात पर हंसकर सुगमसिंह ने कहा, "अरे नहीं, हम लोगों की क्या मुलाकात ! इत्ते बड़े आदमी... वो अपने घर खुश हम अपने घर खुश ।"

"अरे नहीं ठाकुर साहब, ये क्या गजब कर रहे हैं ? पहली बार डाइरेक्टर साहब और जिले के पहले इंसपैक्टर साहब आ रहे हैं, सलाम ही तो करना है, बस !"

छेदीलाल की बात पर सुगमसिंह बोले, "तो इंसपैक्टर से पूछ लूंगा या

"मेरे यह कहने से कि कलई खुल गयी तुम नाराज क्यों हो गयीं ? मेरा मतलब तो पतीली की कलई खुलने से था..."

फिर आप सब लोग ऐसा करें, एक-एक फाइल बगल में दबाकर जरा साफ कपड़े पहनकर वहीं पुस्तकालय पहुंच जाएं।"

डाइरेक्टर साहब लाइब्रेरी करीब घंटा भर देर से पहुंचे । सुगमसिंह और सुगमसिंह के साथियों से डाइरेक्टर साहब ने पहले मुलाकात की । वे आये तो ये सब लोग लाइन बांधकर खड़े थे । सुगमसिंह ने दो बार सलाम किया । इंसपेक्टर साहब ने भी कहा, "सर, ये हमारा स्टाफ दर्शन करना चाहता था ।"

डाइरेक्टर साहब ने थोड़ा इधर-उधर देखा । दो बार हूं. . .हूं किया और हॉल में चले गये । एक-दो मिनट सुगमसिंह ऐसे ही खड़े रहे । छेदीलाल ने ही कहा, "आइए ठाकुर साहब, हो गयी मुलाकात ।"

कादिर ने नजदीक आकर पूछा, "आपका सलाम तक नहीं लिया ?"

सुगमसिंह एक मिनट चुप रहे फिर धीरे से बोले "अब क्या लेगा, नमस्ते तो इन्ने जिंदगी भर नहीं ली ।"

रामी बाज नहीं आया, "ये बड़े लोग बस सुमित्रादेवी को पहचानते हैं ।"

सुगमसिंह ने जवाब नहीं दिया । गिरजा बाबू ने डपटते हुए कहा, "मौका-मुहाल देखा करो । बड़े आदमियों के बारे में छोटी बात करके आदमी बड़ा नहीं हो जाता । भूल भी सकते हैं । दिखलाना ना चाहा हो कि हम इन्हें जानते हैं ।"

सुगमसिंह बोले, "यह आप ठीक कहते हैं गिरजा बाबू । खैर ! पहचान भी लेता

तो क्या दे देता, पहचाना नहीं तो क्या ले लिया। हम तो जहां हैं वहीं रहेंगे।"

चपरासी ने आकर धीरे से कहा, "साहब ने एक माला मंगाया है। एक एम. एल. ए. आ गये हैं।"

"गाड़ी में कोई सबेरे की माला पड़ी होगी। पानी से भिगा लेना। चार दिन से तो मर रहा हूं। बड़ी गलती की यहां आ के।"

छेदीलाल ने कहा, "गलती तो हम लोगों ने भी की, ठाकुर साहब। डाइरेक्टर साहब को पहनाने के लिए हम सबको माला लाना चाहिए था। साहब यही सोचेंगे कि जहां हम इंसपैक्टर रहे, वहीं के लोगों ने हमें माले नहीं पहनाये। खास तौर से जहां सुगमसिंह बड़े बाबू हैं।"

गिरजा बाबू धीरे से बोले, "एक बार भी तो यह नहीं पूछा, बाल-बच्चे अच्छे हैं सुगमसिंह ?"

सुगमसिंह बोले, "ठीक ही नहीं पूछा, गिरजा बाबू। गलती हमारी ही है।"

रामी एकाएक हंस दिया। सुगमसिंह उसकी तरफ देखकर बैठे स्वर से बोले, "नौकरी अभी पेट में नहीं उतरी। उतरी तो करवट नहीं लेने देगी।"

चपरासी दौड़ा हुआ आया, "साहब जा रहे हैं।"

बाकी सब बाबू उस झौले-मौले में फिर लाइन बांधकर खड़े हो गये। सुगमसिंह वहीं खड़े रहे।

डाइरेक्टर साहब तेजी से बाहर निकले। पीछे चलने वाले लोगों की रफ्तार भी तेज थी। उनके निकल जाने के बाद सुगमसिंह फिर कुरसी पर बैठ गये। गाड़ी स्टार्ट हुई फिर बंद हो गयी।

इंसपेक्टर साहब एकाएक कार से निकलकर जोर-जोर से चिल्लाने लगे, "सुगमसिंह...सुगमसिंह ! पता नहीं कहां चले गये। यहीं रहना चाहिये।"

सुगमसिंह ने पहली ही आवाज पर उठने की कोशिश की लेकिन दूसरी आवाज पर उठ पाये। तब तक दफ्तर के सब बाबू उनके पास आकर बता रहे थे, "लगता है, डाइरेक्टर साहब याद कर रहे हैं !"

छेदीलाल बोले, "मैंने डाइरेक्टर साहब को आपका नाम लेते सुना है।"

कादिर फिर हंस दिया।

सुगमसिंह कार की तरफ चले गये। इंसपेक्टर साहब ने देखते ही कहा, "अरे भई कहां चले गये थे ?...यहीं रहना चाहिए था। उधर डाइरेक्टर साहब बुला रहे हैं।"

सुगमसिंह घूमकर दूसरी तरफ चले गये। बरांडे से आकर रोशनी की हलकी-सी चमक कार की खिड़की पर चकत्ते की तरह चिपकी थी। डाइरेक्टर साहब का एक हाथ बाहर निकला हुआ था। सुगमसिंह ने एक बार उस हाथ को गौर से देखा फिर डिबिया निकालकर धीरे से रख दी।

इंसपेक्टर साहब ने अंधेरे में झांककर देखना चाहा लेकिन डाइरेक्टर साहब का हाथ तब तक फिर खिड़की के बाहर हो गया! —११।२१०, सूटरगंज, कानपुर

चंद्र-उन्माद

● डॉ. श्रीनिवास द्विवेदी

'चंद्रमा पृथ्वी के अधिक निकट आ जाता है तो मनुष्य को उन्मादी बना देता है।' शेक्सपियर के अमर पात्र ओथेलो का कथन वैज्ञानिकों की खोजों में कहां तक सही उतरता है, पढ़िए।

संसार के सभी देशों में चंद्रमा के बारे में नाना प्रकार की पौराणिक कथाएं प्रचलित हैं। प्राचीनकाल से ही लोगों का यह विश्वास रहा है कि चंद्रमा का प्रभाव पृथ्वी के जीवधारियों पर पड़ता है। आज से लगभग २,००० वर्ष पूर्व लोगों की धारणा थी कि चंद्रमा का प्रभाव फसलों पर पड़ता है। आज भी बहुत-से लोग ऐसा मानते हैं। 'प्राचीन कृषक पंचांग' के अनुसार जमीन के ऊपर उगने वाली सब्जियों तथा फूलों के पौधे रोपने का सर्वोत्तम समय शुक्ल पक्ष होता है। इस पंचांग में चंद्रमा-विषयक अनेक किंवदंतियां, चंद्र-मौसम की भविष्यवाणी तथा खगोल-गणना की जानकारी भी दी गयी है।

मनुष्य के असंगत व्यवहारों का भी चंद्रमा से सम्बंध बताया गया है। शेक्सपियर का 'ओथेलो' पात्र कहता है, "यह तो चंद्रमा का ही दोष है। वह पृथ्वी के अधिक निकट आ जाता है और मनुष्य को उन्मादी बना देता है।" 'ल्यूनेसी' (उन्माद) शब्द चंद्रमा की रोमन देवी 'लूना' से निस्सृत है।

मानव-जीवन की गतिविधियों पर चंद्रमा के प्रभाव के विषय में वैज्ञानिक तथ्यों का प्रायः अभाव है। कुछ वैज्ञानिकों ने चंद्रमा के प्रभाव के बारे में अंध-विश्वासों को चीरकर सचाई का पता लगाने का कम ही वैज्ञानिकों ने प्रयास किया और जिन्होंने इस दिशा में प्रयास किया भी उनके निष्कर्ष भी विवादास्पद रहे।

अब फ्लोरिडा (अमरीका) के दो

मनोवैज्ञानिकों अर्नाल्ड एल. लाइबर तथा कैरोलीन आर. शेरीन ने प्रथम बार वैज्ञानिक तथ्य एकत्र किये हैं, जिनसे यह ज्ञात होता है कि चंद्रमा की कलाओं और मनुष्य के सम्वेगों का घनिष्ठ सम्बंध है। इन विद्वानों ने १५ वर्षों (१९५६–१९७०) में मियामी में हुई हत्याओं का अध्ययन कर यह निष्कर्ष निकाला कि शुक्ल-प्रतिपदा तथा पूर्णिमा को सबसे अधिक हत्याएं हुई हैं। उपर्युक्त वैज्ञानिकों ने अपने अनुसंधान को व्यापक बनाने के लिए विभिन्न स्थलों पर हुई हत्याओं का परीक्षण किया और एक ही निष्कर्ष पर पहुंचे। उन्होंने बताया कि जैसे चंद्रमा की कलाओं का प्रभाव समुद्र की लहरों पर पड़ता है, वैसे ही मानव-सम्वेगों को भी वह प्रभावित करता है।

डॉ. लाइबर ने अपने अध्ययन में अगस्त, १९७० की उस असाधारण घटना का उल्लेख किया है जब पृथ्वी, चंद्रमा और सूर्य तीनों ही एक सीधी रेखा में थे। उस वर्ष सितम्बर-अक्तूबर में और मासों की अपेक्षा दुगुनी हत्याएं हुई थीं। उसने यह भी बताया कि शुक्ल-प्रतिपदा तथा पूर्णिमा के दिन केवल हत्याओं की संख्या में ही वृद्धि नहीं होती अपितु हत्याएं अधिक जघन्य प्रकार की भी होती हैं।

डॉ. लाइबर तथा शेरीन के अध्ययनों से इस बात का पता तो चलता है कि चंद्र-कलाओं और मनुष्य के व्यवहारों का घनिष्ठ सम्बंध है, किंतु इसके कारण विषय में वे मौन हैं।

आंधी-तूफान, मौसम आदि पर चंद्र-कलाओं के प्रभाव के बारे में अध्ययन किया जा रहा है। रूस और जरमनी मनुष्य पर सूर्य-चक्र के सम्भावित प्रभाव का अध्ययन चल रहा है।

डॉ. लाइबर ने यह भी देखा कि पौराणिक ग्रंथों में चंद्रमा के प्रभाव के जो वर्णन हैं, उनमें भी सचाई का अंश निहित है। मनुष्य को इस तथ्य की जानकारी प्राचीनकाल से है कि समुद्र में ज्वार-भाटा चंद्रमा की कलाओं के अनुसार आता है। डॉ. लाइबर ने निष्कर्ष निकाला—चूंकि मनुष्य के शरीर में ८० प्रतिशत जलीय पदार्थ तथा शेष २० प्रतिशत अन्य पदार्थ होते हैं, अतः मानव-शरीर पर चंद्रमा का प्रभाव पड़ना अवश्यम्भावी है।

डॉ. लाइबर तथा शेरीन ने लगभग चार हजार हत्याओं के मामलों का कम्प्यूटर द्वारा विश्लेषण कर यह पाया कि सर्वाधिक हत्याएं शुक्ल-प्रतिपदा या पूर्णिमा के दिन ही हुईं।

समुद्र की सीपियों पर भी चंद्रमा की कलाओं का प्रभाव पड़ता है। इवांस्टन में काम करने वाले डॉ. ब्राउन ने यह सिद्ध किया है कि जब कुछ घोंघे एक द्वीप से शिकागो लाये गये तो पूर्णिमा पर उनके मुंह खुल गये। इसके बाद ब्राउन ने कुछ चूहों पर प्रयोग किये और देखा कि शुक्ल-प्रतिपदा तथा पूर्णिमा पर उनके

पाचन-क्रिया अधिक तीव्र हो गयी।

डॉ. लाइबर का विचार है कि शरीर-रस के थोड़े से परिवर्तन से तंतुओं पर दबाव पड़ता है, जिससे तंत्रिका-मांस-पेशियों में उत्तेजना आती है। यदि पृष्ठ-भूमि तथा परिस्थितियां दूषित हों और मानसिक उद्विग्नता रही हो तो ऐसी आवेग-पूर्ण मनोदशा उत्पन्न हो सकती है कि मनुष्य अनियंत्रित हो जाए।

चंद्रमा का प्रभाव समुद्री जीवों की प्रजनन-क्रिया पर भी पड़ता है। १९२३ में एक अंगरेज जीव-वैज्ञानिक एच. एम. फाक्स ने यह प्रदर्शित किया कि चंद्रमा की कलाओं के साथ-साथ समुद्री जीवों की प्रजनन-क्रिया में भी परिवर्तन होता है। उन्होंने समुद्री-सेहियों (सी-अर्चिन्स) पर परीक्षण किये और पता लगाया कि पूर्णिमा से कुछ पहले उनके डिम्बाशय तथा शुक्राशय अंडों तथा शुक्राणुओं से भरे हुए थे और ठीक पूर्णिमा पर उन्होंने समुद्र में अंडे छोड़े।

चेकोस्लोवाकिया के डॉ. यूजन जोनास ने १९६० में यह सिद्धांत प्रतिपादित किया कि जिन स्त्रियों का जन्म पूर्णिमा के दिन हुआ हो, वे पूर्णिमा के दिन ही गर्भवती होंगी। इस सिद्धांत के बारे में यूरोप में अभी परीक्षण चल रहे हैं।

स्वस्थ जीवों में सोने, खाने तथा लैंगिक गतिविधियों में एक नियमित चक्र-सा चलता है। अभी यह निश्चित रूप से ज्ञात नहीं कि यह नियमन प्रकृत है या शरीर-संरचना के कारण है या किन्हीं बाह्य कारणों से है। डॉ. फ्रैंक ब्राउन का मत है कि ऐसा बाह्य प्रभावों के कारण होता है। उनका अनुमान है कि बहुत-से जैविक चक्र चंद्रमा के प्रभाव के फलस्वरूप होते हैं।

पृथ्वी के जीवधारियों पर चंद्रमा के प्रभाव के विषय में डॉ. लाइबर और शेरीन ने जो परीक्षण किये हैं उन्होंने महत्त्वपूर्ण वैज्ञानिक रहस्यों के उद्घाटन का द्वार खोल दिया है। आवश्यकता इस बात की है कि चंद्रमा के प्रभाव को मात्र किम्वदंती न समझा जाए वरन उस पर वैज्ञानिक अन्वेषण किये जाएं।

—१८७३, लक्ष्मीबाई नगर,
नयी दिल्ली-२३

एक व्यक्ति ने किस्तों पर मोटर खरीदी परंतु उसने लगातार कई किस्तें नहीं चुकायीं। कम्पनी को जब अनेक पत्र लिखने पर भी पैसा नहीं मिला तो अंत में उसने उसे लिखा, "श्रीमानजी, यदि हम मोटर पर कब्जा करने आ पहुंचे तो आपके पड़ोसी क्या सोचेंगे?"

जवाब आया, "मैंने इस विषय में अपने पड़ोसियों से बातचीत की। उन सबका मत है कि आपकी यह कार्यवाही अत्यंत नीचतापूर्ण होगी।"

कम्पनी अभी तक इसका उत्तर नहीं सोच सकी।

क्या तुम यकीन करोगे ?

क्या तुम यकीन करोगे
कि जब से तुम गये हो
मैं सिर्फ तुम्हारे बारे में सोचता रहा हूं ?

मेरे दुलार का चोट खाया हुआ चेहरा
और उनसे झांकती हुई दो बेबस आंखें
वह सब स्वीकारने को उद्यत
जो उस पर समय ने लाद दिया है
मेरे प्यार—मेरे बच्चे !
तू अभी उन स्थितियों और मर्यादाओं को
नहीं पहचानता
जो हर शुभ को लुंज बनाकर
सिर्फ अपनी सामर्थ्य का उद्घोष करने को
रह जाती हैं

क्यों नहीं
तूने पलट कर
मुझे लौटा दिये मेरे शब्द
और उसकी रक्षा के लिए
क्यों नहीं चुनौती दी
जो हम दोनों के बीच
आकार ले रहा था ?

अपने तकियों में
मुंह छिपाता हुआ मैं
भटकते हुए उस ममत्व से
कैसे-कैसे जोड़ रहा हूं
जो खट जाएगा
लेकिन लौटकर नहीं आएगा !
मुझमें पिरोये हुए रहकर भी
तुम मुझसे नितांत अलग
अनासक्त-तटस्थ हो
यह तो मुझे उसी दिन पता था
जब मैंने तुमको प्राप्त करने के लिए
तुम्हारा नाम जपा था

पर मुझे अब लगता है कि
तुम्हारी सत्य-तटस्थता
मेरे उस भरम के आगे
झूठी पड़ रही है
जो मैंने तुमसे बनाये रखने के लिए
हाथ पसार मांगा था

नहीं चाहिए मुझे वह ज्ञान
जो मेरी सम्पूर्णता को खंडित करता हुआ
तुम्हारे अलगाव की इकाई को
स्वीकृति देता है
अंधतापस का विकल शाप
यातना को मुंह छिपाने के लिए
सिर्फ एक बहाना था
नहीं तो तुमसे अधिक और कौन जानता है
कि अपने मरण को वाणी मैंने ही दी !

मैं यह कैसे सोचता रहा
कि वह सब कुछ अपने आप
लौट आएगा
और मैं विरजता के दूसरे स्तर
तुम्हारे साथ-साथ छू सकूंगा ?

● केशव कालीधर
६५, टैगोर टाउन, इलाहाबाद

संसार का सबसे धनी व्यक्ति हावर्ड ह्यूजेस

● रामेश्वर टांटिया

१९६० तक मान्यता थी कि फोर्ड और राकफेलर विश्व में सर्वाधिक धनी हैं। वैसे पहले पंद्रह धनिकों में आगा खां और निजाम हैदराबाद का नाम भी लिया जाता था। परंतु समय बदलता रहता है—आज निजाम हैदराबाद और आगा खां के उत्तराधिकारी केवल १०–१५ करोड़ के आसामी रह गये हैं। उन-जैसे सैकड़ों-हजारों धनी विभिन्न देशों में बिखरे पड़े हैं।

फोर्ड और राकफेलर घराने यद्यपि पहले दस धनिकों में हैं, तथापि पिछले बारह वर्षों से प्रथम स्थान मिल गया है हावर्ड ह्यूजेस को, जिसके पास लगभग १,२०० करोड़ की सम्पत्ति कूती जाती है।

हैरोल्ड रॉबिन्स का प्रसिद्ध उपन्यास 'कारपेट बैगर्स' पढ़ रहा था। प्रकाशकों का दावा है कि इस उपन्यास की लगभग ८० लाख प्रतियां बिक चुकी हैं। मुझे इसका वर्णन रोचक, किंतु अजीब-सा लगा। उपन्यास के नायक जोना का करोड़पति पिता मर गया, पर उसकी लाश को छोड़कर वह अपनी युवती विमाता रीना (जो विवाह से पहले उसकी प्रेयसी थी) के पास जाकर प्रेमालाप करने लगा। रीना कहती है कि 'अगर तुम्हारा पिता आ जाएगा तो?', उसका जवाब होता है कि 'पिता अब कभी नहीं आएगा।' इसी प्रकार की और भी बहुत-सी बातें इस किताब में हैं, जो हमारे देश की लक्ष्मण-रेखा से तो दूर हैं ही, फ्लूवर की 'मैडम बावेरी' और लारेंस की 'लेडी 'चैटरलीज लवर' से भी कहीं ज्यादा अश्लील हैं। पुस्तक पढ़ते हुए मैं सोच रहा था कि अगर यही अमरीकी जीवन है तो फिर हम भले और हमारा गरीब देश भला !

जानकार मित्रों ने बताया कि हावर्ड ह्यूजेस की जीवनी पर ही यह उपन्यास आधारित है।

इसके बाद ह्यूजेस के बारे में अधिक जानने की इच्छा हुई। जो कुछ सामग्री मिली, उससे ऐसा लगा कि अत्यधिक धन-सम्पत्ति अधिकांश मनुष्यों को वास्तव में ही बौरा देती है, खास करके जवानी में।

१९०५ में ह्यूजेस का जन्म हुआ। उसका पिता एक सफल उद्योगपति था। प्रथम महायुद्ध में उसका बारूद और हथि-

यारों का कारखाना था, जिसके लाभ से युद्ध-समाप्ति के समय उसके पास १५–२० करोड़ रुपये हो गये।

उसकी मृत्यु पर २० वर्ष के युवा पुत्र के हाथ में व्यापार-उद्योग आया। पहले से ही पिता-पुत्र में मेल नहीं था, क्योंकि ह्यूजेस छोटी उम्र से अनेक बुरी आदतों का शिकार हो गया था; किंतु पिता के मरने पर थोड़े समय के लिए पुरानी आदतें छोड़कर, ह्यूजेस ने दृढ़ता और लगन से कारोबार सम्भाला।

ह्यूजेस शुरू से ही दक्ष पाइलेट था। उसने हवाईजहाज बनाने का कारखाना खोला और उसके हवाईजहाजों ने तेज चलने में विश्व में नया रिकार्ड कायम किया। उद्योगों के शेयर, बड़े-बड़े होटल, मोटल और कैबरे खरीद लिये। अगले ७ वर्षों में यूरोप में द्वितीय महायुद्ध की तैयारी होने लगी। उसकी खरीदी हुई वस्तुओं के दाम बहुत बढ़ गये और कारखानों को अनाप-शनाप आर्डर मिलने लगे। सन १९४५ में जब युद्ध समाप्त हुआ तब उसके पास ५००-६०० करोड़ रुपये हो गये। उन दिनों अमरीका में पूंजीगत नफे पर कर बहुत कम थे। १३ वर्षों में ३० करोड़ से ५०० करोड़ अर्जित कर लेना एक अचम्भे की-सी बात है।

अत्यधिक व्यस्त रहते हुए भी उसकी एक अपनी रंगीन जिंदगी थी, जिसके लिए वह बहुत जरूरी कामों को छोड़कर पर्याप्त समय निकाल लेता था। वह वेश बदलकर बदनाम जुआघर, कैबरे और रात्रि-क्लबों में चला जाता। पांच-दस की जगह सौ-दो सौ डालर की बख्शीश देता। इसलिए वहां की सब नर्तकियां या लड़कियां उसे घेरे रहतीं। उनमें से दो-चार को चुनकर वह अपने एक गुप्त फ्लैट में ले जाता। इन स्थानों का पता केवल उसके निजी सचिव को ही रहता।

१९६५ में ह्यूजेस साठ वर्ष का हो गया। उस समय उसकी सम्पत्ति थी लगभग १,२०० करोड़ रुपये और अब वह विश्व का सबसे धनी व्यक्ति था।

निजाम हैदराबाद की तरह ह्यूजेस भी बहुत साधारण लिबास में रहता है। एक बार वह सैर के लिए लंदन गया। उसे अपनी किसी प्रेमिका को हीरों का हार उपहार में देना था। वह लंदन की रीजेंट स्ट्रीट की एक प्रसिद्ध जवाहरात की दूकान में चला गया। साथ में उसका निजी सचिव था। वेश-भूषा देखकर दूकानवालों ने पचास-साठ हजार के कई हार दिखाये। उसने कहा, "मुझे कीमती हार चाहिए।" इस पर दो-चार लाख के दिखाये गये। ह्यूजेस ने रोष से कहा, "मैंने सुना था कि आपकी दूकान में बेहतरीन गहने रहते हैं, फिर सस्ती चीजें दिखाकर मेरा और अपना समय क्यों नष्ट कर रहे हैं?"

उन्होंने पंद्रह लाख का एक हार दिखाया। हार खरीदा गया। जब दूकानवालों को पता चला कि अरबपति हरबर्ट ह्यूजेस उनकी दूकान में खड़ा है, तो फिर

माइक्रोफ़ाइन्ड ऐस्प्रो

जल्द घुल जाता है
जल्द जज़्ब हो जाता है

इसलिए साधारण दर्द-विनाशक गोलियों की अपेक्षा

दर्द से दो गुना जल्दी आराम पहुंचाता है

बारीक कण जल्द जज़्ब हो जाते हैं।
आराम जल्द मिलता है।

ऐस्प्रो के बारीक कण साधारण गोलियों की अपेक्षा जल्द जज़्ब हो जाते हैं। दर्द के स्थान पर जल्द पहुंचते हैं और आपको जल्द आराम मिलता है।

इन तकलीफ़ों के लिए माइक्रोफ़ाइन्ड ऐस्प्रो लीजिए: सिरदर्द • शरीर का दर्द • सर्दी-ज़ुकाम • फ़्लू • जोड़ों का दर्द • गले की खराश • दांत का दर्द

खुराक: प्रौढ़: दो गोलियां – आवश्यकता होने पर दो और लीजिए। बच्चे: एक गोली या डाक्टर की सलाह के अनुसार।

सिर्फ़ ऐस्प्रो ही माइक्रोफ़ाइन्ड है इसलिए यह दर्द को जल्दी खींच निकालता है

निकोलस (N) उत्पादन

A.G.57 HN

लगे खातिरदारी करने।

१९६६ में वह इकसठ वर्ष का था। परंतु ऐयाशी, अबाध भोग-विलास और नाना प्रकार के व्यापारिक झंझटों के कारण उसका शरीर थक गया। याददाश्त भी कम हो गयी। लोगों में चर्चा होने लगी कि वह विक्षिप्त होता जा रहा है। आखिर उसने अवकाश लेने का निश्चय किया।

न्यूयार्क, लास ऐंजल्स और हालीवुड के महलों को छोड़कर लासवेगास में रहना तय किया।

तीस वर्ष पहले उसने प्रसिद्ध हवाई-जहाज कम्पनी टी. डब्लू. ए. के ६६ लाख शेयर लगभग २५ करोड़ में खरीदे थे। वे ४१५ करोड़ में बेच दिये।

लासवेगास में कुछ दिनों तक तो वह ठीक से रहा, परंतु फिर पुराने संस्कार उभरने लगे और १९७० तक उसने वहां के बहुत-से जुआघर, कैबरे, रात्रि-क्लब और होटल-मोटल खरीद लिये। इन सबकी कीमत थी १५० करोड़। उसने अपने रहने के लिए एक बहुत बड़े होटल का पुनर्निर्माण कराया। इस होटल के चारों तरफ बिजली के कांटेदार तार हैं। होटल के चारों ओर रात-दिन कड़ा पहरा रहता है, पर एक प्रकार से उसे भव्य और सुंदर जेलखाना ही कहना चाहिए। ह्यूजेस के मन में कुछ इस प्रकार का भय-सा समा गया है कि वह बाहर नहीं निकलता। उसके विशेष सचिव और कुछ प्रेमिकाएं फोन पर ही बात कर लेती हैं। केवल निजी डाक्टर ही जांच और चिकित्सा के लिए मिल पाते हैं। वह कभी-कभी बिना किसी को सूचना दिये दूसरे स्थानों पर छुट्टी मनाने चला जाता है। उसके अपने दो तेज चलने वाले जेट हवाईजहाज हैं। यात्रा के समय दोनों जेट उसके साथ रहते हैं।

दिसम्बर, १९७१ में क्लिफोर्ड इरविंग नाम के एक लेखक ने प्रसिद्ध पुस्तक प्रकाशक मेग्रिव हिल से उसकी आत्मकथा के प्रकाशन के लिए एक बड़ी रकम अग्रिम ले ली। उसका दावा था कि यह आत्मकथा ह्यूजेस ने स्वयं टेप-रिकार्डिंग करायी है। देश-विदेश में प्रचार हो गया कि ह्यूज़ेस की आत्मकथा प्रकाशित हो रही है। जब उसके वकीलों को पता चला तो पुस्तक के प्रकाशन पर रोक लगा दी गयी। इरविंग पर धोखाघड़ी का मुकदमा चला।

ह्यूजेस के बारे में पढ़-सुनकर मुझे महाराज भर्तृहरि का श्लोक याद आ जाता है:—

भोगान भुक्ता वयमेव भुक्ता
तृष्णा न जीर्णा वयमेव जीर्णा

अर्थात—भोग नहीं भोगे, बल्कि हम स्वयं समाप्त हो गये। तृष्णा जीर्ण नहीं हुई, हम जीर्ण हो गये।

अगर कभी ह्यूजेस से मिल पाता तो पूछता कि वह विश्व का सबसे धनी व्यक्ति है, ऐशोआराम और मौज-शौक के सब साधन उसके पास हैं, परंतु इस अथाह धन-दौलत से वह अपने जीवन में वास्तविक सुख और शांति भी पा सका क्या?

—१-२, ओल्डकोर्ट हाउस कॉर्नर, कलकत्ता-१

● आचार्य गोपालचरण शुक्ल

बचपन से ही पूर्वजों द्वारा प्रेतात्माओं से साक्षात्कार की घटनाएं सुनीं। होश सम्भाला तो निकट सम्बंधियों से प्रेतात्माओं के विषय में सुनने को मिला। फिर आधुनिक विज्ञान की शिक्षा एवं उच्चतम तथा सूक्ष्म अनुसंधान में जुट जाना पड़ा। नवीनतम पश्चिमी विचार वैज्ञानिक आधार पर यही सिद्ध करते हैं कि प्रेतात्माएं भ्रम की प्रतिक्रिया मात्र हैं। सम्मोहन-विद्या में गम्भीर प्रयोग किये। जोधपुर में गोगियापाशा मंडली से रोचक भेंट हुई। ऐसी घटनाएं भी घटीं जिनसे सिद्ध हुआ कि प्रेतात्माएं वास्तविक हैं। कुछ पुनर्जन्म की वास्तविकताएं भी सामने आयीं। ऐसे भी अनेक अवसर आये जब प्रेतात्माओं से किसी माध्यम द्वारा अथवा प्रमाण द्वारा साक्षात्कार हुआ।

४–५ जून, १९६४ की घटना है। मेरे ज्येष्ठ भ्राता ने, जो इन विद्याओं में उल्लेखनीय रुचि एवं अधिकार रखते हैं, मुझे माध्यम द्वारा प्रेतात्माओं से साक्षात्कार करने को आमंत्रित किया। विश्वास तो नहीं हुआ, पर प्रयोग करने की लालसा एवं जिज्ञासा अवश्य हुई। हमारे फार्म पर ही कार्य करने वाले एक अनपढ़ सेवक को माध्यम बनना था। आवश्यक वस्तुओं का प्रबंध स्वयं की ही देख-रेख में हुआ।

रात के लगभग ११ बजे, फार्म के विशाल वृक्ष के नीचे अंधेरे में अग्नि आदि के साथ प्रक्रिया आरम्भ हुई। मेरे आश्चर्य का तब ठिकाना नहीं रहा जब एक-के-बाद एक मनचाही आत्माएं आयीं तथा इच्छित जिज्ञासा का उपयुक्त उत्तर मिला। एक महापुरुष की, जिनकी मृत्यु लगभग एक सप्ताह पूर्व ही हुई थी, आत्मा बुलायी

की दूसरी घटना की पुष्टि उनसे पूर्व मेरे पितामह की आत्मा ने वार्त्तालाप रोक-कर इन शब्दों में की, "यह फूलों का डोला किसका है ?" और इसे दोहराया। आकाशवाणी के प्रसारण की भांति तनिक रुकावट के पश्चात पितामह से हमारी बात अधूरी ही रह गयी और श्रीगुरुजी की श्रीवाणी सुनायी दी। आग्रह करने पर

रहस्यमय संसार
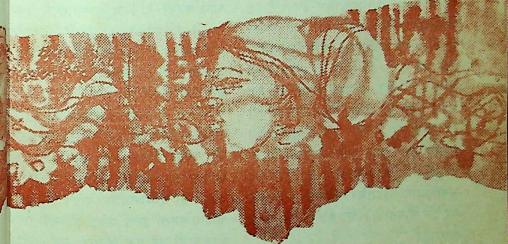
गयी। कुछ कठिन प्रयास के पश्चात उनके गुरु उनके साथ फूलों के डोले पर सवार होकर माध्यम के द्वारा दो बार प्रकट हुए— पहली बार अपने शिष्य के किसी कारण-वश न बोलने की असमर्थता प्रकट करने तथा दूसरी बार रात भर अपनी अमृतवाणी सुनाने के लिए। उनके डोले में प्रस्तुत होने

उन्होंने अपने शिष्य की ओर से अनेक प्रश्नों के उत्तर दिये। वे, न जाने क्यों, इतने प्रभावित हुए कि रात भर बड़े प्रेम से बातचीत करते रहे।

बातचीत में उन्होंने भविष्य के अनेक संकेत दिये, अनेक ऐसी भविष्यवाणियां कीं जो तब असम्भव थीं किंतु बाद में सत्य

उतरीं, और उतर रही हैं। माध्यम अनपढ़ है किंतु जिस सुसंस्कृत भाषा, ज्ञान एवं व्यवहार का श्रीगुरुजी ने परिचय दिया वह उस माध्यम से कदापि अपेक्षित नहीं हो सकता। यह भेंट-घटना मेरे जीवन पर अत्यंत गहन प्रभाव छोड़ गयी।

प्रेतात्माओं का संघर्ष

प्रेतात्माओं को वश में करने वालों का प्रेतात्माओं के प्रति एक विशेष लगाव हो जाता है। मन पर पूर्णाधिकार न होने के कारण तथा सभी भौतिक वस्तुएं आसानी से प्रेतात्मा द्वारा प्राप्त हो जाने के कारण स्वामी प्रायः ऐसे कार्य कर बैठता है जो स्वार्थमय और प्रेतात्माओं को सताने वाले होते हैं। प्रेतात्मा चूंकि बंधनमुक्त होने की प्रवृत्ति में होती हैं तथा स्वामी बंधन में रखने के कार्य करता है, तब संघर्ष होता है। विजय प्रायः प्रेतात्मा की ही होती है, क्योंकि उसकी शक्ति का सम्बंध उस अज्ञात ज्ञान से होता है जो सम्पूर्ण ज्ञान का एक भाग है। आधुनिक मनोविज्ञान प्रामाणिक गवेषणा के आधार पर इसे मानता है। ज्ञात ज्ञान केवल दसवां भाग है।

कुछ ऐसी चुड़ैलें भी वश में की जाती हैं जो जीवन भर आपको इच्छित वस्तुओं को देने वाली होती हैं। इनमें 'सोखती' और 'पोखती' मुख्य हैं। सोखती का गुण पुरुष को उच्चतम भौतिक सुख देना है तथा पोखती का उच्चतम ऐश्वर्य।

भूत-प्रेत, जिन आदि ऐसी अनेक श्रेणियां हैं जिनमें कर्मों के अनुसार जीवा का प्रवेश होता है। वे सभी साकार में प्रकट हो सकते हैं और जिनके वश होते हैं उनका कार्य करते हैं। इनको व भूत करने के लिए प्रत्येक प्रेतात्मा के भि भिन्न किंतु स्पष्ट शब्द-समुदाय (बं शब्द) होते हैं। विशेष प्रक्रियाओं द्व निर्मित विशेष वातावरण में इन श समुदायों को दोहराने से प्रेतात्मा आक तथा प्रकट होती है, सशर्त सम्पर्क स्था कर लेती है। जब तक इन शक्तियों दुरुपयोग नहीं होता वे आत्माएं समु कार्य करती हैं, किंतु दुरुपयोग से अ स्वामी से बंधनमुक्त हो उसकी जीवा को वशीभूत करने का प्रयत्न करती अवसर पाते ही घात कर उसे बं बना लेती है।

सम्मोहन-प्रक्रिया के करि

आत्माओं को बुलाने, उनसे वार्त्तालाप क की अनेक रीतियां हैं। इनमें से प्र माध्यम द्वारा ही है। माध्यम का अर्थ कोई ऐसा सम्वेदनशील व्यक्ति जो उ भावनात्मकता द्वारा अचेत हो सके त प्रेतात्माओं का एक आधार बन सके सम्मोहन-प्रक्रियाएं प्रायः मनोयोग अभ्यास पर निर्भर करती हैं। आंखों पट्टी बांधकर भीड़ के मध्य मोट साइकिल चलाना जैसे कार्य अवचेत शक्तियों के जगत की आश्चर्यजन बातें हैं।

पश्चिमी जगत में प्रेतात्मा-सम्बं

प्रयोगों की विश्वसनीयता संदेहात्मक है। जादू-टोना तक ही उनके ज्ञान की सीमा है, जिसका आधार भय की भावना है। भारतीय विद्याओं में इन्हें तामसी माना गया है। बंगाल का काला जादू आदि इसी श्रेणी के हैं। एकाग्रता के अभ्यास से सम्मोहन पर शीघ्र ही अधिकार हो जाता है।

विद्वानों का कहना है कि जादूगर या जादूगरनी किसी माध्यम का सत (ऑक्टोप्लाज्म) मोहिनी-शक्ति द्वारा एकत्रित कर लेते हैं, जो इष्ट प्रेतात्मा का रूप धारण करने की क्षमता रखती है। वह किसी भी प्रकार के प्रश्नों का उत्तर दे सकती है। उसका छायाचित्र भी लिया जा सकता है। भौतिकवादियों ने खोज करने पर पाया कि ऑक्टोप्लाज्म जादूगर की वह चाल है जिसमें वह किसी रासायनिक पदार्थ, जैसे नायलोनादि, का ऐसा महीन वस्त्र अंधेरे कमरे में रखता है, जो किसी यंत्र से सुव्यवस्थित रूप से चालित होता है तथा जनता को भ्रमित करता है।

जीवात्मा का प्रेतात्मा में परिवर्तन

प्राचीन भारतीय रहस्य-विज्ञान के अनुसार, जिसका अब केवल विकृत स्वरूप ही उपलब्ध है, वासनाएं ही जीवात्मा के पुनर्जन्म अथवा योनि की निर्णायक हैं। मृत्यु के समय जीवात्मा जिन वासनाओं में लिप्त होती है, उसको वैसी ही योनि में स्थान मिलता है। मोक्ष उन आत्माओं को मिलता है जो अपनी वासनाओं को आमूल समाप्त करने में सफल होते हैं। मृत्यु के तुरंत बाद ही जन्म नहीं होता। जीवात्मा के स्तर के अनुसार ही आत्मा विभिन्न अवधि के लिए अंतरिक्ष में विश्राम करती है किंतु उस अवस्था में वह अत्यंत सम्वेदनशील एवं सक्रिय होती है। परम-अंतरिक्ष या परम-समय के सिद्धांत के अनुसार किसी भी आत्मा से कभी भी सम्पर्क किया जा सकता है।

जीवात्माएं एवं प्रेतात्माएं विभिन्न स्तर की होती हैं। अकालमृत्यु-प्राप्त या अतृप्त जीवात्माएं ही प्रेत-योनि को प्राप्त होती हैं। हर कुटुम्ब के मृत पूर्वज भी प्रेत-योनि में अपने कुटुम्ब की रक्षा, गुप्त रूप से किंतु अनंत आत्मिक शक्ति द्वारा सक्रिय रूप से करते हैं। इनमें बंधक प्रेतात्माएं जो मुक्ति की इच्छुक हैं, साधना, प्रयत्न, अध्यवसाय एवं उत्तम व्यवहार से उत्तरोत्तर उत्तम स्थान प्राप्त करती जाती हैं। मुक्ति से पूर्व की प्रेतात्मा की जो अवस्था होती है, वह 'ब्रह्म' के नाम से पहचानी जाती है। अन्य के विभिन्न स्तर तथा श्रेणियां होती हैं।

भौतिक-शास्त्रियों एवं विशेषज्ञों की आधुनिकतम प्रामाणिक धारणा है कि जीवन अनेक मापी पिंडों के रूप में हो सकता है। य-मापी पिंड की परछाईं य-१ मापी होती है। यह एक तथ्य है, अर्थात पंचमापी पिंड की परछाईं चतुष्मापी, चतुष्मापी की त्रिमापी, त्रिमापी की द्वि-मापी, द्विमापी की एकमापी तथा एकमापी की शून्यमापी। शून्यमापी का अर्थ बिंदु,

एकमापी का रेखा, द्विमापी का धरातल तथा त्रिमापी का पिंड होता है। इसी प्रकार चतुष्मापी आदि की कल्पना की गयी है। विशेषज्ञों का कथन है कि चतुष्मापी तथ्य की परछाईं हमें त्रिमापी पिंड के रूप में पुरुष-जैसी दीखती है। अतः भूत एक परछाईं है तथा आत्मा चतुष्मापी तथ्य सिद्ध हुआ। अतः प्रेत भ्रम है, वास्तविकता नहीं, किंतु वास्तविकता का प्रतिविम्ब है। फलतः भ्रमात्मक प्रक्षेप ही प्रेतादि हैं। दार्शनिक भी जगत को स्वप्न, शरीर को आत्मा का प्रतिविम्ब, संसार को मायामय तथा मिथ्या मानता है।

पुनर्जन्म और आत्मा

पुनर्जन्म पर हुए अनेक प्रयोगों एवं घटनाओं से आत्मा की शाश्वतता का संकेत मिलता है। हाल ही में अनेक ऐसे व्यक्तियों पर अनुसंधान हुए हैं जिन्हें अपने पुराने जन्म या जन्मों की स्मृति थी। मेरे एक मित्र के यहां एक ऐसा व्यक्ति कार्य करता है जिसे अपने जीवन के पिछले कम-से-कम दो जन्म याद हैं। पाश्चात्य अनुसंधानकर्ताओं ने इन प्रयोगों के सम्बंध में उदासीनता का परिचय दिया है। वे भौतिक स्तर पर ही सब प्रमाण चाहते हैं। किंतु भौतिक जीवन ही तो सम्पूर्ण जीवन नहीं है। अभौतिक जीवन की सम्भावना तो आज का अत्यधिक विकसित विज्ञान भी मानता है। अतः अभौतिक क्षेत्र के नियमों की तुलना या व्याख्या सीमित भौतिक नियमों के अंतर्गत करना अज्ञान का परिचय ही देना है।

बौद्धिक जगत से परे का एक और जगत है जिसे चेतना का जगत या अनुभव का जगत कहा जा सकता है। डॉ. राधाकृष्णन ने लिखा है कि जब सापेक्षवाद के प्रणेता आइंस्टीन से पूछा गया कि उनका धर्म क्या है, तो उन्होंने कहा था— मेरा धर्म उन सिद्धांतों का समुदाय है जिनसे ब्रह्मांड नियंत्रित तथा संचालित होता है। इनके उद्‌गम के सम्बंध में वे बोले—वह कॉसमॉस (अंतरिक्ष) में ऐसा स्थल है जहां तर्क कार्य नहीं करता, बुद्धि कार्य नहीं करती, जो शेष रहता है वह है अनुभव, जो प्रत्येक का भिन्न होता है।

यही बात आत्मिक संसार की गवेषणा पर लागू होती है। यदि आपको आत्मा में विश्वास है तो किसी प्रमाण की आवश्यकता नहीं, और यदि आपको विश्वास नहीं है, तो भौतिक या बौद्धिक स्तर के सभी प्रमाण अपर्याप्त हैं। आत्मिक चेतना की गति सुपर-अंतरिक्ष तथा सुपर-समय में है। सुपर-अंतरिक्ष का अर्थ है कि कोई भी क्रिया ब्रह्मांड के किसी भी बिंदु पर हो तो वह उसी क्षण दूर-से-दूर बिंदु पर तुरंत पहुंच जाती है। सुपर-समय में स्थित व्यक्ति को उसी क्षण भूत तथा भविष्य का ज्ञान तुरंत हो जाता है। भौतिक दृष्टिकोण से यह विलक्षणता, जो वास्तविकता है, अनुभवगम्य है, आश्चर्य का विषय हो सकती है।

—ए-२९१ डिफेंस कालोनी, नयी दिल्ली-२४

हास्य-व्यंग्य

● अमृतराय

किसने कहा कि रात का समय सोने का है? नहीं, नहीं, मेरे भाई, सोने का समय बीत गया। अब और न कहो सोने को। सो-सोकर ही तो हम इस रसातल को पहुंच गये। अब हमें संयमी बनना होगा, जिसके लिए कहा गया है कि **'या निशा सर्वभूतानां तस्यां जागर्ति संयमी'** अर्थात जब और सब प्राणियों की रात होती है तब जो संयमी है वह जागता रहता है। अंगरेजी में इसी को आधी रात का तेल जलाना कहते हैं, **'बर्निंग द मिडनाइट ऑयल'**। यानी क्या पूरब और क्या पच्छिम, सब जगह रात को जागने की बड़ी महिमा है। कैसे न हो, दिन तो सारा भागदौड़ में ही बीत जाता है और दिन-रात मिलाकर कुल चौबीस ही तो घंटे होते हैं, इसीलिए जिन्हें जिंदगी में सबसे बढ़-चढ़कर कुछ करना होता है, वे रात को जागकर करते हैं—और जो अभागे अभी सोये पड़े हैं, जिनकी आंखें अब भी नहीं खुलीं, उन्हीं के लिए यह भोंपू है, हमारे राष्ट्रीय संकल्प का उद्घोष! कैसे न जागोगे! तुम्हें जागना पड़ेगा! उट्ठो, देखो तुम्हारा देश तुम्हें पुकार रहा है!

मैं उठकर देखता हूं, सब तरफ अंधेरा है, घटाटोप अंधेरा। हां, रात के उस गहरे सन्नाटे में अभि भट्टाचार्य कि कभी भट्टाचार्या (माफ कीजिएगा, नाम मुझे ठीक याद नहीं) का गाना मुहम्मद रफी की आवाज में आ-आकर मेरे कानों से टकरा रहा है। जैसा जोशीला गाना है, वैसी ही उसकी तूफानी लहरें बार-बार आकर मेरे कान के साहिल से टकराती हैं, पछाड़ खाकर लौटती हैं और फिर दुगुने-तिगुने जोर से आकर टक्कर मारती हैं, यहां तक कि मैं जाग ही जाता हूं और तरह-तरह के आशीर्वचन मुंह से निकालते हुए, बिस्तर में लेटा-लेटा उस हिचकोले खाती किश्ती को अपनी ओर आते हुए देखता हूं:

बिठाये देते हैं ! और यह
जान लो, तुम हमारे चंगुल
निकलकर कहीं जा भी न
सकते। शहरों में, देहातों
छोटे-छोटे कस्बों में, यानी
के कोने-कोने में, जहां
जाओगे वहां तुम्हें हमारे
पांच भाई मुस्तैदी से अप
ड्यूटी बजाते मिलेंगे ! पक्
बात है, हिंदुस्तान में समाजव
अब आकर रहेगा ! बिगुल

हम लाये हैं तूफान से किश्ती निकाल के।
इस देश को रखना मेरे बच्चो, संभाल के ॥
मतलब ये कि जागो और काम से लग जाओ ! और कितना सोओगे ? सो लिये, जितना सोना था ! अब उठो। इसी दम। फौरन ।

ऐसे ही ऐसे दूर-पास के एक हजार भोंपू, अपने मुहल्ले में आये हुए किसी पागल आदमी का पीछा पकड़ लेनेवाले चिबिल्ले लड़कों की तरह, हमारी जान को पड़े हैं—जागो, जागो, जागो ! अब हम किसी तरह तुम्हें सोने न देंगे ! शर्म भी नहीं आती तुमको, रात के दो बजे पड़े सो रहे हो ! मगर बेटा, भूल जाओ, अब तुम सो नहीं सकते, न इस करवट, न उस करवट ! बिस्तर भले न छोड़ो, मगर नींद तो हम तुम्हारी हराम कर ही देंगे ! बड़े-बड़े सुअक्कड़ों को हमने ठीक कर दिया, तुम किस खेत की मूली हो ! अभी चुटकी बजाते हम तुम्हें जगाकर

चुका है ! राष्ट्रीय अभ्युदय की बे
है ! लेकिन देश जब तक जागेगा न
कुछ होगा नहीं, और देश को जगाने
काम हमारा है ! तुम्हें याद नहीं, इत
जल्दी भूल गये तुम कि पंडितजी क्या
गये हैं—'आराम हराम है !' फिर
नानी मरती है, जब हम तुम्हारा आर
हराम करते हैं ? तुम अपने बड़े लोगों
भूल गये तो क्या हम भी भूल जाएं ! छो
पंडितजी को, तुम तो शायद अपने पु
ऋषियों को भी भूल गये, जिन्होंने आज
एक हजार कि दो हजार बरस प
कहा था कि जागने वालों का प्रार
जागता है और सोनेवालों का प्रारब्ध
सो जाता है ।

भोंपू ठीक ही कहता है। गांधी
हमारे सोये प्रारब्ध को जगाना चाहते
तभी तो उनका बड़ा प्रिय भजन था ये
उठ जाग मुसाफिर भोर भई,
अब रैन कहां जो सोवत है

जो जागत है सो पावत है,
जो सोवत है सो खोवत है ।।

मुझे तो भाई, पता नहीं हमारा प्रारब्ध जागा कि नहीं जागा, लेकिन इसमें शक नहीं कि भजन बहुत अच्छा था, जो इस समय भी, किसी दूसरे भोंपू के माध्यम से, मेरे कानों में मिश्री घोल रहा है। सबसे बड़ी अच्छाई मुझे इस भजन में यह दिखायी पड़ती है कि जिस तरह गांधी-जी शेर-बकरी को एक घाट पानी पिलाना चाहते थे, उसी तरह यह भजन चोर-साह सबको बहुत भाता है। चोर को इसलिए कि बादवाली पंक्ति का प्रथमार्द्ध उसे अपने से कहा गया सुनायी पड़ता है और उत्तरार्द्ध साह को अपने से, कुछ इसलिए भी कि साह को इस कड़ी से ऐसे ही एक और भजन की एक कड़ी याद आ जाती है—**तेरी गठरी में लागा चोर, मुसाफिर जाग जरा...**

मतलब यह कि इधर से कान पकड़ो चाहे उधर से, पते की बात एक ही है, जागो, झटपट जागो! और जगाने का जिम्मा भोंपू का। बिलकुल ठीक बात है। लोग जब तक जागेंगे नहीं, देश उन्नति कैसे करेगा, समाजवाद कैसे आएगा!

सब जानते हैं कि जिलाधीश की आज्ञा के बिना कोई भोंपू नहीं बज सकता, इसलिए मुझे तो लगता है कि जरूर जिलाधीशों को सरकार से आदेश मिले हैं कि धड़ल्ले से भोंपू बजाये जाएं ताकि देश जागे और कमर कसकर समाजवाद की ओर बढ़े। भोंपू जितने ही जोर-जोर से बजेंगे, समाजवाद का दिन उतनी ही तेजी से पास आएगा! सबसे पहला काम और असल काम देश को जगाना है। देश एक बार जाग गया तो समझिए बेड़ा पार। जभी तो हर छोटे-बड़े लीडर का दिन देश को जगाने से शुरू होता है—रेडियो पर सुनिए तो और अखबार में पढ़िए तो (उन्हें भी अपने ढंग का भोंपू ही समझिए) वही उद्‌बोधन-वाणी। वाह वाह, क्या कहना, जी खुश हो जाता है। ये करो, वो करो, दुनिया भर के उपदेश! मुझे बड़ा मजा आता है इस चीज में—और भगवद्-भजन के बाद उद्‌बोधन तो बिलकुल सोने में सुहागा है। रेडियो बजता रहता है, मैं खोया-खोया बैठा सुनता रहता हूं और दफ्तर जाना तो दूर की बात है, मुझे इसका भी ध्यान नहीं रहता, कब प्रोग्राम खत्म हुआ और रेडियो खड़खड़ करने लगा। बात ये है कि उस खड़खड़ में भी मुझे कुछ वैसा ही रस मिलता है, जैसा लीडर के उपदेश में!

हम घर के अंदर हों चाहे घर के बाहर, हर समय संगीत से घिरे हैं या फिर उपदेश से, धार्मिक उपदेश जो हमारे परलोक को सुधारता है और लीडर का उपदेश जो हमारे इहलोक को सुधारता है—और यह सब भोंपू के चोंगे में से हमारे कान में झरता रहता है। भोंपू सचमुच बड़े काम की चीज है, खासकर अपने इस देश में जो उपदेश की गैस पर चलता है। भोंपू न हो तो लीडर की आवाज वहीं-वहीं चक्कर काटकर रह जाए। भोंपू है जो कि उस आवाज को दिग्दिगंत में फैलाता है। भोंपू की बड़ी महिमा है, उसके बिना कोई कुछ कर ही नहीं सकता। कम से कम लोकतंत्र में। और भारत जिस अर्थ में संसार का सबसे विशाल लोकतंत्र है, एक पगला अभी उस रोज चौक में बार-बार उसे भूल से 'भोंपूतंत्र' कह जाता था।

दुनिया में बहुत तरह के भोंपू होते हैं। होने को तो ऐसे कुछ आदमी भी होते हैं, जो दूसरे किसी बड़े आदमी के भोंपू होते हैं, लेकिन अभी तो मेरा मतलब
भोंपू से है जिसकी आवाज इस
निशीथ वेला में सन्नाटे को चीरती
आ-आकर मुझे गुदगुदा रही है—
भी ! क्या सोते ही रहोगे ?... जरा
को मुझे धोखा हो जाता है कि शायद
बीवी मुझे जगा रही है। मैं मन ही
बहुत खुश होता हूं और जागने को
हूं, लेकिन तभी मुझे खयाल आता है
मेरी बीवी तो मायके गयी है। तब
बहुत चिढ़ मालूम होती है और मैं कर
बदलकर लेट जाता हूं। मगर भोंपू,
नहीं जो इतनी जल्दी किसी को छोड़
लिहाजा उसका गुदगुदाना जारी र
है और जब गुदगुदाने से काम नहीं चल
तब वह मुझको झिंझोड़ने लगता है। ले
मैं भी कोई ऐसा-वैसा कुम्भकर्ण नहीं
हर बार करवट बदलकर फिर-फिर स
की कोशिश करता हूं। कभी कान पर
रख लेता हूं, कभी सिर पर लिहाफ
लेता हूं, कभी अपने बाल पकड़कर नोच

साहब, वह कह रहा है, कागज आया होगा तो गया होगा, नहीं तो पड़ा होगा ।
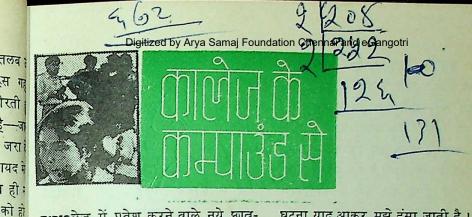
कालेज में प्रवेश करने वाले नये छात्र-छात्राओं के साथ 'रैगिंग' के नाम पर होने वाले व्यवहार से मैं काफी आतंकित थी। अतः उससे बचने के लिए मैंने अपने कालेज की सीनियर छात्राओं से पहले ही दोस्ती गांठ ली—फलतः मुझे रैगिंग से मुक्ति मिल गयी।

हमारे कालेज के कम्पाउंड में अकसर दिलचस्प घटनाएं घटती रहतीं। एक बार की बात है। वार्षिक समारोह के अवसर पर एक प्रदर्शनी का आयोजन किया गया था। समारोह के मुख्य अतिथि को इस प्रदर्शनी का उद्घाटन करना था। जब वे उद्घाटन के लिए पधारे तो फीता काटने के लिए कैंची नदारद थी! उन्होंने उद्घाटन के लिए कैंची मांगी तो 'सेक्रेटरी-साहिबा' आनन-फानन में कैंची ले आयीं और स्वयं ही फीता काटकर उद्घाटन कर दिया। मुख्य अतिथि महोदय यह नजारा देख किंचित मुसकाकर बोले, "तो आपने मुझे किसलिए बुलाया था?"

यह सुनकर सभी लड़कियां तालियां बजाने लगीं। अब मैं जब कभी किसी उद्घाटन समारोह में जाती हूं तो यह घटना याद आकर मुझे हंसा जाती है।

—ज्योति, द्वारा कंजरवेटर ऑव फारेस्ट, बिलासपुर (म. प्र.)

मैं भी उस वर्ष छात्रसंघ का संयुक्त सचिव था। १४ अप्रैल, '७० को, जबकि परीक्षाएं चल रही थीं, अचानक हड़ताल हो गयी। हड़ताल का एक कारण बी.एस-सी. प्रथम वर्ष के कार्बनिक रसायन के प्रश्नपत्र का बिना पूर्व संकेत के 'पैटर्न' बदल दिया जाना था। प्राचार्य के विरोध में महीनों से पल रहा छात्र-असंतोष भी अवसर पाकर फूट पड़ा था।

सूचनानुसार निश्चित समय एवं स्थान पर उपस्थित न होने के कारण,

यह स्तम्भ युवा वर्ग के लिए है। कालेज के छात्र-छात्राएं इसके लिए रोचक एनकडोट्स भेज सकते हैं। रचना के साथ अपना चित्र और कालेज का पता लिखा, टिकट लगा लिफाफा भेजना आवश्यक है अन्यथा रचना पर विचार नहीं किया जाएगा।

—सम्पादक

मेरे 'रूम' पर कुछ छात्र नेताओं द्वारा धावा बोला गया किंतु मेरे बड़े भाई साहब की उपस्थिति के कारण उन्हें निराश वापस लौट जाना पड़ा ।

बाद में ज्ञात हुआ कि छात्र-पुलिस-मुठभेड़ में पत्थरबाजी से एक पुलिस अधिकारी का सिर फूट गया । वातावरण अत्यधिक तनावपूर्ण बन गया । छात्र-नेता छिपते फिरे, पुलिस उनकी रातों-रात जमानतें लेती रही । अंत में गण्यमान्य नागरिकों की मध्यस्थता से समझौता हुआ । स्थगित परीक्षाएं पुनः प्रारम्भ हुईं । आश्वासन के प्रतिकूल मुकदमा फिर भी चला । क्षणिक भावुकता तथा विवेक-शून्यता के कारण पच्चीसों छात्र (जिनमें से अधिकांश बाहर के थे) श्रम, अध्ययन और अर्थ का अपव्यय कर, दो वर्ष से अधिक समय तक मुकदमे की कार्यवाही हेतु आते-जाते रहे ।

--श्रीनारायण बुधौलिया,
मोतीलाल विधि महाविद्यालय, छतरपुर

मैं उन दिनों इंटरमीजिएट में पढ़ा करता था । हमारे जीव-विज्ञान के अध्यापक वार्षिक परीक्षाओं के दो-तीन माह पूर्व ही नियुक्त किये गये थे । उनकी अनुभवहीनता का हम सब छात्र अनुचित लाभ उठाते रहते थे ।

वार्षिक प्रायोगिक परीक्षाएं निकट ही थीं । एक बार प्रधानाचार्य हम लोगों की प्रयोगात्मक तैयारी देखने आये । उन्होंने हमें मेढक के धमनी-तंत्र का विच्छे[दन] करने के लिए कहा । इस प्रयोग से [मैं] सदैव जी चुराया करता था । अतः जैसे [ही] प्रधानाचार्य बाहर निकले, मैं चुपचा[प] अपनी पुस्तकें वहीं छोड़कर प्रयोगशाला [से] बाहर निकल गया । कुछ समय बाद मैं[ने] कक्ष के भीतर झांककर देखा तो जीव-विज्ञान के वे अध्यापक मेरी टेबल [पर] रखे मेढक पर झुके हुए दिखायी दिये ।

पश्चात्ताप के आंसू मेरी आंखों [से] वह निकले ।

मैंने शीघ्र ही जाकर उनसे क्षमा मां[गी] तथा भविष्य में प्रत्येक अध्यापक को अधि[का]धिक सम्मान देने की शपथ ली ।

--प्रदीपकुमार समाधिया
बिपिनबिहारी महाविद्यालय, झांसी

बात उन दिनों की है जब मैं बी.एस-सी. प्रथम वर्ष की छात्रा थी । हम लोगों का फिजिक्स का प्रैक्टिकल चल रहा था । मेरे समीप ही मेरी सहेली भी प्रैक्टिकल कर रही थी । बार-बार प्रयत्न करने पर भी जब उससे वह प्रैक्टिकल नहीं बना तो वह किसी अन्य लड़की को बुला लायी । वह लड़की उसे बड़ी तन्मयता से प्रैक्टिकल समझाने लगी पर मुझे लगा कि शायद उसे भी वह प्रैक्टिकल नहीं आ रहा था । यह सोचकर मैं उस लड़की के पास गयी और बोली, "अरे हटो यार हम बताएं कि यह प्रैक्टिकल कैसे करो ! तुम तो दोनों ही एक-सी मिल गयीं !" वह

लड़की बड़ी नम्रता से बोली, "आप अपना ही प्रैक्टिकल कीजिए।" उधर मेरी सहेली कुछ सहम-सी गयी।

प्रैक्टिकल के बाद पता चला कि जिन्हें मैं साधारण लड़की समझ बैठी थी, वे हमारी नयी 'मैडम' थीं।

—दीपा गोविला, कमला राजा महाविद्यालय, ग्वालियर

बायें से : श्रीनारायण बुधौलिया, हेमंतकुमार पंत, प्रदीपकुमार, ज्योति, दीपा गोविला

वे कोरी आदर्शवादिता के दिन थे। बी.एस-सी. (प्रथम वर्ष) की कक्षा और केमिस्ट्री का पीरियड। कक्षा में छात्र बेहद शोरोगुल और व्यर्थ की हरकतें कर रहे थे। नव-नियुक्त प्राध्यापक छात्रों को शांत करने के सभी प्रयत्न असफल हो जाने पर बोले, "देखिए, आप जानते होंगे—डिवीजन पाने के लिए प्रैक्टिकल्स कितना 'काउंट' करते हैं। अगर प्राध्यापकों को अपनी ओर से खुश रखेंगे तो निश्चय ही प्रैक्टिकल्स में अच्छे अंक पाएंगे। मैं प्रैक्टिकल्स में प्रत्येक को देख लूंगा!"

मुझे उनकी 'खुश रखने' वाली बात बहुत अखरी। मैंने उठकर कहा, "आपके कहने का तात्पर्य यही है न कि हम प्रैक्टिकल्स में परिश्रम करने के बजाय आपको खुश करने में जुट जाएं?" मेरे इस प्रश्न पर रुष्ट होकर उन्होंने मुझे कक्षा से निकल जाने को कहा। मैंने तत्काल कक्षा छोड़ दी। मेरे मित्र भी बाहर निकल आये।

बाद में उन्होंने कहा, "मैंने वे बातें 'शॉक' देने के लिए ही कही थीं पर जानबूझकर अध्यापक कभी अपने छात्र का अहित नहीं करता।"

हम उनके कथन की सत्यता के सम्मुख निरुत्तर थे।

— हेमंतकुमार पंत, राजकीय रजा महाविद्यालय, रामपुर (उ.प्र.)

● अर्नेस्ट हेमिंग्वे

नये लेखकों को सलाह

मेरे पास एक नवयुवक लेखन के बारे में कुछ सवाल करने आया। उसका लालन-पालन एक फार्म पर हुआ था। वह मिनेसोटा यूनीवर्सिटी में पढ़ा था। वह पत्रकार, बढ़ई, खेतिहर मजदूर के रूप में काम कर चुका था और उसने दो बार अमरीका की आरपार यात्रा की थी। वह लेखक बनना चाहता था और उसके पास कहानियों की कुछ अच्छी सामग्री थी। लेखन के बारे में वह इतना गम्भीर था कि लगता था कि उसकी गम्भीरता सारी बाधाओं को पार कर लेगी। उसने मुझे उस साल लिखी कोई चीज नहीं दिखायी। उसने कहा, वह सब काफी खराब लिखा हुआ है। मैंने सोचा कि बहुत सारे लोग शुरू-शुरू में काफी खराब लिखते हैं।

लेखन के अतिरिक्त उसे समुद्र-यात्रा का भी शौक था। हमने उसे नौका पर रात की पहरेदारी का काम सौंप दिया। इससे उसे सोने और काम करने के लिए स्थान मिल गया। उसे प्रतिदिन दो-तीन घंटे के लिए सफाई का काम करना पड़ता था। शेष आधा दिन वह लिखने के लिए स्वतंत्र था। हमने उसे अपनी अगली यात्रा पर क्यूबा साथ ले चलने का वायदा किया।

वह वायलिन बजाता था, इसलिए हम सब उसे 'मास्टेरो' कहते थे। बाद में यह नाम छोटा कर 'माइस' कर दिया गया था। एक बार मैंने उससे कहा था "माइस, तुम जरूर एक बहुत अच्छे लेखक बनोगे, क्योंकि तुम जरा भी और किसी काम के लायक नहीं हो।" उसके लेखन में उत्तरोत्तर सुधार होता गया।

मैंने माइस के साथ एक-सौ दस दिन गुजारे थे। यहां मैं उसके साथ हुए अपने वार्तालाप को लिपिबद्ध कर रहा हूं—

माइस : बुरे लेखन के विपरीत अच्छे लेखन से आपका क्या तात्पर्य है?

मैं : अच्छा लेखन सच्चा लेखन है। यदि एक व्यक्ति कोई कहानी लिखने जा रहा है तो वह उसी सीमा तक सही होगी जिस सीमा तक उसे जिंदगी की जानकारी होगी। यह इस बात पर भी निर्भर करेगा कि वह कितना सुलझा हुआ है। यदि वह यह नहीं जानता कि अधिकांश व्यक्ति किस तरह सोचते-विचारते और कार्य करते हैं तो हो सकता है कि उसकी किस्मत उसे कुछ देर के लिए बचा ले या फिर वह फेंटेसी लिखने लगे। पर यदि उसने उन बातों को, जिनके बारे में उसे कोई जान-

कारी नहीं है, लिखना जारी रखा तो वह स्वयं को मिथ्या भाषण करता पाएगा। वह कुछ समय तक धोखा चाहे दे ले, पर ईमानदारी से अधिक न लिख पाएगा।

माइस : कल्पना के बारे में आपका क्या विचार है?

मैं : इस विचित्र चीज के बारे में कोई कुछ नहीं जानता, सिवाय इसके कि वह बिना कुछ लिये-दिये मिलती है। वह एक जातीय अनुभव हो सकती है। ईमानदारी के साथ-साथ यही एक और चीज है जिसका किसी अच्छे लेखक के पास होना जरूरी है। अनुभवों से वह जितना ज्यादा सीखेगा, उतनी ही सच्चाई से वह कल्पना कर सकेगा। यदि वह ऐसा करता है तो लोग यह समझने लगेंगे कि जो कुछ भी वह वर्णन कर रहा है, वह सब सचमुच घटित हो चुका है तथा लेखक केवल रिपोर्टिंग कर रहा है।

माइस : लेखन रिपोर्टिंग से कहां जुदा होता है?

मैं : यदि वह मात्र रिपोर्टिंग होता है तो लोग उसे कभी याद नहीं करेंगे। जब आप किसी घटना की रिपोर्टिंग करते हैं तो सामयिकता लोगों को उसे अपनी ही कल्पना के भीतर देखने के लिए बाध्य कर देती है। एक मास बाद वह समय-तत्त्व खत्म हो जाता है और आपका वर्णन सीधा-सपाट रह जाता है, फलतः लोग न तो उसे अपने दिमाग में देखेंगे और न उसे याद करेंगे। पर मात्र वर्णन करने के बजाय उसे सम्पूर्णता एवं ठोस आधार दें, उसे जिंदगी दें। वह रची जाती है, वर्णित नहीं की जाती। वह आपकी सर्जनात्मक योग्यता की सीमा तक ही सत्य एवं उद्दाम है।

माइस : लेखन-प्रक्रिया के बारे में मुझे आप कुछ और बताइए?

मैं : तुम चाहो तो टाइपराइटर भी इस्तेमाल कर सकते हो, क्योंकि वह काफी आसान होता है। जब तुम लिखना सीख जाते हो तो तुम्हारा लक्ष्य प्रत्येक बात, रोमांच, भावना, भावावेग तथा प्रत्येक देखी गयी वस्तु और स्थान को पाठक तक पहुंचाना हो जाता है। इसके लिए अपने लेखन पर मेहनत भी करनी पड़ती है। यदि तुम पेंसिल से लिखते हो तो तुम्हें तीन बार यह देखने का अवसर मिलता है कि पाठक को तुम जो देना चाहते हो, वह उसे मिल रहा है या नहीं। पहले जब तुम उसे पढ़ते हो, फिर जब उसे टाइप करवाते हो, और अंत में प्रूफ के दौरान उसे देखने तथा सुधारने का अवसर मिलता है। यह एक नये लेखक के लिए काफी अच्छा है। वह उसमें सुधार कर सकता है।

माइस : एक दिन में कितना लिखना चाहिए?

मैं : सबसे अच्छा तरीका तो यह है कि जब तुम अच्छा लिख रहे हो और जब यह जानो कि आगे क्या होने वाला है, तभी लिखना बंद कर दो। यदि उपन्यास लिखते समय ऐसा करोगे तो कभी असफल नहीं होगे। हमेशा जब अच्छा लिख रहे

हो तभी रुक जाओ और जब तक दूसरे दिन फिर लिखना न शुरू करो, उसके बारे में सोचने तथा चिंता करने की जरूरत नहीं। इस तरह अचेतन मन सारे समय उसके बारे में काम करेगा। पर यदि तुम सायास उस पर विचार करते रहोगे, उसके बारे में चिंता करते रहोगे तो उसकी

कठिन भाग उसे समाप्त करना है।

माइस : चिंता न करना कैसे सीखें?

मैं : उसके बारे में न सोचकर। जैसे ही तुम उसके बारे में सोचना शुरू करो उसे बंद कर दो। किसी और चीज के बारे में सोचने लगो। यह सीखना ही पड़ेगा।

माइस : प्रतिदिन लिखना शुरू करने
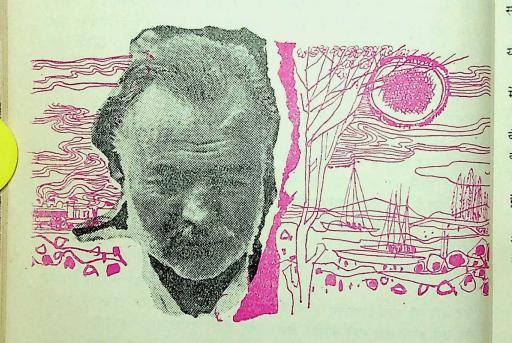
हत्या कर दोगे और उसे शुरू करने के पूर्व ही तुम्हारा दिमाग थक जाएगा। एक बार उपन्यास में जुट जाने के बाद अगले दिन उसे जारी रखने के बारे में चिंता करना उतना ही निरर्थक है जितना कि किसी आवश्यक कार्य करने के पूर्व उसके बारे में परेशान होना। उपन्यास का सबसे

के पूर्व आप उसे कितना पढ़ते हैं?

मैं : बेहतर तो यही है कि प्रतिदिन उसे शुरू से ही पढ़ा जाए और साथ-साथ सुधार भी किया जाए। जब वह इतना लम्बा हो जाए कि उसे प्रतिदिन पूरा न पढ़ा जा सके तो प्रतिदिन पिछले दो तीन अध्याय जरूर पढ़ने चाहिए। इस तरह उन सबको एक

ही रचना का अंश बना सकते हैं। हां, यह अवश्य याद रखो कि उस समय लिखना बंद कर देना चाहिए जब कि बहुत अच्छा लिख रहे हो। इससे लेखन आगे बढ़ता रहता है। तुम लिख कर पूरी तरह चुक जाते हो तो उपन्यास भी मर जाता है। ऐसा करके दूसरे दिन आगे बढ़ा ही नहीं सकते।

माइस : क्या आप कहानी के साथ भी यही करते हैं ?

मैं : हां, पर कभी-कभी एक ही दिन में कहानी लिख लेता हूं।

माइस : जब आप कहानी लिखने बैठते हैं तो क्या यह जानते हैं कि अब क्या-क्या होने वाला है ?

मैं : प्रायः नहीं। मैं उसे शुरू कर देता हूं, फिर जैसे बढ़ती है, बढ़ने देता हूं।

माइस : पर यह तो लिखने का वह तरीका नहीं है, जो कालेज में बताया जाता है।

मैं : मुझे इस बारे में नहीं मालूम। मैं कभी कालेज नहीं गया। यदि कोई भलामानस लिख सकता है तो उसे कालेज में लेखन-विधि पढ़ाने की जरूरत ही क्या !

माइस : आप तो मुझे पढ़ा रहे हैं।

मैं : यह नाव है, कालेज नहीं।

माइस : लेखक को क्या पढ़ना चाहिए ?

मैं : उसे प्रत्येक चीज पढ़नी चाहिए।

माइस : कौन-सी पुस्तकें पढ़ना जरूरी है ?

मैं : तालस्ताय-कृत 'युद्ध और शांति' तथा 'अन्ना केरेनिना', फलावर्ट लिखित 'मदाम बोवेरी' टामस मान-कृत बडन ब्रुक्स, ज्वायस-कृत 'डब्लिनर्स', तथा 'यूलीसिस', फील्डिंग-कृत 'टाम जोन्स' दास्तोवस्की-कृत 'ब्रदर्स करामोजोव', मार्क ट्वेन-कृत 'हकलबेरी फिन', स्टीफेन क्रेन-कृत 'ओपन बोट' तथा 'दि ब्लू होटल', जार्ज मूर-कृत 'हेल ऐंड फेयरवेल', यीट्स की आत्मकथा, मोपासां, किपलिंग की सारी अच्छी कृतियां, तुर्गनेव की सारी कृतियां, डब्ल्यू. एल. हडसन-कृत 'फार अवे ऐंड लांग एगो', हेनरी जेम्स की लघु कथाएं। शेष के नाम किसी और दिन बताऊंगा। अभी तिगुनी किताबें और हैं।

माइस : क्या लेखक को यह सब किताबें पढ़नी चाहिए।

मैं : हां, ये सारी पुस्तकें ही नहीं, बल्कि और भी ढेर सारी, नहीं तो उसे मालूम ही नहीं पड़ेगा कि उसे किन्हें पछाड़ना है।

माइस : पछाड़ने से आपका मतलब ?

मैं : सुनो ! किसी भी ऐसी चीज को, जो पहले लिखी जा चुकी हो, लिखने में कोई फायदा नहीं है। आज का लेखक ऐसा लिखे जो पहले न लिखा गया हो या फिर दिवंगत लेखक जो कुछ लिख गये हैं, वह उससे बढ़-चढ़ कर लिखे। यह बताने का कि वह किस तरह प्रगति कर रहा है, एक मात्र यही रास्ता है कि वह दिवंगत लेखकों से होड़ करे। अधिकांश

जीवित लेखक तो अस्तित्व में ही नहीं रहते। उनकी कीर्ति समालोचकों द्वारा, जिन्हें हमेशा मौसमी प्रतिभा की जरूरत होती है, रची जाती है। ये समालोचक ऐसे लेखक को पकड़ते हैं जिसे वे पूरी तरह समझते हैं तथा उसकी प्रशंसा में स्वयं को सुरक्षित समझते हैं; पर जब इस तरह तैयार की गयी प्रतिभाएं मर जाती हैं तो उनका अस्तित्व भी समाप्त हो जाता है। किसी गम्भीर लेखक के लिए प्रतिस्पर्धा हेतु केवल दिवंगत व्यक्ति ही हो सकते हैं। वह एक ऐसे धावक की भांति होता है जो समय से आगे निकलने की कोशिश में है। जब तक वह समय के आगे न दौड़ सकेगा, तब तक नहीं जान पाएगा कि वह क्या उपलब्ध करने में समर्थ है।

माइस : लेखक के लिए अच्छा प्रारम्भिक प्रशिक्षण क्या हो सकता है ?

मैं : एक दुःखद बचपन।

माइस : लेखक स्वयं को किस तरह प्रशिक्षित कर सकता है ?

मैं : आज जो घट रहा है, उस पर नजर रखो। उन बातों को भी ध्यान में रखो जिनसे तुम्हारी भावनाओं का उद्रेक हुआ। इन सब बातों को इस तरह साफ-साफ लिख डालो कि पाठक भी उसे देखने लगे और आप-जैसी ही अनुभति करने लगे।

इसके बाद जरा परिवर्तन के लिए किसी के दिमाग में घुस जाओ। यदि मैं तुम पर नाराज होता हूं तो यह पता लगाने की कोशिश करो कि मैं तुम्हारे बारे में क्या सोच रहा हूं, साथ ही इस सबके तुम पर क्या प्रतिक्रिया हो रही है, उसे भी समझने का यत्न करो। एक मनुष्य के नाते तुम जान सकते हो कि कौन सही है और कौन गलत। तुम्हें फैसला कर उन्हें लागू करना होता है। एक लेखक के नाते तुम्हें किसी के बारे में कोई फैसला नहीं करना चाहिए। तुम्हें केवल समझना चाहिए।

लोगों की बातों को पूरे ध्यान से सुनो। इस बारे में मत सोचो कि तुम क्या कहने जा रहे हो। जब तुम किसी कमरे में जाओ तो वहां देखी गयी हर बात को जानने का माद्दा होना चाहिए। और यदि वह कमरा तुम्हारे मन में कोई भावना जगाता है तो तुम्हें यह भी जानना चाहिए कि वह भावना किस कारण उपजी। जब तुम शहर में किसी थियेटर के बाहर रहो तो यह देखने की कोशिश करो कि अपनी टैक्सी या कार से बाहर आते समय लोग कितने भिन्न होते हैं। एक बात और— सदा और लोगों के बारे में सोचो।

माइस : क्या आपकी राय में मैं लेखक बन सकूंगा ?

मैं : भला मैं यह क्योंकर जान सकता हूं ? ... तुम इस तरह पांच साल तक लिखो और बाद में स्वयं को इसमें अच्छा न पाओ तो तुम अपने आपको गोली मार सकते हो।

माइस : पर मैं अपने आपको गोली नहीं मारूंगा।

मैं : तो फिर मेरे पास आना, मैं तुम्हें गोली मार दूंगा। ●

• महेश्वर दयाल

मौलाना अबुल कलाम आजाद ने अपनी पुस्तक 'गुबारे-खातिर' में मुसलमानों की संगीत के प्रति रुचि के बारे में यह भी लिखा है कि 'शहजादा औरंजगजेब शास्त्रीय संगीत का बड़ा प्रेमी था।' उन्होंने हीराबाई और औरंगजेब की प्रेमकथा को भी दोहराया है, जिसके बारे में 'अहकामे-आलमगीरी' नामक पुस्तक में यों लिखा है—

"जवानी में औरंगजेब भी किसी और मनचले शहजादे से कम न था। बड़ा दिलफेंक, अच्छी सूरत पर जान देने वाला, नाच-गाने का रसिया और शास्त्रीय संगीत-प्रेमी। एक बार जब उसे दक्खिन की सूबेदारी मिली तो वह अपनी खालाजान के बुलावे पर बुरहानपुर गया। वहां महलसरा की बेगमें, बांदियां और चेरियां शहजादे से परदा न करतीं। औरंगजेब जिधर चाहता, चला जाता, सैर करता, मजे उड़ाता फिरता। एक दिन हिरनी वाले बाग में आम के पेड़ के नीचे उसने एक बहुत सुंदर छोकरी को देखा, जो पेड़ की डाल पकड़े हंसती-झूमती मद्धिम सुरों में अलाप रही थी। इस लड़की का नाम हीराबाई था, जिसे जेनाबादी के नाम से भी याद किया जाता था। औरंगजेब उसकी सुंदर सूरत, मोहिनी मूरत को देखकर और उसकी मीठी, मधुर वाणी को सुनकर लट्टू हो गया। दिल इतना मचला, तड़पा कि बेहोश हो गया। औरंगजेब की खालाजान को महलसरा में पता चला तो वह नंगे पांव दौड़ी-दौड़ी बाग में आयी। अपने भांजे को सीने से लगा लिया और रोने लगी। कई घड़ी बाद जब शहजादा होश में आया तो पूछने लगी, 'बेटा औरंगजेब! बता तो सही तुझे हुआ क्या?
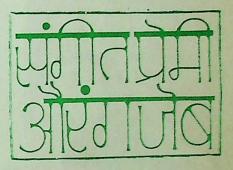
यह कैसी बीमारी है, जिसने तुझे अधमुआ कर दिया। तू अच्छा न हुआ तो मैं शहंशाह शाहजहां को क्या मुंह दिखाऊंगी।'

"आधी रात गये जब भांजे मियां को होश आया तो उसने खालाजान को परेशान देखकर कहा, 'अगर मैं तुम्हें अपने दर्द की दवा बता दूं तो मिल सकेगी?' खालाजान बोलीं, 'बेटा, दवा तो क्या, अगर मुझे अपनी जान भी न्योछावर करनी पड़ी तो मैं तुझ पर कुर्बान हो जाऊंगी।'

"औरंगजेब ने कहा, 'मुझे हीराबाई चाहिए। मैं उसके बिना जी नहीं सकता।

वही मेरे दर्द की दवा है।' यह बात सुनकर खालाजान की सिट्टी गुम हो गयी। उसने बहुत देर तक चुप्पी साध ली। कोई जवाब बन न पड़ा। औरंगजेब ने ताना दिया 'बस ! तुम्हें मुझसे इतना ही प्यार था। तुम्हें मेरी इतनी-सी बात की परवाह नहीं!'

"खालाजान बोली, 'बेटा ! तुझे क्या मालूम हीराबाई तेरे खालू मीर खलील (खां जमां) की कितनी चहेती लौंडी है। उन्हें पता चल गया तो वह मुझे और हीरा-बाई को कच्चा चबा जाएंगे।' औरंगजेब ने यह कोरा जवाब पाया तो उदास हो गया। बुरहानपुर से रूठकर वापस चला आया, लेकिन दिल न माना। हीराबा[ई] को अपने हरम में लाने की उधेड़बुन [में] लगा रहा। उसने अपने दीवान मुरशि[द] कुली खां को बुलाया। उस पर उसे बहु[त] भरोसा था। उसने उससे अपने दिल का हाल कह सुनाया। दीवान ने औरंगजेब की बात सुनकर म्यान से तलवार निकाल ली और हीराबाई को औरंगजेब के महल में ले आने की कसम खायी। औरंगजेब यह नहीं चाहता था कि हीराबाई को लाने में सिर-धड़ की बाजी लगा दी जाए। वह जानता था कि उसका दीवान मीर खलील को जान से मार डालेगा और उसकी खाला विधवा हो जाएगी। उसने मीर खलील के पास संदेशा भेजा कि 'मैं हीराबाई के इश्क में दीवाना हूं। आपका करम होगा, अगर उसे मेरे महल में भेज दें।' मीर खलील के पास जब संदेशा पहुंचा तो उसने बहुत ठंडे दिल से जवाब दिया कि 'मैं हीराबाई को आपके महल में भेजने को तैयार हूं लेकिन उसके बदले में आप अपने महलसरा की लौंडी चतुरबाई को मेरे पास भेज दें।' आन की आन में हीराबाई की पालकी औरंगजेब के महल में आ गयी और चतुरबाई मीर खलील की लौंडी बन गयी।"

मनूची नाम के एक विदेशी ने, जो उन दिनों हिन्दुस्तान में था, इसी हीराबाई के बारे में लिखा है कि औरंगजेब को इस नाचने-गाने वाली लड़की से इतना प्यार हुआ कि वह हर समय राग-रंग में डूबा

रहता। उसका किसी काम में जी नहीं लगता। जब यह बात शहंशाह के कान तक पहुंची तो औरंगजेब के बड़े भाई दाराशिकोह ने अपने पिता से कहा, "आलमपनाह! देख लिया आपने? औरंगजेब ने एक लौंडी से दिल लगाकर ईमान-धर्म छप्पर पर रख दिया।" लेकिन औरंगजेब ने हीराबाई की खातिर किसी की परवाह न की। जवानी के नशे में मस्त रहा। थोड़े दिनों बाद ही हीराबाई मर गयी। औरंगजेब की दुनिया में अंधेरा छा गया। जब उसे हीराबाई की याद तड़पाती तो वह महल से निकल जंगलों में जाकर शिकार खेलकर दिल की भड़ास निकालता।

औरंगजेब जब गद्दी पर बैठा तो पांच-सात साल तक दिल्ली के लालकिले में बड़े जश्न मनाये गये। आये दिन नाच-गाने की महफिलें जमतीं। औरंगजेब के महल में दाराशिकोह की बहुत-सी रखैलें भी थीं, जो नाच-गाने में माहिर थीं। नामी कलाकार और कलावंत भी बादशाह के दरबार में हाजिर रहते। इन कलाकारों में खुशहाल खां, हयात सरसनैन, सुखी सेन, मृदंगराय-जैसे नामी कलावंतों पर औरंगजेब की बड़ी कृपा रही। खुशहाल खां तानसेन के बेटे विलास खां के धेवते और लाल खां के बेटे थे। औरंगजेब ने खुशहाल खां को 'गुण-समन्दर' की उपाधि दी। हयात सरसनैन के दादा अकबर बादशाह के दरबार में और पिता शाहजहां के दरबार में कलावंत थे। सुखीसेन बहुत अच्छा रबाब बजाते थे। उनकी देश भर में धूम थी। मृदंगराय का असली नाम तो कृपाराय था, लेकिन मृदंग ऐसा कमाल का बजाता कि बादशाह ने उसे मृदंगराय का खिताब दे दिया। इन कलाकारों के बारे में 'रागदर्पण' नाम की किताब में बहुत कुछ लिखा है। इस किताब को कश्मीर के सूबेदार फकीर उल्लाह ने औरंगजेब को पेश किया था। यह 'रागदर्पण' नाम की किताब महाराजा मानसिंह ग्वालियरी की भाषा (हिंदी) में लिखी 'मानकुतूहल' नामक पुस्तक का फारसी अनुवाद है। औरंगजेब के राज्य में लिखी बहुत-सी ऐसी भी पुस्तकें मिलती हैं, जिनमें बादशाह के गुणों का ध्रुपद गायन में बखान किया गया है। एक ध्रुपद में औरंगजेब के तेज-प्रताप का वर्णन करते हुए उसे 'औलिया' और 'जिंदा-पीर' भी कहा गया है—

आयो आयो रे महाबली आलमगीर
जा की धाक देखे कोऊ धरे न धीर
अपबली, तपबली आली जंग, जौर
तेऊ भाटल गंभीर
दछिन दलमले, विकट गढ़ हलहले
जाको तो धुआइ (दुहाई) फिरै
दरिया तीर
चकतावंस सुलितान औरंगजेब
साहिनी में साही औलिया जिंदापीर

यों तो बहुत-से ध्रुपद हैं। इन सबका विषय नायिका-भेद है। इनमें औरंगजेब नायक है। वसंत के त्योहार पर एक ध्रुपद में मंगला मुखिया कहती है, 'शाह

औरंगजब ! तुम हमारे साथ असंख्य वर्षों तक धम्मारी खेलते रहो ।'

औरंगजेब ने तो संगीत का सुनना बंद कर दिया, लेकिन रंगमहलों में बेगमें और शहजादियां नाच-रंग का मजा लेती रहीं। औरंगजेब के बेटे आजम और मोअज्जम को बचपन से संगीत का शौक था और वे संगीत के वातावरण में ही पले। ज्यों-ज्यों दिन बीतते गये, औरंगजेब के दरबारी कलावंतों का दिल टूटने लगा। एक दिन संगीत विद्या के गुणी मिरजा मुकर्रम खां ने बादशाह से पूछा, "हुजूर की संगीत के बारे में क्या राय है ?" आलमगीर ने जवाब दिया कि जो इस विद्या को अच्छी तरह समझता है, उसके लिए गाना-बजाना सुनना हलाल है। मिरजा ने कहा, "आलमपनाह को तो इस विद्या की पूरी जानकारी है। फिर संगीत से क्यों मुंह मोड़ लिया ?" औरंगजेब ने कहा, "ध्रुपद बिना पखावज के मजा नहीं देता। पखावज और दूसरे बाजों को सुनना हमारे धर्म में मना है, इसलिए मैंने संगीत में दिलचस्पी छोड़ दी।"

ज्यों-ज्यों समय बीतता गया, औरंगजेब को संगीत से इतनी चिढ़ हो गयी कि एक दिन जब लालकिले से उसकी सवारी जामा मस्जिद नमाज पढ़ने जा रही थी, तो कुछ गवैये सामने से एक जनाजा उठाये चले आ रहे थे। बादशाह ने पूछा, "यह किसका जनाजा है ?" गवैयों ने कहा, "संगीत का !" आलमगीर बोला, "इस जनाजे को इतना नीचे दफन करना कि फिर बाहर न आ सके।"

मौलवी बशीरुद्दीन ने अपनी एक पुस्तक में लिखा है कि औरंगजेब ने दिल्ली में लालकिले के सामने जैनियों के उर्दू मंदिर (लाल मंदिर) को तुड़वाना चाहा था। उन दिनों चांदनी चौक के बाजार के चार हिस्से थे। लालकिले के लाहौरी दरवाजे से दरीबे तक का हिस्सा उर्दू (लश्कर) बाजार कहलाता था। यहां शाही फौजें पहरा दिया करती थीं। दरीबे से कोतवाली तक कोतवाली का बाजार था। कोतवाली से उस चौक तक, जो चांदनी चौक (नगर-निगम के सामने वाला चौक) कहलाता था, जौहरी बाजार था। चौक से मस्जिद फतहपुरी तक बेगम फतहपुरी बाजार कहलाता था। वहां आठों पहर नौबत बजा करती थी। बादशाह ने हुक्म दिया कि नौबत बजानी बंद कर दी जाए। लेकिन नौबत बराबर बजती रही। औरंगजेब के सिपाही जब मंदिर में आये तो उन्हें देख कर आश्चर्य हुआ कि मंदिर के अहाते में कोई आदमी नहीं, लेकिन नौबत बज रही है।

सिपाहियों ने जाकर बादशाह को जब हाल सुनाया तो आलमगीर मंदिर में पहुंचा और जब उसे संतोष हो गया कि उस मंदिर में कोई नहीं रहता तो उसने हुक्म दिया, "यह नौबत बराबर बजा करे। कोई रुकावट न डाली जाए।"

—९६, बाबर रोड, नयी दिल्ली

क्षणिकाएं

एक खत

बिजली के अक्षरों से
एक खत लिखा शहर ने—
गांव के नाम
'मेरा प्रणाम!'

भटकन

मैदानों में भागती हुई धूप
किसी बच्चे की तरह
जंगल में घुसी
राह भूल गयी

—नसीम रहमान

माध्यम

सरकारी दफ्तर के बाहर
बोर्ड पर लिखा था—
'बिना आज्ञा प्रवेश निषेध'
हड़बड़ाते आये एक नेता
पिउन को पेश की सिगरेट
वह गर्व से हंसा
नेता बिना हिचक अंदर घुसा

—ब्रजेश 'चंचल'

वे

हर बार छिपा लेते हैं वे
अपने अपराधों को
जनतंत्र के नाम पर
कुछ और नया 'फ्राड' करके
और बन जाते हैं
जनता के मसीहा
अजन्मी पीढ़ी का भविष्य
बंजर हो जाता है

—देवेन्द्र उपाध्याय

अपवाद

सभी पत्थरों पर
सिर पटकने से
घाव पैदा नहीं होते
कुछ पत्थर ऐसे भी होते हैं
जिनके तले
हरी-हरी दूबें जन्म लेती हैं

—सत्यनारायण श्रीवास्तव

कीड़े

आलस और अज्ञान
दो कीड़े हैं
मनुष्य को खाकर
खोखला कर देते हैं।

—सतीश हांडा

बायें से दायें : श्री भारती दासन्, तिरुवल्लवर, कवयित्री अव्यैयार, सुब्रह्मण्यम भा

तमिल साहित्य की आधुनिक पीढ़ी

● शीरीन भारती

तमिल द्रविड़ भाषाओं में सबसे प्राचीन भाषा है। स्वयं महर्षि अगस्त्य ने तमिल में 'अकत्तियम्' नामक लक्षण-ग्रंथ लिखा और अपने शिष्यों को भी इसी भाषा में ग्रंथ लिखने की प्रेरणा दी। तमिल का सबसे प्राचीनतम लक्षण-ग्रंथ 'तोल्-काप्पियम्' है। कहा जाता है कि इसके रचयिता महर्षि अगस्त्य के शिष्य तोल-काप्पियर हैं। तोलकाप्पियर का समय ईसा पूर्व छठी शताब्दी का माना जाता है। ईसा पूर्व पांचवीं शताब्दी से दूसरी शताब्दी तक अनुमानित 'संघकाल' को तमिल-साहित्य का स्वर्ण युग कहा गया है। चौथी और पांचवीं शताब्दी में गाये जाने वाले गीतों का संग्रह 'पुरनानूरु' में है। इसी प्रकार द्वितीय पद्य-संग्रह 'अकनानूरु' है। इन्हीं दिनों और भी कई पद्य-संग्रहों की रचना हुई। इनमें तमिल जाति की प्राचीन संस्कृति और सभ्यता का विस्तृत वर्णन किया गया है। तमिल वेद 'तिरुक्कुरल' प्रथम ईस्वी का एक अद्वितीय एवं आदर्श नीति-ग्रंथ है। इसे संत तिरुव्वलुवर ने लिखा था। भक्ति काल में कवि कम्बन ने वैष्णवों के अमर काव्य 'कम्बरामायण' की रचना की। 'कम्बरामायण' को भारतीय साहित्य में एक महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। यद्यपि कम्बन कृत रामायण और तुलसीकृत रामचरितमानस में कई बातों में अंतर है तथापि इसका अपना महत्त्व है। तमिल-साहित्य जैन और बौद्ध कवियों

की देन को भी नहीं भुला सकता। तमिल के पांच महाकाव्य 'शिलप्पधिकारम', 'मणिमेखलै', 'जीवक-चितामणि', 'वलया-पति' और 'कुण्डलकेशी' आज भी तमिल-साहित्य की निधि हैं। आधुनिक काल में ईस्वी १८०० से १९३० तक को तमिल आधुनिक साहित्य का प्रारंभिक काल माना जाता है। इस काल में तायुमान स्वामी गो. कृ. भारती, रामलिंग स्वामी आदि का नाम उल्लेखनीय है। फ्रांसीसी पादरी वेस्की रावर्ट डी. नोबिलिबस आदि ने भी तमिल गद्य को संवारने में महत्त्वपूर्ण भूमिका अभिनीत की। राष्ट्रकवि सुब्रह्मण्यम भारती, उपन्यासकार कल्कि रा. कृष्ण-मूर्ति और श्री रा. शु. नल्लपेरुमाल आदि ने आधुनिक तमिल-साहित्य को समृद्ध बनाने में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। महाकवि भारती ने तो एक दृष्टि से तमिल-साहित्य के युग को ही परिवर्तित कर दिया।

राष्ट्रीय चेतना से युक्त तमिल-उपन्यास

कल्कि के उपन्यास 'त्यागभूमि', 'अलैओशै' बहुचर्चित हुए। 'त्यागभूमि' स्वतंत्रता-संग्राम की पृष्ठभूमि पर लिखा गया उपन्यास है। इसी राष्ट्रीय चेतना को लेकर श्री रा. शु. नल्लपेरुमाल ने 'कल्लुकुलईरम्' और 'पोराट्टगंल', श्री न. चिदम्बर सुब्रह्मण्यम ने 'मण्णिल तेरियदुवानम्' और श्री ना. पार्थसारथी ने 'आत्माविन रागंगल्' उपन्यास लिखा। आधुनिक तमिल-साहित्य में अनेक अच्छे ऐतिहासिक उपन्यास भी लिखे गये। इनमें स्व. कातिक का 'पोलिमिन शेनवण्', उपन्यास विशेष लोकप्रिय हुआ। श्री अखिलन का 'वेंगमिनमैदन', श्री ना. पार्थसारथी का 'मणिपल्लवम्', श्री क्लोवि मणिशेखरन् का 'वेलुनाच्चियार', श्री विक्रभन वेंणु का 'नांदिपुरिंदु' उपन्यास भी विशेष रूप से चर्चित हुए। श्री शांडि-ल्यन् ने मुगल शासकों के जीवन को अपने उपन्यासों में बड़ी गहराई से उतारा। समय के साथ-साथ औपन्यासिक विधा में भी परिवर्तन हुए। हिंदी उपन्यासों की भांति तमिल-उपन्यासों में भी जीवन के विविध रूपों का मनोवैज्ञानिक दृष्टि से मूल्यांकन किया जाने लगा और श्री देवेन, तुमिलन, बी.एस. रामय्या, क. ना., सुब्र-ह्मण्यम, वि. रा. शि. शु. चेल्लप्प, कि. राजगोपालन्, ति. जानकीरामन, एम. वि.

बायें से दायें : कोत्तमंगलम् सुब्बू, कण्णदासन्, श्रीमती जयरामन, वत्सला किरन

वेंकटराम, आरवि, पी.वी.आर. उमाचंद्रन, रंगराजन, सोमू, एस. रंगनायकी, अनुत्तमा चूड़ामणि, श्रीमती राजमक्रृष्णन आदि के उपन्यासों में उनका निरूपण स्पष्ट रूप से हुआ। नये प्रयोगों में श्री सुंदर रामास्वामी (उपन्यास–ओरु पुलिय), श्री ला. श. रामामृतम् (पुत्र और अमिता), श्री चा. कंदस्वामी (छायावणम्) भी पीछे नहीं रहे।

वैताल पच्चीसी से मुक्त तमिल-कहानी

वैतालपच्चीसी की कहानियों से तमिल कहानी को उबारने वालों में स्व. व. वे. सुब्रह्मण्य ऐयर, राष्ट्रकवि सुब्रह्मण्यम भारती, ए. माधवैया का नाम उल्लेखनीय है। उन्होंने तमिल-पाठकों में नयी कहानी के प्रति अनुराग जगाया। श्री ऐयर की प्रसिद्ध कहानी 'कुलत्तंकरै अरशमरम्', अर्थात 'तालाब के किनारे पीपल' इस ओर क्रांतिकारी कदम है। श्री ऐयर के कहानी-संग्रह को तमिल कहानी साहित्य का प्रथम संग्रह माना जाता है। महाकवि सुब्रह्मण्यम भारती को लोग एक अच्छे कथाकार के रूप में भी जानते थे। उनकी 'कदैक्कोत्तु', 'नव तंदिरक कदैतल' (नवतंत्र कथाएं) 'चंदिरिकैयिन कदै' (चंद्रिका की कथा) 'स्वर्ण कुमारी', 'आरिल आरु पंगु' (छठवें भाग का अंश) कहानियां कहानी-विधा को सशक्त बनाने में पूर्ण सफल हुईं।

तमिल भाषा को संस्कृत की बोझिलता तथा क्लिष्टता से मुक्त कर सरल, सरस और यथार्थ रूप देने का महत्त्वपूर्ण कार्य वि. कल्याणसुन्दर मुदलियार ने किया। स्व. राजाजी, स्व. कल्कि, रंगनाथन, शं. सुब्रह्मण्यम, रामास्वामी, कु. वेंकटरमणि आदि ने अपनी सशक्त कृतियों से आधुनिक तमिल-कथा-साहित्य को समृद्ध बनाया। समाज की ज्वलंत समस्याओं पर जमकर लिखने वालों में मु. राजगोपालन, बी. एस. रामय्या, (स्व.) पुदुमैपित्तन न. पिच्चमूर्ति, जानकीरामन, चेल्लप्पा का नाम भी उल्लेखनीय रहेगा। कहानीकार तुमिलन, तेवन, त. ना. कुमारस्वामी, रा. श्री देशिकन, क. रा. मायावी, जगन्नाथन, रंगनाथन, शंकरराम तथा हास्य लेखकों में 'कोनष्ट', 'कल्कि', 'नागेडी' का नाम उल्लेखनीय है।

तमिल-साहित्य में इन दिनों सबसे अधिक विकास कहानी-विधा में हुआ। सोमु, अकिलन, आर. वि. विन्दन, रामामृतम्, वासवेन, चंद्रशेखरन्, जी. एस. मणि, श्री व. सा. नागराजन, म. राजाराम, अशोक मित्रम्, पोन्नित्तुरैवम, मलरन्नक, एम. एस. कल्याणसुंदरम आदि ने तमिल कहानी को नया रूप दिया।

हलचल से पूर्ण तमिल-काव्य

तमिल-काव्य को राष्ट्रकवि भारती की देन अभूतपूर्व है। नामक्कल श्री रामलिंगम पिल्लै ने भी तमिल कविता को समृद्ध बनाया। कोत्तमंगलम सुब्बु ने लोकगीतों की धुन पर 'गांधी महान कथै' और 'भारतियार कथै' काव्य की रचना की।

कवि कण्णदासन के काव्य और गीतों का स्वाद पूरा तमिलनाडु लेता है । यह भी कहा जाता है कि कण्णदासन के फिल्मों में आने से फिल्मी गीतों का स्तर ऊपर उठा है । तिरुचिंद्रवल, कवि रायर, त्रिलोक सीताराम, स्व. तमिल ओलि, श्री कुमिलन, तमिल लकन, शुरदा, गोवेंदन, ना. शि. वरदराजन आदि ने काव्य की नयी विधाओं को जन्म दिया है । हिंदी की नयी कविता की भांति तमिल की नयी कविता को लेकर तमिल साहित्य में बड़ी हलचल है । ज्ञानकुत्तन, वैदीश्वरन्, नीलमणि आदि कवि काफी अच्छा लिख रहे हैं ।

लेखिकाओं का योगदान

तमिल साहित्य के इतिहास में महिला साहित्यकारों का भी महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है । पुरानी पीढ़ी की कवयित्री आंडाल ने मीरा की भांति कृष्ण-प्रेम से ओत-प्रोत होकर काव्य रचनाएं लिखीं । आंडाल के भक्तिरस में डूबे गीत आज भी तमिलनाडु में भक्ति के साथ गाये जाते हैं । आधुनिक लेखिकाओं में श्रीमती राजेश्वरी पद्मनाभन 'अनुत्तमा' ने अनेक उपन्यास और कहानियां लिखीं । उनके 'घरौंदा' (मणल्वीडु) नामक उपन्यास को साहित्यिक मासिक 'कलैमहल' के संस्थापक का स्मारक पुरस्कार दिया गया । तमिलनाडु सरकार ने उनके 'प्रेमगीतम्' उपन्यास का भी सम्मान किया । उन्होंने बाल-साहित्य भी खूब लिखा । श्रीमती कि. सरस्वती अम्माल को भी 'कलैमहल' का पुरस्कार दिया गया । श्रीमती शिवशंकरी, श्रीमती कृत्तिका चूड़ामणि, किंजा, गौरी अम्माल, सरोजा रामामूर्ति, एस. रंगनायकी, वसुमति रामस्वामी, राजम कृष्णन आधुनिक काल की प्रतिष्ठित तमिल लेखिकाएं हैं । अनेक लेखकों ने भी महिला-छद्मनाम से लिखा है। इनमें श्री सुजाता, श्री इंदिरा पार्थसारथी, श्री जयकांतन के नाम उल्लेखनीय हैं ।

तमिल की साहित्यिक पत्र-पत्रिकाएं

तमिल पत्र-पत्रिकाओं ने जनता में साहित्य के प्रति प्रेम और जागरूकता उत्पन्न करने की दिशा में महत्त्वपूर्ण कार्य किया है । 'कुमुदम', 'आनंद विकटन', 'कल्कि', 'मंजरी'- जैसी पत्रिकाओं ने समय-समय पर प्रतियोगिताएं आयोजित कर नये लेखकों को पर्याप्त प्रोत्साहन दिया है । आज ये पत्रिकाएं लाखों की संख्या में बिकती हैं ।

तमिल लेखक डॉ. पी. जयरामन

—१७, अन्ना पिल्लई स्ट्रीट, थर्ड लेन, मद्रास

अहंकारी व्यक्ति बुद्धिमानों के घृणापात्र, मूर्खों के लिए प्रशंसनीय, परान्नजीवियों के लिए आदर्श और अपने अहं के दास होते हैं । —बेकन

मंत्री का हृदय

मिनी कहानियां

और सामने रखी हुई मंत्री की आदम-कद प्रतिमा की ओर अंगुली से निर्देश करते हुए गुरु द्रोणाचार्य ने पांडव-कौरवों से कहा, "लड़को, तुम लोगों को सामने रखे हुए मंत्री के हृदय को निशाना बनाना है . . ." और युधिष्ठिर के हाथों में धनुष, बाण देते हुए गुरु द्रोण ने उससे पूछा, "वत्स, तुम्हें सामने क्या दिखायी देता है ?"

"बहुत कुछ दीख रहा है, गुरुजी ! . . . धर्म से विचलित मंत्री की आंखों में

बैठा हुआ शैतान नजर आ रहा है और..."

"रहने दो वत्स, यह तुम्हारा काम नहीं . . ." कहकर दुर्योधन से उन्होंने पूछा, "बच्चा, तुझे सामने क्या दीख रहा है ?"

"गुरुदेव, मुझे इस मंत्री के पीछे कुरसी दिखायी देती है. जिसके पैर विरोध पक्ष-वाले काट रहे हैं," दुर्योधन बोला।

गुरु द्रोण ने उसके हाथ से भी धनुष, बाण ले लिया।

अंतिम बेंच पर बैठे अर्जुन से गुरु द्रोण ने पूछा "वत्स, तुझे सामने क्या दिखायी देता है, बता . . ."

"तात, मंत्री का इम्पोर्टेड गॉगल्स से सुशोभित चेहरा . . . छोटी-सी नाव जैसी टोपी . . ."

"बहुत खूब . . . कहते जाओ . . ."

"अब तो गुरुजी, मंत्री की प्रतिमा के जाकेट की जेब से झांकता हुआ रूमाल भी दीख रहा है . . . और सब कुछ . . ."

"वत्स, मंत्री के हृदय को बेध डालो," गुरु अधीर हो बोल उठे।

"किंतु . . ." अर्जुन ने निश्वास भरते हुए कहा, " . . . मंत्री के हृदय के सिवाय मुझे सब कुछ दिखायी देता है।"

• विनोद भट्ट

—अनुवादक : गोपालदास नागर

घर

एक वड़ा दक्ष चित्रकार था, फिर भी उसे लगता कि उसने अभी 'एक' का चित्रण नहीं किया है।

वह उस 'एक' को चित्रित करने धूल-धूसरित सड़क पर जा निकला। मार्ग में एक वयोवृद्ध पुजारी से भेंट हो गयी।

पुजारी ने पूछा, "कहां निकल पड़े ?"

"यह मैं नहीं जानता। मैं विश्व की सर्वाधिक सुंदर वस्तु को चित्रित करना चाहता हूं," चित्रकार ने कहा, "क्या आप हमारा मार्ग-प्रदर्शन कर सकते हैं?"

'विश्व में श्रद्धा ही सबसे अधिक सुंदर वस्तु है।"

और चित्रकार आगे बढ़ा।

उसे एक नारी दिखी।

चित्रकार ने उससे पूछा।

नारी ने झट कहा, "प्रेम के बिना सौंदर्य भी फीका है। प्रेम ही सौंदर्य है!"

आगे उसे थका-मांदा सैनिक मिला।

सैनिक ने कहा "शांति ही सौंदर्य है।"

पर चित्रकार को घर ही सर्वाधिक सुंदर लगा। उसने बच्चों की आंखों में श्रद्धा देखी। पत्नी की मुसकराहट में प्रेम पाया और शांति भी घर में विद्यमान थी।

फिर चित्रकार ने संसार की सर्वाधिक सुंदर वस्तु को चित्रित किया। चित्र बन चुका तो उसका शीर्षक रखा—घर।

● डबल्यू ओ. गुडविन

वचन-वीथी

ज्ञान के कीमती जवाहरात को छिपाकर रखने से उसकी आभा नष्ट हो जाती है।

—जोसेफ हाल

हंसी-मजाक बातचीत का नमक है, खुद भोजन नहीं।

—हैजलिट

मेरा सदैव यह अनुभव रहा है कि जिन लोगों में कोई अवगुण नहीं होते, उनमें गुण भी बहुत कम होते हैं। —लिंकन

गुण युद्ध की स्थिति है और उसमें बने रहने के लिए हमें सदैव अपने से संघर्ष करते रहना है। —रूसो

नव-वर्ष तो आपके जीवन में अनेक आ सकते हैं, किंतु सुखद वर्ष तब तक नहीं आ सकते जब तक कि आप उनके योग्य न बनें। —चेस्टरफील्ड

मुसीबतों में अविचल रहने वाले के सामने दुर्भाग्य निःसत्व हो जाता है। —सेनेका

एक गुनाह दूसरे को उकसाता है। —शेक्सपियर

प्रतिशोध दूरदर्शी नहीं होता।

—नेपोलियन
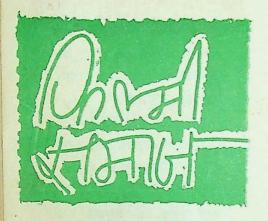
● ख्वाजा अहमद अब्बास

हजारों वर्ष पहले मनु महाराज ने भारतीय समाज को चार वर्णों या चार वर्गों या जातियों में बांटा था। मिट्टी के घड़ों के कुतुब-मीनार में जिस तरह एक घड़ा दूसरे घड़े के ऊपर रखा होता है उसी प्रकार कहा जाता है कि भगवान ने जाति-पांति का मीनार बनाया था। इसमें एक जाति सदा से दूसरी जाति के ऊपर रखी हुई थी।

सब से ऊपर थे ब्राह्मण। उनके बाद क्षत्रिय। क्षत्रियों से नीचे थे वैश्य और सब वर्गों के नीचे दबे थे शूद्र—जाति के अछूत।

कहते हैं कि चार जातियों का यह वर्णाश्रम कार्य के विभाजन पर आधारित था। जो पूजा-पाठ करते थे, पढ़ते-लिखते थे, वे ब्राह्मण कहलाते थे। क्षत्रिय हथियार उठाने वाले वीर-सूरमा थे। वैश्य मध्यम-वर्ग के व्यापारी दुकानदार थे, और शूद्र इन तीनों जातियों या वर्गों की सेवा करने के लिए सब से घटिया और गंदे कार्य करने पर विवश थे।

बिलकुल उसी प्रकार फिल्मी समाज भी चार वर्गों में बंटा हुआ है।

फिल्मी कुतुब मीनार की सबसे ऊंची मंजिल पर फायनेंसर—सेठ साहूकार लोग जिनके रुपयों से ये फिल्मी धंधा चलता है। ये ५० प्रतिशत से १५० प्रतिशत तक वार्षिक ब्याज लेते हैं, और वह भी 'ब्लैक' में! प्रोड्यूसर के हस्ताक्षर की हुई हुंडियों के बल-बूते पर, जब जी चाहे, जितनी जी चाहे रकम लिखी जा सकती है। मजा यह है कि ब्याज अंदर से काटकर रकम देते हैं। उदाहरणार्थ, यदि किसी ने एक लाख रुपया एक वर्ष के लिए कर्ज लिया और उस पर तीन प्रतिशत प्रति मास ब्याज देना ठहरा है तो ब्याज लेने वाले को केवल ६८ हजार रुपये मिलेंगे—जब कि वह रसीद देगा एक लाख की। ब्याज की रकम अंदर से काट ली जाएगी, और क्योंकि रकम को चुकाने में देर होना निश्चित है तो ब्याज की जमानत के रूप में दस-बीस कोरी हुंडियों पर प्रोड्यूसर के हस्ताक्षर करा लिये जाएंगे।

इनके बाद नम्बर आता है उनका जो ब्लैक में फायनेंसरों से ऋण लेते हैं और सितारों को लाखों रुपया 'ब्लैक' में देते हैं। ये लोग प्रोड्यूसर कहलाते हैं। मगर ये लोग जो बनाते हैं, अर्थात प्रोड्यूस करते हैं वह फिल्म नहीं होती। वह तो फिल्म

बनाने का एक 'प्रपोजल', एक तजवीज होती है। यदि हीरो 'ए' और हीरोइन 'बी' और म्यूजिक-डाइरेक्टर 'सी' और 'डी' को एक रंगीन फिल्म में ले लिया जाए तो यह फिल्म पचास लाख में बिक सकती है। डिस्ट्रीब्यूटर भी उसे खरीदने के लिए तैयार हो जाएंगे और शुरू के खर्चों के लिए फायनेंसर भी पांच-दस लाख रुपये दे देंगे। उम्मीद पर दुनिया कायम है और प्रपोजल पर ही सारा फिल्मी-व्यापार चलता है। सामान्यतया प्रोड्यूसर वह होता है जिसके पास फिल्म में लगाने के लिए अपना रुपया नहीं होता, और होता भी है तो वह इस रुपये को क्यों खतरे में डालने लगा? रुपया तो सदा प्रपोजल बनाने के बाद फायनेंसर से या डिस्ट्रीब्यूटर से आता है, तब ही फिल्मी समाज की ऊंच-नीच में फायनेंसर के बाद दूसरा ऊंचा दरजा प्रोड्यूसर का रखा गया है।

उन दोनों के बाद नम्बर है फिल्मी सितारों का। उनका तीसरा नम्बर ऐसे ही है जैसे शाही जुलूस में किसी बादशाह, शहंशाह, सम्राट या डिक्टेटर की मोटर के आगे-आगे दो घुड़सवार या दो मोटर-साइकिल सवार हरावल दस्ते की तरह चलते हैं। रास्ता साफ करने के लिए, और फिर तीसरे नम्बर पर बादशाह या डिक्टेटर की सवारी आती है। असल में फिल्मी समाज में जो महत्त्व सितारों को प्राप्त है, वह बादशाह, महाराजा बल्कि सम्राट को भी प्राप्त नहीं होता। यह महत्त्व केवल डिक्टेटर को प्राप्त होता है। यदि दिन के समय फिल्मी सितारा कह दे कि यह रात है, तो सब प्रोड्यूसर-डाइरेक्टर यही कहेंगे, और यदि रात के समय

एक बड़ा परिवर्तन फिल्मी समाज में आ गया है। याद रखने की बात इतनी ही है कि फिल्मी समाज भी हमारे समाज का एक नमूना है।

कह दे कि दिन है तो सब लोग दिन कहेंगे।

फिल्मी सितारा हीरो भी हो सकता है, हीरोइन भी हो सकती है। नखरे तो दोनों के ही होते हैं, मगर विस्मय की बात यह है कि हीरो के नखरे हीरोइनों से ज्यादा होते हैं। हीरो का आग्रह होता है कि गरमियों में 'इनडोर शूटिंग' हो तो एयरकंडीशंड स्टूडियो में हो और 'आउटडोर शूटिंग' हो तो श्रीनगर, शिमला, नैनीताल, मसूरी, ऊटी में हो, जहां ठहरने के लिए शानदार फाइव-स्टार होटल हो, जहां का रायल

सूट हीरो के लिए पहले से रिजर्व करा दिया जाए; और जहां हीरो अपने बीवी-बच्चों सहित या फिर अपने सेक्रेटरी और चमचों सहित ठहर सके।

फिल्मी समाज पर रिसर्च करने वाले आज तक यह फैसला नहीं कर सके कि फिल्मी वर्णाश्रम में हीरोइन के मां-बाप और नानी का क्या दरजा है? एक जमाना तो वह था कि जब हीरोइन की नानी प्रोड्यूसर से कहती थी, "सेठजी! बहुत दिनों से हमारा फोटो पेपरों में नहीं छपा।" मतलब यह कि उनकी बेबी की तसवीर नहीं निकली। उस शाही अंदाज के 'हम' में नानी और नवासी दोनों शामिल थे।

मगर आजकल नानियों और मांओं का स्थान सेक्रेटरियों ने ले लिया है। नाम बदल गये हैं मगर अंदाज नहीं। फिल्मी दुनिया में कहावत है कि 'आज का सेक्रेटरी कल का प्रोड्यूसर' अर्थात प्रत्येक सेक्रेटरी से सचेत रहो।

सम्भव है आप सोचें कि फिल्मी समाज में सितारों को तो तीसरा दरजा दिया गया है तो ये सबसे ऊंचे कैसे हो गये? यह तो ऐसा ही है जैसे वैश्य अपने आपको ब्राह्मणों से ऊंचा समझने लगें या सचमुच ऊंचे हो जाएं। तो बात यह है कि आजकल के आर्थिक समाज की नींव धर्मशास्त्रों के पढ़ने-पढ़ाने पर नहीं है, रुपये-पैसे पर है जो ब्राह्मणों और क्षत्रियों के पास नहीं है। वह केवल व्यापारियों, सेठों, साहूकारों के पास हैं, जो वर्णाश्रम के अनुसार तीसरे दरजे के वैश्य हैं, लेकिन आजकल ब्राह्मणों क्या, वैश्य बादशाहों, डिक्टेटरों से अधिक शक्तिवान और ताकतवर हैं। इसी प्रकार फिल्मी सितारे भी फिल्मी-समाज के तीसरे वर्ण में होते हुए भी सब से ऊंचे, सब से धनी और सब से शक्तिवान हैं। उनके साथ ही कुछ ऊंचे दरजे के संगीत निर्देशक भी हैं। ये भी सितारों से किसी प्रकार कम नहीं हैं। उनका अंदाज भी शाहाना नहीं तो फिल्मी सितारों की तरह जरूर होता है।

कलाकार होते हुए भी जितनी पूंजी उनके और उन संगीत-निर्देशकों के पास है, उतनी पूंजी शायद किसी पूंजीपति के पास भी न होगी! कहने को ये प्रोड्यूसरों के नौकर होते हैं और डाइरेक्टर के अधीन होते हैं, लेकिन असल में फायनेंसर, प्रोड्यूसर, डाइरेक्टर सब इन के आगे हाथ जोड़े खड़े रहते हैं।

अब फिल्मी-समाज का चौथा वर्ग या वर्ण आता है। इन फिल्मी शूद्रों में सारे लेखक हैं, चाहे वे कहानी लिखते हों या पट-कथा या सम्वाद। सारे निर्देशक हैं, सारे कैमरामैन, साउंड-रिकार्डिस्ट, सब टेकनीशियन, प्रोडक्शन-मैनेजर, असिस्टेंट डाइरेक्टर, आदि—सब शामिल हैं। फिल्मी समाज के कुतुब मीनार में यह सब से निचला दरजा है, लेकिन यह भी कहा जा सकता है कि ये लोग वास्तव में फिल्मी समाज की जड़-नींव हैं।

इनके बिना न कोई फिल्म बन सकती

है, न दिखायी जा सकता है, और न रुपया बन सकता है।

यदि एक कैमरामैन या उसका असिस्टेंट—कैमरे में लेंस लगाने में एक मिलीमीटर की गलती कर दे तो पंद्रह लाख का हीरो टेक्नीकलर फोटोग्राफी के बावजूद आउट ऑव फोकस हो सकता है। यही हाल एक गाने के छह-सात हजार रुपये लेने वाले या लेने वाली का है। यदि साउंड-रिकार्डिस्ट या उसका असिस्टेंट ठीक से उसका गाना रिकार्ड न करें तो उसकी आवाज का सत्यानाश हो सकता है। ये सब से निचले दर्जे के माने जाने वाले लोग फिल्मी दुनिया की जड़-नींव होने के बावजूद भूखों मरते हैं।

शूद्र अन्य जातियों और वर्णों से नीचे समझे जाते हैं लेकिन स्वयं शूद्रों में भी ऊंच-नीच है। इसी प्रकार फिल्मी समाज के शूद्रों में भी सब से निचला वर्ग एक्सट्राओं और स्टूडियो के कुलियों का है। ये लोग फिल्मी दुनिया की रंगीनी, रौनक, दौलत और शोहरत का जलवा सिर्फ दूर से देखते हैं। स्वयं उनकी जिंदगी में न रंगीनी होती है, न खुशहाली और न चहल-पहल। उनके लिए तो हर समय 'नून-तेल-लकड़ी' का मसला खड़ा रहता है।

फिल्मी समाज के ऊपर ग्लैमर (चमक-दमक) का मुलम्मा चढ़ा हुआ है, जिसके कारण प्रत्येक की नजर चकाचौंध हो जाती है। प्रत्येक समझता है कि फिल्मी दुनिया निराली दुनिया है। पर सत्य यह है कि यहां भी ज्यादा लोगों के भाग्य में मेहनत और पसीना ही है। कभी-कभी अपना खून भी बहाना पड़ता है। सच्ची कला और सच्चे कलाकारों की बेकद्री है। हां, कुछ सौभाग्यशाली फिल्मी सितारों के लिए, कुछ संगीत निर्देशकों के लिए, कुछ प्रोड्यूसरों-फायनेंसरों के लिए दुनिया का प्रत्येक ऐश्वर्य है।

मैं प्राय: सोचता हूं कि फिल्मी दुनिया में भी इनकलाब आ गया तो क्या वह नहीं होगा जो बाहर की दुनिया में हुआ है?

कब तक मिट्टी के घड़े कुतुब मीनार के रूप में एक-के-ऊपर एक धरे रहेंगे? एक जलजला, एक भूकम्प, एक आंधी पर्याप्त है और फिर यह वर्गगत मिट्टी के घड़े नीचे गिर कर टूट जाएंगे। ऊंच-नीच दूर न भी हुई तो उसमें बहुत कमी हो जाएगी।

अब नयी ढंग की फिल्में बननी शुरू हो गयी हैं जो रुपये-पैसे का नहीं, कला का, उद्देश्य का, भावना का और विचारों का व्यापार करती हैं। उनमें महंगे फिल्मी सितारों के बजाय अच्छे-कलाकार होते हैं। और अब तो ये फिल्में एक हद तक पसंद भी की जाने लगी हैं। इनकलाब नहीं तो, एक बड़ा परिवर्तन फिल्मी समाज में आ ही गया है, जैसे काफी बड़ा परिवर्तन हमारे समाज में आ गया है। याद रखने की बात केवल इतनी है कि फिल्मी दुनिया भी उसी दुनिया में है। फिल्मी समाज भी हमारे समाज का एक नमूना है। ●

सागर के गहरे नीले जल में हरे-हरे फूलों से तैरते अंदमान-निकोबार द्वीप-समूहों का इतिहास किसी रोमांचक उपन्यास से कम दिलचस्प नहीं है ।

कोई करोड़-डेढ़ करोड़ वर्ष पहले ये द्वीप वर्मा से इंडोनेशिया तक फैली एक पर्वत-शृंखला के छोटे-बड़े शिखर थे । सहसा भूगर्भीय उथल-पुथल हुई और यह पर्वत-शृंखला समुद्र में समा गयी । शेष रह गये जल के ऊपर तैरते-से उनके

● दुर्गाप्रसाद शुक्ल

शिखर ! कालांतर में ये ही शिखर द्वीप वन गये ।

बंगाल की खाड़ी में माला के मनकों की तरह बिखरे ये द्वीप-समूह आज अंदमान-निकोबार द्वीप-समूह के नाम से जाने जाते हैं, पर एक समय था जब इन द्वीपों का कोई सही-सही नाम न था । ६७१ ईसवी में बौद्ध चीनी विद्वान आई चिंग जावा-सुमात्रा की राह होता निकोबार द्वीप-समूह पहुंचा था । उसने अंदमान का 'अंद-बान' के रूप में उल्लेख किया है । उसके अनुसार इन द्वीपों के निवासी नरभक्षी थे। मारकोपोलो की भी यही राय थी। वह १२६० में भारत से चीन जाते हुए इन द्वीपों से गुजरा था । उसने अंदमान का नाम 'अंगमनियन' लिखा है। १३२२ में अंदमान पहुंचने वाले यूरोपीय यात्री फ्रेयर ओडोरिक ने भी इन द्वीपों के निवासियों को नरभक्षी बताया था । १४४० में इन द्वीपों की यात्रा करने वाले एक अन्य यात्री निकोलो कोंटी ने इन द्वीपों का 'सोने के द्वीप' के रूप में प्रचार किया। इस काल में इन द्वीप-समूहों के बारे में संसार को कोई सही जानकारी न मिल सकी । इसका एक कारण यह भी था कि मलाया के समुद्री लुटेरे इन्हीं द्वीपों पर आकर आश्रय लिया करते थे । उन्हें किसी प्रकार का खतरा न रहे, इसलिए वे इन द्वीपों के बारे में तरह-तरह की भयानक खबरें फैलाया करते थे । इन द्वीपों के बारे में एक लोककथा भी प्रचलित है । उसके अनुसार एक बार एक मुनि ने सागरतट पर संध्या करते हुए अपनी टूटी हुई माला के मनके जल में फेंक दिये । बाद में ये ही मनके द्वीपों में परिवर्तित हो गये ।

अठारहवीं शती में इन द्वीपों की उपयोगिता ने अंगरेजों को आकर्षित किया। अंगरेजों के दक्षिण-भारत में पैर जम चुके थे और वे बंगाल की खाड़ी में सफर करते अपने जहाजों के लिए समुद्र के बीच किसी उपयुक्त आश्रय-स्थल की तलाश में थे । सन १७८८ में तत्कालीन भारतीय समुद्री नौसेना के लेफ्टिनेंट आर्चिबाल्ड

ब्लेयर को इन द्वीपों के सर्वेक्षण के लिए नियुक्त किया गया और एक वर्ष के भीतर ही उसने उन द्वीपों को आवास-योग्य बनाने का काम शुरू कर दिया। बाद में उसके नाम पर ही अंदमान के प्रमुख बंदरगाह का नाम पोर्ट ब्लेयर रखा गया।

पोर्ट ब्लेयर में ही खतरनाक राजबंदी और अन्य अपराधी रखे जाते थे। पहले-पहल सन १८५७ की क्रांति के दौरान बंदी बनाये गये देशभक्तों को यहां भेजा गया। इनमें अल्लामा फजली हक, मौलाना लियाकतअली तथा मीर जाफर अली थानेश्वरी के नाम उल्लेखनीय हैं। बाद में अलीपुर षड्यंत्र केस के बंदी भी यहां भेजे गये। सन १९११ में नासिक षड्यंत्र केस के सिलसिले में विनायक दामोदर सावरकर को भी यहां भेजा गया था। सन १९३२ में भी अनेक राजबंदी यहां भेजे गये थे। इसीलिए नेताजी सुभाषचंद्र बोस ने 'आजाद हिंद सरकार' की अस्थायी सरकार की स्थापना होते ही इन द्वीपों का नाम बदलकर 'शहीद' और 'स्वराज्य' द्वीप कर दिया।

अंदमान-निकोबार द्वीप-समूह प्राकृतिक सुषमा एवं सम्पदा से भरपूर हैं। सौ वर्ष पहले यहां का जीवन आदिम अवस्था-जैसा था। यहां बसने वाली जनजातियों का कृषि से कोई परिचय न था और वे आखेट तथा कंदमूल के सहारे जीवन-निर्वाह करते थे। पुरुष पशुओं का शिकार करते और स्त्रियां तथा बच्चे

नुकीले वांसों के सहारे वनों से कंदमूल इकट्ठा करते। समुद्रतटों पर रहने वाली जनजातियां मछलियों और कछुओं का शिकार करतीं। तब उनके नृत्य-संगीत से ये द्वीप गूंजते रहते थे। अंदमान के मूल निवासी नेग्रीटो जाति के थे तथा वे दस जनजातियों में बंटे थे। उनकी अपनी-अपनी बोलियां थीं। वे लोग कांच से अपने शरीर पर आड़ी तिरछी रेखाएं खींचकर उन्हें रंगों से रंगते थे। अंगरेजों ने उन्हें अपनी भाषा सिखाने की कोशिश की, पर वे सफल न हो सके। कई कारणों से आज इन जन-जातियों के लोगों की संख्या बहुत घट गयी है। अब वे रक्षित क्षेत्रों में रहते हैं और कभी-कभी शहरी इलाकों में आते हैं। इनमें ओंगे जन-जाति के लोग अधिक समझदार हैं।

निकोबार द्वीप-समूह में कुल ६२ द्वीप हैं। इनमें से केवल १२ द्वीप बसे हुए हैं। निकोबार द्वीप-समूह के निवासी अंदमानवासियों से कई बातों में अलग हैं। वैसे तो वे काफी पहले ईसाई धर्म स्वीकार कर चुके हैं, किंतु परम्परागत अंधविश्वास अभी भी जड़ जमाये हुए हैं। दक्षिण-भारत के चोल नरेशों के अभिलेखों में निकोबार द्वीप का 'नक्कावरम' द्वीप (यानी नग्न लोगों का द्वीप) के नाम से उल्लेख है। अंगरेजों ने भी पोर्ट ब्लेयर के बाद बंदियों को बसाने के लिए निकोबार को चुना था। यह शायद इसलिए कि निकोबार के निवासी काफी सरल-हृदय थे। अपने सहज स्वभाव के कारण उन्हें शोषण का भी शिकार होना पड़ा। स्वाधीनता के बाद भारत सरकार ने निकोबार द्वीप-समूह को प्रतिबंधित क्षेत्र घोषित कर दिया और अब बिना सरकारी लाइसेंस के कोई बाहरी व्यक्ति वहां व्यापार आदि नहीं कर सकता है।

निकोबारवासियों का जीवन सुव्यवस्थित है। उन्होंने ईसाई धर्म अपना लिया है, किंतु कई मामलों में वे अपनी पुरानी परम्पराएं नहीं छोड़ पाये हैं। खासकर अंत्येष्टि-क्रिया का उनका अपना एक प्राचीन तरीका है। मिस्रवासियों की भांति निकोबार के लोगों का भी मृत्यु के उपरांत जीवन में विश्वास है। इसीलिए किसी मृतक को दफन करते समय वे उसके साथ वस्त्र, आभूषण, खानपान की सामग्री आदि रख देते हैं। सात दिन बाद लाश को निकालकर वे एक-दूसरे स्थान में दफन करते हैं।

निकोबार के अधिकांश ग्राम समुद्रतट के पास ही बसे हैं। ये ग्राम साफ-सुथरे और सुंदर होते हैं।

भारत की स्वाधीनता के बाद इन द्वीपों का योजनाबद्ध विकास किया जा रहा है। यहां पूर्वी बंगाल तथा श्रीलंका से आये लोगों को बसाया गया है। पंजाब के भूतपूर्व सैनिक भी यहां बसाये गये हैं। फलतः ये द्वीप अब 'नन्हे भारत' भी कहे जा सकते हैं। इन द्वीपों की विश्व-प्रसिद्ध हवाई द्वीपों से भी तुलना की जा सकती है। ●

आधुनिक सभ्यता की ओर तेजी से अग्रसर अंदमान-निकोबार द्वीप-समूह में अभी भी आदिम-सभ्यता के अवशेष मौजूद हैं। इन द्वीपों के मूल निवासी अभी भी रहन-सहन के आदिम ढंग को पसंद करते हैं। चित्र में चोम्पेन जनजाति का एक पिता अपने पुत्र के साथ दिखायी दे रहा है।

चिरकुंवारी नदी की कथाः सांधी

कैलाश नारद
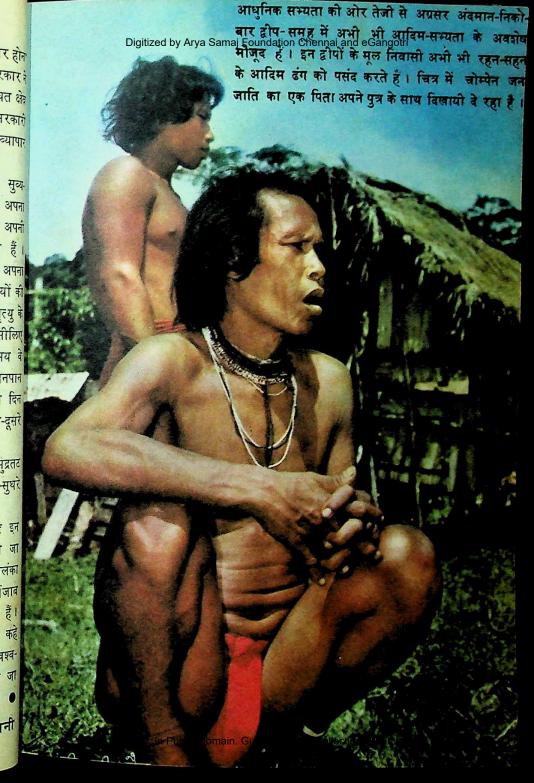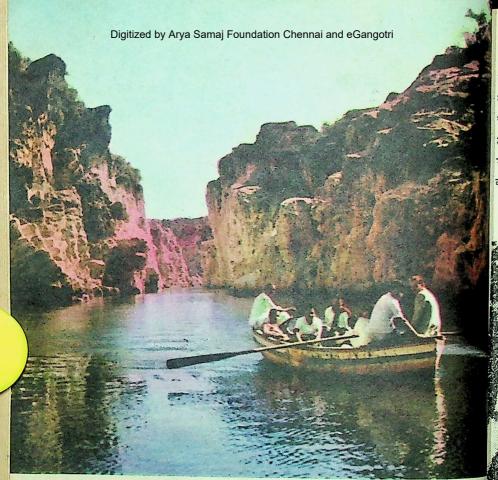
भाई और उनके दोस्त रेस्टहाउस में ही रह गये थे और मैं निरुद्देश्य घूमता हुआ सीढ़ियों की तरफ चला आया था। दोपहर की उस घड़ी में तमाम इलाका अलसाया, ऊंघता-सा जान पड़ता था। धूप मिट चली थी और उसके मिटने का पीलापन पत्थरों पर उतर आया था।

वे मेरे पीछे थे—एक बूढ़ा और एक बालक। लड़के के हाथ में रंग-बिरंगा रूमाल और फुंदने थे, सिर पर गोल टोपी थी और दूसरे हाथ में किसी वृक्ष की टहनी, जिससे वह सीढ़ियों को ठकठका रहा था। बूढा अपने हाथ में एक पोटली लिये था।

चारों ओर दूर-दूर तक फैली हुई भूरी, सफेद मरमरी चट्टानों के बीच अनाम

अनजान झाड़ियां थीं। जंगल की गहरी खामोशी थी और पत्थरों की धूमिल छाया, जो मिटती धूप में कभी-कभी उघड़ आती थी—और उनके बीच बजती एक रस-सी खनखनाहट, जो पथरीले हाशियों को तोड़ती करीब बह आती थी।

उनके पीछे-पीछे चलता हुआ मैं भी शीशे-जैसी नजर आयी थी लेकिन हवा और धूप ने उसका चेहरा ही बदल दिया था—पत्थरों के बीच उसकी लहरें डूबती धूप में झिलमिला रही थीं।

बूढ़ा ढलान पर उतरा और हाथ की पोटली खोलकर उसने कुछ फूल नदी में छोड़ दिये। लड़के ने अपने हाथ का रंगीन

झुरमुटों से झांकती नदी का फेनिल आलोक

सीढ़ियां उतर आया। वह जो आवाज हवा में फरफराती-सी बुझती-गिरती महसूस हो रही थी, बहते पानी के भीषण शोर में बदल गयी। सामने नदी थी। ऊपर, रेस्ट हाउस से देखने पर वह पिघले हुए

रूमाल खोलकर नारियल के टुकड़ निकाले और उन्हें बहा दिया। बूढ़ा अस्फुट स्वर में कुछ बुदबुदा रहा था। उसकी आंखें बंद थीं, सिर्फ होंठ भर हिलते थे। छोटा लड़का फूलों को बहते देखता रहा

फिर उसने पूछा, "तुम पूजा नहीं करोगे कुंवारी कन्या की? नर्मदा मैया कुंवारी हैं... तुम भी हाथ जोड़कर खड़े हो जाओ..."

मुझे आश्चर्य हुआ। सब कुछ वैसा ही था, जैसा दूसरी नदियों में होता है, लहरें, लहरों में डूबी चट्टानें और पानी को छूते हुए किनारे . . . फिर नर्मदा कुंवारी क्यों है?

लेकिन ये सब बहुत बाद में जाना—तकरीबन दस-पंद्रह बरस बाद।

"झुरमुटों के बीच, पहाड़ों की तलहटी के नीचे कहीं अचानक एक पतली-सी जलरेखा फूट निकली थी और वहीं आगे चलकर शोणभद्र के रूप में बदल गयी थी। वहीं मेकल पर्वत से निकली थी नर्मदा। नर्मदा का विवाह शोणभद्र से तय हो गया था। विवाह के पहले वर के सम्बंध में जानकारी प्राप्त करने के लिए नर्मदा ने अपनी नाइन जेहुला को शोणभद्र के पास भेजा। कुटिल जेहुला गयी तो थी अपनी स्वामिनी के लिए वर का विवरण प्राप्त करने किंतु शोणभद्र के पास पहुंचकर जेहुला ने स्वयं उस पर डोरे डाल दिये। दासी के विश्वासघात तथा मंगेतर की चंचलवृत्ति से व्यथित नर्मदा ने आजीवन अनब्याही रहने का व्रत लेकर उन दोनों से मुंह मोड़ लिया और दूसरी दिशा की राह पकड़ी..." (रैम्बल्स ऐण्ड रिकलैक्शन्स ऑव एन इंडियन आफिशियल: भाग एक: विलियम स्लीमैन)।

मुद्दतों पहले, प्रेमी की कुटिलता जवाब अपनी विरक्ति से देनेवाली शोणभद्र से जो एक बार अलग हुई तो दोबारा कभी नहीं मिली। अमर के मेकलपर्वत से निकलकर नर्मदा धारा दूर तक जेहुला नाले के साथ बहती है। जहां से सोन का उद्गम लगता है, वहीं नर्मदा पश्चिम की मुड़ जाती है। जेहुला उत्तर की आगे बढ़कर सोन से जा मिलती

अपमानित और खंडित पिपासा आकुल - व्याकुल नर्मदा का फु हुआ रूप सौ मील तक निरंतर है—वय:संधि के पूर्व की किशोरी चंचल, स्वच्छंद और अल्हड़ ला जो एक स्वर की अविरलता को फासलों के बाद जबलपुर में त्याग जबलपुर की नर्मदा का चेहरा प्रारम्भिक छवि से भिन्न है।

नदी का व्यक्तित्व यदि ना मानिंद होता है तो नर्मदा सच्चे उस वैशिष्ट्य की हर परिधि को है। उसकी हर भंगिमा, उसकी कथा का हर पहलू, महाकोशल की के साथ अविच्छिन्न रूप से जुड़ ग

कर्नल यूल, रायबहादुर डॉ. लाल, सिल्वा लेवी, आर. जी. भण्ड प्रयागदत्त शुक्ल, स्लीमैन, राख वंद्योपाध्याय, वासुदेवशरण अग्रवाल सबने तो नर्मदा की आत्मा को पुरा

उपकथाओं में तलाशने की कोशिश की थी किंतु वे उसे खोज नहीं पाये। आज भी पिपासा के अंधे अंतरिक्षों में नर्मदा व्याकुल-सी घूमती 'मारबल रॉक्स' की चट्टानों पर सिर पटकती है।

नर्मदा की इस व्यथा का कोई साक्षी नहीं है। सिर्फ पृथ्वी के आरम्भिक दिनों के निर्माण की शिलाएं हैं या वे पाषाण-खंड जो 'लम्हैटारॉक्स' और 'गोंडवाना रॉक्स' के रूप में अभिहित हो चुके हैं। सिर्फ वे नहीं, गुलाबी, नीलाभ, पीताभ, फीरोजी, स्लेटी और नारंगी रंगों में परत-दर-परत बिखरा हुआ संगमरमर भी है, जो नदी के किनारे-किनारे दुर्ग-प्राचीर-सा मीलों चला गया है दोनों तरफ। दर्शन मात्र से मुक्त हो जाने की आकांक्षा संजोये नर्मदा के इन्हीं वीहड़ किनारों पर महा-भारतकाल में युधिष्टिर आये थे, कृष्ण के हाथों निर्वाण प्राप्त करने के पूर्व शिशु-पाल आये थे, त्रिपुरासुर और अंधकारा-सुर आये थे। ऊपरी तौर पर, नर्मदा की शांत धारा को देखने पर लगता है, इन वीरान किनारों में, इन सन्नाटों में अब कुछ भी शेष नहीं रह गया है लेकिन फिर भी कुछ है जो निरंतर जीता है, किंतु आंखें जिसे देख नहीं पातीं।

कितना कुछ देखा है नर्मदा ने। बोधिवंश के महाप्रतापी नरेश शिवबोधि और चंद्रबोधि भी इसी रेवातट पर हुए। उनके बाद विशाल भूखंड और नदियां-पहाड़ लांघते हुए आये गुप्त राजाओं के सामंत कच्छपराज, जिन्होंने नर्मदा घाटी को अपनी भोग्या बनाने का स्वप्न संजोया था। फिर आया हैहयवंश जिसके आदि-पुरुष कार्तवीर्य सहस्रार्जुन ने रावण को पराजित कर अपनी भुजाओं में बांध लिया था। ईसा की आरम्भिक शताब्दियों में ही इसी नर्मदा के तट पर कुषाणकालीन मंदिर बने और फिर आये कलचुरि, जिन्होंने सम्पूर्ण संगमरमरी तट को योगि-नियों का सिद्धपीठ बना डाला। कलचु-रियों के राजकवि और प्रख्यात वैया-करण राजशेखर ने नर्मदा की स्तुति करते हुए लिखा था :

यन्मेखला भवति मेकलशैलकन्या
वीतेन्धनो वसति यत्र च चित्रभानुः।
तामेष पाति कृतवीर्ययशोवतंसा
माहिष्मती कलचुरेः कुलराजधानीम्।।

इसी नर्मदा ने गोंडवाना की राज-महिषी दुर्गावती को भी देखा, जो महान मुगल अकबर का दर्प चूर्ण करने के लिए केवल तीन सौ सैनिकों के साथ बीस हजार मुगल सैनिकों से जूझ गयी। अपने हाथों ही सीने में कटार मार शहीद हो गयी।

नर्मदा पर बने और उत्तर भारत को दक्षिण भारत से जोड़ते हुए तिलवारा-घाट के पुल के सामने छोटी-सी पहाड़ी पर स्थित ध्वजस्तम्भ आज भी है, जहां सन १९३९ में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के ५२ वें अधिवेशन में कांग्रेस के भीतर पल रही नरम और गरम विचारधाराओं का गम्भीर संघर्ष हुआ था और सुभाषचंद्र

बोस महात्मा गांधी द्वारा मनोनीत प्रत्याशी पट्टाभि सीतारमय्या को पराजित कर अधिवेशन के अध्यक्ष चुने गये थे। क्षुब्ध और खिन्न महात्मा गांधी ने कांग्रेस अधिवेशनों के इतिहास में पहली बार, त्रिपुरी के उस इतिहास-प्रसिद्ध अधिवेशन का बहिष्कारकर सुदूर गुजरात में अनशन की घोषणा कर दी थी। अविचलित सुभाष बोस १०३ डिगरी बुखार में तपते-फुंकते अधिवेशन की अध्यक्षता करने आये थे, जहां उन्होंने अपनी पृथक विचार-धारा की—गांधीवाद से अलग रक्त और संघर्ष के मार्ग की—घोषणा की थी।

यहीं होती थीं सतियां। सिंदूर लगाये, नववधू का-सा सिंगार साजे मृतपति के शव के साथ वे बाजे-गाजे के साथ आतीं और सुहागिन बन पति के साथ चिता में आग लगाकर जल मरतीं।

"उम्मेदसिंह उपाध्याय की अरथी के जुलूस में उसकी विधवा भी थी। फूलमा[illegible] पहने नये कपड़ों में ढंकी उसके साथ [illegible] सम्बंधी गीत गाती हुई गांव की महिला[illegible] सबसे पीछे गांव का पुरुष-समाज था।

"नर्मदा के किनारे बड़ी-सी [illegible] बनायी गयी थी जिसमें उम्मेदसिंह [illegible]ध्याय के शव को लेकर उसकी वि[illegible] को जीवित आत्मदाह करना था। [illegible] उसे रोकना चाहा, लेकिन उसने दृ[illegible]पूर्वक कहा—आप मुझे सती होने से [illegible] नहीं सकते . . .

"मैंने उसे रोकना चाहा। पुलि[illegible] भय भी दिखाया, लेकिन विधवा [illegible] रही। एक दिन बीता, दूसरा दि[illegible] लेकिन अपने अडिग इरादों पर [illegible] विधवा टस से मस नहीं हुई। अंततः [illegible] दिन सती होने की अनुमति देनी पड़ी।"

(जबलपुर जिले में सती : कर्नल स्ली

अपने नौ सौ मील के सफर में,

नर्मदा के सोपस्टोन से मूर्ति का निर्माण

गम स्थल मेकल पर्वत से भड़ौंच स्थित खम्भात की खाड़ी तक, जहां वह गिरती है, नर्मदा जबलपुर में सबसे ज्यादा खूबसूरत है। यहीं उसकी उद्दामता को विराम मिलता है और यहीं पर हैं वे प्रख्यात संगरमरमरी चट्टानें जो मीलों तक नर्मदा के दोनों ओर चली गयी हैं। सम्पूर्ण विश्व में कहीं पर भी कोई नदी संगमरमर के पहाड़ों के बीच नहीं बहती, सिर्फ नर्मदा अपवाद है। यहीं, जहां बंदरकूदनी है, नर्मदा संगमरमर की शिलाओं में नाना प्रकार की आकृतियां तराशती है। इनमें इंद्र का ऐरावत है, उच्चैःश्रवा अश्व है, मानवमुख हैं और हाथियों के मस्तक हैं। यहां नर्मदा अपने सम्पूर्ण प्रवाह में सर्वाधिक गहरी है—लगभग एक हजार फुट।

कहा जाता है कि नर्मदा के दर्शन मात्र से ही मुक्ति मिल जाती है।

जितने मंदिर नर्मदा के किनारे अवस्थित हैं, उतने किसी अन्य नदी के तट पर नहीं। जबलपुर और उसके आसपास का नर्मदा तट ऐसे ही मंदिरों से भरा हुआ है। इन्हीं मंदिरों से संलग्न नर्मदा तट के मेले हैं, ग्वारीघाट, तिलवाराघाट और भेड़ाघाट के मेले। तिलसंक्रांति हो या मकरसंक्रांति अथवा कार्तिक पूर्णिमा—शहर से मीलों दूर बहती नर्मदा का अकेलापन उन लमहों, लहरों के संग उठते-गिरते शोर में सिकुड़ जाता है। तब खामोश और निर्जन धूसर शिलाओं का तीखापन भी उफनती हुई गहमागहमी में पिघलता सा महसूस होता है। दूर-दराज देहातों के लोग, ठट्ठ के ठट्ठ, पैदल या बैलगाड़ियों पर, 'नर्मदा मैया की जय' बोलते या बम्बुलियां गाते हुए मीलों फैले रेतीले विस्तार पर बिखर जाते हैं। रात जब आती है—नर्मदा के सुनसान किनारों पर भरनेवाले मेलों की रात—तब अंधेरे मैदान में, दूर-दूर तक नदी के किनारे की झिलमिल-झिलमिल रोशनियों को देखकर लगता है, मानों ढेर से सितारे आकाश से उतरकर पानी पर तैर रहे हों। तब चमकीले उजियाले की रेखाएं कुंवारी नदी के ऊपर–उसके आरपार—खिंच आती हैं।

चिरकुंवारी नर्मदा का एक चेहरा वह भी है, जिसे वह चांदनी रात में खोलती है। शरद पूनों की अपरूप ज्योत्सना जब इस अक्षतयौवना नदी पर उतरती है, तब जैसे लहरों पर चांदनी पिसे हुए कांच-जैसी बिखर जाती है। तब सरिता और गगन एकाकार हो जाते हैं।

सूनी नदी के दोनों तरफ पत्थरों पर धूल उड़ती है . . . चांद से झरता हुआ आलोक संगमरमर पर थरथरा जाता है। रोशनी के धब्बे पाषाणी हाशियों पर उभरते हैं . . . उभरते हैं और टिमटिमाने लगते हैं . . . अंधियारे के परे आलोक के अनंत फूल।

एक कुंवारी नदी . . . नर्मदा नदी . . . और उसके इर्द-गिर्द बिखरी उसकी हजारों-हजार वांछाएं।

—हुकुमचंद नारद रोड, जबलपुर

कन्नड़ कहानी

● गोविंदमूर्ति देसा

विठु दफ्तर की सीढ़ियों पर झाड़ू दे रहा था। मटमैली धोती, वैसा ही फटा कुरता, नंगे पैर, सिर पर एक गांधी टोपी। तब गांधी टोपी पहनना एक अपराध समझा जाता था। ऐसे समय एक गोरे साहब के घर झाड़ू देने वाला गांधी टोपी पहनता था मगर साहब ने कभी कोई एतराज नहीं किया। एक विठु ही क्या, उसके दादा, परदादा तक रेजीडेंट के बंगले पर यही काम करते थे। बंगला तक पहचानता था कि विठु की देह में कैसा खून दौड़ता है। विठु के लिए रेजीडेंट साहब ही सर्वस्व थे। रेजीडेंट साहब भी खूब जानते थे कि विठु बेईमान नहीं हो सकता।

विठु का एक निश्चित जीवन-च
था। वह वर्ष में केवल एक छुट्टी लेत
प्रतिवर्ष वह कार्तिक एकादशी को छु
लेकर पंढरपुर जाया करता था। इ
अलावा वह कोई छुट्टी नहीं लेता था।

उस दिन विठु पैड़ियों पर झाड़ू ल
रहा था कि साहब की पदचाप सुनते
झाड़ू एक तरफ फेंक, 'राम-राम' क
सिर झुकाकर खड़ा हो गया।

साहब ने विठु की तरफ देखा। कु
हंसते हुए रहम से बोले, "विठु, तुम्ह
कुरता फटा है न ?"

"जी हां, सरकार !" विठु की वा
में विनय थी। कुरते के साथ उसकी टो

भी फटी हुई थी।

"तुम एक दूसरा कुरता खरीद लो। बंगले की शान-शौकत में तुम्हारे कपड़ों से आंच नहीं आनी चाहिए," यह कहते हुए वे भीतर चले गये। उनकी वाणी में अधिकार था, अनादर नहीं।

विठु ने सिर हिला कर हामी भरी, मगर उसके लिए नया कुरता मामूली बात नहीं थी। एक कुरते और एक धोती के लिए साढ़े तीन रुपये चाहिए। ठीक आधे महीने का वेतन, बाप रे बाप! उसके घर की परम्परा के अनुसार सिर्फ कुरता नहीं खरीदा जाता था, धोती भी खरीदनी होती थी। उसके घर में पंढरपुर जाते समय नया कुरता, नयी धोती खरीदने की परम्परा पीढ़ी-दर-पीढ़ी से चली आयी थी। शायद पंढरीनाथ का दिया दारिद्र्य पंढरीनाथ को दिखाकर वे उनको लज्जित नहीं करना चाहते थे। इसीलिए तब नया कपड़ा खरीदा जाता था। मगर अब पंढरपुर की यात्रा के पूर्व धोती-कुरते के लिए पैसों का इंतजाम टेढ़ी समस्या थी। घर में उसका अठारह साल का बेटा हरि बेकार था। साथ ही उससे डेढ़ साल छोटी लड़की तुलसी भी विवाह-योग्य थी। ऐसे में नया कुरता कहां से आता? विठु के पास कुल तीन कुरते थे। उनमें से एक कुरता हरि पहनता था। तीन साल से तुलसी के लिए एक भी नयी साड़ी नहीं आयी थी। पर हरि और तुलसी को कपड़ों या गहनों की जरूरत नहीं थी, उनमें मां रकुमा का सहज सौंदर्य झलकता था।

जब भी रकुमा कहती थी कि मेरे बच्चे तो खालिस सोना हैं, उन्हें गहनों की कोई जरूरत नहीं तो विठु मन ही मन गर्व महसूस करता। एक बार विठु के साथ साहब ने हरि को देखा तो उन्हें विश्वास नहीं हुआ कि वह विठु का बेटा है। उन्होंने उसकी प्रशंसा की। विठु ने यह भी समझ लिया कि हरि को अवश्य नौकरी मिलेगी। विठु कहता तो रेजीडेंट साहब हरि को नौकरी अवश्य दे देते, मगर वह उनके सामने मुंह खोलने की हिम्मत नहीं कर पाता था, अपनी तकलीफों का दुखड़ा

लेखक

रोने में उसे संकोच होता था।

उस रोज दोपहर को साहब खाना खाकर जा चुके तो मेमसाहिबा ने विठु को बुलाकर कहा, "विठु, साहब ने तुम्हें नया कुरता सिलवाने के लिए चार रुपये दिये हैं।" और उन्होंने उसे रुपये थमा दिये। विठु ने बड़ी कृतज्ञता से स्वीकारकर उन्हें धोती के एक छोर में बांध लिया। उसे ऐसा लगा जैसे पंढरपुर के विठ्ठल ने ही साहब के रूप में आकर उसे पैसे दिये हों। पर विठु कुरता न बनवा सका। वह बीमार पड़ गया। जीवन में पहली बार वह विस्तर पर पड़ा था। 'साहब की सेवा-टहल में बाधा न पड़े, यह सोचकर वह अपने बेटे हरि को बंगले पर भेजने लगा। पहले तो मेमसाहिबा को अचरज हुआ, पर जब उन्हें विठु की बीमारी का हाल मालूम हुआ तो उन्होंने हरि को बंगले का काम बता दिया। हरि टूटी-फूटी अंगरेजी जानता था। वह अपने पिता से बढ़कर फुर्ती से काम करता था। मेमसाहिबा को भी हरि का काम पसंद आया। कुछ ही दिनों में वह रेजीडेंट साहब का विश्वास-पात्र बन गया।

हरि की स्वच्छता और कार्य-कुशलता से मेमसाहिबा भी काफी प्रभावित थीं। एक दिन उन्होंने साहब से कह[illegible] "हरि अब भीतर के कामों के लिए ही रहे[illegible] हरि अपने पिता के फटे किंतु साफ कप[illegible] में बड़ा सुंदर दिखता था। मेमसाहि[illegible] की एक बहन मार्गरेट, जो अपनी बहन [illegible] पास कुछ दिन बिताने सोनेपुर आयी [illegible] अकसर मजाक में कहा करती थी, "दी[illegible] तुमने इस नौकर को कहीं इग्लैंड से [illegible] 'इंपोर्ट' नहीं किया?" मार्गरेट, बह[illegible] बहनोई के साथ गरमी के दिन बित[illegible] के बहाने से रियासत के किसी बड़े अफ[illegible] या गोरे नौजवान का शिकार करने दि[illegible] से आयी थी। हरि को देखते ही न ज[illegible] क्यों उसके मन में तरह-तरह के भ[illegible] उमड़ पड़ते थे! एक दिन उसने अप[illegible] बहन से कहा, "दीदी, मेरी सेवा के लि[illegible] इस हरि को छोड़ दो! देखने में वह 'स्मा[illegible] लगता है।"

बंगले पर अब हरि मार्गरेट [illegible] सेवा-टहल में लगा रहता। मार्गरेट [illegible] शाम घोड़े पर सवार होकर नदी कि[illegible] टहलने जाया करती थी। हरि घोड़े [illegible] लगाम पकड़े रहता। एक वार मार्ग[illegible] घोड़े से गिर गयी तो हरि ने उसे [illegible] की तरह अपनी बाहुओं में उठा लिया [illegible] नीचे उतारा। नीचे उतरकर भी मार्ग[illegible] उसकी पीठ से चिपटी रही। उसने [illegible] का हाथ हिलाकर कृतज्ञता प्रकट की [illegible] हरि एक अव्यक्त आनंद से भर उठा[illegible]

इस घटना के बाद मार्गरेट बार[illegible] हरि को याद करने लगी। इससे हरि [illegible]

काम का अधिक बोझ पड़ गया । हरि को इसका अच्छा फल भी मिला। मार्गरेट की सिफारिश पर रेजीडेंट साहब ने उसका वेतन पंद्रह रुपये कर दिया। जब हरि अपनी पहली वेतन-राशि लेकर घर पहुंचा तो उसके हर्ष का ठिकाना न रहा।

इसी बीच एक दिन रेजीडेंट साहब किसी कामकाज के सिलसिले में दिल्ली

में जुट गया । मार्गरेट ने कहा, "ओ हरि, नया कुरता ! इधर तो आओ !" हरि भोले भाव से मार्गरेट के सामने खड़ा हो गया । "यह कुरता तो तुझ पर बहुत खिल रहा है !" कहते-कहते मार्गरेट के हाथ हरि के कुरते पर चले गये । सहसा वह स्वयं को न रोक सकी और बड़े भावावेश में हरि का आलिंगन करने लगी। हरि घबरा उठा।

गये । बंगले में नीचे मेमसाहिबा अकेली थीं । मार्गरेट ऊपर अपने कमरे में कोई उपन्यास पढ़ रही थी । हरि रोज की तरह झाड़ू लेकर ऊपर आया । उस रोज हरि के बदन पर नया कुरता था। मार्गरेट उपन्यास पढ़ना छोड़कर हरि को ही देखती रही। हरि उधर ध्यान दिये बिना अपने काम

वह भर्राये स्वर में बोला, "साहिबा, साहिबा—यह क्या ?" पर मार्गरेट जैसे सुध-बुध खो बैठी थी। इसी समय हरि की आवाज सुनकर मेमसाहिबा ऊपर आ गयीं । अपनी बड़ी बहन को देखकर मार्गरेट हरि को छोड़ पलंग पर सो गयी।

उधर हरि के पैर थर-थर कांप रहे

थे। वह अपराधी की भांति मेमसाहिबा के सामने चुपचाप खड़ा था। मेमसाहिबा ने सारा मामला समझ लिया और हरि को नीचे जाने को कहा। मार्गरेट लज्जा से मुंह नीचे किये पड़ी थी। ऐसे समय छोटी बहन को डांटने में विशेष प्रयोजन न जानकर उन्होंने सांत्वना के स्वर में कहा, "जो हुआ सो हुआ, उसे भूल जा।" इतना कहकर वे नीचे आयीं। नीचे हरि कांपता खड़ा था। वह इस डर से आंसू बहा रहा था कि अब उसे फांसी की सजा हो जाएगी। पर मेमसाहिबा ने बड़े कोमल स्वर में उससे कहा, "हरि, आज जो हुआ उसके बारे में कहीं किसी के सामने मुंह मत खोलना। ये पांच रुपये ले ले। मैं जब तक न कहूं, तब तक काम पर मत आना। कल सवेरे तू अपने बाप को भेजना। मुझे कुछ कहना है।" हरि समझ गया कि अब उसके लिए बंगले के दरवाजे सदा के लिए बंद हो गये।

उस रोज वह घर नहीं गया। माता-पिता ने उसकी खूब राह देखी। कभी-कभी उसे लौटने में देरी हो जाया करती थी। कभी-कभी वह वहीं सो जाया करता था। अतः विठु को विशेष चिंता नहीं हुई, पर जब दूसरे दिन भी हरि नहीं लौटा तो विठु बंगले की तरफ चल पड़ा।

बंगले के बरामदे में साहब मेमसाहिबा के साथ बैठे थे। साहब दिल्ली से अभी-अभी लौटे थे। "राम-राम" कहकर विठु खड़ा हो गया। मेमसाहिबा ने कुशल-क्षेम पूछकर उसे अच्छी दवा लेने की राय दी। उचित समय जानकर विठु ने विनती की, "सरकार, अब मेरी उम्र ढल रही है। मुझे पेंशन दिलवाकर हरि को ही बंगले की नौकरी दे दें।"

"हरि! नो...नो..." रेजीडेंट साहब के मुंह से निकला।

"सरकार, आप चाहें तो सब कुछ हो सकता है।" अपने मालिक के आगे विठु ने इतना भी कहने की हिम्मत कभी नहीं की थी। उसकी आंखों में आंसू भी थे। मेमसाहिबा द्रवित हो उठीं। वे बोलीं, "अच्छा—विठु, पंद्रह दिन बाद देखेंगे।"

विठु बंगले से बाहर आ रहा था, तभी बटलर मिर्जा अब्दुल कासिम ने उसे देख लिया। उसने उसे बताया कि हरि कल दोपहर से काम पर नहीं आया है। यह सुनते ही विठु पर गाज-सी गिर पड़ी। वह सोचने लगा, आखिर हरि कहां गया? कहीं उसने आत्महत्या तो नहीं कर ली? इसी सोच-विचार में डूबा वह भारी कदमों से घर पहुंचा। उससे सारा किस्सा सुनकर घर में शोक छा गया।

इसी बीच बंगले से हरि का बुलावा आया। विठू किंकर्त्तव्यविमूढ़ बन गया था। आंसू पोंछता-पोंछता वह बंगले पहुंचा। हरि के लापता होने की खबर पाकर मेम-साहिबा को बड़ी व्यथा हुई। उन्हें लगा, जैसे उन्होंने ही उसकी हत्या करवायी। विठु को काफी दुःख था। दुःखित स्वरों में उसने कहा, "मांजी, हरि ने बड़ा अन्याय

किया। ऐसा नालायक बेटा जन्म न लेता तो अच्छा था। उसने मेरे मुंह पर कालिख पोत दी।" इतना कहकर वह रोने लगा। यह देखकर मेमसाहिबा का कलेजा भर आया। वे बोलीं, "नहीं, नहीं, उसने कोई गलत काम नहीं किया। किसी ने तुमसे झूठ कहा। हरि तो सोना है सोना। अगर वह कुछ करता तो मैं उसे क्यों बुलाती? वह जब भी आये, मैं उसे अंदर-वाला काम ही दूंगी। तुम्हारी पेंशन की सिफारिश साहब कर देंगे।" यह कहकर मेमसाहिबा ने उसे पंद्रह रुपये दिये, पर विठु रुपये लेने के लिए तैयार नहीं हुआ। जब साहब-साहिबा दोनों ने जोर दिया तब उसने बड़े बेमन से रुपये लिये। साहब ने कहा, "हरि की कोई गलती नहीं है। उसे जल्दी ढूंढ़कर ले आओ।" यह सुनकर विठु को कुछ तसल्ली हुई।

जब विठु घर पहुंचा तो उसे मालूम हुआ कि पंढरपुर से उसके साले शिवाजी का तार आया है। तार में लिखा था कि 'हरि पंढरपुर आया है, फौरन आओ।' विठु, रकुमा, तुलसी तीनों अविलम्ब पंढरपुर रवाना हुए। पंढरपुर पहुंचने पर उन्हें हरि के माथे पर पट्टियां बंधी दिखीं। शिवाजी ने उन्हें बताया कि हरि ने पंढरीनाथ के आगे सिर पटक-पटक कर स्वयं को घायल कर लिया। पुजारी न देखते तो गजब हो जाता। उसने नाखूनों से अपना मुंह भी नोच लिया था। यह सब देखकर पुजारियों ने ही उसे अस्पताल पहुंचाया। कुछ ही दिनों में वह पूरी तरह ठीक हो जाएगा। मगर चोट के दागों से मुंह भद्दा हो जाने का डर है। यह सुनकर रकुमा रोने लगी। विठु भी रो उठा।

दो चार दिनों के बाद विठु ने हरि से पूछा, "तुमने ऐसा क्यों किया? मुझसे क्यों नहीं कहा?" हरि ने कहा 'पिताजी, आप जानते हैं कि मैं निरपराधी हूं, मगर दुनिया नहीं मानेगी। मेरे रूप और इस इस नये कुरते ने ही यह सब करवाया। अगर यह रूप नहीं होता तो यह सब नहीं होता। इसलिए पंढरीनाथ का दिया रूप मैंने उसी के चरणों पर चढ़ा दिया। अब कोई इस रूप पर मोहित नहीं होगा!"

कुछ दिन बाद जब हरि ठीक हो गया तो वे सब सोनेपुर आये। जब वह पिता के साथ बंगले पहुंचा तो मेमसाहिबा उसे पहचान ही नहीं पायीं। इतने में साहब भी आ गये। उन्होंने बताया कि हरि को अंदर वाला काम दे दिया गया है। उन्होंने विठु की पेंशन के लिए भी लिखा है। यह सब जानकर विठु को बेहद खुशी हुई। मगर हरि ने साहब से प्रार्थना की कि इसे बाहर वाला काम ही मिले तो अच्छा है। मेमसाहिबा के लाख कहने पर भी हरि अंदर वाले काम के लिए राजी न हुआ। हरि की इच्छा देखकर विठु ने भी ज्यादा जोर न दिया। आखिर हरि झाड़ू लगाने के काम पर ही नियुक्त हुआ। कहते हैं, हरि ने फिर कभी नया कुरता नहीं पहना।

—अनु. ए. एच. हुंडेकार

नोबल पुरस्कार विजेता महिलाएं

● आशारानी व्हो

नोबल पुरस्कार!

विश्व का सर्वोच्च प्रतिष्ठा पुरस्कार जो व्यक्तित्व या नेतृत्व पर नहीं, केवल कृतित्व पर प्रदान किया जाता है। जिज्ञासा स्वाभाविक है कि आज तक यह पुरस्कार संसार की किन-किन महिलाओं को, उनके किस कृतित्व पर मिला?

पहला नोबल पुरस्कार १९०१ में दिया गया था और प्रथम बार किसी महिला को १९०३ में। तब से आज तक विश्व भर में कुल १४ महिलाओं को यह सौभाग्य प्राप्त हो सका है—विज्ञान में पांच, विश्वशांति में तीन तथा साहित्य में छ:।

प्रथम पुरस्कार (१९०३) की विजेता थीं, पोलैण्ड की सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक मैडम मेरी क्यूरी, जिन्हें आज सारा संसार 'रेडियम महिला' के नाम से जानता है। मैडम क्यूरी नोबल पुरस्कार प्राप्त करने वाली विश्व की प्रथम नारी ही नहीं, एक-मात्र ऐसी महिला भी हैं, जिन्हें अपने जीवन में दो बार नोबल पुरस्कार से सम्मानित किया गया। प्रथम बार भौतिकी में अपने पति श्री पियरे क्यूरी तथा एक अन्य भागी-दार श्री हेनरी बैकरेल के साथ और दूसरी वार १९११ में रसायन में अकेले। प्र बार पुरस्कार ग्रहण करते समय उनकी ३५ वर्ष थी—और द्वितीय वार ४३ व इस दृष्टि से सबसे कम आयु में पुर होने वाली महिला भी वही हैं।

मैडम क्यूरी की संसार को देन पोलोनियम, रेडियम और रेडियो विकिरणों का ज्ञान।

'विश्व-शांति' में प्रथम बार पुरस्क प्राप्त करने वाली महिला थीं, श्रीमती ब वान सट्नर। बर्था वान सट्नर एक आ यन उपन्यासकार थीं, पर उपन्यासकार अधिक वे महान शांतिवादी के रू विख्यात हुईं। उन्हें १९०५ में यह पु स्कार दिया गया था।

कहते हैं, नाइट्रोग्लैसरीन और डा नामाइट—जैसे विस्फोटकों के आविष्कार अल्फ्रेड नोबल को विश्व-शांति की ओ मोड़ने और शांति के लिए पुरस्क निर्धारित करने की प्रेरणा देने वा बर्था वान सट्नर ही थीं। नोबल उ शांति-प्रयत्नों का बराबर अध्ययन क रहे थे। वे उनके प्रसिद्ध उपन्यास 'ले डा आर्म्स' से भी बेहद प्रभावित हुए

स उपन्यास की प्रशंसा करते हुए उन्होंने र्था वान सट्नर को लिखा था, 'चाहता , किसी ऐसे विस्फोटक का निर्माण करूं या कोई ऐसी मशीन बनाऊं कि आमने-सामने युद्धार्थ खड़ी सेनाएं एक सेकंड में एक-दूसरे का सर्वनाश कर दें। तभी सभ्य कहाने वाली जातियों की आंखें खुलेंगी और वे युद्ध करना छोड़ देंगी।' इसके कुछ दिन बाद ही उन्होंने बर्था वान सट्नर को लिखा, "मैं अपनी सम्पत्ति का एक भाग एक पुरस्कार के लिए रख देना

बायें से : सेलमा लागर लोफ, मेरी क्यूरी, गेब्रीला, बर्था वान सटनर, जेन एडम्स, ग्रेजिया डेलेडा

चाहता हूं। प्रति पांचवें वर्ष यह पुरस्कार उस व्यक्ति को दिया जाए, जो संसार से युद्ध का समूल विनाश करने के लिए महत्त्वपूर्ण काम करे या इसके पक्ष में जोरदार आवाज उठाये। तीस वर्षों में कुल छः बार यह दिया जाए। यदि इतनी लम्बी अवधि के बाद भी राष्ट्र अपना रवैया न बदलेंगे तो वे बर्बरता की सीमा पर पहुंच जाएंगे। तब पुरस्कार को जारी रखने का कोई अर्थ न रह जाएगा।"

विश्व-शांति के लिए दिया जाने वाला पहला पुरस्कार बर्था वान सट्नर को उनके इसी उपन्यास पर प्रदान किया गया किंतु उनके लेखिका रूप को नहीं, शांति के लिए उठायी गयी उनकी जोरदार आवाज को। पुरस्कार प्राप्त करत समय उनकी आयु ६२ वर्ष की थी।

१९०९ में साहित्य में प्रथम बार पुरस्कार प्राप्त करने वाली स्वीडिश लेखिका थीं, सेलमा लागरलोफ। वे साढ़े तीन वर्ष की आयु में ही लकवे का शिकार हो हमेशा के लिए लंगड़ी हो गयी थीं। सेलमा ने अपनी हीनभावना को निष्कासन की राह दी थी साहित्य के पठन-पाठन और लेखन के माध्यम से।

साहित्य में नोबल पुरस्कार विजेता अन्य महिलाएं हैं, ग्रेजिया डेलेडा (१९२६), सिग्रिड अनसेट (१९२८), पर्ल बक (१९३८), गेब्रीला मिस्त्राल (१९४५) एवं नेली शाख्स (१९६६)

ग्रेजिया डेलेडा इटली की विख्यात कथा-लेखिका थीं। उन्होंने अपनी जन्मभूमि सार्डीनिया की पृष्ठभूमि में ही अपने प्रायः सभी उपन्यासों, कहानियों की रचना की। उनकी अधिकांश कहानियां दुःखांत हैं, पर

वे सभी मानवीय सम्वेदना और सहानुभूति की गहराई साथ जीवन के उच्च आदर्शों से प्रेरित हैं। ५१ वर्ष की आ में उन्होंने नोबल पुरस्कार ग्रहण किया।

चिली की कवयित्री गेब्रीला मिस्त्राल दक्षिण अमरीक की पहली साहित्यकार थीं, जिन्हें यह पुरस्कार मिला उनके गीति-काव्य एक लम्बे अरसे तक लैटिन अमरीकि में आदर्श प्रेरणा भरते रहे हैं। उनकी रचनाओं संख्या अधिक नहीं है, पर जो हैं उनमें से अधिकांश बहु सशक्त मानी गयी हैं। ५६ वर्ष की आयु में उन्हें 'सानेट् ऑव डेथ' नामक रचना पर नोबल पुरस्कार मिला।

चीनी जन-जीवन का जीवंत चित्रण करने वाली अ रीकन लेखिका पर्ल बक की नोबल पुरस्कार विजेता-कृ का नाम 'गुड अर्थ' है। उन्हें ४६ वर्ष की आयु में पुरस्का मिला। उनकी चुनी हुई कृतियों का विश्व की अने भाषाओं में अनुवाद हो चुका है।

नार्वेजियन उपन्यास-लेखिका सिग्रिड अनसेट को ४ वर्ष की आयु में साहित्य का नोबल पुरस्कार मिला। उन अधिकांश उपन्यासों का कथा-काल १४वीं-१५वीं शता और घटनास्थल नार्वे है फिर भी सार्वजनीन दिलचस्पी उनमें कमी नहीं। नारी जीवन की उनकी कल्पना परम्पर गत भारतीय नारी जीवन के समान है, जिसमें वे मां, प व गृहिणी के स्वरूप और कर्तव्य को प्रमुख स्थान देती हैं कहते हैं, नोबल पुरस्कार की सूचना मिलने के बाद पत्रका का एक दल जब अनसेट की प्रतिक्रिया जानने के लि उनसे मिला तब वे अपने सबसे छोटे बच्चे को सुला रही थी उन्हें ऐसे समय भी अपने मातृत्व के कार्य में बाहरी हस्त असहनीय लगा और उन्होंने पत्रकारों से बात करने इनकार कर दिया।

ऊपर से नीचे: नेली शॉक्स, जूलिया क्यूरी, पर्ल बक सिग्रिड अनसेट।

नेली शाख्स प्रथम महिला थी, जिन्हें १९६६ का साहित्य पुरस्कार मिला। उन्हें यह पुरस्कार सैमुअल जोसेफ एग्नान के साथ संयुक्त रूप से मिला था। जोसेफ एग्नान गद्य लेखक थे, नेली शाख्स कवयित्री; और संयोग यह कि दोनों की मृत्यु १९७० में हुई। पुरस्कार के समय एग्नान ८९ वर्ष के थे और नेली शाख्स ७५ वर्ष की। नेली शाख्स की रचनाएं यहूदी-यातनाओं और इजराइल की दुखी जनता के मार्मिक चित्रण से ओतप्रोत हैं।

विज्ञान में पुरस्कार प्राप्त करने वाली अन्य महिलाओं के नाम हैं, आइरीन जूलियट क्यूरी (१९३५ का रसायन में पुरस्कार), गर्टी थेरेसा कोरी (१९४७ का चिकित्सा विज्ञान में पुरस्कार), मारिया ज्योपर्ट मेयर (१९६३ का भौतिकी में पुरस्कार) तथा डोरोथी क्रोफुट हॉजकिन (१९६४ का रसायन में पुरस्कार)।

पोलैण्ड की आइरीन जूलियट क्यूरी मेरी क्यूरी की लड़की थीं। उन्होंने अपने पति फ्रेडरिक जूलियट, मेरी क्यूरी के असिस्टेंट—के साथ मिलकर क्यूरी दम्पती के रेडियो-धर्मी तत्वों की खोज को ही आगे बढ़ाया और संयुक्त रूप से पुरस्कार प्राप्त किया। इनकी नयी खोज थी—रेडियम धर्मी तत्वों का कृत्रिम रूप से उत्पादन। अपनी मां मेरी क्यूरी की तरह पुरस्कार प्राप्त करते समय आइरीन क्यूरी की आयु भी केवल ३८ वर्ष थी।

अमरीकन दंपती गर्टी थेरेसा कोरी और कार्ल कोरी को मधुजन (ग्लाइकोजीन) के उत्प्रेरणा और परिवर्तन सम्बंधी अनुसंधान पर शरीर-विज्ञान व चिकित्सा के नोबल पुरस्कार का अर्द्धांश संयुक्त रूप से प्रदान किया गया। उनकी नयी खोज 'कोरी चक्र' के नाम से प्रसिद्ध हुई। पुरस्कार प्राप्त करते समय गर्टी थेरेसा कोरी की आयु ५१ वर्ष थी।

चित्र ऊपर से नीचे : मारिया ज्योपर्ट मेयर, डोरोथी क्रोफुट, गर्टी थेरेसा कोरी, एमिली बाल्व।
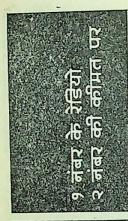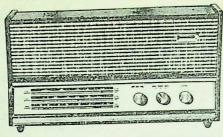
*स्थानीय कर अतिरिक्त।

आर. वी. ३०१ मार्क ॥

३ बैंड ए.सी. मेन्स सेट। रु. २७५*
*आबकारी शुल्क ४० रु. अतिरिक्त।
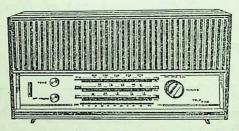
आर. वी. ३०२ मार्क ॥

ए.सी. मेन्स सेट।६ वाल्वूस। ३ बैंड। रु. ३००*
*आबकारी शुल्क ४० रु. अतिरिक्त।
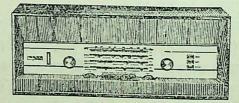
आर.वी. ४२१

ए.सी. मेन्स सेट। ४ बैंड्स।
६ वाल्वूस। २ स्पीकर्स। रु. ४४५*
*आबकारी शुल्क ९० रु. अतिरिक्त।

Shilpi-TR-3/73 Hin.

मारिया ज्योपर्ट मेयर जन्म से पोलिश थीं। अमरीकन प्रोफेसर जोसेफ एडवर्ड मेयर से विवाह के बाद उन्होंने अमरीकी नागरिकता ग्रहण की और वहीं बस गयीं। उनके पति भी वैज्ञानिक थे पर उनकी परमाणु के ढांचे सम्बंधी खोज में वे नहीं, अन्य वैज्ञानिक भागीदार थे। नोबल पुरस्कार में उनके साथ थे—ले. एच. डी. जेन्सन और डा. यूजीन पाल विगनर। इनकी 'न्युक्लिअस शैल थ्योरी' और न्यूट्रोन की 'जादुई संख्याएं' प्रसिद्ध हैं। मारिया ज्योपर्ट मेयर की मृत्यु गत वर्ष ही फरवरी में हुई है। पुरस्कार के समय उनकी आयु ५७ वर्ष की थी।

इंगलैण्ड की डोरोथी क्रोफुट हॉजकिन ने इंसुलिन, पेनीसिलीन–जैसे प्राकृतिक उत्पादनों पर कार्य करते हुए उनका क्ष-किरण विश्लेषण किया। उनका मुख्य विषय था, क्षकिरण मणि विज्ञान (एक्स-रे क्रिस्टलोग्राफी)। इस विषय में उनकी रुचि दस वर्ष की आयु से ही हो गयी थी। अपने विश्लेषण कार्य पर नोबल पुरस्कार प्राप्त करते समय उनकी आयु ५४ वर्ष थी।

विश्व-शांति के प्रयासों के लिए पुरस्कृत दो अन्य महिलाएं हैं: जेन एडम्स (१९३१) तथा एमिली बाल्व (१९४६)। दोनों महिलाएं अमरीका की सुप्रसिद्ध सामाजिक कार्यकर्त्रियां थीं। जेन एडम्स अपनी 'पीस-पार्टी' तथा 'हल-हाउस' नामक कल्याण संस्था के कारण विश्वविख्यात हुईं। उनकी 'पीस पार्टी' हर जोखिम उठाकर युद्ध का विरोध किया करती थी। जेन एडम्स की मृत्यु ७५ वर्ष की आयु में १९३५ में हुई। उन्हें १९३१ में निकोलस मरे बटलर के साथ संयुक्त रूप से नोबल पुरस्कार मिला था।

इसी तरह एमिली बाल्व को वाई. एम. सी. ए. के लीडर जोन आर मांट के साथ यह पुरस्कार संयुक्त रूप से मिला। एमिली बाल्व का नाम 'वीमेंस इंटरनेशनल लीग फार पीस एंड फ्रीडम' के साथ जुड़ा है, जिसकी आज विश्व भर में शाखाएं हैं।

—बी. ए. ३०८, टैगोर गार्डन
नयी दिल्ली-२६

महिला ने रिपोर्ट लिखायी, "सामने रहने वाला एक छात्र मुझे घूरता रहता है।" पुलिस इंसपेक्टर ने महिला के घर जाकर जांच की, पर उसे कोई ऐसा स्थान नहीं दिखायी दिया जहां खड़े रहने पर छात्र दिखायी देता हो।
इंसपेक्टर बोला, "छात्र तो दिखायी ही नहीं पड़ता है, आपको घूरता कैसे है?" महिला बोली, "आप एक मेज लाइए, उस पर कुरसी रखिए और फिर उस पर खड़े होकर रोशनदान से देखिए, फिर मालूम पड़ेगा कि घूरता है कि नहीं।"

राजस्थान के नागौर जिले में, जयपुर-बीकानेर रेलवे लाइन पर स्थित मकराना अपने शुद्ध, रंगदार, दृढ़ एवं सुंदर दूधिया संगमरमर पत्थर के लिए विश्वविख्यात है। समूचे विश्व में इटली के बाद मकराना ही एक ऐसा स्थान है, जहां धवल संगमरमर सर्वाधिक मात्रा में पाया जाता है। यहां की खानों में बहुतायत में प्राप्त होने वाला शुद्ध संगमरमर विश्व के मूर्तिकारों की मांग को पूरा करता है। नवीं तथा दसवीं शताब्दी में निर्मित सौराष्ट्र का सोमनाथ का मंदिर, सुप्रसिद्ध ताजमहल, कलकत्ते में निर्मित विक्टोरिया मेमोरियल इत्यादि इसी मकराना के पत्थर से बनाये गये हैं।

● राजेन्द्र छाबड़ा

मकराना की चप्पा-चप्पा भूमि संगमरमर से ओत-प्रोत है। यहां के निवासियों के घर तक संगमरमर से ही चिने जाते हैं। बस्ती से दो मील दूर ही पत्थर की खानें आरम्भ हो जाती हैं। मकराना और इसके आसपास के ग्रामों में संगमरमर की कुल मिलाकर चार सौ पचास खानें हैं। इनमें गुनावटी, धौलाडूंगरी, कोला-डूंगरी और कुमारी पहाड़ियां अच्छे माल की प्राप्ति का प्रमुख केंद्र हैं। जिस संगमरमर का रंग बर्फ की भांति स्वच्छ होता है, जिसमें विशेष रूप से पर्तों की सुविधा होते हुए भी, काफी मजबूती होती है, उसे उत्तम कोटि का संगमरमर माना जाता है। मकराना में मिलने वाला संगमरमर पैंतालीस प्रतिशत सफेद रंग का, पैंतालीस प्रतिशत गुलाबी रंग का तथा दस प्रतिशत
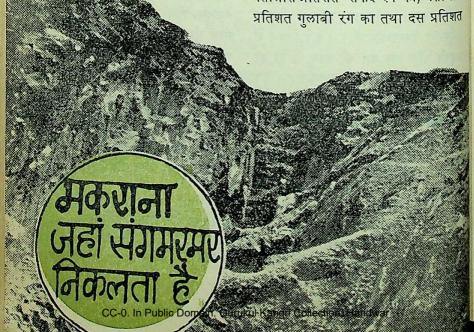
काले रंग का होता है ।

मकराना की खानें समतल भूमि पर हैं तथा ऊंची-ऊंची पहाड़ियों पर भी छह से सात मील तक लम्बी दीवार की तरह, सीधी खड़ी, नीले आसमान से बातें करती हुई ये हिम-सी सफेद पहाड़ियां आने वालों का हृदय अपनी ओर खींच लेती हैं।

सैकड़ों फुट गहरी खानों से संगमरमर निकालकर उसे अभीष्ट रूप देना, एक कठिन और अनूठी प्रक्रिया है । समय के साथ-साथ इसका भी विकास हुआ है । सन १९११ के पूर्व तक मकराना खानों से संगमरमर छोटे-छोटे चौकों के रूप में हाथ के साधारण औजारों से काटकर निकाला जाता था और तत्पश्चात हाथ के औजारों से ही उन्हें अभीष्ट रूप दिया जाता था । कभी-कभी तो खान से काटकर निकाले गये बड़े-बड़े टुकड़े ही लोगों को भिजवा दिये जाते थे, जिनकी गढ़ाई भवन-निर्माता को अपने यहां ही करानी होती थी ।

सन १९११ में मार्टिन बर्न ऐंड कम्पनी ने यहां एक कारखाना स्थापित किया । इस कारखाने में मशीनों द्वारा संगमरमर के बड़े पत्थरों को छोटा करने, छीलने तथा सुंदर रूप देने का काम किया जाता था । इस कम्पनी ने विक्टोरिया मेमोरियल के लिए संगमरमर उपलब्ध कराया । बाद में इस क्षेत्र में तीन कम्पनियां और कार्यरत हुईं । इस प्रकार बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भिक वर्षों में स्थापित ये कम्पनियां, मकराना खानों से मशीन द्वारा संगमरमर निकालने तथा उसे मशीन से ही काटने और गढ़ने इत्यादि की विकसित विधियों की आधारशिला बन गयी हैं ।

मकराना की खानों का एक दृश्य
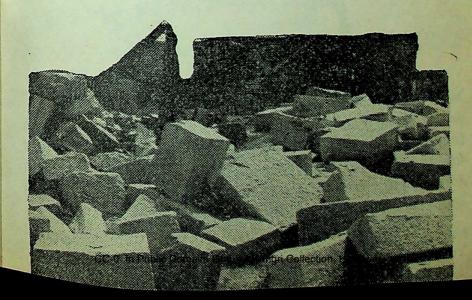
भीमकाय क्रेनों का उपयोग

पाताल-सी गहरी खानों में श्रमिक अपना जीवन हथेली पर रखकर रस्सों के सहारे नीचे उतरते हैं और फिर विशेष प्रकार के औजारों से उन बड़ी-बड़ी शिला-श्रृंखलाओं को तोड़ते हैं, जो न जाने कब से धरती की गोद में दबी पड़ी हैं। श्रृंखलाओं सफाई होती है तथा पत्थर चीरने आरों द्वारा उन्हें चौरस बना लिया जा है। शुद्ध सफद रंग का पत्थर मूर्तिका को बेच दिया जाता है। कभी-कभी विशालकाय एवं बड़ी मूर्तियां बनाने के लि तीस से पैंतीस फुट तक लम्बा एक पत्थर मूर्ति निर्माताओं को उपलब्ध
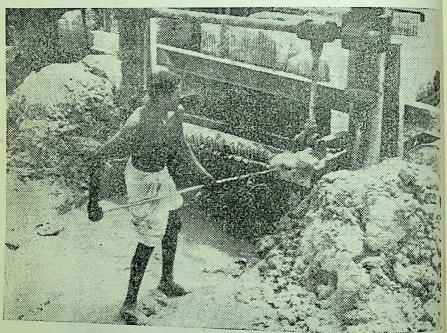
बिजली से चलनेवाले आरे द्वारा पत्थरों की चिराई

से विलग हुए बड़ शिलाखंडों को भीमकाय क्रेनों की सहायता से खान के ऊपर खींच लिया जाता है। तत्पश्चात खान पर ही लगी हुई मशीनों द्वारा शिला खंडों को आवश्यकतानुसार तोड़ा या चीरा जाता है। कारखानों में इन पत्थरों की कटाई और कराया जाता है। सफद रंग के अतिरिक्त अन्य रंगों के पत्थरों की अलग-अलग मापों में पट्टियां चीर ली जाती हैं। आरों द्वारा इस प्रकार चीरी हुई रंगीन पट्टियों का उपयोग देवालयों के निर्माण आदि में शोभा बढ़ाने में किया जाता है।

समूचे मकराना में संगमरमर का काम करने वाले लगभग ८० कारखाने हैं।

मकराना के इन संगमरमर कारखानों में पत्थर काटने, उसके टुकड़े करने, उसे चिकना करने तथा पीसने की विभिन्न मशीनों में लगभग एक करोड़ रुपये की पूंजी का विनियोजन है। इसके अतिरिक्त तीस से चालीस लाख रुपये की कार्यशील पूंजी भी लगी हुई है। कारखानों तथा मकराना में घरों में बैठकर काम करने वाले लगभग पांच हजार लोगों को यह उद्योग रोजगार मुहय्या करता है। मकराना की खानों से प्रतिवर्ष लगभग एक करोड़ रुपये मूल्य का नव्वे हजार टन संगमरमर निकाला जाता है, जब कि प्रतिवर्ष संगमरमर से निर्मित हस्तकला वस्तुओं का मूल्य पांच लाख रुपये के लगभग होता है।

संगमरमर की इन खानों से सरकार को भी प्रतिवर्ष पच्चीस लाख रुपया रायल्टी के रूप में प्राप्त होता है। साथ ही संगमरमर की वस्तुओं के निर्यात से भी उसे विदेशी मुद्रा प्राप्त होती है।

मकराना में उपलब्ध संगमरमर में पंचानबे प्रतिशत कैलशियम विद्यमान है, जिससे 'एस्टीलीन' गैस का निर्माण होता है, जो वेल्डिंग के काम आती है।

—जमनालाल बजाज रोड, 'सी' स्कीम, जयपुर

भारत का विभाजन हुआ, तो ऑल इंडिया रेडियो ने पंडित जवाहरलाल नेहरू और जिन्ना साहब के भाषण प्रसारित किये। शायर 'मजाज' और 'साहिर' लुधियानवी उस वक्त बम्बई के एक रेस्तरां में बैठे चाय पी रहे थे। जिन्ना साहब ने अपने भाषण के आरम्भ में कहा, "आज पहली बार मुझे रेडियो पर बोलने की इजाजत मिली है।" इस पर मजाज एकदम बोल उठे, "यार साहिर ! अगर हमारी-तुम्हारी तरह कायदे-आजम को भी आल इंडिया रेडियो चांस देता रहता, तो काहे को जिन्ना साहब पाकिस्तान बनवाते !"

★

१५ अगस्त, '४७ के उपलक्ष्य में अपने घर पर एकत्रित अनेक उर्दू साहित्यकारों से श्री सज्जाद जहीर ने सवाल किया, "तुम्हारे दोस्तों में से कौन यहां रहना चाहता है और कौन पाकिस्तान जाना चाहता है?"

सब चुप रहे। वे सोच रहे थे कि एक तरफ से आवाज आयी, "मैं पाकिस्तान जाना चाहता हूं।" सबने चौंक कर देखा—मजाज थे।

"क्यों, तुमको क्या शिकायत है हिंदुस्तान से?" सज्जाद साहब ने पूछा।

"बन्ने भाई, यहां शराबबंदी हो जाएगी," मजाज ने कहा।

"और पाकिस्तान में? वह तो इस्लामी मुल्क बन गया है !"

"जी, पर वहां खुद कायदे-आजम जो पीते हैं !" मजाज ने जवाब दिया।

विश्व की सर्वप्रथम हिप्पी महिला

● बृजेश कुलश्रेष्ठ

बात उस जमाने की है जब अमरीका के सभ्य एवं सुसंस्कृत समाज में 'टांग' शब्द का प्रयोग अश्लील समझा जाता था। लेकिन उस जमाने में एक ऐसी औरत भी थी जिसने अपनी टांगों का ही नहीं, शरीर के अन्य अंगों का भी प्रदर्शन कर सारे अमरीका में तहलका मचा दिया।

उसका नाम था—इसाडोरा डंकन। इसाडोरा अपने जमाने की सर्वश्रेष्ठ नृत्यांगना थी। उसका जन्म सन १८७८ में सानफ्रांसिस्को में हुआ था। वह अपने पिता की सबसे छोटी एवं चौथी संतान थी। इसाडोरा के जन्म के पूर्व ही उसका पिता सारे परिवार को छिन्न-भिन्न एवं बर्बाद कर चुका था। अतः इसाडोरा को पिता का प्यार कभी नसीब नहीं हो सका। उसे जो कुछ प्यार मिला, वह मां का ही मिला। चार-चार बच्चों का लालन-पालन करना कोई आसान काम नहीं था पर वह सारे परिवार को एक सूत्र में बांधे रही। गुजर-बसर के लिए उसने पियानो सिखाना शुरू किया। जब इससे भी काम न चला तो उसने मेजपोश स्कार्फ आदि बुनना शुरू किया।

इसाडोरा में संगीत के संस्कार शुरू से ही थे। ठुकम-ठुमक कर चलने की उम्र से ही उसने नाचना शुरू कर दिया था।

दस साल की उम्र में तो वह स्कूल छोड़कर नृत्य की शिक्षा देने लगी थी। जब वह उन्नीस साल की हुई तो उसके रंग-रूप में निखार आया। तब तो उसने तहलका ही मचा दिया। जितनी भड़कीली वह स्वयं थी, उतने ही भड़कीले उसके हाव-भाव थे। इसाडोरा के अलमस्त फक्कड़

स्वभाव ने, उसकी वेश-भूषा और रहन-सहन के तरीके ने उसे बदनाम कर दिया और अंत में परेशान होकर उसने अमरीका ही छोड़ दिया।

वह लंदन में बस गयी। कुछ ही दिनों में उसकी ख्याति लंदन के राजप्रासाद के दरवाजे खटखटाने लगी—राजमहल में इसाडोरा चर्चा का विषय बन गयी। एक दिन वह महारानी विक्टोरिया की पुत्री हेलेना के सम्पर्क में आयी और उसके संरक्षण में उसने लंदन के राज-परिवार के समक्ष तीन नृत्य प्रस्तुत किये। इसाडोरा के नृत्य को देखकर लोग मुग्ध हो उठे।

कुछ समय बाद इसाडोरा लंदन छोड़कर पेरिस आ गयी। उसकी ख्याति सारे यूरोप में फैल चुकी थी, पर इतना सब कुछ होते हुए भी वह किसी पुरुष का हृदय नहीं खरीद सकी। एक यही ऐसी कसक थी, जिसके कारण वह तिलमिला उठती थी। इस कमी की जिम्मेदार भी वह स्वयं थी। वह न प्यार को छोड़ना चाहती थी और न कला को। लेकिन वह कला और प्रेम को साथ-साथ लेकर नहीं चल सकी। कला का अहं चाहे जब प्रेम को तोड़कर रख देता। यही उसके जीवन की सबसे बड़ी 'ट्रेजडी' थी। यह बात नहीं कि इसाडोरा के जीवन में कोई पुरुष आया ही नहीं। उसके अनेक पुरुषों से सम्बंध रहे, पर निभी किसी से नहीं।

सबसे पहले १९०२ में उसकी मुलाकात एक हंगेरियन अभिनेता से हुई। महीनों दोनों एक-दूसरे को प्यार करते रहे। इसाडोरा मधुर-मधुर सपनों में खोयीं रही। हठात उसके कलाकार मन ने उसके सारे सपनों को झटककर रख दिया। वह पुरुष के अधीन कैसे रह सकती है? इसी अहं ने प्यार का सिलसिला तोड़ दिया। वह फिर भटकने लगी और बलगेरिया जा पहुंची। वहां बलगेरिया का शहजादा उसके जीवन की राह में आ खड़ा हुआ। उसने अपना इतालवी राजप्रासाद उसे भेंट कर दिया। इसाडोरा

इसाडोरा डंकन
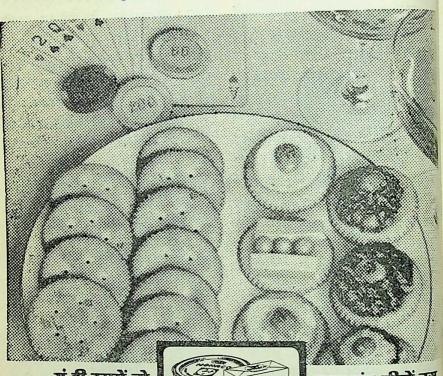
के इस तोहफे को स्वीकार करते ही राजदरबार में सनसनी फैल गयी। उसके व्यवहार से राजघराना बदनाम होने लगा।

अतः वह बर्लिन जा पहुंची। वहां की जनता उसे देवी की तरह पूजने लगी। उसे 'पवित्र देवी' के नाम से पुकारने लगे। यहां भी उसके जीवन की राह में एक पुरुष आ खड़ा हुआ--गोरडन क्रेग। वह बर्लिन का प्रसिद्ध मंच-सज्जाकार था। दोनों का विवाह हो गया। १९०७ में पहले पुत्र का जन्म हुआ।

बर्लिन में कुछ समय तक रहने के बाद डोरा म्युनिख जा पहुंची। जितना मान-सम्मान उसे म्यूनिख में मिला उतना अब तक कहीं नहीं मिला था। वहां के विद्यार्थियों ने उसकी बड़े ठाठ-बाट से सवारी निकाली थी। इसाडोरा की गाड़ी को वे स्वयं खीच रहे थे। पर वह गरीबी की पीड़ा को जानती थी। उसने वह झेली थी। यही कारण था कि उसने निहायत गरीब परिवार के बीस बच्चों को लेकर एक नृत्य स्कूल की स्थापना कर डाली। इस कार्य के पीछे उसकी सिर्फ यही भावना थी कि कि ये बच्चे बड़े होकर सुंदर जीवन बिता सकें और दुखों से भरी इस दुनिया में खुशियां बिखेर सकें।

इसाडोरा की ख्याति अपने चरम पर थी। उसका जीवन बड़ी तेजी में भाग रहा था कि वह एकाएक थम गया। मंच-सज्जाकार गोरडन से उसका सम्बंध टूट चुका था। वह अपने चार साल के बालक को लिये एकाकी जीवन जी रही थी। १९१० की बात है। उसकी मुलाकात पियरे सिंगर से हुई। वह शादीशुदा तो था ही, साथ ही पांच बच्चों का पिता भी था। यह वही सिंगर था, जिसके नाम की सिलाई की मशीनें आज भी विख्यात हैं। सिंगर से मुलाकात कर इसाडोरा को ऐसा लगा, जैसे सब-कुछ पा लिया हो। उससे विवाह कर लिया। दोनों रिवेरिया में जाकर बस गये। इसाडोरा ने अपने स्कूल के बच्चों को भी वहीं बुला लिया।

लेकिन इसाडोरा के भाग्य में भटकना ही बदा था। १० अप्रैल, १९१३ को इसाडोरा के जीवन का सबसे अधिक मनहूस दिन था। उसके दोनों बच्चे अपनी आया के साथ कार में बैठकर वर्साय की ओर जा रहे थे। पहाड़ी सड़क थी--घुमावदार चक्करदार धीरे-धीरे ऊपर उठती हुई। एकाएक कार चालीस फुट नीचे नदी में जा गिरी।

अकल्पनीय आघात ने इसाडोरा को जड़ बना दिया था। वह बिलकुल मौन रही। बोल तब फूटा, जब उन मासूम बच्चों की लाशों को धरती की गोद में सुलाये जाते देखकर आसपास खड़े लोगों की आंखों में आंसू छलछला आये।। तब वह एकाएक चिल्ला उठी, "नहीं-नहीं . . . कोई नहीं रोएगा। एक बूंद आंसू भी नहीं। मैं साहसी बनना चाहती हूं। इन मौत की घड़ियों को मैं सुंदर बना देना चाहती हूं . . . इतना सुंदर कि विश्व भर की वे माएं, जो

अपने बच्चों को खो बैठी हैं, उन्हें दुःख का अहसास न हो. . .मौत के दारुण दुख का।"

इसाडोरा उस दिन अगर रो लेती तो शायद इतनी न टूटती। इतना न घुटती। अब वह अजीब जिंदगी जीने लगी थी। उसे न खाने की चिंता थी न पीने की, और न अपने तन-वदन की। जब वह नृत्य पेश करती तो अपने हाव-भाव से, अवसाद भरे चेहरे से लोगों को रुला देती और अंत में शरीर का कपड़ा फाड़कर स्टेज पर खड़ी की खड़ी रह जाती।

इससे अधिक सनसनी तब फैली, जब इसाडोरा ने एक रूसी कवि सेरगेई एस्निन से शादी कर ली। यह बात १९२२ की थी। कवि उससे १७ साल छोटा था। हालांकि वह अपने जमाने का सर्वश्रेष्ठ कवि था, पर पियक्कड़ भी अव्वल दर्जे का था।

उन दिनों इसाडोरा बर्लिन में थी। रात का समय था। वह अपने दो मृत बच्चों के चित्रों को आगे रखकर रो रही थी। इतने में न जाने कहां से नशे में चूर सेरगेई आ धमका। आते ही उसने वह एलबम आग में झोंक दिया। इसाडोरा उस दिन बहुत रोयी।

अब दोनों एक दूसरे से पीछा छुड़ाना चाहते थे। पहल कवि ने की। एक दिन उसने लेनिनग्राड के एक होटल के कमरे में फांसी लगाकर आत्महत्या कर ली।

इतना सब कुछ होते हुए भी इसाडोरा जिंदगी जीती रही। १९२७ की बात है। इसाडोरा को रात के भोजन के पश्चात स्पोर्ट्स कार में घूमने जाना था। कार आने में देरी थी अतः उसने यूं ही नाचना शुरू कर दिया, सिर्फ वक्त काटने की गरज से। उसका प्रिय रिकार्ड वज रहा था—'बाई-बाई ब्लैक वर्ड'। इसाडोरा संगीत की ध्वनि पर थिरक रही थी। इतने में उसके अंगरक्षक ने कमरे में प्रवेश किया। इसाडोरा ने लम्बा-सा लाल शाल गले में लपेट लिया। उसका एक हिस्सा जमीन पर घिसटता जा रहा था। बाहर कार उसका इंतजार कर रही थी। वह कार में बैठी, प्रशंसकों की ओर हाथ उठाया और बोली "बहुत हो गया. . .अब मैं ख्याति से दूर भाग रही हूं. . .बहुत दूर. . ."

और यह इसाडोरा के अंतिम शब्द थे। जिस कार में वह जा रही थी उसकी सीट काफी नीची थी। कार जैसे ही चली वैसे ही घिसटते हुए शाल का छोर पहिये में फंस गया। गले में लिपटे शाल का फंदा कस गया और अगले क्षण इसाडोरा की गरदन टूट गयी।

कुछ लोगों ने इसाडोरा की अस्तव्यस्त और मुक्त जिंदगी को आज के 'हिप्पी जीवन' का पर्याय मान लिया है। उनके अनुसार इसाडोरा प्रथम हिप्पी महिला थी जिससे अमरीका और अन्य पश्चिमी देशों के हिप्पियों ने प्रेरणा ग्रहण की। निस्संदेह इसाडोरा का यह गलत मूल्यांकन है।

—एफ-१७४, गांधीनगर, जयपुर

प्रवेश

उदासी का घेरा

एक प्रश्न बार-बार मेरे मन का
उत्तर चाहता है
शाम की चुप्पी से
एक ही स्थिति में खड़े पेड़ों से
उदास हरी घास के लॉन से
लॉन में पड़ी खाली कुरसी से
मुंडेर पर लगे कैक्टस से
घर की छत पर बैठे कौए से
पाइप से लगातार निकलते पानी से
क्या मैं ही अकेला महसूस कर रही हूं
या ये भी अपने अकेलेपन पर उदास हैं ?
तभी मेहंदी के पौधों की खुशबू
धीरे से आकर मुझे यूं समझाती है
शाम उदास है रात से मिलने को
पेड़ उदास हैं हवा का आलिंगन करने को
हरी घास उदास है फूलों का स्पर्श पा लेने को
खाली कुरसी उदास है किसी व्यक्ति को
अपना लेने को
मुंडेर पर लगा कैक्टस
अपनी सूरत पर उदास है
छत पर बैठा कौआ
कांव-कांव करके थक गया है
और मेरी उदासी का कारण
मेहंदी यूं बताती है
कि मुझ में अब कोई खुशबू नहीं है
कि सबको उदास देखकर उदास होना
मेरा शौक है

—इला पाण्डेय
—सतसंगी हाउस, मिर्जा इस्माइल रोड,
जयपुर

"बी. ए. तक शिक्षा प्राप्त की। राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, दिल्ली से भी तीन मास का कोर्स पूरा किया। नृत्य, संगीत तथा नाटक में बचपन से ही रुचि। रंगमंच, रेडियो और टेलीविजन के कई कार्यक्रमों में भाग लिया है। एकांत क्षणों में कविता से मन बहलाती हूं।"

रुद्र के अवतार महर्षि दुर्वासा

● रामप्रताप त्रिपाठी

पौराणिक साहित्य में दुर्वासा विचित्र महापुरुष के रूप में वर्णित हैं। ऐसा कोई पुराण नहीं है जिसमें उनके सहज क्रोधी तथा विचित्र स्वभाव के सम्बंध में कोई कथा न आयी हो। वे महर्षि अत्रि के वंशज थे। महर्षि दत्तात्रेय उनके भाई थे तथा सती अनसूया उनकी माता थीं।

मार्कण्डेय-पुराण के अनुसार दुर्वासा रुद्र के अवतार थे। जव ये माता के गर्भ में थे और सात मास के ही थे तभी कार्त्तवीर्य नरेश द्वारा अपने पिता को अपमानित होता देख कर गर्भ के वाहर कूद पड़े थे और उसे भस्म करने के लिए तुल पड़े थे।

ब्रह्मवैवर्त्त-पुराण में तो दुर्वासा के द्वारा इंद्र, शकुंतला, तिलोत्तमा, भानुमती आदि को भयंकर शाप देने की विचित्र आख्यायिकाएं हैं। शकुंतला को शाप देने के प्रसंग पर ही कालिदास ने अपने जगत-प्रसिद्ध नाटक 'अभिज्ञान शाकुन्तलम्' की रचना की है। एक मामूली-सी माला के प्रश्न पर कुपित होकर दुर्वासा ने इंद्र को शाप देकर संत्रस्त कर दिया था। एक वार उन्होंने धर्मराज को ही शाप देकर संकट में डाल दिया था। पुराणों के अनुसार इन्हीं के शाप के कारण धर्मराज को युधिष्टिर, विदुर तथा हरिश्चंद्र की परीक्षा के अवसर पर उपस्थित चांडालराज का जन्म धारण करना पड़ा था। इसी प्रकार अविमुक्तपुरी वाराणसी के ऊपर भी एक वार दुर्वासा अति क्रुद्ध हुए थे और शाप देने के लिए आतुर थे कि शिव के अट्टहास के कारण रुक गये। इनके नाम से जिस दुर्वासा-स्मृति की चर्चा की जाती है, उसकी रचना में भी इनके परम क्रोधी स्वभाव की एक विचित्र भूमिका जुड़ी हुई है।

दुर्वासा किसी के सगे नहीं थे। एक वार तो वे अपनी पत्नी को ही शाप देकर भस्म करने के लिए उद्यत हो गये थे कि भगवान श्रीकृष्ण की कृपा से उसके प्राणों की रक्षा हुई, जो बाद में उन्हीं भगवान श्रीकृष्ण की बहन एकानंशा के रूप में उत्पन्न हुई और दूसरे जन्म में भी दुर्वासा की पत्नी वनी।

पद्म-पुराण की एक कथा के अनुसार एक बार दुर्वासा कलिंगराज के सैनिकों के ऊपर क्रुद्ध हो गये थे और उन्हें भस्म करके कलिंगराज को भैंसा बना दिया था। भगवान कपिल की कृपा से बदरीतीर्थ में स्नान करने पर कलिंगराज का उद्धार हुआ।

शंकर-दिग्विजय के अनुसार विद्या की अधिष्ठात्री देवी सरस्वती को भी दुर्वासा के शाप से मानवी-योनि में जन्म

लेने को विवश होना पड़ा था और वह मंडन मिश्र की पत्नी भारती के रूप में उत्पन्न हुई थीं। एक कथा के अनुसार पांड्य देश का नरेश तृष्णावर्त इन्हीं के शाप से दैत्य योनि में उत्पन्न हुआ था। योगवासिष्ठ की एक कथा के अनुसार सात भाइयों के भीषण तप द्वारा प्राप्त राज्यफल को दुर्वासा ने शाप देकर विध्वंस करना चाहा था, किंतु पितामह ब्रह्मा के बीच में आ जाने के कारण वैसा नहीं हुआ।

महाभारत के विभिन्न प्रसंगों पर दुर्वासा-सम्बंधी अनेक कथाएं हैं। कुंती अपनी अविवाहितावस्था में दुर्वासा के प्रति बड़ी श्रद्धा रखती थी। जब कभी दुर्वासा उसके पिता के यहां जाते, कुंती उनकी जली-कटी बातों की कोई परवाह न कर उनकी सेवा-सुश्रु षा में लगी रहती थी। एक दिन उन्होंने प्रसन्न होकर कुंती से वरदान मांगने को कहा। कुछ क्षण वह चुपचाप खड़ी सोचती रही तब तक स्वयं दुर्वासा ने ही उसे वरदान दे दिया—"भद्रे! तू जिस देवता को अपने पास बुलाना चाहेगी, वह तेरे स्मरण-मात्र से आ जाएगा।" एक दिन उसने कुतूहलवश सूर्य का स्मरण किया तो सूर्य कुंती के समीप आने के लिए विवश हुए, जिससे कर्ण की उत्पत्ति कही जाती है।

एक बार दुर्वासा द्वारकापुरी में घूम रहे थे। वे कई दिनों की अनवरत यात्रा से थके हुए थे। द्वारकापुरी में कुछ देर घूमने के बाद वे उच्च स्वर में भगवान श्रीकृष्ण तथा उनके परिजनों को सख्त बातें सुनाने लगे। श्रीकृष्ण को दुर्वासा के द्वारकापुरी में आगमन की खबर लगी तो वे अपने परिजन के संग राजभवन से बाहर निकल आये और उन्हें अतिथि भवन में रहने के लिए सहमत किया। दुर्वासा प्रतिदिन एक नया तांडव उपस्थित करते किंतु उसका तत्काल समाधान हो जाता। इस प्रकार जब कई दिनों तक वे प्रयत्न करके हार गये और अप्रसन्न होने का कोई अवसर हाथ नहीं लगा तो उन्होंने एक दिन आधी रात के समय अपने अतिथि कक्ष में स्वयं आग लगा ली, भोजनादि की
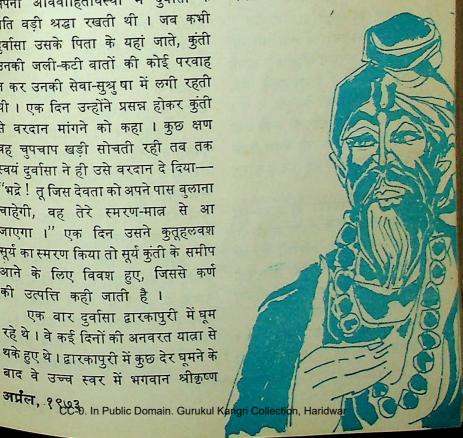
सामग्री जल गयी ।

अतिथि-भवन की आग जल ही रही थी कि दुर्वासा क्रोध में श्रीकृष्ण के अन्तःपुर में पहुंच गये और बोले, "वासुदेव ! मैं इसी क्षण खीर खाना चाहता हूं ।" श्रीकृष्ण ने दुर्वासा का स्वागत करते हुए कहा—"महामुने ! आप हाथ-पैर धोयें, खीर तैयार है ।" श्रीकृष्ण ने स्वयं दुर्वासा के बैठने के लिए आसन दिया, हाथ-पैर धुलाये । तब तक रुक्मिणी स्वयं स्वर्ण-थाल में ताजी खीर लेकर उपस्थित हो गयीं ।

दुर्वासा ने थोड़ी-सी खीर खायी, अधिकांश छोड़ दी और आचमन से पूर्व ही श्रीकृष्ण को आज्ञा दी, "वासुदेव ! इस जूठी खीर को तुम तुरंत अपने सभी अंगों में लपेट लो ।" भगवान श्रीकृष्ण के सामने रुक्मिणी खड़ी थीं । वे मुसकराने लगीं, क्योंकि श्रीकृष्ण राजसी वेशभूषा में थे । श्रीकृष्ण ने उस जूठी खीर को अपने अंगों में लपेट लिया । बच रहे केवल उनके पैरों के दोनों तलवे, जो खड़े होने के कारण धरती पर थे ।

दुर्वासा से रुक्मिणी की हास्य-मुद्रा छिपी नहीं थी । उन्होंने तत्क्षण आज्ञा दी, "वासुदेव ! यही खीर रुक्मिणी को भी अपने अंगों में पोतनी पड़ेगी तथा इसी अवस्था में उसे रथ का जुआ खींचना पड़ेगा, जिस पर मैं बैठूंगा ।"

दुर्वासा की आज्ञा को अन्यथा करने की शक्ति किसमें थी ! जूठी खीर को अपने बहुमूल्य अलंकारों तथा वस्त्रों से अलंकृत सुंदर शरीर पर लपेटकर रुक्मिणी रथ का जुआ लेकर खींचने लगीं । रुक्मिणी जब थककर चूर हो गयीं तो दुर्वासा रथ से जमीन पर कूद पड़े । उनके नेत्रों से प्रेमाश्रु गिरने लगे । भगवान श्रीकृष्ण को गले लगाते हुए बोले, "महाबाहु श्रीकृष्ण ! तुमने सचमुच क्रोध को जीत लिया है । तुम्हारे गुण अपार हैं । तुम अकेले ही इस विश्व को धारण करने योग्य हो । तुमने मेरी आज्ञा मानकर सारे शरीर में खीर लगायी अतः आज से तुम्हारा यह सम्पूर्ण शरीर सभी प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों से अभेद्य होगा । हां, जिस अंग में तुमने खीर नहीं लगायी है, वही अंग कमजोर रहेगा ।" बाद में तो ऐसा ही हुआ । बहेलिये के तीर से तलुओं में घाव लगने के कारण उनका शरीरपात हुआ ।

रुक्मिणी अब भी श्लथ-विश्लथ थीं । दुर्वासा ने उनसे कहा, "कल्याणी ! तुमने मेरी आज्ञा का पालन किया है, अतः तुमको जरा और रोग-व्याधि नहीं होंगे । तुम्हारे अंगों की शोभा सदैव अम्लान रहेगी । तुम्हारा यश त्रिभुवन में फैलेगा ।"

दुर्वासा की ऐसी ही अनेक रोचक कथाएं हैं जो पुराणों में, नाटकों के खल-नायक के चरित्र की भांति पाठकों और श्रोताओं को विस्मय में डाल देती हैं ।

—कार्य सचिव,
हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग

भारतीय खाद्य निगम

• बलदेव वंशी

हमारे देश में अखिल भारतीय स्तर पर कुछ ऐसे प्रतिष्ठान काम कर रहे हैं जिनके सम्बंध में आवश्यक जानकारी उपयोगी है । गत अंक में आपने आविष्कार संवर्धन मंडल के बारे में एक रोचक लेख पढ़ा । प्रस्तुत है भारतीय खाद्य निगम के बारे में एक प्रामाणिक लेख

भारत सरकार ने अब अन्न का थोक व्यापार अपने हाथ में लेने की घोषणा की है । खाद्यान्न की खरीद और बिक्री का काम सारे देश में भारतीय खाद्य निगम करेगा । इतना बड़ा व्यापार, जिसका ५५ करोड़ लोगों के दैनिक जीवन से सम्बंध हो, सरकार अपने हाथ में लेने जा रही है । जापान में यह प्रयोग किया जा चुका है और वह सफल रहा है । वहां किसानों को अन्न की उचित कीमत सरकार देती है तथा उपभोक्ता को उचित दर पर खाद्यान्न उपलब्ध कराती है । इस प्रकार किसान और उपभोक्ता दोनों को ही सुविधा होती है । लगभग यही नीति अब भारत में भी लागू करनी होगी ।

जन्म की कहानी

१९६४ के अंत में संसद ने खाद्यान्न का व्यापार सार्वजनिक क्षेत्र में स्थानांतरित करने का निश्चय किया । इसका उद्देश्य एक ऐसी संस्था का गठन करना था जो व्यापारिक आधार पर गतिशील दृष्टिकोण अपना सके और अनाज के व्यापार में अगुआई कर सके । इसका लक्ष्य ऐसा अभिकरण स्थापित करना था जो देश की मूल खाद्य-नीति को कार्यरूप दे सके । राज्य की ओर से उत्पादकों को उचित मूल्य देकर अतिरिक्त खाद्यान्न-संग्रह करना तथा उपभोक्ताओं को आवश्यकतानुसार अन्न-वितरण करके दरों में उतार-चढ़ाव

को काबू में करना इसका उद्देश्य है। पहली जनवरी १९६५ को भारतीय खाद्य निगम का जन्म हुआ। क्रय, परिवहन, संग्रह और वितरण के काम भी इस निगम ने संभाले।

प्रत्येक खंड का अपना संगठन

देश भर में निगम अपना काम कई कार्यालयों और सम्पर्क-केंद्रों के माध्यम से करता है। निगम के चार खंड हैं—उत्तर, दक्षिण, पूर्व और पश्चिम। हर खंड में विभिन्न क्षेत्रीय कार्यालय और जिला-कार्यालय हैं। अब तक १७ क्षेत्रीय कार्यालय, १४० जिला कार्यालय और हजारों संचालन-केंद्र स्थापित हो चुके हैं जो देश भर में क्रय और वितरण के काम की देखभाल करते हैं। निगम के कार्यकलापों में लगातार वृद्धि होने के कारण इस समय कर्मचारियों की संख्या ३२,९९६ है।

अनाज की खरी

निगम सीधे उत्पादकों से या सहक संस्थाओं के द्वारा खरीफ और रबी फसलों के दौरान लाखों टन अनाज ख दता है। विभिन्न राज्य-सरकारों द्वा निर्धारित संस्थाओं से अथवा धान-मि मालिकों से भी अनाज खरीदा जाता है आयातित अनाज और उर्वरकों के सम्ब में भी निगम का उत्तरदायित्व बढ़ गया है

भंडारण तथा गुण-नियं

१९७१-७२ के अंत में निगम के पा कुल ९१.२८ लाख टन भंडारण-क्षम थी, जिसमें ४०.४६ लाख टन के गोदा अपने तथा ४२.२२ लाख टन के किराये थे। वर्ष के अंत में भंडारों में ४० ल टन सुरक्षित खाद्यान्न था। अगस्त, १९ में निगम के भंडारों में ६९ लाख खाद्यान्न था। निगम ने कुछ बड़े भंडार

साइलो—अनाज के संग्रह के लिए वैज्ञानिक भंडारगृह
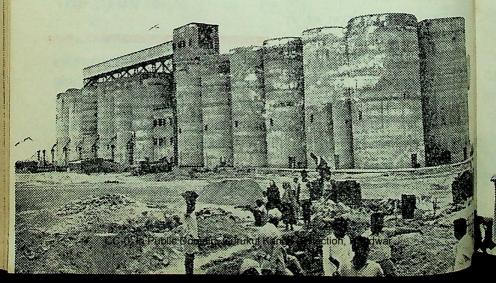
बनाने का भी काम हाथ में लिया है। इन्हें साइलो कहा जाता है। इनमें सारा काम मशीनों द्वारा किया जाएगा। निगम के अधीन १८ चावल-मिलें भी हैं। इसके अतिरिक्त पंजाब में खन्न नामक स्थान पर मक्का सुखाने वाला संयंत्र तथा फरीदाबाद में एक छोटा-सा मक्का पीसने का संयंत्र भी स्थापित किया जा चुका है। खाद्यान्न भंडारों को अच्छी स्थिति में रखने के लिए खरीद और संग्रह दोनों अवसरों पर गुण-नियंत्रण पर ध्यान दिया जाता है। वर्ष भर खाद्यान्न-भंडारों पर कीटाणु-नाशक रसायनों का छिड़काव और धूमक-उपचार भी किया जाता है।

प्रशिक्षण-असंतोष का माध्यम

निगम के केंद्रीय प्रशिक्षण-संस्थान में विभिन्न स्तरों पर प्रबंधकों के कई पाठ्य-क्रम आयोजित किये जाते हैं। संगठन में व्यवस्थित प्रबंध-विकास कार्यक्रम आरम्भ करने के लिए काफी प्रयास किये गये हैं, किंतु सीधी नियुक्तियों द्वारा लिये गये युवा कर्मचारियों के साथ पदोन्नति की नीतियों के बारे में भेदभाव बरते जाने के आरोप भी लगाये गये हैं। कहा जाता है कि निगम में खाद्य-विभाग से आये कर्मचारी ही ऊंचे पदों पर अधिकांशतः छाये हुए हैं।

वित्त : भ्रष्टाचार का इतिहास

अनेक समाचार-पत्रों में इस संस्था की कार्य-प्रणाली पर समाचार छपे हैं। संसद में भी आलोचना हुई। १९७१-७२ में भारतीय खाद्य निगम के कार्य की समीक्षा करने वाली समिति की रिपोर्ट के अनुसार धन के दुरुपयोग तथा धोखे के कई बड़े मामले पकड़े गये हैं, जिनका जोड़ केवल १९६८ से ७० तक चालीस लाख रुपये से भी ऊपर बैठता है। निगम के कर्मचारी

फरीदाबाद में मक्का की मिल
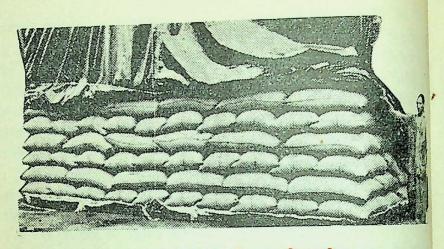
अनाज की बोरियों के संग्रह का आधुनिक तरीका

संघ ने भूतपूर्व अध्यक्ष श्री इकबाल सिंह पर करोड़ों रुपयों के हेर-फेर के आरोप लगाये हैं, जिनकी जांच चल रही है और वे अपने पद से हट गये हैं। उन पर लगाये गये मुख्य आरोप ये हैं—सरसों के तेल की खरीद में घोटाला (जिसमें निगम को छह लाख का घाटा हुआ); हरियाणा पंजाब में चने की खरीद में दो करोड़ रुपये का गोलमाल; उत्तरप्रदेश में चीनी की खरीद में धांधली; असम को सड़क से भेजे खाद्यान्न में गड़बड़ी; दाल और लकड़ी की खरीद में धांधली; मक्का की बिक्री में लाखों की हानि तथा व्यर्थ के दौरों में धन का अपव्यय। इनके अलावा यहां के कर्मचारियों में भी पर्याप्त असंतोष है।

भारतीय खाद्य निगम के प्रबंध-निदेशक तथा कार्यकारी अध्यक्ष श्री जे. ए. दवे से भेंट के समय मैंने प्रश्न किया—

देश के सामने उपस्थित खाद्या समस्या के सम्बंध में आपके क्या विचार है

उन्होंने कहा, "एक दो महीने की स स्या है। पंजाब और उत्तरप्रदेश से अ मई में लाखों टन अनाज आ जाने समस्या सुलझ जाएगी। खाद्य निगम दिशा में महत्त्व का कार्य कर रहा है अनाज के मूल्य-स्तर को बनाये रखने भी और संग्रहण के कार्य में भी। पि वर्षों उसने लाखों टन अतिरिक्त अनाज संग्रह न किया होता तो देश की हा बहुत बुरी हो जाती। निगम गेहूं, चा तथा मोटे अनाज को निश्चित भावों खरीदकर संग्रह और आवश्यकतानु वितरण करता है। इससे व्यापारियों मुनाफाखोरी और भावों को निजी हि में गिराने-बढ़ाने की प्रवृत्ति पर पाया जाता है।"

समिति की रिपोर्ट के अनुसार निगम में अनेक अनियमितताएं पायी गयी हैं। लाखों रुपये के घोटाले पकड़े गये हैं। इस ओर आपका सतर्कता-विभाग कितना सक्रिय है ?

श्री दवे ने उत्तर दिया, "समाज की जिन कमियों से अन्य विभाग तथा संस्थाएं ग्रसित हैं, उनसे हम भी सर्वथा मुक्त नहीं हैं फिर भी अनियमितताओं को रोकने की कोशिश की जाती है। दोषी व्यक्तियों को अपदस्थ किया जाता है। हर एक अधिकारी के पीछे एक-एक निरीक्षक लगाया जाए—यह तो सम्भव नहीं। वैसे विशेष जांच होती रहती है। उड़न-दस्ते भी हैं। जहां कहीं शिकायत मिलती है तुरंत कार्यवाही की जाती है।"

निगम की मुख्य उपलब्धियां क्या रही हैं ?

"सफाई और सुखाई की चलनशील मशीनें लायी गयी हैं, जिनसे खाद्यान्न को साफ और सुरक्षित रखा जा सकता है। बंगला देश के विस्थापितों के लिए निगम ने गेहूं, चावल, दालें, माचिसें आदि आवश्यक वस्तुएं उपलब्ध कर अपनी कार्यकुशलता दिखायी है। बंगला देश को आठ लाख टन से भी ऊपर की जरूरी वस्तुएं निगम ने भेजी हैं।"

अब देखना यह है कि थोक व्यापार के महान कार्य को यह निगम किस प्रकार निभाता है, जिस पर अब समूचे देश का भरण-पोषण निर्भर होने जा रहा है। ●

ज्ञान-गंगा

अकीर्ति विनयोहन्ति हन्त्यनर्थं पराक्रमः।
हन्ति नित्यं क्षमा क्रोधं, आचारो हन्त्य-लक्षणम् ।। (विदुरनीति)

—विनम्रता अपयश का नाश करती है, पराक्रम अनर्थ को दूर करता है। क्षमाशीलता सदा ही क्रोध का नाश करती है और सदाचार कुलक्षण का अंत कर देता है।

वकः किं स्तूयसे राम ! येनाहं निष्कुली कृताः
सहचारी विजानाति चरित्रं सहवासिनाम् ।।
(अध्यात्मरामायण)

—रामचंद्रजी ! आप बगुले की प्रशंसा कर रहे हैं ! उसने हमारे कुल-के-कुल नष्ट कर दिये हैं। पड़ोसियों के चरित्र को तो पड़ोसी ही अच्छी तरह जानता है।

यत्र विद्वज्जनो नास्ति श्लाघ्यस्तत्राल्प धीरपि।
निरस्तपादपेदेशे एरंडोपि द्रुमायते ।।
(हितोपदेश)

—जहां बुद्धिमान नहीं होता वहां थोड़े पढ़े हुए की भी बड़ाई हो जाती है। जिस देश में पेड़ नहीं होता वहां एरंड का पेड़ ही वृक्ष गिना जाता है।

वज्रादपि कठोराणि मृदूनि कुसुमादपि।
लोकोत्तराणां चेतांसि को नु विज्ञातुमर्हति ।।
(उत्तररामचरित)

— लोकोत्तर (विशेषगुणसम्पन्न) व्यक्तियों के वज्र से भी कठोर और फूल से भी मृदु चित्त को जानने में कौन समर्थ है ? अर्थात् कोई नहीं।

—ब्रह्मदत्त शर्मा

समय की पूंछ !

इनके ग्राम्य अंचल में बसने के कारण मुझे भी ग्रामवासिनी बनना पड़ा है, अतः समस्त शहरी सुख-सुविधाओं से दूर, घर की सफाई करते चूल्हा लीपते-पोतते, लकड़ियों को फूंकते, कपड़े धोते और न जाने कितने अनपेक्षित कार्यों के साथ अपने नन्हे-मुन्ने की अनगिनत फरमाइशों को जल्दी-जल्दी पूरा करते हुए सोचती हूं कि आज कुछ-न-कुछ अवश्य लिखूंगी। लेकिन हाय रे गतिवान्! भागते-दौड़ते तुम्हारी (समय की) थोड़ी-सी पूंछ ही पकड़ में आ पाती है।

यही सब करते-धरते विवाह को तीसरा वर्ष सम्पूर्ण होने को आया। पढ़ाई लिखाई का सिलसिला न जुड़ते देख आत्म-संतोष के लिए गांव के बच्चों को पढ़ाना प्रारम्भ किया है इसी जुलाई से। पिछले महीने से रविवार को ग्रामीण महिलाओं की गोष्ठी भी होने लगी है। गांव की ठकुरानियां मेरे कहने पर आती हैं, मेरी बात सुनती और अपने घरों में जाकर कहती हैं, "बींदणी बात तो ज्ञान की करे छे!" और दूसरे दिन फिर घर के पिछ वाड़े उनकी 'चें-चें—'में-में' सुनायी पड़ती है—चिकने घड़े पर पानी डालो औ साफ। धैर्य साथ छोड़ने लगता है लेकिन ग्रामीण बालकों का स्नेह व उनका सुवरत रूप आकर मेरा आंचल थाम लेते हैं।

जब भी मैं अपने चूल्हे चौके में उच्चशिक्षा की सार्थकता खोजने लगती हूं तो गांव के बच्चों की 'भाभी सा नमस्ते' की पुकार सम्मिलित स्वर में मानो मुझे मेरी शिक्षा व मेरे कार्य की सार्थकता व गुरुता को समझा जाती है एवं सारे अन्तर्द्वन्द व समस्याओं का अंत हो जाता है।

—डा. श्रद्धा शेखावत, ढाणी दौलतसिंह (राजस्थान)

गृहिणी जीवन की समस्याएं

मानसिक अशांति का घेरा

शहरों की आधुनिक जीवन की सुविधाओं से वंचित मैं एक गांव में रहती हूं। यहां न तो मनोरंजन के साधन हैं और न बच्चों के लिए अच्छी शिक्षा की सुविधा। गांव छोड़कर जा भी नहीं सकती क्योंकि एक ऐसे सरकारी कर्मचारी की पत्नी हूं, जिनका काम ही गांवों में है

सोचती हूं कि कब हमारे गांव भी आधुनिक जीवन की सुविधाओं से पूर्ण हो जाएंगे ?

—रक्षा शर्मा, झाबड़ा, कोटा

ख्वाब तो - - - -

मेरी समस्या एकदम अनूठी है। मेरे बच्चे बड़े हो गये हैं। लड़कों की नौकरी लग गयी, लड़कियां विवाह करा घर-बार की हो गयीं। अब मैं हूं, और नहीं आ रहा है। लड़कियां कहती हैं, 'मां, तुम अपने मिलने-जुलने के दायरे बढ़ा लो।' इतने वर्ष तो इन चहारदीवारियों में गजार दिये। अब इन्हीं चहारदीवारों से घनिष्ट सम्बंध है? बाहर की दुनिया मेरे लिए एकदम अबूझी है। किसी गोष्ठी, सभा-सम्मेलन, महफिल-जलसों में मैं अजानी ही लगूंगी। हर एक आंख मेरी तरफ अपरिचय की शक्ल में उठेगी!

मंजु दवे

श्रद्धा शेखावत

प्रभा भटनागर

रक्षा शर्मा

मेरे साथ है अनंत आकाश तक फैला खालीपन। कभी हम समय तलाशते थे, पर अब वह हमारे चारों तरफ फैला पड़ा है। कभी घंटे मिनट थे, पर अब मिनट घंटे बन गये हैं।

बच्चे कहते हैं, 'मां, तुम थक गयी हो। आराम करो?' पर यह आराम का अजीर्ण रोग तो मेरी देह को माफिक

और यह अपरिचय की घुटन तो मुझ लील जाएगी। कहां जाऊं? क्या करूं? कैसे इस खालीपन के दर्द को भरूं?

बचपन से एक हसीन और दिलकश ख्वाब संजोया था—लिखने का, लेखिका बनने का। पर ख्वाब तो ख्वाब होते हैं, जरूरी तो नहीं कि पूरे हों ही!

—प्रभा भटनागर, मेरठ

सम्पादक के अभिवादन सहित

पति की यह कहने की आदत से कि 'बस जरा-सा यह कर दो' मुझे अत्यंत व्यस्त रहना पड़ता है। उनके तबादले के कारण पैंकिंग, हिसाब-किताब आदि की पूर्ण व्यवस्था मेरे हिस्से आ जाती है और अच्छी-खासी नौकरी एवं पद त्याग कर उनके साथ नयी जगह बसना पड़ता है। कहीं बड़े मकान में रहने की सुविधा प्राप्त होती है और किसी-किसी जगह छोटे-से कमरे में भी बसर करना पड़ता है।

मेरे पति खाने-पीने के मामले में बेहद शौकीन व्यक्ति हैं। जरा-सा भी रुचिकर भोजन न मिलने पर वे मेरी नाक में दम कर देते हैं। इसी कारण नौकरों की सुविधा प्राप्त होते हुए भी मुझे रसोई-घर का दायित्व स्वयं ही सम्भालना पड़ता है।

गृहस्थी की उलझनों से मुक्त होकर कभी-कभी कुछ लिखने की इच्छा होती है लेकिन जब वह रचना सम्पादक के 'अभिवादन व खेद सहित' वापस लौट आती है तब मन को अवश्य ठस लगती है। पर ये समस्याएं तो केवल नारी के जीवन की परीक्षाएं हैं। मेरे विचार में तो समस्याओं से जूझकर ही व्यक्ति कुछ उपलब्ध कर सकता है, उनसे भागकर नहीं।

—मंजु दवे, स्लापर, हिमाचलप्रदेश

अंतहीन समस्याएं

गृहिणी का वास्तविक जीवन सम स्याओं के बीच शुरू होता है औ अंत भी उसी घेरे में होता है। साधार सा आर्थिक कठिनाइयों से घिरा गृह परिवार—सास का वजन हो, पति तेवर हों, बच्चों की दिन-व-दिन बढ़ नयी-नयी मांगें हों।

पति पत्रकार हैं, पर उन्हें मिल है केवल तारीफ और कुछ अधिक मि तो धन्यवाद! किंतु इससे कहां काम चल है! बच्चे पढ़ रहे हैं बड़े होंगे तो रोजगार लगना पड़ेगा या नौक से चिपकाना होगा लड़की का बोझ अल है। लगता है, चारों ओ समस्याएं ही समस्या हैं। वस्तुत: जीवन स्व एक समस्या है—औ संघर्ष उसका हल। अकसर आंखों सामने बीती जिंदगी के दिन घूमने लगते हैं

इतने में बाहर से भीतर आते हु पति दिखते हैं। वे धीमे से कहते "लाजो, पैसे आज भी नहीं मिले। आ जैसा-तैसा चला लो . . . कल. . . कल—फिर कल, आने वाला कल. . कौन कह सकता है, वह भी समस्या से घिरा हुआ न हो?

—लाजवन्ती कृतराज, गोंदि

'मानस का हंस' : एक नयी दृष्टि

'मानस का हंस' अमृतलाल नागर का नवप्रकाशित वृहद उपन्यास है। इसका व्यापक कथाफलक, सघन आत्मसंघर्षात्मक क्षण, राजनीतिक-सामाजिक-धार्मिक परिवेश का सर्वांग चित्रण इस कृति को महाकाव्यात्मक उपन्यास की संज्ञा से अभिहित करता है। 'मानस का हंस' तुलसी का जीवनचरित है। जन-मानस में तुलसी के लिए धार्मिक संस्कार है। उनके प्रामाणिक जीवन-तथ्यों की ओर विद्वानों का ध्यान कम ही गया है। वेणीमाधव के 'मूल गोसाईं चरित' को लेखक ने प्रामाणिक सामग्री के रूप में ग्रहण किया है। वैसे तो तुलसी के जीवन से सम्बंधित अनेक किम्वदंतियां प्रचलित हैं, किंतु लेखक ने कृति के प्रसंगों को मनोविज्ञान की कसौटी पर कसकर अपनाया है। यही कारण है कि रामचरितमानस का रचयिता कोई दिव्य पुरुष नहीं, एक सामान्य मानव है। इस युवक में भक्ति के संस्कार तो हैं, किंतु सहज मानव-प्रकृति के अनुसार लौकिक आकर्षण उसे बार-बार विचलित कर देते हैं। महान साधक की भांति वह कामनाओं से मुक्त नहीं है। उसमें व्यक्ति की कमजोरियां हैं जिन्हें लेखक ने सहजता की कसौटी पर इतना कसा है कि कहीं-कहीं उसकी अति हो गयी है। वृद्धावस्था में रामचरितमानस की रचना के उपरांत, जबकि वे साधना के उच्च शिखर पर पहुंच गये हैं, रत्नावली के समक्ष उनमें कामनाओं की बिछलन दर्शाकर लेखक ने तुलसी-चरित को बहुत पीछे धकेल दिया है। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से उचित होते हुए भी प्रभावान्विति की दृष्टि से इसमें विक्षेप आ गया है।

उपन्यास का आरंभ नाटकीय है, जो अनेक कथासूत्रों के ऊंचे-नीचे तलों
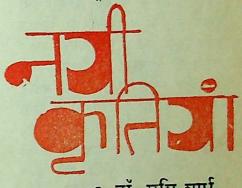
● डॉ. शशि शर्मा

पर विकसित हुआ तुलसीदास की मृत्यु के साथ समाप्त होता है। रत्नावली की मृत्यु पर तुलसीदास राजापुर आते हैं। वहां उनके बालसखा राजा आदि के वार्त्तालाप द्वारा उनके विगत जीवन की झांकियां मिलती हैं। लेखक ने वेणीमाधव को एक पात्र के रूप में प्रस्तुत किया है, जो वास्तव में 'गोसाईं चरित' का लेखक है। उपन्यास में यह पात्र तुलसी का शिष्य है, जो तुलसी जीवन के विभिन्न प्रसंगों का संग्रह करके एक प्रामाणिक जीवनी लिखना चाहता है। वस्तुतः इस पात्र

के द्वारा लेखक ने तुलसी-जीवन के बिखरे कथा-सूत्रों को एकत्रित किया है। उसके लिए 'फ्लैश बैक' पद्धति को अपनाया गया है, जिससे एक-दो स्थलों को छोड़कर उपन्यास में आद्योपांत प्रभावान्विति बनी रहती है।

उपन्यास में तुलसी के समसामयिक सामाजिक-धार्मिक-राजनीतिक परिवेश का विशद चित्रण मिलता है। विदेशी आक्रमणकारियों के अत्याचार, काशी-बनारस-मथुरा आदि में धार्मिक मतभेदों तथा समाज में फैली अव्यवस्था का खुलकर वर्णन किया गया है और उनका प्रभाव तुलसी की रचनाओं पर दिखाया गया है। अनेक स्थलों पर तुलसी का अंतर्द्वंद्व तथा इस अंतर्द्वंद्व में रत्नावली से उनके वार्त्तालाप बहुत नाटकीय बन पड़े हैं। तुलसी के समक्ष सभी पात्र दब से गये हैं। रत्नावली का चरित्र और उभर सकता था, किंतु इसका मुख्य कारण यही हो सकता है कि लेखक केवल उन्हीं प्रसंगों और पात्रों को उतनी ही देर टिकने देता है, जितनी देर वे तुलसी के चरित्र-निर्माण में सहयोग देते हैं। कुल मिलाकर पाठकों, विशेषकर मानस-प्रेमियों, के लिए प्रस्तुत उपन्यास एक अविस्मरणीय उपलब्धि कही जा सकती है।

मानस का हंस : लेखक— अमृतलाल नागर : प्रकाशक—राजपाल एंड संस, कश्मीरी गेट, दिल्ली—६, पृष्ठ—४४१ : मूल्य—२५.०० रु.

दो कविता-संग्रह

हमारे सामने रामनिवास जाजू के दो कविता संग्रह हैं—'घटनाओं के मध्य में' और 'प्यास बढ़ती गयी'। 'घटनाओं के मध्य में' कवि ने विभिन्न मतवादों के शैवाल से मुक्त भुक्त क्षणों को युगसंदर्भ में उभारा है। समझौते की फिसलन पर पैर जमाता हुआ कवि संघर्ष की कंटीली झाड़ियों में उलझ गया है और उस उलझन की वेदना में उसने अस्तित्व की नींव रखी है। जीवन में सब कुछ चुक नहीं गया है, कुछ बचा भी है। 'तृप्ति का संसार क्यों लूं', 'मौत की प्रत्याशा में', 'निराला की मर्मवाणी' जैसे गीतों में जाजू ने उस बचे हुए को सहेजने का प्रयास किया है जिसमें कहीं-कहीं आदर्श के आवरण भारी हो गये हैं। इस प्रकार के भावों को कवि ने गीत रूप प्रदान किया है जिसमें छंद का विशेष ध्यान रखा है।

जाजू का दूसरा संग्रह 'प्यास बढ़ती गयी' सन् १९५१ से १९६७ तक के गीतों का संकलन है। इस अवधि में कवि की काव्य-चेतना विभिन्न रोमानी सोपानों का स्पर्श करती हुई यथार्थ के कठोर धरातल पर आस्था के बीज बोती है। कुल मिलाकर इन कविताओं में युग संदर्भ अपेक्षाकृत अधिक मुखरित हुए हैं। आधुनिक कविता के शिल्प की ओर विशेष अग्रसर न होकर कवि ने अपनी अनुभूतियों को सहज रूप प्रदान किया है।

बीसवीं शताब्दी का उपन्यास भोगे हुए जीवन का औचित्य मन की ग्रंथियों की परत-दर-परत खोलने में देखता है। उसका कथाफलक अपना बाह्य कलेवर समेटकर अंत:मुखी होता जा रहा है। काव्य परिवेश का आंतरिक परिवेश से तारतम्य खोजने के लिए वह मन के गहन स्तरों को झकझोरता है। इसके लिए उसमें अनेक भावगत और शिल्पगत प्रयोग हो रहे हैं।

दो उपन्यास

रमानाथ त्रिपाठी के 'एक थी तारा' और 'सपनों के टुकड़े' दोनों उपन्यास नारी के अंदर झांकने के प्रयास हैं। दोनो उपन्यासों का केंद्रबिंदु नारी है। 'एक थी तारा' अगर विवाहित परस्त्री-पुरुष का परस्पर आकर्षण है और उस आकर्षण के पीछे अपने प्रति उसे नारी के मनोभावों को जानने की उत्कट लालसा है तो 'सपनों के टुकड़े' में एक नारी के प्रति एक किशोर की स्वाभाविक उत्सुकता है। दोनों ही उपन्यासों में इस आकर्षण और उत्सुकता को मनोवैज्ञानिक धरातल पर कसने का प्रयास किया है। 'एक थी तारा' में तारा का चरित्र कुछ उभरा है। वह आधुनिक नारी के रूप में पुरुष के कंधे से कंधा मिलाकर चलने में गौरव का अनुभव करती है, किंतु घर की चारदीवारी में उसके नारी-संस्कार प्रबल हो जाते हैं। वह परपुरुष के साथ एकांत क्षणों से डरती है। मन के सूक्ष्म स्तरों पर चलने वाली कथा में अंतर्द्वंद्व का अभाव खटकता है।

इसके विपरीत 'सपनों के टुकड़े' अपेक्षाकृत सशक्त उपन्यास है। एकाधिक नारियों के सम्पर्क में आने वाले किशोर अन्नू के मन की उथल-पुथल में बढ़ता यह उपन्यास अधिक रोचक है। यद्यपि बीच-बीच में स्वतंत्रता आंदोलन के प्रसंग विस्तृत हो गये हैं तथापि अन्नू की चारित्रिक पृष्ठभूमि में इनका अपना महत्त्व है। प्रतिपादन की दृष्टि से भी यह एक सुगठित उपन्यास है।

घटनाओं के मध्य में— लेखक: रामनिवास जाजू; प्रकाशक: राजपाल एंड संस; कश्मीरी गेट, दिल्ली; पृष्ठ: १११; मूल्य: ६.०० रु.

प्यास बढ़ती गयी:—लेखक: रामनिवास जाजू; प्रकाशक: राजपाल एंड संस, दिल्ली; पृष्ठ: ८३, मूल्य ५.०० रु.

एक थी रीटा—लेखक: रमानाथ त्रिपाठी, प्रकाशक: भारतीय साहित्य सदन; पृष्ठ: १२३; मूल्य: ४.०० रु.

सपनों के टुकड़े—लेखक: रमानाथ त्रिपाठी; प्रकाशक: भारतीय साहित्य सदन; नयी दिल्ली पृष्ठ : १२५

• पंडित गोपेशकुमार ओझा

एक अप्रैल को चैत्र कृष्णा त्रयोदशी; सायंकाल प्रदोष। २ को स्नान, दान, श्राद्ध के लिए अमावस्या। ३ को विक्रम संवत २०२६ समाप्त होता है। ४ को नया संवत २०३० प्रारम्भ होता है; चैत्र शुक्ला प्रतिपद है। नवरात्र का प्रारम्भ इसी दिन है। ५ को मत्स्य-जयंती। ६ को गणेश-चतुर्थी, सौभाग्य सुंदरी व्रत, गण-गौरी-जन्म, मंगला गौरी-जन्म, श्री राम दमनकोत्सव। १५ को अनंग त्रयोदशी व्रत। १७ को व्रत, स्नान, दान आदि के लिए पूर्णिमा हनुमज्जयन्ती। १८ को अश्वत्थसेचन। इस दिन वैशाख मास प्रारम्भ होता है। इसी दिन कच्छपावतार हुआ था। २१ को गणेशचतुर्थी व्रत। २६ को काल अष्टमी; काल-भैरव-यात्रा। शीतलाष्टमी। २९ को वरूथिनी एकादशी व्रत। ३० को प्रदोष।

दोलोत्सव। ७ को श्री रामराज्य महोत्सव; मतांतर से मत्स्य-जयंती। ८ को श्री: पंचमी तथा पशुपतीश्वर-पूजन। १० को अशोक अष्टमी, जिसे दुर्गाष्टमी भी कहते हैं। इस दिन भगवती भवानी की उत्पत्ति हुई थी। रात्रि को महानिशा पूजा। ११ को रामनवमी व्रत। १२ को पारणा। १३ को कामदा एकादशी व्रत; श्री विष्णु दोलोत्सव। सायंकाल ७ बजकर ८ मिनट पर सूर्य मेष राशि में प्रवेश करेंगे। इसी दिन बैसाखी है। १४ को प्रदोष; श्री विष्णु

इस मास में जन्मे बालक

निम्नलिखित तारीखों और समयों में जिन बच्चों का जन्म है उनके जन्म से सत्ताइसवें दिन नक्षत्र-शांति कराना उचित है—

३ को दिन के ११-३० से ५ को प्रातः ७-४१ तक। ११ को रात्रि के ८—५१ से १३ को रात्रि के ८-३८ तक। २१ को प्रातः ७-५९ से २३ को दिन के २-१३ तक। ३० को रात्रि के ९-४१ के बाद।

२१ मार्च से २० अप्रैल तक

२० तक आपमें उत्साह का विशेष संचार रहेगा और यदि आप को वरिष्ठ अधिकारियों से कोई विशेष लाभ उठाना है तो उसमें आपको सफलता प्राप्त होगी। सामाजिक क्षेत्र में भी १७ तक आपकी लोकप्रियता की वृद्धि होगी और जिनके सम्पर्क में आप आएंगे वे आपके प्रति आकर्षित होंगे। यदि पिछले कुछ समय से, कोई धनागम रुका हुआ है तो उसकी प्राप्ति होगी। किसी छोटी यात्रा या पत्र-व्यवहार में सम्भवतः कुछ अड़चन हो, उसकी निवृत्ति १६ ता. के बाद होगी। शुभ ता. २, ६, ७, १२, १६, २४, २७।

२१ अप्रैल से २२ मई तक

मास के प्रारम्भिक तीन सप्ताहों में व्यय विशेष है। उसके बाद विशेष आय होना प्रारम्भ होगी। किसी नव-वयस्क व्यक्ति या व्यापार से लाभ होने का विशेष योग है। मास के उत्तरार्ध में किसी प्रभावशाली व्यक्ति से या साहस-पूर्वक किसी कार्य में प्रवृत्त होने में सफलता प्राप्त होगी। जिन को वैवाहिक सम्बंध स्थिर करना है, वे २० के बाद किसी से सम्पर्क स्थापित करें तो कृत-कार्य होंगे। संतान-सम्बंधी कार्यों के लिए यह मास अनुकूल है। विद्यार्थी-वर्ग तथा लेखकों को उनके परिश्रम का सत्फल प्राप्त होगा। शुभ ता. ३, ६, ७, ६, ११, १२ १६, २३, २८।

२३ मई से २१ जून तक

प्रथम दो सप्ताहों में आय का योग अधिक है। उसके बाद व्यय में अधिकता होगी। यात्रा, सम्बंधियों या संतान के कारण कुछ आकस्मिक व्यय के कारण उपस्थित होंगे, किंतु लाभ भी होता रहेगा। इस मास में कोई विशेष शुभ समाचार प्राप्त होने की आशा है, जिससे मन में हर्ष और उल्लास हो। २८ मई से २ जून तक जिनका जन्म है, उन्हें परिस्थिति के अनुसार पदोन्नति, धन-लाभ या संतान-सम्बंधी हर्ष का योग है। विदेश से सम्बंधित या विदेश-यात्रा के लिए प्रयत्नशील व्यक्तियों को सफलता मिलेगी। शुभ ता. १, ७, १०, २०, २४, २६, २६।

२२ जून से २२ जुलाई तक

प्रभाव-क्षेत्र में वृद्धि होगी। उच्च पदस्थ व्यक्ति आपके अनुकूल होंगे और यदि कोई पदोन्नति प्रत्याशित है तो उस सम्बंध में प्रयास सफल होंगे। ६-१० को कोई अनुकूल पत्र प्राप्त हो या शुभ समाचार प्राप्त हो, किंतु समस्त मास में उत्तम आय के साथ-साथ व्ययाधिक्य भी रहेगा। जो आपके शत्रु प्रत्यक्ष रूप से आपसे संघर्ष कर रहे थे वे अब गुप्त रूप से आपको हानि पहुंचाने में प्रयत्नशील होंगे। यह क्रम अग्रिम मास के प्रथम सप्ताह तक चलता रहेगा। भूमि या जायदाद से भी इस मास के उत्तरार्ध में लाभ हो। शभ ता. ३, ७, १०, १२, १६, १७, २०, २३, २६।

२३ जुलाई से २२ अगस्त तक

भाग्योदय के लिए प्रथम तीन सप्ताह उत्तम हैं। आपमें बल और स्फूर्ति का संचार होगा और जिस किसी भी कार्य में साहसपूर्वक प्रवृत्त होंगे उसमें सफल होंगे। विदेश से सम्बंधित व्यक्तियों को दूर देश से लाभ होगा और लम्बी यात्रा की सम्भावना है। धनागम का योग सामान्य से अधिक है किंतु सम्बंधियों से अनबन, मानसिक संघर्ष और तनाव भी रहेगा। दाम्पत्य सुख में कमी है, कुछ असौमनस्य हो या पति या पत्नी के स्वास्थ्य के सम्बंध में चिंता हो। यदि आप कोई नयी योजना बना रहे हैं, तो उसके कार्यान्वित होने में विलम्ब होगा। शुभ ता. ४,५, ६, ९, १२, २३, ३०।

२३ अगस्त से २२ सितम्बर तक

१६ ता. तक आप कई योजनाएं बनाएंगे और उनमें परिवर्तन करते रहेंगे। व्यस्त समय रहेगा। २० तक व्ययाधिक्य भी रहेगा। स्वास्थ्य सम्बंधी चिंता हो। अधीनस्थ कर्मचारियों से कुछ संघर्ष भी हो सकता है। कार्यभार तथा उत्तरदायित्व की वृद्धि हो। १८ के बाद भाग्योदय में वृद्धि तथा नवीन सम्पर्क से हर्ष हो ! जो योजनाएं आपने बनायी हैं, वे इस मास में पूर्ण नहीं होंगी। अग्रिम मास में वे आंशिक रूप से सफल होंगी किंतु इस सफलता के लिए आपको परिश्रम और संघर्ष भी करना पड़ेगा। शुभ ता. १, ७, १०, २०, २४, २६, २९।

२३ सितम्बर से २२ अक्तूबर तक

व्यवसाय और कार्यक्षेत्र में १९ ता. तक बाधाएं चलती रहेंगी। उसके बाद परिस्थिति अनुकूल हो जाएगी, किंतु सामाजिक दृष्टिकोण से प्रारम्भिक तीन सप्ताह हर्षप्रद होंगे। अविवाहित युवावर्ग के विवाह की योजना बनेगी; नवीन सम्पर्क स्थापित होंगे जो जीवन में मनोरंजन और हर्ष के कारण होंगे। मास के उत्तरार्ध में कई योजनाएं बनेंगी और बहुत व्यस्त समय व्यतीत होगा। ३० सितम्बर से ४ अक्तूबर तक जिनका जन्म है उन्हें कोई विशेष हर्ष का कारण होगा। संतान-सम्बंधी कुछ चिंता होगी, किंतु तत्सम्बंधी शुभ कार्य भी होंगे। शुभ ता. ३, ६, ७, ९, ११, १२, १९, २३, २८।

२३ अक्तूबर से २१ नवम्बर तक

आर्थिक दृष्टि से यह मास सामान्य है। मकान, जमीन जायदाद-सम्बंधी कार्यों की ओर विशेष ध्यान देना पड़ेगा और स्थावर सम्पत्ति के क्रय-विक्रय का यदि कोई प्रसंग चल रहा है तो वह सम्पन्न होगा। मास के उत्तरार्ध में कार्यक्षेत्र में कुछ कठिनाइयां होंगी, जो अग्रिम मास में दूर हो जाएंगी। १६ ता. तक विद्या या संतान-सम्बंधी कार्यों में विशेष संलग्न रहेंगे। १८ ता. के बाद व्यापारी-वर्ग की कोई नयी साझेदारी हो या साझे के कार्य में विशेष लाभ हो। आप किसी नवीन

व्यक्ति के सम्पर्क में आएंगे और आपका उसके प्रति विशेष आकर्षण होगा। शुभ ता. २, ६, ७, १२, १६, २४, २७।

२२ नवम्बर से २२ दिसम्बर तक

पत्र-व्यवहार तथा यात्राओं का सुयोग है। शुभ समाचार प्राप्त होंगे। लेखक-वर्ग को उनके लेखों से यश और प्रतिष्ठा-प्राप्ति का योग है। संतान-सम्बंधी हर्ष हो। पड़ोसियों या रिश्तेदारों से संघर्ष का अवसर उपस्थित हो तो उसे टाल जाइए। जो व्यक्ति नौकरी की तलाश में हैं उन्हें १८ के बाद सफलता की आशा। प्रथम तीन सप्ताहों में आय-योग उत्तम है। जीर्ण रोगियों को स्वास्थ्य की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए। शुभ ता. ३, ७, १२, १६, २१, २४, २६, ३०।

२३ दिसम्बर से २० जनवरी तक

इस मास में धनागम के साथ-साथ व्यय का भी विशेष योग है। सम्भवतः नवीन स्थावर सम्पत्ति, वाहन और योगोपकरणों पर विशेष व्यय हो। किसी को द्रव्य उधार न दें। मास के पूर्वार्ध में विशेष पत्र-व्यवहार होगा। सम्भवतः कोई यात्रा भी हो जिसमें सफलता की प्राप्ति होगी। शत्रु-पक्ष प्रबल रहेगा, परंतु परिणाम में आप विजयी होंगे। २० के बाद विद्या या संतान-सम्बंधी अपने प्रयासों में आप निश्चित ही कृतकार्य होंगे। १ से ३ जनवरी तक जिनका जन्म है उन्हें विशेष परिश्रम या अस्वास्थ्य की सम्भावना है। शुभ ता. ३, ५, १[illegible] २०, २६, २९।

२१ जनवरी से १९ फरवरी त[illegible]

बल, स्फूर्ति का विशेष संचार हो[illegible] और साहसपूर्वक जिस कार्य में प्रवृत्त हों उसमें कृतकार्य होंगे किंतु इसका ध्या[illegible] रखें कि स्वभाव में उग्रता न आने पावे। शुभ समाचार प्राप्त होंगे। १८ के बाद गृ[illegible] सम्बंधी कार्यों की ओर विशेष ध्यान दे[illegible] पड़ेगा और नवीन सुख, साधनों की उ[illegible] लब्धि होगी। स्वास्थ्य कुछ ढीला रहेगा। संतान-सम्बंधी चिंता होगी। २७ से ३[illegible] जनवरी तक जिनका जन्म है उन्हें विशे[illegible] हर्ष का कारण उपस्थित होगा। शुभ ता. ३, ५, १६, २०, २६, २९।

२० फरवरी से २० मार्च तक

इस मास में आय-योग सुंदर है परंतु व्यय-योग उससे भी प्रबल है। अक[illegible]स्मात अनेक कार्यों में धन-राशि व्यय होगी। विदेश-यात्रा के प्रत्याशियों को सम्भवतः लम्बी यात्रा करनी पड़े। १[illegible] ता. तक काफी आना-जाना रहेगा। नवीन स्फूर्ति होगी और अपनी बनायी हुई योजना को कार्यान्वित करने में सफलता होगी। लेखक-वर्ग को नवीन विचारों का उदय होगा, परंतु घरेलू बातों को लेकर मानसिक अशांति हो। २० के बाद धनागम उत्तम। शुभ ता. ३, ७, १२, १६, २१, २४, २६, ३०।

—९३ दरियागंज, दिल्ली-[illegible]

सुनीता भटनागर, लखनऊ : कई फिल्मों में देखा है कि कोई कार जब तेजी से चलती है तो उसके पहिए उलटी दिशा में घूमते दिखायी देते हैं। क्या कारण है?

इसका कारण है दृष्टि-भ्रम, जो इसलिए होता है कि फिल्म के प्रत्येक चित्र (फ्रेम) में समय का अंतराल होता है। एक सेकंड में २४ फ्रेम देखने के कारण हमें फिल्म 'चलती हुई' दिखायी देती है। इसलिए पहिये के चित्रों के बीच समय का एक अंतराल रहता है, लेकिन चलते हुए पहिये उस अंतराल को तेजी से पार कर लेते हैं और हमें यह भ्रम होने लगता है कि पहिये उलटे चल रहे हैं। प्रस्तुत चित्र से यह बात स्पष्ट हो जाएगी। यदि हम अपनी आंखों से पहिये को चलता हुआ देखें तो पहले कालम वाली स्थिति होगी। इस स्थिति में समय के एक अंतराल में पहिया पूरा चक्कर नहीं लगाता, बल्कि धीरे-धीरे सही दिशा में घूमता हुआ दिखायी देता है। लेकिन यदि फिल्म के एक फ्रेम और दूसरे फ्रेम का अंतराल इतना हो कि पहिया उतनी देर में पूरा चक्कर लगा ले तो आप चक्कर में पड़ जाएंगी कि कार तो चल रही है लेकिन पहिये स्थिर हैं। ऐसा इसलिए होगा कि प्रत्येक फ्रेम में पहिया पूरा चक्कर लगाकर पहले वाली स्थिति में ही दिखायी देगा। यह स्थिति दूसरे कालम में स्पष्ट है। अब आप अपनी समस्या का समाधान तीसरे कालम में देखिए। मान लीजिए कि पहिया समय के उस अंतराल में पूरा चक्कर नहीं लगा पाता। ऐसे में यह होगा कि फिल्म के प्रत्येक फ्रेम में पहिये की स्थिति पहले फ्रेम की स्थिति से पीछे की दिखायी देगी, जबकि वास्तव में पहिया सीधा ही घूम रहा होगा।
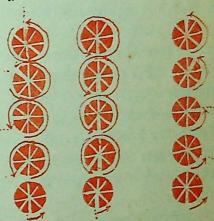
प्रेमेन्द्र शर्मा, रांची : एक पुस्तक में पढ़ा था कि घास के विशाल मैदान (प्रेयरी) में लगी हुई आग की लपटों को अपनी ओर आते देखकर यात्रियों ने अपनी तरफ से भी घास में आग लगा दी और उस आग की लपटें सामने से आती हुई लपटों को खा गयीं। यद्यपि हवा का रुख यात्रियों

की ओर ही था, फिर भी उनके द्वारा लगायी हुई आग उनकी ओर न आकर विपरीत दिशा में गयी। क्या यह सम्भव है? यदि हां, तो इसका वैज्ञानिक कारण?

जी हां, यह सम्भव है और इसका कारण यह है कि आग की गरमी से आस-पास की हवा गरम होकर हलकी हो जाती है और ऊपर उठने लगती है। उसका स्थान लेने के लिए मैदान की ठंडी हवा दौड़ पड़ती है और इस प्रकार सामने से आती हुई लपटों के पास एक प्रतिकूल वायु-धारा बहने लगती है, जो दूसरी ओर से लगायी गयी आग को पहले वाली आग की दिशा में ले जाती है। जहां तक लपटों के द्वारा लपटों को खा जाने का सवाल है, ऐसा इसलिए होता है कि दोनों ओर की आग घास को जलाती हुई चली जाती है और जब दोनों ओर की लपटें मिल जाती हैं तो न उधर की आग को आगे बढ़ने के लिए ईंधन मिलता है और न इधर की आग को। इस प्रकार आग वहीं बुझ जाती है। इसे आप आग से आग बुझाना भी कह सकते हैं।

शचीरानी, कानपुर : क्ष-किरणों (एक्स-रे) की उत्पत्ति कैसे होती है?

क्ष-किरणों की उत्पत्ति तब होती है जब निगेटिव इलेक्ट्रोड से उद्भूत इलेक्ट्रोन पाजिटिव इलेक्ट्रोड से टकराते हैं। एक्स-रे मशीन में इस टकराव-बिंदु को टार्गेट (लक्ष्य) कहते हैं। होता यह है कि लक्ष्य पर स्थित अणुओं के इलेक्ट्रोन अपने गृह से
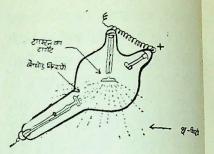
एक वार उन्मूलित होकर फिर अपनी जगह लौट आते हैं। उनके इस निर्गमन और प्रत्यागमन की गति अत्यंत तीव्र होती है। ये १०,००,००,००,००,००० साइकल प्रति-सेकंड की एक विद्युत-चुंबकीय तरंग को प्रस्रवित करते हुए चलते हैं। ऊपर दिये गये चित्र से यह प्रक्रिया स्पष्ट हो जाएगी। यह एक्स-रे ट्यूब का चित्र है :

प्रभातकुमार अग्रवाल, मेरठ। 'मिथ' और 'माइथोलोजी' से क्या अभिप्राय है और हिंदी में इन्हें क्या कहते हैं?

हिंदी में 'मिथ' के लिए मिथक, पौराणिक कथा, पुराणकथा, देवकथा, पुराकथा आदि शब्द प्रचलित हैं और 'मिथोलोजी' (सही उच्चारण मिथोलोजी है, न कि माइथोलोजी) के लिए मिथक-शास्त्र, पुराणविद्या, पुराण-समूह, पौराणिकी आदि। 'मिथ' उस कथा या परम्परा को कहते हैं, जो किसी प्राकृतिक या ऐतिहासिक घटना के लिए, देवताओं के लिए या महान पुरुषों के लिए लोकविश्वास के आधार पर प्रचलित हो जाती है। इसका कोई ऐतिहासिक या वैज्ञानिक आधार नहीं होता। 'मिथोलोजी' इस प्रकार की

कथाओं या पारंपरिक अनुश्रुतियों के समूह को कहते हैं।

सलाम हैदर, अहमदाबाद : भारत में इस समय जो सिक्के चल रहे हैं, उनकी संख्या प्रति-सिक्का (यानी एक पैसे से लेकर गांधीजी के दस रुपयों के सिक्कों तक) कितनी है ?

संख्याएं तो बहुत लम्बी-लम्बी हो जाएंगी, इसलिए हम सुविधा के लिए यह बताये देते हैं कि प्रचलित सिक्के कितने रुपयों के मूल्य के हैं। दिसंबर, १९७० तक के आंकड़ों के अनुसार एक पैसे के सिक्के ५४६.०६ लाख रुपयों के, दो पैसे के सिक्के ६७५.९९ लाख रुपयों के, तीन पैसे के सिक्के ३२८.९७ लाख रुपयों के, पांच पैसे के सिक्के १२७३.३४ लाख रुपयों के, दस पैसे के सिक्के २०००.०३ लाख रुपयों के, बीस पैसे के सिक्के ३४७.८१ लाख रुपयों के, पच्चीस पैसे के सिक्के १७९९.९५ लाख रुपयों के, पचास पैसे के सिक्के १८६८.३० लाख रुपयों के और रुपये के सिक्के (जिनमें महात्मा गांधी के दस रुपये वाले और एफ.ए.ओ. वाले दस रुपये के सिक्के भी शामिल हैं) ४३८.१६ लाख रुपयों के मूल्य के हैं। संख्याएं गुणा करके आप स्वयं ज्ञात कर लीजिए।

नरेशप्रसाद 'मधुर', विदिशा : कहा जाता है कि कर्म ही जीवन है, फिर मनुष्य कर्म से विमुख होकर निष्क्रिय रहना क्यों चाहता है? आलस्य, सुस्ती, काम से जी चुराने आदि का अर्थ तो उपर्युक्त सूत्र के अनुसार जीवन से विमुख होना हुआ ? लेकिन प्रकृति का नियम है कि जीव अपने जीवन से विमुख नहीं होता बल्कि उसकी रक्षा के लिए संघर्ष करता है। तब सर्वश्रेष्ठ प्राणी मनुष्य में विमुखता का मनोवैज्ञानिक कारण क्या हो सकता है ?

यह सत्य है कि कर्म ही जीवन है क्योंकि कर्म से ही मनुष्य प्रकृति का तथा अपना रूपांतरण करता है, लेकिन ऐसा वह तभी कर सकता है जब कि कर्म की प्रक्रिया तथा श्रम के उत्पाद्य पर उसका नियंत्रण रहे। जब कर्म की प्रक्रिया तथा श्रमोत्पाद्य पर नियंत्रण खो जाता है तब कर्म और कर्ता (मनुष्य) के बीच 'परायापन' आ जाता है और मनुष्य पराधीन होकर केवल दूसरों के लिए कार्य करता है, जिसमें न तो उसे कार्य की प्रक्रिया में प्रेरणा, स्फूर्ति, आनंद और संतोष ही मिलता है और न कार्य के परिणामस्वरूप उत्पादित वस्तु पर उसका अधिकार होता है। ऐसा श्रम मनुष्य को कोई तृप्ति नहीं देता, इसलिए वह श्रम से घबराने लगता है।

चलते-चलते एक प्रश्न और...

कुमारी क. ख. ग. : सर्वश्रेष्ठ वक्ता किसे कहेंगे ?

महिलाओं की दृष्टि से उसे जो चुपचाप उनकी बातें सुनता रहे।

• बिंदु भास्कर

सार-संक्षेप

पीले आकाश की दुलहन

ट्रेन ऐसी तेज गति से भागी जा रही थी कि खिड़की से बाहर देखने पर मालूम पड़ता था, टैक्सास की समतल भूमि पूर्व की ओर वहती चली जा रही हो।

इसी ट्रेन के एक प्रथम श्रेणी के डब्बे में सेंट एंटोनियो से एक नव-विवाहित दम्पती सवार हुए थे। सूरज की तेज किरणों और आंधी-तूफान में बहुत वक्त गुजारने के कारण पुरुष का चेहरा स्थायी रूप से लाल पड़ गया था। वह अपने दोनों घुटनों पर इस तरह हाथ रखे बैठा था जैसे किसी नाई की दूकान में बाल बनवाने का इंतजार कर रहा हो। कभी-कभी वह सहयात्रियों

पिछली शताब्दी के श्रेष्ठतम कथाकारों में स्टीफेन क्रेन को केवल अट्ठाइस वर्ष की आयु मिली थी, लेकिन इसी छोटी अवधि में उन्होंने एक नयी शैली को जन्म दिया, जिसे यथार्थवाद और प्रभाववाद का समुच्चय कहा जा सकता है। इस अमरीकी कथाकार की शैली और कला का बीसवीं सदी के जिन कथाकारों पर व्यापक प्रभाव पड़ा उनमें अग्रगण्य थे—अर्नेस्ट हेमिंग्वे। 'पीले आकाश की दुलहन' क्रेन की एक अत्यंत सशक्त रचना है जिसका संक्षिप्त रूपांतर यहां प्रस्तुत कर रहे हैं —भालचंद्र ओझा।

की ओर उड़ती नजरों से देख लेता था। उसमें नव-विवाहित की गोपन लज्जा प्रतीत होती थी।

दुलहन देखने में न तो सुंदर थी और न उसकी उमर ही कम थी। वह अभी भी शादी के ही वस्त्र पहने थी। ये वस्त्र शायद उसे बहुत आरामदेह नहीं लग रहे थे लेकिन उन्हें पहनने में उसे विशिष्टता का बोध हो रहा था, और अजनबियों की कौतूहल और प्रशंसाभरी नजरों से वह एक गर्वपूर्ण संतोष और परिपूर्णता का अनुभव कर रही थी।

दम्पती बहुत प्रसन्न दीख रहे थे। पुरुष ने मुसकराते हुए पूछा, "पहले दर्जे में पहले कभी सफर किया था ?"

"नऽ, कभी नहीं। कितना अच्छा लगता है! है न यही बात ?"

"कुछ ही देर बाद हम डाइनिंग कार में खाने चलेंगे। देखना, कैसा बेहतरीन खाना बनता है यहां! एक आदमी के लिए एक डालर!"

"एक डालर ? बहुत ज्यादा कीमत है, मेरा मतलब हम लोगों के लिए; है न जैक ?"

"इस यात्रा के लिए यह कुछ नहीं डार्लिंग! शादी के बाद यह हमारी पहली यात्रा है। यह तो सोचो।"

बाद में पुरुष ने अपनी नव-विवाहिता पत्नी को ट्रेनों के बारे में समझाया, "देखो, टैक्सास के एक छोर से दूसरे छोर तक की लम्बाई हजार मील से कम नहीं

और यह गाड़ी इतना लम्बा रास्ता तय करती है । रास्ते में केवल चार जगह रुकती है—बस ।"

नववधू मुग्ध नजरों से नये-नये बने पहले दर्जे के उस कम्पार्टमेंट की खूबसूरती देख रही थी । कम्पार्टमेंट की सजावट नव-दम्पती के मन में आज सवेरे सेंट एंटोनियो में हुई उनकी शादी की भव्य स्मृति जगा देती थी, लेकिन पुरुष के चेहरे पर उमंग की जो चमक थी, वह कम्पार्टमेंट में खड़े नीग्रो कुली को अत्यंत हास्यास्पद लगती थी । यह कुली दूर खड़ा कभी-कभी इन दोनों की ओर कौतुकपूर्ण मुसकराहट फेंक देता था । कई मौकों पर उसने इन दोनों को कुछ ऐसे निर्दोष लगने वाले ढंग से मजाक का पात्र बनाया था कि इन बेचारों की समझ में ही नहीं आया कि हमारी खिल्ली उड़ायी गयी है । तब वह बेहद बनावटी आदरपूर्ण ढंग से इनसे व्यवहार करता था । ऐसा व्यवहार अत्यंत विशिष्ट व्यक्तियों के साथ किये जाने पर स्वाभाविक लगता, लेकिन बेचारे दम्पती इसके लिए उसे कुछ कह भी तो नहीं सकते थे । अपनी खुशियों में डूबे दम्पती यात्रियों की कौतुकभरी नजरों का व्यंग्य भी नहीं समझ पा रहे थे ।

पुरुष ने कोमलता से अपनी पत्नी की आंखों में आंखें डालकर कहा, "हम लोगों को तीन बजकर बयालीस मिनट पर 'पीला आकाश' पहुंच जाना चाहिए ।"

जैसे उसे कोई नयी आश्चर्यजनक सुखद खबर मिली हो, नववधू ने आं[illegible] विस्फारित करके कहा, "अच्छा [illegible]" उसने अपनी जेब से चांदी की एक छो[illegible] सी घड़ी निकाली और ध्यान से [illegible] देखने लगी । पति के चेहरे पर चमक [illegible] गयी । उसने सगर्व अपनी पत्नी को सू[illegible] किया, "मैंने इसे सेंट एंटोनियो में [illegible] एक दोस्त से खरीदा था ।"

वधू ने पति की ओर बड़े कौतुक[illegible] आंखें झमकाते हुए देखकर कहा, "[illegible] तो बारह बजकर सत्रह मिनट हुए हैं[illegible]" एक सहयात्री ने, जो नव-दम्पती के [illegible] तमाशे को देख रहा था, कम्पार्टमेंट [illegible] सामने के शीशे में देखते हुए आंखें म[illegible] कायीं ।

कुछ देर बाद दम्पती डाइनिंग कार [illegible] गये । नीग्रो वेटरों को इनके बारे में पह[illegible] ही सूचना मिल चुकी थी । वे रास्ते के दो[illegible] ओर कतारबद्ध होकर उन्हें दिलचस्[illegible] से देख रहे थे । जब तक वे डाइनिंग कार [illegible] दाखिल होकर एक मेज के गिर्द बैठ [illegible] गये वे उनकी ओर देखते ही रहे । जो वेट[illegible] उनकी मेज पर था, वह उन्हें खाना खिला[illegible] में विशेष दिलचस्पी दिखा रहा था [illegible] उसके चेहरे पर पिता-तुल्य स्नेह था औ[illegible] वह उनके आदेशों का कुछ ऐसे अंदाज [illegible] पालन कर रहा था, जैसे जंगल में भट[illegible] हुए दो नादान बच्चों को कोई अनुभ[illegible] वन-रक्षक सही राह बता रहा हो । दम्पत[illegible] उसके इस अयाचित व्यवहार को ठीक[illegible] ठीक समझ नहीं पा रहे थे लेकिन खा[illegible]

खत्म होने पर उन्हें लगा कि जैसे उन्हें किसी अनजान बोझ से छुटकारा मिल गया हो।

एक लम्बे मोड़ पर तेजी से भागती ट्रेन की बायीं खिड़की से, कुहरे के पार रायो ग्रैंडे नगर की धीरे-धीरे उभरती हुई रूप-रेखा साफ-साफ दीख पड़ रही थी और उसके बाद ही 'पीले आकाश' का स्टेशन था। जैसे-जैसे ट्रेन पीले आकाश की ओर बढ़ रही थी, पति के मन के

पोटर ने जो काम किया था, वह उसके मन पर भारी बोझ की तरह जमता जा रहा था। पीले आकाश का लोकप्रिय, निर्भीक, सम्मानित नगर-मार्शल जैक पोटर, सेंट ऐंटोनियो में एक ऐसी लड़की से मिलने गया था, जिसे अपनी समझ से वह प्यार करता था और वहां पहुंचकर पीले आकाश के किसी भी व्यक्ति से सलाह लिये बिना उसने उस लड़की

अंदर पड़ी कोई गांठ उसे बेचैन बना रही थी। कभी-कभी तो वह किसी विचार में इस तरह खो जाता था कि पत्नी की स्नेह-सनी आग्रहपूर्ण बातों को भी नहीं सुन पाता था।

सच्ची बात तो यह थी कि जैक

से शादी कर ली थी। और अब, वह अपनी पत्नी के साथ पीले आकाश लौट रहा था। वहां किसी को इस तथ्य का जरा भी बोध नहीं था कि नगर मार्शल जैक पोटर अब विवाहित है और सपत्नीक वापस आ रहा है।

यह नहीं कि पीले आकाश के लोग

सामान्य रीति-रिवाज के अनुसार विवाह नहीं करते हों जैसे कि जैक ने किया था, लेकिन जैक की दृष्टि में अपने परिचितों और मित्रों को सूचित किये बिना विवाह कर लेना जैसे अपराध की सीमा तक पहुंचा हुआ कोई अनुचित काम हो। उसे लग रहा था, जैसे उसने कोई असाधारण अपराध किया हो। सेंट एंटोनियो में जब वह इस लड़की से, जो अब उसकी पत्नी थी, मिला तो भावना से अभिभूत होकर बिना कुछ सोचे-समझे उसने उससे विवाह कर लिया था। लेकिन सेंट एंटोनियो में वह अंधकार से सुरक्षित किसी व्यक्ति जैसा था। उस दूर-दराज के नगर में किसी भी मित्रता के कर्तव्य को भुला बैठना उसके लिए बड़ा सहज था। लेकिन अब तो कुछ ही समय बाद उसे पीले आकाश की रोशनी में प्रवेश करना होगा, जहां मित्रों के आक्रोश, उलाहने और तानों से उसकी रक्षा करने वाला कोई अंधेरा न होगा। तब ?

उसे अच्छी तरह मालूम था कि उसकी शादी उसके नगर पीले आकाश के लिए एक महत्त्वपूर्ण घटना थी। नगर के नये बने भव्य होटल के जल जाने से उसकी शादी कोई कम महत्त्व नहीं रखती थी। उहुंक, उसके दोस्त उसे कभी माफ नहीं करेंगे! शादी से पहले उसके मन में हुआ था कि वह तार द्वारा इस सम्बंध में अपने मित्रों को सूचित कर दे, पर इस सम्बंध में न जाने एक कैसी कायरता ने उसे घेर लिया था! ऐसा करने से उसे भय लगा था। और अब ट्रेन उसे पीले आकाश लिये जा रही थी, जहां उसे अचरज, ताने-तिश्ने और उलाहनों से निबटना पड़ेगा। उसने खिड़की से बाहर देखा, भारी कुहरे के बीच से पीले आकाश की रूप-रेखा स्पष्ट से स्पष्टतर होती जा रही थी।

पीले आकाश में एक बैंड पार्टी थी। नव-विवाहित नगर मार्शल जैक को अचानक उसका खयाल हो आया। यदि नगर के लोगों को मालूम होता कि उनका नगर-मार्शल शादी करके नव-वधू के साथ लौट रहा है तो निश्चित था कि स्टेशन पर बैंड पार्टी सहित उत्साहित जनता की भीड़ उनका स्वागत करने के लिए उपस्थित रहती। जैक के ओठों पर एक फीकी मुसकान खेल गयी। उसने सोचा कि वह किसी तरह लोगों की नजरें बचाकर चुपचाप घर पहुंच जाएगा और तब तक घर से बाहर नहीं निकलेगा जब तक कि लोगों में उसकी शादी की जानकारी से उत्पन्न उत्साह धीमा न पड़ जाएगा।

नववधू ने जैक को विचार-मग्न देखकर पूछा, "क्या बात है जैक? क्या सोच रहे हो?"

जैक ने स्वर में इत्मीनान लाने की कोशिश करते हुए हंसकर कहा, "कुछ तो नहीं। ऐसे ही पीले आकाश के बारे में सोच रहा था। अब तो पहुंच ही चले।"

भविष्य का खयाल कर वधू का चेहरा लज्जा से लाल हो उठा। उसने धीरे से कहा, "हां!"

किसी पारस्परिक अपराध-भावना से दोनों के मन आक्रांत थे और सम्भवतः इसी कारण दोनों के मन में एक दूसरे के प्रति स्वाभाविक से कुछ अधिक कोमल भावना भर उठी थी। जैक बातचीत के बीच में जब कभी हंसता था तो उसके पीछे छिपी हुई घबराहट वधू के अलावा कोई भी भांप सकता था। वधू तो स्वयं इस तरह लज्जा से लाल बनी हुई थी, जैसे वही उसका स्वाभाविक रंग हो।

पीले आकाश की कोमल भावनाओं के साथ विश्वासघात करने वाला जैक पोटर खिड़की के बाहर तेजी से भागते

भूखंड को देख रहा था। "पीला आकाश अब आ ही पहुंचा," उसने ऐसे स्वर में कहा, जैसे किसी दुखद घटना की सूचना दे रहा हो।

कुछ ही क्षण बाद नीग्रो कुली आ पहुंचा। "सूट साफ कर दूं सा'ब ?" उसने पूछा और उत्तर की प्रतीक्षा किये बगैर जेब से ब्रश निकालकर जैक के कपड़ों पर पड़ी धूल बड़ी सफाई से झाड़ने लगा।

गाड़ी की गति धीमी पड़ने लगी। कुछ ही सेकंड बाद गाड़ी पीला आकाश स्टेशन पर आ लगी।

कुली ने झटपट सामान प्लेटफार्म पर उतार दिया लेकिन जैक अब भी गाड़ी के अंदर ही था। वधू ने उसकी ओर प्रश्न-सूचक आंखों से देखा। जैक ने उसकी आंखों का प्रश्न पढ़ा, सशंकित चित्त से खिड़की से सिर निकालकर प्लेटफार्म को देखा और संतोष की सांस ली। प्लेटफार्म खाली था। "आओ चलें," उसने वधू का हाथ पकड़कर कहा और प्लेटफार्म से सामान उठाकर तेजी से स्टेशन से बाहर निकल आया।

★

कैलीफोर्निया एक्सप्रेस इक्कीस मिनट बाद पीला आकाश स्टेशन पहुंचने वाली थी। तब छह व्यक्ति 'जेंटिलमेन सैलून' में बैठे थे। उनमें एक ड्रम बजाने वाला था जो बहुत ज्यादा और बहुत तेजी से बोलता था। तीन टैक्सास–निवासी थे, जो उस समय बातचीत करना पसंद न[...] करते थे और दो मैक्सिको के भेड़-पाल[...] थे जो नियमत: उस सैलून में [...] नहीं करते थे। सैलून यानी शराबखाने [...] मालिक का कुत्ता दरवाजे के बाहर अ[...] पंजों पर सिर रखे बैठा था और जब [...] दायें-बायें देखकर हल्की-सी 'वख' [...] अर्थहीन आवाज निकाल रहा था।

ड्रम बजाने वाले और उसके साथ [...] लोगों के अलावा सारा पीला आका[...] नगर तंद्रा में डूबा हुआ था। ड्रम बजा[...] वाला 'पर्डी' बड़े इत्मीनान और आत्म[...] विश्वास के साथ एक के बाद दूसरी मन[...] गढ़ंत और अविश्वसनीय कहानियां सुनाने में तल्लीन था—

"...जब वह बूढ़ा हाथ में [...] लिये हुए सीढ़ियों से नीचे लुढ़क रह[ा] था, तभी वह बूढ़ी औरत दोनों हाथों [में] कोयले की बाल्टियां लिये ऊपर चढ़ रही थी और फिर सचमुच..."

अचानक एक नौजवान के अंदर आने से पर्डी की कथा बीच ही में रह गयी। नौजवान दौड़ता हुआ आया था और हांफ रहा था। आते ही वह चिल्लाया, "स्ट्रेची विलसन आज फिर शराब पीकर मतवाला हो गया है और दोनों हाथों में पिस्तौल लिये सड़कों पर घूम रहा है।" नौजवान की बात सुनते ही दोनों मैक्सिको-वासियों ने तुरंत अपने आधे भरे गिलास मेज पर रख दिये और फुर्ती से पिछले दरवाजे से बाहर निकल गये।

पर्डी नहीं जानता था कि पीले नगर के लिए स्ट्रेची का शराब पीकर मतवाला हो जाना क्या अर्थ रखता है। उसने नवागंतुक से कहा, "अच्छा भाई, ज्यादा पीने से तो ऐसा होता ही है, आओ, तुम भी दो-चार घूंट लो।"

लेकिन इस खबर ने सैलून में उपस्थित हर व्यक्ति पर जैसा असर डाला था, पर्डी भी उससे प्रभावित हुए बिना नहीं रहा। खबर सुनते ही सारे लोग ज्यों के त्यों स्तब्ध बैठे रह गये थे। हैरान होकर पर्डी भी क्षण भर चुप रहा फिर पूछा, "ऐसी क्या बात है, दोस्तो? ऐसी क्या अनहोनी बात हो गयी?" टैक्सास-निवासी उसके प्रश्न का कोई उपयुक्त उत्तर सोच ही रहे थे कि नवागंतुक नौजवान बोला, "इसका मतलब यह है कि कम से कम अगले दो घंटे तक यह नगर स्वास्थ्यप्रद स्थान नहीं रह पाएगा।"

इस बीच शराबखाने के मालिक ने बाहर का दरवाजा बंद करके अंदर से ताला लगा दिया था और दरवाजे के पीछे लकड़ी के मोटे और भारी तख्ते मजबूती से दोनों ओर की दीवारों के साथ जकड़ दिये थे। कमरे में मौत का-सा सन्नाटा छाया हुआ था और पर्डी आतंक और हैरानी के मिले-जुले भाव से हर किसी की ओर बारी-बारी देख रहा था। अचानक उसने ऊंची आवाज में पूछा, "लेकिन इसका मतलब क्या है? क्या कोई बंदूकबाजी होने वाली है?"

किसी ने सूखी आवाज में कहा, "बंदूक की लड़ाई होगी या नहीं, यह तो नहीं कहा जा सकता लेकिन गोलियां जरूर चलेंगी।"

सूचना लाने वाले नौजवान ने हवा में दायां हाथ फेंककर कहा, "अरे कोई चाहे तो लड़ाई तो चुटकी बजाते शुरू हो जाएगी। कोई हिम्मतवर सड़क पर निकले तो सही।"

बेचारे पर्डी का मन एक परदेशी के कौतुहल और व्यक्तिगत सुरक्षा की सहज भावना के बीच झूल रहा था। उसने पूछा, "क्या नाम बताया इस मतवाले का?"

"स्ट्रैची विलसन!" लगभग सभी एक साथ ही बोल पड़े।

"तो फिर क्या वह किसी को मार डालेगा? तुम लोग इसके बारे में क्या करने जा रहे हो? क्या अकसर ऐसा होता है? क्या वह इसी तरह हफ्ते में एकाध बार खून-खराबा करने निकल पड़ता है? क्या वह चाहे तो यह दरवाजा तोड़ सकता है?"

शराबखाने के मालिक ने कहा, "नहीं, वह दरवाजा तो नहीं तोड़ सकता, वैसे कोशिश उसने कई बार की है। लेकिन अगर वह आये तो जमीन पर लेट जाना बेहतर होता है अजनबी, क्योंकि दरवाजे पर वह गोलियां जरूर छोड़ता है और गोलियां अंदर भी आ सकती हैं।"

अभी जमीन पर लेटने का समय तो नहीं आया था क्योंकि बाहर सन्नाटा

छाया हुआ था, लेकिन सामान्य सुरक्षा की दृष्टि से पर्डी दीवार के एक कोने में दुबककर बैठ गया। "क्या वह किसी को मार डालेगा?" भय से कांपते स्वर में उसने दुबारा यह प्रश्न किया।

इस सवाल पर सभी धीमी आवाज में अवज्ञाजनक रूप से हंसे।

किसी ने कहा, "वह उत्पात करने निकला है और गोलियां चलाएगा ही। उसके आगे न पड़ने में ही भलाई है।"

पर्डी ने पूछा, "लेकिन ऐसी स्थिति में तुम लोग क्या करते हो?"

एक व्यक्ति ने कहा, "क्यों, वह और जैक पोटर..."

बात अधूरी ही रही। दूसरे व्यक्ति ने बात काटकर कहा, "लेकिन जैक पोटर तो सेंट ऐंटोनियो में है।"

पर्डी ने पूछा, "पोटर कौन है? इ[illegible] उसे क्या मतलब है?"

शराबखाने के मालिक ने कहा, "[illegible] वह नगर का मार्शल है। जब स्ट्रैची [illegible] हालत में होता है तो वही इसे दुरुस्त क[illegible] की हिम्मत रखता है।"

पर्डी ने माथे से पसीना पों[illegible] हुए कहा, "वाह, अच्छा काम प[illegible] पड़ा है!"

अब बातें बहुत ही नीचे स्वर में [illegible] रही थीं। पर्डी समय के साथ बढ़ [illegible] चिंता और घबराहट के कारण और [illegible] सवाल करना चाहता था, लेकिन जैसे ही वह कुछ पूछना शुरू करता, वैसे ही लो[illegible] उसे इशारों से चुप करा देते। कमरे [illegible]
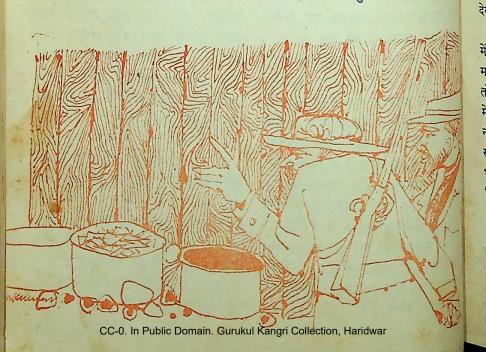
तनावयुक्त प्रतीक्षा का सन्नाटा छाया था। सबके सब बाहर किसी आहट के लिए कान लगाये बैठे थे।

तभी शराबखाने के मालिक ने काउंटर के पीछे से एक बंदूक निकाली और फुसफुसाकर पर्डी से कहा, "बेहतर हो कि तुम मेरे साथ पीछे दरवाजे की ओर चलो।"

पर्डी को पसीना आ गया। "नहीं, धन्यवाद, मैं यहीं ठीक हूं," उसने कहा।

शराबखाने के मालिक को उसका हाल देखकर दया आ गयी। उसने चुपचाप एक गिलास में शराब भरकर उसके सामने रख दिया। पर्डी ने एक सांस में गिलास खाली कर दिया और शराबखाने के मालिक की ओर कृतज्ञतापूर्ण दृष्टि से देखा।

शराबखाने के मालिक ने धीमी आवाज में कहा, "यह स्ट्रैची विलसन बंदूकबाजी में माहिर है और जब यह पीकर निकलता है तो सारा पीला आकाश अपने-अपने दरबों में घुस जाता है। लेकिन यही स्ट्रैची जब नशे में नहीं होता तो मच्छर को भी नुकसान नहीं पहुंचाता। तब तो उससे अधिक भला आदमी शायद ही पीले आकाश में मिले।"

इसके बाद कुछ देर सन्नाटा रहा। फिर शराबखाने का मालिक ही बोला, "जैक पोटर सेंट ऐंटोनियो से लौट आया होता तो कितना अच्छा होता। स्ट्रैची की अगर कोई दवा है तो वही।"

इसी समय बाहर कुछ दूर गोली चलने की आवाज सुनायी पड़ी और फिर दो-तीन जंगली चीखें।

चमकीले भड़कदार कपड़ों में एक आदमी नगर की सड़कों पर अकेला चक्कर काट रहा था। नगर के हर मकान और हर दूकान के बंद दरवाजे और खिड़कियों के आगे रुककर गालियां देता, इधर-उधर गोलियां चलाता वह आदमी स्ट्रैची विलसन था। उसके दोनों हाथों में भरी हुई पिस्तौलें थीं और आंखें जैसे खून से भरी हों। हर परिचित के मकान के आगे रुककर नाम ले-लेकर उसे गालियां देता। वह लड़ाई के लिए ललकारता था, लेकिन कहीं से उसे प्रत्युत्तर नहीं मिलता था। इससे उसका क्रोध और बढ़ता जा रहा था। बंद दरवाजों, खिड़कियों पर गोलियां चलाता, गालियां देता वह बौखलाहट से भरा घूम रहा था।

अचानक उसे अपने पुराने प्रतिद्वंद्वी जैक पोटर की याद आयी। वह अपने घर में छिपा बैठा है। 'अभी मजा चखाता हूं, बेटे,' उसने चीखकर अपने-आप से कहा और कुछ ही देर बाद वह जैक पोटर के मकान के सामने खड़ा था।

नगर-मार्शल का मकान भी अन्य मकानों की तरह बंद देखकर उसका क्रोध सीमा पार कर गया।

"अब क्यों हीजड़ों की तरह दरवाजे के अंदर छिपा है कुत्ते! आ, आ बाहर! है दम? मेमने, चूजे!

लेकिन जैक के मकान के दरवाजे

और खिड़कियां ज्यों-की-त्यों बंद रहीं। मतवाले स्ट्रैची को यह नहीं दीख पड़ा कि मार्शल के दरवाजे में बाहर से ताला लगा है। वह निरंतर गालियां बकता, जैक के घर से बाहर निकलने का इंतजार करता रहा।

जैक पोटर और उसकी दुलहन जल्दी-जल्दी कदम बढ़ाते चल रहे थे। कभी-कभी वे धीमे स्वर में कुछ बातें करके हंस पड़ते थे। अंत में जैक अपनी गली के मोड़ पर पहुंच गया। "बस, दस कदम और डियर," उसने स्नेहभरे स्वर में कहा और भावावेश में धीरे से दुलहन का हाथ दबाकर गली में मुड़ा। लेकिन गली में मुड़ने के साथ ही उसके कदम जहां के तहां रुक गये। सामने सिर्फ दो गज की दूरी पर हाथों में पिस्तौलें लिये स्ट्रैची खड़ा था। दोनों पिस्तौलों की नालियों का रुख जैक के सीने की ओर था। दो क्षण के लिए एकदम सन्नाटा छा गया। फिर, जैक ने धीरे से वधू का हाथ छोड़ दिया और सामान जमीन पर डाल दिया। इसके बाद वह दो कदम आगे बढ़ा। उसके दोनों हाथ खाली थे।

स्ट्रैची के चेहरे पर अचानक क्रूरतापूर्ण मुसकराहट फैल गयी, "तो तुम मुझ से छिपकर चोरों की तरह बच निकलना चाहते थे! वाह रे मेरे शेरदिल बेटे!"

निहत्था जैक और दो कदम आगे बढ़ा। पीछे खड़ी वधू का चेहरा मुरदे की

तरह पीला पड़ गया। स्ट्रैची ने चीखकर कहा, "खबरदार जैक पोटर, बंदूक निकालने के लिए जरा भी हाथ बढ़ाया तो नतीजा समझ लो। आज मैं तुमसे अंतिम निबटारा करने आया हूं और निबटारा मेरी मर्जी से होगा।"

पोटर ने सीधे स्ट्रैची की आंखों में देखा, "मेरे पास बंदूक नहीं है स्ट्रैची।"

स्ट्रैची व्यंग्य से मुसकराया। उसकी मुसकराहट में अविश्वास था।

जैक पोटर ने कहा, "तुम जानते हो कि जब लड़ने का मौका आता है तो मैं कभी पीछे नहीं हटता स्ट्रैची विलसन! लेकिन अभी मेरे पास बंदूक नहीं है। तुम चाहो तो इकतरफा लड़ सकते हो। लो, खड़ा हूं, चलाओ गोलियां।"

स्ट्रैची का चेहरा क्रोध से तमतमा उठा। एक कदम आगे बढ़कर उसने अपने पिस्तौल जैक के सीने से लगा दिये, "तेरे पास बंदूक नहीं है मक्कार लोमड़ी! मुझसे झूठ कहता है! टैक्सास में कभी किसी ने तुझे बिना पिस्तौल के देखा है कभी? मुझे बच्चा समझता है?" उसकी आंखें अंगारे की तरह धधक रही थीं।

जैक पोटर जहां का तहां खड़ा था। उसने कहा, "मैं तुम्हें बच्चा तो नहीं समझता स्ट्रैची, बेवकूफ जरूर समझता हूं। मैंने तुमसे कह दिया कि मेरे पास बंदूक नहीं है। अगर तुम मुझ पर गोली चलाना चाहते हो तो शुरू कर दो,

वरना ऐसा मौका तुम्हें फिर कभी नहीं मिलेगा।"

जैक पोटर की ऐसी स्पष्ट बातों से स्ट्रैची का मन डांवाडोल हो गया। उसके क्रोध पर जैसे किसी ने अंकुश लगा दिया हो। दो क्षण वह चुपचाप जैक की ओर देखता रहा, फिर उसका क्रोध भड़कने लगा, "तुम्हारे पास अगर बंदूक नहीं है तो क्यों नहीं है? क्या बाइबिल पढ़ने गये थे?"

जैक पोटर ने कहा, "मेरे पास बंदूक इसलिए नहीं है क्योंकि मैं अभी सेन ऐंटोनियो से अपनी पत्नी के साथ आ रहा हूं। मैं अब शादीशुदा हूं। लेकिन अगर मुझे जरा भी अंदेशा होता कि जब मैं अपनी पत्नी के साथ लौटता होऊंगा तब भी तुम्हारी तरह कोई पागल रास्ते में पिस्तौल घुमाता मेरा इंतजार कर रहा होगा तो मैं जरूर अपने साथ बंदूक लाता।"

"शादीशुदा?" स्ट्रैची इस तरह बोला जैसे वह जैक की बात न समझा हो।

"हां, शादीशुदा। मैंने शादी की है।" जैक ने शब्दों पर जोर देते हुए कहा।

"तुम? शादी?" स्ट्रैची बड़बड़ाया और इसके साथ ही पहली बार उसकी नजर जैक से कुछ पीछे खड़ी वधू पर पड़ी। " वह फिर बड़बड़ाया। उसकी मनोदशा कुछ ऐसी थी जैसे उसने पहली बार कोई दूसरी दुनिया देखी हो। वह दो कदम पीछे हट गया और पिस्तौल [illegible] उसके हाथ नीचे हो गये। उसने वधू [illegible] ओर देखकर आहिस्ता से पूछा, "[illegible] दुलहन है?"

"हां, यही मेरी दुलहन है," जैक [illegible] कहा।

कुछ देर दोनों चुप रहे।

फिर स्ट्रैची ने कहा, "अब क्या किया जा सकता है?" उसकी आवाज जैसे कुएं के अंदर से आ रही हो।

जैक ने कहा, "तुम्हारी मर्जी! तुम जानते हो, मैं कोई झंझट नहीं खड़ा करता स्ट्रैची।"

"मेरा खयाल है कि अब बात खत्म हो गयी जैक," स्ट्रैची जमीन की ओर देख रहा था। "शादीशुदा"—वह फिर अपने-आपसे बोला। वह जैक पोटर को अपनी नववधू के साथ घर में जाते देख रहा था—असहाय-सा।

स्ट्रैची ने उदारतापूर्ण वीरता की गाथाएं नहीं पढ़ी थीं लेकिन इस बदली हुई स्थिति में वह अबोध शिशु-जैसा किंकर्तव्यविमूढ़ हो गया था। उसने अपनी पिस्तौलें चमड़े के खोलों में बंद कीं और जैक के मकान की ओर एक बार भी देखे बगैर मुड़कर चल दिया। अब उसकी चाल इतनी धीमी थी कि रात के सन्नाटे में भी उसके जूतों की आवाज नहीं सुन पड़ती थी।

दी हिन्दुस्तान टाइम्स लिमिटेड की ओर से रामनन्दन सिन्हा द्वारा हिन्दुस्तान टाइम्स प्रेस, नयी दिल्ली में मुद्रित तथा प्रकाशित

नेताजी

मिष्ठान्न भंडार
उद्घाटन

उच्च माध्यमिक विद्यालय
उद्घाटन

सांस्कृतिक सम्मेलन
उद्घाटन
उद्घाटन समारोह

मुहूर्त निकला जा रहा है नेता जी कब आयेंगे ?
ठहरिए आते ही होंगे

आइए स्वागत है! अधिक नहीं दो घंटे का ही विलम्ब हुआ है लेकिन अभी मुहूर्त का समय है

लीजिए अभी उद्घाटन किये देता हूं
हाय! आपने तो गांठ ही काट दी!

अपने नन्हे मुन्ने के स्वस्थ विकास तथा सही पालन-पोषण के लिए उसे पिलाईए पूर्णतया विश्वसनीय

पराग

(स्प्रे-ड्राईड)

शिशु दुग्ध आहार

आपने अपने शिशु को जीवन दिया है। अब सही पालन-पोषण के लिए उसे पराग स्प्रे-ड्राईड शिशु दुग्ध आहार पिलाईए ताज़े दूध से अत्याधुनिक स्प्रे-ड्राईंग प्रक्रिया द्वारा निर्मित — प्रोटीन विटामिनों तथा अन्य सभी पौष्टिक तत्वों से भरपूर पराग को आप अपने शिशु की कोमल पाचन-शक्ति के अनुकूल पायेंगी।

एकमात्र वितरक :
स्पैंसर एण्ड कं० लिमिटेड

प्रादेशिक कोआॅपरेटिव डेरी फेडरेशन लि० लखनऊ द्वारा इन्फैंट मिल्क फूड फैक्टरी, दलपतपुर, (मुरादाबाद) में निर्मित

ASIAN/Pa/72/11

कादम्बिनी

भारतीय भाषाओं की विशिष्ट पत्रिका

स्तान टाइम्स प्रकाशन

शुल्क : २ पैसे

९ नंबर के रेडियो
२ नंबर की कीमत पर
TELEVISION
RADIO
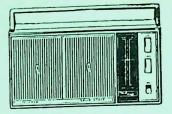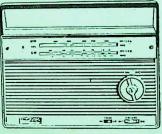
कादम्बिनी

(मासिक प्रकाशन)

१. प्रकाशन स्थान — नयी दिल्ली

२. प्रकाशन की बारी — मासिक

३. मुद्रक—नाम, राष्ट्रीयता और पता :) रामनन्दन सिन्हा, भारतीय,) दि हिन्दुस्तान टाइम्स लि.) नयी दिल्ली

४. प्रकाशक—नाम, राष्ट्रीयता और पता :) " "

५. सम्पादक—नाम, राष्ट्रीयता और पता : राजेन्द्र अवस्थी, भारतीय दि हिन्दुस्तान टाइम्स लि. नयी दिल्ली

६. उन व्यक्तियों के नाम-पते जो इस अखबार के मालिक या साझेदार हैं या जो इस की सारी पूंजी के एक प्रतिशत से अधिक के हिस्सेदार हैं — दि हिन्दुस्तान टाइम्स लि. नयी दिल्ली

मैं रामनन्दन सिन्हा, यह घोषित करता हूं कि उपर्युक्त विवरण मेरी पूरी जानकारी और विश्वास के अनुसार सही हैं।

रामनन्दन सिन्हा
प्रकाशक

• रेस के रास्ते में एक खतरनाक मोड़
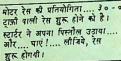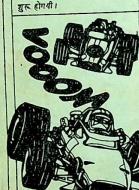
यह हमेशा की बात है:
स्विश से दाढ़ी बनाने वाले को कोई मात नहीं दे सका!

mcm/cl/18 a rev Hin

निम्नलिखित शब्दों के जो सही अर्थ हों उन पर चिह्न लगाइए और पृष्ठ ७ पर दिये गये उत्तर से मिलाइये।

१. **संस्था**——क. सभा-समिति, ख. विद्यालय, ग. परंपरागत तथा प्रचलित विधि-विधान, घ. कुटुम्ब।

२. **सत्यशत्रु**——क. मुकदमेबाज, ख. राजनयिक, ग. व्यापारी, घ. सत्ता।

३. **अंतर्मुखी**——क. कछुआ, ख. उलटा फोड़ा, ग. अपने अंदर ही विचारों में लीन, घ. अशिष्ट।

४. **व्यष्टि**——क. छड़ी, ख. इष्ट, ग. व्यक्ति, घ. संसार।

५. **कौशल्य**——क. विशिष्टता, ख. कांटा, ग. निपुणता, घ. एक घास।

६. **आपन्न**——क. आपद्ग्रस्त, ख. सम्पन्न, ग. धूर्त, घ. पूर्ण।

७. **पुरःसर**——क. नगर, ख. भरा हुआ, ग. पूर्वक, घ. नेता।

८. **प्रणिपात**——क. पैरों पड़ना, ख. गिर पड़ना, ग. गिड़गिड़ाना, घ. आधान।

९. **परिणति**——क. प्रणाम, ख. वीरता, ग. परिणाम, घ. ध्यान-धारणा।

१०. **उपरति**——क. प्रेम, ख. आराम, ग. विलास, घ. विरक्ति।

११. **धूमकेतु**——क. उल्का, ख. कापालिक, ग. राक्षस, घ. पुच्छलतारा।

१२. **निरपेक्ष**——क. इच्छारहित, ख. पराधीन, ग. स्थूल, घ. एकाकी।

उत्तर में प्रयुक्त संकेत-चिह्न

तत्.——तत्सम, सं.–संज्ञा । पुं.–पुंलिंग । स्त्री.——स्त्रीलिंग : उ.——उभयलिंग, अ.——अव्यय ।

आपके शब्द-ज्ञान की परीक्षा

१० या अधिक सही ....जीनियस

९-७ सही..............उत्तम

६-५ सही...........साधारण

विद्वत्ता का प्रवेश-द्वार शब्द-ज्ञान है। ——जॉन विलसन

अलीबाबा के ही नहीं, न जाने कितने खजानों की कुंजी शब्द में मिलती है। –हेनरी वान डाइक

बुद्धि-सामर्थ्य के उत्तर

१. **संस्था**—ग. परम्परागत तथा प्रचलित विधि-विधान, इंस्टीट्यूशन, संस्कार, व्यवस्था। जातिगत विवाह-**संस्था** अब भंग होने लगी है। तत्०, स्त्री०। **संस्थान, प्रतिष्ठान।**

२. **सत्यशत्रु**—घ. एक दार्शनिक के मतानुसार—सत्ता, जिसमें सत्य का ढकोसला बनाये बिना काम चलता ही नहीं। तत्०, सं०, पुं०। **सत्यव्रत, सत्यजित, सत्यसंघ, सत्यधन।**

३. **अंतर्मुखी**—ग. अपने अंदर ही विचारों में लीन। दुखड़ा सुनते-सुनते वह **अंतर्मुखी** हो उठा। तत्०, वि०, उ०। **अंतर्मुख, बहिर्मुख, विमुख।**

४. **व्यष्टि**—ग. व्यक्ति, समष्टि का एक अंग। बच्चों को पढ़ाने में **व्यष्टिगत** ध्यान दीजिए, समष्टि का ही ध्यान रखने से पूरा लाभ नहीं होता। तत्०, सं०, स्त्री०। **समष्टि, व्यक्ति, समुदाय, समूह।**

५. **कौशल्य**—ग. निपुणता, पटुता, दक्षता, कौशल। **कर्म-कौशल्य, कला-कौशल।** यह शब्द अंगुलियों को कटने से बचाकर कुश निकाल लेने से बना है। तत्०, सं०, पुं०। **कुशाग्र, कुशलता।**

६. **आपन्न**—क. आपद्ग्रस्त, विपन्न, संकटग्रस्त। वियतनाम आज कितना **संकटापन्न** है! तत्०, वि०, उ०। **सम्पन्न, शरणापन्न, आपन्नसत्वागर्भिणी** (बंगला)।

७. **पुरःसर**—ग. पूर्वक, आगे चलने-वाला—**हेतु-पुरःसर।** तत्०, सं०, उ०। **पुरस्सर।**

८. **प्रणिपात**—क. पैरों पड़ना, प्रणाम करना, हारकर सिर झुका देना, नमस्कार। अपने स्वार्थ के लिए किसी को **प्रणिपात** न कीजिए। तत्०, सं०, पुं०। **सम्पात, विपात, प्रणति, प्रणतपाल।**

९. **परिणति**—ग. परिणाम, निष्पन्नता। आपके इतने श्रम की **परिणति** क्या हुई?

१०. **उपरति**—घ. विरक्ति, किसी बात से मन उचट जाना, संन्यास। उसे संसार से **उपरति** हो गयी है। या तो प्रपंच से **उपरत** हो जाएगा, या कहीं संसार से ही **उपरति** न ले बैठे!

११. **धूमकेतु**—घ. पुच्छलतारा, जिसका टूटकर गिरना उपद्रव का लक्षण माना जाता है, बहुत ऊधम मचाकर लुप्त हो जाने वाला व्यक्ति। वह **धूमकेतु** के समान आया और हाहाकार मचाकर लुप्त हो गया। तत्० सं०, पुं०। **केतु, केतुमान।**

१२. **निरपेक्ष**— क. इच्छारहित, निस्पृह, स्वाधीन, अपने-आप में पूर्ण (ऐब्सोल्यूट)। सत्यभगवान **निरपेक्ष** है, सर्वत्र एक ही है, अपने-आप में पूर्ण है। तत्०, वि०। **सापेक्ष, अतुल्य।**

—विशालाक्ष

वर्ष १३ : अंक ५
फरवरी, १९७३

आकल्पं कवि नूतनाम्बुदमयी कादम्बिनी वर्षतु

निबंध एवं लेख

१८. माधवी की मधुमय वेला में
—श्रीरंजन सूरिदेव
२२. राजनेता की बीमारी
— निरंजननाथ आचार्य
२७. संस्कृत की सांस्कृतिक गंगा
— डॉ. कर्णसिंह
३०. जीसस का अज्ञात जीवन
—आचार्य रजनीश
३५. हेरोल्ड विल्सन के संसदीय व्यंग्य
—राधेश्याम यादव
३७. तुलसी : एक आपेक्षिक मूल्य
—मोहन राकेश
४१. कुत्ते का सौदा हो गया
— महेश्वर दयाल
६९. खंडित इकाइयां और अज्ञेय
— स. ही. वात्स्यायन
७५. मानसरोवर के राजहंस
— राजेश्वरप्रसाद नारायण सिंह
७८. हिंदू परम्परा में अंक आठ
— पु. ना. ओक
९०. संसार के सात बड़े हत्याकांड
— अर्श मलसियानी
१०१. उपदेश जो कठिनाई में काम आया
— रोमोलो

होली :

सम्पादक : राजेन्द्र अवस्थी

१०४. विज्ञान एक भ्रांति
— प्रस्तोता : गोविंदराम गुप्त
१०७. आपका हृदय
— डॉ. ओमप्रकाश
१२०. नवगीत : एक परिचर्चा
— रमेश रंजक
१२५. फिल्म बनाना खेल नहीं है
— राजेन्द्रसिंह बेदी
१३१. आनंदपुर साहब की होली
— राजशेखर
१३४. दो समानांतर सभ्यताएं
— डॉ. राबर्ट आर. आर. ब्रुक्स
१४६. गाथा शक सम्वत की
— श्रीधर पाठक
१५३. ये कर्जदार साहित्यकार
— पी. के. पाण्डेय
१५४. उर्दू शायरी में हिंदी रंग
— श्याम आनंद प्रभात
१६७. ये सरकारी प्रतिष्ठान (६)
— बलदेव वंशी

कथा-साहित्य एवं व्यंग्य

५०. एक जेबकतरे का इंटरव्यू
— विनोद भट्ट
५५. आया बेटा नटनी का
— उपेन्द्रनाथ अश्क
८०. विद्वानों से मुलाकात
— कन्हैयालाल कपूर
९५. शेर के सामने पसीना
— सुहैल मुरादाबादी
११२. मिनी कहानियां — मधुर कमल
— आनंदस्वरूप भटनागर नीलरतन
११४. मेरा अप्रकाशित काव्य-संग्रह
— नेमिचन्द्र जैन

● अगले पृष्ठ पर भी

वसंत अंक

१४०. दस के तीन सिक्के
— सुरेन्द्र वर्मा

१६०. जब तुम सामने नहीं होतीं
— कन्हैयालाल 'नंदन'

सार-संक्षेप

१८०. राष्ट्रीय जूता
— मुश्ताक अहमद यूसुफी

कविताएं

४८. होली की हंसिकाएं
—सरोजनी प्रीतम

६६. चली बयार वासंती
—चंद्रकला मिश्र

ऋतु-वृंदावन
—सुरेश श्रीवास्तव

८६. एकरसता
— अनामिका

१००. झरनों के गीत
—नर्मदाप्रसाद खरे

मैं
— डॉ. गोपाल शर्मा

स्तम्भ

शब्द-सामर्थ्य बढ़ाइए—७, आपके पत्र—११, समय के हस्ताक्षर—१४, हंसने का मौसम—४८, बुद्धि-विलास-५३, प्रेरक प्रसंग—८४, कालेज के कम्पाउंड से—८६, क्षणिकाएं—१११, वचन-वीथी—११३, प्रवेश—१४५, गोष्ठी—१४९, गृहिणी जीवन की समस्याएं—१६४, नयी कृतियां—१७२, आपका भवितव्य—१७५, ज्ञान-गंगा—१७९।

मुखपृष्ठ : डॉ. एम. एस. अग्रवाल

क्यों और क्यों नहीं

सातवें लेखक : जैनेन्द्रकुमार

इस लेखमाला के अंतर्गत अमृतला[ल] नागर, सुमित्रानंदन पंत, अ[ज्ञेय], यशपाल, डॉ. बच्चन एवं डॉ. भारती [के] सम्बंध में पाठकों के प्रश्न अब तक आमंत्रि[त] किये जा चुके हैं, अब सातवें लेखक [हैं] जैनेन्द्रकुमार।

इस लेखमाला का उद्देश्य लेखक त[था] पाठक को आमने-सामने लाने का प्रया[स] है। प्रत्येक अंक में हम एक लेखक के ना[म] की घोषणा करेंगे, पाठक उस लेखक [के] साहित्य, जीवन, जीवन-दर्शन, पात्र औ[र] पात्रों की कमियों अथवा अच्छाइयों, कृति[यों] में उपलब्ध विरोधाभासों अथवा जीवन [से] सम्बंधित किसी भी विषय पर प्रश्न पू[छ] सकते हैं।

एक प्रश्नकर्त्ता दो से अधिक प्रश्न न[हीं] पूछ सकेगा। लिफाफे के ऊपर एक को[ने] पर यह अवश्य लिखिए—'क्यों और क्[यों] नहीं' स्तम्भ के लिए।

आपके प्रश्न सम्पादक के पास पहुंच[ने] की अंतिम तिथि है १५ मार्च, १९७[३] इस अंक के लिए

जैनेन्द्रकुमार

प्रमुख कृतियां : ये और वे, मक्तिबोध, ज[य]वर्धन, यामा, सुनीता, त्यागपत्र, सुखद[ा], विवर्त, व्यतीत, कल्याणी, परख, स[मय] और हम, आदि

'शब्द-सामर्थ्य' स्तम्भ 'कादम्बिनी' का एक उपयोगी तथा लाभदायक स्तम्भ है, क्योंकि हिंदी का शब्द-कोश अभी भी अपूर्ण है तथा इस क्षेत्र में बहुत कम कार्य हुआ है।

—ईश्वरीदत्त शर्मा, बरोटी वाला (हिमाचल प्रदेश)

सिनेमा की तरह पत्रिकाओं में 'कादम्बिनी' को अगर 'न्यू वेव' श्रेणी में रखा जाए तो गलत न होगा। 'कादम्बिनी' ने अपने स्तर को हमेशा ऊंचा रखा और रचनाओं में कभी किसी प्रकार का सस्तापन नहीं आने दिया। एक सुझाव है— 'प्रवेश' स्तम्भ की रचनाओं के अंत में आप अपनी प्रतिक्रिया भी लिखें, जिससे प्रेषक को प्रोत्साहन और मार्गदर्शन मिले।

—वेदप्रकाश अग्रवाल, मुजफ्फरपुर

पंतजी के उत्तरों ने बोर कर दिया। यह स्तम्भ इसलिए प्रारम्भ हुआ है कि लेखक-पाठक की दूरी कम हो और पाठक को लेखक से कुछ मिले। लेकिन पंतजी खुले नहीं, अपने को चारों ओर से सिकोड़ लिया है। कुछ उत्तर अधूरे हैं, जैसे 'लोकायतन'। 'श्री अरविंद दर्शन से उपनिषतकाल से ही प्रभावित रहा।' यह वाक्य यह नहीं कहता कि पंतजी श्री अरविंद के दर्शन से उसी काल से प्रभावित रहे, जिस काल से उपनिषत से वरन् यह कहता है कि श्री अरविंद का दर्शन उपनिषत-काल का समसामयिक है या इसके पूर्व का ही अवदान है।

सम्पादकीय विचारों में स्पष्टता है, विचारोत्तेजकता है और दूरदर्शिता है। शेष रचनाएं बहुत उच्चकोटि की हैं, जिनसे ज्ञानवर्द्धन होता है और मनोरंजन भी।

—लक्ष्मीनारायण शर्मा 'मुकुर', बरौनी

'कादम्बिनी' का फरवरी अंक रुचिकर लगा। नया स्तम्भ 'बुद्धि विलास' वास्तव में ज्ञानवर्द्धक एवं कौतूहल को जगाने वाला है। 'ज्ञानगंगा' नामक नूतन स्तम्भ द्वारा आप पाठकों को हमारी प्राचीन संस्कृति के पावन ग्रंथों के सुभाषित उद्धरणों का रसास्वादन करवा रहे हैं, इसके लिए बधाई स्वीकार करें।

—श्याम मिश्र, सुजानगढ

'बुद्धि विलास' जैसे स्तम्भ के शुरू होने पर बेहद प्रसन्नता हुई। इससे पत्रिका का आकर्षण बढ़ेगा। परंतु इस स्तम्भ में ऐसे प्रश्न नहीं होने चाहिएं जिनसे उत्तरों में आशंकाएं उत्पन्न हों।

—महेश्वरदयाल गौड़, बीकानेर

फरवरी अंक की 'स्थिति' कहानी यथार्थ एवं मार्मिक थी। लेखक ने किशोरावस्था की एक मानसिक परिस्थिति का बड़े अच्छे ढंग से उद्घाटन किया है।

—जय ज्योति पुंज, कोटा

'कादम्बिनी' मुझे मिलती रही है। आपने उसको बहुत अच्छी तरह संवारा है।

—जगदीशचन्द्र माथुर

'कादम्बिनी' के पिछले अंक में विविधता भी है और स्तरता भी !

—डॉ. इंद्रनाथ मदान, चंडीगढ़

'कादम्बिनी' के अंतिम आवरण के भीतरी पृष्ठ पर 'श्रीमानजी' की जगह 'नेताजी' को देखकर प्रसन्नता हुई। इस नये व्यंग्य-चरित्र के माध्यम से हमारे इस वर्ग की कथनी और करनी का अच्छा-खासा उद्‌घाटन होगा, यह आशा की जाती है।

—वीरेन्द्र मिश्र, रायपुर

'क्यों और क्यों नहीं' तथा 'शब्द-सामर्थ्य' स्तम्भ अत्यंत ज्ञानवर्धक हैं। 'कादम्बिनी' में 'हिंदी के माध्यम से दक्षिण भारतीय भाषा सीखिए' जैसा कोई स्थायी स्तम्भ शुरू करें। यह अधिक लाभप्रद और समयोचित होगा।

—धीरेन्द्रकुमार दीक्षित, नागपुर

लम्बे अंतराल के बाद स्वदेश आया हूं। सब कुछ बदला-सा लगता है। इसी बीच 'कादम्बिनी' भी पढ़ने का अवसर मिला। यह पत्रिका मुझे बेहद भायी है और मैं आपकी चयन-सामग्री से भी प्रसन्न हूं। आप बड़ी लगन से पत्रिका संवारते जा रहे हैं।

—अमितप्रकाश सिंह, वाराणसी

'कादम्बिनी' में हर वर्ग के पाठक के लिए रुचिकर सामग्री है। साहित्य क्षेत्र में प्रवेश के इच्छुक नये लेखकों-कवियों के लिए भी 'कादम्बिनी' काफी कार्य कर रही है। 'कादम्बिनी' से उन्हें काफी प्रोत्साहन मिलता है।

—सुधा रावत, रेनुकूट (मिर्जापुर)

'कादम्बिनी' का फरवरी अंक बेहद पसंद आया। नये स्तम्भ 'बुद्धिविलास' के प्रश्न काफी रोचक और उलझाने वाले थे।

—वरुणकुमार सक्सेना, दतिया

'कादम्बिनी' का फरवरी अंक बहुत अच्छा लगा। हां, खेलकूद के सम्बंध में कुछ न पाकर निराशा हुई।

—ओमप्रकाश पाल, मथुरा

'क्यों और क्यों नहीं' स्तम्भ बहुत अच्छा है। इससे किसी लेखक की जिंदगी को पास से देखने का बहुत अच्छा अवसर मिलता है। आप बधाई के पात्र हैं।

—सूरज खरे, भोपाल

'कादम्बिनी' पर मुझे बेहद गर्व है। अपनी जिंदगी में मैंने ऐसी पत्रिका नहीं देखी। 'गोष्ठी' के अंतर्गत पाठकों की जिज्ञासाओं का समाधान बहुत उचित ढंग से होता है।

—आर.सी.सी. ग्रोवर, खिलचियां (पंजाब)

'कादम्बिनी' प्रत्येक अंक के साथ निरंतर नयी दीप्ति बिखेरती जा रही है। समकालीन हिंदी मासिक पत्रिकाओं में निस्संदेह 'कादम्बिनी' सर्वश्रेष्ठ मानी जा सकती है। पुरानी पीढ़ी के साथ नयी पीढ़ी को भी आप कम स्थान नहीं दे रहे हैं—साक्षी है हर अंक। इतनी बहुमूल्य सामग्री किसी भी मासिक पत्रिका में पढ़ने को नहीं प्राप्त हो रही है।

—मीना भारती, मुजफ्फरपुर

आज की हिंदी कहानी, जिसमें उपन्यास भी सम्मिलित है, क्योंकि उपन्यास भी अन्ततः एक कहानी ही तो है, पिछले पच्चीस वर्षों में, अनेक प्रयोगों से गुजरने के बाद, अब एक स्थिर और प्रौढ़ धरातल पर खड़ी है। इसे अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि स्वतंत्रता के बाद की बदली हुई स्थितियों और मान्यताओं को सही ढंग से पकड़ने के प्रयास में नयी कहानी को संघर्ष करना पड़ा था। यह संघर्ष एक परम्परा से था, जो अपने ढांचे में किसी भी तरह के परिवर्तन को स्वीकार नहीं करना चाहती थी।

नये कहानीकार ने समय के परिवर्तन को पहचानने की कोशिश की थी, क्योंकि वह स्वयं उसके बीच से गुजर रहा था। उसने देखा कि बिना क्रांति के आजादी मिले इस देश में भी जिंदगी की नयी धड़कनें उभरने लगी हैं, मूल्यों में परिवर्तन हो रहे हैं और अपने को पहचानने की ललक हर आदमी में पैदा हुई है। यह प्रक्रिया गांवों से लेकर शहरों तक चलती रही। गांव अपेक्षाकृत छोटी इकाई थे, इसलिए लगा कि जैसे वहां सब कुछ अधिक तेजी से हो रहा है। शहर और फिर महानगर औद्योगिक विकास की होड़

समय के हस्ताक्षर

में आदमी के अस्तित्व को निरंतर नकारते रहे और आदमी अपने को अधिक अकेला महसूस करता गया। यह भी कोई अचानक और अनहोनी प्रक्रिया नहीं थी। विकास की गति में जो पैर नहीं मिला पाते वे अपने आप पीछे छूट जाते हैं।

पीछे छूटने का क्रम ही एक परम्परा में परिवर्तन था। अब नयी कहानी प्रौढ़ हो गयी है और उसने भारतीय भाषाओं के साहित्य में अपना स्थान बनाया है।

अब समय आ गया है कि हम अपना मूल्यांकन करें और वास्तविक स्थिति को एक बार फिर उसी तरह पहचानने की कोशिश करें, जिस तरह पहली बार हमने सन पचास के आसपास पहचाना था। इतनी लम्बी यात्रा के बाद आज की कहानी पाठकों से निरंतर कटती रही है, इसे अस्वीकार नहीं किया जा सकता।

कहा जाता है कि कहानी लेखक की अपनी नितांत निजी अनुभूति है। निजी अनुभूति का यह प्रश्न कविता में भी उठा था, लेकिन कहानी और

कविता में अंतर है। यदि कहानी का सम्बंध मात्र उसके लेखक से है, तो क्या वह पाठकों के लिए नहीं है ? इसे लेकर भी कहा गया था कि चूंकि कहानीकार उस समाज को छोड़कर आगे बढ़ गया है जो पिछड़ा हुआ और दकियानसी है, उसके लिए यह सम्भव नहीं है कि वह ऐसे समाज के साथ पैर मिलाकर चल सके। इस प्रक्रिया में भी वह पाठकों से दूर हुआ है।

इधर समूची कहानी को ही कुछ आलोचकों ने दो भागों में विभक्त कर दिया है—(१) कलात्मक और साहित्यिक कहानियां और (२) व्यावसायिक कहानियां। साहित्यिक कहानियों का अर्थ है कि उसे कम-से-कम लोग समझें और पढ़ें और ऐसे संग्रहों की खरीद पुस्तकालयों तक ही सीमित रहे। जब कोई लेखक धीरे-धीरे लोकप्रिय होने लगता है तो कह दिया जाता है कि वह व्यावसायिक लेखक है। प्रश्न यह है कि यदि किसी कहानी-संग्रह या उपन्यास के तीन-चार संस्करण हो गये हैं तो क्या धीरे-धीरे उसके शब्द भी अर्थ बदलते जाते हैं ? ऐसी बात करने वाले आलोचकों से सतर्क रहना जरूरी है, क्योंकि जो कुछ लोकप्रिय नहीं है, वही साहित्य है और किसी

आज की हिंदी कहानी : कुछ नये प्रश्न ?

कृति का लोकप्रिय हो जाना व्यावसायिकता है। यह एक गलत तथ्य है। 'चित्रलेखा' का उदाहरण इस प्रसंग में दिया जा सकता है। वह साहित्य के स्तर पर संतुलित है और लोकप्रिय भी और इस प्रक्रिया में उसके मूल्यों में परिवर्तन नहीं हुआ।

लेकिन ऐसे विभेद पैदाकर हमने स्थिति यह खड़ी कर ली है कि आज का सही कहानीकार अपने पाठकों से कट गया है। उसके पाठकों और प्रसंशकों की संख्या सीमित हो गयी है। इसके विपरीत कुछ गलत व्यक्तियों ने पाठकों के बीच घुसपैठ कर ली है और अपने मूल्यांकन की परवा किये बिना वे पाठकों के सबसे पास पहुंच गये हैं। उनकी पुस्तकों के संस्करण लाखों में होने लगे हैं। इसका कारण क्या है ?

नयी कहानी की कथा-यात्रा ही इस उद्देश्य से आरम्भ हुई थी कि परम्परा में जकड़ा कहानीकार समय की चेतना को पहचानने में असमर्थ है और उसके और समय के बीच एक गहरी खाई बन गयी है। आज वही खाई लेखक और पाठक के बीच है। नयी कहानी का लेखक या तो अब तक अपने

पाठकों को नहीं पहचान पाया, अथवा पहचानना नहीं चाहता। उसमें पहचानने की पकड़ है, इसे अस्वीकार नहीं किया जा सकता, क्योंकि उसीके सहारे उसने कहानी को एक नया रूप दिया था।

लेखक एक व्यक्ति सत्ता भी है और इस नाते वह समाज का एक अंग भी है। यदि समूचा समाज पिछड़ा हुआ और विभक्त है तो लेखक उससे अलग होकर या कटकर नितांत एकाकी ही रह सकता है, जो मानव-प्रवृत्ति के विपरीत है।

इसलिए आज के कहानीकार के लिए यह समय है कि वह अपनी स्थिति को समझे और पहचाने। इतने व्यापक परिवेश के बावजूद आज की कहानी कुछ दायरों में ही यदि घूमती और चक्कर काटती नजर आती है, तो यह उस परिवेश के साथ न्याय नहीं है, और न समस्त मानव-मूल्यों की परख है। आज की निरंतर विकासमान और बदलती हुई दुनिया में नित-नयी समस्याएं उठ रही हैं। कहा जाता है कि रोजी-रोटी और सेक्स जिंदगी को बनाये रखने के लिए अत्यावश्यक होते हुए भी, यही सब कुछ नहीं हैं। हमें अपने दैनिक जीवन में अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है—ये निजी और सामाजिक दोनों तरह की होती हैं।

यूरोप और जापान के लेखकों ने उन समस्याओं को पकड़ा है, जिनके बारे में हम सोच भी नहीं सकते। कुछ अंशों में बंगला-लेखकों ने भी अपनी कहानी में नये कथानकों की सृष्टि की है। हिंदी का लेखक शायद अब भी सीमित दायरों में घिरा है। प्रयोगों के बाद ही वैज्ञानिक एक दिशा का संकेत करता है। तब वह व्यर्थ के अवयव काटकर फेंक देता है। कहानीकार को अब उसी अंतश्चेता वैज्ञानिक की तरह अपने प्रयोगों को एक स्वरूप देने के लिए आगे आना अनिवार्य है। इसलिए अब प्रश्न यह है कि क्या आज की कहानी पाठकों से कटकर अपना अस्तित्व रख सकती है? यह प्रश्न उन्हीं कथाकारों से है, जिन्होंने कभी परिवर्तन की भूमिका में अपना महत्त्वपूर्ण योग दिया था।

आज का पाठक उनसे समय-चेतना को पहचानने की मांग करता है।

माधवी की मधुमय बेला में

प्रकृत्या मनुष्य का मन स्वतंत्र रहना चाहता है। किसी की अधीनता उसे असह्य मालूम होती है। किंतु, कोई व्यक्तित्व ऐसा भी मूल्यवान होता है जिसके समक्ष मानव का स्वाभिमानी मन बरबस झुक जाता है और वह उसे अपने से श्रेष्ठ समझने लगता है। मानव-समाज में 'राजा' की परिकल्पना ऐसे ही वशंवद हृदयों ने की है, जिन्हें उस श्रेष्ठ व्यक्ति में अपनी अनेक आशाओं और आकांक्षाओं की पूर्ति और तृप्ति के आसार नजर आये हैं। देवताओं में वज्रधारी इंद्र की मेघ-महिमा ने मानव-मन को आप्यायित-प्रभावित किया तो उसे वह 'देवराज' की संज्ञा दे बैठा! हिमालय ने अपनी गगनभेदी उच्चता और प्राकृतिक विभूतियों के बल पर 'पर्वतराज' की अभिधेयता आयत्त कर ली। प्रयाग को संगम की स्वर्गीयता के कारण 'तीर्थराज' की आख्या मिली। अश्वत्थवृक्ष में ऊर्ध्वमूल अधः शाख अव्यय अक्षर ब्रह्म की सत्ता का आभास मिलने से उसे 'वृक्षराज' कहा गया। सिंह को उसकी प्रचंड तेजस्विता और बलशालिता के कारण 'मृगराज' की उपाधि से विभूषित किया गया। इसी प्रकार, ऋतुओं में वसंत ने अपनी कोमल मादकता का ऐसा इंद्रजाल जन-जन के हृदय पर पसारा, साथ ही एकसाथ ढेर-सारी शोभा और श्री से सम्पन्न ऐसा गंधमुखर राज्य कायम किया कि लोग सहज ही उसे 'ऋतुराज' कहने लगे।

● श्रीरंजन सूरिदेव

ऋतुराज वसंत के साथ प्रसन्नता और स्निग्धता का काया-छाया-संयोग है। अपर्णा शिशिरशीर्णा की विदाई के साथ ही मधुमासवाली आली आती है, जिसकी सनसनी फैलानेवाली आभा से उद्रिक्त तथा वय के व्यवधान से रहित प्रत्येक मन निर्बंध होकर तितली-सा मचल उठता है और भौंरे-सा गुनगुनाने के लिए शिराओं में सुगबुगाहट होने लगती है। एक रहस्यमयी रमणीयता रंगदीप्त आंखों को धीरे से छूकर 'प्राणों' को पुलकन से घेर लेती है। वसंत दूती की कभी पुरानी न पड़नेवाली चिरनवीन श्रुतिमधुर स्वरलहरी कानों की प्याली में जब ढलती है, तब रोम-रोम पर्युत्सुक हो उठता है और महाकवि कालिदास के शब्दों में मन बेमन-सा होकर किसी अज्ञात-पूर्व भाव-स्थिर जननांतर-सुहृद की मीठी-मीठी स्मृतियों में भीग-भीग उठता है। महाप्राण निराला की दृष्टि से ऐसा लगता है जैसे प्रणय के प्रलय में सचमुच सारी सीमाएं टूट गयी हैं। साथ ही गीतगोविंदकार कवि जयदेव की यह रसाक्त पंक्ति सहसा कंठ-कंठ से फूट पड़ती है: **विलसति हरिरिह सरस वसंते**। कहना न होगा कि इस मौसम में अज्ञात सुंदर के स्वप्न में डूबे हुए मन को सब कुछ सुंदर लगता है, **'सर्वं प्रिये चारुतरं वसंते।'** वसंत की चारुता के प्रसंग में विश्वकवि रवींद्र की दो पंक्तियां बरबस मन को बांध लेती हैं:—

आंख मेले तोमार आलो प्रथम आमार
चोख जुड़ालो
ओह आलोतेइ नयन रेखे मूदब नयन शेषे

यदि प्रकाशपुरुष के प्रकाश में पहले-पहल आंखें खोलते ही वे जुड़ा जाएं, तो कौन नहीं चाहेगा कि वह निरंतर आलोक में ही अपनी आंखें बिछाये रहे और अंत में इस आलोक से आपूर्ण आंखों को मूंद ले। तो, वसंत का प्रकाश भी कुछ वैसी ही दिव्यता से भव्य होता है जैसा कि अन्य ऋतुओं में प्रायः सुलभ नहीं।

रसशास्त्रियों ने वसंत को उद्दीपक माना है और इसमें मन संचारी भावों का अंतर्द्वंद्व झेलता है, इसलिए कोई भी मनुष्य कामांकुश से अंकुशित हो सकता है। कहा गया है कि कामाज्ञा सारे संसार में घूमती है और यौवन सविकार हुआ करता है।

यही कारण है कि गोस्वामी तुलसीदास ने काम को खल मानकर उसके गंजन की बात कही है और स्वामी रामकृष्ण, स्वामी विवेकानंद आदि योगपुरुषों ने नाड़ियों को ऊर्ध्वगा बनाने की साधना बतलायी है। यही उदात्तीकरण प्रत्येक मानव-जीवन का लक्ष्य है। वसंत, शिव के तपोभंग में सांग काम का सहायक बना था। तपोभंग से विचलित शिव के तृतीय अग्निनेत्र से भस्म होने के बाद काम अनंग हो गया। यह 'अनंगता' ही काम की रहस्यमयता है जिसका प्रकटीकरण इच्छाओं के माध्यम से होता है। इसलिए, इच्छाओं पर विजय प्राप्त करने वाला ही कामजयी होता है और काम की विजय या इच्छा

की पराजय विना बुद्धि के सम्भव नहीं। बुद्धि की अधिष्ठात्री देवी शारदा या सरस्वती हैं। देवी सरस्वती की शुभ्रोज्ज्वल दीप्तिमयी सुंदरता की मनोहारिता बुद्धि को संतुलित कर जड़ता के अंधकार को दूर करती है। इच्छा को जो जितना ही अधिक नियंत्रित कर पाता है, उस पर उतनी ही ही अधिक सरस्वती की कृपा होती है। इच्छा-त्यागी ही विद्या के क्षेत्र में निष्णात होता है। विद्या ही उसकी एकमात्र इच्छा होती है। विद्या का पार पाना कठिन है, इसलिए मनुष्य आजीवन 'विद्यार्थी' ही रहता है। उसे निरंतर सरस्वती की कृपा चाहिए।

वसंत में सरस्वती की पूजा इच्छाओं के नियंत्रण के प्रतीकरूप में आयोजित होती है। वसंत में संचारी भावों की प्रधानता के कारण, मनोवृत्ति के निम्नगम होने की आशंका से, इस ऋतु के प्रारम्भ में ही वाणी या बुद्धि की उपासना प्रचलित हुई है। उन्मादी वसंत बुद्धि को प्रमादी न बना दे, इसलिए बुद्धिदायिनी सरस्वती का ध्यान इस मौसम में अनिवार्य है।

बौद्धिक समृद्धि की उपलब्धि की दृष्टि से सरस्वती-पूजा का सामाजिक महत्त्व भी स्वतःसिद्ध है। बौद्धिक समाज की प्रत्येक क्षेत्र में अत्यधिक उपयोगिता मानी जाती है। काम-सुखी धनाधीशों की अपेक्षा विद्याव्यसनी व्यक्तियों के प्रति सामाजिक आदर-भावना क्षणिक नहीं, सनातन होती है। आज चंद्र-विजय के युग में भी विद्या की कदर अतुल वेग से बढ़ रही है। अमरीका, इंगलैंड आदि जैसे कामसुखी देशों में विद्या की महत्ता सर्वोपरि है। विद्या मानसिक स्वतंत्रता का निदान है। मन निर्बंध है। निर्बंध मन का धर्म ही मानसिक स्वतंत्रता है। इसलिए, विद्या का मन से मेल स्वाभाविक है और काम से सम्बंध अस्वाभाविक। काम सदा सहायक कभी नहीं होता, किंतु विद्या और बुद्धि अविनाशी आत्मा की तरह केवल सहचारिणी ही नहीं, सहधर्मिणी और पालिका-पोषिका भी होती हैं, इसलिए घुमा-फिराकर विद्या-धन को ही सर्वोत्तम माना गया है। भतृहरि ने कहा भी है—

केयूरा न विभूषयन्ति पुरुषं हारा न चन्द्रोज्ज्वलाः
न स्नानं न विलेपनं न कुसुमं नालंकृता मूर्द्धजाः।
वाण्येका समलंकरोति पुरुषं या संस्कृता धार्यते
क्षीयन्ते खलु भूषणानि सततं वाग्भूषणं भूषणम्॥

राजा ही राजा का उचित स्वागत करता है। प्रतिवर्ष ऋतुराज के स्वागमन की मधुमय वेला में फलों के राजा आम्र की तरुराजि अपनी मंजरी की अंजलि में मदिर मकरंद का अर्घ्य और मधुपर्क लेकर प्रस्तुत होती है और हम काम को बुद्धि या इड़ा के प्रति समर्पित करके और भारत-भारती 'कामायनी' की प्राप्ति में साफल्य आयत्त करते हुए श्रद्धा के साथ अपने जीवन को पशवोन्मुख बनाते हैं।

—बिहार राष्ट्रभाषा-परिषद् पटना-४

राजनेता की बीमारी

● निरंजननाथ आचार्य

राजनीति का क्षेत्र। उस पर विशिष्ट पद। तब वह व्यक्ति, व्यक्ति-विशेष। सब की आंखें उस पर केंद्रित। जाने-अनजाने में ही उसकी हर गतिविधि, चाहे वह पारिवारिक हो, निजी हो, या सार्वजनिक, जनता की आलोचना और टीका-टिप्पणी का शिकार होती है। यहां शान-शौकत है। अधिकार है। मान-मनुहार है। तनख्वाह भी कम नहीं है, और साथ बहुत-सी सहूलियतें हैं।

ये सब सुविधाएं, मात्र एक संयोग—प्रजातंत्र के ढांचे में बंधा, जनता द्वारा प्रदत्त। पर ये सब सुविधाएं मुझे बर्फ की सिल्ली की तरह लगती हैं। जब तक हैं, तब तक हैं। गरमी लगी नहीं कि पिघलना शुरू हुआ और सिल्ली का नाम-निशान तक तब मिट जाता है। यही हाल होता है राजनेता का। जब तक उसे जनता का विश्वास प्राप्त रहता है, वह रहता है सिरमौर। वही जब जनता का कोपभाजन बनता है, तब वही होता है मिट्टी का ढेला। अस्तित्व ही जैसे उसका तब मिट जाता है। मानो कभी था ही नहीं। अनेक राजनेता—मुख्यमंत्री, मंत्री, जिन्हें कभी जमीन पर पैर रखने की फुरसत नहीं थी, आज बिखरे पड़े हैं।

दूसरी ओर ऐसे भी लोगों के कुछ उदाहरण मिल जाएंगे जो राजनेता प[द] से जमीन पर आने पर भी वही रहे [जो] जो वे थे। ऐसे लोग हैं वे जो पद प[र] थे तो बेहोश न थे, होश में थे [और] उतरे तो पृथ्वी को अपनी गंध से उन्होंने सुरभित ही किया। वे भी मिट्टी में मिले हैं, पर जनता जनार्दन के वंदनीय और स्मरणीय बनकर। ऐसे लोगों की याद को जनता अपने दिलों में संजोये पूजा करती है।

पद पर बेहोश रहने वाला जब तक पद पर रहता है तब तक एक सुंदर खरबूजे की मानिंद। धूप में पड़ा रहा कि उसमें संड़ाध पैदा होने लगती है। उसे दू[र] फक देने के सिवाय तब कोई चारा नहीं रहता। पास रहे तो हैजा होने का खतरा रहता है। जनमत, राजनेता की हर स्थिति और हलचल का बैरोमीटर है। खान-पान में, रहन-सहन में, व्यवहार में, विवाह आदि समारोहों में, जहां तनिक भी राजनेता के स्तर में अंतर हुआ नहीं कि वह इस बैरोमीटर में तत्काल अंकित हो जाता है।

इस विषमता के प्रति मैं सदा सतर्क और चौकन्ना रहा। जनमत के दूर के अंदेशे से भी मैं सावधान रहता। यह है मेरा मानसिक रोग। राजनीति से अलग जो

मेरा आधा जीवन गया, वह अल्हड़ता, उच्छृंखलता में कटा । तब जनमत मेरे पीछे-पीछे या वह आगे और मैं पीछे-पीछे था । मतलब यह कि तब दोनों को एक-दूसरे की परवाह नहीं थी । जनमत का तब मेरे जीवन से कोई सम्बंध न था । पर अब ? अब तो राजनीति का मैं भी एक-परिंदा हूं । छोटा हूं या मोटा, पर किस्म मेरी वही है । वैसी ही चोंच है, पर भी वैसे ही हैं । फर्क है खुराक में । फर्क है औकात में । वे आसमान में उठते हैं—बेहोश । जमीन पर जैसे उन्हें कभी नहीं आना है — और मैं आसमान में उड़ता तो हूं, पर जमीन और दरख्तों की टहनियों पर चहचहाता भी हूं । जनमत का बैरोमीटर मुझमें जमीन का एहसास बनाये रखता है ।

बीमारी से लेकर शादी-विवाह तक, रोमांस से लेकर साधना तक, योग्यता और क्षमता से लगाकर हर दर्जे की मूर्खता और गधेपन तक—ये हैं मेरे जीवन की खूबियां और विषमताएं । हर एक अपने ढंग की एक ।

राजनेताओं की बीमारी के अजीब नखरे हैं । आमंत्रण-निमंत्रण के अद्भुत रूप हैं । स्वागत और आतिथ्य के अलग नक्शे हैं । सेवा-भावना के अलग अंदाज हैं । राजनेता का जीवन सामान्य से अलग हटकर, असामान्य जीवन का मुखौटा लगाये रहता है । इन तौर-तरीकों का अनेक बार मैं शिकार हुआ, इनमें फंसा, पर निकला तो साथ नाना दास्तानें लिये ।

विशिष्ट पदों पर रहते हुए बीमार पड़ने के मौके आये हैं । मां-बाप भी मेरे ऊंचे आसन पर रहते ही स्वर्गवासी हुए । तब जो मिला, वह थी सूनी, थोथी, हमदर्दी और सूखे स्नेह की बौछार ।

मां-बाप की मृत्यु पर सम्वेदनाओं के तारों का अम्बार लगा । मानो विशिष्ट जन, सम्वेदना-प्रदर्शन की विवशता में जैसे बंध आये थे । तार आये और नाना किस्म के आये । कुछ उदारता के, कुछ औपचारिकता के । जहां उदारता थी, वहां शब्दों का चयन और भाषा का गठन था । भेजने वाले साहब मन से चाहें सहानुभूति से शून्य हों, पर तार की भाषा की अभिव्यक्ति में दरिद्रता न थी, पैसे की ओर भी ध्यान न था । दूसरे प्रकार के वे तार थे, जिनकी दर निश्चित होती है, और भाषा भी जिनकी एक । नम्बर इनके निश्चित होते हैं । नंम्बर की गलती के कारण, सम्वेदना की जगह, पुत्र-जन्म की बधाई, चुनाव-सफलता की बधाइयां, जन्म-दिन की बधाइयां भी मुझे मिलीं । मेरी पीड़ा और उस पर औपचारिकता प्रकट करते ये तार—एक ओर सम्वेदनाएं तो दूसरी ओर बधाइयां ।

लेखक

इनके अतिरिक्त एक और किस्म के तार भी थे। वे तार थे, उन राजनेताओं के जो वरिष्टता में, क्षमता, योग्यता एवं अवस्था में, अपने आपको मुझसे बड़ा मानते रहे थे। ये तार लोकदृष्टि को ध्यान में रखते, भेजे गये थे। इनमें सार न था। सम्वेदना में हार्दिकता न थी। तार भेजकर जैसे मुझे इज्जत बख्शी गयी थी।

आज अनेक उदाहरण बिखरे मिलते

हैं कि जिनके आने से पहले सूचना जाती, इंतजाम होता, पुलिस लगती, आज वही हैं, जो सड़कों पर अपनी इज्जत बगल में दबाये ग्राहकों को ढूंढ़ते फिरते हैं। जब अधिकार होते हैं, तब उनकी कीमत है। मुंहमांगे दाम हैं। ग्राहकों की भी कमी नहीं। पर अधिकार जाते ही टके-सेर भी खरीदने वाला ढूंढ़े नहीं मिलता। क्यों? इसलिए कि जिस जनता ने एक दिन इज्जत और अधिकार बख्शे थे, वे उसने आज वा[पस] ले लिये। कारण? आप उसके प्रेम [और] उसकी धरोहर को सम्हाल न पाये। [अब] अतीत की स्मृतियों की दास्तानें क[हते] फिरिए—उस बीते व्यक्ति की त[रह] जिसने कभी अपने अच्छे दिन देखे थे।

हम राजनेताओं की बीमारी [में] सम्वेदना के प्रश्न की तरह ही पेचीदा औ[र] विषम होती है। पहले तो रुग्णता की सूच[ना] मात्र अपने आप में अनेक विवादों [को] आड़ लिये होती है। यहां बीमारी [से] सहानुभूति रखने वालों की अपेक्षा, उसकी विकृति सुनने की आतुरता रखने वा[ले] लोग अधिक हैं। 'साईं मरे और तकिया खाली' यहां असली रूप में चरिता[र्थ] होती है। लोग बीमार की मौत [की] अंदर ही अंदर प्रार्थना करते हैं।

राजनेता के मरने से और भी लाभ हैं

सार्वजनिक सम्वेदना का प्रदर्शन कर, जनता को गुमराह कर उससे सम्पर्क साधने का एक और अचूक मौका हाथ आता है । राजनीति में जिंदा को निभाना जितना कठिन है, मरने पर उसका स्तुति-गान उतना ही सरल है । मौत में उसे चारों ओर लाभ ही लाभ । अब आप ही कहिए क्यों न करें लोग बीमार की मौत की कामना ?

लेकिन जो बीमार है, मृत्यु-शय्या पर है, वह भी कम चौकस नहीं । वह सब समझता है और पूरा सतर्क है । छोटी-मोटी बीमारी को वह गम खाकर सह ले जाता है, उसे प्रकट नहीं होने देता । जब बीमारी बरदाश्त से बाहर हो सामने आ जाती है, तब भी स्थिति चाहे कितनी ही भयंकर क्यों न हो वह उसमें सुधार बताएगा । विवश हो जाने पर ही वह अपने को दोस्तों के हाथों में छोड़ता है । तब लापरवाही और उदासीनता घातक सिद्ध हो सकती है । जनता को आपे के बाहर होते क्या देर लगती है ! शक भर होना चाहिए कि मृत्यु का कारण बेपरवाही और उदासीनता थी । तब एक लाश की जगह कई लाशें निकलती नजर आएंगी ।

ऐसे ही नारों पर तो विरोधी दलों का राजनीतिक जीवन आधारित होता है । अस्पताल में मरे मरीज से लेकर सड़क पर कुचले गये कुत्ते तक की मृत्यु पर चिंता एवं व्यग्रता व्यक्त की जाती है । मरने वाले का उनके दल से सम्बंध हो या न हो इससे उन्हें सरोकार नहीं । मतलब है उन्हें तो इस बात से कि शासकीय दल के विरुद्ध लोकमत जाग्रत करने का उन्हें अवसर हाथ आता है ।

मंत्री महोदय की मृत्यु का मखौल देखिए । जीते-जी उन्हें फूटी आंखों भी देखना विरोधी दल सहन नहीं करता था । बराबर उनका विरोध रहा । जब वे बीमार पड़े, तब सब ओर से चिंता प्रकट की गयी । पूरी सावधानी बरती गयी । मौत पर चंदन की लकड़ियों में उनका दाह-संस्कार हुआ । आंसुओं और सम्वेदनाओं का मेला जुड़ा । भस्मी-कलश की यात्रा का स्थान-स्थान पर स्वागत हुआ । अंत में, एक माह बाद मुख्य बाजार में उनकी एक प्रतिमा खड़ी कर दी गयी । उसका अनावरण राज्य के मुख्यमंत्री द्वारा हुआ । और राज्य के सभी वरिष्ठ नेताओं द्वारा श्रद्धांजलियां दी गयीं । चुनाव के दिन आये तो पक्ष-विपक्ष दोनों ने ही उनके नाम पर व्यवसाय कर जनता को गुमराह किया । यह है राजनीति । यहां नेता का जिंदा रहना जितना खतरनाक है, उसकी मौत उतनी ही लाभदायक है—पक्ष-विपक्ष दोनों के लिए ।

इन परिस्थितियों का मैं भी शिकार हुआ । भयंकर बीमार पड़ा— मरते-मरते बचा । पर बचा अपनी होशियारी से । अगर राजनेताओं की मंशा का पूरा शिकार हो गया होता तो किसी चौराहे पर मेरी मूर्ति की भी धूमधाम के साथ स्थापना

हो गयी होती । मेला जुड़ता । चुनाव के दिनों मेरी आत्मा जो चाहती थी, उसका ढिंढोरा पीटा जाता । मेरी आत्मा की शांति के लिए जनता से न मालूम किन-किन कामों की पूर्ति का वचन लिया जाता !

खैर खुदा का ! मैं शिकंजे में न फंस सका और बच निकला । पहली बार जब बीमार पड़ा तो उस बीमारी को पूरी तौर पर मैंने गुप्त ही रखा । दूसरी बार बीमारी का हमला दूसरे राज्य में हुआ । उस राज्य के मुख्यमंत्री महोदय के पास समाचार पहुंचे । डॉक्टर आ गये, एम्बुलेंस गाड़ी आ पहुंची । अस्पताल में कमरा खाली करवा, रिजर्व हो गया । सब व्यवस्था हो गयी, पर मैंने इस सब प्रबंध की अवहेलना की । बीमारी को अपनी हिम्मत से ही भुगतने का फैसला किया । फलस्वरूप सर्किट हाउस में ही दबा पड़ा रहा । कुछ मित्र डॉक्टरों से इलाज कराता रहा ।

यों खबर छापे में जाने से रुक गयी । विरोधियों की सम्वेदनाओं, आतुरता और जिज्ञासाओं से भी बच निकला ।

पर जब तीसरी बार इस बीमारी का हमला हुआ, तब विधानसभा का सत्र चालू था । मैं था विधानसभा का माननीय अध्यक्ष । बीमारी छिपी न रह सकी । अनेक मंत्रियों को राहत मिली । आसन पर बैठने की स्थिति में जो मैं न था !

मेरे चारों ओर डॉक्टरों का घेराव डाल दिया गया था । विधानसभा में जाने की सख्त मनाही थी । कोशिश रही कि अस्पताल में मुझे भरती करा दिया जाए । डीलक्स और कॉटेज वार्ड के कमरे खाली करा दिये गये । मुझे अचरज हुआ यह देखकर कि जिस अस्पताल में मरीजों को पैर रखने की जगह नहीं है, जहां मौत के मुंह में जाते मरीजों का अस्पताल में दाखिला नहीं हो पा रहा है, वहां मेरे लिए एक नहीं, दो स्थान सुरक्षित थे !

मैं घर पर ही रहा । मिलने वालों का तांता भी तेजी से बढ़ा । जिसे भी किसी मंत्री से कोई काम निकलवाना होता, वह मेरे पास आता । मंत्रिगण स्वास्थ्य की पूछताछ के लिए आते थे, तो उनकी ताक में लोग मेरे घर पर खड़े रहते थे।

जिस दिन, मंत्री महोदय पहुंचते कि उनकी चिट भी पहुंचने में देरी नहीं करती, 'कृपया मेरे प्रश्न पर बात कर लें।'

मंत्री महोदय के जाने के बाद, प्रश्न पर हुई बातचीत के नतीजे को जानने की उत्सुकता को लिए वे मेरे कमरे में आते। मुझे अटपटा लगता । कहता, 'बंधुवर बीमार हूं । फिर कभी...!'

मेरी बात को बीच में ही काटते व बोलते, 'आपकी बीमारी के सम्बंध में नहीं मैं तो अपनी बात कहता हूं'...

अब आप ही कहें, मैं क्या करता? दिल को मसोस, आंखें मूंदे, खाट पर पड़ा रहता और वे आंखें खोले, मेरे जवाब की प्रतीक्षा में वहां अड़े रहते ।

—राजस्थान विधान सभा, जयपुर

• डॉ. कर्णसिंह

ब्रह्मविदों ने दो विद्याओं का उल्लेख किया है—परा और अपरा। आधुनिक शब्दावली में इन्हें ज्ञान (विज़डम) और विज्ञान (नॉलेज) कहा जा सकता है। इस अणुयुग में मनुष्य के सामने धर्म-संकट यह है कि ज्ञान और विज्ञान के बीच की खाई चौड़ी होती जा रही है। तथापि संस्कृत के रूप में, जो आज की महानतम जीवंत शास्त्री भाषा है और जिसके माध्यम से मानव-मस्तिष्क के सूक्ष्मतर विचार और कल्पनाएं अभिव्यक्त हुई हैं, हमें परा और अपरा दोनों विद्याओं की कुंजी प्राप्त होती है। यह इन दोनों के बीच एक ऐसे सेतु का भी काम करती है जिससे आधुनिक मानव चाहे तो बहुत लाभ उठा सकता है।

संस्कृत ने इस देश की संस्कृति और इतिहास में बहुत बड़ा योगदान दिया है। हमारी सभ्यता के उषाकाल से लेकर आज तक के क्रमिक विकास में संस्कृत एक जीवंत सूत्र का काम करती रही है। जब-जब भारत पर निराशा के काले बादल मंडराये हैं, तब-तब विशेषतः संस्कृत के माध्यम से ही हमें नया प्रकाश, विश्वास और नयी आशा प्राप्त हुई है। करोड़ों व्यक्तियों के लिए जीवन-स्रोत स्वरूपिणी गंगा की भांति ही हमारी सभ्यता के उषाकाल में संस्कृत का उद्‌गम हुआ और वह हमारे देश को जीवन और शक्ति प्रदान करते हुए शाश्वत रूप से मानो सागर की ओर बहती चली जा रही है।

संस्कृत ने हर दिशा से जो कुछ ग्रहणीय है, वह सब ग्रहण किया : **आ नो भद्राः कृतवो यन्तु विश्वतः**, अर्थात् सब दिशाओं से सद्‌विचार हमारी ओर आयें। संस्कृत भारत की भौगोलिक सीमाओं को पार करके मध्य एशिया, दक्षिणी एशिया, दक्षिण-पूर्वी एशिया तक जा पहुंची और उसका प्रभाव दूर-दूर तक व्याप्त हुआ। जहां-जहां संस्कृत पहुंची, अपने आदर्शों को भी साथ ले गयी। प्राचीनकाल में जहां तक हिंदू धर्म या बौद्ध धर्म का प्रसार हुआ, संस्कृत ही मुख्य रूप से उनकी संदेशवाहक रही।

आधुनिक काल में संस्कृत के पुनर्मूल्यांकन में पश्चिमी प्राच्यविदों का उत्कृष्ट योगदान रहा है। वे हैं श्लेजेल और शेजी, मैक्समूलर और मोनियर विलियम्स, अलेक्जेंडर हेमिल्टन तथा विलि-

यम जोन्स, पेट्रोव तथा मेनाव–जैसे विद्वान। अर्वाचीन युग में उन्होंने संस्कृत की महत्ता को फिर से उजागर किया, अन्यथा विदेशी प्रभुत्व के फ़लस्वरूप यह भव्य विरासत लुप्त हो गयी होती। संस्कृत अकेले भारत की नहीं, बल्कि सारे विश्व की विरासत का अंश है।

आधुनिक काल में संस्कृत के मूल्यांकन के चार मौलिक आधार हैं—

सर्वप्रथम, उसका अत्यंत उत्कृष्ट भाषायी ढांचा है। त्रिमुनिगण, पाणिनी, पतंजलि और कात्यायन के कारण संस्कृत का भाषा-विज्ञान और स्वर-विज्ञान सम्बंधी अपना अप्रतिम और निर्दोष सौंदर्ययुक्त विन्यास है। इस विन्यास का अध्ययन केवल अपनी खातिर नहीं, बल्कि इंडो-यूरोपियन परिवार की दूसरी महान शास्त्रीय प्राचीन भाषाओं के साथ इसके सम्बंध की खातिर भी महत्त्व रखता है। यह भाषा-विज्ञान तथा स्वर-विज्ञान की जीती-जागती प्रयोगशाला है।

दूसरे स्तर पर हैं संस्कृत की साहित्यिक विभूतियां, बहुमुखी तथा बहुरंगी। वाल्मीकि, व्यास और विश्वनाथ, कालिदास, कपिल और कल्हण, जयदेव, जैमिनी और जगन्नाथ, भवभूति, भास और भरत, अश्वघोष, अभिनवगुप्त और आनंदवर्धन, वात्स्यायन, विशाखदत्त और विद्याधर; सूची अनंत है। संस्कृत साहित्य-संग्रह के अंतर्गत मानव-अनुभव की सप्तस्वर रूप-व्यंजना हुई है, वह केवल व्याकरण या दर्शन तक ही सीमित नहीं है। मनुष्य हृदय के एक-एक भाव, आकांक्षाओं, हृदय की प्रत्येक धड़कन, कल्पना की सारी उड़ानों, मानव-जाति के सभी सुख-दुःखों का समावेश संस्कृत साहित्य में हुआ है और इसी कारण वह आधुनिक युग में भी सतत सार्थक है।

तीसरा आधार है उस ज्ञान-संग्रह का, जो आधुनिक विद्याभ्यास में भी प्रासंगिक और मान्य है। उदाहरण के लिए कला और वास्तु-शिल्प, संगीत और नृत्य, ज्योतिष और चिकित्सा, योग और मनोविज्ञान तथा गहन मनोविज्ञान की सभी

धाराओं, इन सभी क्षेत्रों में संस्कृत का मौलिक योगदान रहा है।

अंत में हम परा विद्या अर्थात—उच्चतम ज्ञान तक आते हैं। आज आधुनिक मानव एक कठिन चौराहे पर है। शताब्दियों के बाद मनुष्य को जबरदस्त शक्ति प्राप्त हुई है। यदि वह विवेक रखे तो इस शक्ति से वह दुर्दशा, दरिद्रता, पीड़ा और भ्रष्टता को भूमंडल से हटाने में समर्थ हो सकता है।

मनुष्य को आज आवश्यकता है विवेक बुद्धि की और एक नयी दृष्टि की। संस्कृत ने ऐसी ही दृष्टि प्रदान की है। वह दृष्टि है मनुष्य में देवत्व के दर्शन की। प्रत्येक मनुष्य में उसकी एक चिनगारी है। उपनिषदों में मानव-जाति की एक भव्य परिभाषा है: **अमृतस्य पुत्राः**—अमरत्व के पुत्र। मानव-परिवार की एकता की परिकल्पना भी की गयी है: **वसुधैव कुटुम्बकम्**—एक ऐसी परिकल्पना जो वर्ण, सम्प्रदाय, धर्म, राष्ट्रीयता, जाति या राजनीतिक विचारधारा, इन सारे भेद-भावों को चीरती हुई आगे निकल जाती है।

लेखक

आज अणु-युग में मनुष्य के विखंडित मानस के उपचार के लिए इसी दृष्टि, इसी विवेक की आवश्यकता है। यदि मनुष्य को अपनी ही कटुता से पार पाकर भविष्य की ओर अग्रसर होना है तो यही अपेक्षित है। मनुष्य तो अनंत यात्री है, उसके लिए प्रतीक्षा की घड़ियां नहीं हैं, उसे तो कठिनाइयों की परवाह किये बिना आगे बढ़ते जाना है—इस दृढ़ ज्ञान के साथ कि विजयश्री अंततः उसकी है—उस विवेक के आधार पर जो संस्कृत के माध्यम से हमें उत्तराधिकार रूप में मिला है, कठोपनिषद् के शब्दों में—

उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान् निबोधत
क्षुरस्य धारा निशिता दुरत्यया
दुर्गं पथस्तत् कवयो वदन्ति।

• आचार्य रजनीश

जीसस का अज्ञात जीवन

जीसस पूर्णतः ज्ञानवान थे, परंतु वे ऐसे लोगों के बीच रह रहे थे, जो कि ज्ञान से पूरी तरह अनभिज्ञ थे। इस-लिए जीसस को ऐसी भाषा बोलनी पड़ी, जिससे लगे कि वे ज्ञानी नहीं हैं।

जब बुद्ध बोलते हैं, तो बिलकुल ही दूसरी भाषा का उपयोग करते हैं। वे ऐसा नहीं कह सकते कि 'मैं परमात्मा का बेटा हूं।' वे ऐसा कह भी नहीं सकते, क्योंकि बेटा, बाप आदि सब बेकार बातें हैं। लेकिन जीसस के लिए दूसरी किसी भी भाषा का उपयोग करना असम्भव था। फिर भी जीसस अनेक प्रकार से बुद्ध से सम्बंधित हैं। ईसाइयत को यह बिलकुल पता नहीं है कि जीसस लगातार तीस साल तक कहां रहे। वे अपने तीसवें साल में प्रकट होते हैं और तैंतीसवें वर्ष में क्रॉस पर लटका दिये जाते हैं। इसका बाइ-बिल में उल्लेख है। अतः केवल तीन वर्षों का हिसाब है। परंतु भारत के पास इस आशय के कई तथ्य हैं कि जीसस कश्मीर में एक बौद्ध मठ में रहे। कश्मीर में कहानियां प्रचलित हैं कि जीसस वहां थे और इन सारे वर्षों में वे बौद्ध-भिक्षु थे—ध्यान-साधना में लीन। फिर वे येरू-शलम में प्रगट हुए। इस समय वे ती[स] वर्ष के थे। फिर उन्हें क्रॉस पर चढ़ा दि[या] गया। इसके आगे की कहानी है कि [वे] पुनर्जीवित होते हैं। लेकिन, वे फिर क[हां] अदृश्य हो जाते हैं, पुनर्जीवित होने [के] बाद? ईसाइयत के पास इस बारे में कु[छ] भी कहने के लिए नहीं है।

एक फ्रांसीसी लेखक अपनी पुस्त[क] 'द सरपेंट ऑव पैराडाइज़' में कहता है—कोई नहीं जानता कि तीस वर्ष के होने तक उन्होंने क्या किया और कहां रहे। एक कथा के अनुसार वे 'काशीर' में रहे थे। यह कश्मीर का मूल नाम है। 'का' का अर्थ है, 'वैसा ही' यानी समान और 'शीर' का मतलब है 'सीरिया'।

यह भी उल्लेख किया गया है कि रूसी यात्री निकोलस नेटोविच, जो कि करीब १८८७ के आसपास भारत आया था, लद्दाख गया। वहां वह बीमार पड़ गया और प्रसिद्ध हेमिस गुफा में रहा। गुफा में अपने निवास-काल में वह अनेक बौद्ध ग्रंथ पढ़ गया। उसने इन बौद्ध ग्रंथों में जीसस का, उनकी शिक्षाओं व उनकी लद्दाख-यात्राओं आदि के बारे में बहुत अधिक वर्णन पाया। बाद में उसने एक पुस्तक प्रकाशित की—'लाइफ ऑव संट जीसस'। इसमें उसने जीसस के लद्दाख

एवं पूर्व के दूसरे देशों के यात्रा-सम्बंधी विवरणों का उल्लेख किया।

यह उल्लेख किया गया है कि लद्दाख से जीसस, ऊंचे पर्वतों के दर्रों में से गुजरकर बरफीले रास्तों व पिंडों को पार करते हुए कश्मीर में पहलगाम पहुंच गये। वे पहलगाम (गड़रियों का गांव) में काफी लम्बे समय तक अपनी भेड़-बकरियों की देखभाल करते हुए रहे। यहां जीसस को इज़राइल की कुछ खोयी हुई जातियों के चिह्न मिले।

ऐसा उल्लेख मिलता है कि जीसस के निवास के बाद से ही यह गांव पहलगाम के नाम से पुकारा गया। 'पहल' का कश्मीरी भाषा में अर्थ होता है, गड़रिया और गाम का मतलब होता है—गांव। बाद में श्रीनगर जाते हुए रास्ते में जीसस विश्राम के लिए रुके और इसमुक्कम स्थान पर उन्होंने उपदेश दिये। यह गांव भी 'इस-मुक्कम' (जीसस के विश्राम की जगह) नाम से उनके पीछे ही पुकारा जाने लगा।

जीसस जब क्रॉस पर थे, तब एक सिपाही ने भाले से उनके शरीर को छेद दिया, फलतः उसमें से खून व पानी फूट पड़ा। इस घटना का सेंट जॉन के गॉस्पेल, अध्याय १९, पद्य चौंतीस में उल्लेख किया गया है और यह घटना इस बात को सिद्ध करती है कि जीसस क्रॉस पर जीवित थे, क्योंकि मृत शरीर में से खून नहीं बहता। फिर उनका शरीर गुफा से तीन दिन के बाद गायब हो गया। इसके बाद कम-से-

कम आठ लोगों ने उन्हें उनके नये शरीर में देखा। तब वे फिर अदृश्य हो गये। ईसाइयत के पास इस बात का कोई रिकॉर्ड नहीं है कि फिर कब उनकी मृत्यु हुई।

वास्तविकता यह है कि वे पुनः कश्मीर आ गये और वहां वे एक सौ बारह वर्ष की अवस्था तक रहे। कश्मीर में ही वे मृत्यु को प्राप्त हुए। कश्मीर में वे 'यूसा-आसफ' के नाम से जाने जाते थे। उनकी कब्र भी इसी नाम से जानी जाती है।

'सरपेंट ऑव पैराडाइज़' का लेखक उस कब्र को देखने गया था। वह लिखता है; मैंने एक बहुत पुरानी कब्र देखी, जो एक जरा-जीर्ण दीवार से घिरी हुई थी, जबकि दूसरी तरफ पत्थर में काटा हुआ एक पैर का निशान था। उसे 'यूसा-आसफ' का पद-चिह्न बतलाते हैं और किम्वदंती के अनुसार 'यूसा-आसफ' जीसस था। दीवार पर एक शिलालेख लटका हुआ है और उसके नीचे लिखा है—'यूसा-आसफ (खान्यार, श्रीनगर)'

वह स्थान, कब्र, सब यहूदी ढंग के हैं। भारत में कोई भी कब्र इस तरह की नहीं है। उसका ढांचा यहूदी है और उस पर जो भाषा लिखी गयी है, वह हिब्रू है।

पुनर्जीवित होने की घटना पुराने कट्टर ईसाइयों की समझ में नहीं आती, लेकिन योग के लिए ऐसा नहीं है। योग का विश्वास है और इस बात के बहुत प्रमाण हैं कि कोई आदमी बिना मृत हुए मृत-जैसा दिखायी दे सकता है। जैसा कि हम समझ सकते हैं, जब जीसस को क्रॉस पर रखा गया, तो उन्होंने योग की एक गहरी प्रक्रिया का उपयोग किया। जब घातकों ने देखा कि वे मर गये हैं, तो उन्होंने शरीर को नीचे उतार दिया और उसे अनुयायियों को दे दिया। तब शरीर को परम्परा के अनुसार तीन दिन गुफा में रख दिया गया। गुफा से वे अदृश्य हो गये। ईसाइयों का एक पंथ—'ईसीन'—कहता है कि ईसीन-अनुयायियों ने जीसस को ठीक होने में सहायता की।

तीन दिन में घावों का भरना शुरू हुआ और जब घाव भर गये, तो वे गायब हो गये। आत्म रक्षा के लिए उन्हें उस देश से चला जाना पड़ा।

क्रॉस पर लटकाये जाने के बाद जीसस में भारी आध्यात्मिक परिवर्तन आया। फिर वे पूर्ण-मौन में जिये। तब फिर वे 'प्रोफेट' मसीहा नहीं रहे। फिर वे मंत्रणा देनेवाले या उपदेश करनेवाले नहीं रहे। उसके बाद वे बिलकुल मौन रहे। इसलिए इस सम्बंध में ज्यादा पता नहीं है, लेकिन यह निश्चित है कि वे भारत पहुंचे थे। और भारत में वे लगातार सत्तर वर्षों तक रहे थे।

जो कुछ भी जीसस ने कहा, वह समझा नहीं गया या गलत समझा गया। उन्होंने कहा, 'मैं यहूदियों का सम्राट हूं।' उनका संसार के किसी राज्य से कोई मतलब नहीं था। मैं सोचता हूं कि उनके दुश्मनों के द्वारा ही नहीं, वरन् उनके अनु-

यायियों द्वारा भी उन्हें गलत समझा गया। अनुयायी भी सोचने लगे थे कि जीसस आगे-पीछे सम्राट होने वाले हैं, बस, इसी ने सारे उपद्रवों को पैदा किया। वास्तव में जीसस को किसी और देश में क्रॉस पर नहीं लटकाया जा सकता था। यहूदियों के लिए यह एक समस्या थी।

जीसस बुद्ध की तरह से बोलने लगे थे। फलतः वे निरंतर गलत समझे गये।

केवल रोमवासी पाइलेट जीसस के प्रति अधिक समझदारी दिखलाता है। वह निरंतर महसूस करता है कि एक निर्दोष मनुष्य को अकारण ही मारा जा रहा है। उसने अपनी तरफ से भरसक प्रयत्न किया कि जीसस को न मारा जाए। जब जीसस को लटकाया जा रहा था, तो उस अंतिम क्षण में भी उसने कुछ प्रश्न पूछे।

पाइलेट ने पूछा, "सत्य क्या है?"

जीसस मौन रहे। यह एक बौद्ध उत्तर था, क्योंकि केवल बुद्ध ही मौन रहे सत्य के बारे में, कोई दूसरा नहीं। यहूदियों ने इससे यह समझा कि वे नहीं जानते। यदि वे सचमुच जानते हैं, तो उन्हें कहना चाहिए।

लेकिन मैंने सदा ही ऐसा अनुभव किया है कि पाइलेट समझ गया था। वह एक रोमन था, वह समझ सकता था। उसने सारा मामला पादरियों को सौंप दिया।

यह सारा मामला दो भाषाओं में होता है—भिन्न भाषाओं में। जीसस इसी दुनिया की शब्दावली में दूसरे लोक की भाषा बोलते हैं, और यहूदी सारी बात को शाब्दिक अर्थों में समझते हैं।

भारत में ऐसा घटित नहीं होता। यहां दृष्टांतों व प्रतीकों, 'पैराबेल्स' की लम्बी परम्परा है। किंतु यहूदी बहुत ही शाब्दिक अर्थ लेने वाले लोग हैं। आज भी वे वैसे ही हैं। वे पदार्थ की भाषा में सोचते हैं। 'ईश्वर भी पदार्थ के ही सातत्य में है'।

इसलिए जीसस को समझना असम्भव हो गया, क्योंकि यहूदी कहते हैं, "जब तुम्हें कोई चोट पहुंचाये, तो तुम दोगुनी ताकत से चोट मारो।" पदार्थ इसी तरह व्यवहार करता है। "यदि किसी ने तुम्हारी एक आंख निकाल ली है, तो तुम उसकी दोनों आंखें निकाल लो।"

और जीसस बिलकुल विपरीत बात कहने लगे, "यदि कोई तुम्हारे एक गाल पर चपत लगाये, तो तुम अपना दूसरा गाल भी उसके सामने कर देना।" यह बिलकुल बौद्धों की बात थी।

वास्तव में आप समझ ही नहीं सकते कि कैसे एक यहूदी अचानक इस तरह से बोलने लगा। उनके पीछे अतीत की कोई परम्परा, कोई श्रृंखला नहीं थी। और तब तक कुछ नहीं होता, जब तक उसके पीछे कोई कार्य-कारण का सम्बंध न हो।

इसलिए जीसस एक यहूदी की तरह समझ में नहीं आते। वे अचानक प्रगट होते हैं, परन्तु अतीत के साथ उनकी कोई श्रृंखला नहीं है। यहूदियों की ईश्वर की

धारणा के लिए जीसस का प्रेम, जीसस की करुणा, सब व्यर्थ की बातें हैं। किंतु जीसस अचानक ऊपर उठ आते हैं और कहते हैं, "परमात्मा प्रेम है।" जीसस यहूदी परम्परा के हिस्से बिलकुल नहीं हैं। इसी-लिए उन्हें क्रॉस पर लटका दिया गया।

जैसा कि मैं जीसस को देखता हूं, वे गहरे ध्यान में डूबे, बुद्धत्व को प्राप्त व्यक्ति हैं, लेकिन एक ऐसी जाति के साथ काम कर रहे हैं, जो कि राजनीतिक है, जो कि वास्तव में धार्मिक नहीं है और न ही दार्शनिक है। जीसस उनके लिए 'विदेशी' थे। उन्हें 'चुप' करना जरूरी था। किंतु जीसस बच निकले। इसके बाद वे मौन रहे। एक समूह के साथ गुह्य प्रणाली से कार्य करते रहे।

मैं ऐसा अनुभव करता हूं कि अभी भी कोई गुप्त-प्रथा काम करती है। यदि कोई ईसाइयत को भूल जाए और पीछे लौट कर जीसस को खोजने, बिना ईसाइयत के, जाए तो वह समृद्ध हो सकता है, लेकिन अब ईसाइयत एक बाधा बन गयी है। जब कभी आप जीसस के बारे में सोचते हैं, तो ईसाइयों की व्याख्या ही एक-मात्र व्याख्या बन जाती है।

जब बीस साल पहले मृत-सागर के पास से प्राचीन सुरक्षित अभिलेख पाये गये, तो उनको लेकर एक तूफान आ गया, क्योंकि वे अभिलेख 'स्क्रॉलस' अधिक प्रमाणित हैं। वे मूलतः ईसीनीज के पास थे, लेकिन ईसाइयत कोई समझौता नहीं कर सकती। ईसाई एक दूसरी ही कहानी कहते हैं, और यहूदी भी बिलकुल भिन्न।

जब मैं कोई बात कह रहा हूं, तो अपने इर्द-गिर्द दो प्रकार के लोगों को मैं करूंगा। ऐसा सदैव ही होता है। एक बाह्य-आयामी— 'एक्सोटेरिक'—लोग वे संगठन करेंगे! वे बहुत-सी बातें पदार्थ समाज, संसार के तल पर करेंगे। वास्तव में जो कुछ मैं कह रहा हूं, वे उसको सम्भाल कर रखने में मदद करेंगे। दूसरा जो समूह होगा, वह आंतरिक जगत से ज्यादा सम्बन्धित होगा। कभी-न-कभी आगे-पीछे दोनों अवश्य द्वन्द्व में आएंगे।

इसलिए धर्म को बचाने के नाम पर ईसाइयत में जो कुछ भी गुह्य है, बाह्य संस्था 'एक्सोटेरिक ग्रुप' उसे नष्ट कर रही है और अब पोप जीसस के बिलकुल विपरीत है।

यह दो घटनाओं की अंतिम अवस्था है—आखिरी चरम सीमा, जहां तक कि वह बढ़ सकती है। वह उस पादरी की तरफ से है, जिसने की जीसस को फांसी पर चढ़ाया, बजाय जीसस की तरह हो जाने के। और यदि जीसस फिर लौटकर आते हैं, तो इस बार उन्हें रोम में क्रॉस पर लटकाया जाएगा—वेटिकन के द्वारा। यह बाह्य-संस्था वाला हिस्सा है।

परंतु ये स्वाभाविक समस्याएं हैं। होती हैं। आप कुछ नहीं कर सकते, लेकिन जीसस परम-ज्ञान-प्राप्त थे, जैसे कि बुद्ध, महावीर, कृष्ण आदि।

हैरोल्ड विल्सन के संसदीय व्यंग्य

• राधेश्याम यादव

हैरोल्ड विल्सन लम्बे अर्से तक ब्रिटिश संसद में विरोधी दल के नेता रहे हैं; इसलिए उनकी आवाज उनके व्यंग्य की-सी ही तीखी होती चली गयी। केवल पांच वर्ष (१९६४–६९) के लिए प्रधानमंत्री बने। इस बीच उनके ऊपर जो सत्ता का बोझ आया उसने उनकी व्यंग्यात्मक आवाज को उस समय बहुत कुछ नर्म कर दिया।

सन १९६९ में विल्सन के हाथ से सत्ता निकल गयी और वे फिर संसद में विरोधी दल के नेता के रूप में आ गये। उनकी व्यंग्य-विनोद की प्रतिभा फिर खुलकर सामने आने लगी। उनके संसदीय जीवन और राजनीतिक क्षेत्र के व्यंग्य-विनोद के कुछ नमूने प्रस्तुत हैं :—

जब विल्सन संसद में विरोधी पक्ष के नेता चुने गये तो प्रधानमंत्री मैकमिलन ने उन्हें बधाई दी, "मुझे उम्मीद है कि श्री विल्सन मुझे इस बात का अवसर देंगे कि मैं उन्हें बधाई दूं। मुझे यह भी उम्मीद है कि वे इस पद का सुख भोगने के लिए वर्षों जीवित रहेंगे।"

मुक्त मुसकराहट के साथ विल्सन ने जवाब दिया, "मैं प्रधानमंत्री की इस सदिच्छा के लिए उन्हें धन्यवाद देता हूं, पर मेरा इस पद पर रहना सिर्फ उतनी ही देर के लिए होगा जितनी देर में यह कुरसी मैं उनके लिए भलीभांति गरम न कर दूं।"

(सर्द देशों में खाली कुरसियां बहुत ठंडी हो जाती हैं।)

एक बार प्रधानमंत्री मैकमिलन ने संसद में लेबर पार्टी की आपसी फूट का जिक्र कर दिया तो विल्सन साहब ने तुरंत जवाब दिया, "और कंजरवेटिव पार्टी की फूट के लिए क्या कहा जाए? यही न कि जब भी प्रधानमंत्री विदेश से लौटते हैं तो उनके सहयोगी बटलर महाशय बड़े प्रेम से उनका गला दबोचकर उनका स्वागत करते हैं।"

१९५६ में मैकमिलन के बजट-भाषण के उत्तर में विल्सन ने कहा, "प्रधानमंत्री ने कहा है कि यह बजट स्वर्गीय प्रधानमंत्री ग्लैडस्टन की नजरों के सामने रचा गया है (ग्लैडस्टन का एक चित्र चांसलर के कमरे में टंगा रहता है), पर इसमें एक पैरा ऐसा है जो, मुझे लगता है कि, कुख्यात जालसाज बॉटमले की नजरों के सामने लिखा गया है।" (बॉटमले जालसाजी में सजा काट चुका था।)

मैकमिलन पर एक और कटाक्ष करते हुए उन्होंने कहा, "प्रधानमंत्री की शिक्षा

काफी खर्चीली साबित हुई है—ईटन का सबसे खर्चीला स्कूल और स्वेज नहर की कमरतोड़ राजनीति।"

उन्हीं पर एक आर्थिक व्यंग्य, "हम एक ऐसे वित्तमंत्री की छाया में रह रहे हैं जिनका दिमाग ही दो टुकड़ों में बंटा हुआ है—एक दिन हरा तो दूसरे दिन ऊसर।"

सर अलेक डगलस होम के प्रधान-मंत्री बनते समय भी विल्सन ने काफी चुटीले प्रहार किये थे। जब होम प्रधानमंत्री बने थे, तो वे दोनों में से किसी भी सदन के सदस्य नहीं थे। उनके चुनाव के साथ-साथ कुछ दिन के लिए संसद की छुट्टी घोषित कर दी गयी। इस पर विल्सन भड़क उठे, "हमसे कहा गया है कि इस विशिष्ट परिस्थिति में, जिसमें कि नयी सरकार बनायी गयी है, संसद को कुछ दिनों के लिए स्थगित कर दिया गया है। मेरे खयाल से संसद के सामने एक असा-धारण परिस्थिति आ ही गयी है, क्योंकि कल तक हम ऐसे प्रधानमंत्रियों की छाया में बैठते थे जो दोनों सदनों में एक का सदस्य अवश्य होता था, पर आज हम एक ऐसे प्रधानमंत्री के साथ आ रहे हैं जो चुनाव-अवकाश को छोड़कर किसी भी सदन का सदस्य नहीं है।"

होम और हेलशम के ऊपर एक और कटाक्ष—

"हमें यह बताया गया है कि लार्ड होम और हेलशम की उच्च-सदन में ऐसी खबर ली गयी है कि वे इस लोकसभा शरण लेने के लिए आतुर हैं।"

आर्थिक मामलों में लार्ड होम कथित सूझबूझ के ऊपर विल्सन ने किया, "यह कहना कि उद्योग, प्र और आर्थिक मामलों में प्रधानमंत्री पथ-प्रदर्शन ग्रहण किया जाए, ऐसा ही कि जैसे इस देश के मामलों को दलाल के हाथों में सौंप देना।

प्रधानमंत्री होम के भाषणों पर चोट, "इन दो हफ्तों में प्रधानमंत्री बेरोक-टोक कोई बहत्तर भाषण दिये जिन्हें अखबारों में पूरा-पूरा छापा है। मैंने वे सारे भाषण पढ़े हैं। सही कहूं तो, छह भाषण बारह पढ़े हैं।"

जब एक कंजरवेटिव संसद-सदस्य उन्हें भाषण के बीच में टोका तो वे "हम सब पर ही यह भारी जिम्मे है कि हम पूरे ब्रिटेन के लिए आवाज उ पर हममें से बहुत कम दकियानूसी उस तरफ बैठे (सरकारी सदस्य) दकियानूसी ब्रिटेनवासियों की तरफ करने की काबलियत रखते हैं।"

वित्तमंत्री एमरी पर एक चोट "माननीय सदस्य ने जो बात कही उस यह टिप्पणी जरूर करना चाहूंगा कि वित्त-मंत्री के नाम पर सिर्फ एक स रखने वाला 'वेदरकाक' (हवा की के अनुसार घूमने वाला यंत्र) मिला

—३७ डी. गुप्ता कॉलोनी, दि

• मोहन राकेश

हिंदी काव्य के उदय-काल से भावना और शैली दोनों क्षेत्रों में जो प्रयोग हो रहे थे, उन्हें भक्तिकाल में आकर ही प्रौढ़ता प्राप्त हुई । वर्ण्य-वस्तु में अंतर रहते हुए भी आदिकाल से रीतिकाल के अंत तक एक ही अविच्छिन्न परम्परा देखी जा सकती है । वीरगाथा हो या भगवद्गाथा, इस परम्परा के चिंतन तथा अभिव्यक्ति में एक समानता रही है ।

स्व. मोहन राकेश ने कहानी, उपन्यास और नाटकों के सिवाय कुछ निबंध भी लिखे थे। उनका एक अप्रकाशित निबंध हम यहां साभार प्रकाशित कर रहे हैं।

वर्णनों में अतिशयोक्ति, चरित-नायक की श्रेष्ठता और गौरव को प्रतिष्ठित करने के लिए उसमें प्रायः सभी उदात्त गुणों का आरोप और ऐसी बहुत-सी बातें इस परम्परा में एक-सी मिलेंगी। यदि पद्मावत की प्रतीकात्मक व्याख्या की बात हटा दी जाए और राम के परब्रह्मत्व को क्षण भर के लिए भुला दिया जाए तो नायकों के औदार्य, शौर्य, सौंदर्य आदि की दृष्टि से और खलनायकों के परस्त्री-प्रेम, उच्छृंखल आचरण और नृशंस व्यवहार आदि की दृष्टि से चंद, जायसी और तुलसी एक ही विशिष्ट परम्परा का निर्वाह करते प्रतीत होते हैं। पृथ्वीराज और गोरी हों या राम और रावण, हम इस परम्परा के कवियों को प्रायः एक-से चरित्र-वैषम्य की सृष्टि करते देखते हैं। इस परम्परा में प्रायः एक से छंदों और अलंकारों का प्रयोग हुआ है और विभाव-पक्ष का विस्तार भी लगभग एक-सा है। मुक्तक के क्षेत्र में इस परम्परा का विशेष विकास विद्यापति और सूर के हाथों हुआ और प्रबंधकाव्य के क्षेत्र में
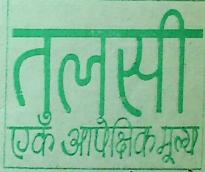
तुलसी के हाथों । प्रबंध और मुक्तक के आधारभूत भेद के रहते हुए भी इन सब कवियों की मुख्य प्रवृत्ति एक-सी है। विनय-निवेदन हो, अनुराग-वर्णन हो या युद्ध-वर्णन, इन कवियों में हम एक-सी लाक्षणिकता और व्यंजनात्मकता देखते हैं । प्रकृति और मानव, दोनों ही इस परम्परा में गौण स्थान रखते हैं । स्वतंत्र रूप से प्रकृति का चित्रण इस काव्य में नहीं हुआ और मानव का चित्रण अतिमानव के रूप में ही हुआ है । मंथरा-जैसा मानवीय चरित्र इस परम्परा का अपवाद ही

समझा जा सकता है। कथा और नीति का इस परम्परा में ऐसा सम्मिश्रण रहा है कि स्वतंत्र रूप से कथा का महत्त्व भी स्थापित नहीं हो पाया। यह परम्परा मुख्यतया भावपरक काव्य की परम्परा है, जिसमें कवियों की निजी रुचि-अरुचि, घृणा-अनुराग आदि की व्यंजना ही उद्देश्य रही है।

भक्तिकाल में इस परम्परा को प्रौढ़ता प्राप्त हुई और इसका चरम विकास सूर और तुलसी के काव्य में हुआ। व्यक्तित्व और कृतित्व में जो सामंजस्य भक्त-कवियों की रचनाओं में मिलता है, वह पूर्ववर्ती या परवर्ती कवियों की रचनाओं में दिखायी नहीं देता। रीतिकाल से आगे के कवि न्यूनाधिक मात्रा में यशःप्रार्थी अवश्य रहे हैं और जहां यह प्रार्थित्व हो वहां व्यक्तित्व और कृतित्व में एक विभाजक रेखा अवश्य खिंच जाती है। अनुभूति में व्यापकता और गहराई की दृष्टि से तथा अभिव्यक्ति में शक्ति और सौंदर्य की दृष्टि से भक्ति-काव्य में जो संतुलन प्रतीत होता है वह भी परवर्ती काव्य में नहीं है। आधुनिक काव्य के विभिन्न सोपानों में इनमें से एक-एक पक्ष का ही विशेष विकास हुआ है। भक्त-कवियों में से सामान्यतः सभी ने गहरी आंतरिक भावना से अनुप्राणित होकर काव्य की रचना की है। मार्ग या दृष्टि के भेद का भावना की गहराई पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। आंतरिक विश्वास होने पर आस्तिक और नास्तिक भावना में एक-सी गहराई हो सकती है। अतः सगुण [illegible] निर्गुण के भेद से कबीर और जायसी [illegible] सूर और तुलसी की भावना की ग[illegible] में अंतर नहीं आया। भावोत्कर्ष के [illegible] हुए प्रकरण इन सभी कवियों के काव्[illegible] बिखरे हुए मिलेंगे। कबीर की ये पंक्[illegible] उनकी भावना की आंतरिकता का प[illegible] देती हैं—

प्रीतम को पतियां लिखूं जो कहुं होय बि[illegible]
तन में मन में नयन में ता कौ कहा [illegible]

और इसी आंतरिकता का परि[illegible] तुलसीकी इन पंक्तियों में मिलता है—

जाके प्रिय न राम बैदेही।
तजिये सो नर कोटि बैरि सम जद्यपि प[illegible]
सनेही ।।

तथा सूर की इन पंक्तियों में—

हम तो दुहूं भांति फल पायो।
जो ब्रजनाथ मिलें तो नीको,
नातरु जग जस गायो।

कबीर के काव्य का स्वीकृति[illegible] अर्थात प्रेम-पक्ष बहुत सबल है, पर [illegible] काव्य का वह अंश सबसे अधिक [illegible] ग्राही बन पाया है, जहां दूसरे मत-मता[illegible] या पाखंड प्रपंचों की निंदा की गयी [illegible] कबीर के साधनात्मक रहस्यवाद ने [illegible] उनके काव्य के भाव-पक्ष को प्रभा[illegible] किया है। भगवद्विषयक रति और [illegible] स्थायी भावों से अनुप्राणित उक्तियां [illegible] अपना एक सीमित क्षेत्र अवश्य है, पर [illegible] का मुख्य कृतित्व इस क्षेत्र में नहीं [illegible] कबीर की सुधारवादी चेतना ने [illegible]

जगह उनके काव्य को उपदेशात्मक बना कर उसकी रसात्मकता को अवरुद्ध कर दिया है। तुलसी के काव्य में इस चेतना के रहते हुए भी प्रेम-भाव की वह ग्राहिता है जो पाठक या श्रोता के हृदय पर एक गहरी छाप छोड़ जाती है। प्रबंधकाव्य के अंतर्गत विषयों का कुछ ऐसा विस्तार रहता है कि भावपूर्ण स्थल कई बार विविध वर्णनों, व्याख्यानों तथा कथा-प्रसंगों के बीच दबकर रह जाते हैं। तुलसी के काव्य में कवित्व के साथ-साथ उनके पांडित्य, दार्शनिक चिंतन और व्यवस्था-विधान का स्पर्श रहते हुए भी रस का प्रवाह अखंड रहता है, अवरुद्ध नहीं होता। तुलसी के काव्य का स्वीकृति-पक्ष या प्रेम-पक्ष अपेक्षया अधिक पुष्ट है। अन्य पक्ष न केवल गौण हैं अपितु सामान्यतया स्वीकृति-पक्ष के प्रभाव की अभिवृद्धि में सहायक भी होते हैं।

कबीर और तुलसी दोनों के काव्य में उनके व्यक्तिगत अहं का परिचय मिलता है। परंतु जहां कबीर का अहं तत्वज्ञानी कबीर का अहं है, दास कबीर का नहीं, वहां तुलसी का दास तुलसी के अतिरिक्त और कोई अहं नहीं है। कबीर के अहं का आश्रय अपनी उपलब्धि की चेतना है जब कि तुलसी के अहं का आश्रय प्रभु राम के साथ उनका सेव्य-सेवक सम्बंध ही है। इससे कई स्थलों पर कबीर के काव्य में जो व्यक्तिपरकता आ गयी है, वह तुलसी के काव्य में नहीं है। कबीर के लिए कबीर की भावना प्रमाण है तो तुलसी के लिए रामाश्रित होने की चेतना। इससे दोनों के भाव-निवेदन में जो सूक्ष्म अंतर आ जाता है, वह उनके काव्यगुण में भी अंतर ला देता है। तुलसी के काव्य में आत्मपरकता का अभाव उनकी अनुभूति की विशदता को प्रमाणित करता है।

भक्त-कवियों में सूर एक ऐसे हैं जिन्होंने अपने काव्य की भावना और अपने चरित्रों की भावना में अपने को पूरी तरह से खो दिया है। सख्य-भाव के पोषक और कृष्णसखा कहलाने वाले सूर में अपने सखात्व को लेकर उतना अहं नहीं है जितना तुलसी में अपने दासत्व को लेकर। नंद, यशोदा, बालकृष्ण और गोप-गोपिकाओं से स्वतंत्र सूर का अपना कोई व्यक्तित्व ही

प्रतीत नहीं होता। यदि उनका कोई अपना व्यक्तित्व है तो वह 'द्विविध आंधरे' और 'बिना मोल के चेरे' के रूप में ही। इस तरह सूर शब्द सूर की भावना का ही प्रतीक हो गया है।

सूर के सम्बंध में यह निर्द्वंद्व रूप से स्वीकार किया जाता है कि वात्सल्य और अनुराग के क्षेत्र में प्रायः सभी स्थितियों को उनकी लेखनी ने छुआ है और आंतरिक गहराई के साथ छुआ है। यदि व्यापकता का सम्बंध विषयों और वस्तुओं के वैविध्य के साथ ही स्वीकार किया जाए तो जायसी को इस दृष्टि से सर्वाग्रणी मानना होगा, क्योंकि वनस्पतियों से लेकर ग्रह-नक्षत्रों तक की जैसी जानकारी उन्हें थी, शायद और किसी को नहीं थी। इसलिए भावना के क्षेत्र में सूर के वैशिष्ट्य को स्वीकार किये बिना नहीं रहा जा सकता।

भक्तिकालीन काव्य में बहुत शक्तिमत्ता है और उसकी सम्प्रेषणीयता तीव्र और असंदिग्ध है, इसका कारण भक्त-कवियों की भावना की आंतरिकता और तीव्रता को माना जा सकता है। परंतु अभिव्यक्ति में सौंदर्य-विधान एक-एक कवि की नैसर्गिक प्रवृत्ति पर निर्भर करता है। कबीर की अभिव्यक्ति में शक्तिमत्ता बहुत है, क्योंकि उन्होंने अपनी आवश्यकता के अनुसार शब्द और छंद की मर्यादाओं का भी तिरस्कार कर दिया और परम्परागत साहित्यिक मूल्यों को विशेष महत्त्व नहीं दिया। उनकी अभि[illegible] जन-साधारण की अपेक्षाओं के अ[illegible] ढलती रही। उनके लिए प्रतिपाद्य [illegible] ही महत्त्व था, विधि का नहीं। अभि[illegible] के प्रति यह उदासीनता ही उनकी [illegible] व्यक्ति का गुण बन गयी और उसने [illegible] अनायास ही सहजता और शक्ति ला[illegible] कबीर की उलटबांसियां इसका अ[illegible] हैं। वे सहज अभिव्यक्ति न होकर प्र[illegible] जन्य रचना हैं। अभिव्यक्ति के प्रति [illegible] सीनता ने जहां कबीर के शब्दों और [illegible] को अपूर्व शक्ति दे दी, वहां उनकी [illegible] व्यक्ति का सौंदर्य-पक्ष बहुत शिथिल [illegible] गया। कई जगह फिर ऐसे बिम्बों [illegible] विधान भी हुआ जो सौंदर्य-दृष्टि को [illegible] पहुंचाते हैं।

सूर और तुलसी ने सुंदर [illegible] विधान के लिए एक सशक्त शैली [illegible] अपनाया। इनकी शैली में कबीर [illegible] तीखापन नहीं है, पर उसमें सहज [illegible] से अपेक्षित प्रभाव की सृष्टि का [illegible] अवश्य है। कबीर की अभिव्यक्ति [illegible] स्थलों पर अधिक सशक्त है, पर इन[illegible] की अभिव्यक्ति में शक्ति के साथ [illegible] का जो मिश्रण है, वह इनके कृतित्व [illegible] महत्त्व साहित्यिक दृष्टि से कहीं [illegible] बढ़ा देता है।

काव्य के सामूहिक प्रभाव को [illegible] में रखते हुए तथा सर्वांगीणता [illegible] दृष्टि से ऐतिहासिक पार्श्व में [illegible] की देन निःसंदेह अधिक महत्त्वपूर्ण है।

● महेश्वर दयाल

दिल्ली के बावटे पर २२ मार्च, १८३५ की अंधेरी रात में एक अंगरेज का खून हो गया। दिल्ली का रेजीडेंट विलियम फ्रेजर मारा गया था। अंगरेजों के होश उड़ गये। वे सोचने लगे कि हमने हिंदुस्तानियों को कुचल तो दिया, लेकिन अभी कहीं जान अटक रही है। फिरंगियों को हुकूमत के नशे ने अंधा कर दिया। लाल किले में सम्राट अकबरशाह सानी इनके हाथों में कठपुतली था। अंगरेज जो चाहते करते। कोई पूछने वाला न था। विलायत से आये व्यापारी राजपाट के मालिक क्या बने, हिंदुस्तान से लूटी दौलत के सहारे नवाबी शान से रहने लगे। ऐश और आराम में पड़कर गोरे नवाब कहलाने लगे। ये नये नवाब अपनी विवाहिताओं और अविवाहिताओं (देसी और विलायती) और पूरे कुनबे के साथ बड़ी-बड़ी कोठियों और शानदार बंगलों में ठाठ से रहते। हरेक की सेवा के लिए सौ-डेढ़ सौ नौकर होते। दिल्ली के एक रेजीडेंट अख्तरलोनी (ऑक्टरलोनी) की तेरह बेगमें थीं। उसकी एक बीवी मुबारक बेगम ने दिल्ली में करनाल की सड़क (माडलटाउन के सामने) से लगा बहुत बड़ा बाग लगवाया। हौज काजी के पास मस्जिद बनवायी।

हैदर हारसे नामक एक ऐंग्लो-इंडियन को महलसरा की औरतों के साथ हिंदुस्तानी खेल खेलने का शौक हुआ तो उसने अपने जिस्म पर शतरंज की बिसात गुदवायी। वह पलंग पर लेटा हुक्का गुड़गुड़ाता, किताब पढ़ता और उसकी बेगमें बदन पर बनी बिसात पर मोहरे लगाकर शतरंज खेला करतीं। विलियम फ्रेजर भी किसी से कम न थे। लम्बी दाढ़ी थी लेकिन तिनकों भरी। आयेदिन कोठी में जश्न मनाये जाते। शराब के दौर चलते। राग-रंग की महफिलें जमतीं। फ्रेजर के मिलने-जुलने वालों में रियासत फीरोजपुर झिरका और लोहारू के नवाब बख्श खां भी थे। दोनों रियासतें उन्हें जागीर में मिली थीं। उन दिनों जब अंगरेजों की लड़ाई भरतपुर से छिड़ी तो अहमद बख्श खां अलवर महाराजा के सवारों का एक दस्ता लेकर अंगरेजों के साथ मिलकर लड़ने को गये। लड़ाई के मैदान में अंगरेज सेनापति गोली से बुरी तरह घायल हो गया। अहमद बख्श खां ने अंगरेज सेनापति को अपने घोड़े पर

बिठाया और लड़ते-भिड़ते उसे दुश्मनों के चंगुल से निकाल लाया। घाव गहरे थे, वह बच न सका। लेकिन मरने से पहले उसने अपने खून से कागज पर लिख दिया कि अहमद बख्श खां ने मेरी जान बचाने के लिए अपनी जान की परवाह न की, इसलिए इसे इनाम दिया जाए (यह कागज लोहारू की रियायत में आज भी मौजूद है।) अंगरेजों ने जीत का दरबार किया तो अहमद बख्श खां को फीरोजपुर झिरका जागीर में दे दिया। अलवर महाराज से उन्हें लोहारू का परगना मिला। दो रियासतों के नवाब अहमद बख्श खां यों तो बहुत सुखी थे, लेकिन उनको हरदम यह चिंता रहती कि उनके बाद उनके बेटों में जागीर के बंटवारे का झगड़ा हुआ तो सब सत्यनाश हो जाएगा। उन्होंने मरने से पहले अपनी बिन-व्याही बेगम के बड़े बेटे शम्सुद्दीन खां को फीरोजपुर झिरका की गद्दी पर बिठाने का और अपनी विवाहिता के लड़कों अमीनुद्दीन खां और जियाउद्दीन खां को लोहारू की रियासत देने का फैसला किया। बाप के सामने तो बेटों ने कुछ नहीं कहा, लेकिन उनकी आंखें बंद होते ही बेटों ने लड़ना शुरू कर दिया।

शम्सुद्दीन खां १९ बरस के थे और और दोनों छोटे भाई ग्यारह और सात बरस के। शम्सुद्दीन खां ने अंगरेजी सरकार में अर्जी दी कि मैं सबसे बड़ा बेटा हूं, बाप की दोनों जागीरें मुझे मिलनी चाहिए, छोटे भाइयों को गुजारे के लिए कुछ रुपये दे दिये जाएं; लेकिन उनकी दाल न गली। थोड़े दिनों बाद हाकिंस दिल्ली का रेजीडेंट बन गया। यह नवाब शम्सुद्दीन खां का गहरा दोस्त था। उसने दोनों जागीरें बड़े भाई को दिलवा दीं। हाकिंस के बाद विलियम फ्रेजर दिल्ली का रेजीडेंट बन कर आया। यों तो फ्रेजर की अहमद बख्श खां से दोस्ती

करीम खां

के नाते सब बेटे उसे चचा कहकर पुकारते थे, लेकिन कुछ दिन से फ्रेजर और नवाब शम्सुद्दीन एक-दूसरे से खिंचे-खिंचे रहने लगे थे। कहा जाता है कि नवाब को फ्रेजर पर संदेह था कि वह उसकी बहन पर डोरे डाल रहा है। भाइयों का झगड़ा उसके सामने आया तो उसने दोनों छोटे भाइयों को भड़का दिया कि रियासत लोहारू तुम्हारी है। तुम्हारे

बाप ने भी यही वसीयत की थी,तुम कलकत्ता जाओ और गवर्नर-जनरल की अदालत में अपील करो। मैं तुम्हारी सिफारिश करूंगा।

बड़े भाई अमीनुद्दीन खां कलकत्ता चले गये। शम्सुद्दीन खां को पता चला तो वे फ्रेजर से मिलने बावटे पर उसकी कोठी पर पहुंचे। (यह वह जगह है जहां आजकल हिंदूराव का अस्पताल है। फ्रेजर के मरने के बाद ग्वालियर की महारानी बीजाबाई के भाई हिंदूराव ने इसे खरीद लिया था। हिंदूराव ने इस मकान में पहले तो चीता-खाना बनाया। फिर किशन गंज का मकान छोड़कर इसमें रहने लगा।) शाम का समय था। फ्रेजर अपने जिगरी दोस्त सिकंदर साहब (कर्नल स्किनर) के साथ शराब पी रहा था। उसने शम्सुद्दीन खां को अंदर आते देखा तो जल-भुन गया। चिल्लाकर बोला, "शर्म नहीं आती तुमको! अपने छोटे भाइयों की जायदाद हड़प करना चाहते हो! जाओ, निकल जाओ मेरे घर से! उसने नवाब को एक गंदी गाली भी दे दी। नवाब सीधा अपने घर (दरियागंज में आगरा होटल के पास) चला गया। नवाब के जाने के बाद कर्नल ने फ्रेजर को डांटा, "शम्सुद्दीन खां इस चोट को सह नहीं सकेगा। अपमान का बदला लेकर छोड़ेगा।"

नवाब आज बहुत परेशान है। किसी करवट चैन नहीं। उन्होंने अपने वफादार नौकर और माने हुए शिकारी करीम खां को, जिसे सब 'भरमारू' कहकर पुकारते थे, बुलवाया और ठंडी सांस भरकर कहा, "भरमारू! जी चाहता है, संखिया [illegible] कर सो रहूं। लोहारू की जागीर जाये [illegible] में। ऐसे जीने से तो मरना अच्छा।" क[illegible] खां ने हाथ जोड़कर पूछा, "हुजूर, दु[illegible] का मुंह काला! आज क्या हो गया जो [illegible] इतने उदास हैं? अल्लाह की कसम, [illegible] किसी ने हमारी सरकार से आंख मिला[illegible] तो उसकी आंखें निकाल ली जाएंगी।" न[illegible] ने करीम खां को सारा दुखड़ा कह सुना[illegible]

गाली का नाम सुनते ही करीम [illegible] जोश में आकर अपने कंधे पर लटकी बं[illegible] रखकर बोला, "आपके हुक्म की देर [illegible] अभी जाकर फ्रेजर की बोटी-बोटी न [illegible] दूं तो करीम खां नाम नहीं!" शम्सु[illegible] खां ने करीम खां के मुंह पर हाथ रख दि[illegible] और कहा, "जो करना है, चुप-चुपाते। [illegible] फीरोजपुर झिरका जाते हैं। इस कुत्ते [illegible] ठिकाने लगाना तुम्हारा काम है, लेकि[illegible] रात को! काम हो जाए तो यह लिख[illegible] खबर भेजना—'कुत्ते का सौदा हो गया[illegible]

करीम खां ने नवाब को भरोसा दिला[illegible] नवाब अपनी रियासत में चले गये[illegible] करीम खां ने एक और नौकर अनिया मेवा[illegible] को, जो भागने में हरिण की तरह चौक[illegible] भरता था, अपने साथ लिया। दोनों शि[illegible] की घात में चल दिये। फ्रेजर को दि[illegible] मारना आसान न था, लेकिन कई मही[illegible] तक वह रात को आते-जाते दिखायी [illegible] दिया। करीम खां ने नवाब से पूछा [illegible] कुत्ते का सौदा दिन ही में कर लिया [illegible] लेकिन नवाब ने यह बात नहीं मानी।

२२ मार्च, १८३५ की रात को ग्यारह बजे जब फ्रेजर दरियागंज में राजा किशनगढ़ के यहां खाना खाकर घोड़े पर सवार हो लौट रहा था तो पहाड़ी पर सामने से एक सवार सरपट घोड़ा दौड़ाते आया और फ्रेजर को निशाना बनाकर चलता बना। गोली लगते ही फ्रेजर गिर पड़ा और मर गया। फ्रेजर के अरदली और सिपाही

(सर) टामस मेटकाफ, (लार्ड) जॉन लारेंस और कर्नल िकनर को सौंपा गया। कर्नल स्किनर को शम्सुद्दीन पर संदेह था। तीनों अफसर नवाब के मकान पर पहुंचे। मकान बंद था, लेकिन पीछे अस्तबल में एक मुश्की घोड़ा दिखायी दिया। घोड़ों के पैरों में उलटे नाल लगे थे। अफसरों ने पैरों को उठा-उठा कर देखा तो

नबाब शम्सुद्दीन खां

हत्यारे को पकड़ने के लिए भागे, लेकिन वह किसी के हाथ नहीं आया। अनिया मेवाती २४ घंटे में ९० मील दौड़कर नवाब शम्सुद्दीन खां की रियासत में पहुंचा। फ्रेजर के कत्ल की खबर ने दिल्ली में सनसनी फैला दीं। हत्यारे को पकड़ने का काम

पास खड़े एक आदमी ने, जो जांघिया पहने खड़ा था, कहा, "यह घोड़ा बहुत दिनों से बीमार है। खाना-पीना भी छोड़ दिया है। कई दिन से सवारी नहीं दी।" लारेंस ने दाने का थैला घोड़े के आगे किया तो वह जल्दी-जल्दी मुंह हिलाकर दाना खाने लगा।

अंगरेज अफसरों ने कोठरी की तलाशी ली तो पानी से भरी एक बाल्टी में कुछ चिट्ठियां पड़ी भीग रही थीं। उन्हें उठा कर पढ़ा और उस आदमी से कुछ सवाल किये। वह किसी बात का जवाब ठीक तरह न दे पाया तो उसे पकड़ लिया।

यह आदमी कोई और नहीं, वही करीम खां था। दो-तीन दिन बाद दरिया-गंज के एक कुएं में किसी का डोल गिर गया। डोल निकाला गया तो कुएं में से नाल-कटी बंदूक निकली। यह वही बंदूक थी जिसकी गोली से फ्रेजर का सीना छलनी किया गया था। करीम खां की गिरफ्तारी की खबर नवाब शम्सुद्दीन खां को मिली तो वे घबरा गये। उन्होंने करीम खां के किसी रिश्तेदार से यह तय किया कि अनिया मेवाती को मरवा डालना चाहिए, नहीं तो वह पकड़े जाने पर सब कुछ उगल देगा। कहा जाता है कि नवाब जब यह बातें कर रहे थे तो मेवाती कमरे के बाहर खड़ा कान लगाये सुन रहा था। वह रियासत छोड़कर भाग गया लेकिन अंगरेजों के जासूसों ने उसे गिरफ्तार कर लिया। करीम खां पर मुकदमा चला। मेवाती ने सरकारी गवाह बनकर भांडा फोड़ दिया। मैजिस्ट्रेट ने करीम खां को फांसी की सजा दे दी। थोड़े दिन बाद नवाब शम्सुद्दीन खां भी पकड़े गये। उन पर भी मुकदमा चला और फांसी की सजा मिली। ८ अक्तूबर, १८३५ को कश्मीरी दरवाजे के बाहर मैदान में फांसी गाड़ी गयी थी। दिल्ली वाले बलवे पर उतर आये। उन्हें नवाब शम्सुद्दीन खां से प्यार था। २५ बरस का यह सुंदर गबरू जवान दिल्ली की मजलिसों की जान था। अंगरेज फौजों ने शहर की नाका-बंदी कर दी। फांसी पाने से पहले नवाब ने उजला अंगरखा पहना। कपड़ों में इत्र लगाया। शीशे में कई बार शक्ल देखी। फांसी के तख्ते पर जब आकर खड़े हुए तो जल्लाद से पूछा, "क्या जात है तुम्हारी?"

वह बोला, "मेहतर हूं।"

फांसी का फंदा उसके हाथ से लेकर गले में डाल लिया। पल भर में लाश सूली से लटकने लगी। शम्सुद्दीन खां की गिरफ्तारी और फांसी पाने पर कुछ लोगों ने मिर्जा गालिब को भी बदनाम किया। उनका कहना था कि शम्सुद्दीन खां और मिर्जा गालिब में अनबन थी। नवाब ने उनकी पेंशन बंद करायी। गालिब फ्रेजर के भी दोस्त थे। नवाब को पकड़वाने में मिर्जा का भी हाथ था, लेकिन गालिब ने इन बातों को सदा झूठा बताया।

नवाब शम्सुद्दीन खां के मरने के बाद उनकी बेगम ने आखिरी मुगल सम्राट बहादुरशाह के बेटे मिर्जा फखरू से शादी कर ली और नवाब शौकतमहल की उपाधि पायी। विधवा के साथ उसका पांच बरस का बेटा भी लालकिले में आ गया। नवाब शम्सुद्दीन का यह लड़का बड़ा होकर उर्दू के शायर नवाब मिर्जा खां 'दाग' के नाम से सूरज बन कर चमका।

—९६ बाबर रोड, नयी दिल्ली—१

हंसने का मौसम

एक बंदरगाह पर पहुंचने पर जहाज के सभी कर्मचारियों ने छुट्टी की अर्जी दी। केवल एक कर्मचारी ने ऐसा नहीं किया।

अफसर ने उसे बुलाकर पूछा, "क्या बात है, क्या तुम्हीं एक ऐसे आदमी हो जिसकी पत्नी इस शहर में नहीं है?"

कर्मचारी ने उत्तर दिया, "नहीं साहब, मैं ही अकेला ऐसा हूं जिसकी पत्नी इस शहर में है।"

*

जेलर, "हम यहां प्रत्येक कैदी से वही काम करवाते हैं, जो वह जेल से बाहर करता था। तुम क्या काम करते थे?"

कैदी, "जी, मैं घर-घर भटकता फेरी-वाला था।"

असम के भूकम्प में एक समाजसेवी दम्पति ने क्षेत्र में ही रहकर अपना कर्तव्य पालन करने का निश्चय किया। चार वर्षीय पुत्र के कारण इसमें कोई व्यवधान न हो, इस उद्देश्य से उसे उसके दादा के पास भेज दिया गया। लगभग एक सप्ताह बाद दादा का तार आया, "भूकम्प को यहां भेज दो, लड़के को अपने पास बुला लो।"

*

पत्नी (क्रोधित होकर), "आपने ही तो महराजिन को फोन पर डांटा और गालियां दीं और अब कहते हैं कि भोजन क्यों नहीं बना!"

पति (सिर पीटकर), "मैं भी कैसा मूर्ख हूं! मैंने समझा था फोन पर तुम हो!"

होली की हंसिकाएं

• सरोजनी प्रीतम

पोती की शादी पर
दादी ने आकर
किया कुछ ऐसा गड़बड़घोटाला
कि
अब तक जपती थी राधे-कृष्णा
अब बैठी जपती
जय-माला— जय—माला

वह
एक लेखक से
बोली तपाक से
जी, बस इतना ही कहना था
आपसे
चुना है आपको मैंने
शोध के लिए
प्रतिशोध के लिए

कालेज की पार्टी में एक प्रसिद्ध साहित्यिक से मिलने पर एक छात्र गर्व से बोला, "मैं प्रसिद्ध से प्रसिद्ध साहित्यिक की भी रचना तब तक नहीं पढ़ता हूं जब तक कि मैं उससे पहले मिलकर संतुष्ट न हो जाऊं।"

"अच्छा ! तो आपने महर्षि वाल्मीकि से किस प्रकार भेंट की ?" साहित्यिक ने पूछा।

★

डाकियों की भर्ती के पूर्व होने वाली एक लिखित परीक्षा के साधारण-ज्ञान के पेपर में एक प्रश्न था, "पृथ्वी से चंद्रमा का फासला कितना है ?"

परीक्षकों को एक उत्तर यह पढ़ने को मिला, "अगर आप मुझे इस रूट पर भेजना चाहते हैं, तो मुझे यह नौकरी नहीं चाहिए।"

एक वायुयान कम्पनी के अधिकारी ने नगर के प्रतिष्ठित अध्यापकों को मुफ्त वायुयात्रा कराने के पूर्व वायुयात्रा सम्बंधी लम्बा लेक्चर दिया। अंत में अभिवादन कर उसने कहा, "आपमें से अधिकांश लोग पहली बार वायुयात्रा कर रहे हैं। हम आशा करते हैं कि यह आपकी आखिरी वायुयात्रा नहीं होगी।"

आधे से अधिक अध्यापकों ने वायुयान में उड़ने से इनकार कर दिया।

★

रूस के भूतपूर्व उप-विदेश-मंत्री विशिन्सकी ने सभाओं आदि में लोगों से बार-बार हाथ मिलाने की मुसीबत दूर करने के लिए एक नया तरीका अपनाया था। वे सभाओं में जाने से पहले हाथों में एक गुलदस्ता ले लेते थे। इस गुलदस्ते के रहते कोई उनसे हाथ नहीं मिला पाता था।

बेधड़क चोर से
कहा वकील ने डांट कर जोर से
फिर वही अपनी हरकतें दिखाने लगे
भरी अदालत में आंख चुराने लगे !

●

नया व्रत
उसने यों लिया
(कि)
अन्न-जल ग्रहण करूंगी न तब तक
जब तक न निकले तुम्हारी चांद पिया

ढूंढ़ रही हूं कब से
यहां, वहां
इस अनर्थ की जड़ें
आखिर—गयीं कहां ?

●

पड़े-पड़े दफ्तर में
वह
कुछ ऐसे ऊंघते थे
आकर उन्हें
सांप सूंघते थे

लेखिका
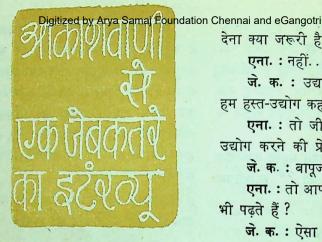
गुजराती-व्यंग्य

● विनोद भट्ट

एनाउंसर : हां ... तो जीवनभाई, आपका असली नाम क्या है?

जेबकतरा : बहन, मेरे काम की तरफ देखें, क्योंकि नाम की अपेक्षा मेरे काम से लोग मुझे अधिक जानते हैं।

एना. : तो गीता के कर्मवाद में आपको रस है, क्यों?

जे. क. : नहीं बहन, कर्मवाद में नहीं, किंतु गीता में रस था...

एना. : था, यानी?

जे. क. : था, यानी अब नहीं है। मेरे एक दोस्त ने उससे विवाह कर लिया है।

एना. : आप तो बहुत ही विनोदी व्यक्ति लगते हैं, जीवनभाई...

जे. क. : प्रशंसा मुझे पसंद नहीं।

एना. : सॉरी...तो आपका जन्म कहां हुआ था? आपका वतन कौन-सा है?

जे. क. : ऐसे रूढ़िगत प्रश्नों का जवाब देना क्या जरूरी है?

एना. : नहीं... क्या उद्यम करते हैं

जे. क. : उद्यम नहीं, उद्योग। हम हस्त-उद्योग कहते हैं।

एना. : तो जीवनभाई, यह हस्त उद्योग करने की प्रेरणा कहां से मिली

जे. क. : बापूजी के साहित्य में से

एना. : तो आप गांधीजी का साहित्य भी पढ़ते हैं?

जे. क. : ऐसा किसने कहा?

एना. : आपने ही तो अभी कहा कि बापूजी के साहित्य में से!

जे. क. : बहन, आप समझीं नहीं (क्या इसलिए ही आप रेडियो एनाउंसर हैं?) हां, तो मैं कह रहा था कि बापूजी यानी मेरे पिताजी के अस्त्र-शस्त्र आदि...

एना. : यह बात है! लेकिन जीवनभाई...आपका यह उद्योग व्यक्तिगत है या साझेदारी में?

जे. क. : इसमें विश्वास का दर्जा बहुत ही ऊंचा रखना पड़ता है, इसलिए ऐसे उद्योगों में साझेदारी संभव नहीं।

एना. : पब्लीसिटी में विश्वास है?

जे. क. : नहीं, जरा भी नहीं। लेकिन पुलिस-विभाग का है। पुलिस-विभाग ने आवश्यकता से अधिक पब्लीसिटी इसे दे रखी है। शहर की हर एक पुलिस-चौकी में मेरा लाक्षणिक फोटो आप देख सकते हैं।

एना. : इस काम में आपको बहुत ही श्रम पड़ता होगा, क्यों?

जे. क. : नहीं। इस कार्य में अधिक

से अधिक श्रम जेब वालों को पड़ता है, और जब वे बिना जेब के बन जाते हैं, तब पुलिस-विभाग को पड़ता है।

एना. : सबसे पहले जेब आपने कब काटी ?

जे. क. : याद नहीं।

एना. : अपने जीवन का कोई यादगार प्रसंग सुनाएंगे, जीवनभाई ?

जे. क. : एक बार मैंने एक वकील की जेब काटी थी...

एना. : आपके उद्योग में खास पूंजी की जरूरत नहीं होती, क्या यह सही है ?

जे. क. : होती है...जेब भरकर आते लोगों की राह देखने में हमें काफी पूंजी (समय) लगानी होती है और वह भी बहुत धैर्यपूर्वक...

एना. : और जीवनभाई, आपके व्यवसाय में कभी मंदी आती है ?

जे. क. : हां। खास करके सर्दी में।

एना. : वह कैसे ?

एना. : कुछ मिला ?

जे. क. : नहीं। उलटे मुझे पच्चीस रुपये देकर समझौता करना पड़ा था। तब से निश्चय कर लिया है कि किसी वकील की जेब नहीं काटूंगा।

एना. : तो किसी की जेब काटने में आपको दुःख का अनुभव होता है ?

जे. क. : काटने के बाद कभी-कभी।

एना. : कब ?

जे. क. : जब उस जेब से ब्लेड की घिसाई-जितने पैसे भी नहीं निकलते।

जे. क. : सर्दी में ठंड के कारण लोग जेब में से हाथ बाहर निकालते ही नहीं।

एना. : सरकार की तरफ से आप किसी प्रोत्साहन की आशा रखते हैं ?

जे. क. : सरकार हमारे इस लघु उद्योग में हस्तक्षेप न करे, यही हमारे लिए बहुत बड़ा प्रोत्साहन होगा।

एना. : अपने व्यवसाय के विकास के लिए विदेश जाने की इच्छा है ?

जे. क. : नहीं। बल्कि किसी विदेशी के यहां आने से हमारे व्यवसाय का विकास

अच्छा होगा . . . फिर भी सरकार अपना प्रतिनिधि बनाकर विदेश भेजे तो हम वहां से काफी धन खींच ला सकते हैं . . .

एना. : आप देश के लिए किसी भी रूप में मददगार बन सकते हैं ?

जे. क. : क्यों नहीं . . . सरकार यदि हमारे उद्योग का राष्ट्रीयकरण करे तो फिर दूसरे किसी उद्योग के राष्ट्रीयकरण की जरूरत न रहे। देश आत्म-निर्भर हो सकता है, ऐसा मेरा नम्र अभिप्राय है।

एना. : उद्योग कला है या विज्ञान ?

जे. क. : मतलब ?

एना. : मतलब यह कि इस का कोई कॉलेज स्थापित किया जा सकता है ?

जे. क. : नहीं बहन ! यह तो नालेज विदाउट कॉलेज है। चेला विदाउट गुरु हो सकता है।

एना.: जीवनभाई, एक खास बात तो रह गयी।

जे. क. : वह भी पूछ ल ।

एना. : बस-स्टैंड पर या आम रास्तों पर 'जेबकतरों से सावधान रहें,' यह वाक्य लिखा हुआ पढ़कर आपको कुछ लगता है ?

जे. क. : नहीं, उलटे हंसी आती है!

एना. : वह कैसे ?

जे. क. : क्योंकि वह प्लेटें हमी लटकाते हैं।

एना. : वह क्यों ?

जे. क. : लोग वाक्य पढ़ते हैं, इतनी देर में ही हम जेब हलकी कर लेते हैं।

एना. : आपको वित्त-मंत्री बना दें तो ?

जे. क. : तो ब्लेड पर किसी प्रकार का टैक्स न लगने दूंगा।

एना. : हमारे श्रोताओं को कुछ संदेश देंगे जीवनभाई ?

जे. क. : हां, अधिक सफर करें...

एना. : अपने पुत्रों को आप उत्तराधिकार में क्या यही कला दे जाएंगे ?

जे. क. : पुत्र ? चाहिए ही किसे ?

एना. : ऐसा क्यों ?

जे. क. : क्योंकि इसके लिए घर में एक स्त्री का होना जरूरी है और जिस घर में स्त्री हो वहां जेब कभी सलामत नहीं रहती । . . . अच्छा तो मित्र श्रोतागण रास्ते में कभी हमारी भेंट होगी...

एक खास बुलेटिन

अभी, यानी कि एक क्षण पहले आकाशवाणी के हमारे केंद्र पर खास भेंटवार्त्ता देने आये श्री जीवनभाई हमारी एनाउंसर बहन का पर्स उड़ाकर चम्पत हो गये हैं।

—अनु. : गोपालदास नागर

बुद्धि-विलास

अपनी बुद्धि पर जोर डालिए और यहां दिये प्रश्नों के उत्तर खोजिए। उत्तर इसी अंक में कहीं मिल जाएंगे। यदि आप सभी प्रश्नों का सही उत्तर दे सकें तो अपने साधारण ज्ञान को श्रेष्ठ समझिए; आधे से अधिक में सामान्य और आधे से कम में अल्प —संपादक

१ जगदीश राजेंद्रनगर में रहता था। एक बार उसने अपने दो मित्रों, दुर्गा और सुंदर, को शाम अपने यहां बिताने का निमंत्रण दिया। उसने उनसे कहा कि मैं तुम्हें अपनी मोटर-साइकिल पर ले चलूंगा। राजेंद्रनगर से वह ५.३० बजे शाम को चला। ठीक तभी उसके मित्र लाजपतनगर से ४ मील प्रति-घंटे की रफ्तार से पैदल ही चल पड़े। जगदीश जब उनसे मिला तो उसने दुर्गा को मोटर-साइकिल पर बिठाया और राजेंद्रनगर की ओर चल पड़ा। राजेंद्रनगर से कुछ दूर सड़क पर कहीं दुर्गा को छोड़ दिया और फिर सुंदर को लेने चल दिया। जगदीश और सुंदर दुर्गा के पास से हाथ हिलाते निकल गये। कुछ आगे जगदीश ने सुंदर को उतार दिया और फिर वह दूसरी बार दुर्गा को लेने लौट आया। यह तरीका खूब कारगर रहा। सुंदर राजेंद्रनगर ठीक उस समय पहुंचा जब जगदीश और दुर्गा मोटर-साइकिल पर वहां पहुंचे। ठीक ७ बजे थे तब। यदि कुल मिलाकर सुंदर तीन बार मोटर-साइकिल पर उतनी दूर चढ़ा जितनी दूर दुर्गा पैदल चला, तो बताइए कि जगदीश ने कितनी तेज मोटर-साइकिल चलायी?

संकेत : क्या मोटर-साइकिल राजेंद्रनगर की अपेक्षा लाजपतनगर की ओर अधिक चलती है? दुर्गा सुंदर की अपेक्षा मोटर-साइकिल पर कम बैठता है या ज्यादा? अब सोचिए!

२. 'हिज मास्टर्स वॉयस' के ट्रेडमार्क में ग्रामोफोन के आगे किसकी आकृति है—नर कुत्ते की या मादा कुत्ते की?

३. स्कूल के तत्त्वाधान में बीस से ऊपर क्लब और सोसाइटियां चल रही थीं। अतः जब पालतू पशु-पक्षी क्लब खोला गया तो कई ने विरोध किया कि इस क्लब को यथोचित समर्थन प्राप्त नहीं हो सकेगा, लेकिन समर्थन मिला। छह महीने की समाप्ति तक ५८ सदस्य हो गये। हालांकि केवल आधे सदस्यों के पास ही पालतू पशु-पक्षी थे, पर किसी के पास भी २ से अधिक नहीं थे। इसके बावजूद क्लब की

मीटिंगों में ...ने के ... करने का निश्चय किया। महेश, को जिसके
समर्थन इतना प्रबल हो गया कि क्लब को साल समाप्त होने से पूर्व ही एक शो करने की अनुमति दे दी गयी।

सारे पालतू पशु-पक्षीं आये। छह कुत्तों, चौदह बिल्लियों और सत्रह अन्य मिले-जुले पालतुओं (खास तौर से सुग्गे, कुछ कछुए और एक घास में रहने वाला सांप) का शोर और गंध मिलजुलकर एक विचित्र दृश्य उपस्थित कर रहे थे।

वताइए, क्लब के कितने सदस्यों के पास एक से अधिक पालतू पशु-पक्षी थे ?

४. गोविंद, हरि और महेश के पिता सैनिक थे। एक का पिता नौसेना में था, दूसरे का थलसेना में और तीसरे का वायुसेना में। गोविंद, हरि और महेश गहरे दोस्त थे। उन्होंने भी सैनिक ही बनने का निश्चय किया। महेश, को जिसके पिता थलसेना में नहीं था, वायुसेना ने स्वास्थ्य सम्बंधी आधार पर स्वीकार नहीं किया। नौसेना में भरती होना हरि को बड़ा असम्भव लगा।

यदि वायुसेना अधिकारी का पुत्र वायुसेना में भरती न हो, तब थलसेना के अधिकारी का पुत्र भरती हो जाएगा। नौसेना में जो लड़का भरती हुआ वह नौसेना अधिकारी का लड़का नहीं था। वह थलसेना में भी भरती नहीं होगा—यदि हरि वायुसेना में भरती हो जाए।

कौन लड़का किस सेना में भरती हुआ और उसका पिता किस सेना में था ?

अपनी तरफ से किसी पंक्ति का कोई अर्थ मत निकालिए। प्रयोजन वही है जो शब्द बताते हैं।

संकेत :—इस तालिका से प्रत्येक लड़के के नाम, व्यवसाय और उसके पिता के व्यवसाय का कुछ अंदाजा लग सकता है—

१	२	३	४	५	६	७
गो.नौ.नौ	गो.नौ.थ.	गो.नौ.वा.	गो.थ.नौ.	गो.थ.थ.	गो.थ.वा.	गो.वा.नौ.
८	९					
गो.वा.थ.	गो.वा.वा.					

१	२	३	४	५	६	७	८
ह.नौ.नौ.	ह.नौ.थ.	ह.नौ.वा.	ह.थ.नौ.	ह.थ.थ.	ह.थ.वा.	ह.वा.नौ.	ह.वा.थ.
९							
ह.वा.वा.							

१	२	३	४	५	६	७	८
म.नौ.नौ.	म.नौ.थ.	म.नौवा.	म.थ.नौ.	म.थ.थ.	म.थ.वा.	म.वा.नौ.	म.वा.थ.
९							
म.वा.वा.							

अब इनमें हर उस सेट को काटते चलिए जो तर्क पर खरा नहीं उतरता। जो बचे, उसकी जांच कीजिए।

आया बेटा नटनी का

जब वे गिल्ली पंडित के साथ तेज-तेज चलते समधियाने पहुंचे तो वहां सन्नाटा छाया था। ऊपर से अर्ध चंद्राकार बड़े-से दरवाजे वाली एक बंद गली को पार करके (जिसके दोनों ओर छतों पर बैठी औरतें ब्याह के गीत गाने के बदले खुसर-फुसर कर रही थीं) जब वे समधियाने की बैठक में दाखिल हुए तो पंडित वेणीप्रसाद अपने समधी और उसके रिश्तेदारों में घिरे बैठे थे। बराबर में लट्ठे का पायजामा, कमीज और उस पर कोट पहने और कोरी मलमल की सफेद पगड़ी पर (जो कोरी होने के कारण निहायत फिसी-फिसी लगती थी) सेहरा बांधे, अजब कार्टून-सा बना, रणवीर 'नाशाद' खड़ा था। पंडित वेणीप्रसाद लरजे के मारे कांपते हाथों में अपनी पगड़ी थामे, हकलाती आवाज में समधी की मिन्नत-समाजत कर रहे थे कि उनकी इज्जत-आबरू अब उन्हीं के हाथ में है। लड़का पागल नहीं, थोड़ा मूर्ख भले ही हो।

गिल्ली पंडित ने, जो चेतन का समवयस्क और मित्र था, मैट्रिक तक मुश्किल से पढ़ा था और कल तक महल्ला पंजपीर में लंठई करता घूमता था और जिसने अपने पिता के देहांत पर पुरोहिताई का काम सम्हाल लिया था, रास्ते ही में उनको सारी बात बता दी थी। बावजूद उस दुःखद और ट्रैजिक स्थिति के रणवीर की मूर्खता पर चेतन को हंसी आ गयी थी।

हुआ यह था कि जब दो-ढाई वर्ष पहले चेतन अपनी शादी में बस्ती गजा आया था और नीला ने उसे रोक लिया था, और बरांडे में बैठा कर उसने और उसकी सहेलियों ने उससे छंद सुनाने का

अश्कजी गत तीस वर्षों से अपना वृहद उपन्यास लिख रहे हैं, जिसके तीन खंड– 'गिरती दीवारें', 'शहर में घूमता आईना' और 'एक नन्ही किन्दील'– छप चुके हैं। आजकल अश्कजी उसका चौथा खंड 'बांधो न नाव इस ठांव' लिख रहे हैं। यहां हम उनकी नवीनतम रचना प्रकाशित कर रहे हैं।

अनुरोध किया था, तो रणवीर भी अपने जीजा के पीछे खड़ा था। नीला के जोर देने पर चेतन ने छंद सुनाया था—

छंद परागे आइए, जाइए छंद परागे तीला।
छंद गया मैं भुल्ल जद सामने आयी नीला।।

पहली पंक्ति का कोई मतलब नहीं, दूसरी का मतलब यह कि मैं सभी छंद भूल गया जब नीला मेरे सामने आयी। तब रणवीर ने देखा था कि उसकी चंचल, चपल, कुपत्ती और मुंहजोर बहन एकदम निरुत्तर हो गयी है।

ऐन उस वक्त उसकी बहन की सहेली मोहिनी, जिसकी शादी कुछ ही दिन पहले हुई थी, जैसे उल्लास के ताल पर नाचती आयी थी। उसकी कलाइयों पर लाल चूड़ा, तन पर टेसू के रंग की साड़ी और शरीर पर कीमती जेवर झमझमा रहे थे। आंगन की चौखट में पैर रखते ही चेतन की चंचलता को लक्ष्य कर, उसने सिट्ठनी (विवाह के अवसर पर दी जाने वाली मीठी गाली) दी थी–

आया नी पुत्त नटनी दा

चेतन खिसियाना-सा हो आया था। लेकिन उसी निमिष, सिट्ठनी की दूसरी पंक्ति 'नटनी कोठे टपनी दा' कहने का अवसर मोहिनी को दिये बिना, उसकी आंखों में आंखें डालते हुए, चेतन ने उसी की तरह भटककर आंखें नचाते और ऐन-मेन वही शब्द दोहराते हुए मोहिनी की ऐसे नकल उतार दी थी कि वह शरमा कर उलटे पैरों भाग गयी थी।

तब रणवीर को लगा था, जैसे उस वाक्य कोई रामबाण हो जो चंचल युवतियों को ध्वस्त करने की शक्ति रखता हो। तब उसके ठस दिमाग ने इस तीर को अपनी शादी के समय अपनी सालियों पर चलाने के लिए अपनी स्मृति के तूणीर में सुरक्षित रख लिया था। भांवरों के लिए जाते समय जब वह बारात के साथ लड़की के घर की गली में दाखिल हुआ और दोनों ओर बैठी हुई औरतों ने ब्याह के गानों में बे-भाव सिट्ठिनियां देनी शुरू कीं तो रणवीर ने हाथ से सेहरा जरा-सा हटा कर अपना उजबक-सा मुंह ऊपर करके पहले एक ओर, फिर दूसरी ओर वह तीर चला दिया—'आया नी पुत्त नटनी दा—आया नी पुत्त नटनी दा।'

छत की औरतों में उसकी सास भी बैठी थी। उसे लड़का अजब पागल-सा लगा। वह भागी-भागी नीचे गयी। उसने जाकर अपने पति से कहा कि लड़का तो पागल लगता है, मैं अपनी बेटी उससे नहीं ब्याहूंगी।

जाने कैसे यह खबर सारे समधियाने में फैल गयी। ब्याह के गाने बंद हो गये। छतों पर मनहूस सन्नाटा छा गया। जब समधी ने पंडित वेणीप्रसाद से यह बात कही तो उनके हाथों के तोते उड़ गये। गिल्ली पंडित ने रणवीर से पूछा तो रणवीर ने बता दिया कि जब चंदा की शादी हुई थी तो जीजाजी ने भी ऐसा ही किया था। बेंशक जाकर उनसे पूछ लो!

पुरोहित ने उसके ससुर को समझाया, पर किसी को विश्वास न हुआ। पुरोहित चेतन को ढूंढ़ता बाबा के आश्रम पहुंचा।

गिल्ली पंडित से बात समझ कर चेतन ने हुनर साहब को सारी स्थिति से अवगत कराया था। तब उस प्रसंग के दुःखद परिणाम को भूलकर, उसकी हास्यास्पदता पर गांव की गली के बीचो-बीच रुककर दोनों ने जोर से ठहाका लगाया था और तब चेतन ने अपने साथियों से कहा था कि जैसे भी हो स्थिति को सम्भालना है और रणवीर के उस भोलेपन का उल्लेख कर उसकी मूर्खता

उस देवता-तुल्य बुजुर्ग को पगड़ी हाथों में लिये हुए अपने समधी के सामने गिड़गिड़ाते देखकर, न जाने चेतन को क्या हुआ कि उसने जो यह सोचा था कि सारे किस्से को मजाक में उड़ाते, रणवीर पर फब्तियां कसते और उसकी मूर्खता पर ठहाके लगाते हुए वे सास-ससुर को राह पर ले आएंगे, वह सब योजना उसके दिमाग से क्षण भर को हवा हो गयी और

की हंसी उड़ाते हुए उसके ससुर को राह पर ले आना है। बारात बिना दुल्हन के वापस जाए, यह तो डूब मरने की बात है और पूरी योजना बनाकर वे सब गिल्ली पंडित के पीछे-पीछे समधियाने पहुंचे थे।

कमरे में दाखिल होते ही पंडित वेणीप्रसाद को पगड़ी हाथ में लिये गिड़-गिड़ाते देखकर चेतन को अफसोस हुआ।

पंडित वेणीप्रसाद की बात सुनते ही बढ़-कर उनके हाथों से पगड़ी लेकर उनके सिर पर रखते हुए चेतन ने सक्रोध कहा :

"आप क्या करते हैं तायाजी! (चेतन ने कभी पंडित वेणीप्रसाद को 'तायाजी' कहकर न पुकारा था, पर उस समय उसे लगा कि जैसे वे चंदा के नहीं, उसी के ताऊ हैं और उनका अपमान
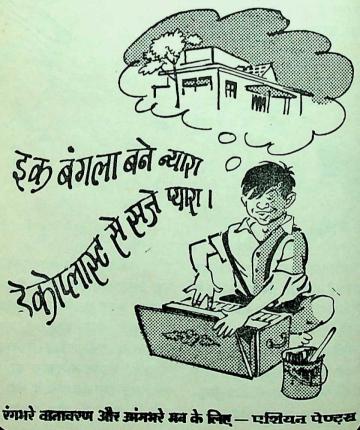
उन्हीं का नहीं, उसका और चंदा का भी है।) उठिए! हम रणवीर की शादी यहां नहीं करेंगे। जो लोग इसके जरा-से बचपने पर इसे पागल करार दे सकते हैं, कल शादी होने के बाद न जाने क्या गुल खिलाएंगे। उठिए! हुनर साहब तो कब से अपनी भतीजी के लिए कह रहे हैं (यहां चेतन ने हुनर साहब की ओर पलट कर जरा-सी आंख दबा दी) लेकिन आप यहां हामी भर चुके थे। वह रिश्ता अब भी हो सकता है। हुनर साहब यहीं हैं, आप उठिए! दस दिन के अंदर-अंदर हम वहां रणवीर की शादी कर देंगे। रणवीर तो पागल है नहीं, हम लोग और हुनर साहब और निश्तर साहब ही नहीं (चेतन ने अपने जोश में उस ऐंचाताने ठिगने कवि के साथ भी 'साहब' लगा दिया) सारा जालंधर शहर जानता है। हां, खर्च और परेशानी आपको होगी, पर उसके लिए हम इन पर हर्जाने का दावा करेंगे और इनसे वसूल कर लेंगे, इसकी जिम्मेदारी मैं लेता हूं। चलिए, उठिए!"

चेतन ने कुछ ऐसे क्रोध और आवेश में, कुछ ऐसी नाटकीयता के साथ यह सब कहा कि कमरे में एकदम सन्नाटा छा गया। हल्की-सी आंख दबाते हुए उसने हुनर साहब को इशारा किया तो अजीब मोमनी-सी सूरत बनाये हुए वे आगे बढ़े। उन्होंने हाथ जोड़कर पंडित वेणीप्रसाद से कहा, "आप इन लोगों के यहां बारात लेकर आये हैं, मैं नहीं चाहता कि इस काज में अकाज हो। चाहिए तो यही कि जिस तरह बाजे-गाजे के साथ आप लालड़ां आये हैं, उसी मसर्रत और शादमानी (खुशी) से आप बहू लेकर जाएं, लेकिन अगर इन्हें मंजूर न हो तो चेतनजी ने जो कहा है, आप वह मान जाइए। दस दिन नहीं, आप सिर्फ 'हां' कर दीजिए और सात दिन के अंदर-अंदर बसी कलां बारात ले चलिए। हम तो आपको पाकर फख्र से फूले नहीं समाएंगे। मेरे साथ रहकर मेरी भतीजी भी तुकबंदी कर लेती है। रणवीर तो माशा-अल्लाह बहुत अच्छे शायर हैं। खूब गुजरेगी जो मिल बैठेंगे दीवाने दो!"

पंडित वेणीप्रसाद क्या कहें, उनकी समझ में कुछ न आ रहा था। यह बात वे भली-भांति जानते थे कि यह सब नाटक है। हुनर साहब खत्री हैं और वे ब्राह्मण। उनकी भतीजी के रिश्ते की कभी बात नहीं हुई, पर बिना कुछ भी कहे वे लम्बी सांस भरकर उठ खड़े हुए थे और वैसे ही असमंजस में खड़े थे।

तब वैसी ही मोमनी सूरत बनाये हुए हुनर साहब ने लड़की के बाप से कहा, "पंडितजी, आखिर आपने यह कैसे फतवा दे दिया कि रणवीर पागल हैं। हम भी इन्हें बरसों से जानते हैं, मेरे तो खैर वो शागिर्द हैं। शायर हैं और अगर आपके नजदीक शायर पागल होते हैं तो फिर चेतनजी, मैं, निश्तर साहब और आधा जालंधर शहर पागल है। कौन-सी ऐसी
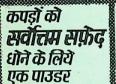
रंगीन कपड़ों को
अत्यधिक चमकदार
बनाने के लिये
धुलाई का एक पाउडर

कपड़ों और हाथों की
सर्वाधिक सुरक्षा
के लिये
धुलाई का एक पाउडर

नया त्रिविध क्रियाशील डेट

नया डेट कपड़ों को सर्वोत्तम सफ़ेद धोता है क्योंकि सफ़ेदी के लिये इसमें एक उत्तम पदार्थ मिला है।
नया डेट शक्तिशाली पाउडर है जो कपड़ों में जमे बैठे मैल को दूर करता है और रंगीन कपड़ों को चमकदार बना देता है।
नया डेट भरपूर झाग देता है जिसमें कपड़ों को मुलायम बनाने वाला विशेष पदार्थ मिला है। यह आपके कपड़ों को सर्वाधिक सुरक्षित तरीक़े से धोता है और आपके हाथों को भी मुलायम रखता है।

सफ़ेद डेट

NEW!
TRIPLE ACTION
blue
det
WASHES WHITEST

नीला डेट

नये साइज: डेट २००, ४००, ६००, ८००, १००० पैक और नमूने का पैकिट।

Shilpi HPMA-40A/72 Hin

बात उनमें देखी आपने कि ऐन भांवरों से पहले यह फतवा दे दिया ।"

इससे पहले कि लड़की के पिता कुछ कहते, चेतन ने कहा, "कुछ नहीं, मुझे अभी गिल्ली पंडित से मालूम हुआ है, सरासर रणवीर का भोलापन है ।" और उसने विस्तार से अपनी शादी का किस्सा सुनाते हुए "आया नी पुत्त नटनी दा" वाला प्रसंग सुनाया और कहा, "इसने यह समझा कि यह वाक्य शायद कोई राम-बाण है, जिससे इसकी सालियां और उनकी सहेलियां शर्मा कर चुप हो जाएंगी ।" यहां चेतन ने एक खोखला ठहाका लगाया, "इसने आते ही वह रामबाण चला दिया और नतीजा आपके सामने है !"

और वह फिर खोखली हंसी हंसा ।

हुनर साहब और उनके वहाने उप-स्थित मंडली को यह सब बताकर चेतन लड़की के पिता की ओर मुड़ा और बड़ी गम्भीरता से उसने कहा, "रणवीर ही नहीं, आपका अपना बेटा भी भोलेपन में ऐसी गलती कर सकता है। आप इसे बेवकूफी तो कह सकते हैं, पागलपन नहीं कह सकते। हमलोग लाहौर से बारात में शामिल होने के लिए आये हैं। मैं आपको बारात लौटाने की सलाह तो नहीं देता। लड़का तो भला-चंगा है। उसकी शादी तो हम दस दिन में कर ही देंगे, लेकिन आप नतीजे को भी सोच लीजिएगा। चार लोग आप ही की लड़की में दोष निकालेंगे और कचहरियों की खाक आपको अलग छाननी पड़ेगी।"—फिर उसने अपने साथियों की ओर संकेत करते और उनका महत्त्व जताते हुए हर एक का परिचय दिया। अपने बड़े भाई की ओर संकेत कर उसने कहा, "डाक्टर शर्मा लाहौर के मशहूर डेंटिस्ट हैं। खास अनार-कली में इनकी दूकान है, एक-एक मिनट इनका कीमती है, सिर्फ रणवीर की खातिर अपने मरीजों को छोड़ यह लालड़ां आये

शर्माजी को
वे दिन
याद आये...

हैं, 'हुनर' साहब की शोहरत पंजाब ही नहीं हिंदुस्तान तक में फैली हुई है, इन्होंने रणवीर का सेहरा लिखा है, जो यह आज बारात के भोज में सुनाएंगे, श्री गणेशीलाल वत्स काबिल इंजीनियर हैं, हजार रुपया महीना पाते हैं और दूर बिहार से इस शादी में शामिल होने आये हैं, निश्तर साहब मशहूर हफ्तावार 'सदाकत' के एडीटर हैं—इतने मौअज्जिज (प्रतिष्ठित) लोगों की बेइज्जती करके आप इज्जत और चैन से रह लेंगे, ऐसा नहीं होगा। हम लोगों को अपने दरवाजे से लौटाने से पहले आप दो पल सोच लीजिए। लालड़ां में कोई डॉक्टर, हकीम तो होगा ही, उसी को बुलाकर लड़के का मुआइना करा लीजिए कि पागल है या होशमंद। क्यों बेकार में अपनी और इनकी खिल्ली उड़वाते हैं।"

असल में उन लोगों के अंदर आते ही कुछ ऐसा रोब उन देहातियों पर तारी हुआ था कि वे असमंजस में पड़ गये थे। जब चेतन ने सारी बात समझाकर कही और ऊपर से मामले-मुकद्दमे की धमकी भी दी तो उनके होश ठिकाने आ गये।

"हमें तो कोई एतराज नहीं, पर लड़की की मां को शक हुआ था," लड़की के पिता ने जैसे सफाई देते हुए कहा, "अब सारी बात समझ में आ गयी है" और सिर को झटका देते और हंसते हुए वे उठे, "मैं अभी जाकर उसे समझाता हूं।"

और जाते-जाते वे बड़े सत्कार से पंडित देवीप्रसाद को बैठाते गये।

उन्हें ज्यादा समझाने-बुझाने की जरूरत नहीं पड़ी, क्योंकि रणवीर की सास और दूसरी रिश्तेदार औरतें दरवाजे की ओट में खड़ी सारी बातें सुन रही थीं। उन्हें गये अभी पांच-सात ही मिनट हुए होंगे कि गिल्ली पंडित ने, जिसे इस किस्से में सबसे ज्यादा रस मिल रहा था, जोर से सबको सुनाते हुए कहा, "पंडितजी, जो भी तय करना है, जल्दी कीजिए। मुहूर्त का समय निकला जा रहा है।"

लेकिन तभी रणवीर के ससुर वापस आ गये और रणवीर के कंधे पर हाथ रखते हुए उन्होंने कहा, "चलो बेटा।"

वे सब मंडप की ओर जा रहे थे, तब छतों पर ब्याह के गाने शुरू हो गये।

—नीलाभ प्रकाशन, इलाहाबाद
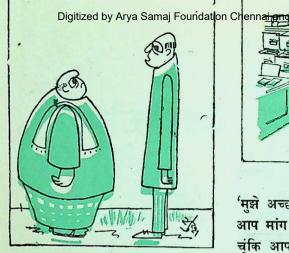
'गोल बात क्यों करते हो, मेरी तरह सीधी बात करो ।'

'पापा ! यह रंग की बेकारी नहीं, पेंटिंग है । शीर्षक है, अंधेरी रात ।'

'मुझे अच्छी तरह याद है कि जो फाइ आप मांग रहे हैं वह कहां रखी है, मग चूंकि आप मेरे सिर पर सवार हुए इसलिए याद नहीं आ रहा—वैसे मु अच्छी तरह याद है ।'
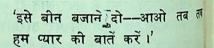
'इसे बीन बजाने दो—आओ तब त हम प्यार की बातें करें ।'

'...अब जो गायिका आपके सामने गाना पेश करेंगी, वे बाथ-रूम सिंगर हैं और इसके लिए विशेष प्रबंध किया गया है...'

'महाराज! आप एक के दो करते हैं तो मेरी एक आंख है, इसे दो कर दीजिए न!'

'उसकी सारी कविताएं मैंने सुन लीं और जब मेरी बारी आयी तो भागने लगा!'

'पिताजी, यह रोज-रोज का खाना मुझसे नहीं बनता। अब या तो आप शादी कर लीजिए या मेरी...'

चली बयार आज वासंती
अंचरा गंध भरे
तन-मन महका अवनी अम्बर
चूनर रंग भरे
बजती रही रात शहनाई
नयना नींद भरे
मानो मनमोहन की मुरली
पागल प्राण करे
बिन-बरसे बदरा घिरि आये
कामिनि केश खुले
सोयी काजल आंज न टूटे
सपने धुले-धुले

--चन्द्रकला मिश्र
(कोठी नं. ७, अरुणनगर, एटा)

ऋतु-वृंदावन

टेसू ऐसे फूले वन में
जैसे कोई लाल मछरिया
तैर गयी हो मन में
फूलों की कजरारी आंखें
आंखों से बोझीली शाखें
गदराये तन पर लिपटी है
जलते सूरज की कुछ पांखें
जैसे कोई गीत पिघलता
हो पथरीले तन में
केशर-किरण गंध भर महकी
सांस-सांस वासंती चहकी
गाल फुलाये हवा चली है
लगती है कुछ बहकी-बहकी
जैसे कोई छैल गुजरिया
थिरक गयी आंगन में
सूरज ने कुछ और तपाया
सतरंगा पारा बिखराया
छिटका पारा हाथ न आये
मौसम ने कितना समझाया
जैसे मूंगे उग आये हों
कचियारे चंदन में
गति भर चंचलता इतराती
फागुन की पाती पहुंचाती
यह अबीर झर गया अजाने
होली के रंग से बतियाती
जैसे रस-सागर बंदी हो
ऋतु के वृंदावन में

--सुरेश श्रीवास्तव
(केंद्रीय विद्यालय, पचमढ़ी, म.प्र.)

वसंत

लोककथाओं के राजकुमार की तरह
वनों में वसंत आ गया
पेड़ों के पत्ते तालियां बजाने लगे
नंगी धूप ने पलाश को बांहों में जकड़ लिया
पुष्पों की तन्वंगियां
लाज से हो गयीं लाल
ऐसे में कैसा लगता है
चीड़ के पेड़ तले
युद्ध की खबरें पढ़ना

●

वसंत आ गया--वसंत
सौंदर्य की मशाल पकड़े जल्लाद की तरह
आज सारी चीजें भोगने की चाह
शरीर के साथ मन और आत्मा भी
कैदी की अंतिम इच्छा

ओ वसंत के फूल
ओ पलाश की लाज
ओ घास की हरी हवाओ
पीली साड़ी में सजी ओ चांदनी
मैं हाथ जोड़ता हूं
मुझे छोड़ दो इस बार
तुम्हारा वार झेलने की शक्ति
मुझमें नहीं रही

--रवीन्द्रनाथ त्यागी
--डिप्टी सेक्रेटरी (पेंशन) रक्षा मंत्रालय,
भारत-सरकार, नयी दिल्ली-११

"मैं जो मानता हूं, वह कहना चाहता हूं, उस पर आचरण करना चाहता हूं। जो 'मूल्य' हैं उनको निबाहता हुआ जीना चाहता हूं। और इस आग्रह के लिए जो दंड मिले वह भोगने को तैयार हूं।"
अज्ञेय

छाया० प्रेम कपूर
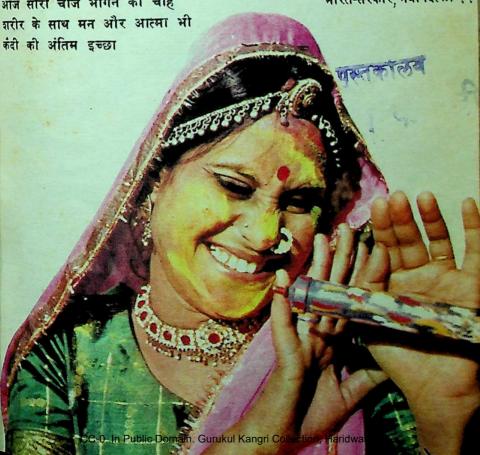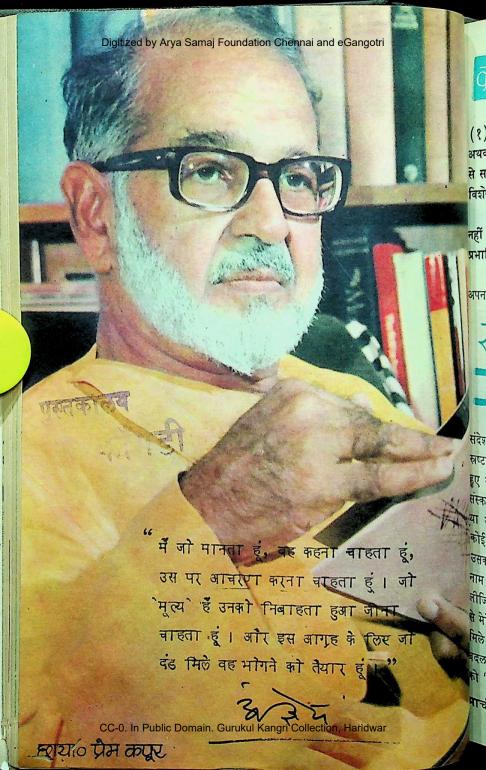
क्यों और क्यों नहीं?

डा. दीनानाथ 'शरण', पटना : (१) आपके साहित्य का मुख्य उद्देश्य अथवा संदेश क्या है? रचनाओं के माध्यम से समाज को आप क्या देना चाहते हैं—विशेषकर उपन्यासों द्वारा?

(२) "'अज्ञेय' का चिंतन मौलिक नहीं अपितु पाश्चात्य विचारकों से ही प्रभावित है"—इस उक्ति से सहमत हैं?

(१) अगर साहित्यिक कृति स्वयं अपना संदेश नहीं है, तो और उसका कुछ

खंडित इकाइयां और अज्ञेय

संदेश नहीं हो सकता। साहित्यकार रूप-स्रष्टा है; उपदेशक नहीं। उसके सिरजे हुए रूप से अगर समाज की संवेदना का संस्कार होता है—उसमें गहराई आती है, या उसका विस्तार होता है, या उसका कोई नया आयाम खुलता है—तो वही उसकी उपलब्धि होती है; 'उद्देश्य' के नाम पर जरूरी कुछ है तो यही समझ लीजिए कि मैं चाहता हूं कि मेरी हर कृति से मेरे पाठक की संवेदना को नया संस्कार मिले। नया संस्कार पाने का मतलब है बदल जाना : इसी अर्थ में साहित्य समाज को 'कुछ' देता है—समाज को बदल देता है, सामाजिक इकाई—व्यक्ति—के जीवन को सम्पन्नतर बनाता है।

अच्छा उपन्यास अपने पाठक की संवेदना को गहरा या प्रखरतर करता हुआ उसे उसका समाज एक नये रूप में दिखा देता है। पाठक एक तरफ चौंकता है कि 'अरे, यह मैंने अभी तक देखा नहीं था!' तो दूसरी तरफ पहचानता है कि 'सच तो है; मैंने पहले ध्यान दिया होता तो मुझे स्वयं दीख जाता।' देख लेने के बाद वह फिर अनदेखा नहीं कर सकता : इस अर्थ में पाठक को उपन्यास ने 'जगा दिया है'।

मैं चाहता हूं कि मेरे उपन्यास भी इतने अच्छे हों कि यह काम करते रहें।

(२) पहली बात तो यह कि ऐसा बिलकुल जरूरी नहीं है कि कृतिकार 'चिंतक' हो ही। उसकी कृतियों में विचार हों, या विचार-प्रेरकता हो, इसमें कोई बुराई नहीं है; पर कृति विचारों के लिए नहीं है और न उसके मूल्य का निर्धारण अंततः विचारों पर है।

दूसरी बात यह कि प्रायः सभी चिंतक दूसरों के विचारों से प्रभावित होते हैं। 'मौलिक' चिंतक सौ-दो सौ बरस में एक

हो जाए तो बड़ी बात होती है। आज देश में कोई ऐसा एकांत अप्रभावित मौलिक चिंतक नहीं है।

तीसरी यह कि मैं केवल पाश्चात्य विचारकों से ही प्रभावित नहीं हूं; कई वैचारिक परम्पराओं से प्रभावित हूं, देशी भी और विदेशी भी, पूर्वी भी और पश्चिमी भी, आधुनिक भी और अनाधुनिक भी। मुझे इसमें लज्जित होने की कोई बात नहीं दीखती : उस दशा में और भी नहीं जब ये अनेक प्रभाव मुझे अपना व्यक्तित्व पहचानने में सहायक होते हैं।

इतना संदेह मुझे जरूर कभी-कभी होता है कि जो आलोचक इतनी आसानी से इस तरह के फतवे दे जाते हैं, प्राय: उन्हीं के बारे में यह बात अधिक सच होती है कि वे कुछ-एक पश्चिमी विचारकों के विचारों से परिचित होते हैं; उससे आगे विचारों के इतिहास का कुछ भी ज्ञान उन्हें नहीं होता।

सुभाषचंद्र जैन 'कौशल', वाराणसी : (१) 'अपने-अपने अजनबी' उपन्यास का शीर्षक 'योके', 'सेल्मा' या 'योके या सेल्मा' अथवा कुछ और क्यों नहीं रखा ?

(२) उपर्युक्त उपन्यास (अपने-अपने अजनबी) में आपने विदेशी पात्र और विदेशी घटना-स्थल ही क्यों चुने ? क्या भारतीय संदर्भ में इतना उच्च उपन्यास नहीं लिखा जा सकता था ?

(१) "कुछ और क्यों नहीं रखा"— यह प्रश्न तो ऐसा ही है कि आप पूछें, "इसके बदले कुछ दूसरा क्यों नहीं लिखा" —इसका उत्तर मैं क्या दूंगा ? केवल 'योके' या 'सेल्मा' या 'योके या सेल्मा' कहना भी पर्याप्त न होता, क्यों उपन्यास इस या उस या इन चरित्रों के बारे में नहीं है। इन और इनके साथ के पात्रों की क्रिया-प्रतिक्रिया से जो सामने आता है—**काल के साथ व्यक्ति का सम्बंध**—वही उपन्यास का विषय है। कह लीजिए कि काल ही मुख्य पात्र है। सभी के अपने-अपने अजनबी हैं; अजनबियों के साथ दो प्रकार के सम्बंध हैं : या तो सम्पूर्ण नकार का, अनास्था का, जैसे योके का मृत्यु के अस्तित्व को नकारना चाहना; या फिर स्वीकार का, आस्था या श्रद्धा का, अकारण विश्वास का, जैसे योके का जगन्नाथन् को 'अच्छा आदमी' मान लेना बिना किसी प्रमाण या आधार के। 'अकारण विश्वास' ही तो श्रद्धा है। मृत्यु को नकारने वाली योके अंत में (श्रद्धा के सहारे ?) दूसरे अपरिचित (ईश्वर ?) के पास आ जाती है; यहीं उसे 'स्वतंत्रता' मिलती है (वरण की स्वतंत्रता, या वरण से स्वतंत्रता ?)। मरण को नकारती इसलिए क्षणजीवी, नश्वर, आत्मघाती योके एक प्रकार के अमरत्व का भी पा जाती है : 'अच्छे आदमी के मरना' क्या प्रकारांतर से उस अच्छे के साक्ष्य के प्रमाण से जीते रहना ही है ? पर इस अमरत्व को भी

भांपता है, योके ने नहीं पहचाना; यह भी उसका एक अजनबी है। यों प्रतीकों के फिर अंतःप्रतीक, गूंजों की फिर प्रतिगूंज की गुंजाइश 'अपने-अपने अजनबी' शीर्षक में जितनी है, उतनी किसी दूसरे में न होती।

(२) पात्र और घटनाएं ठीक स्वदेशी तो नहीं हैं, पर उन्हें विदेशी कहना भी सर्वथा उचित न होगा। वास्तव में देश का निर्देश स्वल्पतम इसीलिए रखा गया है कि सारी बात को एक देश-निरपेक्ष संदर्भ में रखा जा सके : मानवीय सत्ता (या अस्तित्व) मात्र की अवस्थिति सामने रहे।

यों स्थिति के चरम संदर्भ सामने लाने के लिए घटना को जिस सम्पूर्णता के साथ और सबसे काट कर रखना आवश्यक था, उसके लिए और भी सामान्य परिस्थितियों की खोज मैंने की थी। भूकम्प की भी बात सोची थी; फिर खान-दुर्घटना की भी और उसके वास्तविक चित्रण के लिए, बिहार में कुछ कोयला-खानें देखने भी गया था। पर बर्फ में दब जाने की घटना ही अधिक अनुकूल जान पड़ी। वैसी घटना हिमालय में भी हो सकती—होती है—पर वहां जैसे लोगों के कैद हो जाने की संभावना होती वे सभी उस दृष्टि वाले होते जिसे मैंने 'पूर्वी' दृष्टि कहा है। 'चरम परिस्थिति' में चरम मतवादों की टकराहट प्रस्तुत करने के लिए थोड़ा दूर जाना पड़ा—ऐसी जगह जहां संयोगवश दोनों दृष्टियों के लोग साथ उपस्थित हो सकते हैं। पर जैसा कि मैंने पहले ही कहा; देश-काल से बंधी परिस्थिति प्रस्तुत करने में 'देश' के संकेत न्यूनतम रखे गये; 'काल' के संकेत भी उसके उसी पक्ष पर बल देने वाले रखे गये जिसे चरम कोटि की आसन्नकालिकता कहा जा सकता है, या चाहें तो प्रत्युत्पन्न या समुत्पन्न काल भी कह लीजिए। जोर देने की बात यह है कि कथा 'काल' से
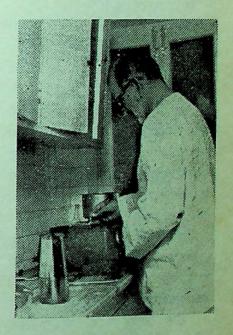
काफी-ब्रेक

सम्बंध की है : 'देश' से सम्बंध उतना ही है जितना पात्रों को हाड़-मांस युक्त दिखाने के लिए अनिवार्य है।

ओ. प्रकाश, हिसार : (१) आजकल के मिनी अज्ञेयों के बारे में आपके विचार ?

(२) अपनी किस रचना से आप

सर्वाधिक असंतुष्ट हैं और क्यों ?

(१) मैं नहीं जानता कि क्या विचार हो सकते हैं या होने चाहिए—या कुछ होते तो किसी को उनसे क्या मतलब होता। यों 'आजकल का' मैं भी हूं, और अपने निकट 'अज्ञेय' को बड़ा तो मैंने कभी नहीं पाया। 'मिनी-अज्ञेय' जैसे संकर समास मेरी भाषा का भी अंग नहीं हैं, यह अलग बात है।

(२) 'संतुष्ट' तो किसी रचना से नहीं हूं : लिखने के तुरत बाद का अल्पकालिक संतोष छोड़ दें तो। पर जिनसे अधिक असंतुष्ट हुआ, उनका आपको पता भी कैसे लग सकता है जब वे प्रकाशित ही नहीं की गयीं ? हर लेखक अपनी अनेक रचनाओं से असंतुष्ट होता है; मैं जिनसे असंतुष्ट होता हूं उन्हें छपने नहीं देता और इसलिए उनकी चर्चा भी कोई अर्थ नहीं रखती।

शब्बीर अहमद दाऊद, पूना : क्या आपने मृत्यु विषयक कोई कविता लिखी है ? यदि हां, तो उस समय आपकी क्या मनःस्थिति थी ?

ठीक 'मृत्यु-विषयक' कविता किसे कहें, इस पर बहस हो सकती है। यों कई एक होंगी। ऐसी कविता में कवि की जो मनःस्थिति प्रतिबिम्बित होती है, या पाठक द्वारा अनुमेय है, **उतनी ही काम की है।** उतनी ही कवि द्वारा सम्प्रेष्य थी—यानी उतनी ही स्वयं उसकी पकड़ में उस समय आयी थी, और जो उस समय उसकी पकड़ में—या उसकी नजर के सा[...] नहीं थी, उसके बारे में वह आ[...] कहे तो उसका भरोसा क्या ? [...] अप्रासंगिक बात हो, दूसरे भरो[...] लायक न हो, तो उसके फेर में क्यों [...] कविताओं में जो मिले, उसी पर [...] दीजिए न ! आपके लिए भी वही [...] होगा; कवि का हित भी उसी [...] कविता के साथ न्याय भी उसी में।

लक्ष्मीनारायण शर्मा 'मुकुर', [...] बिहार : (१) आपने 'दिनमान' में [...] व्यक्त किया था कि छंद काव्य का [...] अंग है और संगीतात्मकता के ह[...] कविता की लोकप्रियता घटी है। इस [...] में क्या आप स्वयं को कविता की [...] प्रियता घटाने वालों में मानते हैं ?

(२) फिर आपने 'काद[...] के नवम्बर '७२ अंक में प्रकाशित [...] मैं एक सन्नाटा बुनता हूं"—जैसी [...] क्यों लिखी ?

(१) मैं आज भी मानता हूं [...] कविता का अभिन्न अंग है। जहां भी [...] है, वहां छंद है। और जहां संयम[...] है, वहां रूप-सृष्टि नहीं है, कविता न[...]

मैं अपने को न केवल 'कवि[...] लोकप्रियता घटाने वालों' में नहीं [...] बल्कि मानता हूं कि कविता के प्रति [...] की ग्राहकता और संवेदनशीलता [...] मैंने कविता की लोकप्रियता और [...] होने से बचायी है। कविता के श[...] की यंत्र-सभ्यता में बहुत हैं और [...]

बलशाली हैं : वे और अधिक सफल हुए होते अगर मैंने जितना प्रयत्न किया वह न किया होता। मेरा प्रयत्न जारी है।

(२) आपके पिछले प्रश्न के उत्तर के बाद यह प्रश्न उठता ही नहीं, पर वह प्रश्नोत्तर न भी हुआ होता तो आपका प्रश्न अर्थहीन होता, बल्कि अर्थहीन से भी कुछ नीचे, क्योंकि वह कविता के सम्बंध में एक प्रबल पूर्वग्रह से बंधा हुआ जान पड़ता है। कविता सिद्धांतों के प्रतिपादन के लिए नहीं लिखी जाती; न पद्यबद्ध वकालत होती है। आप मुझे भुलाकर कविता ही पढ़ें तो दोनों के साथ अधिक न्याय कर पायेंगे—दोनों ही क्यों, तीनों के, क्योंकि अपने साथ भी तो आप तभी न्याय कर सकेंगे !

उल्लिखित कविता का सन्नाटा सही ढंग से समझने के लिए कुछ अन्य कविताएं पढ़ना लाभकर होता; और यदि काव्य-सम्बंधी मेरी धारणाओं पर ही विचार करना है तो कविता में मौन के स्थान और उपयोग पर मैंने जो कुछ लिखा है—उदाहरण के तौर पर **आलवाल** में अथवा **भवन्ती** में—उसे पहले पढ़ लेना उचित होता।

शिवनारायण शिवहरे, सोहागपुर (म. प्र.) (१) भारतीय साहित्य-जगत की स्थिति के सम्बंध में आपके क्या विचार हैं ?

(२) लेखन की प्रेरणा आपको कब और कैसे मिली ? आपकी नजर में अपनी कौन-सी कृति सर्वश्रेष्ठ है और क्यों ?

(१) अच्छे नहीं हैं। स्थिति दुःखद है। अच्छे साहित्यिक पत्रों की कमी उसे और दुःखद बनाती है। देशव्यापी और सरकारी अंगरेजीपरस्ती आग में घी का नहीं, राख पर पानी का काम कर रही है : एक भभक उठती है, बस, या फिर देर तक (और दूर-दूर तक) राख सिर पर
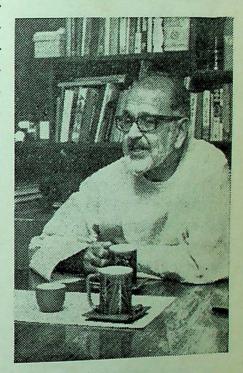
अपनी-अपनी काफी

बरसती रहती है।

(२) आपका मतलब शायद पहले-पहल से है : नहीं तो प्रेरणा निरंतर मिलती रहती है और किसी भी घटना, दृश्य, अनुभूति, विचार, बातचीत, शब्द तक से मिल सकती है। पहली बार जिस
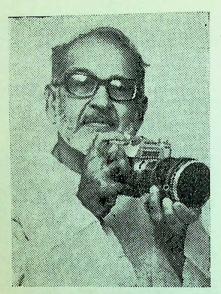
बात से प्रेरित होकर रचना की थी वह शब्द-शक्ति की एक नयी पहचान थी—या कि यों कहूं कि शब्द की एक शक्ति की पहचान थी । वह शक्ति है शब्द की अनेक अर्थ दे सकने की क्षमता । कुछ विस्तार से इस घटना का वर्णन मैंने अपनी पुस्तक 'आत्मनेपद' के पहले लेख में किया है—'मेरी पहली कविता' शीर्षक से ।

कृति की श्रेष्ठता का निर्णय आलोचक का काम है, स्वयं कृतिकार का नहीं । वह अधिक से अधिक अपने लगाव की बात कह सकता है—कौन-सी कृति उसे 'प्रिय' है, पर वह भी बदलता रहता है—कभी कोई कृति अच्छी लगती है, कभी कोई । इस तरह के प्रश्नों के उत्तरों का कुछ मूल्य नहीं होता है साधारणतया । कभी-कभी उनसे कुछ प्राप्त हो सकता है—जब वे उत्तर रचना के बारे में [illegible] उसके बनने की प्रक्रिया के बारे में [illegible] बताते हों । यानी जब वे न श्रेष्ठता [illegible] बात करें, न प्रियता की, बल्कि यह [illegible] कि लेखक के विकास में किसी रचना [illegible] क्या महत्त्व या योग रहा : कैसी चुनौ[illegible] उसने प्रस्तुत की, और कैसे लेखक [illegible] उस चुनौती का सामना किया और [illegible] पर विजय पायी । इस तरह के इति[illegible] मेरी कई रचनाओं के साथ जुड़े हुए [illegible] जैसे कहानियों में 'कड़ियां' नाम की कहा[illegible] कविताओं में 'चक्रान्त शिला', या 'हि[illegible] शिमा', (या और भी अनेक), उपन्या[illegible] में 'अपने-अपने अजनबी' आदि । 'अ[illegible] अपने अजनबी' में निहित चुनौती [illegible] उसके साथ लेखक के जड़ाव के विक[illegible] को समझने के लिए **एक बूंद सहसा उछ[illegible]** के दो-एक वृत्तांतों से आरम्भ कि[illegible] जा सकता है । यों मृत्यु से साक्षात[illegible] के 'चरम क्षण' की बात जेल के दिनों (१९३१-'३३) सामने थी; उन दिनों उसी को लेकर कुछ लिखना आर[illegible] किया था—वह अधूरा छोड़ दिया [illegible] पर **बर्फ गिरने से दुनिया से कट जाने [illegible] स्थिति उसमें भी थी** : अंतर यही [illegible] कि उसमें तीन व्यक्ति यों कट गये [illegible] जब कि **अपने-अपने अजनबी** में के[illegible] दो व्यक्ति हैं । समझ लीजिए कि बीस [illegible] की अवधि में वह 'चरम स्थिति' [illegible] भी सघन होकर प्रस्तुत हुई ।

—ए. ३।५ वसंतविहार, नयी दि[illegible]

आज इस देश में हंसों की कद्र कहां! 'अब तो दादुर बोलि हैं, भये कोकिला मौन' वाली स्थिति है और शायद यही कारण है कि 'साकेत' के कवि ने हंस से दर्द-भरे शब्दों में पूछा था...

मानसरोवर के राजहंस

● राजेश्वरप्रसाद नारायण सिंह

हमारा प्राचीन साहित्य राजहंस (हंस) की चर्चाओं से भरा हुआ है, विशेषतया कालिदास की काव्य-कृतियां। इससे यह स्पष्ट है कि किसी समय यह इस देश का काफी लोकप्रिय पक्षी रहा। इसके सम्बंध में हमारे ग्रंथों में तरह-तरह की बातें कही गयी हैं। इसे नीर, क्षीर, विवेकी कहा है—
'हंसैर्यथाक्षीरमिवाम्बुमध्यात्'।

दूसरी धारणा यह है कि यह मोतियों का भक्षक है, जो मानसरोवर के स्वच्छ सलिल में मिलते हैं। शायद इसके इन्हीं गुणों के कारण इसे दमयंती का संदेश-वाहक बनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। ये धारणाएं कुछ हद तक सही हो सकती हैं, क्योंकि कुछ स्वच्छ सरिताओं तथा झीलों में छोटे मोतियों का अस्तित्व पाया गया है। दूसरे सम्भव है इसके गले में कोई ऐसा अम्ल हो जिसके स्पर्श से दूध फट जाता हो।

कालिदास ने राजहंस का रूप-वर्णन ही नहीं उसकी प्रवृत्तियों के सम्बंध में भी लिखा है, यथा—मेघ-गर्जन का श्रवण करते ही किसलयरूपी पाथेय संग्रह करके सोत्कंठित, मानसरोवर की ओर, अंतरिक्ष-मार्ग से चलने का उल्लेख इन पंक्तियों में है—

कर्तुं यच्च प्रभवति महीमुच्छिलीन्ध्रामवन्ध्यां
तच्छ्रुत्वा ते श्रवणसुभगं गर्जितं मानसोत्काः।
आ कैलासाद्बिसकिसलयच्छेदपाथेयवन्तः
संपत्स्यन्ते नभसि भवतो राजहंसाः सहायाः॥
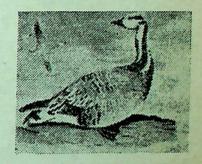
राजहंस

और इनमें उसके प्रवासी पक्षी होने का वर्णन है—

त्वय्यासन्ने परिणतफलश्यामजम्बूवनान्ताः
संपत्स्यन्ते कतिपयदिनस्थायिहंसा दशार्णाः

वर्षाकाल में पर्वतीय झीलों की ओर उत्कंठित होकर लौटना तथा पहाड़ की तलहटी में कतिपय दिनों का अधिवास, ये दो ऐसी आदतें हैं जो जाड़ों में हिमालय तथा साइबेरिया, तिब्बत और लद्दाख की ओर से हमारे यहां आने वाले सभी जलपक्षियों में पायी जाती हैं। इनमें अधिकांश पक्षी शीतकाल समाप्त होते ही

लौट पड़ते हैं, पर कुछ—जिनमें हंस भी हैं—वर्षाकाल के आरम्भ में उत्तर की ओर लौटते हैं। उस समय उनके भीतर एक गुदगुदी-सी पैदा होती है और वे लौटने के लिए किसी अज्ञात प्रेरणा से ही व्यग्र हो उठते हैं। यही समय उनके जोड़ा बांधने और अंडे देने का होता है। ये क्रियाएं वे हिमालय-स्थित झीलों—लद्दाख की पेंगौंग, कराकोरम के दक्षिण में मानसरोवर, ल्हासा के समीपवर्ती पालती आदि—के तट पर सम्पन्न करते हैं। हिमालय के कतिपय यात्रियों ने इनके आसपास लाखों की संख्या में इन जल-पक्षियों को ग्रीष्मकाल में एकत्रित देखा है। यहीं चट्टानों के बीच इनकी मादाएं अंडे देती हैं। प्रकृतितः प्रजननकाल के आने पर ये अपने मूल निवास को लौटने के लिए उत्कंठित हो उठते हैं, जिसका जिक्र महाकवि ने पूर्वोक्त पंक्तियों में किया है। जाड़ों में पानी के जम जाने से उन्हें भोजन दुर्लभ हो जाता है और तभी वे हमारी समतल भूमि पर बालियों से लदे हुए धान के पौधों से परिवेष्टित झीलों में आने को विवश होते हैं।

मानसरोवर के तट पर निवास करने वाले जल-पक्षियों में ही वह राजहंस भी है जिसकी हमारे साहित्य में इतनी चर्चा है।

राजहंस कौन-सा पक्षी है ? अब वह भारतवर्ष में आता है या नहीं ?

कालिदास-वर्णित राजहंस के सम्बन्ध में काफी मतांतर है। इस पद के दावेदार दो पक्षी हैं—हंसावर और विरवा। हंसावर के सिर, गरदन, बदन और दुम के कुछ हिस्से सफेद होते हैं जिनमें गुलाबी झलक रहती है, डैने लाल होते हैं, चोंच गुलाबी होती है, पैर भी लाल होते हैं। टांगें बड़ी और लम्बी होती हैं। विरवा का रंग धूसर-मिश्रित सफेद होता है। सिर और गले के दोनों भाग, शरीर और पूंछ का निचला हिस्सा पूर्ण सफेद होते हैं
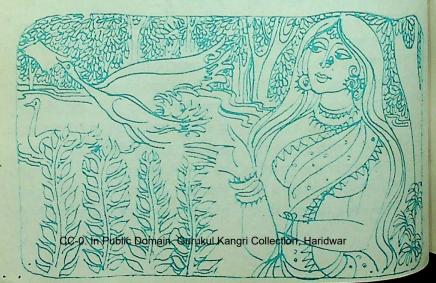
मस्तक के नीचे दो काली चौड़ी धारियां होती हैं। इसकी आंखें कमल-जैसी लाल तथा पांव भी लाल होते हैं। इसके सारे शरीर—मुखाकृति, नेत्र, ग्रीवा आदि—में एक आकर्षक सौंदर्य है।

अमरकोश में राजहंस का परिचय इस प्रकार है—वे पक्षी जिनका शरीर 'सित' तथा चरण और नेत्र लोहित वर्ण के होते हैं—**राजहंसास्तु ते चक्षुचरणैर्लोहितैः सिताः**। 'शब्दार्णव' में 'सितवर्ण' उस रंग को बताया गया है जो कदली कुसुम के समान है। केले का फूल पूर्ण श्वेत नहीं होता, सफेदी के साथ-साथ इसमें अन्य रंगों का भी सम्मिश्रण होता है, खासकर हलके-पीले और भूरे का। अमरकोश ने 'स्यावः' को 'कपिशः' कहकर इस बात की पुष्टि कर दी है कि सित वह सफेदी है, जिसमें धूसर रंग की झलक है।

उपर्युक्त दोनों दावेदार पक्षियों में विरवा का दावा अधिक उपयुक्त प्रतीत होता है। और यह इसलिए भी कि वह हंसावर की भांति कीड़े-मकोड़े नहीं खाता, शुद्ध शाकाहारी है। धान आदि के पौधों के सिरे तोड़-तोड़कर उनसे ही उदर भरता है। हमारे देश में उसे कहां मिलेंगे मोती चुगने को? प्रकृतितः 'अभावे शालिचूर्णं वा' के सिद्धांत पर वह कोमल पौधे ही खाकर संतोष कर लेता है।

पक्षी विशेषज्ञों का कहना है कि विरवा अर्थात राजहंस ही बत्तखों का पूर्वज है। हंसावर की तरह यह कीचड़ में कदापि प्रवेश नहीं करता, सदा स्वच्छ जल की ओर आकर्षित होता है तथा इसकी बोली में एक माधुर्य है जो अन्य जल-पक्षियों में विरल है। हंस-ध्वनि की चर्चा 'ऋतुसंहार' में इस प्रकार की गयी है—

संपन्नशालिनि भयावृत भूतलानि
स्वस्थस्थितप्रचुरगोकुल शोभितानि,
हंसैः ससारसकुलैः प्रतिनादितानि
सीमान्तराणि जनयन्ति नृणां प्रमोदम्।

—धरती धान के खेतों से पूर्ण है, स्वस्थ गउओं से शोभित है। हंस और सारस बोल रहे हैं। सभी कुछ जन-मन को मुग्ध करने वाला है।

पशुओं में जैसे सिंह को प्रतिष्ठा प्राप्त है वैसे ही हंस को पक्षियों में। पर हमारे लिए यह कहना कठिन है कि ऊपर जिन दो पक्षियों की चर्चा की गयी है उनमें कोई भी आधुनिक किसी दमयंती का संदेशवाहक बनने का अधिकारी हो सकता है। आज तो यह स्थान श्वान-वंश को प्राप्त है। आज का कोई कालिदास अपने काव्य में 'अलसेशियन' का उल्लेख करना अधिक पसंद करेगा। आज इस देश में हंसों की कद्र कहां! 'अब तो दादुर बोलि हैं, भये कोकिला मौन'—वाली स्थिति है और शायद यही कारण है कि 'साकेत' के कवि ने हंस से दर्द-भरे शब्दों में पूछा था—

हंस! छोड़ आये कहां
मुक्ताओं का देश?

—२-बी, महारानी बाग,
नयी दिल्ली-१४

● पु. न. ओ

हिंदू परम्परा में अंक 'आठ' का महत्त्व

पुरातन हिंदू परम्परा में 'आठ' अंक का बड़ा महत्त्व है। आठ धरातलीय दिशाओं के अर्थ-द्योतन के लिए आठ-विशिष्ट नाम हैं—उत्तर, दक्षिण, पूर्व और पश्चिम के अतिरिक्त चार अन्य दिशाओं, उत्तर-पश्चिम, दक्षिण-पश्चिम, दक्षिण-पूर्व और उत्तर-पूर्व के नाम क्रमशः वायव्य, नैऋत्य, आग्नेय और ईशान हैं।

हिंदुओं ने इन आठ दिशाओं को इतना महत्त्व प्रदान किया है कि उन्होंने इन आठ दिशाओं के आठ दिक्पाल निर्धारित किये हैं। वे इस प्रकार हैं: पूर्व दिशा के इंद्र, आग्नेय के अग्नि, दक्षिण के यम, नैऋत्य के यक्ष, पश्चिम के वरुण, वायव्य के वायु, उत्तर के कुबेर और ईशान के ऐषाण। 'अष्ट-दिक्पाल' की परम्परागत मूर्तियां कुछ प्राचीन मंदिरों में मिलती हैं।

हिंदू पद्धति के अनुसार निर्मित भवन, छतरियां, दुर्ग-प्राचीर, गुम्बज और स्तम्भ अष्टकोणात्मक होते हैं।

रामायण के अनुसार मर्यादा पु- षोत्तम राम की राजधानी अयो- अष्टकोणात्मक थी। हिंदू मंदिर, भ- राजप्रासाद, स्तम्भ, दुर्ग-प्राचीर और छ- रियां भी प्राय: अष्टकोणात्मक होती हैं

भारत में अनेक ऐतिहासिक भ- जिनमें दिल्ली का लाल किला और हु- का मकबरा तथा आगरा का ताजम- भी शामिल हैं—अष्टकोणात्मक हैं। उनकी छतरियां, दुर्ग-प्राचीरें, स्तम्भ औ- गुम्बज भी अष्टकोणी हैं।

कुछ निर्माण तो ऐसे भी हैं जो बाहर से चतुर्भुजी प्रतीत होते हैं कि- भीतर प्रत्येक कोण का विभाजन कर दि- गया है, जिससे भीतरी भाग अष्टकोणा- हो जाता है।

हिंदू महिलाएं घरों और मंदि- के द्वार पर चूने, आटे अथवा चाव- चूर्ण से जो रंगोली बनाती हैं, वे प्रा- अष्टभुजी होती हैं। प्राचीन हथ- अष्टभुजी होते थे। दीपावली पर ब- जाने वाली कंडीलें अष्टभुजी होती हैं

अष्टभुजा देवी के आठ हाथ निर्- किये जाते हैं। प्रत्येक हाथ में एक वि- शस्त्र होता है। ये आठ हाथ आठ दि- के दुष्प्रभाव को नष्ट करने में दैवी प्र- की शक्ति-सम्पन्नता के परिचायक हैं

हिंदुओं के अष्ट-मंगल होते हैं, जि-

चयन, कमल, गज, सिंह, सूर्य, 'ॐ' शब्द, तलवार, कुम्भ, मत्स्य, न्याय-तुला, शंख आदि जैसी पुनीत वस्तुओं में से किया जाता है। जो राजसत्ता और दैवी माहात्म्य के प्रतीक हैं।

हिंदू शब्दावली में अत्यंत विद्वान व्यक्ति को अष्टावधानी कहते हैं। अर्थात वह व्यक्ति जो किसी भी बात पर आठों प्रकार विचार करे अथवा किसी भी पक्ष की उपेक्षा न करे।

सिद्ध योगियों को अष्ट-सिद्धियों से युक्त कहा जाता है क्योंकि चमत्कारी शक्तियां भी आठ हैं।

दिवस अष्ट-प्रहर में बंटा हुआ है। प्रत्येक प्रहर में तीन घंटे होते हैं।

हिंदू राजाओं की आठ मंत्रियों की मंत्रि-परिषद होती थी जो 'अष्ट-प्रधान मंडल' कहलाती थी।

हिंदू महिलाओं को गुरुजनों से, आशीर्वाद के रूप में ये वचन मिलते हैं— 'अष्ट-पुत्रा-सौभाग्यवती-भव'।

भगवान कृष्ण, हिंदुओं के आठवें अवतार और माता-पिता की भी आठवीं संतान ही थे।

हिंदू लोग जन्म-अष्टमी और दुर्गा-अष्टमी मनाते हैं, जो इन पखवाड़ों के आठवें दिन होते हैं।

स्वस्तिक चिन्ह हिंदुओं का एक अतिपावन प्रतीक है। यह भी अष्ट-दिशाओं का द्योतक है। आड़ी-पड़ी पट्टियां चार मुख्य दिशाओं की तथा अंकुश-आकृतियां चार मध्यवर्ती दिशाओं की परिचायक हैं।

● कन्हैयालाल कपूर

आप चाहे इसे हमारी खूबी समझ लीजिए या खामी, हम विद्वानों पर जान छिड़कते हैं। हमें जब पता चलता है कि कोई विद्वान हमारे शहर में आया है तो हम जरूरी-से-जरूरी काम छोड़कर उसकी सेवा में उपस्थित होते हैं ताकि विचार-विनिमय करके ज्ञान में वृद्धि करें।

कुछ महीने पहले का जिक्र है कि एक विद्वान हमारे शहर में तशरीफ लाये। उनके बारे में कहा गया, उन्होंने गालिब पर सात साल अनुसंधान करने के बाद एक निबंध लिखा है, जिस पर उन्हें डी. लिट. की डिग्री मिली है। हमने उनसे मुलाकात करने के लिए समय मांगा। उन्होंने कहलवा भेजा—"हम आपको केवल तीन मिनट दे सकते हैं।" हमने इसे गनीमत जाना। उनकी सेवा में उपस्थित होने के बाद उनसे प्रश्न किया—"गालिब कभी तो जिंदगी से बेजार नजर आते हैं और कभी जिंदगी से टूटकर मुहब्बत करते हैं। इस विरोधाभास का कारण ?"
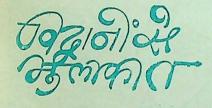
उन्होंने सिगरेट के दो-एक कश लगाने के बाद फरमाया—"हालांकि हमने गालिब पर काम किया है, लेकिन वे हमें बिलकुल पसंद नहीं। दरअसल गालिब एक सिपाही-जादा थे। उन्होंने तलवार के बजाय कलम उठाकर बड़ी गलती की। इस गलती का खमियाजा उनके प्रशंसकों को उठाना पड़ा। अगर वे एक सिपाही की हैसियत से मैदाने-जंग में अपने जौहर दिखाते तो उन्हें माकूल तनख्वाह मिलती और फाकाकशी से हमेशा के लिए छुटकारा मिल जाता।"

हमने डरते-डरते अर्ज किया—"आप शायद ठीक फरमाते हैं, लेकिन उनकी शायरी में जो विरोधाभास . . ."

"हम उसी विरोधाभास की व्याख्या कर रहे हैं। देखिए, गालिब दरअसल फारसी के शायर थे। उन्होंने खुद कहा है, मेरी उर्दू शायरी से आनंदित होना चाहते हैं तो मेरा फारसी कलाम मुलाहिजा फरमाइए। गालिब सारी उम्र यह फैसला न कर सके कि उन्हें उर्दू में शायरी करना चाहिए या फारसी में ! मालूम होता है कोई अदृश्य शक्ति उन्हें उर्दू में तबअ-आज-माई (काव्य-रचनाशक्ति की जांच) करने पर मजबूर करती थी। सितम यह कि वे फारसी में कहते, मगर बदकिस्मती से उसे उर्दू समझते थे। सच तो यह है कि कोशिश करने के बावजूद वे उर्दू में शायरी न कर सके। उर्दू में शायरी की है मीर तकी मीर ने, शेख इब्राहीम जौक ने और नजीर अकबराबादी ने। गालिब ने उर्दू में पहेलियां कही हैं, शायरी नहीं की।"

"माफ कीजिए ! आपने मेरे सवाल का जवाब नहीं दिया ।"

"देखिए साहब ! जब गालिब ने उर्दू में शायरी नहीं की तो उसमें विरोधाभास का सवाल पैदा नहीं होता । बहरहाल हम आपको मशविरा देंगे, आप इसकी ज्यादा फिक्र न कीजिए । यह गालिब का निजी मसला है । अगर आप कोई और बात पूछना चाहते हैं तो पूछ सकते हैं ।"

"गालिब की प्राइवेट जिंदगी के बारे में आपका क्या खयाल है ?"

"गालिब की सिरे से कोई प्राइवेट जिंदगी न थी । वे हमेशा शागिर्दों से घिरे रहते थे । उनकी हर बात पब्लिक हुआ करती थी । वे जब अकेले भी होते, आलमे-खयाल (कल्पना-जगत) में अपने शागिर्दों को पुकारा करते—"अरे भई ! मिर्जा गोपाल तफ्ता कहां हो ? मियां अलताफ हुसेन हाली किस हाल में हो ?" **यह गालिब की बदनसीबी थी** कि उन्हें कभी पूर्ण तनहाई नसीब न हुई । **चुनांचे इस तथ्य की ओर इशारा** करते हुए उन्होंने कहा भी है—

है आदमी बजाय खुद इक महशरे खयाल ।
हम अंजुमन समझते हैं खल्वत ही क्यों न हो ॥"

इस सवाल के बाद हमने कोई और सवाल करना उचित न समझा ।

दो-एक सप्ताह के बाद एक अन्य विद्वान यूनीवर्सिटी में लेक्चर देने के लिए आये । शेक्सपियर पर हर्फेआखिर

(अंतिम निर्णय) की हैसियत रखते थे । हमें भी शेक्सपियर से इश्क है । हम उनकी सेवा में उपस्थित हुए । उस समय वे कुछ प्रोफेसरों को यह बात हृदयंगम करा रहे थे, "अगर शेक्सपियर नाटक न लिखता तो वह बहुत कामयाब जासूसी उपन्यास लिख सकता था ।"

हमने पूछा, "वह कैसे ?"

"शेक्सपियर के नाटक सनसनीखेज घटनाओं के गिर्द घूमते हैं । उदाहरण के लिए 'हैमलेट' एक मक़तूल (जिसका कत्ल किया गया हो), दो कातिलों और एक जासूस की दास्तान है । एक बूढ़े जासूस की तरह हैमलेट कातिलों का पता लगाता है, लेकिन वह स्वभावतः बुज़दिल और कम-हिम्मत है । इसलिए अपराधी को पुलिस के हवाले करने के बजाय स्वयं कत्ल होने के लिए तैयार हो जाता है ।"

हमने उनसे पूछा, "आपकी नज़र में शेक्सपियर की महानता का रहस्य क्या है ?"

उन्होंने बड़ी गम्भीरता से जवाब दिया, "यह तथ्य विवादास्पद है कि शेक्सपियर सचमुच महान था । यह सही है
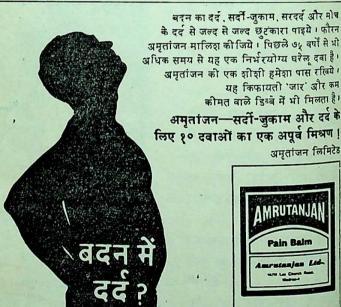
पिछले चार सौ साल में उससे बड़ा नाटककार पैदा नहीं हुआ, मगर इस बात की क्या गारंटी है कि आगामी चार सौ साल में उससे बेहतर नाटककार पैदा न होगा ?"

हमने उनके इस तर्क से प्रभावित न होते हुए कहा, "आप इस बात से इनकार नहीं कर सकते कि वर्तमान साहित्य में शेक्सपियर का एक विशेष स्थान है।

उन्होंने तुरंत जवाब दिया, "इसका कारण यह है कि शेक्सपियर शेक्सपियर है और अगर आप यह जानना चाहते हैं, ऐसा क्यों है तो हम कहेंगे यह उसकी मजबूरी है। आखिर वह दांते, टाल्सटाय और कालिदास तो हो नहीं सकता।"

एक बार हम एक ऐसे विद्वान से मिलने गये जो वेदांत के पंडित समझे जाते थे। हमने उनसे प्रार्थना की कि कुछ शब्दों में वेदांत की व्याख्या करें। उन्होंने चमक कर फरमाया, "भगवान जाने आप वेदांत को क्या समझते हैं! वेदांत तो एक सागर है। उसे गागर में किस प्रकार बंद किया जा सकता है ? यदि हम छह महीने उसकी व्याख्या करते रहें तो भी यह वेदांत की केवल भूमिका होगी।"

हमने बहुत आदर से निवेदन किया, "यह तो आप सही फरमाते हैं, लेकिन हमने तो आप से वेदांत की केवल सामान्य व्याख्या करने के लिए प्रार्थना की थी।"

उन्होंने हमारा मजाक उड़ाते हुए कहा, "वेदांत कोई अलजबरे का फार्मूला नहीं जो कुछ शब्दों में बयान किया जा सके! उसे समझने के लिए अध्ययन करना होगा। सबसे पहले वेद पढ़िए, फिर शास्त्र, पुराण और उपनिषद। इसके बाद जो कुछ पढ़ा है, उस पर कुछ वर्ष विचार कीजिए। फिर हमारे पास आइए। तब हम आपको बताएंगे कि वेदांत क्या है।"

हमने धीरे से कहा, "यदि इतनी फुरसत होती तो आपके पास क्यों आते!"

उन्होंने मुसकरा कर उत्तर दिया, "सचमुच आपने हमारे पास आकर गलती की है। यदि आप इतने वर्ष वेदांत के बिना जीवित रह सके हैं तो जो थोड़ा-सा जीवन रह गया है, वह भी इसके बिना बिता सकते हैं।"

हम अपना-सा मुंह लेकर रह गये ●
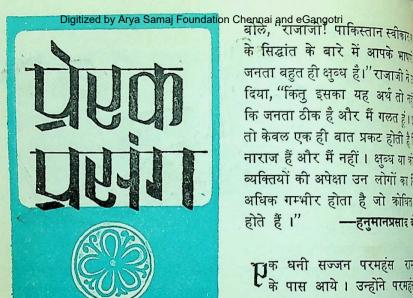
भगवान बुद्ध मगधराज के श्रीपाल नगर में प्रवचन कर रहे थे। एक नागरिक ने प्रश्न किया, "भगवन ! आपके उपदेशों पर अमल कम लोग ही करते हैं, लेकिन आप फिर भी निराश नहीं होते । ऐसा क्यों ?"

महात्मा बुद्ध ने सरल भाव से उत्तर दिया, "वत्स ! सुधारक का कर्तव्य सन्मार्ग की प्रेरणा देना है, सफलता का मूल्यांकन करना नहीं। जिन्हें सफलता की कामना होती है, वे वास्तविक संत नहीं होते ।"

—ऋषिकुमार श्रीवास्तव

सन १९४१ की बात है । चक्रवर्ती राजगोपालाचारी ट्रेन में सफर कर रहे थे । इलाहाबाद स्टेशन पर राजर्षि पुरुषोत्तमदास टंडन उनसे मिले और बोले, "राजाजी! पाकिस्तान स्वीकार... के सिद्धांत के बारे में आपके भाष... जनता बहुत ही क्षुब्ध है।" राजाजी ने... दिया, "किंतु इसका यह अर्थ तो नहीं कि जनता ठीक है और मैं गलत हूं। ... तो केवल एक ही बात प्रकट होती है कि... नाराज हैं और मैं नहीं । क्षुब्ध या क्रो... व्यक्तियों की अपेक्षा उन लोगों का नि... अधिक गम्भीर होता है जो क्रोधित न... होते हैं ।"

—हनुमानप्रसाद ...

एक धनी सज्जन परमहंस राम... के पास आये । उन्होंने परमहंस... धन देने का आग्रह किया और ... "महाराज, इस धनराशि को आप स्वी... करें । इसे आप परोपकार के कार्यों... लगा दीजिएगा ।" परमहंस मुसकराये... "भाई, मैं तुम्हारा धन ले लूंगा तो ... चित्त उसमें लग जाएगा, इससे मेरी मा... सिक शांति भंग होगी ।" धनिक ने ... दिया, "महाराज, आप तो परमहंस हैं... आपका मन उस तैल-बिंदु के समान... जो कामिनी-कंचन के महासमुद्र में गि... होकर भी सदैव उससे अलग रहेगा।" परमहंस गम्भीर हो गये—"भाई, ... तुम्हें ज्ञात नहीं कि अच्छे से अच्छा तैल... यदि बहुत दिनों तक पानी के सम्पर्क... रहे तो वह अशुद्ध हो जाता है और ... दुर्गंध निकलने लगती है ?"

धनी को बोध हुआ । उन्होंने अ... आग्रह त्याग दिया ।

भगवान बुद्ध का अनुरक्त शिष्य वक्कलि जब रुग्ण हुआ तो उसने भगवान के दर्शन की इच्छा व्यक्त की। भगवान उसकी इच्छा पूरी करने के लिए उसके पास गये। भगवान को दूर से आता देख वक्कलि उनके सम्मान हेतु शय्या से उठने का प्रयत्न करने लगा।

तथागत ने अत्यंत करुणापूर्वक उसे शय्या पर लेटे रहने को कहा और स्वयं दूसरे आसन पर बैठ गये। वक्कलि आंखों में आनंद की बूंदें भर लाया, "भंते ! आपके दर्शन की प्रबल इच्छा थी। आपने कृपा कर मेरी इच्छा पूरी कर दी।" भगवान गम्भीर हो आये, "आयुष्मान ! जैसी मलिन काया तेरी है, वैसी ही मेरी भी है। इस मलिन काया को देखने से क्या लाभ ? इसका मोह उचित नहीं। दर्शनीय तो केवल धर्म है। जो धर्म को देखता है वही मेरा उचित रूप से दर्शन करता है।"

—नरेशचंद्र मिश्र

हिरोशिमा पर परमाणु-बम गिरने के बाद जापान ने घुटने टेक दिये। फलस्वरूप 'आजाद हिंद फौज' को भी अपना अभियान बीच में ही स्थगित कर देना पड़ा। सिंगापुर से एक स्पेशल ट्रेन उन युवतियों को लेकर बैंकाक जा रही थी जो 'आजाद हिंद फौज' में भर्ती हुई थीं। नेताजी सुभाषचंद्र बोस उनको छोड़ने स्वयं बैंकाक तक गये। 'आजाद हिंद फौज' के एक वरिष्ठ अधिकारी ने उनसे कहा, "यह काम तो हम भी कर सकते हैं, आप इससे अधिक जरूरी काम करें।" इस पर नेताजी ने कहा, "किसी बाप की बेटी जब अपनी ससुराल जाती है, तो बाप के मन में तब तक उथल-पुथल मची रहती है जब तक उसके सुरक्षित पहुंचने का समाचार नहीं मिल जाता। आज जिस बाप की एक नहीं, सैकड़ों बेटियां उससे विदा ले रही हैं और वह उन्हें सिंगापुर ही छोड़ दे, यह कैसे हो सकता है ?"

—कृष्णदेव अग्रवाल

कालेज के कम्पाउंड से

पिछले वर्ष की बात है। हमारे विश्वविद्यालय में विश्वविद्यालय संसद का वार्षिक अधिवेशन होने वाला था। रोज कक्षाएं समाप्त होने के बाद रिहर्सल होता था। मैं संसद में विदेश मंत्री की भूमिका निभा रहा था। एक दिन रिहर्सल के दौरान संयुक्त राष्ट्र में चीन के प्रवेश को लेकर विरोध पक्ष ने काफी बावेला मचाया। लेकिन मैंने अपनी सरकार की नीति के समर्थन में कुछ ऐसे तर्क दिये कि विरोध पक्ष के नेता बगलें झांकने लगे। प्रतिपक्ष को कमजोर होते देख, राजनीतिशास्त्र के एक युवा प्राध्यापक भी विरोधी पक्ष में शामिल हो गये और सरकार की नीतियों की तीखी आलोचना करने लगे।

स्पीकर महोदय के बार-बार चेतावनी देने पर भी जब वे न बैठे तो एम. ए. द्वितीय वर्ष की एक छात्रा कुमारी रंजना अग्रवाल, जो योजना मंत्री की भूमिका निभा रही थी, उठीं और सदन से उन प्राध्यापक महोदय के निष्कासन का प्रस्ताव रख दिया। अध्यक्ष की कुरसी पर बैठे छात्र ने तुरंत उनके निष्कासन का प्रस्ताव स्वीकृत कर दिया और कुछ क्षणों में ही मार्शल ने उन प्राध्यापक महोदय को कंधे पर लादकर हाल से बाहर कर दिया। उस घटना के बाद वे प्राध्यापक महोदय हम सभी पर इतने कुपित हुए कि संसद भवन में फिर नहीं दिखायी पड़े।

—वीरेन्द्रप्रताप यादव,
लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

यह स्तम्भ युवा वर्ग के लिए है। कालेज के छात्र-छात्राएं इसके लिए रोचक एनकडोट्स भेज सकते हैं। रचना के साथ अपना चित्र और कालेज का पता लिखा, टिकट लगा लिफाफा भेजना आवश्यक है अन्यथा रचना पर विचार नहीं किया जाएगा।

—सम्पादक

हमारी वार्षिक परीक्षा थी और कैमिस्ट्री के प्रेक्टिकल का परचा था । मैंने सारा काम तो ठीक तरह से किया, मगर जब लवण-परीक्षण का समय आया तो काफी परेशान-सा हो गया। सब 'टेस्ट' ठीक करने के बावजूद लवण नहीं निकल रहा था । इसी उधेड़-बुन में मैंने देखा कि मेरे पास वाला साथी, जो कुछ देर पहले मुझे परेशान देखकर खुश हो रहा था, घबरा उठा था । मैं उसकी परेशानी समझ गया, और यह सोचकर कि 'चलो मेरा लवण तो निकल नहीं रहा, उसकी ही मदद कर दूं।' मैं उसकी सहायता करने लगा। कुछ देर की कोशिश के बाद उसका लवण निकल आया। पर वह लड़का खुश होने की बजाय लज्जित-सा हो गया। जब मैं अपनी सीट पर वापस आया तो वह भी मेरे पीछे आया । उसने फुसफुसाकर कहा, "अमोनियम-क्लोराईड का अलग से परीक्षण करो । तुम्हारा लवण भी निकल आएगा ।" मैंने वैसा ही किया और कुछ देर बाद लवण आसानी से निकल आया ।
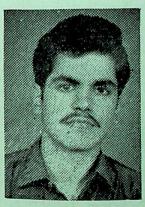
प्रेक्टिकल समाप्त होने के बाद वह लड़का मेरे पास फिर आया और बोला, "मुझे माफ करना । मैंने ईर्ष्यावश तुम्हारे लवण में दूसरा लवण मिला दिया था । इस तरह मैं तुमसे पिछले चुनाव में अपनी हार का बदला लेना चाहता था, मगर अब मैं बहुत लज्जित हूं ।"

—पवनकुमार शर्मा,
दोआबा कालेज, जालन्धर (पंजाब)

एक दिन की बात है । फिजिक्स की कक्षा में अपने एक मित्र को देखने के लिए मैं बार-बार पीछे देख रहा था । तभी प्रोफेसर ने टोक दिया, "यह बुरी आदत है।" उन्होंने शायद समझा कि मैं पीछे बैठी लड़कियों को देख रहा हूं । मैं झेंप-सा गया ।

इस घटना के पांच, छह दिनों बाद फिजिक्स सोसायटी की बैठक हुई। इसमें हम सब छात्र भी उपस्थित थे। सोसायटी के अध्यक्ष वही फिजिक्स वाले प्रोफेसर थे। अपने भाषण के दौरान वे बार-बार पीछे मुड़-मुड़ कर कुछ देख लेते थे। मैंने तुरंत धीरे से कहा, "यह बुरी आदत है।" अगले पल सारे कमरे में एक ठहाका गूंज पड़ा। पहले तो वे भौंचक्के रह गये, लेकिन फिर जब उन्हें,

उस दिन की फिजिक्स-गैलरी वाली घटना याद आयी, तो झेंपकर रह गये। उस सभा में बैठने की व्यवस्था कुछ ऐसी थी, कि आगे पुरुष-प्रोफेसर, और पीछे महिला-प्रोफेसर बैठी हुई थीं।

—अशोककुमार अखौरी,
सेंट कोलंबस कॉलेज, हजारीबाग (बिहार)

इंटर की कक्षा में मेरी एक सहपाठिनी पढ़ने में होशियार थी। वह सम्भ्रांत परिवार की थी। एक अन्य सहपाठिनी और वह हर समय साथ-साथ रहती थीं। दोनों ने विषय भी समान लिये थे। एक बार अर्धवार्षिक परीक्षा के परिणाम घोषित किये जा रहे थे। उत्तर-पुस्तिकाएं देख कुछ के चेहरे खिले थे तथा कुछ के मुरझाये थे। पर मेरी सहपाठिनी की सहेली किसी दूसरे ही कार्य में रत थी। वह अपनी सहेली की उत्तर-पुस्तिका लेकर सितार की अध्यापिका के पास पहुंची। उसके चेहरे पर काफी बेचैनी थी। पता चला कि उसकी दृष्टि में उसकी सखी को उससे ज्यादा अंक मिले थे, जो गलत थे। सितार की अध्यापिका ने उससे कहा कि अंक-तालिका तो कक्षा-अध्यापिका के पास जा चुकी है।

पर उसने कहा, "मैं कक्षा-अध्यापिका से अंक-तालिका ले आऊंगी, आप उसके अंक कम कर दें।" अंततः वह अपने कार्य में सफल हो ही गयी। क्या मित्रता में द्वेष का भी स्थान है?

—इन्दु बाला, रघुनाथ गर्ल्स कालेज, मेरठ

कॉलेज में उस समय अंगरेजी की कोई लेक्चरर नहीं थीं। हमारी पढ़ाई की काफी हानि हो रही थी। एक अन्य लेक्चरर के पढ़ाने से हम संतुष्ट नहीं थे। एक दिन सबने हड़ताल कर दी। परेशान होकर प्रबंधक-कमेटी ने बाहर से निरीक्षिका को बुलाया। उन्होंने पूछा, "तुममें से कितनी लड़कियां इंगलिश में एम.ए. करना चाहेंगी?" सिर्फ एक ने हाथ उठाया जबकि काफी लड़कियां संकोचवश रुक गयीं कि न मालूम वे क्या पूछ बैठें।

तभी वे फिर बोल उठीं, "अब बताइए, जब आप में से सिर्फ एक लड़की एम. ए. करेगी तो फिर आगे की हजारों लड़कियों को पढ़ाने के लिए लेक्चरर कहां से आएगी?" अब सिर झुकाकर एक-दूसरे का मुंह ताकने के सिवा हमारे पास कोई चारा न था।

—स्नेहलता, वी. के. कालेज, नगीना, (बिजनौर)

एकरसता

हर एकरसता खत्म कर देती है
चाहे वह घरेलू कार्यों की हो
या फिर अनागत की प्रतीक्षा की
चाहे लगातार घूमने की
कहीं अंदर लील लेती है वह
बदलने के उत्साह
कितने ही बरस
सोचने की एकरसता में डूब गये
कितने ही बरस
डूब गये हैं
'रुटीन' की जिंदगी में
अब बस
न टूटने का अवसाद है
न जुड़ने का
पेड़ों पर हरी कोंपलें
या बरसात में बादल
जैसे चले आते हैं नियम के मुताबिक
इन शहरों में कहां आता है वसंत
कहां छाती हैं दीवारों पर लताएं-कलियां
वसंत फरवरी की जगह
अक्तूबर में भी आ जाए तो
आश्चर्य नहीं
घर में
या बाहर
पार्कों में
या छोटे-छोटे बच्चों के बीच
कभी कोई छोटी चिड़िया की तरह
सरसराती हुई बात नहीं आती
बस कभी-कभी
कोई कविता
प्रचलित कविताओं से बाहर
अपनी लगती है
इस ऊब और एकरसता से
स्वयं को मुक्त कराने का कोई रास्ता नहीं
बरसों बाद
मैं कविता की तरफ ललक से देखती हूं
लौट आयी हूं इस दुनिया में
जहां कविता की पंखुड़ियां
सुबह की प्रतीक्षा कर रही हैं

—अनामिका

(२६।५३, रामजस मार्ग, करोलबाग,
नयी दिल्ली-५)

संसार के सात बड़े हत्याकांड

• अर्श मलसियानी

भारत की सभ्यता शांति की सभ्यता है। यहां बड़े-बड़े ऋषियों और महान संतों ने शांति और सच्चाई की शिक्षा दी है। भारतवासियों ने भी संसार के दूसरे क्षेत्रों पर किसी प्रकार का आक्रमण न करने का कर्तव्य-सा बना लिया था। इसके विपरीत दो हजार साल से दुनिया के दूसरे हिस्सों में ऐसे-ऐसे अत्याचारी

रोमन सम्राट नीरो

शासक और सरदार हुए हैं जिनके द्वारा किये गये कत्लेआम का इतिहास आज भी लोगों को सिहराता है। रोमन सम्राट नीरो, चंगेज खां, हलाकू खां, तैमूर, नादिरशाह [...] हिटलर इस श्रेणी के शासक थे। ह[...] अपने समय में बंगलादेश में बर्बर नीति[...] अपनाने के कारण जनरल यह्या खां [...] नाम भी इस सूची में जुड़ गया है।

विलासी हत्या[...]

कैसर क्लाडियस का सौतेला बे[...] नीरो पहली ईसवी शताब्दी में हुआ [...] क्लाडियस ने उसे अपना उत्तराधिका[...] भी बना लिया था। उसके मरने प[...] ५४ ईसवी को नीरो सिंहासन पर बैठा[...] चूंकि वह नाबालिग था अतः पहले पां[...] साल तक देश का कारोबार और लो[...] देखते रहे और सुव्यवस्था बनी रही[...] ५९ ई. में नीरो ने प्रशासन अपने हा[...] में ले लिया। उसने केवल नौ वर्ष राज्[...] किया। युवावस्था में ही उसने आत्[...] हत्या कर ली। रोमन जनता को एक अत्[...] चारी शासक से मुक्ति मिली। उन [...] सालों में उसने अपनी माता का क[...] कराया। रोम के सुंदर शहर को आ[...] लगाकर वह स्वयं एक पहाड़ी पर बैठ[...] बांसुरी बजाता रहा और हंसता रहा[...] यही नहीं उसने बड़े-बड़े धनाढ्य भी मा[...]

डाले। अपनी स्त्री और गुरु को भी कत्ल करा दिया। कैसर आगस्टस के वंश का यह अंतिम बादशाह था।

कत्ल की शक्ल

चंगेजखां बारहवीं शती में हुआ था। वह एक मंगोल खान था, परंतु मुसलमान नहीं था। उस समय मंगोलों के नाम के साथ खान चलता था। इससे यह भ्रम होता है कि वे मुसलमान होंगे, किंतु ऐसा नहीं था। तेरह वर्ष की उम्र में, पिता के मरने पर गद्दी पर बैठा, परंतु शत्रुओं ने उसे निकाल दिया। कई वर्षों की लड़ाई के बाद उसने शत्रुओं पर विजय प्राप्त की। उनचास साल की उम्र में चंगेज चीन का बड़ा बादशाह अथवा खाकान हुआ। उसने चीन, कोरिया, तुर्किस्तान, अफगानिस्तान आदि पर विजय प्राप्त की। उसके चार बेटे थे। इन बेटों ने चार शाही खानदानों की बुनियाद डाली। चंगेजखां बड़ा विजयी और प्रतापी सेनापति था। वह सिंध नदी के किनारे पर पहुंच गया था। कहते हैं कि मुहम्मद तुगलक ने उसे वापस करने के लिए सीमा पार ही अपना खजाना भेंट कर दिया था। उसके राज्य की सीमाएं भारत और यूरोप की सीमाओं को छूती थीं।

चंगेजखां के सवार जिस तरफ से गुजरते थे, कत्ल की बड़ी-बड़ी भयानक शक्लें पीछे छोड़ जाते थे। चारों ओर मौत और खून नजर आता था। कई जगह तो चंगेजखां ने पूरी की पूरी आबादियां नष्ट कर दीं। रूस के एक नगर केफ को बुरी तरह बरबाद किया गया। उसके अधिकांश नागरिकों को मौत के घाट उतार दिया गया। लाशों की सड़ांध से सारे शहर में बीमारी फैल गयी। अंत में यह हाल हुआ कि स्वयं मंगोल फौज शहर को छोड़कर भाग गयी। एक बात बड़े अचम्भे की है कि इतने कठोर और निर्दय खान को, जिसे सारी दुनिया बुरा मानती थी, बौद्ध

नादिर शाह

चंगेज खां

तैमूर लंग

अच्छा कहते थे।

संहार का साक्षात रूप

चंगेजखां के बेटे तोलेखां के बेटे का नाम हलाकूखां था। उसका असली नाम हूलागूखां था। उसने ईरान में ईलखान वंश की बुनियाद डाली। इस्माइलियों को उसने खत्म करने की कोशिश की। १२५८ में उसने बगदाद की ईंट से ईंट बजा दी और अब्बासियों के आखिरी खलीफा को खत्म कर दिया।

कटे सिरों की मीनारों का शौकीन

तैमूर तारागाई का बेटा था और उसका असली नाम था—तिमरलंग। वह चंगेजखां के एक वजीर का पड़पोता भी था। तैमूर कश में पैदा हुआ। युवावस्था में उसने युद्धकला सीखी और अंत में १३६९ में बल्ख का बादशाह बन गया। समरकंद का मशहूर शहर उसकी राजधानी थी। इसने भी ईरान, बगदाद आदि पर विजय प्राप्त की। १३९८ में उसने हिंदुस्तान पर आक्रमण किया और दिल्ली को लूटा। उसने १४०२ में अंगोरा के स्थान पर सुल्तान बायजीद को परास्त किया। फिर उसे पिंजरे में बंद करके अपने साथ ले गया। तैमूर चीन पर आक्रमण करने की तैयारी कर रहा था कि उसकी मृत्यु हो गयी। फारस की खाड़ी से वोल्गा तक और गंगा नदी से लेकर मारमोरा समुद्र तक सारे देश इसके राज्य में थे। हिंदुस्तान से तैमूर की वापसी के दौरान कई किस्से हुए। उनमें से कुछ इस प्रकार हैं : तैमूर तख्त कराच[illegible] होते हुए समरकंद पहुंचा था। यह [illegible] पत्थर का एक गढ़ था, जिसे तैमूर ने [illegible] की चोटी पर बनवाया था। समरकं[illegible] नीले दरवाजे पर कालीनों का फर्श [illegible] जिसके आगे रास्ते पर लाल रंग [illegible] बनात बिछा दी गयी। तैमूर को [illegible] गोरगान भी कहते थे। तैमूर और [illegible] शहजादों के स्वागत के लिए उच्च [illegible] कारी, मल्लिका और शहजादियां [illegible] मौजूद थे। जब वह गुजरा तो उस [illegible] सोना और मोती न्योछावर किये ग[illegible] तैमूर के कदमों पर हीरों और पन्नों [illegible] फर्श बिछ गया। उसके साथ ९७ हा[illegible] और अन्य बड़े जानवर थे, जिन पर [illegible] का माल लदा था। समरकंद में तैमूर [illegible] यह पहला नहीं बल्कि आठवां आग[illegible] था। भारत से वह फीरोजशाही जा[illegible] मस्जिद का नक्शा और दो सौ कारी[illegible] भी ले गया था।

तैमूर शत्रुओं का कत्ल कर उन[illegible] सिरों का मीनार बनाता था। उसके [illegible] दया कायरता की निशानी थी। वह [illegible] किले को घेरता, पहले श्वेत झंडा [illegible] देता। यदि किले वाले झुक जाते [illegible] वह उन्हें क्षमा कर देता। यदि वे अड़ते [illegible] कत्ल का बाजार गरम हो जाता।

नादिर अली खां एक गड़रिये [illegible] बेटा था। बाद में वह डाकुओं के [illegible] गिरोह का सरदार हो गया। १७३६ [illegible] ईरान के सिंहासन पर कब्जा कर उस[illegible]

सफवी वंश का खात्मा कर दिया । १७३९ में उसने मुहम्मदशाह रंगीले के जमाने में भारत पर आक्रमण किया और दिल्ली को लूटा । चांदनी चौक में किये गये कत्लेआम के कारण नादिरशाह भुलाये नहीं भूलता ।

नादिरशाह के आक्रमण की कहानी बड़ी रोचक है । उसने करनाल के स्थान पर शाही फौजों को परास्त किया । खानेदौरां मारा गया । नादिरशाह ने मुहम्मदशाह को बुलवाया और उससे खजाने की तालियां ले लीं । बुरहानउल्मुल्क केवल एक प्रांत का सूबेदार था । वह नादिरशाह से मिला । उसने उसे इस बात पर सहमत कर लिया कि दो करोड़ रुपया लेकर वह वहीं से वापस चला जाएगा । उसके पश्चात मुहम्मदशाह ने निजामउलमुल्क को भेजा तो उसने भी इसी शर्त पर नादिरशाह को मनवा लिया । बुरहानउलमुल्क ने देखा कि अब उसे सबसे बड़ा वजीर बनने का मौका नहीं मिलेगा । उसने नादिरशाह से कहा कि दो करोड़ भी कोई राशि है ! यह तो मुझ-जैसा सूबेदार भी दे सकता है । बस फिर क्या था ! नादिरशाह दिल्ली में बड़ी शान से दाखिल हुआ । मस्जिदों में उसके नाम का खुत्बा 'हिंदुस्तान के बादशाह' की हैसियत से पढ़ा गया । दिल्ली में उसने खजाने को खूब लूटा । हीरों और जवाहरात की कीमत का अनुमान नहीं किया जा सकता । उसके बाद उसने अमीरों और रईसों से माल-धन इकट्ठा किया । बुरहानउलमुल्क को देशद्रोह की सजा मिली और उसकी मृत्यु हो गयी । नादिरशाह ने निजामउलमुल्क और दूसरे बड़े-बड़े अमीरों से करोड़ों रुपया लिया । एक दिन किसी ने अचानक खबर उड़ा दी कि नादिरशाह की मृत्यु हो गयी । तो मनचले सरदार बाहर निकल कर ईरानी फौज के आदमियों और सरदारों को धड़ाधड़ कत्ल करने लगे । नादिरशाह को खबर मिली तो वह चांदनी चौक

यहिया खां

की सुनहरी मस्जिद में लाल-पीला होकर गुस्से में आ बैठा । उसने अपने सिपाहियों को कत्लेआम का हुक्म दिया । सुबह आठ बजे से दोपहर के तीन बजे तक कत्लेआम जारी रहा । इतिहास की पुरानी पुस्तकों में लिखा है कि उस दिन सात-आठ घंटों

में लगभग डेढ़ लाख आदमी कत्ल हुए होंगे। यों तो दिल्ली ने बड़े रंग देखे, परंतु यह कत्लेआम अपनी मिसाल आप था। लूटमार का माल लेकर और इतने आदमियों की जानें खत्म कर नादिरशाह १६ मई को वापस चल पड़ा। शाहजहां का तख्तेताऊस भी इस माल में था। जब वह लौटा तो सात हजार घोड़े, दस हजार ऊंट, एक सौ तीस लेखक, दो सौ भवन-निर्माण-कला के विशेषज्ञ और दो सौ बढ़ई उसके साथ थे।

आधुनिक समय में हिटलर ने रक्त-पात और अत्याचार के इतिहास को फिर दोहराया। पहले वह नाजी पार्टी का

हिटलर

नेता बना, बाद में हिंडनवर्ग की मृत्यु के पश्चात चांसलर भी हो गया। उसने धड़ाधड़ हथियार बनाये और लड़ाई के बहाने ढूंढ़ने लगा। अंत में पोलैंड के साथ डांजिग के स्थान पर हुए झगड़े ने दूसरी बड़ी लड़ाई का रूप ले लिया। हिटलर

मुसोलिनी

ने यूरोप के सारे देश रौंद डाले। इ[illegible] का डिक्टेटर मुसोलिनी भी उसका सा[illegible] बन गया।

हिटलर का विश्वास था कि पह[illegible] लड़ाई में यहूदियों ने ही जरमनी [illegible] परास्त कराया था। इसलिए उ[illegible] हर जगह से यहूदियों को चुन-चुन [illegible] जमा किया और गैस-चैम्बरों में डाल[illegible] उन्हें खतम कर दिया। कहते हैं कि उ[illegible] पचास से साठ लाख तक यहूदी खत्म कि[illegible]

पिछले वर्ष पाकिस्तान के तत्काल[illegible] राष्ट्रपति याहियाखां ने एक बार फि[illegible] बर्बर सरदारों की याद ताजा कर दी[illegible] बंगला देश में जो-जो अत्याचार हु[illegible] उनके घाव अभी तक नहीं भर पा[illegible] हैं। सभ्य संसार ने इस सारे नरसंहार [illegible] लिए एक मुख्य शासक के रूप में याहिया[illegible] को ही दोषी ठहराया।

एफ-४।११ माडलटाउन, दिल्ली

शिकार कथा

• सुहैल मुरादाबादी

शेर के सामने पसीना

मैं पूर्वी ओटा में जानवरों का शिकार किया करता था। मैंने पहाड़ियों के करीब एक कुटिया बना ली थी। उसका नाम मैंने 'हेडक्वार्टर' रख छोड़ा था। रीछ, हरिण, पहाड़ी बबर शेर, बनबिलाव सभी वहां बहुतायत से पाये जाते थे। जिस जमाने की यह बात है, उन दिनों मेरा एक मित्र टाम लेंसन भी मेरे साथ वहां ठहरा हुआ था। एक दिन जिम और जान ऐंड्र्यूज भी आकर हमारे साथ शामिल हो गये। ये दोनों शौकिया शिकार के इरादे से आये थे। एक दिन की बात है मैं तीसरे पहर अपनी एक नली वाली ४५.८० बीलर्ड राइफल कांधे पर रख कर हरिण के शिकार के इरादे से जंगल में निकल पड़ा। हरिण की तलाश में मैं दूर तक चला गया। संयोग की बात कि उस दिन हरिण दूर-दूर तक नजर न आया। हारकर मैं हेडक्वार्टर की ओर लौट पड़ा।

अभी ज्यादा दूर नहीं गया था कि मुझे अपने पीछे सरसराहट-सी सुनायी

दी। ऐसा लगा, जैसे कोई मेरा पीछा कर रहा है। इस सरसराहट ने मुझमें अजीब-सी बेचैनी पैदा कर दी। मैं एक-दम रुक गया और चौकन्ना होकर देखने और आहट लेने की कोशिश करने लगा। हर चीज साफ दिखायी दे रही थी, मगर कहीं कोई पत्ता भी हिलता नजर न आया और न कोई आहट महसूस हुई। मैं फिर चल पड़ा।

चलते-चलते मैं एक ऐसी जगह पर पहुंचा, जहां एक तरफ पहाड़ियां सिर उठाये खड़ी थीं और दूसरी तरफ काफी दूर तक कोई पेड़ न था। इस खुले हिस्से को पार कर दूसरे किनारे पर पहुंचते ही मैं रुक गया। मेरे पीछे आहट-सी हुई थी। मैंने पीछे की तरफ देखा। आसपास कुछ नजर न आया तो मैंने पहाड़ी के नीचे खड़ी झाड़ियों की ओर निगाहें दौड़ायीं। एक क्षण बाद ही एक पहाड़ी बबर शेर ने झाड़ी के पीछे से अपना भयानक चेहरा निकाला। मुझ पर नजर पड़ते ही वह कुत्ते की तरह पैरों के बल बैठ गया। मैंने अपने लम्बे शिकारी जीवन में इतना बड़ा शेर कभी न देखा था। हलकी चांदनी में उसका शरीर धुंधले प्रतिबिंब की तरह दिखायी दे रहा था लेकिन उसकी आंखें दो दहकते हुए अंगारों की भांति चमक रही थीं। मेरी रीढ़ की हड्डी तक एक सर्द लहर दौड़ गयी। इसके बावजूद मैंने उस समय ज्यादा खतरा महसूस नहीं किया। मुझ मालूम था कि पहाड़ी शर अकसर अकेले आदमी का मीलों पीछा तो किया [illegible] हैं मगर ज्यादा करीब आने या [illegible] करने का साहस नहीं करते। हां, [illegible] शेर भूखा या जख्मी हो तो बात [illegible] है। फिर भी मैं इस समय कोई [illegible] नहीं बरतना चाहता था।

कुछ दिन पहले मैंने राइफल [illegible] निशाना लेने वाली मक्खी रेती से [illegible] कर कम कर दी थी ताकि इस तरह [illegible] से बारीक निशाना लेकर जहां चाहूं [illegible] गोली मार सकूं। मगर शेर पर [illegible] चलाने के इरादे से अब जो मैंने नि[illegible] लेना चाहा तो मुझे पता चला कि [illegible] की हलकी रोशनी में उस समय [illegible] मक्खी मुझे नजर नहीं आ रही है। [illegible] इसके सही निशाना लगाना अस[illegible] था। मैं दुविधा में पड़ गया। यदि मैं [illegible] चलाता और वह केवल घायल हो [illegible] तो फिर मेरे लिए मुसीबतें और बढ़ जा[illegible] दूसरी ओर गोली न चलाने में मु[illegible] थी। शेर मेरा पीछा करना जारी रख[illegible] अंत में मैंने शेर को डराकर भगाने [illegible] निश्चय किया। मैंने फौरन अपने [illegible] से हैट उतारा और एक हाथ में राइ[illegible] और दूसरे में हैट पकड़े दोनों हाथ हि[illegible] और चीखता-चिल्लाता हुआ शेर [illegible] ओर दौड़ पड़ा। इन हरकतों की प्रति[illegible] सिर्फ इतनी हुई कि शेर ने अपना [illegible] जो वह अब तक पंजों पर रखे था, [illegible] दम उठा लिया। उसकी आंखों से रो[illegible]

की तेज किरणें निकलती हुई मालूम हुईं। साथ ही उसके सफेद दांत बाहर निकल आये, जैसे वह मुझे मुंह चिढ़ा रहा हो। निःसंदेह वह गीदड़-भभकियों में आने वाला न था।

परिस्थिति गम्भीर हो गयी थी। शेर न तो भयभीत हो रहा था और न ही मैं इस हालत में था कि एक ही फायर में उसे जहन्नुम रसीद कर सकूं। अब आगे मेरे पीछे लम्बी-लम्बी छलांग लगाना शुरू कर दिया। यह उपाय भी कारगर न हुआ। अतः मैं रुककर एक बार फिर शेर का निशाना लेने की कोशिश करने लगा। लेकिन इस बार शेर इस तरह लेट गया था कि उस पर सही निशाना लगाना पहले से ज्यादा कठिन हो गया था। शेर को चुपचाप पड़ा देखकर मैं फिर आगे बढ़ा। शेर भी खड़ा हो गया और

बढ़ने के अलावा कोई चारा न था। चूंकि आगे का रास्ता अपेक्षाकृत साफ था इसलिए मैं शेर पर भी अच्छी तरह निगाह रख सकता था। मैंने चलने के इरादे से कदम उठाया ही था कि बबर शेर भी उठ बैठा और उसने मेरा पीछा शुरू कर दिया। मैंने दौड़ने की कोशिश की तो शेर ने भी नपे-तुले अंदाज में पहले की तरह पीछा करने लगा।

इस तरह कई बार हुआ। जब मैं रुकता तो वह लेट जाता और मैं चलता तो वह भी चलने लगता। एक विशेष बात जरूर थी। वह एक खास अंदाज के मुताबिक कदम बढ़ाता था। इसलिए जब हम रुकते तो हर बार हम दोनों के बीच की दूरी पहले की अपेक्षा थोड़ी-

बहुत कम जरूर हो जाती। और अब तो उसने एक और सावधानी शुरू कर दी थी। जैसे ही वह मुझे रुकता हुआ देखता तो फौरन जमीन पर इस तरह से चिपककर लेट जाता कि मुश्किल से ही उसके शरीर का कोई भाग दिखायी देता। वह स्वयं को प्रायः पूरी तरह घास या झाड़ियों के पीछे छिपा देता। मेरे और शेर के बीच अब कोई सौ फुट का फासला रह गया था।

मेरे पास एक ही चारा रह गया था। वह यह कि अपनी कुटिया तक पहुंचते मैं शेर को यथासम्भव अपने से दूर रखूं। कुटिया का ध्यान आते ही मैंने घूमकर देखा। मेरे शरीर में प्रसन्नता की लहर दौड़ गयी। अब कुटिया बहुत ज्यादा दूर न थी। मैं उत्साह से दौड़-सा पड़ा। शेर भी उतनी ही तेजी से बढ़ा। उसने लम्बे-लम्बे डग भर बीच का फासला काफी कम कर दिया। अब वह तीस-चालीस फुट से ज्यादा दूर न रह गया था। मैं उसका सामना करने के लिए एकदम मुड़ गया। उस समय मेरी पीठ कुटिया की ओर थी। जैसे ही मैंने उसकी तरफ मुंह किया। वह एक सेकंड के लिए झुका। फिर फौरन ही कमर झुकाकर हलके-हलके दुम की नोक को हिलाता, पीछा करने वाले उसी खौफनाक अंदाज में उसने फिर आगे बढ़ना शुरू किया। वह इस तरह चल रहा था, जैसे कोई बड़ा सांप जमीन पर फिसल रहा हो। उस समय उसकी आंखों की चमक भी ज्यादा बढ़ गयी थी। वे बिलकुल आग की तरह दहकती मालूम [पड़] रही थीं। मुझे ऐसा लगा जैसे खून [नसों] में जम गया है। मैं डर के कारण कां[पने] सा लगा। उधर शेर हर क्षण नि[कट] आता जा रहा था। अब कुछ करना ज[रूरी] था। क्षण भर सोच-विचारकर मैं ते[जी] से दौड़ पड़ा। दौड़ते हुए मैं पीछे मुड़[कर] शेर को भी देखता जाता। शेर मुझसे ज्या[दा] चालाक था। उसने लम्बी-लम्बी [...] छलांगें लगाकर फासले को और कम [कर] दिया। स्पष्टतः शेर ने हमला करने [का] इरादा कर लिया था। मैं सहम कर [रह] गया। अब मेरे पास भी उसका साम[ना] करने के अलावा कोई चारा न था। मैं[ने] फौरन निशाना साधा। उधर शेर के लम्बे-लम्बे नाखूनों वाले पंजे हवा में उठ [चुके] थे। मैं गोली चलाने के लिए राइ[फल] दबाने ही वाला था कि एक साया [मुझ] पर आ गिरा। मुझे लगा, जैसे किसी [...] मेरे सिर में काट खाया हो।

जब आंखें खुली तो मैंने स्वयं [को] अपनी कुटिया में पाया। जान ऐंड्[रूज] मुझे पानी के छींटे दे रहा था। जब मु[झे] पूरी तरह होश आया तो जॉन ऐंड्[रूज] ने बताया, "हमने तुम्हारी चीख सु[नी]। उसी समय राइफल चलने की भी आवा[ज] हुई। हम सब घबरा कर दरवाजे [की] तरफ दौड़ पड़े। जिम दरवाजे की कुं[डी] खोल ही रहा था कि तुम एक दरवा[जे] से फट पड़े और फिर बेहोश हो गये।"

दूसरे दिन सवेरे हम उस जगह [...]

बुद्धिविलास के उत्तर

(१) हल: ३६ मील प्रति घंटे। चूंकि मोटर साइकिल जहां से चली थी वहीं लौटती है, भले ही वह अकसर दिशा बदलती रहे, अतः यह राजेंद्रनगर और लाजपतनगर की दिशा में एक-सी ही दूरी तय करेगी, अर्थात आधा समय (३।४ घंटे) यह राजेंद्रनगर की ओर दुर्गा और सुंदर को ले जाने में लगाएगी।

चूंकि दुर्गा और सुंदर कुल समान दूरी समान समय में तय करते हैं, दोनों को मोटर-साइकिल पर बैठने के लिए समान अवसर मिला, अर्थात प्रत्येक मोटर साइकिल द्वारा ३।८ घंटे यात्रा करता है और १-१|८ घंटे पैदल चलता है। सुंदर तीन बार उतनी देर मोटर साइकिल पर बैठता है जितनी देर उस बीच दुर्गा तीन बार पैदल चलता है। अतः मोटर साइकिल की रफ्तार पैदल चलने वालों की अपेक्षा ३ × ३ = ९ गुना हुई।

(२) उत्तर—नर कुत्ते की आकृति, क्योंकि शब्द है 'हिज ...'

(३) उत्तर: पालतू पशु-पक्षियों वाले २९ सदस्य थे और शो में ३७ पालतू पशु-पक्षियों ने भाग लिया। चूंकि किसी के पास भी एक से अधिक पालतू पशु-पक्षी नहीं था, २१ सदस्यों में से हरेक के पास एक पालतू होना चाहिए, और शेष आठ के पास दो-दो।

(४) उत्तर: गोविंद (जिसका पिता थल-सेना में था) वायुसेना में भरती हुआ। हरि (जिसका पिता नौसेना में था) थलसेना में भरती हुआ। महेश (जिसका पिता वायुसेना में था) नौसेना में भरती हुआ।

जहां मैंने आखिरी वार शेर को छलांग लगाते देखा था। कुटिया से सिर्फ पच्चीस फुट की दूरी पर शेर हमें मिल गया। वह रास्ते के बीचों-बीच पड़ा था, बिलकुल पत्थर की तरह संज्ञाहीन। मेरी राइफल भी उसी के पास पड़ी थी।

रास्ते की नरम जमीन हमारे सामने साफ नक्शा पेश कर रही थी। पैरों के चिह्नों से साफ पता चलता था कि मैं कहां खड़ा था, शेर ने कहां से छलांग लगायी थी और फिर मुझसे एक फुट के फासले पर वह कहां आकर गिरा था।

स्पष्ट था कि शेर के छलांग लगाते वक्त ही मैंने अनजाने में गोली चला दी थी। इसका परिणाम यह हुआ था कि शेर मेरे ऊपर गिरने के बजाय एक कदम आगे जा गिरा था।

मेरी राइफल भी वहीं पड़ी थी। मैं कह नहीं सकता कि मैंने ही उसे फेंक दिया था या वह छूटकर गिर पड़ी थी। मेरे पैरों के निशान से पता चलता था कि मैं तड़पते हुए घायल शेर को फांदकर ही अपनी कुटिया तक पहुंचा था। जब हम उस नौ फुट चार इंच लम्बे शेर की खाल उतारने लगे तो हमें मालूम हुआ कि गोली उसके सीने में लगी थी। ●

झरनों के गीत

जंगल में गूंज उठे झरनों के गीत
झरबेरी चकित खोल
झुरमुट के द्वार
मुग्ध-मगन झांक रही
छवि का अवतार
पत्थर के प्राणों से झरता संगीत

टेसू के रक्त-कुसुम
आमों के बौर
पूजन को ललक उठे
पुलकित हर ठौर
भक्तों की कमी नहीं, मनमाने मीत

महुआ, सागौन, नीम
आंवला, बबूल
लहक-लहक झूम रहे
सुध-बुध सब भूल
वर्तमान नाच उठा, मर चुका अतीत

खोहों तक जा पहुंचे
निर्झर के गान
सिहों का चूर हुआ
पल में अभिमान
गर्जन का गर्व गला, गीत गया जीत

——नर्मदाप्रसाद खरे
१८४, शहीद स्मारक पथ, जबलपुर

मैं

मैं एक सम्बंध
अनाम, अपरिभाषित
फुलवारी की नम सांसों-सा
तुम्हारी आंखों पर छाया
अणु-अणु में इंद्रचाप आंकता
धमनियों में
एक नीरव ज्वार
संस्कृति की आदतों को ललकारता
मुक्त चेतन आचार
और फिर सूरज ढला
स्थूल छायाएं
अपने लम्बे पंजे बढ़ाती
घोंटने लगीं गला
चेतना चीखने लगी शब्द
अर्थ लपेटने लगे माटी
थकी हुई तुम
सामने की बांह के खम्भे से
जा लिपटीं
तिमिर में स्पर्श की वाणी से
अभिमंत्रित करने लगीं
खंडहर में अवशिष्ट
खंडित मूर्ति !
और वह सतरंगी नाता
फूल-पत्तों की नम सांसों पर
फिर भी झूलता रहा
मुंदी पलकों पर दस्तक देता

——डा. गोपाल शर्मा
डी—२१६४, ऐंड्रयू जगंज, नयी दिल्ली-१

उपदेश जो हर कठिनाई में काम आया

• रोमोलोस

मनीला हाईस्कूल में विद्यार्थियों की पहली वाद-विवाद प्रतियोगिता थी। देश भर से उस प्रतियोगिता में सम्मिलित होने के लिए दूर-दूर से छात्र आये थे। मैं एक शर्मीला और दुर्बल छात्र था। प्रतियोगिता में मैं पहली बार सम्मिलित हो रहा था। भाग लेने वालों के आकारों और चेहरों पर झलकती बुद्धिमत्ता से मेरा चेहरा पसीना-पसीना हुआ जा रहा था। मुझे अपनी सफलता का रत्ती-भर भी विश्वास न था, किंतु निर्णायकों ने मुझे सफलतम वक्ता घोषित कर दिया। सफलता अप्रत्याशित थी, इसलिए उसकी प्रसन्नता भी हजार गुनी बढ़ गयी थी। मेरे मित्र मुझे कंधों पर उठाये फिर रहे थे। प्रतियोगिता में मेरे विरोधी जोल्यू ने दूर से हाथ हिलाया और चिल्लाकर कहा, "बधाई हो रोमोलोस !"

वह उल्लास जो मेरी रग-रग में व्याप गया था, शायद उसकी आंखों में भी जुगनू बनकर चमक रहा था किंतु जनसमूह के एक रेले में मैं आगे बह गया और अपने प्रतिद्वंद्वी की बधाई का उत्तर देना भूल गया। जब शाम को मैं अपने वृद्ध पिता के पास गया तो उनके स्वर में गरिमा का अंश अपेक्षाकृत कम था। क्या वे मेरी अप्रत्याशित सफलता से आश्वस्त नहीं थे ? क्या उन्होंने मेरी वक्तृत्व-कला को संतोषजनक नहीं पाया ? मेरा रंग पीला पड़ गया। तब मेरे पिता ने मुझे समीप बुलाते हुए मृदु स्वर में पूछा, "रोमोलोस, तुमने जोल्यू की बधाई का उत्तर क्यों नहीं दिया ? तुम्हें उससे हाथ मिलाना चाहिए था।"

मुझे तुरंत जोल्यू का विरोध याद आ गया। स्कूल में उसने मुझे सदा नीचा दिखाया था। अब पहली बार मैंने उसे प्रतियोगिता में पराजय दी थी। मैंने खिन्न होकर कहा, "मुझे जोल्यू से क्या मतलब ? वह तो प्रतियोगिता से पहले मेरे विरुद्ध विष उगलता रहा है।"

मैं अब भी अपने वृद्ध और बुद्धिमान पिता को कल्पना-चक्षुओं से देख रहा हूं। उन्होंने बहुत कोमलता से मेरे कंधे पर हाथ रखते हुए कहा, "बेटा, पेड़ जितना फलदार होता है उतना ही नीचे झुकता है। इसे सदा याद रखना।"

मेरा सिर झुक गया। क्या मैं फलदार पेड़ बन गया था ? क्या मैं फलहीन सरकंडा था जो यों ही अकड़ गया था ?

तब से स्वर्गीय पिताजी का वह उपदेश मेरा पथ-प्रदर्शन कर रहा है। बाद में मैं पत्रकार बन गया। विभिन्न मतावलम्बियों से मेरा वास्ता रहा और मैंने देखा कि जो सही अर्थों में बड़े होते हैं, उनमें सहनशीलता और विनम्रता की मात्रा बहुत

होती है और वे दूसरों की अनुभूतियों का सबसे अधिक ध्यान रखते हैं।

फिर मैं एक समाचारपत्र का प्रकाशक बन गया।

एक बार मैंने सेंट के सभापति मेनोल कोइजन के विरुद्ध एक जबरदस्त सम्पादकीय लिखा। बाद में मुझे अनुभव हुआ कि मेरी आलोचना यद्यपि तथ्यों पर आधारित थी किंतु मेरा स्वर आक्रामक और अनुचित था। उसी शाम को वे मुझे एक दावत में मिले। मुझे उनके तेज मिजाज और स्वर का पता था, अतः मैं भरी सभा में उनसे आंखें चुरा रहा था। उस सभा में उन्होंने मुझे कोई महत्त्व न दिया और बातों-ही-बातों में मेरी खूब दुर्गति बनायी। दूसरे दिन जब मैं अपने कार्यालय गया तो देखा कि वे मेरी प्रतीक्षा कर रहे थे। देखते ही वोले, "मैं क्षमा मांगने के लिए

वह हमारी हरकतों को बड़े गौर से देख रहा है, सी. आई. ए. एजेंट दिखता है।

उपस्थित हुआ हूं।" उन्होंने बड़ी वि- म्रता से कहा, "कल शाम मैंने आ- साथ बड़ा अपमानास्पद व्यवहार किया जिसका मुझे बिलकुल अधिकार न था।

मेनोल ने मेरा हृदय मोह लिया उसी समय मैं उनका प्रशंसक बन गया वे एक महान व्यक्ति थे किंतु उन्हें झु- में रत्ती भर हीनता अनुभव नहीं हु- मैं उनके सामने कितना तुच्छ नजर आ रहा था! मेरी लिखी सम्पादकीय टिप्प- के सारे शब्द मेरा मुंह-सा चिढ़ाते लगे शायद मेरे व्यक्तित्व की टहनी अ- फलदार नहीं हुई थी। उस क्षण मु- अपने स्वर्गीय पिता जी का उपदेश या- हो आया--

"पेड़ जितना फलदार होता है उतना ही नीचे झुकता है।"

द्वितीय महायुद्ध के दिनों में मैं ज- रल मैकार्थर के स्टाफ में था। कारीजा- के युद्ध में हम बुरी तरह हारे। राष्ट्र- रूजवेल्ट ने जनरल मैकार्थर का युद्ध- जनरल वेन-राइट के हवाले कर दि- मैं भी नये जनरल के साथ था। मैका- चले गये तो अगले दिन नये जनरल सारे स्टाफ की एक मीटिंग बुलायी।

"तीव्र गति से आक्रमण करने अपेक्षा मुझे आत्मरक्षा करने का अनु- कम है। मैं आप सबसे कहना चाहता कि जब मैं कोई गलती करूं, तो आप सचेत कर दें।" वह अपनी दुर्बलता परदा डाले बिना निस्संकोच कह रहा

विनम्रता का यह स्वर केवल उस कमांडर के पास हो सकता है, जो सही अर्थों में नेतृत्व के योग्य है और झुकना जानता है।

महायुद्ध के पश्चात मैं फिलापाइन के प्रतिनिधिमंडल का सदस्य बनकर संयुक्त राष्ट्रसंघ के सानफ्रांसिस्को अधिवेशन में गया। मोलोटोव के व्यवहार को देख मैंने भविष्यवाणी की कि रूस विश्व शांति के मार्ग में जबरदस्त बाधा सिद्ध होगा। मोलोटोव के रूप में मुझे वह कठोर और अकड़ा हुआ बांस नजर आ रहा था, जो नीचे झुकना नहीं जानता और जिसकी फुनगी पर कोई फल नहीं लगता। अधिवेशन के आरम्भ में जब प्रार्थना पढ़ी गयी तो रूस ने प्रार्थना का विरोध शुरू कर दिया। मामला खटाई में पड़ने लगा। अंत में मेरी आशंका सत्य सिद्ध हुई। अधिवेशन से कोई लाभ नहीं हुआ। मेरा अनुमान था कि जनता के प्रतिनिधि जब अपने ऊपर एक बड़ी शक्ति का विश्वास नहीं रखते तो विनम्रता और याचना उनके हृदय में नहीं हो सकती। ऐसे प्रतिनिधि जो झुकना नहीं जानते, अपने राष्ट्र को केवल विनाश की खाई में धकेल सकते हैं।

जब १९४९ में मैं संयुक्त राष्ट्रसंघ का सभापति चुना गया तो अपने भाषण की समाप्ति पर मैंने कहा था, "आइए, महान और उच्चतम ईश्वर के सामने हम प्रार्थना करें कि वे हमें अपने असाधारण और गम्भीर दायित्वों का वहन करने की सामर्थ्य और शक्ति प्रदान करें।"

वास्तव में मैं अपने अनदेखे ईश्वर को अपने भौतिक संघर्ष में सम्मिलित करना चाहता था ताकि उसकी उच्चता और प्रतिष्ठा से हमारे हृदयों में विनम्रता और उदारता की वही भावना उत्पन्न हो सके जो विश्व-शांति का शीर्षक बन सकती है।

अपनी महान प्रतिष्ठा के उस क्षण में भी मेरे कल्पना-चक्षुओं के सामने स्कूल का एक छोटा-सा लजीला बच्चा खड़ा था, जिसे उसका वृद्ध और बुद्धिमान पिता उपदेश दे रहा था, "बेटा, पेड़ जितना फलदार होता है, उतना ही नीचे झुकता है।"

●

पेनिसिलिन के आविष्कारक सर अलेक्जेंडर फ्लेमिंग को एक बार लंदन से बेलफास्ट व्याख्यान देने जाना था। हवाईअड्डे पहुंचने पर उन्हें पता चला कि उच्च प्राथमिकता के आधार पर सारी सीटें पहले ही बुक हो चुकी थीं। खोजबीन करने पर ज्ञात हुआ कि सब सीटें उन सरकारी अफसरों के लिए सुरक्षित थीं जो उनका भाषण सुनने के लिए भेजे जा रहे थे।

आइंस्टीन : क्या आप मानते हैं कि ब्रह्म जगत से पृथक है ?

रवींद्रनाथ : पृथक नहीं । मानव के व्यापक एवं अनंत व्यक्तित्व में सम्पूर्ण जगत व्याप्त है । ऐसा कोई पदार्थ नहीं जिसका मानव के अंतर्गत समावेश न हो । इससे सिद्ध होता है कि जगत की यथार्थता एक मानवीय सत्य है ।

आइंस्टीन : जगत की वास्तविकता के बारे में दो भिन्न मत हैं । एक यह कि विश्व मानवीय कल्पना है ।

रवींद्रनाथ : इस के अतिरिक्त कल्पना हो ही क्या सकती है ? मानव ही तो वास्तविक सृष्टि है । विज्ञान का भी वैज्ञानिक मानव की धारणा मात्र तो है । बुद्धि, विवेक, तर्क और आनं एक स्तर ही तो उसे सत्यता-वास्तवि प्रदान करता है ।

आइंस्टीन : यह मानवीय तत्त्व आत्मानुभूति है ।

गुरुदेव रवींद्रनाथ ठाकुर विज्ञानाचार्य मनीषी आइं के बीच वार्त्ता, जो १४ सन १९३० को आइंस्टीन निवासस्थान पर हुई

बातचीत आइंस्टीन से रवींद्रनाथ ठाकुर

उस इकाई के रूप में है, जिसका अस्तित्व वास्तव में मानवीय तत्त्व से स्वतंत्र है, उसके अनाश्रित है ।

रवींद्रनाथ : मानव जब जगत से एकलय होता है, जब उसका अनंत सत्ता से तादात्म्य स्थापित हो जाता है, तभी सत्य से हमारा साक्षात्कार होता है ।

आइंस्टीन : यह जगत की सर्वथा

रवींद्रनाथ : निःसंदेह । एक अ अनंतसत्ता की आत्मानुभूति । हमें की अनुभूति अपनी भावनाओं और क्रि कलापों के द्वारा ही होती है । 'परम (सुप्रीम मैन) की, जो व्यक्तित्व सीमाओं से परे है, अनुभूति हमें परिमिति से होती है । विज्ञान का व्यक्तियों तक ही परिमित नहीं

उसका सम्बंध मानव-जगत के उन तथ्यों से है जो अवैयक्तिक हैं। मानवधर्म उन तथ्यों का दिग्दर्शन कराता है।

रवींद्रनाथ : हां! यद्यपि वह व्यक्ति के, मानव के बाहर है, तथापि वह विश्व-मानस के बाहर तो नहीं है। मेज जो मुझे दृष्टिगोचर होती है, वह उसी प्रकार की विवेकशक्ति द्वारा अनुभवगम्य है जो मुझे उपलब्ध है।

आइंस्टीन : हमारे इस नैसर्गिक दृष्टि-कोण की कि सत्य का अस्तित्व मानवता से स्वतंत्र और निरपेक्ष है, न तो व्याख्या की जा सकती है, न इसे साबित ही किया जा सकता है, किंतु यह एक ऐसा विश्वास है जिससे कोई भी रहित नहीं है, आदिम-जाति के लोग भी नहीं।

रवींद्रनाथ : विज्ञान से प्रमाणित है कि मेज एक घन-पदार्थ के रूप में दृष्टि का विषय है, अतः वह वस्तु जिसे मानव-बुद्धि मेज के रूप में देखती है, उसका दर्शक के अभाव में अस्तित्व न रहेगा। साथ ही इस तथ्य को भी स्वीकार करना पड़ेगा कि मेज की चरम भौतिक यथार्थता विद्युन्मय शक्तियों के पृथक घूमते हुए केंद्रों के समूह के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है, और यह भी मानव-बुद्धि का ही विषय है। सत्य के बोध में विश्वमानस और व्यक्ति के भीतर उसी मानस का जो परिमित अंश है, इन दोनों के बीच एक अनंत संघर्ष चलता रहता है। हमारे पदार्थ-विज्ञान, दर्शन-शास्त्र और नीति-शास्त्र में समन्वय का एक अवि-

आइंस्टीन
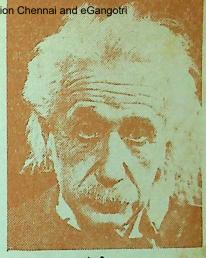
रल क्रम जारी है। हर सूरत में यदि कोई सत्य ऐसा है कि जिसका अस्तित्व मानव-बुद्धि से सर्वथा भिन्न अथवा निरपेक्ष है, तो उस सत्य का अस्तित्व शून्य के अतिरिक्त कुछ भी मूल्य नहीं रखता।

ऐसे मस्तिष्क की कल्पना करना कठिन नहीं है, जिसमें पदार्थों का अनुक्रम अंत-रिक्ष में न होकर केवल समय में, संगीत के स्वरों के स्पंदन की भांति होता

रवींद्रनाथ ठाकुर

हो। ऐसे मानस के लिए वास्तविकता की कल्पना संगीत की वास्तविकता के समान है, जिसमें पाइथागोरस की ज्यामिति कोई माने नहीं रखती। उस कवि के मानस में, जो कागज को चट कर जाता है, साहित्य-जैसी किसी वस्तु का अस्तित्व नहीं है, किंतु मनुष्य के मानस के लिए तो साहित्य का कागज से कहीं अधिक मूल्य है। इसी प्रकार यदि कोई सत्य ऐसा है जिसका मानव-बुद्धि से तर्क संगत अथवा भावात्मक सम्बंध नहीं है, तो हमारे लिए वह शून्य के बराबर है।

आइंस्टीन : तब तो मैं आप से अधिक धार्मिक हूँ।

रवींद्रनाथ : मेरा धर्म अपने व्यक्तिगत रूप में निर्गुण और निरुपाधि ब्रह्म, विश्वात्मा का समाधान करता है।

आइंस्टीन : तो सत्य अथवा सुंदर मानव से पृथक नहीं है?

रवींद्रनाथ : नहीं।

आइंस्टीन : मान लीजिए मनुष्य का संसार से लोप हो जाए तो क्या सूर्य सुंदर नहीं रह जाएगा।

रवींद्रनाथ : नहीं।

आइंस्टीन : सौंदर्य के बारे में आपकी इस धारणा से मैं सहमत हूं, किंतु सत्य के बारे में नहीं।

रवींद्रनाथ : क्यों नहीं? सत्य का साक्षात्कार भी तो मानव के ही द्वारा होता है।

आइंस्टीन : मैं यह सिद्ध तो नहीं कर सकता कि मेरी धारणा सही है, परंतु सत्य को मानव-निरपेक्ष स्वतः सिद्ध समझना मेरा धर्म है।

रवींद्रनाथ : सौंदर्य उस पूर्णतन्मय[illegible] कल्पना है जिसकी अनुभूति हमें वि[illegible] में होती है। इसका आभास अनुभव[illegible] प्रदीप्त चेतना द्वारा होता है, अन्य[illegible] सत्य को जान ही कैसे सकते हैं?

आइंस्टीन : वैज्ञानिक ढंग से [illegible] सिद्ध तो नहीं कर सकता कि सत्[illegible] धारणा वही सत्य है जिसका अ[illegible] मानव-अस्तित्व से स्वतंत्र और नि[illegible] किंतु मेरा तो यही दृढ़ विश्वास है।

रवींद्रनाथ : सत्य जो विश्वात्[illegible] अभिन्न है, निश्चय ही मानवीय सत्[illegible] यदि ऐसा न हो तो जिसका हम व्यक्[illegible] रूप से अनुभव कर पाते हैं वह कभी [illegible] नहीं कहा जा सकता। कम-से-कम वैज्ञा[illegible] सत्य के बारे में तो यही बात है, [illegible] जिसे हम वैज्ञानिक अथवा तर्कसम्मत [illegible] मानते हैं, वह मानवीय विचारशक्[illegible] ही उपलब्ध होता है। भारतीय द[illegible] अनुसार ब्रह्म ही परमसत्य है। इस [illegible] सत्य का साक्षात्कार व्यक्ति के [illegible] में विलीन हो जाने पर ही सम्भव है [illegible] यह परमसत्य विज्ञान से परे है। [illegible] में जिस सत्य की चर्चा है, वह वास्[illegible] सत्य की अभिव्यक्ति मात्र होने से [illegible] प्रतीति है, एक प्रकार की भ्रांति [illegible] हम 'माया' के नाम से सम्बोधित [illegible] सकते हैं।

सीधे शब्दों में हम यह कह [illegible] हैं कि विज्ञान एक भ्रांति है।

●

आपका हृदय

• डॉ. ओमप्रकाश

हृदय सदा से ही चर्चा का विषय रहा है। एक ओर जहां साहित्यकारों ने 'दर्दे दिल' को जबान दी है, वहां दूसरी ओर चिकित्सकों ने 'एंजाइना पेक्टोरिस' (हृत्शूल) का वर्णन किया है। बायीं ओर पसलियों के नीचे निरंतर होने वाले स्पंदन जीवन-दीप की लौ हैं और उनका लगातार चलना ही जीवन की निशानी है।

कुछ लोगों का खयाल है कि हृदय-रोग आधुनिक यांत्रिक सभ्यता की देन हैं, किंतु वास्तविकता यह नहीं है। हृदय-रोग शायद आदिम-युग से ही चले आ रहे हैं। हृदय-रोग के कई प्रकार हैं। कभी-कभी मां के गर्भ में शिशु की रचना के समय हृदय में दोष रह जाते हैं। ऐसे विकारों के कारण होने वाले रोग जन्मजात हृदय-रोग यानी 'कांजेनिटल हार्ट डिजीज' कहलाते हैं। ऐसे रोगों के उदाहरण हैं—'एट्रियल सेप्टल डिफेक्ट' अर्थात दो अलिंदों के मध्य की दीवार में छिद्र का रह जाना, 'पेटेंट डक्टस आरटीरियोसस' यानी एक अतिरिक्त रक्तनली का चालू रहना आदि।

दूसरे हृदय-रोग वे हैं जो कि र्‌यूमेटिक हृदय-रोग के नाम से जाने जाते हैं। ये र्‌यूमेटिक बुखार के कारण होते हैं। यह बुखार गले की खराबी से होता है। इसका दुष्प्रभाव हृदय, जोड़ों, त्वचा और मस्तिष्क पर होता है। इससे हृदय के कपाटों के आकार में अंतर आ जाता है। उच्च रक्तचाप भी हृदय पर अपना बुरा प्रभाव डालता है।

आज का समस्त बुद्धिजीवी-वर्ग 'कारोनरी आरटरी डिजीज' नामक हृदय-रोग से बेहद चिंतित है। कारोनरी नामक रक्त-धमनियों के कारण हृदय में जो विकार उत्पन्न होते हैं, वे 'एंजाइना पेक्टोरिस' तथा 'मायोकारडियल इन्फारक्शन' (हार्ट अटैक) के नाम से जाने जाते हैं। कारोनरी धमनियां हृदय को रक्त पहुंचाती हैं। जब व्यक्ति अधिक परिश्रम करता है तो हृदय को भी शरीर को अधिक रक्त पहुंचाने के लिए अधिक कार्य करना पड़ता है। ऐसे समय स्वयं हृदय को भी अधिक रक्त की आवश्यकता होती है। यदि कारोनरी धमनियां उस समय अधिक रक्त देने में असमर्थ हों तो हृदय को प्राणवायु की कमी हो जाती है। इस कमी के कारण हृदय में जो दर्द होता है उसे हम 'एंजाइना पेक्टोरिस' कहते हैं। यदि

इन नलियों में रक्त अचानक जम जाए (इसे 'कारोनरी थ्रोम्बोसिस' कहते हैं) तो हृदय का कुछ भाग मृत हो जाता है। इसे हम 'मायोकारडियल इन्फारक्शन' कहते हैं। उसमें भी हृदय में पीड़ा होती है। यह कभी-कभी बहुत ही भयंकर हो उठती है। यह बहुधा प्राणघातक होता है।

हृदय-रोगों के लक्षण

अलग-अलग प्रकार के हृदय - रोगों में अलग-अलग तरह के लक्षण होते हैं। जन्मजात रोगों में अकसर बालक पर विशेष प्रकार की नीलिमा (सायनोसिस) छा जाती है। कभी-कभी चेहरे की बनावट भी एक विशेष प्रकार की होती है। बालक का शारीरिक विकास रुक जाता है। बालक दूध पीते-पीते हांफने लगता है। दूध पूरी तरह पी नहीं पाता। वह रो[ता] धीरे है और कभी-कभी रोने पर ... पड़ जाता है। उसे बार-बार खां[सी की] शिकायत होने लगती है। उसकी बीमारी लम्बे समय तक चलती है। बालक के सीने अर्थात हृदय-स्थान [पर] स्पंदनों के साथ-साथ मांस-पेशि[यों में] थिरकन नजर आती है।

र्‌यूमेटिक हृदय-रोगों में यह ... दूसरे ही ढंग से प्रारम्भ होती है। ... में बार-बार गला खराब होता है, ... आता है और जोड़ों में भयंकर पीड़ा ... है। जोड़ों में सूजन भी आ जाती है, त्वचा पर लाल-लाल दाने निकल आ[ते हैं] और हृदय-गति तीव्र हो जाती है। ... मेटिक बुखार का असर हृदय के क[पाटों] पर भी हो जाता है और उससे कभी-क[भी] कपाट सख्त होकर सिकुड़ जाते हैं। ... उनके बीच का एक छिद्र छोटा पड़ [जाता] है। इससे रक्त-प्रवाह में प्रतिरोध ... हो जाता है। कभी-कभी कपाट ... भी पड़ जाते हैं और बंद होने प[र] कुछ स्थान बच जाता है। इससे ... विपरीत दिशा में चला जाता है। हृ[दय में] चार कपाट होते हैं। उनमें से ... भी कपाट पर इस रोग का ... पड़ सकता है। कपाटों के सिकुड़ने ... जाने पर रक्त-प्रवाह और हृदय के ... कक्ष विशेष के फैलने से अनेक ... उत्पन्न होते हैं। प्रमुख रूप से रोगी ...

शिकायत करता है कि जो सामान्य कार्य वह पहले आसानी से कर लेता था, अब सांस फूलने के कारण नहीं कर पाता। उसे बार-बार खांसी आती है और कभी-कभी बलगम में खून भी आने लगता है। कभी-कभी खाना निगलने में भी दिक्कत महसूस होती है। कभी-कभी संध्या-काल में अथवा पैर लटकाकर बैठने में उसके पैरों में सूजन आ जाती है।

उच्च रक्तचाप के कारण होने वाले हृदय-रोग में लोग अकसर सिरदर्द की शिकायत करते हैं। सिर में दोनों ओर कनपटियों में दर्द होता है और हृदय की धड़कन महसूस होती रहती है। ऐसे व्यक्तियों को गुस्सा भी बहुत आता है।

'एंजाइना पेक्टोरिस' के रोगियों को एक आम शिकायत होती है। सीढ़ियां चढ़ते समय सीने में सुई-जैसी चुभन महसूस होती है। जल्दी-जल्दी चलने पर भी इसी प्रकार का दर्द होता है। विश्राम करने पर दर्द बंद हो जाता है।

'कारोनरी थ्रोम्बोसिस' का दर्द भयंकर होता है। यह सीने में बायीं ओर शुरू होता है। बायें हाथ व गरदन में भी यह दर्द महसूस होता है। इसके साथ-साथ रोगी अत्यधिक थकान महसूस करता है। उसे चक्कर आते हैं। साथ ही उसे ठंडा पसीना आता है। बेचैनी महसूस होती है और ऐसा लगता है कि दिल डूबा जा रहा है।

उपचार और अन्य उपाय

जन्मजात रोगों में शल्य-चिकित्सा का

लेखक

विशिष्ट स्थान है। शल्य-चिकित्सा के माध्यम से अतिरिक्त खुले छिद्रों को बंद किया जाता है।

र्‍यूमेटिक हृदय-रोगों में 'डिजीटेलिस' नामक दवा द्वारा हृदय को अतिरिक्त शक्ति प्रदान की जाती है। शल्य-चिकित्सा द्वारा कपाटों का आकार भी बड़ा किया जाता है। नकली कपाट भी लगाये जाते हैं। विद्युत द्वारा गति की अनियमितता को ठीक किया जाता है। उसके अतिरिक्त पेनिसिलीन व एस्प्रीन द्वारा र्‍यूमेटिक बुखार का उपचार किया जाता है। दिमागी परेशानी दूर करने व चित्त शांत करने हेतु ट्रैंकुलाइजर्स (एक्वी-ब्राम, कामपोज आदि) दवाएं दी जाती हैं। रोगी को परिश्रम कम करने की सलाह दी जाती है।

उच्च रक्तचाप के मरीजों को रक्त-चाप कम करने के लिए एल्डोमेट आदि दवाएं दी जाती हैं। उन्हें भी चित्त की शांति के लिए ट्रैंकुलाइजर्स दिये जाते हैं। उन्हें नमक का प्रयोग कम करने की सलाह दी जाती है। आवश्यकता पड़ने पर डीजो-क्सीन भी दी जाती है।

'एंजाइना पेक्टोरिस' के रोगियों को नाइट्राइट्स नामक दवाएं दी जाती हैं। ये हृदय को तुरंत अधिक रक्त प्रदान करने में सहायक होती हैं।

'कारोनरी थ्रोम्बोसिस' का उपचार अत्यंत सावधानी से कराना चाहिए। इसमें रोगी को पूर्ण विश्राम जरूरी है। हृदयगति तथा रक्तचाप पर नजर रखी जाती है।

कुछ उपयोगी परामर्श

जन्मजात रोगों की रोकथाम फिलहाल सम्भव नहीं है। किसी सीमा तक र्‍यूमेटिक हृदय-रोगों की रोकथाम की जा सकती है। जब भी गला खराब हो तुरंत उपचार करवाना चाहिए। र्‍यूमेटिक बुखार होने पर पूर्ण विश्राम करना चाहिए। पेनिसिलीन और एस्प्रीन आदि लेना चाहिए। एक बार र्‍यूमेटिक बुखार यदि आ जाए तो पचास वर्ष की आयु तक सावधानी रखनी चाहिए। उच्च रक्तचाप से बचने के लिए पेशाब की बीमारि... ध्यान रखना चाहिए व ऐसी ... होने पर तुरंत इलाज करवाना चा... उच्च रक्तचाप के रोगियों को नम... सेवन कम-से-कम करना चाहिए। ... तो कतई नहीं करना चाहिए। 'ए... पेक्टोरिस' के रोगियों को अधिक ... का काम नहीं करना चाहिए। ... धीरे-धीरे चढ़ना चाहिए। 'का... थ्रोम्बोसिस' के रोगियों को घी, ... आदि के सेवन से बचना चाहिए। मदि... और धूम्रपान से भी बचना चाहि... वजन नहीं बढ़ने देना चाहिए और ... से भी बचना चाहिए।

सात्विक आहार, प्रातःकालीन ... तथा तनाव-रहित जीवन सभी रो... साथ-साथ हृदय-रोगों से भी पर्याप्त ... करता है।

—बी।१११ मालवीयनगर, नयी दि...

चतुर्थ सिख गुरु रामदासजी तृतीय गुरु अमरदासजी के दामाद थे। अमरदासजी ने एक दिन परीक्षा के लिए शिष्यों और पुत्रों को आज्ञा दी कि अपने बैठने के लिए एक-एक चबूतरा बनाओ। आज्ञा का पालन किया गया। गुरुजी ने उन्हें गिरवा दिया और फिर बनाने की आज्ञा दी। इस बार भी गुरु ने उन्हें गिरवा दिया और नये बनाने का आदेश दिया। सारे दिन इसी तरह चबूतरे बनते-टूटते रहे। कुछ लोग खीझ उठे। शिष्यों में रामदासजी ही ऐसे थे जो पूर्ण उत्साह से हर बार चबूतरा बना रहे थे। गुरुजी उनसे पूछ बैठे, "रामदास, तुम अब भी चबूतरा बना रहे हो? दूसरे शिष्य तो काम छोड़ कर चले गये।"

रामदास हाथ जोड़ कर बोले, "शिष्य का एकमात्र कर्तव्य गुरु की आज्ञा का पालन करना है। मैं प्राण त्याग सकता हूं पर गुरु का दिया काम नहीं छोड़ सकता।" गुरु अमरदास ने रामदासजी को गुरु-गद्दी का अधिकारी घोषित किया।

क्षणिकाएं

अभिनंदन-पंक्ति

अपने भीतर की जड़ता को
काटकर
बाहर बैठक में आओ
बरामदे में लोग
फूलमालाएं लिये खड़े हैं
प्रतीक्षा-पंक्ति में
वे सभी
तुमसे कहीं ज्यादा टूटे हैं

—कृष्ण कमलेश

दबंग

साहित्यिक सभाओं में
जब-जब
वे खड़े हुए
लेकर डंडे
रचना के क्षेत्र में
गाड़ गये
नये झंडे

—कुंवर वीरेन्द्र विक्रमसिंह गौतम

अनुशासन

दोस्त मेरे
यह संघर्ष की वेला है
अनुशासन हमारा ऐसा
जैसे कुम्भ का मेला है

—दर्शन बखारिया

आवाज

किसी को कुछ कहता हूं
किसी को कुछ कहता हूं
खुश हो गया जिस पर
उसे सब राज कहता हूं
जब कुछ नहीं बचता लुटाने को
तो खुद को आवाज देता हूं

—धर्मवीर काठपालिया

वसीयतनामा

एक वसीयतनामा
मेरी जिंदगी की डायरी के
उन पन्नों को फाड़कर
प्रकाशित कराया जाए
जिन्हें
मैंने अंतिम क्षणों में
मरने के लिए
खाली छोड़ रखा था

—प्रकाश केवलिया

आदमी

मैं आदमी हूं
आप भी आदमी हैं
हम सब आदमी हैं
इसीलिए तो
हम सब एक-दूसरे के लिए
दुश्मनी-घृणा-अविश्वास पालते हैं

—सत्यनारायण श्रीवास्तव

सबसे पुराना आर्च

एक वैज्ञानिक सरकारी खर्च से सारे भूमंडल का भ्रमण कर जब स्वदेश लौटा तो लोगों ने उसकी आंखों पर एक मोटा-सा कांच देखा। ऐनक के नीचे से अपनी कंजी आंखों में मुसकराकर वह कहता, "वैज्ञानिक उपलब्धियों ने ईश्वर नाम के पक्षी की हत्या कर दी। मनुष्य

ने ही उसे गद्दी पर बैठाया था और मनुष्य ने ही उसे उतार भी दिया।"

उसकी नजर में मनुष्य ही सब कुछ था। अपने तर्क की प्रामाणिकता के लिए वह उदाहरणों की झड़ी लगा देता, जैसे—कृत्रिम ग्रहों का निर्माण, निर्जीव से जीव, चांद का परिभ्रमण और बिना पुरुष की सहायता के स्त्री द्वारा गर्भधारण आदि। बालक भी वह आगे चलकर स्वयं पैदा कर सकेगी, ऐसा उसका विश्वास था।

उन्माद इतना बढ़ा कि एक दिन वह किसी स्वामीजी के पास पहुंच कर ज्ञान बघारने लगा। उसने उन्हें ... करना भी उचित नहीं समझा। स्वा... गम्भीरता से उसकी बातें सुनते रहे, ... अंत में बोले, "आप यदि मेरे एक ही प्रश्न ... उत्तर दे देंगे तो मैं आज से ही ईश्वर को ... स्वीकार लूंगा। वैज्ञानिकों ने जितने ... (मेहराब) बनाये, वे क्या ईश्वर-नि... सबसे पुराने 'आर्च' के सामने खरे उतरे ...

"ईश्वर का बनाया आर्च?"

"हां, ईश्वर का बनाया 'आर्च' मानव ... तलवा है। यह बोझ के साथ चल सकता ... दौड़ सकता है, कूद सकता है। है आपके ... 'आर्च' में इतनी क्षमता? आपका ... सीमा से अधिक बोझ एक क्षण भी ... सम्हाल पाता। गति आते ही लुढ़क प... है। अब बोलिए—ईश्वर है या नहीं?"

वैज्ञानिक निरुत्तर! झट ... स्वामीजी के पांव छू लिये।

नेतागीरी

एक नवयुवक काम के लिए इ... उधर भटकने के बाद किसी ... के पास पहुंचा और अपनी जिज्ञासा ... की, "संसार में सस्ता, सुलभ और ... लाभदायक कौन-सा काम है?"

नेता धीरे से मुसकराकर राज खो... सा बोला, "देखते नहीं, मैं क्या करता हूं ..."

● मधुर क...

जंगल में समाजवाद

जंगल के पशुओं ने एक विराट सभा का आयोजन किया और समाजवाद की मांग पेश की।

अब प्रश्न उठा कि समाजवाद लाया कैसे जाए? एक लोमड़ी ने प्रस्ताव किया कि समाजवाद लाने से पहले सड़े-गले सामंतवादी ढर्रे पर सम्राट बने आतंकवादी सिंह को पदच्युत करके जनतंत्र की तरह पशुतंत्र की स्थापना करना होगा। एक संविधान बनाना होगा और वह संविधान समाजवादी होगा।

सिंह को पदच्युत करने की बात पर पशुओं में थरथराहट चढ़ आयी। किंतु सामूहिक विद्रोह के आगे प्रस्ताव ध्वनिमत से पारित हो गया।

बात सिंह के कान में पड़ी। वह भयंकर गर्जना करता हुआ आया तो सबकी सिट्टी गुम! किंतु लोमड़ी बड़े विनीत भाव से बोली, "नाराज क्यों होते हैं अन्नदाता? पशुतंत्र और समाजवाद से क्या फर्क पड़ता है, शब्दों का हेर-फेर है स्वामी! अब आप सम्राट कहलाते हैं, फिर प्रेसीडेंट कहलाएंगे। राज आपका ही रहेगा, प्रजा तो सिर्फ वोट देगी। अब आप अकेले हैं, फिर आपके दो, चार चमचे भी इधर-उधर हो जाएंगे, जिन्हें प्रजा भिन्न-भिन्न नामों से चुन-चुन कर आपके पास भेजेगी। किसमें इतना दम-खम है जो आपके रहते किसी दूसरे को वोट दे! प्रत्यक्ष चुनाव हो या अप्रत्यक्ष!"

—आनंद भटनागर नीलरतन

वचन-वीथी

मेरे लिए सब दिशाएं झुक जाएं। मैं प्रत्येक दिशा में सफलता अर्जित करूं।

—ऋग्वेद

प्राण बचाने के लिए भी मित्र को आपत्ति में न डालना सज्जनों का धर्म है।

—जातक

महत्त्व मानसिक वृत्ति का है, न कि ऊपरी दिखावे का।

—महात्मा गांधी

शांति का रथ उस मार्ग पर नहीं बढ़ सकता जिसपर तोपें बिछी हों।

—लॉयड जार्ज

यदि आप ऐसी चीज खरीदते हैं जिसकी आपको जरूरत नहीं है तो शीघ्र ही आपको ऐसी चीज की जरूरत पड़ेगी जिसे आप नहीं खरीद सकते।

—कोल्टन

बिना सोचे-समझे जो प्रतिज्ञाएं की जाती हैं, उनके सोच-समझ कर तोड़े जाने की सम्भावना रहती है।

—शेक्सपियर

जिंदगी हमारी खामोशियों में गाती है और नींद में सपने संजोती है।

—खलील जिब्रान

अपने अप्रकाशित काव्य-संग्रह के बारे में कुछ कहते हुए बड़ा संकोच लग रहा है। यह बात न्याय की है भी नहीं, क्योंकि इस विषय पर मैं तो आपसे कुछ भी कहे जा सकता हूं, पर आपको वह सुविधा प्राप्त नहीं है। जिस रचना को आपने अभी तक देखा ही नहीं है, उसके बारे में आप चाहें भी तो क्या प्रतिवाद करेंगे? दूसरी ओर, यदि मैं उच्छ्वसित होकर अपनी कविता की विशेषताओं की चर्चा करूं तो आप कम-से-कम, मन-ही-मन अवश्य कहेंगे कि हजरत अपने मुंह मियां मिट्ठू मत बनिए; और यदि मैं उसकी कमजोरियां गिनाने लगूं तो प्रश्न उठेगा कि इतनी कमजोर रचना के बारे में कुछ भी कहना या सुनना आवश्यक ही क्यों है? यह बात भी उठ सकती है कि यह सारी चर्चा किसी वास्तविक अप्रकाशित काव्य-संग्रह के बारे में है अथवा किसी काल्पनिक सम्भाव्य योजना के बारे में?

• नेमिचन्द्र

आजकल प्रचार के इस जमाने में सभी जानते हैं कि आलोचनाएं लिखी लिखवायी जाती हैं। आप चाहे जिस पर चाहे जिस ढंग की आलोचना लि सकते हैं। (गौर फरमाइए—लेखक में आलोचक हैं। उन्होंने स्वयं आलोचनाएं लिखने का राज इस अनजाने प्रकट कर दिया है!—सम्पा यह तो विशेषज्ञों का युग है। आलो की हर शैली के भी अलग-अलग वि हैं। कुछ दो-टूक खरी बात कहने का करते हैं, तो कुछ शब्दों के घटाटो अपनी बात को इस प्रकार छिपाकर के विशेषज्ञ होते हैं कि मजाल है आलोचक को किसी भी प्रकार के प का दोषी कह सकें! ऐसी आलोचन को पढ़कर मुझे बच्चों की पत्रिकाओं निकलने वाली उन पहेलियों की याद जाती है जिनमें टेढ़ी-मेढ़ी रेखाओं आकारों में किसी बड़ी दाढ़ी वाले का चित्र छिपा रहता है और पता बेचारे नन्हे-मुन्नों को बड़ी मु से चला करता है। इसी प्रकार और तरह-तरह की आलोचनाओं के आजकल होने लगे हैं—जैसी फर करें, वैसी राय आपको मिल सकती आपको यदि किसी पत्र-पत्रिका का दक—या सह-सम्पादक ही सही— का सौभाग्य मिला हो तो आप

होंगे कि किस प्रकार ठीक आपको अच्छी लगने वाली पुस्तकों की आपको पसंद आने वाली आलोचनाएं आसानी से मिल जाया करती हैं।

तो फिर स्वयं लेखक की राय तो अपनी रचना के बारे में निष्पक्ष होना बहुत ही कठिन है। उसमें तो घुमा-फिरा कर रचना की महानता, उसके रचे जाने में लेखक के अभूतपूर्व त्याग, और उसके प्रकाशित न होने के पीछे व्यवसाय-बुद्धि वाले दुनियादार और अशिक्षित प्रकाशकों के संस्कृतिद्रोह का उल्लेख होना अनिवार्य है। मुझे नहीं लगता कि आपको ऐसी बात पर यकीन होगा और मैं नहीं चाहता कि मेरा-आपका सम्बंध इस अविश्वास के साथ प्रारम्भ हो, क्योंकि यदि कभी किसी तरह मेरा काव्य-संग्रह प्रकाशित हो ही गया, और संयोगवश वह आपके हाथ भी पड़ ही गया, तो आप बड़ी सख्ती से छांट-छांटकर उसके गुण-दोष निकालना चाहेंगे जिनका उल्लेख मैंने ही आपके आगे किया होगा। आप प्रकाशक के विरुद्ध की गयी सारी शिकायतों की भी असलियत जानने की कोशिश शायद करें। उस हालत में आपसे जिस थोड़ी-बहुत हमदर्दी की यों मुझे आशा है, वह भी शायद न मिल सके, जैसे अपनी चालाकी से शुरू में ही अपने परीक्षक को सावधान कर देने वाले परीक्षार्थी को ग्रेस-मार्क नहीं मिलते।

पाठक को खुश करना बड़ा कठिन काम है। लेखक एक होता है, पाठक सैकड़ों। क्षमा कीजिए, इतनी आत्मप्रशंसा तो आपको बर्दाश्त करनी ही होगी कि मेरे अप्रकाशित काव्य-संग्रह के सौ-दो सौ पाठक जरूर निकल आयेंगे! इन पाठकों को क्या अच्छा लगता होगा और क्या बुरा, यह जानने का मेरे पास कोई साधन नहीं है। मान लीजिए, आपमें से कुछ को प्रेम की कविताएं पसंद हैं और कुछ को देशभक्ति की; या कुछ को सुकुमार भावनाओं का रंग-बिरंगा कल्पना-विलासी चित्रण रुचिकर है और कुछ को जीवन के रसहीन तिक्त अनुभव की घोर यथार्थवादी अभिव्यक्ति। यदि मैं पहले से ही कह दूं कि मेरे अप्रकाशित काव्य-संग्रह
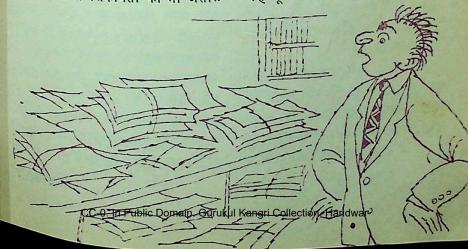
में केवल अमुक प्रकार की कविताएं हैं तो आपमें से कुछेक तो जरूर ही उससे निराश हो जाएंगे, और सम्भव है कि भड़क भी जाएं। यदि मैं होशियारी से यह कहने की कोशिश करूं कि उसमें दोनों प्रकार की रचनाएं हैं, तब डर है कि दोनों प्रकार के ही पाठक अप्रसन्न न हो जाएं !

पहले राजनीति में ही दलबंदी हुआ करती थी, पर अब तो हर क्षेत्र में पालियां खिंची हुई हैं, महिलाओं के केश संवारने के स्टाइल से लगाकर किसी महाकाव्य के नाम के आगे विशेषण लगाने की उपयोगिता तक। आपने जबान खोली नहीं कि आपके ऊपर कोई-न-कोई लेबल टांक दिया जाएगा। फिर आप लाख सिर पटकिए, शाहनवाज के जूते की तरह उस लेबल से कोई छुटकारा नहीं। दिलचस्प बात यह है कि एक लेबल के लेखक की रचनाओं को बाकी लेबलों वाले पाठक एक खास नजर से देखने लगते हैं—भौहें थोड़ी-सी उठाकर, एक तरफ होंठों के कोने को कुछ ऐसे दबाकर कि लगे मुसकरा भी रहे हैं, और नहीं भी मुसकरा रहे हैं। ऐसी मुद्रा में रचना का सहानुभूतिपूर्ण स्वागत होने की सम्भावना बहुत ही कम हो जाती है।

दरअसल, मेरी राय तो यह होती जा रही है कि पाठक के पास रचना पहुंचाने के लिए नाट्यशास्त्र से कुछ परिचय बहुत ही आवश्यक है। रचना को पाठक के मन में नाटकीय ढंग से विस्मय अथवा आश्चर्य का भाव जगाने में अवश्य [illegible] होना चाहिए। पूर्व-परिचय इस [illegible] की अनुभूति में बड़ा बाधक होता है [illegible] वह नवीनता को नष्ट कर देता है। [illegible] यही कारण है कि पुराने लोग इस [illegible] के पक्ष में नहीं थे कि लड़का अपनी [illegible] वधू को विवाह से पहले देख ले। [illegible] प्रतीक्षा की आकुलता और अप्रत्या[illegible] की नवीनता, दोनों नष्ट हो जाती [illegible] अपने अप्रकाशित काव्य-संग्रह के बा[illegible] मेरा भी बहुत कुछ यही भाव है।

मान लीजिए मेरा काव्य-संग्रह प्र[illegible]शित हुआ और फिर एक दिन किसी पुस्त[illegible] भंडार में गोरखपंथियों के बारे में कि[illegible] अलभ्य पुस्तक को खोजते-खोजते आ[illegible] शुभदृष्टि उस संग्रह के ऊपर जा प[illegible] और कुछ जायका बदलने के लिए [illegible] कुछ उत्सुकतावश, आपने दो-तीन [illegible] दूकानदार के आगे फेंके और पुस्तक [illegible] ले आये—अब शायद आप उन कविता[illegible] को पढ़ ही जाएं—जैसा मैंने कहा [illegible] जायका बदलने के लिए, कुछ उत्सुक[illegible] वश, और साथ-ही-साथ अब किसी [illegible] तक अपने उन बहुमूल्य दो-तीन [illegible] की पूरी-पूरी कीमत वसूलने के लिए [illegible] क्या आप नहीं सोचते कि मेरे आज [illegible] अप्रकाशित काव्य-संग्रह के लिए [illegible] बड़े सौभाग्य की बात दूसरी नहीं [illegible] सकती ? अब उसकी नवीनता के [illegible] आपका भी कुछ-न-कुछ लगाव तो हो [illegible] ही ! मान लीजिए कि इतने ही में आ[illegible]

कोई और साहित्यिक बंधु भी पान चबाते-चबाते आ पहुंचें और मेरे सौभाग्यवश वे आपसे कह बैठें कि 'तुम्हारा भी कैसा टेस्ट खराब हो गया है जो ऐसे घटिया प्रयोगवादी कवि की पुस्तक खरीदने लगे हो!'

मुझे यकीन है उस हालत में, चाहे अपनी अभिरुचि की मर्यादा के विचार से ही सही, आप मेरी कविताओं को इस आकस्मिक आक्रमण से थोड़ा-बहुत बचाने का प्रयत्न अवश्य करेंगे। आप शायद कहें कि 'यह लेखक प्रयोगवादी हो न हो, इसकी कविताओं में अनुभूति का अभाव नहीं है, बल्कि उस अनुभूति की अभिव्यक्ति में बड़ी ईमानदारी भी है। इसके विचार बहुत ऊंचे तो नहीं हैं, पर दिलचस्प जरूर हैं।' शायद तब आप यह भी कह दें, 'इसकी भावनाओं में बनावट नहीं है, न अपनी बात को दुर्बोध बनाने का प्रयत्न ही है। इस लिहाज से इन कविताओं में वे सब बातें तो नहीं पायी जातीं जिनका जिक्र प्रायः प्रयोगवाद के समीक्षक किया करते हैं', आदि-आदि। और सम्भव है फिर इसके बाद आपमें और आपके मित्र में आधुनिक साहित्यालोचना के स्तर और उसके भविष्य पर एक निष्ठायुक्त विचार-विनिमय होने लग और मेरे कविता-संग्रह के अनगिनत दोषों पर से आपकी दृष्टि हट जाए। सच मानिए, मैं अपने अप्रकाशित काव्य-संग्रह के लिए इससे अधिक उज्ज्वल भविष्य की कामना करते डरता हूं, और इसीलिए आपको सावधान

कर देने की भूल नहीं करना चाहता ।

अपनी अप्रकाशित रचना की कुछ चर्चा करने का उद्देश्य चाहे जो भी हो, पर यह भावना कहीं-न-कहीं अवश्य रहती है कि वह शीघ्र ही प्रकाशित हो सकेगी। इस सम्बंध में लेखक घोर आशावादी होता है। जीवन की हर सम्भावना को शंका की दृष्टि से देखने वाला भी इस विषय में बड़ा आश्वस्त रहा करता है। मुझे भी सदा लगता रहता है कि चाहे जैसे हो मेरा काव्य-संग्रह एक-न-एक दिन अवश्य प्रकाशित हो के रहेगा। ऐसा कई बार हो चुका है कि यह संग्रह छपते-छपते बाल-

"अगर तुम्हें कभी सम्पादकजी मिल जाएं तो . . . . ?"

"तो मैं अब तक लौटायी गयी तमाम रचनाओं का डाक-व्यय वसूल कर लूं!"

बाल बचा । एक बार एक प्रकाशक ने वचन दे दिया, यह भी तय हो गया आवरण-पृष्ट कैसा होगा, बंधाई होगी, आदि । प्रकाशन-तिथि तक निश्चित हो गयी, पर फिर जाने क्या बड़ हुई! कुछ प्रकाशक मित्र का बदला, कुछ मेरा, और पांडुलिपि मु मेरे पास लौट आयी ।

इसी प्रकार एक बार योजना कि पांच-छह मित्र मिलकर अपने-अ काव्य-संग्रहों को एक-से रूप और आ में स्वयं प्रकाशित कर दें। वहस तै पाया कि योजना बहुत ही क्रांति है और इससे हिंदी काव्य-जगत में तह मच जाएगा। सभी लोगों ने अ अपनी पांडुलिपियां तैयार कर डालीं कविताओं का क्रम निर्धारित हो गया आवरण-पृष्ठ का रूप कैसा हो, इ सामान्य सिद्धांतों पर एकमत प्राप्त लिया गया था। किंतु वह योजना भी कैसे बिखर गयी !

संग्रह तैयार करने में स्वयं मुझे कम कठिनाई नहीं होती। अपनी और पुरानी कविताओं को एकसाथ संग्रह में रखना न तो उचित लगता न यह सम्भव ही है। उधर कविताएं तेजी से पुरानी होती जाती हैं, उस से नयी लिखी नहीं जातीं। सारांश कि कोई भी संकलन ठीक नहीं ल और जब भी प्रकाशन की बात आती उसे फिर से नये सिरे से तैयार करने

समस्या सामने आ जाती है। बहुत बार मैं इसीलिए सोचता हूं कि अप्रकाशित रचना का इतिहास इतना दिलचस्प होता है कि उस पर स्वयं एक उपन्यास लिखा जा सकता है। रचना के प्रकाशित होते ही वह उपन्यास शायद अचानक ही समाप्त हो जाए, मानो नायक-नायिका की किसी दुर्घटना से मृत्यु हो गयी हो अथवा पांडु-लिपि के अंतिम पृष्ठों को कोई गाय चर गयी हो...

इस सम्बंध में एक और बात मुझे याद आती है। मेरे एक मित्र सन ३२–३३ के आसपास से ही बड़ी अच्छी कविताएं लिखते रहे हैं, पर उनका एक भी संग्रह अभी तक नहीं छपा। पिछले वर्षों में जमाने की बदलती रफ्तार के साथ हर शैली में, हर रंग की कविताएं उन्होंने लिखी हैं। अब उनकी समझ में नहीं आता कि वे किस तरह की कविताएं पहले छपायें? मित्रों की समझ में भी नहीं आता कि उनकी कविताओं को किस श्रेणी में रखा जाए! बीच-बीच में वे ऊबकर यह भी कहते हैं कि ऐसे लिखने से क्या फायदा! पर हर साल दो-चार कापियां भरने का उनका क्रम आज तक बदस्तूर चला जा रहा है। किसी-न-किसी दिन तो किसी गुणग्राहक प्रकाशक की दृष्टि पड़ेगी ही। उस दिन धड़ाधड़ उनके कई संग्रह एक-साथ प्रकाशित हो जाएंगे। सम्भव है कि वे भी तब तक इतनी ऊंची जगह पर जा पहुंचें कि वे संग्रह चाहे बिकें या न बिकें, उन्हें छापने में किसी प्रकाकश को कोई एतराज न हो।

मुझे भी इस सम्भावना से बहुत बार बड़ा संतोष मिलता है। हर लेखक के सामने दो रास्ते होते हैं। एक तो यह कि ज्यों ही उसने लिखा, त्यों ही स्वयं फौरन कोई-न-कोई प्रकाशक किसी-न-किसी प्रकार खोजकर, चाहे जिस शर्त पर, उस रचना को छपा दे। दूसरा यह कि लिख-लिखकर रखता जाए और जब एक दिन वह इतना बड़ा हो जाए कि प्रकाशक स्वयं उसके पास दौड़ने लगें, तो अपनी शर्तों पर, अच्छे-से-अच्छे रूप में, अपनी पुस्तकें प्रकाशित कराये। पहले रास्ते में शायद लोकप्रियता अधिक प्राप्त हो सके, पर मुझे उसमें बड़ी सामयिकता और अवसर-वादिता लगती है। इस दूसरे रास्ते में यह लाभ तो है ही कि बहुत दिनों तक आपको मेरी कविताओं के बारे में कुछ-न-कुछ भरम जरूर बना रहेगा। (लेखक 'तारसप्तक' के कवि थे, अब भूतपूर्व कवि रह गये हैं और पुरानी कविताओं का एक संग्रह भारतीय ज्ञानपीठ से छपवा रहे हैं। —सम्पादक) और सच पूछिए तो अपने अप्रकाशित काव्य-संग्रह के बारे में कुछ भी कहने में इसीलिए मुझे और भी अधिक संकोच होता है कि जाने मैं क्या से क्या कह बैठूं और आपका भरम सदा के लिए टूट जाए...

—आई ४७, जंगपुरा एक्सटेंशन, नयी दिल्ली-१४

● आयोजक : रमेश रंजक

आज के युग के संदर्भ में नवगीत की उपलब्धियों और सम्भावनाओं को लेकर शायद पहली बार यहां एक गम्भीर परिचर्चा का आयोजन किया जा रहा है। जिन प्रश्नों के आधार पर इस परिचर्चा का आयोजन किया गया था, वे उत्तर सहित प्रस्तुत किये जा रहे हैं।

(१) क्या आप यह नहीं मानते कि आज की साहित्य-विधाओं में आया हुआ परिवर्तन वायवी या आयातित न होकर परिवर्तन-धर्मी वैज्ञानिक युग (जिसमें हमारा परिवेश भी सम्मिलित है) की देन है ?

(२) क्या यह सम्भव है कि समूची साहित्य-धारा अपने किसी अंग-विशेष को पीछे छोड़कर आगे बढ़ जाए और वह अंग-विशेष, गड्ढे में एकत्र जल की तरह मूल साहित्य-धारा से एकदम कटकर अलग-थलग पड़ा सड़ता रहे ?

● यदि हां, तो क्या यह एक अं... निक प्रक्रिया नहीं होगी...

● अगर नहीं, तो क्या ... यह नहीं मानते कि आज ... गीत भी ठीक उसी ढंग ... अपने परिवेश को वाणी ... सकता है जिस ढंग से साहि... की अन्य कोई भी विधा ?

(३) अगर आप आज के गीत ... आज के युग की नब्ज पर अंगुली रख सक... में समर्थ एक साहित्य-विधा मानते ... तो क्या आप अपनी मान्यता के पक्ष ... कुछ गीत, कुछ गीतांश या गीतक... उद्धृत करना चाहेंगे ? (इस प्रश्न ... उद्देश्य मात्र इतना है कि आप की धार... को ठोस प्रमाणों से पुष्ट किया जा सके।

उपर्युक्त प्रश्नों पर जिन साहित्यकार... की प्रतिक्रियाएं प्राप्त हुईं उन्हें यहां प्रस्तु... किया जा रहा है—

गिरिजाकुमार माथुर : आदमी ... धारणाओं में जो परिवर्तन हुआ है (च... वह सामाजिक, आर्थिक या धार्मिक ... क्यों न हो) वैज्ञानिक युग की ही देन है ... संस्कृतियों का आधुनिकतम अंतराल... इतना अधिक हो चुका है कि धीरे-धी... हम लगभग एक समान विश्व-संस्कृति ... ओर चले जा रहे हैं। ये सब परिव... विज्ञान और टेकनोलोजी ने किये हैं ... ऐसी स्थिति और वातावरण में ... साहित्यिक विचारों के आदान-प्रदान ... समानता को आयातित कैसे कह सकते हैं ...

गिरिजाकुमार माथुर रमेश गौड़ बालस्वरूप राही

कोई भी साहित्य-धारा अपने किसी अंग-विशष को छोड़कर बढ़ जाती है, यह बिलकुल वैज्ञानिक प्रक्रिया है। इतिहास में भी तो अनेक तत्त्व ऐसे छूट जाते हैं जिनकी कोई सामाजिक सार्थकता नहीं होती, फिर साहित्य की धारा का क्या दोष? कवित्त, सवैये, खंड-काव्य, महाकाव्य जिस रूप में पहले लिखे जाते थे आज कहां लिखे जा रहे हैं? गीत जिस रूप में १९३० से १९४५ तक लिखा जाता रहा है अब कहां है? पुराने पैटर्न पर आज जो गीत लिखे जा रहे हैं वे सब असार्थक हैं, निरर्थक हैं। रूढ़ रूपाकार में बंधे हुए घिसे-पिटे गीत जो एक ही छंद में बंधे चले जाते हैं आज के संदर्भ में मान्य नहीं हो सकते। ऐसे गीतों की भाषा भी लिजलिजी और लचर होती है, जो आज के यथार्थ से कटी हुई, बूढ़ी भाषा है। यह भाषा आज के तनाव की भाषा नहीं है, बल्कि उससे पलायन की भाषा है। आज के गीत में यदि आज के जीवन का 'कमिटमेंट' नहीं है तो वह आज का गीत नहीं रहेगा।

आज के गीत का दुर्भाग्य है कि गीत दिन-ब-दिन बाजारू होता जा रहा है। गीत में अब आमूल परिवर्तन आना चाहिए, यह अत्यंत आवश्यक है।

छायावाद के बाद गीत-विधा को बच्चन, नरेन्द्र शर्मा, धर्मवीर भारती, केदारनाथसिंह, ठाकुरप्रसादसिंह ने काफी अच्छे गीत-रत्न दिये हैं। इधर कुछ नये गीतकारों ने गीत को नया रूप, कथ्य, शिल्प आदि देने की अच्छी कोशिश की है। इनमें नरेश सक्सेना, ओम प्रभाकर, बालस्वरूप राही, रवीन्द्र भ्रमर, उमाकान्त मालवीय, देवेन्द्रकुमार, रमेश रंजक, नईम के नाम लिये जा सकते हैं।

भवानीप्रसाद मिश्र : गीत को 'नवगीत' संज्ञा देने योग्य जो परिवर्तन हमें दिखायी दे रहे हैं वे वायवी नहीं हैं। नये विचार पुराने विचारों को खदेड़ रहे हैं। उनका समूचे समाज पर, सारे

भवानीप्रसाद मिश्र

पहलुओं पर असर पड़ रहा है ! साहित्य में भी पुराने विषय-विधान, रूप-विधान, उद्देश्य आदि पर केवल प्रश्नचिन्ह ही नहीं लग रहे हैं, उनकी जड़ें खोदकर उनमें मठा डाला जा रहा है। इस सबमें कुछ ऐसा भी है जो पुराना होते हुए भी जीर्ण नहीं था और जिसे बनाये रखना शक्ति का नया कारण तक बन सकता था, किंतु सभी जानते हैं कि आंधी में केवल कूड़ा-कर्कट ही नहीं उड़ जाता, मंदिरों के कलश भी ढह जाते हैं—तो फिलहाल मैं कहूंगा कि अगर 'वायवी' हैं तो उन्हें क्रांति-धर्मी आंधी का रूप मानिए और 'आयातित' नये विचारों की हद तक वे निश्चय हैं—क्योंकि हमारी आज की कविता में सारा जगत प्रतिबिम्बित होना ही चाहिए। गीत भी विषय की विविधता निस्संदेह सब जगह की कविता की तरह समेट सका है और समेट भी रहा है। यह तो एक अच्छी बात ही कही जाएगी।

गीत का समूची साहित्यधारा से कटकर रह जाना कदापि काम्य नहीं [है] वह कटा भी नहीं है। आज का गीत [अ]परिवेश को वाणी दे रहा है। हिंदी-[गीत] ने आदिकाल से ही युग को गाया है [और] आज भी (कभी रीझकर तो कभी खीझकर) गा रहा है। उसे युग का प्रवक्ता [होने] की अलग से महत्त्वाकांक्षा नहीं है।

कौन-कौन इस प्रकार के गीतकार [हैं] जो युग को गा रहे हैं—प्रश्न तो हो सकता है, मगर उत्तर इसका यों नहीं हो सकता कि कम-ज्यादा हर गीतकार अपने [युग] को वाणी दे रहा है।

डॉ. रामदरश मिश्र : मैं मानता [हूं] कि आज के साहित्य में आया हुआ प[रि]वर्तन मूलतः हमारे युग की ही देन है किंतु यह भी सच है कि बहुत-से साहित्यकार इस युग-परिवेश-जन्य परिवर्तन के अनु[भव] से गुजरने के साथ-साथ या गुजरे बि[ना] अवधारणा के स्तर पर आयातित आ[धु]निकता को लपकने के लिए लालायित हैं।

मैं यह मानता हूं कि गीत आज [के] संदर्भ में उस तरह प्रासंगिक नहीं रह ग[या] है जिस तरह नयी कविता। गीत, साहि[त्य] की परिवेश-धर्मी अन्य विधाओं के [सा]थ स्पर्द्धा करके अपनी सत्ता को सार्थक [नहीं] कर सकता। जीवन की सच्चाई, साहि[त्य] में आकर उसके बने-बनाये 'रिद्म' [को] तोड़कर एक जटिल और छंदहीन गति [की] मांग करती है। इसी अनिवार्य दबाव [के] फलस्वरूप कवियों को गीत ही नहीं [छंद] को भी छोड़ने के लिए मजबूर होना पड़[ा]

डा. विनय डा. रामदरश मिश्र

हां ! जीवन की इस बौद्धिक, जटिल और प्रश्नाकुल सामाजिक यात्रा के बीच भी एक आंतरिक निजता की बेचैनी और प्यास बची रह जाना अस्वाभाविक नहीं है। गीत का अपना क्षेत्र वहीं है।

गीत युग का प्रवक्ता हो ही नहीं सकता, इसका मूल कारण उसका अंतर्मुखी स्वभाव है। मेरी एक शिकायत यह है कि आज के गीतकार गीत के सौंदर्य की पहचान वहां करना चाहते हैं जहां वह नहीं है, और जहां है उसे युगबोध से कट जाने की हीनता से पीड़ित हो देखना नहीं चाहते।

रमेश गौड़ : मैं इस बात से पूर्णतः सहमत हूं कि आज की साहित्य-विधाओं में आया हुआ परिवर्तन, परिवर्तनधर्मी वैज्ञानिक युग की देन है। वैसे वायवी या आयातित होने का आरोप केवल आज ही के साहित्य पर नहीं लगाया जा सकता बल्कि यह सिलसिला तो छायावाद-काल से ही चला आ रहा है। दिलचस्प बात यह रही है कि यह आरोप हमेशा ही चुके हुए लेखकों या नये साहित्य के सामने जिन आलोचकों की समझ ओछी पड़ती रही है, उन्हीं ने लगाया है और जो साहित्य सचमुच 'वायवी' या आयातित है वह मेरे लिए प्रासंगिक नहीं है।

आपके ही रूपक को आगे बढ़ाऊं तो कहूंगा कि जब नदी पाट छोड़ती है तो वह पहले के बने-बनाये पक्के और आलीशान घाटों को भी छोड़ कहीं और से बहना शुरू कर देती है और अपने पीछे छोड़ जाती है कुछ ऐसा पानी जो घाटों से लगा कहूं कि चिपका वहीं पड़ा रहता है, यों होने को तो यह भी सम्भव है कि धारा फटकर दो धाराओं में बंट जाए और मुख्य धारा के साथ-साथ या समानांतर एक पतली-सी धारा भी बहती रहे, उस स्थिति में पतली धारा की सार्थकता केवल तभी है जब कि वह किसी-न-किसी स्टेज पर मूल धारा का ही अंग बन जाए। आज के गीत की स्थिति मेरी नजर में उसी पतली धारा की तरह है।

डॉ. विनय : आज की साहित्यिक विधाओं में आया हुआ परिवर्तन बहुत कुछ वैज्ञानिक युग की देन है। विश्व के किसी भी कोने में घटित घटनाएं आज हमारे जीवन-तंत्र को किसी-न-किसी रूप में प्रभावित करती हैं। ऐसी स्थिति में यह कैसे माना जाए कि नयी कविता, नयी कहानी, उपन्यास और अकविता तथा नवगीत आदि साहित्यिक विधाओं में आया चेतना और शिल्प का परिवर्तन वायवी

या आयातित हो सकता है ? वस्तुतः ये पारिवेशिक सजगता के परिणाम हैं। नयी कविता ने आज के जीवन के बदलते संदर्भों को आज के परिवेश की पूरी विसंगति, विघटन, विडम्बना को जिस रूप में व्यक्त किया है उस रूप में गीत नहीं कर पाया है, लेकिन इसके साथ ही मैं यह भी मानता हूं कि नवगीत आज के युग की नब्ज पर हल्के-से अंगुली रखने की कोशिश में जरूर है।

बालस्वरूप राही : मैं तो यह मानता हूं कि हमारी साहित्य-विधाओं में जो परिवर्तन आये हैं वे विशुद्धतः वायवी या आयातित नहीं हैं, किंतु यह भी जोर देकर कहना चाहूंगा कि उसके पीछे विदेशी प्रेरणाओं का बहुत गहरा हाथ है। कहीं-कहीं तो ये प्रेरणाएं छाप का रूप ले लेती हैं। ऐसी भी बहुत-सी रचनाएं पिछले कुछ दशकों में हमारे यहां लिखी गयी हैं जो हमारे मानसिक परिवेश के लिए अजनबी हैं। मिसाल के तौर पर यंत्र-सभ्यता का जो संकट और त्रास बहुत-सी नयी कविताओं में दिखलायी देता है वह काफी हद तक ओढ़ा हुआ है, क्योंकि अभी तो हम हरित-क्रांति तक ही पहुँचे हैं। यंत्र-सभ्यता ने हमारे सांस्कृतिक तंत्र को अभी छेड़ा भर है, उसे छिन्नभिन्न नहीं किया है। इसलिए अधूरी आधुनिकता जीते हुए जब अतिआधुनिकता की कविता लिखते हैं तब हमारे और हमारे लेखन के बीच का अंतर स्वयं उभर आता है।

मैं यह निश्चित रूप से मानता हूं कि गीत एक एसी साहित्य-विधा है जो अ[illegible] जीवंतता हर युग में प्रमाणित करती [illegible] है और आधुनिक युग में भी कर रही है। नयी कविता के अधिक सफल कवि [illegible] वे ही हैं जिन्होंने किसी-न-किसी रूप [illegible] गीत के गुणों को अपनी कविता में समो[illegible] है—गिरिजाकुमार माथुर, धर्मवीर भार[illegible] भवानीप्रसाद मिश्र आदि इसके प्रमाण हैं।

मैं तो यहां तक मानता हूं कि आ[illegible] का गीत आज के परिवेश को किसी [illegible] अन्य विधा की अपेक्षा अधिक महत्त्वपू[illegible] और प्रामाणिक रूप में अभिव्यक्त कर[illegible] है। इसका कारण यह हैं कि हार्दिक[illegible] और अंतरंगता का अनुवाद गीत में कि[illegible] भी अन्य साहित्य-विधा से अधिक हो[illegible] है । गीत में 'आब्जेक्टीविटी' (वस्तु[illegible] निष्ठता) की सम्भावना न्यूनतम होती है, इसलिए गीत में जो कुछ लिखा जाता है वह व्यक्तिगत अनुभवों से छनकर आता है, इसलिए ओढ़ा हुआ हो ही नहीं सकता।

जब हर युग का गीतकार अपने युग के बोध को सशक्त रूप में अभिव्यक्त करता रहा है तब यह कैसे मान लिया जाए कि हमारा युग कोई ऐसा विचित्र युग है जो गीतों में नहीं समोया जा सकता। आज के युग में बौद्धिकता भले ही किसी अन्य विधा में व्यक्त हो रही हो, उसकी रागात्मकता का सच्चा संवाहक आज भी गीत ही है।

—२ आराम बाग स्क्वायर, चित्रगुप्त रोड, नयी दिल्ली-५५

फिल्म

• राजेन्द्रसिंह बेदी

फिल्म यों तो खेल है, लेकिन उसका बनाना खेल नहीं। खयाल और खाके से लेकर उसके ठोस छायांकन के बीच ऐसी बीसियों बाधाएं आती हैं कि बड़े जी और गुरदे वाला आदमी भी दम तोड़ सकता है।

सामाजिक फिल्म शेष अन्य किस्मों से भिन्न नहीं, किंतु वह अधिक कठिन इसलिए है कि उसके साथ आप पर अधिक जिम्मेदारी आती है। हमारा समाज बहुविध समाज है। कई धर्म हैं, कई सम्प्रदाय हैं। राष्ट्रीय संविधान ने व्यक्तिगत रूप में सबको मूलभूत अधिकार दे रखे हैं और सामूहिक रूप में विशिष्ट अधिकार। पर अभी मेरे भाइयों को इन अधिकारों का उपयोग करना नहीं आया!

मुझे याद है कि जब मैंने 'मिर्जा गालिब' फिल्म लिखी तो हमारा एकमात्र उद्देश्य यह था कि देश के हर कोने में मिर्जा गालिब का कलाम गूंजे। कहानी तो एक बहाना होता है, जिसकी सहायता से आप उस समय के समाज का चित्रण करते हैं। अतः बहादुरशाह जफर कहते हैं, "सदा उठी और न आंसू बहे।" कितनी इबरत की बात थी कि मिर्जा साहब जब जेल से रिहा होकर अपनी प्रेमिका के यहां आते और दरवाजा खटखटाते हैं तो कोई जवाब नहीं आता। उस समय वे एक सादा,

मगर हृदयविदारक वाक्य में उस समय की अवस्था का पूरा चित्र खींच देते, "अरे कहां हो दिल्ली वालो ? दिन-दहाड़े ही सो गये ?" इस पर भी कुछ लोगों को सूझी कि मिर्जा साहब का प्रेम-जीवन क्यों पेश किया गया ? जैसे कि वे इनसान नहीं थे। उनके दिल नहीं था। फिल्म बनते ही मिर्जा साहब के कई रिश्तेदार पैदा हो गये और दावे पेश करने लगे। पर इन रिश्तेदारों ने कभी मिर्जा की मजार की देखरेख की तकलीफ नहीं उठायी। अब आप ही बताइए, इन हालात में मेरा उन लोगों की नीयत पर संदेह करना जायज है या नहीं ?

ऐतिहासिक फिल्मों का जिक्र महज प्रासंगिक है, क्योंकि वास्तव में वे किसी न किसी प्रकार से सामाजिक पक्ष लिये होती हैं, पर इसका क्या करे कि उसके साथ किसी न किसी मफाद का इजारा होता है। उदाहरणार्थ, महाराजा रणजीत सिंह के बारे में फिल्म बनाना कोई सरल बात नहीं है। तथ्यों के सम्बंध में दो इतिहासकारों की राय आपस में नहीं मिलेगी। हर वह मफाद उनकी जिंदगी के व्यक्तिगत पक्ष को फिल्म के परदे पर नहीं लाने देगा। आपको कई संस्थाओं से अनुमति प्राप्त करनी होगी और जब वह प्राप्त होगी तो पटकथा की शक्ल बिलकुल बदल चुकी होगी। तब उसमें आप अपना चेहरा पहचान ही नहीं पाएंगे। और अगर आप उनके हितों के विरुद्ध जाएंगे तो मोरचे लगेंगे। आपकी जिंदगी खतरे में पड़ जाएगी और आप घर बाहर नहीं निकल सकेंगे। आप क्यों जाते हैं। हाल ही में विश्ववि सत्यजित रे ने एक फिल्म बनायी। फिल्म में एक नर्स दिखायी गयी जो घर के हालात से मजबूर होकर रात धंधा करती थी। वह नर्स एक विशि व्यक्ति का प्रतीक थी। उसका सामूहि रूप में नर्स-पेशा औरतों से कोई सम्ब नहीं था, पर इस पर भी हंगामा खड़ा हो गया। नर्सों ने आंदोलन शुरू कर दि और रे को उनसे क्षमा मांगनी पड़ी। पूछता हूं, क्या यह विचित्र बात नहीं कि एक ओर लोग 'मिर्जा गालिब' औ 'संस्कार' जैसी फिल्मों के विरुद्ध विरो करते हैं और दूसरी ओर भारत सरका उसके बनाने वाले को राष्ट्रपति-स्वर्णपद और उपाधियां प्रदान करती है।

अपने यहां सामाजिक फिल्म बना के सम्बंध में देश की परिस्थितियां ब हृदय तोड़ने वाली हैं। विभिन्न द सम्प्रदाय और हित तो एक ओर स्व सरकार भी इस आरोप से पृथक नहीं उदाहरणार्थ सरकार अहिंसा को मानत है, पर इसका क्या कीजिएगा कि हिं का उपयोग करने वाले कई लोगों क हमने नेता माना है। मैं आपके साम शहीद भगतसिंह का उदाहरण रखता हूं अब आप उनके बारे में फिल्म बना तो एक ओर तो उनके असेम्बली में ब फेंकने को या तो गायब ही करना पड़े

या उसका अर्थ कुछ यों करना पड़ेगा कि वे केवल साम्राज्य को चौंकाना चाहते थे। इससे एक विरोधाभास पैदा हो जाएगा कि क्या लाहौर में सांडर्स की हत्या उन्होंने केवल अंगरेजों को चौंकाने के लिए की थी।

दूसरी ओर यदि हम कहें कि भारत को स्वाधीनता केवल अहिंसा की नीति के कारण मिली तो यह इतिहास को तोड़-मरोड़कर पेश करना होगा।

सामाजिक फिल्म बनाते हुए हम हर पग पर ऐसे बीसियों खतरों से दोचार होते हैं। आप राष्ट्रीय एकता पर फिल्म बना रहे हों तो आपमें हिम्मत नहीं होगी कि रांची, भवंडी और मालेगांव की घटनाओं का सत्य चित्रण कर सकें। आपको सेंसर-सर्टीफिकेट लेने में भी कठिनाइयां आएंगी। आप आज के विद्यार्थियों की उद्दंडता के कारण को भी नहीं टटोल सकते। यूनिवर्सिटी कैम्पस में जो हो रहा है, आखिर क्या है ? क्या आज के नवयुवकों का दिमाग फिर गया है या वे शिक्षाप्राप्ति का अपना असली उद्देश्य छोड़कर राजनीतिक होते जा रहे हैं या वे विभिन्न राजनीतिक दलों के हथकंडों का शिकार हैं ? आखिर इस मार-धाड़ का कारण क्या है ? इन बातों की तह में जाना और उनके बारे में फिल्म बनाना कठिन ही नहीं, असम्भव है। ऐसा करेंगे तो कई हजार लोगों के पांवों पर आपके पांव पड़ेंगे और वे सब हैं बड़ी पहुंच वाले। इसलिए आप केवल गोल-गोल दाल वाली

बातें कीजिए। पांच छह गाने डाल दीजिए। दो-चार नाच। मां-बाप, बेटे, बेटियों को बचपन से ही बिछड़ा दीजिए, ताकि बड़ा भाई जवान होकर पुलिस-इंसपेक्टर हो जाएं। अनजाने में अपने ही छोटे भाई को अदालत में अपराधी के रूप में पेश करे

और यह बाद में पता चले कि जज इन दोनों का बाप था और मां, जो बेटे के विरुद्ध गवाही दे रही है, उसकी बीवी थी। नवयुवकों के बारे में फिल्म बनाइए तो केवल यहीं तक पहुंचिए कि बड़ों का इश्क इश्क था और छोटों की मुहब्बत बदमाशी और बदकारी।

अब आप इस बदनाम शब्द सेक्स पर आ जाइए। हम अपनी फिल्मों में तीन, चार रीलें केवल यह सिद्ध करने के लिए लगा देते हैं कि राजू को राधा से प्रेम था, लेकिन जो बात कुछ सेकंड में सिद्ध हो सकती है, समाज उसके विरुद्ध है।

हाल ही की बात है। मैं एक मनोवैज्ञानिक फिल्म बना रहा था। उसमें एक स्त्री का पति किसी अन्य लड़की के कारण घर छोड़कर भाग जाता है। उसके जाने के बाद उस औरत के लड़की पैदा होती है। युवती होकर वह शादी करती है, लेकिन वह स्त्री उसके साथ कुछ यों चिपक जाती है कि दामाद के लिए सांस लेना कठिन हो जाता है। एक दिन ऐसा आता है कि वह अपनी बेटी और दामाद को एक-दूसरे की बाँहों में देख लेती है और एक क्षण के लिए अपने आपको अपनी बेटी के स्थान पर 'प्रोजेक्ट' कर देती है। इनसान अपने दिमाग में कई बार ऐसी बातें सोच लेता है, जो सामाजिक या नैतिक रूप में किसी प्रकार से स्वीकार योग्य नहीं, लेकिन यह सत्य है कि वह ऐसी कल्पनाएं कर लेता है, चाहे उसके बाद वह अपने आपको एक बहुत बड़ा पापी और गुनहगार क्यों न समझने लगे। फिल्म में भी सास एक क्षण के लिए रुक तो जाती है, लेकिन तुरंत ही चौंक कर पीछे हट जाती है और पाप के एहसास से अभिभूत होकर मंदिर में जाकर भजन गाने लगती है, 'मेरो तो गिरधर गोपाल, दूसरो न कोई'।

इस दृश्य को फिलमाया था कि मेरी हीरोइन ने इस पर आपत्ति की, "यह कैसे हो सकता है?" मैंने कहा, "होता है मैडम, और फिर जब मैं यह दिखाता हूं कि वह एक की भावना से व्यथित हो सेट के सामने चली जाती है तो फिर आपको क्या आपत्ति है?" मैडम ने वह सीन तो कर दिया, लेकिन सोचती रहीं कि इस पर जनता से जूते पड़ेंगे। मैंने कहा कि 'जो जूते पड़ेंगे, आप मुझे भेज दीजिए।'

सामाजिक फिल्म बनाने वाले की अवस्था उस औरत की तरह है, जो गरारा पहने हुए किसी पार्टी में गयी और जब लौटी तो बरसात हो चुकी थी और घर के सामने पानी ही पानी था। उसके मर्द ने सर वालटर रैले की तरह रास्ते में ईंटें और सिलें रख दीं और वह गरारे को संभालती हुई चली, लेकिन उसे क्या पता कि एक ईंट टेढ़ी रखी हुई है। वह धप से पानी में गिरी। गरारे, कुरते सहित सारी सावधानी उसे ले डूबी। न बाबा! सामाजिक फिल्म बनाना बड़ा जोखिम है।

●

आनंद पुर साहब की अनोखी होली

• राजशेखर

पंजाब की भूमि सिख गुरुओं की गौरवमय जीवन-परम्परा का प्रेरणा-दायी केंद्र रही है। यहीं सिख गुरुओं ने अन्याय और अत्याचार के विरुद्ध विद्रोह का शंखनाद फूंका था। ऐसे ही क्रांतिकारी गुरुओं में थे दशम गुरु गोविंदसिंह—जिन्होंने खालसा पंथ की स्थापना कर जन-जन में बलिदानी भावना भर दी थी। खालसा पंथ की स्थापना करते समय उन्होंने गरजकर कहा था—

चिड़ियों से मैं बाज तुड़ाऊं
सवा लाख से एक लड़ाऊं
तभी गोविंदसिंह नाम धराऊं

गुरु गोविंदसिंह मात्र कुशल योद्धा नहीं थे, वे एक समर्थ साहित्यकार होने के साथ-साथ एक दूरदर्शी, सामाजिक-धार्मिक नेता भी थे। उन्होंने भारतीय धर्म और साहित्य के परम्परागत चरित्रों और तीज-त्योहारों में अपने समय की पेचीदा समस्याओं का समाधान खोजा था, उन्हें समकालीन आवश्यकताओं के संदर्भ में एक नया अर्थ दिया था। होलिकादहन एक ऐसा ही परम्परागत त्योहार था जिसे गुरु गोविंदसिंह ने एक बिलकुल नया रूप दिया। उन्होंने होली के अवसर पर विशाल पैमाने पर खेलकूद के कार्यक्रम आयोजित करने की प्रथा का श्रीगणेश किया। चूंकि उस समय दशम गुरु मुगल शहंशाह की आततायी सेनाओं से सफलता-पूर्वक जूझ रहे थे, अतः इन खेलों में भी

गुरुद्वारा आनंदपुर साहब

रण-कौशल का पुट आ गया था। तब से आज तक खालसा-पंथ के जन्म-स्थल आनंदपुर साहब में होली के अवसर पर एक महोत्सव आयोजित किया जाता है। इस महोत्सव के मुख्य खेलों में घुड़सवारी, भारोत्तोलन, लम्बी और ऊंची कूद तथा गटका आदि का समावेश है।

आनंदपुर साहब पंजाब के रोपड़ जिले में शिवालिक पहाड़ियों के आंचल में स्थित एक छोटा-सा किंतु प्राकृतिक सुषमा से युक्त सुंदर नगर है। यह नगर गुरु तेगबहादुर ने बसाया था। यहां कई बड़े-बड़े भवन और मंदिर हैं। यहां के दर्शनीय स्थानों में गुरुद्वारा तेगबहादुर, गुरु का महल, मंजी साहब, दमदमा साहब, होलगढ़ आदि अत्यंत प्रसिद्ध हैं। दशम गुरु गोविंदसिंह ने यहीं अपने खालसा पंथ की स्थापना की थी। यहीं होली के अवसर पर प्रतिवर्ष आयोजित होने वाले महोत्सव का नाम है—होला-मोहल्ला।

होला-मोहल्ला उत्सव तीन दिनों तक मनाया जाता है। इसमें भाग लेने के लिए न केवल भारत के विभिन्न स्थानों से वरन विदेशों से भी सैकड़ों तीर्थयात्री आनंदपुर साहब पहुंचते हैं। तीन दिन तक आनंदपुर साहब का छोटा-सा नगर जैसे अतीत में जीता है। होला-मोहल्ला उत्सव का मुख्य आकर्षण अंतिम दिन निकलने वाला विशाल जुलूस होता है।

यह विशाल जुलूस तखत श्री के[illegible] साहब से शुरू होता है। तखत श्री के[illegible] साहब सिखों के चार महत्त्वपूर्ण त[illegible] से एक है। यहीं पर पांच प्यारों को [illegible] पिलाया गया था। नगर के प्रमुख [illegible] से होता हुआ यह जुलूस सतलुज [illegible] के किनारे विसर्जित होता है। इस [illegible] में सबसे आगे ऊंट होते हैं। ऊंटों पर [illegible] बड़ा-सा नगाड़ा रखा होता है। इनके [illegible] पांच प्यारों सहित गुरु ग्रंथसाहब [illegible] सवारी चलती है। इनके पीछे-पीछे [illegible] परम्परागत वेशभूषा में निहंग सिखों [illegible] समुदाय चलता है। ये निहंग सिख [illegible] रिक शौर्य एवं रण-कौशल के अद्भुत प्र[illegible] करते हैं। उनके इस प्रदर्शन को देखने [illegible] लिए रास्ते के दोनों ओर काफी बड़ी [illegible] एकत्र रहती है।

जुलूस में चल रहे लोग गुरुवाणी [illegible] पाठ करते हैं और बीच-बीच में एक-[illegible] पर गुलाल फेंकते हैं। इस समय [illegible] देखते ही बनता है। जुलूस में ही एक [illegible] चादर भी फैलाकर रखी जाती है। [illegible] पर लोग श्रद्धानुसार अपनी भेंट चढ़ाते [illegible]

आनंदपुर साहब का होला-मोह[illegible] सभी के आकर्षण का केंद्र होता है। आ[illegible] वृद्ध नर-नारी सभी उसमें उत्साह[illegible] भाग लेते हैं। इस महोत्सव में भाग [illegible] घर लौटते वक्त वे अपने साथ तरह-[illegible] के स्मृति-चिह्न ले जाते हैं।

अपने दुःखों को छिपाने वाले आदमी की अपेक्षा अपनी खुशियों को छिपाने वाला आदमी अधिक महान है। —लैवेतर

पुर साहब का होला मोहल्ला

छाया० आर.सी.कठपाल
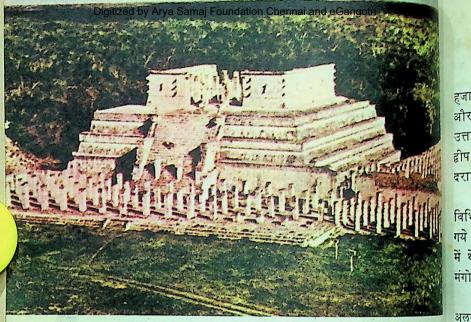
दो समानांतर प्राचीन सभ्यताएं

भारत और मध्य अमरीका की मध्ययुगीन सभ्यताओं में असाधारण समानताएं हैं, लेकिन इस बात का कोई प्रमाण नहीं मिलता कि दोनों सभ्यताओं में कोई सम्पर्क रहा होगा

कोलम्बस के मध्य-अमरीका पहुंचने से बहुत पहले वहां एक उच्च स्तरीय सभ्यता का विकास हुआ था। पूर्व-कोलम्बस-सभ्यता वाले लोग मूलतः एशिया के थे, लेकिन एशियावालों से उतने ही भिन्न हो चुके थे जैसे क्रो-मैग्नन-मानव से आधुनिक अमरीकी भिन्न है।

● डा. राबर्ट आर. आर. ब्रुक्स

आदि - अमरीकी लगभग पच्चीस हजार वर्ष पहले एशिया से आये होंगे, और बेरिंग जल-डमरूमध्य से होते हुए वे उत्तर-पश्चिम की ओर बढ़े होंगे। महाद्वीप का उत्तरी भाग तब ग्लेशियर की दरारों से ढका हुआ था।

लगभग १००० ई० तक एशिया के विभिन्न हिस्सों से आकर वे इधर-उधर बस गये। डोरेस्टो एस्किमो आखिरी आने वालों में थे। इनका मूल-निवास मध्य-एशिया, मंगोलिया या मलाया रहा होगा।

उनके यहां आने के कारण अलग-अलग थे और इसलिए उनके आने की गति और समय भी एक-सा नहीं था। वे अलग-अलग सांस्कृतिक उपलब्धियां लेकर बेरिंग जल-डमरूमध्य पहुंचे। फिर इस तरह उनका तांता लग गया जैसे सड़क पार करने के लिए अनजान साथी एक कतार में आ जाते हैं। सैकड़ों साल बीत गये, फिर ये लोग जत्थों में बसने के लिए किसी बेहतर जगह की तलाश में, बेरिंग जल-डमरूमध्य से नीचे की ओर उतरते गये। जीवन के लिए इन्होंने संघर्ष किया। जो ताकतवर था, चतुर था, भाग्य ने जिसका साथ दिया, उसने अपनी जगह एरिजोना, मध्य-मेक्सिको यूकेटन, ग्वाटेमाला और पेरू में बना ली। जो कम ताकतवर थे, उनके हिस्से में उजाड़ निर्जन क्षेत्र, कुहरे से ढके हुए टेराडेल फुएगो के तटवर्ती प्रदेश, ऊपरी अमेजन का मलेरियायुक्त दलदली भाग या न्यू-इंग्लैंड का घोंघे से भरा हुआ किनारा आया।

३००० ई. पू. या उससे भी पहले जो लोग अच्छी जगहों पर बस गये थे, टोकरी बनाने लगे, पेड़-पौधे काटकर या आग लगाकर खेती करना शुरू किया। पेड़ों की टहनी और घास-फूस से छप्पर के मकान बनाये। एक हजार साल बाद उनके निर्माण-कौशल का परिष्कार हुआ। सूती कपड़े, मिट्टी के बर्तन, अनाज तथा

मध्ययुगीन भारत और मध्य अमरीका दोनों में सर्प की पूजा प्रचलित थी

फलियों की खेती, मिट्टी के पलस्तर तथा धूप में सुखायी गयी ईंटों से मकान बनाने की कला का विकास हुआ। इस निर्माण-कौशल के फलस्वरूप कृषकों की आबादी तेजी से बढ़ी। सुनिर्मित शहरों का व्यय-भार वहन करने के लिए कृषकों पर कर लगाया गया। शहरों का शासन पुजारियों द्वारा स्थापित धर्मतंत्र और सेना के गठबंधन से होता था।

सेना के लिए धातु की तलवारें और पहियों वाले रथ नहीं थे, लेकिन उनके पास पत्थर की नोक वाले तीर और भाले, भाला फेंकने वाले औजार और रुई की गद्दियों वाले कवच थे।

पुजारियों के धर्मतंत्र ने ऐसी कर-प्रणाली तैयार की जिसके फलस्वरूप प्रस्तर-नगरों तथा मंदिरों का निर्माण हुआ और उत्सव, खेलकूद तथा नरबलि का भयंकर रीतिरिवाज पनपा। यही नहीं, स्थापत्य-कला, मूर्तिकला और चित्रकला का भी विकास हुआ। इसी काल में ४०० ई. पू. से १००० ईसवी तक यही सब स्वतंत्र रूप से भारत में भी विकसित हो रहा था।

उस समय भारत की ही तरह यहां भी धर्म के जो रूप सामने आये, वे विजेताओं और विजित के निरंतर संघर्ष और अंत-र्जातीय सम्बंधों के परिणाम थे। सूर्य, चंद्रमा, तारे, वर्षा और तूफान, पृथ्वी और समुद्र, कछुआ, चील, चीता, सांप और धरती के सबसे सुंदर पक्षी 'केजल' की पूजा होने लगी।

विजय और अंतर्जातीय संबंधों फलस्वरूप नस्लों और संस्कृतियों सम्मिलन हुआ और धार्मिक क्षेत्र में श्वरवाद का जन्म हुआ, जिसका प्र केजलकाल अर्थात सर्वोच्च पक्षी था। उसे सृजक और संहारक दोनों गया। लेकिन इस धार्मिक मत के के बावजूद चीते के उपासक भी बने चिचैन-इत्जा के विशाल पिरामिड के गुह्य कक्ष में प्राचीन मानवों के चीते की ठोस सोने की मूर्ति है। दांत हाथीदांत के और आंखें पन्ने की

प्राचीन भारत और मध्य अमे का सांस्कृतिक विकास लगभग साथ- हुआ। १०००–१२०० ई० के आ दोनों चरमसीमा पर पहुंचे थे। दोनों ने अलग-अलग ढंग से स्थाप ठोस पिरामिडों की तरह या शुंडा आकृतियों का निर्माण किया, आलंक मूर्तियां बनायीं। दोनों में फ्रेस्को-चित्र हैं। दोनों ने खगोलविद्या, जटिल शास्त्र तथा पंचांग बनाये। मिट्टी के बर्तन बनाने, मोम की सहायता से धा बर्तन ढालने, कलात्मक सूती कपड़े, जित नगर, सोने-चांदी, हीरे के गहने की कला का विकास किया।

दोनों में आश्चर्यजनक समानता लेकिन इसका कोई सबूत नहीं कि ३००० ई० पू० से १२०० ई० के मध्ययुगीन भारत और मध्य अ की उच्चस्तरीय संस्कृतियों का आ

कोई सम्पर्क था।

मैक्सिको के महान कलाकार कोवा-रुबियास ने अपनी पुस्तक 'द ईगल, द जगुआर ऐंड द सरपेंट' में पूर्व एशिया और मध्य अमरीका की उच्चस्तरीय संस्कृतियों के सम्भावित आपसी सम्पर्क के सभी प्रमाणों को एकत्र किया है। इस पुस्तक में दो सम्पर्कविहीन संस्कृतियों की उन वस्तुओं का विवरण मिलता है जिनमें समानताएं हैं। मसलन, एक भारतीय धनुष और तीर ठीक वैसा ही है जैसा एरिजोना का धनुष-तीर। इसी तरह मिट्टी की दीवारों पर रखे हुए छप्पर, टोकरी, पानी की तूमड़ी, धूप में सुखायी गयी ईंटों, भट्ठी में पकाये गये बर्तन या पिरामिडों की तरह की इमारतों में समानता है।

सजावट की कलाओं में, कोवारू-बियास के अनुसार, डिजाइनों में इतनी समानता है कि विश्वास नहीं होता कि दोनों संस्कृतियों में सम्पर्क न हुआ हो।

ये ही तर्क चमनलाल के 'हिंदू अमेरिका' में पाये जाते हैं। इनके अनुसार दक्षिण-भारत के मंदिरों की स्थापत्यकला ग्वाटेमाला में तिकाल के मंदिरों-जैसी है।

लेकिन इस तर्क के विरुद्ध तीन अकाट्य कठिनाइयां हैं—
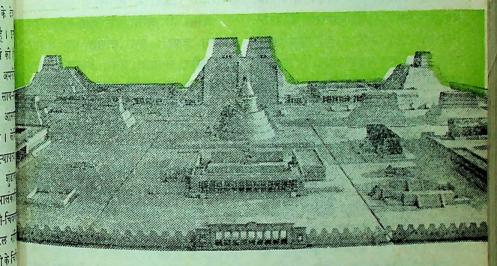
मैक्सिको के प्राचीन नगर एजटेक का एक माडल

(१) समानताओं को बताते समय असमानताओं को पूरी तरह नजरअंदाज कर दिया गया है। दरअसल समानताओं से असमानताएं कहीं अधिक हैं।

उदाहरण के लिए दोनों जगह सांप की पूजा होती थी। भारत में नाग और मध्य अमरीका में 'रैटलस्नेक' की। लेकिन पूजा की कलात्मक अभिव्यक्तियों का विकास इस

तरह हुआ कि दोनों में से किसी में भी न तो सांप का पता चलता है, न सर्प-पूजा का। भारत में नाग का फण कमल में परिणत हो गया (सांची), मध्य अमरीका में 'रैटलस्नेक' ने 'ड्रैगन' का रूप ले लिया (तिओतिहुआकन)।

यह सच है कि दक्षिण भारत और मध्य अमरीका के मंदिरों का विकास कुछ पिरामिडों-जैसा ही है। लेकिन समानता बस यहीं तक है। दक्षिण-भारत में पिरामिड मंदिर का प्रवेशद्वार है। मध्य अमरीका में यह एक मंच था जहां से पुजारी भयानक पूजा के अनुष्ठान करता था। दक्षिण-भारत के मंदिरों में सीढ़ियां भीतरी कक्ष से गुजरती हैं, जबकि मध्य अमरीका के मंदिरों में सीढ़ियां बाहर की ओर हैं।

(२) भारत में स्तूप का विकास इस तरह हुआ– पहले वे समाधि के रूप में मिट्टी के गोलाकार टीले थे, फिर उन्होंने पत्थर का विशाल गोलाकार रूप ग्रहण किया। इसके बाद वे पूजा के प्रतीक बने और अंत में सजावट की वस्तु बन गये। मध्य अमरीका में भी पिरामिडों का विकास कुछ इसी तरह हुआ। सबसे पहले वे किसी कब्र या पुनीत स्थल पर पत्थरों के ढेर के रूप में थे। बाद में वे विशाल तथा सुसज्जित प्रस्तर-संरचनाओं के रूप में परिणत हो गये और उनके ऊपरी भाग आराधना की वस्तु बन गये। स्तूप तथा पिरामिड दोनों ही किसी विशेष स्थल पर बनाये गये। स्तूप गोलाकार तथा मिट्टी के बने, पिरामिड शुंडाकार पत्थर के बने। स्तूप अहिंसा के [illegible] बने। पिरामिड मानव-बंदियों के [illegible]

शुरू-शुरू में मध्य अमरीका में नरमुंडों का शिकार होता था [illegible] हुए सिर पिरामिड (मंदिर) की [illegible] के चारों ओर लटका दिये जाते थे। [illegible] सदी बाद नरमुंडों की जगह पत्थ[illegible] तराशे हुए सिरों ने ले ली।

दोनों ही जगह परिष्कृत गणित [illegible] विकास हुआ। इस गणित का [illegible] शून्य और संख्याएं बनीं, जिनका [illegible] किसी क्रम में उनके स्थान से नि[illegible] हुआ। लेकिन मध्य अमरीका में [illegible] एक से बीस तक गिनी जाती थीं [illegible] उन्हें ऊपर से नीचे की ओर लिखा [illegible] था, जबकि हिंदू पद्धति में द[illegible] सिद्धांत विकसित हुआ, जिसे आज [illegible] सभ्य संसार उपयोग में लाने ल[illegible]

दोनों सभ्यताओं में ऐसे कैलेंडरों [illegible] विकास हुआ जिनसे बुआई, कटाई, [illegible] ग्रहण, ग्रहों के योग को पहले ही बता[illegible] जाता था, लेकिन दोनों कैलेंडरों में [illegible] की इकाइयां - उपइकाइयां अल[illegible] हैं और उन्हें नापने के उपकरण भी [illegible] भिन्न हैं। चिचेन-इत्जा के स[illegible] गोलार्द्ध महाराजा जयसिंह द्वारा [illegible] में निर्मित जंतर-मंतर से सर्वथा भि[illegible]

(३) दोनों सभ्यताओं के बीच [illegible] त्मक या सतही समानता स्थापित [illegible] में उनके व्यावहारिक पक्ष के [illegible]

अंतर नजरअंदाज हो जाते हैं।

मसलन, भारत में कड़ी धातुओं, पालतू भैंसों, हल और पहिया का प्रयोग होता था और मुर्गीपालन भी होता था। मध्य अमरीका में तब तक सिर्फ नर्म धातुओं का ही प्रयोग होता था। उनके पास न तो पहिया था और न कुत्ते और 'टर्की' के सिवा कोई अन्य पालतू जानवर।

यदि दोनों सभ्यताओं के बीच किसी तरह का भी सम्पर्क हुआ होता तो सबसे पहले लोहे की तलवारों तथा पहिये का उपयोग किया गया होता। अमरीकी बाइसन (जंगली भैंसा) तथा बकरियों को पालतू बनाया गया होता। परम्परागत साजसज्जा की बात बाद में होती।

तेहुआनतेपेक के बंदरगाह पर पूर्व-एशिया से पहुंचनेवाला कोई जहाजी हिकारत से कहता, "क्या? कोई कड़ी धातु नहीं? पहिये नहीं? बोझा ढोने के लिए जानवर नहीं? एक साल के भीतर हम इस बगीचे को साफ करके बीज बो देंगे, जिसकी फसल हमारे जाने के बाद उगेगी।" बहरहाल, उस समय मध्य अमरीकावालों ने ऐसा कुछ नहीं किया।

नरसंहारक धर्म के साथ मध्य अमरीकी संस्कृति, आपसी वैमनस्य, प्रकृति के प्रकोप या स्पेनी विजय, किसी का भी सामना नहीं कर पायी।

बड़ी बेरहमी से इसे नष्ट कर दिया गया। पांडुलिपियां जला दी गयीं। इसकी भाषा, लिपि, गणित, कैलेंडर पिरामिड न जाने क्या हुए!
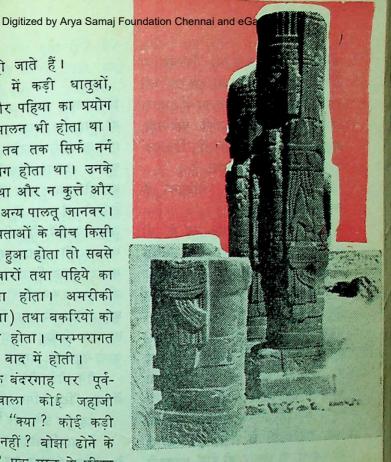
मैक्सिको के टोला नगर में स्थित प्राचीन पाषाण-मंदिर

तीन शताब्दियों बाद व्यापारियों और पुरातत्त्ववेत्ताओं ने मध्य अमरीकी सभ्यता को फिर से खोजना शुरू किया। लगभग इसी समय भारत में अजंता और एलोरा को संसार के सामने पेश किया जा रहा था। तब तक संसार भारत और मध्य अमरीका के मध्ययुगीन गौरव से अनभिज्ञ ही था। ●

मेरी गर्ल-फ्रेंड ने कहा था, "पिक्चर का टिकट मिल जाए तो तुम छह बजे तक टेलीफोन कर देना। तब तक मैं तुम्हारा इंतजार करूंगी—लेकिन उसके बाद नहीं, क्योंकि रमन ने पहले से ही 'डिलाइट' में आने के लिए कह रखा है।

मैं साढ़े पांच बजे 'ओडियन' के लाउंज में दाखिल हुआ।

पांच मिनट बाद लाल रंग के दो टिकट मेरे हाथ में थे। विजय का हलका-सा दर्प जागा, 'डिलाइट' के लाउंज के हजार चक्कर लगाने के बाद जब साढ़े छह बजे बेटा रमन बदहवास होकर टेलीफोन पर झपटेंगे, तो दूसरे सिरे से नौकर लापरवाही से जवाब देगा, "बेबी तो छह-पांच पर 'ओडियन' चली गयीं जी!" "खन्ना सा'ब का फोन आया था जी!"

मैं बाहर निकल आया। फैज की नज्म 'रकीब से' की पंक्ति 'तुने देखी है वो पेशानी, वो रुख्सार, वो होंठ' गुनगुनाते हुए ताजी हवा से पंद्रह-बीस सांसें खींचीं।

• सुरेन्द्र

फिर वापस पलटा। क्यू अब ... हो गया था। 'एक्सक्यूज मी' के ... एक जगह से काटते हुए पब्लिक ... घुसा। दरवाजा आहिस्ता-से ... बंद हो गया। अब मैं था, तनहा ... टेलीफोन! मन में गुदगुदी होने ... अल्हड़ उमंगों की कलियां चटखने ... धड़कन की रफ्तार बढ़ने के सा... नम्बर डायल किया, उधर घंटी के ... की आवाज सुनायी दी—सिर्फ एक ... वह प्रतीक्षा में पास ही बैठी थी। ... तड़पकर रिसीवर उठा लिया। ... जानी-पहचानी आवाज आयी, "हैलो ...

मैंने कोई गीत गुनगुनाने-जैसे ... में कहा, "टिकट मिल गये हैं। आ ...

वह कुछ ऊंचे स्वर में बोली, "है...

मैं भावविभोर था। बोला, "मैं ... से तुम्हारा इंतजार कर रहा हूं।"

उसने और जोर से कहा, "हैलो ...

अ... प्रेमविह... तक क्य... एक फो... पर नि... से नम्ब... दस-दस... डट सेन... ही दूस... तत्क्षण ... आपकी ...

अ... रहा कि... थी। ज... हाय ड... और द...

अब मैं चौंका, बात क्या है ? मेरे प्रेमविह्वल हृदय की कातर पुकार इस तक क्यों नहीं पहुंच रही ? ... तभी एका-एक फोन के ढांचे पर जड़ी एक सूचना पर निगाह पड़ी, 'एक हाथ की एक अंगुली से नम्बर डायल कीजिए । दूसरे हाथ में दस-दस के तीन सिक्के लिये, मोरचे पर डट सेनानी के समान सन्नद्ध रहिए। जैसे ही दूसरी ओर से जवाब मिले, सिक्के तत्क्षण छेद में डाल दीजिए । लाइन अब आपकी है—जी भर कर बात कीजिए !

ओह ! आवेश में मुझे ध्यान ही नहीं रहा कि मेरे 'गुरू' कुरते में कोई जेब नहीं थी। जींस की पीछे वाली बायीं जेब में हाथ डाला तो महज रूमाल निकला और दायीं जेब में हाथ डाला तो सिर्फ कंघी। जब सामने वाली बायीं जेब की तलाशी ली तो दस के तीन और एक के दो नोट पाये और दायीं जेब में ढूंढा तो वे ही दो टिकट ! . . . कान में लगातार 'हैलो' हो रही थी। मैंने कातर दृष्टि से रिसीवर को देखा, फिर दिल को कड़ा करके उसे हुक पर टांगा और झपट कर बाहर भागा । इधर-उधर नजर दौड़ायी, फिर बगल के पानवाले की तरफ लपका। एक का नोट सामने बढ़ा कर कहा, "एक पनामा सिगरेट . . . जल्दी से।"

पानों पर कत्था लगाते हुए पल भर के लिए उसने एक सरसरी निगाह मुझ पर डाली, फिर पूर्ववत नीचे झुकते हुए लापर-वाही से बोला। "छुट्टा नहीं है।"

मैं समझ गया, इसके दिल में पाप है।

पर किया कुछ नहीं जा सकता, हड़बड़ी में बोला, "अच्छा, एक पैकेट ही दे दो।" और मन ही मन कहा, 'अब तो छुट्टा निकल ही आएगा बदमाश!'

उसने पैकेट दिया, दोनों नोट लिये और अठन्नी वापस कर दी। लौटाते हुए मैं बोला, "दस के तीन सिक्के चाहिए।"

वह पहले की तरह अपने काम में जुट गया, "मैं सिक्के नहीं बेचता बाबू साहेब, पान-सिगरेट बेचता हूं।"

"पड़े होंगे तुम्हारे पास ... एक जरूरी टेलीफोन करना है, वरना कोई बात नहीं थी।"

"नहीं हैं।"

मुझे भी गुस्सा आ गया, "तो वापस लो अपना पैकेट! मैंने तो उन्हीं के लिए ..."

उसने ठंडी उपेक्षा के भाव
संदूकनुमा ढांचे पर बाहर की
एक सूचना की ओर संकेत
"बिका हुआ माल वापस नहीं हो

मैं बदहवास आगे भागा। सा
की बड़ी-सी दूकान थी। तीर-सा
गया। कैशियर से पूछा, "माफ की
आपके पास दस-दस के तीन सि

उसने कहा, "हां, लेकिन ह
नहीं, जूते बेचते हैं।"

मैंने घड़ी की तरफ देखते हु
मैन को आवाज लगायी, "यह सा
की चप्पल फेंक कर दीजिए!...

बिल के साथ दस के दो
काउंटर पर रख दिये। लौटाये
में दस के तीन सिक्के देखते ही

कि कहीं ये लोग वापस न ले लें! और दुलकी चाल से फिर बूथ में पहुंचा। हांफते हुए फिर नम्बर डायल किया। उधर घंटी बजी—एक बार ... दो बार ... तीन बार ... कई बार ... फिर मोटी, भद्दी-सी आवाज सुनायी दी, "हैलो ..."

"बेबी को बुलाओ। मैं खन्ना ..."

उधर से लापरवाही से जवाब मिला, "बेबी तो छह-पांच पर 'डिलाइट' चली गयीं। रमन सा'ब का फोन आया था जी!"

ऊपर-जैसे हादसे मेरे साथ रोजाना होते हैं। सच्चाई यह है कि दस के तीन सिक्कों ने मुझे बहुत सताया है। जितनी ग्लानि, ईर्ष्या, क्रोध, निराशा, लज्जा और वेदना मैंने दस के तीन सिक्कों के लिए सही है, उतनी किसी जीवंत व्यक्ति के लिए भी नहीं। होरी की पस्तहिम्मती, देवदास की गमगीनी, शेखर की दार्शनिकता और मधुसूदन के अंतर्द्वंद्व को मैंने दस के तीन सिक्कों के माध्यम से ही समझा है।

अब आलम यह है कि मैं जब भी कुछ खरीदता हूं, तो वापस मिली रेजगारी में भरसक, ज्यादा-से-ज्यादा दस-दस के सिक्के हथियाने की कोशिश करता हूं। अनवरत साधना के बाद एक छोटा-सा डिब्बा भर गया है। उस पर सांप के समान पहरा देता हूं। फोन की हर इच्छा को आवश्यकता की कसौटी पर कसता हूं। अगर वह बहुत जरूरी लगती है, तो तीन सिक्के निकालने पड़ते हैं। अपने जिगर के टुकड़ों को छेद में खिसकाते समय दिल से जो हूक उठती है, उसका अनुमान भुक्त-भोगी ही लगा सकते हैं। और इस पर भी होता क्या है, यह जानते हैं आप? ... उद्योग-भवन का नम्बर मिलाकर तीन सिक्के त्यागे और ऑपरेटर से प्रार्थना की कि मुझे कृपया मिस्टर रस्तोगी से कनैक्ट कर दीजिए। दो क्षण बाद मिस्टर रस्तोगी के कमरे में घंटी बजने लगी। "कौन? मिस्टर रस्तोगी? ... वो तो सामने कृषि-भवन गये हैं ... मिस्टर मीनाक्षी-सुंदरम के पास।" काम जरूरी है। कृषि-भवन का नंबर डायल करके फिर तीन सिक्कों का खून किया और ऑपरेटर से विनती की कि मेहरबानी करके मिस्टर मीनाक्षीसुंदरम के साथ जोड़ दीजिए। उसने पूछा, "कौन से मीनाक्षीसुंदरम? एम. के., टी. एस. या आर. पी.?" पल भर सोचकर कहा, "जो मिस्टर रस्तोगी के दोस्त हैं।" "जनाब, मुझे क्या पता, कौन किसका दोस्त है और कौन किस का दुश्मन!" और 'खट' के साथ रिसीवर रख दिया गया। फिर कृषि-भवन का नम्बर मिला कर तीनसिक्कों का होम किया। "पूरा नाम?" ... "टी. एस. मीनाक्षीसुंदरम।" दोबारा सिक्कों की डोर से कृषि-भवन से जुड़ा। दो क्षणों बाद टी. एस. मीनाक्षीसुंदरम के कमरे में घंटी बजने लगी। "हैलो, क्या मैं मिस्टर रस्तोगी से बात कर सकता हूं? मालूम हुआ कि वे आपके पास ..." "हां, आये थे, लेकिन अभी-अभी गये हैं। आधा मिनट

हुआ होगा।"

दस के तीन सिक्कों की
बरबाद हो गया। दस के तीन
मुझसे क्या-क्या नहीं खरीदवाया
की चप्पलें और हापुड़ के पापड़,
का बल्ब और अलीगढ़ का ताला
की चूड़ियां और चूहे मारने वाली
त्रिवेन्द्रम की लुंगी और बना
जरदा . . . !

इन दस के तीन सिक्कों ने
गलतफहमियां पैदा नहीं कीं! चू
पैकेट जेब में पाकर, कभी उनका
न करने वाली एक अल्ट्रामॉडर्न
'धोखेबाज' कहकर सम्बंध तोड़
दूसरी मध्यवर्गीय प्रेयसी पापड़ों
को घर बसाने के इरादे का सूच
विवाह का अप्रत्यक्ष प्रस्ताव मान
चूहे मारने वाली गोलियां देख
दादी समझीं कि मैं उसे मारकर
जायदाद हड़पना चाहता हूं और
देख कर एक दक्षिण भारतीय
ने 'दिल्ली तमिल संगम' का
बनाना चाहा!

लेकिन नहीं हो सकता—
हो सकता! जब तक जिंदगी है,
पब्लिक बूथ है। जब तक पब्लि
तब तक दस के तीन सिक्के हैं।
दस के तीन सिक्के हैं, तब त
दुख की करुण कथा है!

—१३ए/२३, उ
करोलबाग, नयी

जब
जिंदगी
दुनिया
तब
मुझको
कविता
इसीलिए
पिछड़कर
हताशकर
पराजय
निनाद
तब
अकर्मण्य
अनजाने
हांफते
गंतव्य
रास्ता

प्रवेश

अकर्मण्य कविता

जब
जिंदगी से
दुनिया जूझती है
तब
मुझको
कविता सूझती है
इसीलिए
पिछड़कर
हताशकर
पराजय
निनाद कर उठती है
तब
अकर्मण्य कविता
अनजाने
हांफते
गंतव्य का
रास्ता खोजती है

उत्पीड़न को

आंगन में
अंधेरे
जीवन के
चमकता
मात्र अंधेरा
पात्र सवेरा
उलझन का
सावन में बरसा सूखा
कांटों ने छीला
उपवन का
बदन
बदन से दहकता
महकता
दंभ
उत्पीड़न का

—विनोद मेहरा—

"विभाजन के कारण सात-आठ मास की अवस्था में लाहौर से दिल्ली की यात्रा। अभावों की छत्र-छाया में बी. ए.। आजकल स्टेट बैंक ऑफ इंडिया जयपुर में हूं। पिता मेरा निर्माण चाहते हैं और मैं निर्वाण। बैंक की विभागीय परीक्षाओं के दौरान कहानी और कविताओं के प्लाटों से जूझता हूं।"

—२३९ ए, गली नं. ३, राजा पार्क,
आदर्शनगर, जयपुर-४

● श्रीधर

गाथा शक सम्वत की

आधुनिक भारत के राष्ट्रीय सम्वत अर्थात शक सम्वत को उसके उत्पत्ति-काल में 'शक' नहीं कहा जाता था। अन्य प्रचलित सम्वतों की तरह प्रारम्भ में इसे भी केवल 'वर्ष' कहा गया। बाद में इसे 'शक नृपतिराज्याभिषेक सम्वत्सर', 'शक नृपति सम्वतत्सर', 'शक नृपकाल', 'शक सम्वत्सर', 'शक सम्वत', 'शक वर्ष', 'शक-काल', 'शककाल सम्वत्सर' या 'शाके' अथवा 'शालिवाहन शाके' कहा गया।

इस प्रश्न पर मतभेद है कि शक सम्वत किसने प्रारम्भ किया। अधिकांश विद्वानों का मत है कि कनिष्क ने इसका प्रवर्तन किया, किंतु स्वयं कनिष्क की तिथि विवाद का विषय है। कनिष्क स्वयं कुषाण था। उसे प्रवर्तक मानने में दो कठिनाइयां हैं: १. कनिष्क या उसके उत्तराधिकारियों के इस सम्वत में कुषाण नहीं बल्कि शक की प्रसिद्धि क्यों हुई? २. कनिष्क की तिथि के सम्बंध में भी मतभेद हैं। कुछ ने उसे ई. पू. प्रथम शती का माना है तो कुछ ने प्रथम, द्वितीय तथा तृतीय ईसवी का। डी. सी. सरकार के अनुसार जिस तरह विक्रमादित्य कई हुए, उसी तरह कनिष्क भी कई हुए। जब कोई भी सम्वत प्रारम्भ होता है तो वह तुरंत कोई नाम ग्रहण नहीं कर लेता वरन लोकप्रिय होने पर उसके साथ कोई संज्ञा लगती है। कनिष्क ने इसका प्रयोग किया, जिसे उत्तराधिकारियों ने जारी रखा। ३ से ८६ वर्ष तक लगातार कुषाण लेखों में प्राप्त होती हैं। इस आधार पर डी. सी. सरकार ने कनिष्क प्रथम (७८-१०२ ई०) वासिष्क (१०२-[illegible]) कुविष्क (१०६-३२ ई०) कनिष्क (११९ ई०) वासुदेव (१५८-[illegible]) कनिष्क तृतीय (तीसरी शती) का क्रम निर्धारित किया है।

एक समय पश्चिम भारत में [illegible] व कार्दमक-वंशीय शक क्षत्रप राज्य कर रहे थे। नहयान और उसके उत्तराधिकारियों ने उसी सम्वत का प्रयोग किया जिसका प्रयोग कुषाण करते थे। कहीं भी उसकी विशिष्ट संज्ञा नहीं [illegible]

शक छत्रप कुषाणों के अधीन [illegible] लिए वे अपना सम्वत जारी नहीं [illegible] थे। रुद्रदामन के जूनागढ़ लेख के [illegible] धिगत महाक्षत्रपनामा' से स्प[illegible]

उसने निश्चित रूप से कुषाण अधीनता को छोड़े बिना सम्प्रभुता प्राप्त कर ली थी।

यह भी नहीं माना जा सकता था कि पश्चिमी शकों द्वारा प्रयोग किया गया सम्वत उनका निजी सम्वत था क्योंकि वे अधीन शासक थे। दूसरे उनके लेखों में इस सम्वत के प्रथम चालीस वर्षों की कहीं भी चर्चा नहीं है। यह सम्वत पहले-पहल पश्चिमी छत्रपों के सम्वत ५२ से १४३ तक के शिलालेखों में मिलता है। इसके कुषाण सम्वत होने का साक्ष्य सांची से प्राप्त कुषाण सम्राट वाशिष्क के एक अभिलेख से मिलता है क्योंकि कुषाण बहुत दूर से शकों के माध्यम से शासन करते थे और शक उज्जयिनी के ज्योतिष-केंद्र पर हावी थे। इसीलिए बाद में इस सम्वत के साथ 'शक' अभिधा प्रयुक्त हुई। वैसे भी भारतीय साहित्य में सदा ही विदेशियों के लिए 'शक' शब्द का प्रयोग हुआ है।

'मुहुर्त मार्तंड' के अनुसार इसका प्रवर्तन शालिवाहन के जन्म से हुआ जबकि 'कल्पप्रदीप' के अनुसार सातवाहन ने उज्जयिनी के विक्रमादित्य को पराजित कर इसका प्रचलन किया। अलबेरूनी कहता है कि विक्रमादित्य ने शकों को पराजित कर इसका प्रचलन किया।

सिंहसूरि के 'लोकविभाग' में इस सम्वत का सर्वप्रथम प्रयोग है। यह कांची पर पल्लवराजा। सिंहवर्मन के सफल शासन के २२वें वर्ष में लिखा गया था।

गौरीशंकर ओझा के अनुसार शक सम्वत का प्राचीनतम साहित्यिक संदर्भ वराहमिहिर की 'पंचसिद्धांतिका' में है, जिसमें शक-काल ४२७ का उल्लेख है।

शक सम्वत की पांचवी शती की तिथियों में कुछ अभिलेख उमेता वेगूमारा, इलावर से प्राप्त हुए हैं। ये क्षेत्र गुजरात में हैं, जिनमें शक सम्वत ४१५, ४१७

दो प्राचीन सिक्के

का उल्लेख है, यद्यपि लिपि-शास्त्र के आधार पर इन्हें जाली माना जाता है।

सर्वप्रथम छठी शती के बादामी चालुक्यों के अभिलेख में स्पष्ट रूप से शक वर्ष का उल्लेख प्राप्त है। सबसे पुराना लेख शक सम्वत ४६५ का है। इस शती के लेखों में 'शक वर्ष', 'सभासुसमतिदास-शकानामपि भूभुजाम्' आदि का उल्लेख प्राप्त होता है। अन्य दक्षिण भारतीय राजवंशों राष्ट्रकूट, चालुक्य (वेगी) विजय-नगर के यादवों आदि के अभिलेखों में यह सम्वत 'शक' नाम से प्रयुक्त हुआ है। १३वीं शती में इस सम्वत के साथ शालि-

वाहन नाम भी जोड़ दिया गया। शामराज के 'उद्भटकाव्य' में, जो ११४४ शक गते की रचना है, इस सम्वत को 'शालिवाहन शक' कहा गया है। १३वीं, १४वीं शती में विजयनगर के राजाओं के अभिलेखों में इसे 'शालिवाहन शक वर्ष' या 'नृपशालिवाहन शक' कहा है।

इस सम्वत का आरम्भिक प्रसार दक्षिण में हुआ, जहां के राजाओं के शासन में उच्च पदों पर अधिकांश जैन थे। वे अधिकांशत: गुजरात और मालवा के वासी थे, जहां शकों का आधिपत्य था। वे प्रारम्भ से ही शक सम्वत के प्रयोग के अभ्यस्त थे, फिर उज्जयिनी के ज्योतिषियों ने, जो शकों के शासन-प्रभाव में थे, विक्रम और शक सम्वतों का ही प्रयोग किया।

शक सम्वत का प्रयोग कन्नड़-भाषी राजाओं के उत्तराधिकारी राजाओं ने बहुतायत से किया, जो बादामी के चालुक्यों के बाद सफल हुए थे। चालुक्यों के काल में इस सम्वत का प्रसार दक्षिण से बंगाल की खाड़ी तक हो गया। इंडोचीन और हिंदेशिया के ७वीं तथा ८वीं शती में प्राप्त आरम्भिक अभिलेख इसी शक सम्वत में हैं। दशम शती में वेंगी के चालुक्यों ने अपने पश्चिमी पड़ोसियों, बादामी के चालुक्यों से यह सम्वत सीखा। अब तक यह सम्वत कलिंग नगर के पूर्व गंग राजाओं द्वारा स्वीकार कर लिया गया था। बाद में समुद्रतट से उड़ीसा तक गंग-प्रभाव के बढ़ने पर यह पश्चिम-दक्षिण बंगाल तक पहुंच गया, लेकिन बंगाल में शक सम्वत की लोकप्रियता का मूल कारण १२वीं शती में सेन राज-शक्ति का उदय है। उत्तरी बिहार में यह सम्वत मिथिला में स्थापित होने वाले नान्यदेव के कर्नाट परिवार के कारण प्रसार प्राप्त कर सका। यह ११वीं शती की बात है। बंगाल और उत्तरी बिहार से यह सम्वत असम तक फैल गया।

इसका प्रयोग पूर्वी उत्तरप्रदेश और बिहार में कौशाम्बी के मगों ने और आगे विशाखमित्र-जैसे राजाओं ने किया। यहां से यह लिच्छवियों के परिवार में नेपाल पहुंचा। देवगढ़ (झांसी) और बैजनाथ (कांगड़ा) के लेखों में शक सम्वत का प्रयोग है।

शक सम्वत का प्रारम्भ ७८ ई० से माना जाता है। इसमें ७८-७९ जोड़ने से ईसवी सन बनता है। ३१७९ जोड़ने से कलियुग, १३५ जोड़ने से गतचैत्रादि विक्रम सम्वत बनता है। यह सम्वत बहुधा दक्षिण में प्रचलित है, जहां यह चैत्र शुक्ला १ से प्रारम्भ होता है। जहां सौर सम्वत का प्रयोग होता है, यह शक सम्वत मेष संक्रांति से प्रारम्भ होता है। शक सम्वत वर्ष प्राय: 'गते' के रूप में प्रयुक्त किये गये हैं। उत्तर भारत के पंचांगों में भी इसका उल्लेख 'शालिवाहन शाके' नाम से है।

भारत सरकार के अनुसार यह सम्वत अब राष्ट्रीय सम्वत बन गया है।

—बनारस हिंदू यूनीवर्सिटी, वाराणसी-५

सुहासिनी चंद्रकांत जोशी, अंकलेश्वर (गुजरात) : बैडमिंटन में हार-जीत के लिए 'प्वाइंट्स' कैसे गिने जाते हैं ? एक खेल कितने 'प्वाइंट्स' पर पूरा होता है ?

बैडमिंटन में शटलकाक को 'सर्व' करने वाला खिलाड़ी (या 'सर्व' करने वाला पक्ष) ही प्वाइंट स्कोर कर सकता है। यदि वह रैली जीत जाए तो एक प्वाइंट बनता है। हारने पर दूसरा पक्ष सर्व करता है। जो पक्ष पहले १५ प्वाइंट बना ले, वह जीतता है। महिलाओं के खेल में ११ प्वाइंट्स का एक 'गेम' होता है।

कु. वसुंधरा पाठक, वाराणसी, (उ.प्र.) : पिछले दिनों एक प्रयोग के बारे में पढ़ा कि पहाड़ों पर पिघलती हुई बर्फ का पानी पीने वाले पक्षियों का भार साधारण पानी पीने वाले पक्षियों की अपेक्षा बढ़ जाता है । इसका क्या कारण है ?

बर्फ की संरचना क्रिस्टलीय (मणिभीय) होती है। यों तो साधारण जल भी एक तरल क्रिस्टल होता है क्योंकि उसके अणु पूरी तरह अव्यवस्थित नहीं होते, लेकिन बर्फ की और साधारण जल की क्रिस्टलीय संरचना में अंतर होता है। बर्फ के पिघल जाने के बाद भी काफी देर तक उसकी संरचना ज्यों-की-त्यों बनी रहती है । ऊपर से, पिघली हुई बर्फ द्रव जैसी दिखायी देती है, पर उसके अणु बर्फ की संरचना वाले ही रहते हैं । वैज्ञानिकों का विश्वास है कि जीवधारियों के शरीर

में निहित जल की संरचना बर्फ की संरचना से मिलती-जुलती है। इसलिए साधारण जल को जीव-शरीर में शामिल होने के लिए अपनी संरचना बदलनी पड़ती है, जबकि पिघली हुई बर्फ को यह काम नहीं करना पड़ता और वह शरीर के अन्य पदार्थों में आसानी से घुलमिल जाती है । अतः पिघली हुई बर्फ को 'पचाने' में, उसके अणुओं को पुनः व्यवस्थित करने में, शरीर को अतिरिक्त ऊर्जा खर्च नहीं करनी पड़ती, जो कि साधारण जल को पचाने में करनी पड़ती है। इसलिए पिघली हुई बर्फ पीनेवालों का भार साधारण जल पीनेवालों की अपेक्षा बढ़ना स्वाभाविक है।

प्रमोद शर्मा 'नीरद', शाहाबाद (बिहार) : बिजली के तारों पर बैठे हुए पक्षियों को करेंट क्यों नहीं लगता ?

तार पर बैठे हुए पक्षी का शरीर उस समय एक विद्युत सर्किट की ब्रांच-लाइन का-सा काम कर रहा होता है,

जिसकी प्रतिरोधी क्षमता दूसरे विद्युत् सर्किट (यानी उसके दोनों पंजों के बीच की दूरी) की ब्रांच लाइन से कहीं अधिक होती है। इसलिए पक्षी के शरीर से गुज-रने वाला करेंट बहुत हलका होता है और उसका पक्षी के शरीर पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। लेकिन बिजली के तार पर बैठा हुआ कोई पक्षी यदि अपनी चोंच या पूंछ से तार के खंभे को छू दे, या किसी अन्य प्रकार से उसका सम्पर्क धरती से हो जाए, तो उसका मर जाना निश्चित है।

अनंतकुमार गाड़े, शिवपुरी (म. प्र.) : वैदिक सभ्यता के ज्ञान के लिए वेदों के अतिरिक्त अन्य कौन-कौन से प्रमुख ग्रंथों का अध्ययन करना चाहिए ?

चार वेदों के अतिरिक्त चार उपवेद और छह वेदांग भी हैं। उपवेद हैं—आयुर्वेद, धनुर्वेद, शिल्पवेद और गंधर्ववेद। वेदांग हैं—व्याकरण, शिक्षा, कल्प, निरुक्त, छंदस् और ज्योतिष। इनके अलावा लगभग १०० उपनिषद् हैं, जिनमें आत्मा, परमात्मा, सृष्टि और मनुष्य सभी विषयों का गम्भीर चिंतन और दार्शनिक विवेचन मिलता है। फिर, धर्म सम्बंधी नियमों और विविध धार्मिक क्रियाओं को स्पष्ट करने वाले सूत्र-ग्रंथ हैं। प्रत्येक सूत्र-ग्रंथ में किसी न किसी ब्राह्मण ग्रंथ पर प्रकाश डाला गया है। ब्राह्मण ग्रंथ भी अनेक हैं। इनकी रचना साधारण लोगों को वेदों का ज्ञान कराने के लिए की गयी है। पाणिनि का व्याकरण-ग्रंथ 'अष्टाध्यायी' भी वैदिक सभ्यता को समझने के लिए आवश्यक है। इसमें ऐतिहासिक सामग्री बहुत है। धर्मशास्त्र, स्मृतियां और षट्दर्शन भी पढ़ना आवश्यक है—प्रमुखतः मानव धर्मशास्त्र, विष्णु धर्मशास्त्र, याज्ञवल्क्य स्मृति, नारद स्मृति तथा कपिल का सांख्य दर्शन, पंतजलि का योग दर्शन, गौतम का न्याय दर्शन, कणाद का वैशेषिक दर्शन, जैमिनी की पूर्वमीमांसा और व्यास की उत्तर मीमांसा। वाल्मीकि रचित रामायण और वेद व्यास रचित महाभारत इस अध्ययन को पूर्ण बनाते हैं।

रामप्रताप सिंह, जयपुर (राज०): समाचार एजेंसियां क्या होती हैं और इनका कारोबार किस तरह चलता है?

समाचार एजेंसियां सरकारी और गैरसरकारी दोनों तरह की संस्थाएं होती हैं, जो देश-विदेश में अपने संवाददाताओं को नियुक्त करके समाचार एकत्र करती

हैं और फिर उन समाचारों को समाचार-पत्रों में भेजती हैं । टेलिग्राम, टेलिफोन, टेलिप्रिंटर आदि संचार साधनों की सहायता से ये संस्थाएं शीघ्र से शीघ्र समाचार प्राप्त करके टेलिप्रिंटर व्यवस्था से समाचारपत्रों के कार्यालयों में पहुंचा देती हैं। समाचारपत्रों को उनसे समाचार प्राप्त करने के लिए निश्चित वार्षिक शुल्क देना पड़ता है, जिससे समाचार एजेंसियों का कारोबार चलता है।

प्रमोदकुमार गुप्ता 'बरनबाल', चंदौसी (उ. प्र.) : मनुष्य के मन में शंकाएं क्यों जन्म लेती हैं ?

शंका या संदेह विश्वास और अविश्वास के बीच की मन:स्थितियां हैं। मनुष्य जब एक निश्चित विश्वास लेकर चलता है, तब उसके मन में कोई द्विधा नहीं होती। तब वह उस विश्वास से सम्बंधित विषयों के बारे में यह नहीं सोचता कि वे सही हैं या गलत, उचित हैं या अनुचित। वह अपने सद्-असद् विवेक पर, अपनी नैतिकता पर, अपने सौंदर्यबोध पर कभी कोई प्रश्नचिन्ह नहीं लगाता । लेकिन ऐसा निश्चित विश्वास या तो असंभव है, या फिर वह अंधविश्वास होता है। मनुष्य गतिशील और चेतनाशील प्राणी होने के कारण स्वभावत: जिज्ञासु होता है। जिज्ञासा ज्ञानप्राप्ति की दिशा में चलने का प्रारम्भ-बिंदु है, लेकिन जिज्ञासा का मूल शंका है। मनुष्य अपने उपलब्ध ज्ञान (जो विश्वास बन चुका होता है) पर संदेह करता है कि ऐसा ही क्यों है, इसके अतिरिक्त कुछ क्यों नहीं हो सकता, और उस 'अतिरिक्त कुछ' को जानने के प्रयत्न में वह अपने ज्ञान का विकास और विस्तार

करता है। इस प्रकार शंकाओं को मानवीय प्रगति का मूल माना जा सकता है, लेकिन हर समय शंकाग्रस्त रहना 'साइकास्थेनिया' नामक मानसिक रोग है, जो वास्तव में अविश्वास ही की मन:स्थिति है और इसका सम्बंध अपराध-भावना, भय, दमित हिंसावृत्ति आदि से है।

चलते-चलते एक प्रश्न और...

कु० क. ख. ग. : सुंदरता रूप में होती है या देखने वाले की आंखों में ?

नहीं, उस फासले में, जो दोनों के बीच होता है।

—बिंदु भास्कर
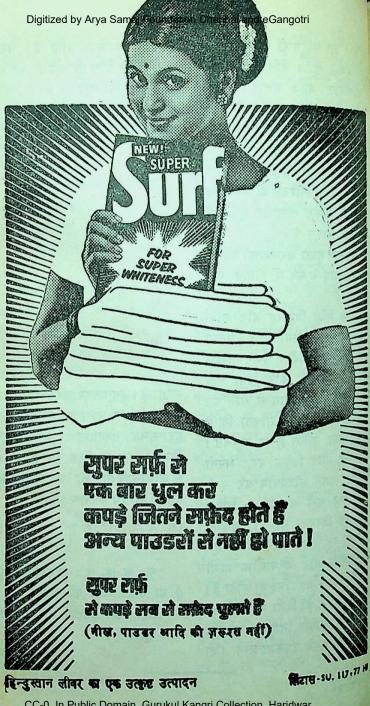
NEW!
SUPER
Surf
FOR SUPER WHITENESS
सुपर सर्फ़ से
एक बार धुल कर
कपड़े जितने सफ़ेद होते हैं
अन्य पाउडरों से नहीं हो पाते !
सुपर सर्फ़
से कपड़े सब से सफ़ेद धुलते हैं
(नील, पाउडर आदि की ज़रूरत नहीं)
हिन्दुस्तान लीवर का एक उत्कृष्ट उत्पादन
लिंटास-SU. 117-77 HI

कर्जदार साहित्यकार

● पी.के. पाण्डेय

साहित्यकारों पर लक्ष्मी की अकृपा रही है और उन्हें विवशता में ऋण लेना पड़ा है, लेकिन कुछ साहित्यकार ऋण लेने के शौकीन और माहिर भी रहे हैं।

मिर्जा गालिब का जन्म उच्च कुल में हुआ था। उनको रामपुर रियासत से दो सौ रुपये मासिक मिला करते थे। गदर के बाद उन्हें सरकार से भी अच्छी पेंशन मिलने लगी थी, फिर भी मिर्जा साहब फिजूलखर्ची व शराब की वजह से हमेशा कर्जदार ही बने रहे। जब उनका ऋण अधिक बढ़ गया, तब महाजनों ने उन पर नालिश कर दी। मुफ्ती साहब की अदालत में पहुंचते ही उन्होंने यह शेर कहा—

कर्ज की पीते थे मय, लेकिन समझते थे कि हां
रंग लाएगी हमारी फाकामस्ती एक दिन

कर्ज न चुका सकने के कारण मिर्जा साहब को कुछ दिन जेल की भी हवा खानी पड़ी थी। फिर भी वे अंत तक कर्ज लेते और उड़ाते रहे।

एक बार मिर्जा साहब अपनी मरणासन्न बहन को देखने गये। उसने मिर्जा साहब से कहा "मुझे इस बात की बड़ी चिंता है कि मैं मरने से पहले अपना कर्ज नहीं चुका सकूंगी।" मिर्जा साहब ने ठहाका लगाते हुए कहा, "भला यह भी कोई चिंता की बात है! खुदा के घर भी क्या मुफ्ती सदरउद्दीन खां बैठे हुए हैं जो डिग्री कर के पकड़वा बुलाएंगे!"

भारतेंदु हरिश्चन्द्रजी भी अपव्यय करने में किसी से पीछे न रहे, पर उनके अपव्यय के पीछे परहित-भावना थी, जैसे साहित्यसेवियों तथा दीन-दुखियों की सहायता करना और देशोपकार के कार्यों में चंदा देना। नतीजा यह हुआ कि वे ऋणग्रस्त हो गये। कई महाजनों ने उन्हें ऋण देकर मूल से तिगुनी-चौगुनी तक रकम लिखवा लीं। एक महाजन ने एक छोटी नाव और थोड़ा रुपया देकर भारतेंदुजी से तीन हजार रुपये का कागज लिखवा लिया और बाद में उन पर दावा कर दिया। भारतेंदुजी की लाखों की संपत्ति यूं ही कर्ज में लुट गयी।

जगत्प्रसिद्ध अंगरेज कवि गोल्डस्मिथ, मिल्टन, स्कॉट, शेरिडन और बाइरन कर्ज लेने में माहिर थे। इनमें से कुछ तो कई बार जेल भी हो आये थे। मिल्टन ने अपने 'पैरेडाइज लास्ट' के प्रथम संस्करण का स्वत्व केवल पांच पाउंड में बेच दिया था। लाचारी थी!

—द्वारा एस. के. पाण्डेय,
चंपानगर, भागलपुर

उर्दू शायरी में हिंदी रं...

हर अंधेरे में मैं हूं उजाले-का रूप
मेरी चमकीली पायल सवेरे की धूप
लाख बदले यह जग, मैं न बदलूं चलन
सुन री सखी, मेरी पायल की छन

उपर्युक्त पंक्तियां पाकिस्तान की उर्दू कवयित्री 'निगार' सहबाई के एक गीत की हैं। न तो ये पंक्तियां, और न निगार सहबाई ही अपने-आप में अपवाद हैं। स्वतंत्रता के बाद होश सम्भालने वाले कई पाकिस्तानी शायरों ने हिंदुस्तानी को—जो उर्दू के बजाय हिंदी के अधिक निकट है—अपनी अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया है। इसी स्वर की गूंज कतील 'शिफाई', अहमद नदीम कासिमी, कयूम 'नजर', आबिद अली 'आबिद', फैज अहमद 'फैज', 'अदम', इब्ने 'इंशा' आदि की रचनाओं में सुनायी देती है। अब्दुल मजीद 'अदम' के एक गीत की कुछ पंक्तियां दृष्टव्य हैं—

चांदनी है रंग में
मौज है उमंग में
तेरे अंग-अंग में
गीत हैं रचे हुए
शोर हैं मचे हुए

आबिद अली 'आबिद' ने 'श्याम वर्ण'

● श्याम आनंद 'प्रभा...'

को अपनी 'जबान' की प्रकृति के अ... ढाल कर कितना स्वाभाविक रूप दे दि... है—

जिनके शाम बरन साये में मेरा मन मुस्ता...
अब आंखों के आगे वे बाल घुंघरे फिरे...

पाकिस्तान की उर्दू कविता पर हि... का यह प्रभाव केवल कुछ शब्दों तक... सीमित नहीं है, भावों के सम्प्रेषण के लि... जिन प्रतीकों का अवलम्ब लिया गया... वे कवि की समृद्ध सांस्कृतिक चेतना... परिचय देते हैं। कयूम 'नजर' ने 'ब... के दिन' में प्रातःकाल को चित्रित करने... लिए 'राधा-कृष्ण' का जिस प्रकार सह... लिया है, वह बिहारी के 'तमालतरु'... दोहे की स्मृति को ताजा कर देता है—

हर हरियाली
जीत ने अपने रूप में डाली
बनी खड़ी है सुबह सुहानी
कृष्ण कन्हैया राधा रानी
हरी-भरी है संजोग की डाली
लहराये
आये, बहार के दिन आये

'नजर' ने अपनी रचनाओं में और भी समृद्ध सांस्कृतिक प्रतीकों का प्रयोग किया है—

हंस-हंस वक्त बचाएं
मंगल गाएं, रास रचाएं

इसी प्रकार रात्रि की अभिव्यंजना के लिए दीवाली के माध्यम से कतील 'शिफाई' द्वारा किया गया बिम्ब-विधान भी दृष्टव्य है—

झूम रही है डाली-डाली
कली-कली है मद की प्याली
जुगनूं चमकें यूं पेड़ों पर
जैसे आयी दीवाली
ओ माली !

कतील ने दीवाली का सहारा लिया है तो 'फैज' ने ढलती शाम का चित्र खींचने के लिए मंदिर को माध्यम बनाया है—

इस तरह कि हर पेड़ कोई मंदिर है
कोई उजड़ा हुआ, बेनूर, पुराना मंदिर !
ढूंढ़ता है जो खराबी के बहाने कब से !
आस्मां कोई पुरोहित है जो बाम तले
जिस्म पर राख मले, माथे पर सिंदूर मले
सिर नगूं बैठा है चुपचाप न जाने कब से !
आस्मां आस लिये है कि यह जादू टूटे
चुप की जंजीर कटे, वक्त का दामन छूटे
दे कोई संख दुहाई, कोई पायल बोले
कोई बुत जागे, कोई सांवली घूंघट खोले

स्पष्ट है कि पाकिस्तानी कवियों का हिंदी की ओर यह झुकाव, भारतीय संस्कृति के प्रति यह ललक केवल गीतों तथा नज्मों तक सीमित नहीं है, गजलों में भी यही प्रवृत्ति दृष्टिगोचर होती है। इब्ने 'इंशा' की गजल के कुछ अंश प्रस्तुत हैं—

जी घुलता है, आंसू ढलते हैं
हर नीर में दीप से जलते हैं
इस बरसा से जी की आग बुझे
ये तो और भी भड़के सावन में
कभी मन के अजंता में आओ
वे मूरतें तुमको दिखलाएं
वे सूरतें तुमको दिखलाएं
हम खो गये जिनके दर्शन में

कतील 'शिफाई'

आज का पाकिस्तानी कवि बुतशिकन नहीं, उसके दर्शन करके अपनी सुध-बुध खो देने वाला है—

यह छैल-छबीला कौन फिरे
इस मथुरा की नगरी में, सखियो
सभी बातें अपने श्याम में थीं

उड़ चलिए
बंबई
न्यू यॉर्क
बंबई
एक तरफ़ा किराये से भी
कम ख़र्च में!
न्यू यॉर्क की यात्रा और वापसी
१४/१२० दिनोंवाली हमारी एक्सकर्सन फ़ेयर
योजना के अन्तर्गत मात्र ४००४ रु. में!
न्यू यॉर्क के लिए रोज़ाना ७४७ की उड़ानें
दिल्ली/न्यू यॉर्क/दिल्ली —४००४ रु.
कलकत्ता/न्यू यॉर्क/कलकत्ता —४७३२ रु.
मद्रास/न्यू यॉर्क/मद्रास —४६७४ रु.
एयर-इंडिया
एयरलाइन जो आपके पैसे बचाती है।
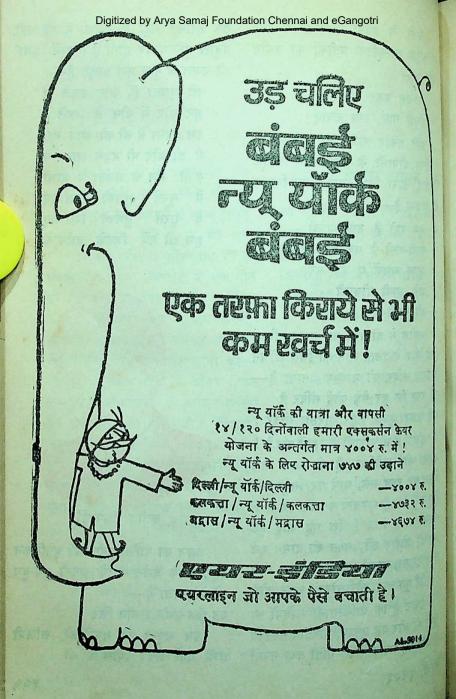
अब देख लो इस मनमोहन में

पाकिस्तान की कविता गजलों और नज्मों तक ही बंधकर नहीं रह गयी है। गीत के माध्यम से उसने कई प्रकार के छंदों को तो अपनाया ही है, दोहों की भी रचना की है। जमीलुद्दीन 'आली' अपने दोहों के लिए विशेषतया प्रसिद्ध हैं—

जनम-मरन का साथ था जिनका
उन्हें भी हमसे बैर
वापिस ले चल अब तो आली
हो गयी जग की सैर

× × ×

मोती कूट के मांग भरूं
चंदन से धोऊं तेरे बाल

'जनम-मरन का साथ' तथा 'मांग भरूं' विशेष रूप से दृष्टव्य हैं।

'निराला' के मुक्तक छंद से भी वहां के कवि अछूते नहीं रहे। छंद, भाषा, भाव के अतिरिक्त उर्दू कविता की विषय-वस्तु में भी अभूतपूर्व परिवर्तन दृष्टिगोचर होता है। तसुद्दक हुसैन 'खालिद' की 'पशेमानी' की प्रारम्भिक पंक्तियां इस प्रकार हैं—

मौत का राग नफीरी पै बजाती उठी
लू, झुलसाती लू
उठी, बढ़ी
रेत पे जैसे धुआं उठता हो
सरसराहट-सी दरख्तों में हुई
पत्ते मुरझा गये
गिरने लगे
वह उनके खड़कने की सदा—या खुदा!

जाहिर है कि उपर्युक्त चित्रण केवल 'लू' का चित्रण नहीं, छायावादी शैली में अंतर को वाह्य के द्वारा अभिव्यक्त भी किया गया है। खातिर 'गजनवी' का 'लोकगीत' भी उर्दू की परम्परागत विषय-वस्तु व शैली से हटकर है—

फैज अहमद 'फैज'

परे शहर से
खुश्क टीलों के दामन में
एक फूल महका

× × ×

इसे किसने बोया
इसे किसने सींचा
वह माली कहां है
वह माली कहां है

क्या माली अज्ञात 'ब्रह्म' ही नहीं है? मुक्तक में रची गयी ये रचनाएं इस

बात का संकेत देती हैं कि उर्दू शायरी केवल 'इश्क और हुस्न,' 'शराब और साकी', 'तीर और तलवार' व 'कत्ल और कातिल' की ही शायरी नहीं रह गयी है, विषय-वस्तु, अभिव्यक्ति, प्रतीकों, छंदों और भाषा की दृष्टि से उसने नये आयामों को छुआ है।

पाकिस्तान की उर्दू कविता से एक महत्त्वपूर्ण बात जो उभर कर सामने आती है, वह यह कि राजनीतिज्ञों द्वारा खड़ी की गयी अलगाव तथा धर्म की दीवारें कलाकार के हृदय और मस्तिष्क में विभा-जन-रेखा नहीं खींच सकी हैं। १९४७ में लिखी गयी फैज अहमद 'फैज' की ये पंक्तियां आज भी पुरानी नहीं लगतीं—

यह वो सहर तो नहीं जिसकी आरजू लेकर
चले थे यार कि मिल जाएगी कहीं न कहीं
निजाते दीदा ओ दिल की घड़ी नहीं आयी
चले चलो कि वह मंजिल अभी नहीं आयी

उम्मीद करनी चाहिए कि वह मंजिल कभी न कभी अवश्य आएगी।

—९१० गुलाबीबाग, दिल्ली-७

क्रीमिया का युद्ध चल रहा था। सेबेस्टोपोल से जार निकोलस के पास एक गुप्त समाचार भेजना था। रूसी सेनापति ने एक कप्तान के हाथ में मोहरबंद लिफाफा देते हुए कहा, "यह पत्र सम्राट के हाथ में ही देना। रात-दिन यात्रा जारी रखना।" कप्तान एक घोड़ागाड़ी में बैठकर निकल पड़ा। हर दस मील पर घोड़ा बदलने के लिए रुकना पड़ता। एक-आध मिनट में ही गाड़ीवान कहता कि गाड़ी तैयार है, और कप्तान बोल पड़ता, "जल्दी गाड़ी दौड़ाओ।" कई रातों की यात्रा के बाद सेंटपीटर्सबर्ग के राजमहल में पहुंचकर उसने जार के हाथ में पत्र दे दिया और जार के सामने ही एक कुरसी पर अनुमति लेकर बैठ गया तथा निद्रा में डूब गया।

पत्र पढ़ लेने के बाद जब जार ने नजर उठायी तो देखा कि कप्तान कुरसी पर आंखें मूंदे बैठा है। उसे हिलाया गया, आवाज दी गयी, मगर कप्तान न जागा। नाड़ी टटोली गयी तो पता चला कि वह घोर निद्रा में है। तब जार ने उसके कान के पास मुंह ले जाकर धीरे से कहा, "कप्तान साहब ! गाड़ी तैयार है।" कप्तान तुरंत तनकर बैठ गया और बोला, "जल्दी दौड़ाओ।"

तभी उसकी आंखें खुलीं और उसने देखा कि जार सामने खड़ा मुसकरा रहा है। वह हड़बड़ाकर उठ खड़ा हुआ, मगर जार ने आदर-पूर्वक उसका हाथ थामकर कहा, "जन्मभूमि और सम्राट के कार्य में लगन और कर्तव्यनिष्ठा, ये दो गुण जब तक अधिकारियों में इसी मात्रा में रहेंगे, तब तक देश के गौरव पर आंच नहीं आ सकती।"

जब तुम सामने नहीं होते

सुभीते के लिए इस तुम का मतलब मैं पत्नी से ले रहा हूं। बात की शुरूआत में ही इसे साफ कर लेना एहतियातन जरूरी है, क्योंकि इससे गड़बड़झाले का अंदेशा है। ऐसे नाजुक मसलों पर इन अंदेशों के पर काट डालना समझदारी की निशानी है। मैं जानबूझकर नासमझी नहीं करना चाहता, इसलिए बहुत ही साफ-साफ बता देना चाहता हूं कि भागमान, जब तुम सामने नहीं होतीं तो मैं ही मैं होता हूं। मोमिन और मुझमें इस मसले में बड़ा भेद है। मोमिन का कहना है—

तुम मेरे पास होती हो गोया
कोई दूसरा नहीं होता

लेकिन मेरा कहना—और अगर इसे बिलकुल ही मेरी रामकहानी न मान लिया जाए तो करना भी—इससे सर्वथा विपरीत है। मोमिन के रंग में उन्हीं का मिसरा उधार लेकर मैं यह कहना चाहता हूं—

जब तुम सामने नहीं होतीं
कोई दूसरा नहीं होता

● कन्हैयालाल 'नंदन'
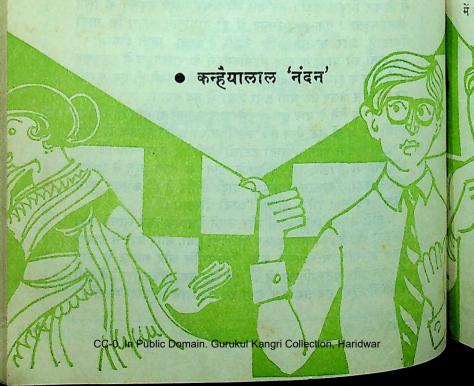
दूसरा क्यों नहीं होता, इसकी तफ-सील में जाने से क्या फायदा ! यह दुखती रग है, जिसे छेड़ने से एक गमनाक नगमा छिड़ने का खतरा है । फिलहाल तो आप इतना ही समझ लीजिए कि इस 'न होने से' मेरी बड़ी-बड़ी खुशफहमियां दूर हो गयीं ।

मसलन, पहले - पहल मैं समझा करता था मेरे दोस्त-अहबाब, महल्लेदार सुबहोशाम मेरे बारे में इतना खयाल रखते हैं ! वह मेरे अपने व्यवहार, शालीनता और शिष्टाचार का नतीजा है । लेकिन इधर मेरी पत्नी ने घर से पांव फेरा । 'पांव फेरा' सोच-समझ कर कह रहा हूं, क्योंकि मुंह फेरा कहने से अटकलें इस बात की लगायी जाने लगेंगी कि आजकल सम्बंधों में तनाव तो नहीं है । इस मामले में मेरे महल्ले की प्रतिभासम्पन्नता का कोई सानी मुश्किल से मिलता है, अपने महल्ले की बात आप जानें । तो मैंने देखा कि इधर श्रीमतीजी ने पांव फरा और मेरा खयाल रखने वालों ने आंख फेरी । यानी पूछने आते नहीं, मिल जाने पर दोहरी चोट करते हैं कि आजकल आप दिखायी नहीं पड़ते । जब कि मैं उनके इंतजार में घंटों रात देर तक वत्ती जलाये अपना काम करता रहता हूं कि कोई आये और देखे कि क्या शान से जिंदगी कट रही है ! कैसे हैं ? मुझे अपने एक कवि मित्र की पंक्ति याद आ रही है—

कोई आ जाए इस पथ पर
मैं दीप जलाये बैठा हूं

पहले मैं समझता रहा कि उन्होंने अपनी किसी प्रेयसी-व्रेयसी के इंतजार में

बोर होकर यह निमंत्रण लिख दिया है, यानी तुम नहीं और सही, और नहीं और सही; लेकिन असली मतलब अब समझ पाया कि 'कोई' से उनका मतलव महल्ले के किसी कुशलक्षेम पूछनेवाले से है। वे बुला रहे हैं 'भाइयो, अरे कोई भी आ जाओ। मेरी हालत देखो, मैं उसका इंतजार करते-करते बोर हो गया हूं। आप में से कोई आओ और मेरी असली दुर्दशा देखो ताकि सनद रहे और उसके न मानने पर वक्त जरूरत गवाह के काम आये।' लेकिन हाय रे जालिम महल्लेदारो! तुमने यहां भी चोट दी, सो मैडम अब मैं बहुत साफ समझ गया हूं कि 'मेरा इसमें कछु नहीं जो कछु है सो तोर'। ये लोग मुझे नहीं, भागमान मेरी मार्फत तुम्हें पूछने आते हैं, यानी वाया भटिंडा मद्रास जाते हैं। मेरी अपने बारे में यह खुशफहमी टूट गयी है। इतना ही नहीं, मेरे व्यक्तित्व को इस कदर छोटा कर चुकने के बाद ऊपर से जले पर नमक छिड़क कर पूछते हैं, "भाभी वगैरा सब लोग मजे में हैं न? कोई चिट्ठी-विट्ठी आयी?" अरे भलेमानस, मैं पांच फुट साढ़े पांच इंच का अच्छा खासा इनसान तुम्हारे सामने खड़ा हूं, मेरे बारे में पूछो! मैं खुश होकर चाय पिलाऊंगा। चाय से काम बनता नहीं दिखेगा तो कुछ 'वाय' भी जोड़ूंगा, लेकिन नहीं, इन्हें तो मेरा दिल तोड़ना है! मेरे हाथ की चाय इन्हें क्यों भाने लगी! चाय पी भी लेंगे तो बोलेंगे "अच्छी तो है, मगर वो बात कहां!" यानी चाय मेरी पी रहे हैं, तारीफ उनकी कर रहे हैं। 'कदम जापान का बढ़ता, फतह जरमन की होती है।' मैं चाहूं तो इस बात पर नाराज होकर उनका दिल तोड़ने के लिए कुछ कह सकता हूं, लेकिन मेरी मजबूरी है। मुझसे किसी का दिल नहीं तोड़ा जाता। इसीलिए आज तक अपना दिल नहीं तोड़ पाया और शान से अब किसी की चाय पीता और खुशी से पिलाता चला जा रहा हूं। यह सिलसिला जारी है, जारी रहेगा! आप हजार बार मेरे बारे में न पूछकर उनके बारे में पूछें, मैं न उनका जाना बंद करवा सकता हूं और न चाय पिलाना! यह मेरी नियति ही मेरी मजबूरी है। मजबूरी एक तरह का बाजार होती है जिसे लूटने के लिए लगाया जाता है, सो बाजार लगी हुई है। लूट सके तो लूट!

मैंने अकसर पाया है कि जब तुम सामने नहीं होतीं तो मेरी प्रतिभा के आयाम बहुमुखी होकर प्रकट होते हैं। मसलन मैं अपने को पाता हूं कि अगर मौका दिया जाता तो मैं एक आला दरजे का कुक भी हो सकता था। कुछ सबसे बुनियादी काम हैं, गैस या स्टोव जलाना। वह मैंने तुम्हारी अनुपस्थिति में इतनी बार किया है कि अब नौकर तक को मेरी इस विशेष योग्यता का पता हो गया है और स्टोव बिगड़ता है तो पिन मारने के लिए हमीं को बुलाता है। और यह तो अब महल्ले भर को मालूम है कि

में उम्दा किस्म का माली भी हो सकता हूं, क्योंकि मैं इन दिनों सूखे गुलाब के पेड़ों को हरा करने की बेशुमार तरकीबें भिड़ाते अकसर पाया गया हूं। ये वही गुलाब हैं जिन्हें तुम जाने के समय खूब हरा-भरा, कलियों-लदा छोड़ गयी थीं और अब वे हफ्तों से पानी के लिए तड़पकर सांसें तोड़ते दिख रहे हैं और मैं इस गम से कि इन मासूम मौतों के लिए जिम्मेदार न ठहराया जाऊं आजकल बागवानी की किताबें पढ़-पढ़ कर उन्हें जिलाने की नाकामयाब कोशिशों में जुटा हुआ हूं। मगर तुम चिंता मत करना, अगर ये गुलाब मर भी गये तो ये नश्वर पौधे हैं, इनके लिए अफसोस करना, संतों की वाणी और असंतों के कारनामों को झुठलाना होगा।

तुम्हें यह जानकर खुशी होगी कि तुम्हारी अनुपस्थिति में मेरी उदारता ने विकास की नयी दिशाएं उद्घाटित की हैं। जिस किसी के यहां से किसी चीज की मांग आयी है, मैंने किसी को खाली हाथ नहीं भेजा। सोचता हूं कि तुम सारी चीजें नदारद देखकर क्या कहोगी ! मैं प्रतिदिन प्रतिक्षण तुम्हारे स्मरण में डूबा रहा हूं। दिन और अब जैसे-जैसे तुम्हारे लौट कर आने के नजदीक आते जा रहे हैं मैं व्याकुलता से तुम्हारा इंतजार कर रहा हूं। मगर मुसीबत यह है कि पिछले दस सालों से तुम मेरे सामने से कहीं जाती ही नहीं हो।

ये कसमसाते क्षण

यूं तो नारी का समूचा जीवन ही समस्याओं से जकड़ा एक जाल है, जिसका ताना-बाना कुछ तो भगवान ने ही पूरकर भेजा है और रही-सही कसर पूरी करने के लिए ये समाज, ये रूढ़ियां, ये परंपराएं और मर्यादाएं हैं।

पुरुष को तो अपनी उजड़ी दुनिया फिर से लहलहाने का जन्मसिद्ध अधिकार है, पर परित्यक्ता नारी के लिए तो आंसुओं की लड़ी में अपना जीवन पिरोने के सिवा कोई चारा ही नहीं होता। उसकी जिंदगी तो एक विधवा की जिंदगी से भी गयी-गुजरी होती है। वह न तो विधवाओं में है, न सधवाओं में। हर श्रृंगार एक कसक बनकर रह जाता है और हर आस एक बिखरा हुआ सपना। परित्यक्ता भी किसी की मां होती है। किसी परित्यक्ता के शिशु को भी प्यार के अभाव की [illegible] सहनी पड़ती है। वह पिता के लाड़ से वंचित रहता ही है, मां भी उसे [illegible] प्यार नहीं दे पाती। तब दिल टीस से [illegible] उठता है। इन थपेड़ों को पार कर[illegible] जब वह कर्मक्षेत्र में उतरती है तो [illegible] कोई आशा का द्वार नहीं सूझ[illegible] मुसीबत तब और भी हो जाती है [illegible] न तो वह 'फारवर्ड' घराने की होती है [illegible] 'बैकवर्ड' घराने की। मर्यादा और लो[illegible] लज्जा के विचार से किसी आफिस [illegible] टाइप खटखटाने से वह मास्टरी बे[illegible] समझती है। पर जब एम.ए. करने के [illegible] भी नौकरी नहीं मिलती तो जिंदगी [illegible] लाश की तरह मौत से भी भयानक [illegible] जाती है।

मेरी अपनी जिंदगी भी कुछ [illegible] कहानी के आसपास घूम रही है। वह [illegible] इतनी रिक्त, इतनी तिक्त हो गयी [illegible] कि राई से नन्हे क्षण भी पहाड़-जैसे [illegible] जाते हैं। दिन-रात इस दूभर जिंदगी [illegible] मुक्ति पाने का रास्ता सोचकर भी काम[illegible] नहीं हो पाती हूं।

—जया श्रीवास्तव, [illegible]

गृहिणी जीवन की समस्याएं

नौकरी एक बला

नौकरी उस समय कर ली थी, जब घर में बैठे-बैठे समय व्यतीत नहीं होता था। दो जून की रोटी थी। सारा कार्य निवटाकर भी समय काटे नहीं कटता था। पर आज वही नौकरी विकट समस्या बन गयी है। सात बच्चे हैं। बड़े-बड़े क्लासों की बड़ी-बड़ी फीसें। फिर हर बच्चे की उसकी अपनी जरूरतें ! पति खद्दर पहनने का उपदेश देते हैं। १८-१८ रु. के जूतों के बजाय उन्हें तीन रुपयों की हवाई चप्पल पहनाना पसंद है। यह सब देखते हुए मेरी नौकरी वरदान ही है। पर इससे अधिक अब एक समस्या बन गयी है। सारा दिन मशीन की तरह जुटी रहती हूं फिर भी घर का कार्य नहीं निबटता। यहां तक कि चैन से दो रोटी भी नसीब नहीं हो पातीं।

पूरे दिन एक पल की भी फुर्सत नहीं मिलती। शरीर भी अब जर्जर हो चला है। इतनी मेहनत के बावजूद अपने लिए पाव भर दूध भी नहीं बांध सकती। पहली प्राथमिकता बच्चों को देनी पड़ती है। उसके बाद ही मैं अपने बारे में सोच सकती हूं। और फिर मेरी तनख्वाह भी इतनी ज्यादा नहीं कि सारी जरूरतें पूरी कर सकूं।

मैंने सर्विस शुरू करते समय कई तरह की कल्पनाएं संजोयी थीं, पर आज सब सपने धूल में मिल गये हैं। सोचती हूं, मुझसे तो वे घरेलू औरतें ही अच्छी हैं, जिन्हें आराम तो भरपूर मिलता ही है, और सारी जरूरतें भी पूरी हो जाती हैं। कभी-कभी तो मुझे नौकरी बला-सी जान पड़ती है।

—सत्यवती वर्मा, दतिया (म. प्र.)

किस-किस को समझाइए

मैं देखने में एक हृष्ट-पुष्ट, किंतु रोगों से लदी महिला हूं। मेरे रोगों में 'लो ब्लड प्रेशर', 'कोलाइटिस' व दिल की कमजोरी मुख्य रोग हैं। डाक्टरों का कहना है कि मुझे तनाव पैदा करने वाला काम कम से कम करना चाहिए। साथ ही अधिक से अधिक विश्राम करना चाहिए।

मेरे पति प्राध्यापक हैं, तीन बच्चे—सभी पढ़ने वाले हैं, सबकी आकांक्षाएं भी बड़ी हैं। आय का बड़ा भाग पढ़ाई, मकान किराया व महंगे खाद्यानों में निकल जाता है। नौकर इस जमाने में मिलते नहीं,

मिलें तो ईमानदार नहीं होते। सच पूछिए तो हम मध्यवर्गीय परिवार नौकर रख भी नहीं सकते।

जब मेरी तबीयत अधिक खराब होती है, गृहस्वामी और बच्चे मिलकर घर-गृहस्थी संभाल लेते हैं। पर पास-पड़ोस की 'सदय' महिलाओं को यह सह्य नहीं होता। बकौल उनके, "अरे ! मिसेज अवस्थी का क्या है, वे तो मजे में पड़ी रहती हैं। सब काम तो अवस्थीजी व बच्चे करते हैं। हमारे घर का-सा हाल थोड़े ही है कि मर्द उठाकर पानी भी न पियें।"

काश ! उन्हें मेरी यथार्थ दशा समझने की शक्ति होती। क्या कोई भी गृहिणी अपने पति व बच्चों को अपनी असमर्थता में आवश्यकता से अधिक कार्य करते देख सुख अनुभव कर सकती है ? उसके लिए यह स्थिति पड़े-पड़े कितनी कष्टप्रद होती है, वे क्या जानें !

—श्रीमती शांति अवस्थी, लखनऊ
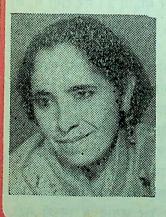
●

दो पाटों के बीच

मैं ... की एक ... हूं। बच्चों की ... —ऐसे बच्चों की जो ऊंची कक्षा... और गृहस्थी का प्रारम्भिक बोझ भी ... का प्रयत्न कर रहे हैं। सभी की ... चियों का साथ देना होता है और ... बिखरे युग से उनको बटोरना भी ... है। शुरू में व्योमबाला थी। अब ... और मां के सम्बोधनों में जकड़ ... दैनिक आवश्यकताओं ने नीले-सुनहरे ... से निकाल कर अध्यापकी के उत्तरदा... में पिरो दिया।

पति चाहते हैं, पत्नी स्मार्ट रहे। ... अलग अधिकार रखते हैं कि साक्षर ... पढ़ाये-लिखाये, काम देखे और उनके ... का खयाल रखे। 'दो पाटन के बीच ... साबत रहा न कोय...' वाली स्थिति ... जी-जान से कोशिश तो रहती है ... सभी को पूर्णता दें, मगर 'घर की ... दाल बराबर' रह जाती हूं। फिर भी ... संतुष्ट रहती हूं। अन्य पात्र भी— ... बाहर के—कहीं-न-कहीं से सुखी रहते ... जुड़े रहते हैं; हमारी इस जुड़न में ... यह कारण भी है कि मैं स्कूल में ... और घर के आंगन में स्कूल नहीं ... देती।

—राज छाबड़ा, ...

विवाहित महिलाएं अपनी समस्याएं रोच... ढंग से लिखकर भेजें। साथ में अप... चित्र, डाक-टिकट लगा तथा पता लि... लिफाफा भेजना आवश्यक है। —सम्पादक

इनके काम क्या हैं : ६

हमारे देश में अखिल भारतीय स्तर पर कुछ ऐसे प्रतिष्ठान काम कर रहे हैं जिनके सम्बंध में आवश्यक जानकारी उपयोगी है। गत अंक में आपने खादी और ग्रामोद्योग कमीशन के बारे में पढ़ा। प्रस्तुत है आविष्कार संवर्धन मंडल के बारे में एक रोचक, प्रामाणिक लेख

आविष्कार संवर्धन मंडल

● बलदेव वंशी

आविष्कार संवर्धन मंडल की स्थापना देश में आविष्कार-भावना को जगाने तथा आर्थिक सहायता द्वारा प्रोत्साहन देने—विशेषतया स्वतंत्र कामगरों, कारीगरों, तकनीशियनों, इंजीनियरों, छात्रों आदि में आविष्कार-बुद्धि का पथ-निर्देश करने के उद्देश्य से भारत सरकार द्वारा सन १९६० में की गयी थी। एक पंजीकृत सोसाइटी के रूप में यह मंडल औद्योगिक विकास तथा आंतरिक व्यापार मंत्रालय के शासकीय नियंत्रण में कार्य कर रहा है। इसके वर्तमान निदेशक हैं श्री आई. के. पुरी

मंडल मौलिक, व्यापार-योग्य और देश के लिए लाभदायक आविष्कारों पर ५०० से १०,००० रुपयों तक की राशि के पुरस्कार देता है, जो वर्ष में दो बार: २६ जनवरी और १५ अगस्त को, घोषित किये जाते हैं। मंडल ऐसे आविष्कारों को विकास के लिए, जो तकनीकी दृष्टि से विकसित होने योग्य तथा व्यापार-योग्य हों, प्रारूप आदि की संरचना के लिए अनुमानित धन-राशि का अनुदान भी देता है।

स्वतंत्र कामगरों के लिए : मंडल आविष्कारकों का तकनीकी पथ-प्रदर्शन करता है। वह प्रारूपों के विकास, संरचना प्रयोगशालाओं में प्रयोग तथा निर्माण-शालाओं में आजमाइश के लिए सुविधाएं उपलब्ध करता है। आविष्कारों के एकस्वी करण (पेटेंट कराने) में सहायता देता है और अपने मासिक-पत्रों— 'इन्वेंशन इंटेलिजेंस' तथा 'आविष्कार' में प्रकाशित
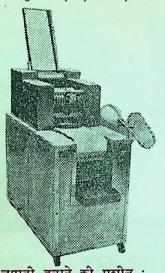
चपाती वनाने की मशीन :
आविष्कारक जे. जी. गज्जर

करके और प्रेस-रिलीजों, पुस्तिकाओं आदि द्वारा उनके व्यापारीकरण में सहायता करता है। आविष्कारकों की सुविधा के लिए मंडल ने एकस्व - निरीक्षण-केंद्र, पुस्तकालय तथा सूचना-केंद्र की स्थापना भी की है।

औद्योगिक कर्मचारियों के लिए! औद्योगिक कर्मचारियों में आविष्कार-बुद्धि को वढ़ावा देने के लिए मंडल ने एक योजना वनायी है। इसके अंतर्गत उद्योग अपने कर्मचारियों के ऐसे विचारों के विकास के लिए, जो तकनीकी दृष्टि से विकसित किये जाने योग्य तथा सामान्य रूप से उद्योग के लिए लाभदायक हों, मंडल से आर्थिक व तकनीकी सहायता प्राप्त कर सकते हैं।

छात्रों के लिए : छात्रों में आवि... भावना को जाग्रत करने तथा प्र... देने के लिए मंडल ने तकनीकी वि... में आविष्कार-सोसाइटियों की ... करने की एक योजना चलायी है। ये ... इटियां नये विचारों के आदान-प्र... लिए समय-समय पर गोष्ठियों का ... जन करेंगी और ऐसे नये विचारों के ... विकास की सम्भावना होगी, वित्ती... दान तथा तकनीकी सहायता के ... मंडल को भेजेंगी। इसके अतिरिक्त ... छात्रों के लिए वर्ष में एक बार ... प्रतियोगिता तथा अखिल भारतीय ... ष्कार-प्रतिभा प्रतियोगिता भी आ... करता है।

मंडल की कार्य-... वित्तीय अनुदानों तथा पुरस्का... लिए आवेदन-पत्र मंडल द्वारा ... प्रपत्रों पर ही स्वीकार किये जा... पहले मंडल के तकनीकी अधि... द्वारा इनकी जांच होती है। फिर ... जिन्हें तकनीकी दृष्टि से विका... समझा जाता है, मूल्यांकन के लिए ... षज्ञों के पास भेजे जाते हैं। मू... की जांच विशेष समितियों द्वारा की ... है, जो मंडल को अपनी सिफारिशें ... हैं। उनके आधार पर अंतिम निर्ण... जाता है।

मंडल में एक और ... सन् १९६७ में भारत सरकार ने ए... मंडल, 'आयात प्रतिस्थापन मंडल ... कार्या...

स्थापना की थी। इसका उद्देश्य आयात की दृष्टि से उपयोगी आविष्कारों के लिए ५०० से २५,००० रुपये तक के नकद पुरस्कार तथा सोने, चांदी और कांसे के शील्ड और प्रमाणपत्र प्रदान करना है। प्रशासनिक व्यय को कम करने की दृष्टि से इस मंडल का कार्यभार भी 'आविष्कार संवर्धन मंडल' को सौंपा गया है। इसकी कार्यप्रणाली भी उपर्युक्त मंडल की भांति ही है। किंतु दोनों मंडलों की समितियां पृथक-पृथक हैं। यह मंडल अब तक आयात-प्रतिस्थापन के लिए व्यक्तियों तथा उद्योगों को एक सोने की, नौ चांदी की तथा चौबीस कांसे की शील्डें तथा ८८,००० रु० के नकद पुरस्कार और प्रमाणपत्र दे चुका है। मंडल के निदेशक श्री आई. के. पुरी से मैंने प्रश्न किया—

जितने प्रपत्र आपके पास आते हैं उनमें से कितने प्रतिशत आप स्वीकार कर पाते हैं?

"हम केवल २० प्रतिशत को ही आर्थिक सहायता या पुरस्कार के लिए चुनते हैं, जिनमें से १० से १२ प्रतिशत तक ही पुरस्कृत होते या आर्थिक सहायता प्राप्त करते हैं। विकसित देशों में तो इनका औसत २ या ३ प्रतिशत तक ही है।"

निदेशक आई. के. पुरी

आयात-प्रतिस्थापन पुरस्कार में यह औसत कितने प्रतिशत हैं?

"आयात-प्रतिस्थापन में विदेशी मुद्रा की बचत होती है, फिर वे सभी वस्तुएं व्यापारिक महत्त्व भी रखती हैं, अतः जितने प्रपत्र आते हैं उनमें से ५० प्रतिशत को पुरस्कार देते हैं।"

आविष्कारकों की शिकायत है कि इन दोनों मंडलों में भेदभाव बरता जाता है और शक्ल देखकर पुरस्कार दिया जाता है?

बेल्ट क्रीट : बांध बनाने म सहायक कंक्रीट डालने की युक्ति
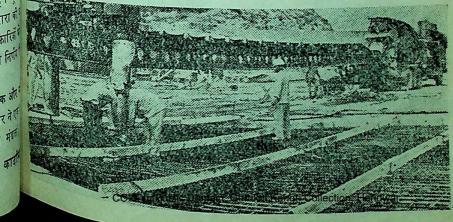
"कुछ लोग ऐसे निकल ही आते हैं जिन्हें शिकायत होती है, क्योंकि सब लोगों को पुरस्कार या सहायता देना सम्भव नहीं। अपने आविष्कार से सभी को स्वाभाविक लगाव होता है, किंतु हमें तो उसकी सार्वजनिक उपयोगिता देखनी होती है और दूसरों के साथ तुलना भी करनी होती है। हमारी यही कोशिश रहती है कि किसी के साथ बेइंसाफी न हो।"

क्या एक बार अस्वीकृत वस्तु पर दोबारा विचार किया जाता है ?

"हां, बार-बार अनुरोध किये जाने पर आविष्कारों पर पुनर्विचार भी कर लेते हैं। राजनीतिक दबाव भी होते हैं।"

क्या पुनर्विचार करने पर किसी आविष्कार को पुरस्कार भी दिया गया है ?

"अभी तक नहीं।"

पुरस्कारों पर धन-राशि निर्धारित करने में भी मनमानी और पक्षपात की शिकायतें हैं। इस सम्बंध में आपका क्या कहना है ?
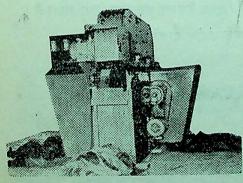
"पुरस्कार-समिति पुरस्कार के जिस समय निर्णय लेती है, उसी सम राशि के बारे में भी निर्णय हो जा

(निदेशक महोदय के अतिरि समिति के कुछ अन्य सदस्य भी पु समितियों में हैं। बल्कि पुरस्का के अध्यक्ष-पद पर भी हैं। तब यह आसान और सम्भव है कि वे ले चाहें मनवा लेने की स्थिति में 'विज्ञान और तकनीकी राष्ट्रीय ने अपनी रिपोर्ट में इस मंडल के बारे में कई आपत्तियां उठायीं हैं हमारी आशंकाओं की पुष्टि होती है।

जांच-समिति ने मंडल के कलापों के प्रति असंतोष प्रकट कर पुरस्कार-निर्णयों में अनावश्यक की शिकायत की है। आपने इस सम्ब क्या सुधार किये हैं ?

"पर्याप्त आर्थिक व्यवस्था न कारण हम आविष्कारों की जांच मूल्यांकन सम्बंधी निर्णय तुरंत पाते। इनमें विलम्ब होता है। जांच में बोर्ड को बाहर के तकनीकी पर निर्भर रहना पड़ता है। इस सब आर्थिक और संगठनात्मक कमि जिम्मेदार हैं। शीघ्र ही निकट भविष्य संगठनात्मक परिवर्तन होने जा रहे हैं

आविष्कार के एकस्वीकरण कैसे और क्या सहयोग देते हैं ?

"उपयुक्त प्रपत्रों को हम

नारियल का रेशा उतारने की मशीन

करण-वकील के पास भेज देते हैं। इस कार्य पर होने वाला सारा खर्च बोर्ड उठाता है।

यह 'उपयुक्त' देखने का कार्य तो आप स्वयं ही करते होंगे ?

"हां, यह मुझे ही करना होता है।"

लोगों का कहना है कि सब से पहले यहीं परेशानी आती है। जिसकी गाड़ी यहीं पटरी पर से उतर जाए, वह आगे सफल नहीं हो पाता। पुरस्कार के आकांक्षी आविष्कारक को यहीं निबट लेना पड़ता है, पहले कदम पर। यह भी एक सुखद संयोग है कि इस 'आविष्कार-संवर्धन मंडल' के निदेशक-पद को जिस दिन श्री आई. के. पुरी ने संभाला, उससे एक दिन पहले उन्हें 'चालक सुरक्षा नियंत्रण' के विकास के लिए ४,००० रु. का पुरस्कार प्राप्त हुआ था।

३१ जुलाई, ७२ को 'चालक सुरक्षा नियंत्रण' के अतिरिक्त चलचित्र-प्रदर्शन में 'दर्पण-पर्दा व्यवस्था' के विकास के लिए १०,००० रुपये 'प्रति-आवर्ती जेनरेटर—मोटर' के लिए ५,००० रु., 'गोली रक्षित हल्का हेलमेट', के लिए ५,००० रु. तथा 'नर व मादा मच्छर के प्यूपा पृथक करने की विधि' के लिए ५,००० रु. के पुरस्कार राष्ट्रपति द्वारा वितरित किये गये थे।

१९७१ से विज्ञान तथा तकनीकी वर्ग के असंगठित क्षेत्रों को बढ़ावा देने के लिए मंडल ने कई नयी योजनाएं प्रारम्भ
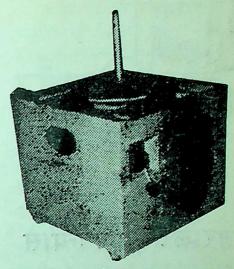
विद्युत-चालित कुम्हार-चाक

की हैं। इनमें पुरस्कृत आविष्कारों के व्यापारीकरण के लिए आविष्कारों को राष्ट्रीय बैंकों से ऋण दिलाने में सहायता तथा व्यापार एवं उद्योग की ओर से अनुसंधान तथा विकास की योजनाएं सम्मिलित हैं। अब तक मंडल ने ३४६ आविष्कारों के विकास एवं एकस्वीकरण के लिए आर्थिक सहायता दी है। ३२५ आविष्कारों के लिए ३.७ लाख रु. और १५७ आयात-प्रतिस्थापनों के लिए २.१ लाख रु. के पुरस्कार तथा ४ स्वर्ण-शील्ड, २४ रजत-शील्ड और ४४ कांस्य-शील्ड प्रदान किये हैं।

सी १/१७३ लाजपत नगर, नयी दिल्ली-२४

लोग सोचते हैं कि तर्क शब्दों पर हावी होता है, किंतु वस्तुतः शब्द ही तर्क पर हावी रहते हैं। —बेकन
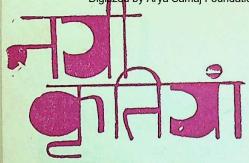
अंतराल : एक उपन्यास

हिंदी पाठक मोहन राकेश के नाम से भलीभांति परिचित हैं। कथाकार के रूप में उनका एक निश्चित स्थान है। एक लम्बे अंतराल के बाद उनका यह दूसरा उपन्यास सामने आया है।

'अंतराल' का लेखक अपनी अभिव्यक्ति और भावबोध में नया है। वह श्यामा और कुमार, इन दो चरित्रों के माध्यम से स्त्री-पुरुष के सम्बंधों की चर्चा करना चाहता है।

श्यामा का विवाह साढ़े तीन वर्ष पूर्व हुआ था और उस बीच वह केवल डेढ़ वर्ष अपने पति देव के पास रही। विधवा होने के बाद वह एक अजीब-सी स्थिति का अनुभव कर अपने व्यतीत को भूल जाने का उपक्रम करती है। वह सोचती है कि देव के मन में उसे लेकर कोई भावना थी तो केवल अधिकार की। उसने शायद कभी अपने पति को प्यार नहीं किया। इसके बावजूद इस अंतहीन संसार में उ... अनुभव किया कि एक पुरुष का ... नितांत आवश्यक है। इसी तलाश में उस... भेंट कुमार से हो गयी। कुमार की स्थि... भी लगभग समान है। उसने विवाह कि... था और फिर पत्नी को छोड़ दिया ... क्योंकि वह उसका साथ निभा नहीं सक...

समान स्थितियों के बावजूद कुमार और श्यामा के चिंतन में एक गहरी ... स्पष्ट नजर आती है। वह कहता है— "यह जिंदगी जानवरों से भी बदतर ... कि जिसे आदमी अंदर से नफरत क... उसके साथ दिन-रात एक घर में रंधा र... जिसके शरीर की गंध तक से जी मितला... उसके साथ एक बिस्तर में सोने का नाट... करता रहे ?" कुमार का विद्रोही म... समूची समाज-व्यवस्था का प्रतिक... करता है। उसे यह बेमानी लगता है कि स्त्री और पुरुष एक सड़ांध और घुटन ... वातावरण में दबते रहें और अप... स्वाभाविकता के साथ विश्वासघात करें। यदि एक परम्परा के रखने के लिए ... आवश्यक है तो उसे तोड़ देना चाहिए। झूठे रिश्तों को निभाने से बेहतर है कि आदमी आठ घंटे मशीन की तरह काम करे और नींद आने तक किसी न किसी ... में मन को डुबाये रखे। इस तरह आज ... कल करने की समस्या भी कुछ बेहतर ढं... से हल हो जाती है।

श्यामा द्वंद्वों और छलनाओं के बीच तैरती हुई एक नारी है। वह कुमार ...

आकर्षण से प्रभावित हुए बिना नहीं रहती। वह उसके पास अनायास आ जाती है, लेकिन स्वयं समर्पित होने में उसके भीतर का कुछ उसे काट-काट जाता है। वह कुमार के पास आकर दूर जाती है, फिर आती है, फिर चली जाती है, और फिर... एक अवसर यह भी आता है कि वह अपनी बेटी को देखकर अनुभव करती है कि जैसे वह एक जंगली जानवर है, जिसे उसका मृतक पति उसके पास छोड़ गया है।

उपन्यास का अंत दोनों के अलगाव में है, लेकिन दूर रहकर भी श्यामा के लिए कुमार प्रतीक बना रहता है। वह कहती है—"हो सकता है फिर भी कभी तुम्हें आने के लिए लिखूं, पर आओ तो कोई ऐसी-वैसी बात सोचकर मत आना।"

सच पूछा जाए तो श्यामा की एक कहानी उसकी शारीरिक आकांक्षाओं की है, दूसरी उसके आंतरिक उद्वेगों की। पर ये दो कहानियां जिन अनेकानेक कहानियों से टकराती, खंडित होती और जुड़ती चलती हैं, उनके अपने कितने-कितने संदर्भ हैं—वे संदर्भ जो कि यथार्थ भी हैं और स्वप्न भी। इसी जमीन के बीच में कुमार की कहानी टकराती और खंडित होती आगे चलती है। इन दो बिंदुओं के बीच की खाई में हैं रेल की पटरियां, प्यालियों की तलछट, मौन आग्रह, रिसते अंग, गिरिजाघर का त्रास और न जाने कौन-कौन सी आवाजें!

मोहन राकेश का लेखन वास्तव में आधुनिक रहा है। उन्होंने आधुनिकता के संदर्भ में प्रतिमानों की खोज की है। सामाजिक विघटन और सम्बंध-हीनता आज की नियति रही है। विवाह-जैसी संस्था का अवमूल्यन और फिर भी स्त्री-पुरुष के सम्बंधों की आकांक्षा आधुनिक जीवन की एक विडम्बना है। राकेश ने श्यामा के माध्यम से आज की भ्रमित नारी का सही चित्रण किया है। वह कुमार का सान्निध्य चाहती हुई भी उसे सहज समर्पण नहीं करती और फिर सहज समर्पण के बाद उसे स्वीकार भी नहीं करती। कुमार इस स्वीकार्य और अस्वीकार्य की भूमिका में नितांत एकाकी रह जाता है। मनोविज्ञान के आधार पर भी दोनों चरित्र अपनी स्थिति में मजबूत हैं।

राकेश की अपनी शैली है, जो धीरे-धीरे चलकर एक गहरा प्रभाव छोड़ती जाती है। अपने इस उपन्यास के माध्यम से उन्होंने हिंदी के कथा-जगत को एक बार फिर समृद्ध किया है। केवल एक प्रश्न अंत तक रह जाता है कि क्या इस प्रणय-कथा के लिए यह आवश्यक था कि लेखक कस्बाई बस्ती से बम्बई ही आता? या कस्बाई बस्ती क्या समूचे कलेवर के लिए इतनी आवश्यक थी? इससे कथा का अनावश्यक विस्तार हुआ है, लेकिन आखिर कोई भी कृति अपने आपमें पूरी कभी नहीं हुई, यह भी नहीं है।

● रा. अ.

एक निबंध-संग्रह

लघु निबंधों का संग्रह 'छोटी-सी पहचान' अश्क के बहुमुखी सर्जक का आईना है या यों कहिए कि जीवन के कुछ पड़ाव तथा कुछ जीवंत क्षणों की एक सशक्त जानकारी है । कहने को इन्हें संस्मरणात्मक निबंध कहा जा सकता है किंतु इनमें कहानी की तीव्र सम्वेदना, उपन्यास की सम्पूर्णता और निबंधों का सुगठन इनको झरोखों से निकाल उन्मुक्त आकाश में बिखरा देता है । निबंधों में अश्क का यथार्थवादी लेखक एक, दो स्थलों पर मुंहफट भाषा का प्रयोग कर गया है अन्यथा सीधी सच्ची भाषा में 'कलम-घसीट', 'बिना विचारे ब्याह करे', 'फिल्म स्टूडियो में बीरबल'-जैसे सामान्य विषयों को भी अत्यंत रोचक शैली में प्रस्तुत किया गया है । उपलब्धि और मनोरंजन, दोनों ही दृष्टियों से पाठक इन्हें पसंद करेंगे ।

लघु नाटक-संग्रह

विवेच्य पुस्तक डॉ. लक्ष्मीनारायण-लाल के छह लघु नाटकों का संग्रह है । अधिकांश नाटक विषय और रंग-शिल्प की दृष्टियों से प्रयोगात्मक हैं । प्रयोग क्षेत्र में डॉ. लाल अग्रणी नाटक-कारों में हैं । दर्पण, मादा कैक्टस, करफ्यू आदि नाटकों के द्वारा नाट्य-क्षेत्र में लेखक अपना स्थान बना चुका है । प्रस्तुत पुस्तक इसी श्रृंखला की एक कड़ी है । आधुनिक जीवन में आ रही विशृंखला, असुरक्षा की भावना, विचारों का [illegible] चार और ओढ़े हुए मुखौटों ने व्यक्ति से उसका व्यक्तित्व छीनकर उसे भीड़ की संज्ञा दे दी है । नाटककार उस भीड़ में व्यक्ति को तलाश करता है । यही कारण है कि 'केवल तुम और हम', 'दूसरा दरवाजा', 'फिर बताऊंगा', 'हाथी, घोड़ा, [illegible]' और 'काफी हाउस में इंतजार' में जहां पाठक स्वयं को नाटक में कहीं-न-कहीं खड़ा पाता है वहां 'गंगा धीरे बहो' में तटस्थ दर्शक की भांति तालियां [illegible] पीटने लगता है । विषय और शिल्प की दृष्टि से इन नाटकों में नाटककार नाटक की परम्परागत 'इमेज' को तोड़ जीवन में गहरे पैठ गया है, और वहीं से जीवन के सुबकते क्षणों को मुखरित करता है।

● डॉ. शशि शर्मा

अंतराल : लेखक—मोहन राकेश; प्रकाशक—राजकमल प्रकाशन, दिल्ली-६; पृष्ठ २१८ : मूल्य १६ रुपये

छोटी-सी पहचान : लेखक — उपेन्द्रनाथ अश्क; प्रकाशक—नीलाभ प्रकाशन, इलाहाबाद; पृष्ठ—१६९; मूल्य-६ रुपये

दूसरा दरवाजा : लेखक — डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल; प्रकाशक—लिपि प्रकाशन, कृष्णनगर, दिल्ली-५१; पृष्ठ—१६[illegible]; मूल्य—७.५०

आपका भविष्य
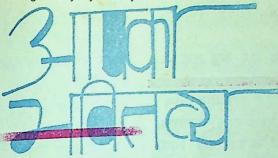
● पंडित गोपेशकुमार ओझा

मार्च मास फाल्गुन कृष्णा द्वादशी को प्रारम्भ होकर चैत्र कृष्णा द्वादशी को समाप्त। १ मार्च को वैष्णवों का फाल्गुन कृष्णा एकादशी का व्रत। २ को सायंकाल प्रदोष। ३ को महाशिवरात्रि व्रत। ४ को स्नान, दान, श्राद्ध के लिए अमावास्या। ६ को द्वितीया का चंद्र-दर्शन। ८ को गणेश चतुर्थी। १२ को होलाष्टक प्रारम्भ। १४ को दिन के १०—३४ पर सूर्य-संक्रांति। सूर्य मीन राशि में प्रवेश करेंगे। १५ को आमलकी एकादशी व्रत। १६ को सायंकाल प्रदोष। १८ को व्रत, स्नान, दान आदि के लिए पूर्णिमा। सायंकाल ८ बजे के बाद होलिकादहन (होली मंगलेगी) १९ को होलिका-भस्म-धारण, वसंतोत्सव, धुलेंडी। २२ को गणेश चतुर्थी व्रत। ३० को पापमोचिनी एकादशी व्रत। ३१ को रात्रि के ७—४१ के बाद महावारुणी पर्व।

इस मास में जन्मे बालक

जिन बच्चों का जन्म निम्नलिखित तारीखों और समयों में हो, उनकी नक्षत्र-शांति २७वें दिन कराना उचित है।

ता० ६ की रात्रि (७ को प्रातः) २ बज कर ३६ मिनट से ता. ८ को रात्रि के ११—५२ तक। ता. १५ को दिन के ३ बजकर १८ मिनट से ता. १७ को दिन के २-२० तक। ता. २४ को रात्रि के १२—२७ से ता. २७ के प्रातः ६—३४ तक।

२१ मार्च से २० अप्रेल तक

२० मार्च तक व्ययाधिक्य। इसके बाद व्यय में कमी और आय में अधिकता। कोई भी महत्त्वपूर्ण पत्राचार ५ ता० पहले कर लें क्योंकि उसके बाद २७ ता. तक पत्र-व्यवहार या यात्राओं में बाधा-योग। सम्भवतः पूर्व-निश्चित यात्राक्रम में कोई परिवर्तन भी करना पड़े। प्रभाव और प्रतिष्ठा की दृष्टि से यह मास उत्तम। उच्चाधिकारियों से सम्पर्क स्थापित करने में सुलभता और सफलता। २४ ता० के बाद लोकप्रियता में वृद्धि और मनोभि-

लषित सम्पर्क से हर्ष। ६, १५, १८, २२, २६ शुभ।

२१ अप्रैल से २२ मई तक

प्रथम तीन सप्ताह में लाभ योग उत्तम। तत्पश्चात जमीन-जायदाद या भोगोपकरणों में सामान्य से अधिक व्यय। यदि किसी विशेष धनराशि का आगम सम्भावित है तो ५ तक उसकी प्राप्ति। यदि तब तक न हो तो फिर २७ के बाद प्राप्ति। इस मास में कार्य सम्वंधी विशेष स्फूर्ति। यदि आप कोई महत्त्वपूर्ण कार्य करने में सचेष्ट हैं तो उसमें सफलता। संतान या विद्या-विषयक कार्यों में कोई रुकावट हो तो चिंतित न हों; मासांत में प्रगति ठीक। ग्रह स्थिति आपके अनुकूल। इसके परिणाम-स्वरूप सफलता और धनागम की उपलब्धि। ४, ६, १३, १६, २२, २३, २६ शुभ।

२३ मई से २१ जून तक

प्रभाव-क्षेत्र के विस्तार तथा लाभ के लिए यह मास उत्तम। २३ से ३० मई तक जन्मे व्यक्तियों को कोई विशेष हर्ष-प्रद सफलता। २० तक आप उच्च अधि-कारियों से विशेष लाभ उठा सकते हैं। यदि कार्य-विस्तार की कोई योजना चल रही है या पदोन्नति का प्रसंग उपस्थित है तो १८ के बाद सफलता सम्भावित। स्वास्थ्य के लिए यह मास बहुत अनुकूल नहीं, विशेषतः छोटे बच्चों के लिए। प्रथम तीन सप्ताह व्यय पर संयम जरूरी। २६ मई तथा ४ से ६ जून तक ज... व्यक्तियों को कार्य में झंझट, परि... विशेष और आराम कम। ६, १३, १... १६, २२, २७ शुभ।

२२ जून से २२ जुलाई तक

इस मास में कुछ ग्रह अनुकूल, परि...णामस्वरूप भाग्योदय, व्यापार सम्बं... सफलता, उच्च अधिकारियों की कृ... प्राप्ति आदि शुभ फल होंगे। कुछ ग्रह प्रति...कूल, फलस्वरूप दाम्पत्य सुख में कमी, सम्बंधियों से तनाव या कलह एवं भ... या रोग प्रयुक्त अशांति का अनुभव। इ... मास यात्रा सम्भावित। महत्त्वपूर्ण पत्रों के आने में विलम्ब। २७ के बाद मनो...नुकूल समाचार। ४ से ६ जुलाई तक जन्मे व्यक्तियों को शारीरिक अस्वास्थ्य व... मानसिक तनाव का योग। १, ४, ६, १... १६, २३, २७ शुभ।

२३ जुलाई से २२ अगस्त तक

प्रथम दो सप्ताहों में प्रयत्नों के बाव...जूद मास के उत्तरार्ध में ही सफलता। आर्थिक दृष्टि से मास उत्तम। द्रव्य-प्राप्ति में विलम्ब से चिंतित न हों। प्राप्ति अव...श्यंभावी। विदेश-यात्रा के इच्छुक लोगों को तीन सप्ताह बाद सफलता का योग। शत्रु-दमन के लिए प्रारम्भिक पच्चीस दि... विशेष अनुकूल। उसके बाद कुछ दि... प्रतिपक्षियों का जोर। ४ से ६ तक झगड़ा मोल न लें। स्वास्थ्य का भी विशेष ध्या...

रखें। १३, १४, २४, २६, २८, २९ शुभ।

२३ अगस्त से २२ सितम्बर तक

धनागम के लिए मास साधारण, किंतु किसी नवीन समागम से हर्ष। सामाजिक कार्यों में विशेष भाग। इस मास जिन आकर्षक व्यक्तियों के सम्पर्क में आप आएंगे उनसे आह्लाद ही नहीं भविष्य में आर्थिक लाभ भी। वयस्क व्यक्तियों को संतति सम्बंधी परेशानी। कार्य-विस्तार या पदोन्नति में विलम्ब। सम्भवतः अगले मास में कार्य बने। ६, १३, १४, १६, २२, २७ शुभ।

२३ सितम्बर से २२ अक्तूबर तक

जमीन, जायदाद या गृह सम्बंधी कार्यों की ओर विशेष ध्यान की जरूरत। भू-सम्पत्ति के क्रय, विक्रय में सफलता। मासांत में संतान सम्बंधी कार्यों की ओर विशेष ध्यान देना पड़ेगा। चतुर्थ सप्ताह में किसी आकर्षक व्यक्ति से समागम और हर्ष। व्यापारी वर्ग किसी नवीन साझेदारी में कार्य करें। २० के बाद आपके कार्यों में अड़चनें। उनसे एक मास के बाद ही निवृत्ति। नौकरी के लिए उद्योग करने वालों को नवीन कार्य की सम्भावना। आर्थिक तथा व्यावसायिक कार्यों के लिए समय विशेष अनुकूल। २२ से ३० सितम्बर तक जन्मे लोगों को विशेष हर्ष तथा सफलता का योग। ४, ९, १३, १६, २२, २३, २९ शुभ।

२३ अक्तूबर से २१ नवम्बर तक

इस मास में यात्रा का विशेष योग। महत्त्वपूर्ण पत्रों की प्राप्ति। २६ के बाद जमीन, जायदाद के क्रय, विक्रय या किराये पर लेने-देने के लिए समय अनुकूल। २० मार्च तक संतान सम्बंधी कार्यों की ओर विशेष ध्यान की जरूरत। नवीन समागम से हर्ष, विद्या में उन्नति। मास के अंत में वस्त्र, अलंकार तथा भोगोपकरणों पर विशेष व्यय। रुकी आय की २७ के बाद या अग्रिम मास में प्राप्ति। ८, ९, १५, १८, २२, २९ शुभ।

२२ नवम्बर से २२ दिसम्बर तक

गृह में उत्सव या किसी शुभ कार्य की योजना। लेखकों को यश-प्राप्ति। भाग्योदय के लिए समय अनुकूल है। पदोन्नति या नवीन कार्य के लिए मासांत में परिस्थिति अनुकूल। इस मास में आय-योग अच्छा है परंतु कुछ ग्रहों के कारण व्ययाधिक्य भी, अतः व्यय पर संयम रखें। २४ के बाद संतान सम्बंधी हर्ष। साझेदारी में कुछ असंतोष। ४ से ७ दिसम्बर तक जन्मे लोगों को विशेष परिश्रम और संघर्ष का योग। १, १०, १९, २६, २९, ३० शुभ।

२३ दिसम्बर से २० जनवरी तक

इस मास में बल और स्फूर्ति का विशेष संचार। अंतिम सप्ताह में व्ययाधिक्य का योग, परंतु लाभ भी अच्छा।

बेहतरीन हॉकिन्स

(यह प्रेशर कुकर आपका और भी ज़्यादा पैसा बचाएगा!)
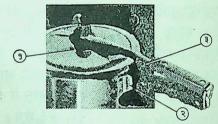
लाखों गृहिणियाँ जानती हैं कि हॉकिन्स प्रेशर कुकर सबसे ज़्यादा पैसा बचाता है। यह खाना सबसे जल्द पकाता है—इसलिए ईंधन का ख़र्च सबसे कम होता है। इसकी अनोखी डिज़ाइन ऐसी है कि यह सबसे कम तकलीफ़ देता है और इसके 'गास्केट' या 'सेफ़्टी वाल्व' जैसे हिस्से बदलने पर सबसे कम ख़र्च होता है।

विदेश में पी.सी.ए. अनुसंधान को मान्यता: अब, पी.सी.ए. के पाँच साल के विकास-कार्य ने हॉकिन्स को और बेहतर बना दिया है। और ब्रिटिश कम्पनी ने इसमें किए गए सुधार को मान्यता दी है और अपनी मूल डिज़ाइन से बेहतर मान कर उसकी तारीफ़ की है। (पेटेण्ट्स पेण्डिग)

क्या-क्या सुधार हुए: ढक्कन के 'हैण्डल बार' १ और 'हैण्डल ब्रेकेट' २ पर अब ज़ंग नहीं लगता क्योंकि उन्हें विशेष रूप से विकास की गई ऐसी धातुओं के मेल से बनाया गया है जिन में लोहे का नाम नहीं। इसके अलावा, ढक्कन का 'हैण्डल बार' 'पिवॉट' ३ पर आसानी से सरकता है इसलिए, ढक्कन अपने आप ठीक ढंग से बैठ जाता है और 'कुकर बॉडी' को आसानी से मज़बूती के साथ बंद कर देता है। इस प्रकार हॉकिन्स और भी कम तकलीफ़ देनेवाला और टिकाऊ बन गया है और आपका और भी ज़्यादा पैसा बचाता है। फिर भी इसकी क़ीमत उतनी ही।

निर्माता: प्रेशर कुकर्स एण्ड एप्लाएन्सेज़ (प्राइवेट) लिमिटेड,
पी. ओ. बॉक्स १५४२, बंबई-१

हॉकिन्स

खाना सबसे जल्द पकाता है
सबसे कम तकलीफ़
सबसे अधिक सुरक्षा!

OBM-0229 Hin

उत्तर। छोटी-छोटी यात्राओं का भी योग। नौकरी के लिए प्रयत्नशील व्यक्तियों को चतुर्थ सप्ताह में विशेष सफलता की आशा। उधार देने में सावधानी बरतें। २ से ४ जनवरी तक जन्मे व्यक्तियों को मानसिक उद्वेग तथा शारीरिक श्रम। २, ७, ११, २०, ३० शुभ।

२१ जनवरी से १९ फरवरी तक

२१ से २६ जनवरी तक जन्मे व्यक्तियों के भाग्योदय या अन्य हर्षपूर्ण कार्यों के लिए स्वर्ण-संयोग। ऐसा अनुकूल समय बहुत कम उपस्थित होता है। विशेष धनागम, साथ ही २६ तक व्यय में भी अधिकता। अंतिम सप्ताह जिस कार्य में आप संलग्न होंगे उसमें सफलता। मासांत में किसी सुखद यात्रा का भी योग। २, ७, ११, २०, ३० शुभ।

२० फरवरी से २० मार्च तक

नवयुवक तथा नवयुवतियों के विवाह स्थिर करने के लिए समय बहुत अनुकूल। धनागम का सुंदर योग है। चतुर्थ सप्ताह में विशेष व्यय। जमीन, जायदाद या गृह सम्बंधी कार्य उलझे रहेंगे। २७ के बाद स्थिति ठीक। ४ और १८ मार्च को जन्मे लोगों के कार्य-कलाप या व्यवसाय में परिवर्तन। १, १०, १६, २६, २९, ३० शुभ।

--९३ दरियागंज, दिल्ली--६

अजरामरवत् प्राज्ञो विद्यामर्थं च चिन्तयेत्।
गृहीत इव केशेषु मृत्युना धर्ममाचरेत्॥
(हितोपदेश)

--बुद्धिमान मनुष्य अपने को 'कभी बूढ़ा न होऊंगा और कभी न मरूंगा'--यह समझकर विद्या और धन-संचय का विचार करे। मृत्यु ने चोटी को आ पकड़ा है, ऐसा सोचकर तत्काल धर्म का आचरण और दान करे।

अप्रियं यस्य कुर्वीत भूयस्तस्य प्रियं चरेत्।
(महाभारत, शांतिपर्व)

—जिसके साथ कार्य-कारणवश कोई अप्रिय आचरण का व्यवहार हो जाए उसके साथ पुनः प्रिय आचरण भी करना चाहिए, ऐसा करने में संकोच नहीं करना चाहिए।

तीक्ष्णकाले भवेत्तीक्ष्णो मृदुकाले मृदुर्भवेत्।
(म० शा०, ७०)

--मनुष्य को जहां गरम होने की आवश्यकता हो वहां गरम होना चाहिए और जहां नरम होने की अपेक्षा हो वहां नरम। सदा गरम और नरम रहना उचित नहीं होता।

अलुब्धं बुद्धिसम्पन्नं सर्वकर्मसु योजयेत्।
(म० शा० ७०)

—किसी भी काम में ऐसे ही पुरुष को नियुक्त करना चाहिए जो बुद्धिसम्पन्न हो और लोभी न हो, क्योंकि लोभी होने पर वह अपना ही स्वार्थ-साधन करने लगेगा।

—ब्रह्मदत्त शर्मा,
बी—१२४, सरोजनीनगर, नयी दिल्ली-२३

सार-संक्षेप

● मुश्ताक अहमद यूसुफी

राष्ट्रीय जूता

ख्वाजा मुजफ्फर जलेसरी १९५ पत्रकार के रूप में दारा-उ रियासत की यात्रा को गये। तीन तक अपनी नियमित अनियमितता के डायरी लिखते रहे, जिसके कुछ अंश चारपत्रों की शोभा बन चुके थे।

ख्वाजा के कथनानुसार रियासत अंगरेजों से स्वतंत्र हुए अधिक समय बीता, पर इस थोड़े से समय में देश आर्थिक दशा इतनी अच्छी हो गयी है अब उपद्रवों में लोग सोडे की बो न फेंककर बियर की बोतलें फेंकते जनता इतनी बुद्धिमान और 'ओरिज हो चली है कि यदि उसे जीविका के ९ लाख, ९९ हजार, ९ सौ ९९ तरीके भी बताये जाएं तो वह दस-लाख
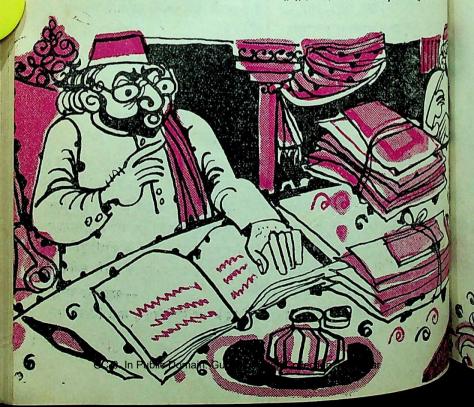
मुश्ताक अहमद यूसुफी पाकिस्तान के प्रतिष्ठित व्यंग्यकार हैं। अपनी अद्भुत शैली और सटीक व्यंग्य के कारण उन्होंने उर्दू साहित्य में एक विशिष्ट स्थान बना लिया है। प्रस्तुत व्यंग्य 'राष्ट्रीय जूता' के प्रकाशित होते ही पाकिस्तान के साहित्यिक और राजनीतिक क्षेत्रों में तहलका मच गया था। इस श्रेष्ठ व्यंग्य का सार-संक्षेप प्रस्तुत कर रहे हैं --सुरजीत

तरीका ही इस्तेमाल करेगी। नौकरी-पेशा-वर्ग में अधार्मिकता फैल रही है। व्यापारी-वर्ग खुदा का कायल है, और अपने हाथ की सफाई को ईश्वरीय कार्य कहता है। दो साल पहले जो टटपूंजिये दूकानदार बस के लिए कतार में सिर झुकाये खड़े रहते थे, वे आज लम्बी-लम्बी मोटरें दौड़ाते फिरते हैं।

दूकानों में हर चीज मिलती है, पर राशनकार्ड पर। राशनकार्ड हासिल करने के लिए एक और कार्ड लेना पड़ता है और यह कार्ड केवल भाग्यवानों को मिलता है। कल के लौंडे बुजुर्गों को तपाने के लिए ऐसी-ऐसी हरकतें करते हैं जो बेचारे बुजुर्गों ने कम-से-कम पच्चीसों साल से नहीं कीं। जो माता-पिता थोड़े-बहुत दूरदर्शी हैं, वे अपनी

लेखक
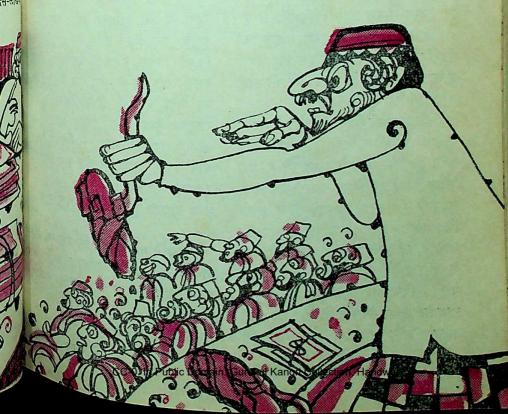
संतान के पद-चिह्नों पर चलने का प्रयत्न कर रहे हैं। हर शाम अपना नया फैशन लाती है। सुंदर महिलाओं की वेश-भूषा देखकर ख्वाजा जलेसरी को पहले-पहल बड़ा तरस आया कि बेचारियों को तन ढांपने के लिए पूरा कपड़ा नहीं जुड़ता, लेकिन बाद में उन्हें पता चला कि जो महिलाएं वेश-भूषा में ज्याद। कपड़ा लगाती हैं, उनका सम्बंध निर्धन परिवारों से है। लड़कियों की 'फिगर' (शारीरिक अनुपात) पर जितनी नजरें प्रति-वर्ग इंच यहां पड़ती हैं, उतनी सिनेमा के परदे पर भी नहीं पड़ती होंगी।

रियासत की संसद में पांच सौ सदस्य हैं, जो छह सौ पार्टियों का प्रतिनिधित्व करते हैं। जो सब से कम बोलता है, उसे 'स्पीकर' कहते हैं। हर राजनीतिक पार्टी उग्रवादी है और दायें या बायें पंथ से सम्बंधित है। उनके साथ समतावादी भी पाये जाते हैं, पर कहीं-कहीं। ये 'सड़क के बीच में चलनेवाले' कहलाते हैं। दुर्घटनाओं में ये ही अधिक मारे जाते हैं। एक विदेशी राजनीतिज्ञ का कथन है कि यहां की सबसे मजबूत और लोकप्रिय पार्टी 'काकटेल पार्टी' है। ख्वाजा ने सैकड़ों पेशेवर से इंटरव्यू के बाद लिखा है कि ज आदमी स्वयं नशे में न हो, उन नेता बात समझ में नहीं आती। कुछ दि यह नया फैशन चल पड़ा है कि हर अपने जूते की नोक पर किसी नेता की तसवीर बनवा लेता है और पार्टी के दफ्तर में विरोधी पार्टी का झाड़न के रूप में इस्तेमाल किया जा नागरिक प्रतिद्वंद्विता इतनी विकरा चुकी है कि यार लोग अन्य शहरवा अपनी जेल तक में नहीं रहने देते को जेल में रहनेवाले यहां 'जनता कहते हैं)।

ख्वाजा जलेसरी जिन कोलाह दिनों में उस रियासत की राजधानी पहुंचे, उन दिनों संसद में 'राष्ट्रीय बिल' (प्राइवेट) पेश हो चुका था। यह हो रहा था कि जब देश में हर का जूता प्रचलित है तो किस जूते राष्ट्रीय जूता घोषित किया जाए? वाद-विवाद को ख्वाजा ने गैलरी से और अपनी डायरी में कैद कर लिया

११जून, १९५६

आज उस्ताद नाशाद का भाषण गया।

शेख ने मुझे बताया कि जैसे मुर्गे मौलवी को अपनी आवाज सुनने चस्का होता है, उसी प्रकार मास्टर का मन राष्ट्रीय डांट-डपट से नहीं भर राजनीति से उनका सम्बंध बहुत

बल्कि शारीरिक रहा है। अपने जिले के हर उभरते लीडर को किसी न किसी जमाने में बेंत के द्वारा ऐसे टेढ़े सवाल हल करा चुके हैं—"अगर एक आदमी एक साल में दो एकड़ अनाज खाता है तो तीन करोड़ आदमियों को कितने देशों की आवश्यकता पड़ेगी?" १९५० में भी लड़कों को वे यही क्लासिकल सवाल दिया करते थे कि अगर एक आने में बारह लंगड़े आम आते हैं तो बारह आने में कितने आयेंगे! एक बार एक बुद्धिमान लड़के ने हाथ उठाकर जवाब दिया—"एक!" वे फौरन समझ गये, बोले—"कुंजड़े के बच्चे! मैं सवाल पूछ रहा हूं, सब्जीमंडी का भाव नहीं।"

उनकी असल जिंदगी रिटायरमेंट के बाद शुरू होती है। स्कूल से छूटते ही सीधे उन्होंने संसद का रुख किया। वहां एक अरसे तक उनके मुंह से "प्यारे बच्चो ... मेरा मतलब है जनाबेवाला ..." निकल जाता था। अभी यह आदत ठीक से छूटी न थी कि अपने अनुभव और प्रसिद्धि के आधार पर उन्हें दल का मुख्य सचेतक चुन लिया गया। वे जी लगाकर काम करते हैं, और अगर काम न हो तो बाहुबल से पैदा कर लेते हैं। अपने दल को संसद में हंका कर लाते हैं और डिवीजन के बाद सदस्यों के कान गिनते हैं, फिर जोड़ को दो से बांटकर उपस्थित सदस्यों की सही संख्या पता कर लेते हैं।

स्पीकर को सम्बोधित करने के बजाय उन्होंने सदस्यों को सम्बोधित करते हुए

हेडमास्टरी स्वर में ललकारा—"प्यारे लीडरो ! कौम से जो तुम्हारे हैं बरताव, सोचो ऐ मेरे प्यारे और शरमाओ!"
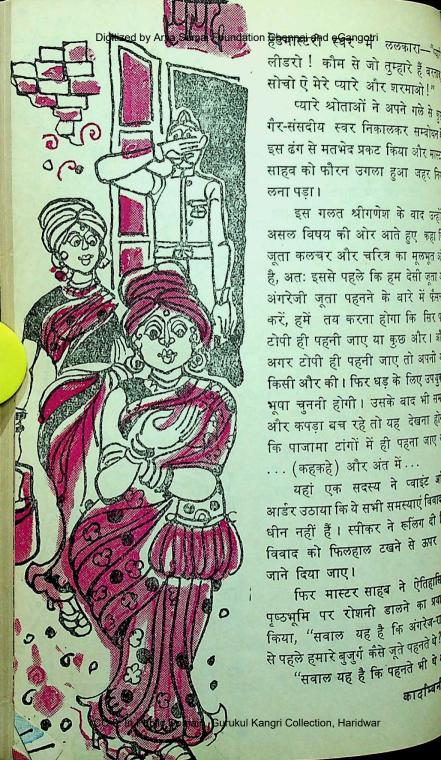
प्यारे श्रोताओं ने अपने गले से कुछ गैर-संसदीय स्वर निकालकर सम्बोधन के इस ढंग से मतभेद प्रकट किया और मास्टर साहब को फौरन उगला हुआ जहर निगलना पड़ा।

इस गलत श्रीगणेश के बाद उन्होंने असल विषय की ओर आते हुए कहा कि जूता कलचर और चरित्र का मूलभूत अंग है, अतः इससे पहले कि हम देसी जूता या अंगरेजी जूता पहनने के बारे में फैसला करें, हमें तय करना होगा कि सिर पर टोपी ही पहनी जाए या कुछ और। और अगर टोपी ही पहनी जाए तो अपनी या किसी और की। फिर धड़ के लिए उपयुक्त भूषा चुननी होगी। उसके बाद भी समय और कपड़ा बच रहे तो यह देखना होगा कि पाजामा टांगों में ही पहना जाए या . . . (कहकहे) और अंत में . . .

यहां एक सदस्य ने प्वाइंट ऑव आर्डर उठाया कि ये सभी समस्याएं विवादाधीन नहीं हैं। स्पीकर ने रूलिंग दी कि विवाद को फिलहाल टखने से ऊपर न जाने दिया जाए।

फिर मास्टर साहब ने ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर रोशनी डालने का प्रयास किया, "सवाल यह है कि अंगरेज-राज से पहले हमारे बुजुर्ग कैसे जूते पहनते थे?"

"सवाल यह है कि पहनते भी थे या

नहीं ?" एक अंगरेज-भक्त सदस्य ने कहा, "सवाल यह है वरखुरदार कि तुम्हारे कोई बुजुर्ग थे भी या नहीं ?"

स्पीकर ने फौरन टोक दिया कि व्यक्तिगत सवाल पूछने की इजाजत नहीं है।

इस हस्तक्षेप ने चाबुक का काम किया। वे इतिहास के जाने-पहचाने मैदानों में उड़ानें भरने लगे— "यारे . . . मेरा मत-लब है, जनाबे-वाला ! अंगरेज अपने साथ अपना यूनियन-जैक तो तह करके ले गया, लेकिन अपना जूता छोड़ गया और हमने चूम-चाट कर उसे झट अपने राजसिंहासन पर रख दिया। प्यारे . . . वाला ! संसद में दिलखराब ताना गूंज रहा है कि देसी जूते से बेहतर दुनिया में कोई बेडरूम-स्लीपर नहीं, लेकिन स्लीपर पहनकर हम ज्यादा दूर नहीं चल सकते। मुझे उनकी बुद्धि पर संदेह होता है। बड़ी हैरत की बात है कि जब हमारे बुजुर्ग (अंगरेज-भक्त सदस्य की ओर अंगुली से इशारा करते हुए)—वह बुजुर्ग जो हमारे हैं, तुम्हारे नहीं—रोजाना बीसियों मील पैदल चलते थे तब उन्हें इन देसी जूतों में कोई तंगी महसूस न हुई। इसके बावजूद आज जब कोई पैदल नहीं चलता, आज जब अपनी टांगें यानी कि अपनी निजी टांगें इस्तेमाल करना दरिद्रता का प्रतीक है, जब यह लूली-लंगड़ी बारात दूसरों की बनायी हुई कारों, ट्रामों और ट्रेनों में टंगी-टंगी फिरती है तब हमें यह
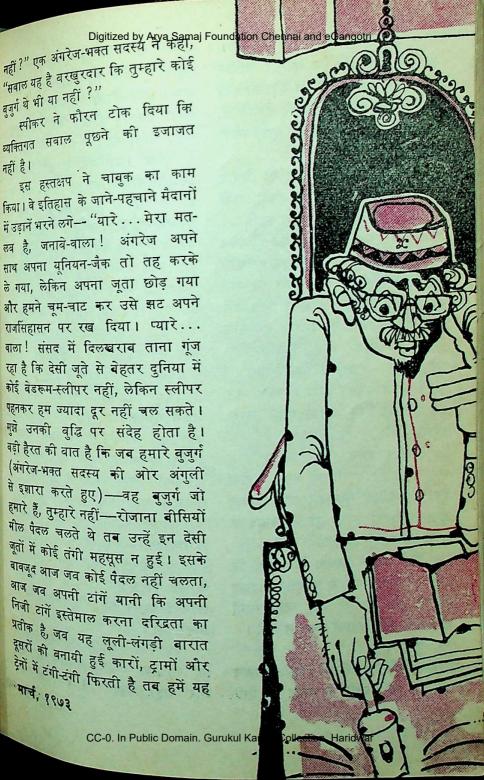
शिकायत होने लगी है कि देसी जूता पहन-कर हम पैदल नहीं चल सकते! आखिर हमें भी तो पता चले कि वे कौन-सी नयी आवश्यकताएं हैं, कौन-से नये तकाजे हैं, जिनका साथ अब यह सदियों पुराने साथी नहीं दे सकते ?"

इस उदाहरण पर संसद को विचार करता छोड़कर मास्टरजी अपनी दायीं एड़ी पर तेजी से घूम गये और बायी टांग कालीन से एक फुट उठाकर खड़े हो गये। निरंतर हूटिंग के बाद एकाएक नाटकीय मौन छा गया तो स्पीकर हड़बड़ा कर जाग उठे। मास्टर साहब ने अपने पैबंद लगे देसी जूते की ओर संकेत करते हुए माथे पर तेवर डालकर पूछा, "आखिर इस जूते में क्या खराबी है, जनाबेवाला ?"

एक मेम्बर, "अल्लाह रहम करे इस जूते पर जिसे आपका वजन उठाना पड़ता है!"

मास्टर साहब, "और अल्लाह रहम करे उस टोपी पर जिसके अंदर तुम्हारा सिर है, क्योंकि तुम यह टोपी बेचकर जूता खरीदना चाहते हो..." बाद के शब्द तालियों में डूब गये।

फिर उन्होंने प्रस्ताव पेश किया कि देसी जूते की कीमत में पचहत्तर प्रतिशत जबरन वृद्धि कर दी जाए ताकि लोगों को उसमें कोई खराबी नजर न आये।

१२ जून, १९५६

आज गैलरियां औरतों से खचाखच भरी हुई थीं। संसद के बाहर भी ऐसी भयंकर भीड़ थी कि अगर कोई औ[illegible] बेहोश हो जाए तो जमीन पर न गि[illegible] पाए। आज मदाम लाफिया देश की [illegible] करोड़ बेजुबान औरतों का प्रतिनि[illegible] करने वाली थीं।

शेख (जो मुझे सोसाइटी-[illegible] इंसाइक्लोपीडिया-सा लगता है) कह [illegible] था कि लाफिया किसी जमाने में एक [illegible] अफसर की बीवी थी। 'थी' से शेख [illegible] मतलब खुदा न करे, यह नहीं था कि [illegible] वह उनकी बीवी नहीं रही। बीवी तो [illegible] अब भी है, मगर वे साहब अब बड़े अ[illegible] सर नहीं रहे। इस घटना के बाद म[illegible] ने निर्दोष कौम का नेतृत्व संभाल लि[illegible] और अब यह उनकी बीवी नहीं, बल्कि वे इनके पति कहलाते हैं।

१८ सितम्बर, १९४३ को [illegible] अपनी यूनिवर्सिटी की ओर से 'सौं[illegible] महारानी' का मुकुट पहनाया गया। कितने ही पतझड़ आये और बीत ग[illegible] पर उन्होंने अपने कैलेंडर से वह पन्ना आ[illegible] तक नहीं फाड़ा।

मदाम लाफिया ने बड़ा जोरदा[illegible] भाषण दिया—'स्त्री का स्थान ऊंचा कर[illegible] का एक तरीका है, और वह है ऊंची ए[illegible] के जूते का प्रयोग!" इस पर विरो[illegible] तालियां बजाने लगे और पक्षधर ब[illegible] झांकने लगे।

मदाम ने दोनों की परवाह न कर[illegible] हुए फरमाया, "मर्द, जालिम मर्द, [illegible] और बाहर धड़ल्ले से विलायती जू[illegible]

पहनते हैं । हद यह है कि राजनीतिक जलसों में विरोधियों को हार भी अंगरेजी जूतों के ही पहनाये जाते हैं, पर देश का बहुमत यानी डेढ़ करोड़ औरतें पीढ़ियों से अपने को इन्हीं देसी जूतों में घसीटे फिर रही हैं । इनके पतन का और इनकी

अपना भाषण जारी रखते हुए मदाम लाफिया ने कहा, "ऊंची एड़ी के जूतों से उनके पट्ठे मजबूत, पैर सुडौल और पिंडलियां मानो नूर के सांचे में ही ढल जाती हैं ।"

एक सदस्य ने प्वाइंट ऑव आर्डर

दुर्दशा का यही असली कारण है (शेम-शेम के नारे) ....आज कोई महसूस करने वाला दिल और देखने वाली आंख हो तो मैं दिखाऊं कि देसी जूते पहनते-पहनते कोमलकांत स्त्री का आधा अपेक्षाकृत सुंदर भाग, यानी टांगें कमजोर और कुरूप हो गयी हैं । मेरी बहनें, मेरी लाखों बहनें खुली हवा में दो कदम नहीं चल सकतीं, पर यूरोपीय औरतों को देखिए. . ."

एक आवाज—"किधर हैं ?"

उठाया—"हम मानते हैं कि हमारे यहां यूरोप की तुलना में टांगें कुरूप होती हैं, बल्कि यों कहिए कि टांगें होतीं ही नहीं । लेकिन मदाम, इसका कारण देसी जूता नहीं, बल्कि यह है कि वे मर्दों की नजरों से छिपी रहती हैं . . ."

"क्या कहता है बदजुबान ?" मदाम चीखीं ।

"अल्लाह, मुर्गियां भी अजान देने लगीं !"

"अजान दें मेरे दुश्मन !"

अंतिम वाक्य पर धार्मिक दल के नेता उद्विग्न होकर कहने लगे, "जनाब ! यह तो सरासर हम पर हमला है। हम न तो किसी के लेने में और न किसी के देने में !" स्पीकर ने व्यवस्था दी कि मदाम अपने वाक्य वापस लें, लेकिन उन्होंने इनकार किया तो स्पीकर ने अपने हथौड़े से मेज तोड़ने का असफल प्रयत्न करते हुए कहा कि अगर आप फिर चीखीं तो आपके खिलाफ कानूनी कार्य-वाही की जाएगी। मदाम ने प्रोटेस्ट में तुरंत अपनी चूड़ियां एक छनाके से तोड़ डालीं, और उनके अनुकरण में उनकी समर्थिका सभी महिला-सदस्यों ने भी अपनी चूड़ियां तोड़ डालीं। केवल एक महिला ऐसा न कर सकीं, क्योंकि वे विधवा थीं। पर इतना तो उन्होंने किया ही—वे सीट से उठीं और एक महिला मंत्री की चूड़ियां ठंडी कर आयीं।

इस हंगामे के शांत होने के बाद प्रधानमंत्री ने धमकी दी कि अगर मदाम ने स्पीकर से माफी न मांगी तो उन्हें बाहर निकलते ही चार महीने के लिए 'जनताघर' में भेज दिया जाएगा। इस पर वे स्पीकर के गुर्ज की कसम खाकर चीखीं—"चार महीने क्या, चार साल की भी सजा दें तो बंदी अपनी जवान बंद नहीं रख सकती !"

इस पर स्पीकर ने सार्जेंट को हुक्म दिया कि आदरणीय सदस्या को संसदीय डोली में डालकर बाहर ले जाया जाए और चार घंटे वातानुकूलित एकांतवास में रखा जाए, जहां उन्हें मर्द की सूरत भी न दिखायी दे। मदाम ने घिघियाकर माफी मांग ली।

मार्च, १९७३

१९ जून, १९५६

'जूता-बिल' के आर्थिक पक्ष पर विवाद करते हुए आज सेठ फनजानी ने लाख रुपये की बात कही—"अंगरेजी जूते पहनते-पहनते हमारे पैरों की शक्लें उन्हीं फर्मों-जैसी हो गयी हैं। अब वे देसी जूतों में फिट नहीं आ सकते। फिर यह भी याद रहे कि इन फर्मों को एकाएक त्याग देने में लाखों रुपये की विदेशी मुद्रा का नुकसान होगा। जरा सोचिए, सारी दुनिया अंगरेजी जूते को अपना रही है, ऐसी सूरत में हमने देसी जूता पहनना शुरू कर दिया तो दुनिया क्या कहेगी ? टूरिस्ट क्या कहेंगे ? अंगरेजी जूते को केवल राष्ट्रीय जूता घोषित कर दिया जाए, बल्कि समानता और मितव्ययिता की भावना का तकाजा है कि एक ही साइज के जूते सबको पहना दिये जाएं। शुरू-शुरू में शरारती छोटे-बड़े का सवाल अवश्य उठाएंगे, पर समय बीतने पर सबके पांव इन जूतों में फिट आने लगेंगे। मेरी 'पंचवर्षीय जूता योजना' के अनुसार दिसावर से बने-बनाये अंगरेजी जूते थोक भाव पर आयात करने में पचास प्रतिशत बचत होगी, और इस बची हुई धनराशि से पांव के उन रोगों का इलाज किया जा सकता है जो इन जूतों के उपयोग से पैदा हों।"

सहायक वित्त-मंत्री ने बहस में हस्तक्षेप करते हुए चेतावनी दी कि खुदा न करे, पर यदि टूरिस्टों को हमारा जूता पसंद नहीं आया तो सारा टूरिस्ट-ट्रैफिक बंद हो जाएगा और उनके द्वारा मिलने वाली विदेशी मुद्रा के अभाव में बजट कैसे 'बैलेंस' होगा।

'समता-प्रिय संस्थान' के एक प्रमुख

सदस्य ने हल पेश किया कि चुंगी के फार्मों की खानापुरी के समय हर रवाना होने वाले विदेशी टूरिस्ट से यह ज्ञात कर लिया जाए कि वह इस देश के लिए कौन-सा जूता पसंद करता है।

इस पर एक सज्जे ने यह कहा कि प्रश्नावली में यह भी पूछा जाए कि यदि इस देश ने आपका जूता अपना लिया तो आप पुनः कब तशरीफ लाएंगे? और कितने डालर के ट्रेवलर्स-चेक साथ ला... साफ-साफ लिखिए।

२० जून, १९५६

लंच के विराम तक अफगानी चप्पल... राष्ट्रीय जूता बनाने के पक्ष में तीन भा... हुए, जिनमें इस बात पर बड़ा जोर दि... गया कि यह सस्ता, आरामदेह, और ... दार होता है। फिर पाएदार ऐसा कि ... भले ही टूट जाए, टांका न टूटे।

पर धार्मिक दल के अमीर ने आप... की कि अफगानी चप्पल के पंजे पर क... बत्तू और सोने के तारों का काम हो... है, और मर्दों के लिए सोने का उप... धार्मिक रूप में नाजायज है। इसलि... कामदार चप्पल को राष्ट्रीय जूते का प... नहीं दिया जा सकता।

कट्टर धार्मिक दल के प्रमुख सद...

ने फतवा दिया कि सोने के तार अगर झूठे हों तो उसका पहनना धार्मिक रूप में जायज होगा।

मदाम लाफिया ने उस गुत्थी को इस तरह सुलझाना चाहा कि सच्चे काम के चप्पल को स्त्रियों के लिए सुरक्षित कर दिया जाए, पर स्पीकर ने उन्हें अधिक नहीं बोलने दिया। इसलिए कि अभी मर्दों ही के जूते का फैसला नहीं हो पाया। उद्देश्यों के प्रस्ताव में यह तय हो चुका है कि स्त्रियों, विशेषतया शिक्षित स्त्रियों के लिए ऐसे जूते चुने जाएं जो अंदर से बड़े और बाहर से छोटे हों।

असगरअली अंगरेजों के परमभक्त हैं। अपने वतन से भी, केवल इस कारण प्यार करते हैं कि उस पर अंगरेज हुकूमत कर चुका है। काकटेल पार्टियों में उनका यह लतीफा प्रायः सुनने में आया कि एक बार किसी से कहने लगे, "हमारे देश में म्युनिस्पैलटियों की नालायकी के कारण मक्खियों की अधिकता है।" इस पर उस मर्दे-नादान के मुंह से निकल गया, "इंगलैंड में मक्खियां नहीं होतीं क्या?" फरमाया, "होती हैं, मगर इतनी गंदी नहीं!"

राजनीतिक पार्टियां उनकी दुश्मनी से इतनी रुष्ट नहीं, जितनी उनकी मित्रता से। अतः उनकी राजनीतिक गतिविधियों की आलोचना करते हुए एक स्तम्भ-लेखक ने फब्ती कसी थी कि वे टेनिस की गेंद की तरह हैं। कभी इस कोर्ट में, कभी उस कोर्ट में, और जिस कोर्ट में रह जाएं, उसे ले बैठते हैं। भाषण में धूप-छाया की यह बहार कि आधा हिस्सा उनकी पार्टी के अखबार छापते और शेष आधे हिस्से को विरोधी उछालते। अधिक जनसंख्या और परिवार-नियोजन पर एक नहीं सैकड़ों भाषण किये होंगे, विभिन्न अवसरों पर, विभिन्न मंचों से, पर आज तक किसी को यह पता न चलने दिया कि कहना क्या चाहते हैं। भाषण में कोई तेज बात आ पड़े तो सीधा हाथ हवा में लहरा कर घूंसा तान लेते हैं और उस समय तक ताने रहते हैं जब तक तसवीर न खिंच जाए।

आज भी उन्होंने इतना लम्बा भाषण किया कि जब वे श्रोताओं के कोलाहल-पूर्ण आग्रह पर बिठा दिये गये तो उनके बटन-होल में लगा हुआ सुर्ख कारनेशन मुरझा चुका था; लेकिन इस भाषण को, जिसके दौरान वे एक बालटी पानी पी गये होंगे, केवल एक शब्द में समेटा जा सकता है—'समझौता ... हर कीमत पर समझौता, हर एक से समझौता... जो बेचारा न लड़े, उससे भी समझौता।" विभिन्न प्रकार के जूतों को एक-दूसरे के करीब लाने के लिए उन्होंने सारी कौम को एक झंडे के नीचे जमा होने का उपदेश दिया।

१० जुलाई, १९५६

देसी जूते के पक्ष में आज बड़ा लच्छेदार भाषण सुनने को मिला। हजरत फसीह लश्करी ने फरमाया, "देसी जूते

"यह क्रायलिन से रंगवाई है क्या?"

"हां! मैंने खुदही रंगा है।"

मुफ्त

नया, बंद होनेवाला ब्रश और डिझाईनका तक्ता, आठ क्रायलिन के शीशियों के खास डिब्बे के साथ।

आकर्षक भेंट स्टॉक समाप्त होने तक

क्रायलिन चित्रकारी सीखिये।

हमारे पत्र-व्यवहार स्कूलमे शामिल होइये।

कैमल क्रायलिन. निर्माताओंने खास तौरसे तय्यार किया हैं। १२ रु. की रंग बिरंगी पुस्तिका मुफ्त लीजीये। और उसी के साथ २० रु. मे घर बैठे कपड़ोंपर चित्रकारी सीखिए। और आसानी से कुशलता प्राप्त कीजिये।

प्रसिद्ध चित्रकार और हमारे आर्ट डायरेक्टर श्री. बाल वाड, इस विषय में आपका मार्गदर्शन करेंगे।

क्रायलिन पत्र व्यवहार स्कूल
कैमलिन प्रा. लि.
जे. बी. नगर,
बम्बई-५९ ए. एस्.

camel Crylin COLOURS

यों तो सभी अच्छे होते हैं, मगर सबसे हसीन, अलबेले मुगलों की अलबेली याद-गार—वह जूता नहीं बल्कि जूती है, जो सलीमशाही कहलाती है।"

एक सदस्य ने अपनी चुंदिया के फर्जी बाल खुजाते हुए कहा, "हजरत! शह-जादा सलीम सलीमशाही जूती नहीं पहनता था, ईरानी जूता पहनता था।" वह तो यह कहकर निश्चिंत हो गया, पर लगता था, मानो किसी ने बारूदखाने में फुलझड़ी छोड़ दी। शिक्षा-मंत्री ने राय दी, सर टामस रो के सफरनामे से सनद ली जाए। एक वकील साहब बोले—'तुजुक-जहांगीरी' के अध्ययन के लिए प्रवर समिति बनायी जाए। विरोधी नेता ने मांग की कि इस मसले का फैसला वोट से होना चाहिए। एक सदस्य ने प्रस्ताव रखा कि एक आयोग नियुक्त किया जाए—बिलकुल तटस्थ और निष्पक्ष आयोग—जो नंगे पांव देश का दौरा करे और लोकप्रिय इतिहासकारों और पादुका-कारों के बयानों को लेखनीबद्ध कर पहले यह फैसला करे कि शहजादा सलीम के वालिद गरामी यानी जलालुद्दीन अकबर भी सलीमशाही जूता पहनते थे। या जिल्ले-सुब्हानी ने अपने पांव के साथ भी वही सुलूक किया जो सिर के साथ! यानी क्या उनका जूता भी दीने-इलाही की तरह था—पंच-मेल और ढीला-ढाला, जो हर एक के लिए बनाया गया था? इसीलिए किसी ने न अपनाया।

इस प्रस्ताव पर निरंतर तीन घंटे गरमा-गरम बहस हुई, जिसे स्पीकर ने अक्षरशः सुनने के बाद व्यवस्था दी कि यह सारी बहस विषय से असम्बद्ध है।

इसके बाद शाह सलीमी भाषण देने के लिए खड़े किये गये, लेकिन शाह साहब अभी इतना ही कहने पाये थे कि "देसी जूती, विशेषतया सलीमशाही, की सबसे बड़ी खूबी यह है कि दायें-बायें की तमीज नहीं होती ..." तभी स्पीकर ने दोपहर के भोजन के लिए विराम की घोषणा कर दी।

दोपहर-भोजन के बाद किसान-सभा के उपाध्यक्ष ने कहा कि औरों की तरह मैं मन-प्राण से ही नहीं, बल्कि जबान से भी देसी जूते की हिमायत करता हूं, लेकिन यह स्वीकार करते हुए मुझे कोई शर्म महसूस नहीं होती कि सलीमशाही जूता पहनकर मुझे बड़ी शिद्दत से तख्ते-ताऊस की तमन्ना होने लगती है।"

सलीमशाही जूते की नजाकत पर यार लोग फब्तियां कसने लगे तो खान बेदाद खां कोचक जई से न रहा गया। सलीमशाही की हिमायत में खम ठोंककर संसद के मैदान में उतरे और इस बेजि-गरी से लड़े कि अपने-पराये सबका सुथ-राव कर गये। सलीमशाही की पाएदारी की प्रशंसा करते हुए कहने लगे, "हम तीन महीने से बराबर इसे पहन रहे हैं, आज तक तो फटा नहीं!" यह कहकर उस खुदा के मर्द ने अपने फौजी बूट के तस्मे खोले और स्पीकर को अपना पांव निकालकर दिखाया।

उस पर सलीमशाही चढ़ा हुआ था।

प्रबल से प्रबल विरोधी ने भी स्वीकार किया कि सलीमशाही से पांव में नरमी, चाल में रवानी और स्वभाव में नफासत पैदा हो जाती है, लेकिन इसका जवाब जोशीले तरफदारों के पास भी न निकला कि उस पर जो फूल-पत्ते कढ़े हुए हैं, वे इस देश में पैदा नहीं होते और लोग उन के नामों तक से परिचित नहीं। अंत में सलीमशाही गुट के नेता ने बिगड़कर रहा, "यह गुल-बूटे कई नस्लों की दीदारेजी, कई सदियों की जिगर-कावी का फल हैं। और अगर अब यही बारे-खातिर हैं, तो आज से हम इस पार्लियामेंट की बहस में कोई हिस्सा नहीं लेंगे, लेकिन (घूंसा दिखा कर)...लेकिन अपने ड्राइंग-रूम में सलीम-शाही जूता ही पहनेंगे।"

इस अलटीमेटम के बाद वे सब अभि-वादन करते हुए अपनी-अपनी मखमली जूती बगल में दबाये नंगे पैर वाक-आउट कर गये।

फूल-पत्तों वाली आपत्ति पर सोच-विचार करने के लिए एक निष्पक्ष समिति बनायी गयी। स्पीकर ने निर्देश दिया कि वह कल ही रिपोर्ट पेश करे।

११ जुलाई, १९५६

दो घंटे तक कोरम की घंटी बजती रही, पर सदस्यों की संख्या पूरी न हुई। अंत में सलीमशाही गुट को ठोड़ियों में हाथ दे-देकर मनाया गया। वे आज सुबह तड़के से रेस्तरां में टायर के तले वाली अफगानी चप्पल पहने, बलि[illegible] पड़े थे! विरोधियों ने उन्हें उठाकर [illegible] तरह सीने से लगाया और अपने [illegible] सलीमशाही जूते पहनाये। रूठने-[illegible] का ऐसा नजारा जमाने की आंख ने [illegible] देखा होगा। फसीह लश्करी ने भाव[illegible] से भर्राई हुई आवाज में कहा, "या [illegible] अगर हमें इस बेपनाह मुहब्बत, [illegible] रवादारी, मनाने की इस अदा का [illegible] होता तो हम बहुत पहले वाकआउट [illegible] जाते।"

१६ जुलाई, १९५६

संसद की कार्रवाई चालीस मिनट दे[illegible] शुरू हुई।

कौमी बीमा मोर्चा (जिसका नारा [illegible] गर मर्द है तो प्यारे कौड़ी न रख [illegible] को) के सरदार ने सवाल किया, "[illegible] यह सही है कि दिसावर से लाखों [illegible] का संगमरमर मंगवाया गया है? और [illegible] अंगरेजी जूते की शक्ल के एक जनता-[illegible] का निर्माण किया गया है?" (जेल को [illegible] जनता-घर कहते हैं।)

निर्माण-विभाग के संसदीय म[illegible] ने अपने लिखित उत्तर में संसद को सू[illegible] किया कि यह सही है कि सरकार ने [illegible] जनता-घर का निर्माण किया है जो [illegible] फल और आबादी की दृष्टि से ए[illegible] भर में सबसे बड़ा है। यह भी सही है [illegible] उसमें लाखों रुपये का संगमरमर लगा है [illegible] लेकिन वर्तमान सरकार ने केवल [illegible] किया है कि भूतपूर्व मंत्रियों ने देश के [illegible]

कोने में निर्माण के लिए जो नींव-पत्थर रखे, बल्कि बोये थे, उन सबको इकट्ठा कर यह आलीशान इमारत उन्हीं के आवास के लिए बनायी है और अब भी आधी से ज्यादा सिलें बच रही हैं। विरोधी दल चाहे तो उन्हें अपने वर्तमान नेताओं के चिरस्थायी आवास के लिए इस्तेमाल कर सकता है।

१९ जुलाई, १९५६

संतुलित दल के नेता ने विभिन्न जूतों में एकरसता पैदा करने के लिए एक पंच-सूत्री पर्चा बांटा, जिसके हाशिये पर हर ढंग और हर जिले में प्रचलित जूता बना हुआ था। पर्चा इस प्रकार था :

१. घर में देसी और बाहर अंगरेजी जूता पहना जाए। २. अंगरेजी जूते पर पालिश न की जाए और तस्मे की कैद न लगायी जाए तो हमारे नौजवान उसे हाथों-हाथ लेंगे। ३. प्रादेशिक पादुका को 'प्रादेशिक प्रदेशों' में चलने दिया जाए। उपयोग की अधिकता से उसमें नरमी आ जाएगी। ४. संसद-सदस्य जहां कहीं मिलें, एक-दूसरे के जूते की प्रशंसा करें, पर पहनें अपना ही जूता। (५) संसद को यह सूत्र नजरअंदाज न करना चाहिए कि जनता को कानून के बल से अंगरेजी जूते पहनने पर मजबूर किया जा सकता है, लेकिन संसद हर एक के पांव नहीं धुलवा सकती। अपराधों की संख्या पहले ही बढ़ रही है और उसकी रोक-थाम अनिवार्य है, अतः हमें चाहिए कि कम से कम कानून बनाएं ताकि लोग उन्हें तोड़ न सकें।
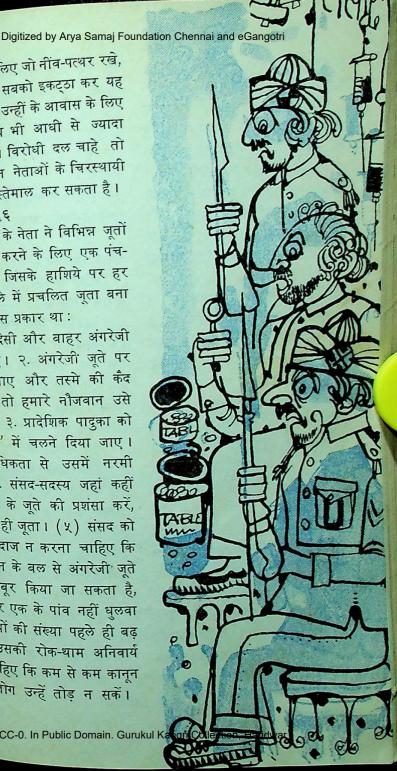
२४ जुलाई, १९५६

रात पुलिस-थाने में कटी।

कानों में अभी तक वही गरजदार आवाज गूंज रही है। बड़ी-बड़ी रोशन आंखें। दूर तक देखती हुई, सब को देखती। दिल में उतरती। सफेद-नूरानी दाढ़ी। गाढ़े का लम्बा कुरता। बातों में वह सहमी-सहमी उदासी जो जमीन अपने प्यार करनेवालों को बख्श देती है। ठहर-ठहर कर, शब्दों को जमा-जमा कर कहने की आदत।

मन्त्रिमंडल बने और बिगड़ गये। पर बाबा सिराजदीन ने अपनी डगर न बदली। बागी थे, बागी रहे। बीस साल पहले उनका जवान बेटा अंगरेजों के विरुद्ध प्रदर्शन करता गोली से मारा गया था। आवाज में आज भी उसी गोली की गूंज सुनायी देती है, "साहबो, आने वाली नस्लें जब इस संसद की कार्यवाही को देखेंगी तो उन्हें यकीन नहीं आएगा कि उनके पूर्वज ऐसे थे। उन्हें उस खून से शर्म आएगी जो उनकी रगों में दौड़ रहा होगा! साहबो, इस संसद के झरोखों से झांककर देखो कि धरती की कोख बांझ हो चली है। देखो कि वह बजुबान जिन्हें तुम अपना स्वामी कहते हो, नंगे पांव हैं! पैरों तले जमीन तप रही है और उनकी आंखें लाल हैं। आंख उठाकर यह आसमान की तरफ देखते हैं। देखते हैं और फिर सिर को झुका लेते हैं। उन पर अंगुलियां न उठाओ। ये शहीद हैं कि हर क्षण तलवार की धार पर [illegible] हैं और कुछ नहीं कहते। उनसे डरो। उस दिन से डरो कि उनकी राख [illegible] के लिए पूजनीय बनेगी।

एक बारीक आवाज से, "[illegible] सलाम!"

दूसरी आवाज, "सलाम उस हुक्के पर जिसे पी-पीकर आपने यह भाषण रटा है!"

तीसरी आवाज, "शब्द वापस [illegible] फादर क्रिसमस!"

चौथी आवाज, "जा छोड़ दिया हाफिज[illegible] कुरान समझ कर!"

बिजलियां फिर कड़कने लगीं, "साहबो! इन आंखों ने इतिहास बनते देखा है। एक देश, एक कौम को जन्म लेते देखा है। इन बूढ़ी आंखों ने सुहागनों की मांगें उजड़ती देखी हैं। फिर इन्हीं मांगों [illegible] खाक-खून का सिंदूर भी भरा देखा है।

इन आंखों ने इस संसद के ललाट से, इस किले के बुर्जों से यूनियन जैक उतरते देखा है। इन आंखों में आंख डालकर देखो कि इन्होंने एक साम्राज्य का सूर्य अस्त होते और एक नया चांद उभरते देखा है। इन आंखों में आंखें डालकर देखो कि अब इनके चिराग बुझने वाले हैं। फिर तुम इस रोशनी की तलाश में देशों-देश भटकोगे। और यह तुम्हें नहीं मिलेगा साहबो, तुम्हारी खैर! तुम्हारे मीनारे-बाबुल की खैर! तुम्हा..."

एक आवाज, "बकवास बंद करो, साहबो!"

दूसरी आवाज, "आंखें बड़ी नियामत हैं बाबा !"

कई आवाजें, "शब्द वापस लो। दढ़ियल प्रतिक्रियावादी !"

सब एकसाथ, "माफी मांगो ! मांगो! माफी मांगो !"

ठायं ! ठायं ! ठायं !

गैलरी से तीन फायर हुए और एक चिराग बुझ गया। एक बूढ़ा अमर हो गया ।

इतने में किसी ने संसद की बिजली काट दी । चारों ओर अंधेरा छा गया । मोमबत्ती की रोशनी में कुछ सदस्यों ने मिलकर स्पीकर की सीट के पीछे लगा हुआ झंडा उतारा और बाबा सिराजदीन के ऊपर डाल दिया ।

२५ जुलाई, १९५६

आज भी अखबार स्याह हाशियों के साथ निकले और रेडियो पर दिन भर मौलवी बोलते रहे ।

हत्यारे का सुराग नहीं मिला । इसलिए पुलिस ने हर पार्टी के एक-एक नेता को गिरफ्तार कर लिया है ।

मृत के कुरते की जेब से सवा दो रुपये की रेजगारी, बस का टिकट, स्वर्गीय बेटे की मिटी-मिटायी तसवीर और दर्द कम करने वाली आठ गोलियां निकलीं ।

शेख कहता है, विश्वस्त क्षेत्रों में यह अफवाह गश्त कर रही है कि बूढ़ा कैंसर-ग्रस्त था और उसने ख्याति की खातिर एक

किराये के हत्यारे से अपने-आपको मरवाया है, जभी तो इतने नाटकीय . . .

"शेख ! तुम तो कह रहे थे कि हम मरनेवालों को बुरा नहीं कहते। हम अपने मुरदा भाई का गोश्त नहीं खाते !"

"माफ करना यार ! मैं तो कुछ और समझ के बेतकल्लुफ हो गया था, मगर तुम तो अंदर से मुसलमान निकले। अच्छा तो फिर सुनो ! कल रात शहीदे-आजम के सोग, नहीं उनकी याद में एक भव्य सर्व-दलीय जलसा हुआ, जिसमें हर नेता देसी जूता पहनकर आया। श्रोताओं ने खड़े होकर प्रस्ताव पास किया कि बाबा सिराज-दीन शहीद की शुद्ध सोने की एक साठ फुट ऊंची प्रतिमा बनवायी जाए, जिस पर चोरों से बचाने के लिए पीतल का मुलम्मा कर दिया जाए। यह भी तय पाया कि उसे स्थापित करने के लिए 'स्वर्गीय-पथ' पर एक नया चौराहा बनाया जाए। यह एशिया में सबसे बड़ी प्रतिमा होगी !" शेख का सीना कौमी गर्व से फूल गया।

१९ अगस्त, १९५६

संसद का सत्र निरंतर तीस घंटे जारी रहा।

प्रवर समिति की रिपोर्ट तीन सौ बारह फुल-स्केप पृष्ठों पर फैली हुई है। समिति ने अपनी कार्यविधि का स्पष्टीकरण करते हुए लिखा कि इस सम्बंध में पट-वारियों द्वारा जूतों की जो 'मरदुम-शुमारी' करायी गयी, उससे यह तथ्य निकला कि देसी जूते की सरपरस्ती या तो गंवार देहाती करते हैं या दरिद्र शहरी, जो विज्ञान और कला से एकदम अनभिज्ञ हैं और अभी तक जूते को केवल जूते की तरह पहनना चाहते हैं, यानी चलने के लिए। दुर्भाग्य से उनके कद पहले ही लम्बे हैं, इसलिए उनको यह लालच देना कोई अर्थ नहीं रखता कि अंगरेजी एड़ी से उनके कद में डेढ़-दो इंच की वृद्धि हो सकती है। कमेटी की एकमत राय है कि ये लोग बेहद जिद्दी हैं और अपने हठ से कभी बाज न आएंगे।

रहा अंगरेजी जूते पहनने वाला वर्ग, उसका यह हाल है कि जिस जूते के तस्मे खुलवा कर देखो, अंदर से फटे मोजे निकलेंगे। इसके बावजूद वह देसी जूते से इतने बेजार हैं कि अगर यह कानून लागू कर दिया जाए कि बच्चों को एक पांव में अंगरेजी और दूसरे में देसी जूता पहनाया जाए तो वे बच्चों का एक पांव ही कटवा देंगे।

रिपोर्ट की सिफारिशों के परिच्छेद में कमेटी ने लिखा, "पता चला है कि देश की पचासी प्रतिशत जनसंख्या नंगे पैर रहती है। राजनीतिक चिंतकों का तकाजा है कि इतने भारी बहुसंख्यकों की आदतों का आदर किया जाए। इसलिए समिति पुरजोर सिफारिश करती है कि कम-से-कम पचीस साल तक जनता को अपने हाल पर छोड़ दिया जाए।"

सरकार इस महत्त्वपूर्ण समस्या पर निकट-भविष्य में श्वेत-पत्र प्रकाशित करेगी !

दी हिन्दुस्तान टाइम्स लिमिटेड की ओर से रामनन्दन सिन्हा द्वारा हिन्दुस्तान टाइम्स प्रेस, नयी दिल्ली में मुद्रित तथा प्रकाशित

नेताजी

भाइयो और बहनो! मंत्रीजी आने वाले हैं... तब तक आप देशभक्ति के गाने सुनिए
सुनो, सुनो ए दुनिया वालो...
“जी कोई बात नहीं! जनता दो घंटे और प्रतीक्षा कर सकती है।”
मंत्रीजी संसद में जनहित के लिए जरूरी विधेयक पेश कर रहे हैं इसलिए उन्हें कुछ देर हो जाएगी।”
मैं तो स्कूल की छोटी बच्चियों को लाया हूं बेचारी थक गयी होंगी
मैं किराये पर कुछ किसान लाया था, वे कबतक ठहरेंगे?
क्या कहा? मंत्रीजी सुबह से शिकार खेलने गये हैं.... तो आज संसद नहीं थी! पहले बता दिया होता....!
हमारा माइक का पैसा!
प्रदर्शन के पट्टे!
किसानों का मेमोरेंडम!
हाय! जन सेवा! मैं ठहरा एक मामूली नेता, जनता को कैसे बताता कि मंत्री जी सुबह से शिकार पर गये हैं!!
सुकुमार चटर्जी

मासिक प्रकाशन
कादम्बिनी
भारतीय भाषाओं की विशिष्ट पत्रिका
सितम्बर १९७२
भीतरी पृष्ठों में : थिरकते पैरों की छवि ● शाही जल्लादों की कहानियां ● दिनकर की डायरी ● मंगोलिया में भारतीय संस्कृति

खांसी के ४ मोर्चों पर
हमला करनेवाला!
गला
छाती
दिमाग
फेफड़े
GLYCODIN
ग्लायकोडिन
एक इलाज—जो चार तरह से खांसी पर पूरा काबू पाता है।
☐ दिमाग में—ग्लायकोडिन खांसी के केन्द्र पर नियंत्रण रखता है। ☐ गले में—ग्लायकोडिन जकड़न दूर करता और खराश मिटाता है। ☐ छाती में—ग्लायकोडिन तने हुए स्नायुओं को आराम पहुंचाता है जिससे सांस लेने में आसानी होती है। ☐ फेफड़ों में—ग्लायकोडिन जमे हुए बलगम को बाहर निकालता है। ☐ खांसी पर पूरा काबू पाने के लिए, दूसरा कोई इलाज नहीं जो ग्लायकोडिन की तरह असर करता हो।
• जल्द असर करनेवाला • मीठे स्वादवाला • किफायती
भारत में खांसी का सबसे अधिक विश्वसनीय घरेलू इलाज
everest/365 L/ACW

हिन्दी के सिनेमा जगत का बहुमुखी सर्वप्रिय मासिक
फिल्मी दुनिया
का सितम्बर अंक एक अनूठा विशेषांक
पृष्ठ संख्या २५० से अधिक
मूल्य ३ रु० मात्र
● फिल्मोद्योग की ७५ वीं जयन्ती और स्वाधीन भारत में फिल्म उद्योग की रजत जयन्ती के अवसर पर प्रकाशित
● आज के लोक प्रिय फिल्मी सितारों के ३० पूरे पृष्ठों के रंगीन चित्र
सिनेमा हमारे जीवन का अनिवार्य अंग बन गया है। हमारे खान-पान से लेकर उसने हमारे रहन-सहन और वेशभूषा तक पर प्रभाव डाला है,
तो क्या आप ऐसे शक्तिशाली माध्यम का अतीत, वर्तमान और भविष्य नहीं जानना चाहेंगे?
● फिल्मी दुनिया का संपूर्ण अतीत: ७५ सालों का प्रामाणिक इतिहास
● वर्तमान फिल्मी दुनिया का सम्पूर्ण परिचय हजारों चित्रों सहित।
● भविष्य की तमाम संभावनाओं का विवेचन।
● खोजपूर्ण, दिलचस्प सामग्री से भरपूर
● एक ऐसा प्रकाशन, जिसमें सारी जानकारी एक जगह एकत्रित है।
● जिस के लेख, जिसमें उठायी गई समस्यायें संभावनाएं आपके लिए नया मनोरंजन प्रस्तुत करती हैं!
सिनेमा साहित्य का एक अत्यन्त उपयोगी और अपने ढंग का सबसे पहला प्रकाशन
१० अगस्त १९७२ को प्रकाशित। पूरे भारत में सभी न्यूज एजेन्टों से उपलब्ध है
फिल्मी दुनिया मासिक
१६ दरियागंज, दिल्ली-६

वर्ष १२ : अंक ११
सितम्बर, १९७२

आकल्पं कवि नूतनाम्बुदमयी कादम्बिनी वं

निबंध एवं लेख

१६. बर्कले में हरे राम, हरे कृष्ण .... श्रीकांत
२१. दिनकर की डायरी .... रामधारीसिंह दिन
२५. क्या मृत्युदंड आवश्यक है .... योगेशचन्द्र
३२. मंगोलिया में भारतीय संस्कृति .... डॉ. शारदा
३६. भारतेन्दु—एक भावांजलि .... वियोगी
४३. शैलेन्द्र : जैसा मैंने देखा .... राम
४८. भारत में श्रम-संगठनों का विकास ... डॉ. गौरीशंकर
६३. थिरकते पैरों की छवि .... जयश्री
६५. प्यार के खून से खिला फूल .... ए. के.
६९. दिलवाड़ा के मंदिर .... राजेन्द्रशंकर
७४. रूस की आणविक जासूसी .... दिव्या
८०. नौकरशाही के शैतानी पंजे .... डॉ. कैलाश
९४. ये सरकारी प्रतिष्ठान (१) .... बलदेव
११०. दुनिया समाप्ति की ओर .... एमिल
११५. तमिल काव्यों में इंद्रोत्सव .... शीरीन
१२५. भविष्य का हादसा .... शुभा
१२९. वैदिक देवताओं पर पुनर्दृष्टि .... के. सी.
१३३. चित्रों में आखेट .... मोहनलाल
१४३. दस्तावेज .... लक्ष्मीकान्त
१४८. हंसी की रंगीन किरणें लिपस्टिक .... सरोजनी
१५४. सान मारीनो .... सुर
१५९. जीवन को सार्थक बनाइए .... डॉ. बद्रीप्रसाद
१६४. विद्युत झटकों से बचिए .... रीता

कथ

हा

हिन

सम्पादकः राजेन्द्र अवस्थी

१६७. विदुर .... इरावती कर्वे

कविताएं
१११. कौन समझाये उन्हें .... सावित्री परमार
१३९. खम्भों पर चढ़ गयी रोशनी .... कुंअर
स्वीकृति .... सुशील गुप्ता
प्रश्न-चिह्न .... उमाकांत मालवीय
१६३. दो कविताएं (प्रवेश) .... शशि कमलेश

कथा-साहित्य
५२. प्रिय मेहमान .... अमरकान्त
७२. मिनी कहानियां .... जनमेजय
८४. अपनी-अपनी दुनिया .... रजनी पनिकर
१०२. छोटी-सी बात .... गुलाबदास ब्रोकर

हास्य-व्यंग्य
२८. बेनजीर .... शरद जोशी
१४०. इन्हीं लोगों ने .... के. पी. सक्सेना
१५०. किस्से डॉन कैमिलो के .... ग्वावनी गॉरेशी

स्तम्भ
शब्द-सामर्थ्य बढ़ाइये—९, आपके पत्र—११, समय के हस्ताक्षर—१४, हंसने का मौसम—४१, कालेज के कम्पाउंड से—५९, गृहिणी-जीवन की समस्याएं—९२, प्रेरक प्रसंग—१००, गोष्ठी—१२०, क्षणिकाएं—१२३, आपका भवितव्य—१७३, नयी कृतियां—१७७, सार-संक्षेप (शाही जल्लादों की कहानियां—हेनरी सेंसन)—१८०

मुखपृष्ठ (थिरकते पैरों की छवि) : छाया—प्रेम कपूर

हिन्दुस्तान टाइम्स प्रकाशन,
नयी दिल्ली-१

भारतीय
भाषाओं
की
विशिष्ट पत्रिका

निम्नलिखित शब्दों के जो सही अर्थ हों उन पर चिह्न लगाइए और अगले पृष्ठ पर दिये गये उत्तर से मिलाइए
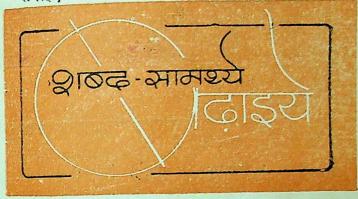
१. **तपःपूत**––क. योग्य पुत्र, ख. ज्ञानवान, ग. तपस्या से पवित्र हुआ, घ. अनुभवी।

२. **स्मारिका**––क. यादगार, ख. स्मरण-शक्ति, ग. चिंता की बात, घ. याद के लिए दी हुई चीज।

३. **इहलीला**––क. नाटक, ख. लोक-व्यवहार, ग. इस संसार का जीवन, घ. संसार।

४. **विमुद्रीकरण**––क. उपयोगहीनता, ख. घाटा, ग. मुद्रा का मूल्य कम होना, घ. किसी सिक्के, नोट आदि का चलन बंद करना।

५. **निरवरोध**––क. बिना रुकावट के, ख. बिना विरोध के, ग. निःसंकोच, घ. निर्दोष।

६. **अतिरंजन**––क. चित्रण, ख. मनोरंजन, ग. बात को बढ़ा-चढ़ा कर कहना, घ. रोचक वर्णन।

७. **अनुकम्पा**––क. दया, ख. प्रेरणा, ग. समर्थन, घ. सहायता।

८. **अतिस्वन**––क. पूजा, ख. शब्द की गति से तेज चलने वाला, ग. उपचार, घ. अपशकुन।

९. **स्वजन**––क. प्रिय व्यक्ति, ख. सम्बंधी, ग. पड़ोसी, घ. अपने दल का।

१०. **समवेत**––क. मिलता-जुलता, ख. आगे-पीछे, ग. इकट्ठा, घ. मधुर।

११. **आच्छन्न**––क. छना हुआ, ख. स्वच्छ, ग. ढका हुआ, घ. प्रसन्न।

शब्द-सामर्थ्य के उत्तर

१. **तपःपूत**---ग. तपस्या से पवित्र हुआ। **तपःपूत** व्यक्ति राष्ट्र के स्तम्भ होते हैं।

२. **स्मारिका**---घ. याद के लिए दी हुई चीज (सूविनीयर)। ने अपने वार्षिक अधिवेशन पर एक **स्मारिका** वितरित की है

३. **इहलीला**---ग. इस संसार का जीवन। उसकी **इहलीला** होते ही लड़कों में फूट पड़ गयी।

४. **विमुद्रीकरण**---घ. किसी सिक्के, नोट आदि का चलन बंद (डिमॉनीटाइज़ेशन)। बंगलादेश में कुछ नोटों का **विमुद्री** किया गया है।

५. **निरवरोध**---क. बिना रुकावट के। मेरा कार्य **निरवरोध** हो गया।

६. **अतिरंजन**---ग. बात को बढ़ा-चढ़ा कर कहना। आपके **अतिरंजन** है।

७. **अनुकम्पा**---क. दया। ईश्वर की **अनुकम्पा** के बिना कुछ भी नहीं होता।

८. **अतिस्वन**---ख. शब्द की गति से तेज चलने वाला। अब **अति** विमानों का युग आरंभ हो रहा है।

९. **स्वजन**---ख. सम्बंधी। महत्त्वपूर्ण कार्यों में **स्वजनों** का अपेक्षित है।

१०. **समवेत**---ग. इकट्ठा। इस योजना का सदस्यों ने **समवेत** से समर्थन किया।

११. **आच्छन्न**---ग. ढका हुआ। आज आकाश मेघों से **आच्छन्न** है।

इधर 'कादम्बिनी' के अंक देखे। इन पर निश्चय ही, आपके व्यक्तित्व की छाप है। मेरा विश्वास है कि आपके संपादन में पत्रिका नयी प्रतिष्ठा पाएगी।

--कृष्णचन्द्र शर्मा भिक्खु, आकाशवाणी, पटना

अगस्त अंक में प्रकाशित श्री विद्याचरण शुक्ल के विचारों से मैं सहमत नहीं हूं। उनका यह कथन अतिशयोक्तिपूर्ण है कि भारत की कोई पराजय नहीं हुई। समझ में नहीं आया कि उनकी पराजय की क्या परिभाषा है! हमला तो धोखेबाजी से ही होता है। शुक्लजी का कहना है कि चीनी मैदान में आते तो हम उनकी पिटाई कर देते। क्या शत्रु जब घर में घुस आये तभी उसे मारना चाहिए? शत्रु को क्या घर के बाहर सीमा पर ही नहीं रोकना चाहिए? १९७१ का युद्ध भारत ने पाकिस्तान की सीमा में घुसकर ही लड़ा था।

'समय के हस्ताक्षर' पसंद आया। सार-संक्षेप स्तर का नहीं था।

—शिवनारायण शिवहरे, सोहागपुर

अगस्त अंक में श्री पुरुषोत्तम नागेश ओक का लेख 'इंग्लैंड हिंदू देश था' शोधपूर्ण एवं सूचनापरक था। 'शब्द-सामर्थ्य बढ़ाइये' ने सबसे ज्यादा प्रभावित किया।

—मदनप्रसाद, लहेरियासराय, दरभंगा

अगस्त का अंक अनूठा था। आपके कुशल सम्पादन में पत्रिका ज्ञानवर्धक एवं रोचक प्रसंगों से परिपूर्ण होती जा रही है। विशेषकर, प्रधानमंत्री पर विशिष्ट लेख एवं 'गौ का मालिक' कहानी बहुत ही हृदयस्पर्शी थी। 'कालेज के कम्पाउंड से' स्तम्भ रोचक है।

—कृष्णा श्रीवास्तव, गैरतगंज (म. प्र.)

साज-सज्जा एवं सामग्री की दृष्टि से अगस्त अंक सुंदर था। 'शब्द-सामर्थ्य बढ़ाइये' स्तम्भ बहुत ज्ञानवर्धक है।

—जयदेवकुमार गोयल, रायसिंहनगर

उड़िया-भाषी एक पाठक की प्रतिक्रिया

'कादम्बिनीर' अंक देखिलि। एहा निश्चित रूपरे एक उच्च कोटीर उपादेय एवं आदर्श साहित्य पत्रिका याहाकुमि हिंदी भाषारे अल्प ज्ञान थिवा लोषे सहजरे पढ़ि ओ बुझि पारिवे एवं संजुक्त विषयरे अनेक नूतन तथ्य आहरण करि पारिवे। 'कादम्बिनी' मेधावी पाठक मानकर ज्ञान बुद्धि ओ विवेकर उत्तम विकाश दिगरे अपरिहार्य अटे।

—रामकृष्ण हालदार, कटक (उड़ीसा)

अगले अंक में

● चक्रव्यूह में फंसा कश्मीर--कुछ यादें : भूतपूर्व केंद्रीय मंत्री अजितप्रसाद जैन की महत्त्वपूर्ण कृति--'सार संक्षेप' के अंतर्गत ।

● एक अंतरंग-वार्त्ता का एकाकी साथी-- डॉ. बी. वी. केसकर

● हिंदी रंगमंच--राहों से मंजिल तक : हिंदी रंगमंच की अभिनेत्रियां--एक जीवन-यात्रा ।

● उरांव किशोरियां और कुमारियां-- एक दिलचस्प वृत्तांत

अन्य आकर्षण

● बंगला कहानी -- यही झूठ नहीं : महाश्वेतादेवी

● हिंदी कहानी -- जित्तन भइया : रामदरश मिश्र ● व्यंग्य : रवीन्द्रनाथ त्यागी

● शैलेन्द्र : जैसा मैंने देखा

● जैन साहित्य और शिल्प में कृष्ण

कुछ और लेखक

● दिनकर ● डॉ. विनयमोहन शर्मा ● अर्श मलसियानी ● जतीन दास ● नरेंद्र शर्मा ● विवेकी राय ● वियोगी हरि

'कादम्बिनी' में सभी विषयों के लेखकों का सहयोग लिया जाता है भी लिया जाना चाहिए। देश के जिक प्रसंग समय-समय पर कर पाठकों की अभिरुचि और में सहयोग करते रहना चाहिए हिंदी पत्रकारिता को अंगरेजी पत्र के स्तर का ही नहीं, उच्च कोटि का जाए ।

--जगदम्बीप्रसाद यादव, संसद

जून अंक में 'द्वितीय महायुद्ध बिगुल किसने बजाया' में मेजर नौ सही नाम मेजर अल्फ्रेड नाउजौक यह बात गलत है कि वे दक्षिण-अ के किसी देश में भाग गये हैं। वे ग्रोसफ्लोट-बेकर नगर के डार्क के मालिक हैं ।

--अनिलकुमार रुद्रपुर (नैनी

'कादम्बिनी' में जिस नूतन वर्तन का आपने दावा किया था, उसका सबूत लेकर आ गया। 'का में जो दिया है, वह अभिनंदन है ।

--श्रीकांत चौधरी, दमोह (म.

कृपया रचना के साथ टिकट लगा, लिखा लिफ़ाफ़ा अवश्य भेजें, अस्वीकृति की अवस्था में रचना लौटाना सम्भव न होगा।

एक नयी लेखमाला

क्यों और क्यों नहीं?

लेखक और पाठक का आपस में गहरा सम्बंध होता है और प्रत्यक्ष रूप से एक-दूसरे से परिचित न होते हुए भी वे अ-परिचित नहीं होते। प्रत्येक लेखक की आकांक्षा होती है कि उसे अधिक-से-अधिक पाठकों का प्रेम मिले और उसकी कृतियां लोकप्रिय हों। पाठक अपने प्रिय लेखक की कृतियों को खोज-खोजकर पढ़ता है और उनके द्वारा अपनी बौद्धिक भूख को मिटाता है।

पाठक जिज्ञासु होता है, वह अपने प्रिय लेखक के बारे में बहुत कुछ जानना चाहता है। वह लेखक की रचना-प्रक्रिया, सृजन के क्षणों की अनुभूति, उसकी रचनाओं के क्रम, व्यतिक्रम, चरित्रों और इनकी सम्वेदनाओं के विषय में लेखक से स्वयं जानने का इच्छुक होता है। वह शायद लेखक के निजी जीवन को भी जानना चाहता है।

हम एक नयी लेख-माला आरम्भ कर रहे हैं और यह लेखक तथा पाठक को आमने-सामने लाने का प्रयास है। प्रत्येक अंक में हम एक लेखक के नाम की घोषणा करेंगे, पाठक उस लेखक के साहित्य, जीवन, जीवन-दर्शन, पात्र और पात्रों की कमियों अथवा अच्छाइयों, कृतियों में उपलब्ध विरोधाभासों अथवा जीवन से सम्बंधित किसी भी जिज्ञासु विषय पर प्रश्न पूछ सकते हैं। हम वे सारे प्रश्न लेखक के पास भेज देंगे और उनसे प्राप्त उत्तर, प्रश्नकर्त्ता के नाम सहित 'कादम्बिनी' में प्रकाशित करेंगे।

एक प्रश्नकर्त्ता दो से अधिक प्रश्न नहीं पूछ सकेगा। लिफाफे के ऊपर एक कोने में यह अवश्य लिखिए——'क्यों और क्यों नहीं—— स्तम्भ के लिए।'

आपके प्रश्न सम्पादक के पास पहुंचने की अंतिम तिथि है १५ सितम्बर, १९७२

इस अंक के लिए लेखक होंगे :

अमृतलाल नागर

नागरजी की प्रमुख कृतियां: 'बूंद और समुद्र', 'सुहाग के नूपुर' 'अमृत और विष', 'एकदा नेमिशारण्ये'।

स्वाधीनता के पच्चीस वर्ष पूरे हो गये। आदमी के संदर्भ में पच्चीसवां वर्ष महत्त्वपूर्ण माना जाता है, क्योंकि वह 'गधापचीसी' से उबरकर एक उत्तरदायित्वपूर्ण ऐसे युवक का स्वरूप ग्रहण करता है जो अपने लक्ष्यों को निर्धारित कर उनके प्रति सचेष्ट होने लगता है। राष्ट्र के इतिहास में भी पच्चीस वर्ष महत्त्व के हैं; एक सदी का चौथाई हिस्सा कम नहीं होता।

यह अवसर वास्तव में आत्मदर्शन और एक सीमा पर खड़े होकर व्यतीत को तीखी दृष्टि से देखने का है। हमने इन पच्चीस वर्षों में कितना-कुछ पाया है? हमारी असफलताएं क्या रही हैं और क्या अब हमने एक परिपक्व राष्ट्र की तरह 'बिहेव' करना सीख लिया है?
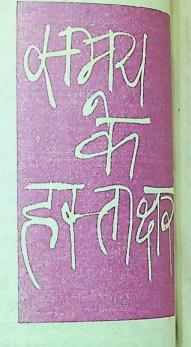
पिछले वर्ष गरीबी, भुखमरी, युद्ध, मूल्यों में वृद्धि, मानव-मूल्यों [illegible] गिरावट, निराशा, बेबसी और राजनैतिक खोखलेपन के रहे हैं। नारों [illegible] भाषणों की फसल के बीच 'समाजवाद' का सबसे अधिक रोपण हुआ है [illegible] अब उसके फसल पकने की प्रतीक्षा की जा रही है। कई ऐसे महत्त्व[illegible] क्षेत्र, जो किसी भी राष्ट्र के मौलिक चिंतन को प्रभावित करते हैं और [illegible] राष्ट्र की नींव मजबूत होती है, एकदम उपेक्षित छोड़ दिये गये। हम [illegible] शिक्षा-संस्थाओं का विशेष रूप से उल्लेख करना चाहेंगे। यह जानते [illegible] भी कि ब्रितानिया सरकार के [illegible]र इस देश में उसकी भाषा ने ही जमाये [illegible] हम पच्चीस वर्षों में किसी एक राष्ट्रीय भाषा का विकास नहीं कर पाये [illegible] विश्वविद्यालयों की भीड़ बढ़ी है। सन् १९४७ तक पूरे देश में [illegible] से भी कम विश्वविद्यालय थे, अब उनकी संख्या नब्बे है, लेकिन इ[illegible] बावजूद शिक्षा का स्तर उतनी ही गति से नीचे गिरा है और ये विश्ववि[illegible]लय उचित प्रतिभा के विकास-केंद्र नहीं रह गये। जब सरकार को इ[illegible] भान हुआ तो कुछ स्वायत्त संस्थाएं बनायी गयीं, जिनमें यूनिवर्सिटी [illegible]

कमीशन (UGC), नेशनल कौंसिल फॉर एज्यूकेशनल ऐंड साइंटिफिक रिसर्च (NCERT) और इंस्टीट्यूट ऑफ एप्लाइड मैनपावर ऐंड रिसर्च (IAMR) जैसी संस्थाएं शामिल हैं। प्रयोजन यह था कि जो 'टेलेंट' विश्वविद्यालय नहीं दे सके, इन संस्थाओं से प्राप्त होगी। जब यह आकांक्षा बहुत सफलीभूत नहीं हुई तो इंस्टीट्यूट ऑफ एडवांस स्टडी और इंडियन कौंसिल ऑफ सोशल साइंस रिसर्च जैसी संस्थाएं बनायी गयीं और इनका नियंत्रण सीधे मंत्रालय को सौंपा गया। कल्पना थी कि कि ये संस्थाएं अंतर-राष्ट्रीय शोध के प्रतिमानों को बनाये रखेंगी। इन्हीं के समानांतर इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजिकल रिसर्च (IIT) की स्थापना हुई और देश भर में पांच ऐसे केंद्र खोले गये।

विश्वविद्यालयों से लेकर इन संस्थाओं तक पहुंचना एक तलाश थी-- स्तर की और मौलिक प्रतिभा के अन्वेषण की। इस तरह शिक्षा के क्षेत्र में लगातार प्रयोग होते रहे और रेगिस्तान में 'ओएसिस' या हरितभूमि की खोज निरंतर की जाती रही। लेकिन हमारे देश की ब्यूरोक्रेसी बराबर उन्हें कुचलने में लगी रही। फल यह हुआ कि जो थोड़ी मौलिक प्रतिभा उभरकर सामने आयी उसके लिए उतने विकास के क्षेत्र नहीं रहे और उसमें से अधिकांश इस देश के बाहर चली गयी और स्थिति वहीं-की-वहीं बनी रही। यही नहीं, अब भी प्रतिभाओं का विकास निजी क्षेत्रों में अधिक है और टाटा स्कूल ऑफ फंडामेंटल रिसर्च तथा टेक्नोलॉजिकल इंस्टीट्यूट, पिलानी जैसी संस्थाएं जो कर रही हैं, सरकारी स्तर पर नहीं हो पा रहा।

वास्तव में यह इन सबके चिंतन और आत्मदर्शन का समय था, लेकिन लगता है, आज भी जिहाद और खोखले नारों के बीच अपने को भुला देना हमें अधिक प्रिय है। यही कारण है कि इस देश का लेखक, चिंतक और अन्य बुद्धिजीवी वर्ग अपने को असम्पृक्त और कटा हुआ पाता है और आज का भारतीय साहित्य इसी कुंठा, निराशा, संत्रास, बेबसी और बेरोजगारी के बीच पनप रहा है। राष्ट्रीय समस्याओं के संदर्भ में लेखक की कोई विशिष्ट भूमिका न होने से वह अपनी ही बनायी हुई एक दूसरी दुनिया में है, जिसके लिए उसे कदापि दोषी नहीं ठहराया जा सकता।
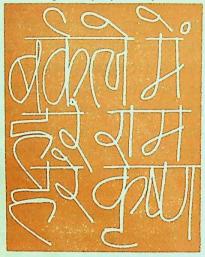
● श्रीकान्त वर्मा

नवम्बर १९७० के आखिरी दिन थे। आयोवा में अभी बर्फ पड़नी शुरू नहीं हुई थी। कभी-कभी पानी जरूर बरस जाता था। कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय के दक्षिण एशिया-अध्ययन-विभाग ने इन्हीं दिनों बर्कले में 'भारतीय साहित्य' पर भाषण देने के लिए मुझे आमंत्रित किया था। विभाग से सम्बद्ध एक मित्र प्रोफेसर गोर्डन रोडरमल ने, भारत, विशेषकर हिंदी साहित्य से जिनका प्रेम किसी भी हिंदी लेखक से कम नहीं था, मुझे लिखा कि कैलिफोर्निया के लिए सबसे अच्छा मौसम यही होता है।

बर्कले के 'छात्र विद्रोह' के विषय में मैंने बहुत कुछ पढ़ और सुन रखा था। आयोवा में ही 'द बर्कले रिबेलियन ऐंड बियांड' नामक एक पुस्तक मेरे हाथ [illegible] थी, जिससे मेरे मन में यह साफ हो [illegible] था कि बर्कले अमरीका के युवा वर्ग [illegible] नब्ज नहीं, बल्कि हृदय है।

अमरीकी सत्ता प्रतिष्ठान का [illegible] बड़ा विरोधी, बल्कि दुश्मन बर्कले [illegible] विद्यालय है, और यह बात सर्वविदित [illegible]

रोडरमल से तय हुआ कि मैं [illegible] दिन अपराह्न चार बजे बर्कले पहुंचूं[illegible] मगर मेरे पास सारा दिन करने के [illegible] कुछ भी नहीं था। इसलिए मैं सूचित [illegible] बिना बारह बजे ही बर्कले चला आया। बर्कले सॉन फ्रांसिस्को से कुछ मील दूर है।

सारा अमरीका दोपहर का भोजन बारह बजे करता है। मगर बर्कले [illegible] अमरीकी विश्वविद्यालयों से बहुत अलग है। बर्कले में छात्र-छात्राएं बारह [illegible] हैम्बर्गर और तुना सैंडविच से ही [illegible] निपटते, बल्कि अपने आपसे, अपनी शंकाओं और सवालों से भी निपटते हैं—लगभग हर चौमुहाने पर छोटी-मोटी भीड़ होती है, छोटे-मोटे प्रदर्शन होते हैं, जिन्हें देखना और सुनना अपने आप में एक अनुभव होता है।

ऐसी ही एक भीड़ के करीब घास पर बैठा मैं वक्त गुजार रहा था। आसपास निहायत अनौपचारिक वेशभूषा में लड़के-लड़कियां लेटे या बैठे थे। कुछ बड़ी बे[illegible] कल्लुफी के साथ प्यार कर रहे थे। [illegible] अमरीकी विश्वविद्यालयों में बेतकल्लुफी और अनौपचारिकता का वातावरण हो[illegible]

श्रीकान्त वर्मा : हिंदी के सुपरिचित कवि, कथाकार और 'दिनमान' के विशेष प्रतिनिधि। श्री वर्मा कुछ महीने अमरीका में रहे हैं। इस लेख में वहां के बदलते हुए मूल्यों की एक झांकी प्रस्तुत की गयी है

है। लॉस एंजेल्स के विश्वविद्यालय में तो, जो 'अकला' (यूनिवर्सिटी ऑव कैलिफोर्निया) के नाम से मशहूर है, लड़कियां जंजीर में अपना कुत्ता बांधे पढ़ने जाती हैं।

एक विदेशी को अकेला बैठा देख, बगल में सैंडविच का एक पैकेट दबाये एक छात्र मेरी ओर आया और पूछा, "तुम यहां क्या कर रहे हो?"

मैंने कहा, "वक्त गुजार रहा हूं।"

"विद्यार्थी हो?"

"नहीं, लेखक हूं।"

"तब तुम्हें विद्यार्थियों से जरूर मिलना चाहिए। स्टूडेंट्स यूनिययन की तरफ चलें। मैं उधर जा भी रहा था। तुम्हें कुछ चीजें दिखाऊंगा। शायद तुम्हारी दिलचस्पी उनमें हो। तुम्हारा नाम?"

"श्रीकांत वर्मा!"

"मुश्किल नाम है। मुझे वेन कहते हैं। वंश से मैं जरमन हूं।"

स्टुडेंट्स यूनियन की इमारत से जरा हटकर बैठे एक गिरोह की ओर अंगुली से इशारा करते हुए वेन ने कहा, "इन्हें पहचानते हो?"

जहां प्रसाद बिकता है!

मैंने देखा सिर मुंडाये, और रामनामी वस्त्र पहने गोरे युवक-युवतियों का एक झुंड ठेठ भारतीय शैली में, पत्तल में भोजन-परोस रहा था। मैं समझ गया कि यही बर्कले का प्रसिद्ध 'हरे राम, हरे कृष्ण' सम्प्रदाय है।

इसके पहले कि मैं वेन से उनके बारे में कुछ पूछूं, उनमें से एक उठकर दोने में भारतीय विधि से पकाया चावल और हलुआ लेकर मेरी ओर आया और उसने कहा, "प्रसादम्!"

एक लाख नाम-जप
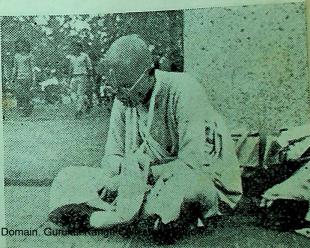
बर्कले (अमरीका) में छात्र-यूनियन भवन के सामने कीर्तन का दृश्य

'प्रसादम्' स्वीकार करने में मुझे संकोच करता देख वेन ने मुझसे कहा, "अगर तुम्हें पसंद न हो, तो न लो। वे बुरा नहीं मानेंगे।"

मैंने वेन से पूछा, "मगर वह मुझे 'प्रसादम्' दे क्यों रहा है?"

"दे नहीं रहा है, बेच रहा है। इस सम्प्रदाय में दिलचस्पी रखने वाले लोग भारतीय पद्धति से पकायी चीजें, कंगन, जड़ी-बूटियां, मालाएं, भारत में बनी बहुतेरी छोटी-मोटी चीजें बेचते भी हैं। इससे जो पैसा प्राप्त होता है, उससे उनका आंदोलन भी चल जाता है।"

मैंने देखा, समीप ही रुद्राक्ष मालाओं, कंगनों और तिब्बती जड़ी-बूटियों का ढेर लगा हुआ था।

"इन्हें कौन खरीदता है?" मैंने पूछा।

"अधिकतर गोरे युवक-युवतियों की दिलचस्पी इन चीजों में हो है। तुम्हें शायद पता न अमरीकी छात्रों में अच्छा-खासा वर्ग है जिस दिलचस्पी भारत में है। सोचता है कि तकनीकी उसे जो व्याधियां दी भारत उनका समाधान क सकता है। तुम क्या सोच हो?"

"एक सभ्यता दूसरी सभ्यता को समाधान नहीं दे सकती है। हर व्यक्ति को अपना समाधान स्वयं ढूंढ़ना पड़ता है, फिर वह व्यक्ति भारतीय हो या अमरीकी! इसलिए मैं एक आंदोलन के रूप में 'हरे राम, हरे कृष्ण' की सार्थकता समझ नहीं पा रहा हूं।"

मैं वेन से बात कर ही रहा था कि यूनियन हाल से निकलकर एक लड़की आ धमकी। "हॉय वेन!"

"हॉय जुडी।"

वेन ने कहा, "जुडी इस पर ज्यादा अच्छी तरह प्रकाश डाल सकती है। उसने भारतीय दर्शन का अध्ययन भी किया है। मगर रुको ... वे नृत्य करने जा रहे हैं।"

'प्रसादम्' समाप्त कर 'हरे राम, हरे कृष्ण' समुदाय नृत्य के लिए उठ खड़ा हुआ था। थोड़ी ही देर में वे गोल बांधकर नृत्य करने लगे। 'हरे राम, हरे कृष्ण' गाते वे नृत्य करते जा रहे थे। एक चार-पांच वर्ष का छोटा बच्चा भी नृत्य

कर रहा था, जो अपनी मां के पैरों से लगभग लिपट-लिपट जा रहा था।

मैं अपने कैमरे से उनकी तसवीरें लेता जा रहा था और वे इसका विरोध करते जा रहे थे। उनका तर्क था कि यह कोई प्रदर्शन या सरकस नहीं। आखिर में जुडी ने उन्हें समझाया कि ये अतिथि हैं, और वह भी भारतीय अतिथि!

अभी नृत्य जारी ही था कि काले कपड़े पहने एक लंब-तड़ंग व्यक्ति वहां प्रकट हो गया। नर्तकों के चारों ओर घूम-घूम वह चीखने लगा, "और नाचो! चाहो तो नंगे हो जाओ! नाच-नाच कर बेदम हो जाओ। अपनी टांगें तोड़ डालो! अपना कचूमर निकाल डालो!" उसके चीखने-चिल्लाने का कोई असर नहीं हुआ।

तब वह मेरी ओर आया। उसने मुझसे कहा, "तुम्हें इस सबका विरोध करना चाहिए।"

मैंने कहा, "क्यों?"

"वे भारत को बदनाम कर रहे हैं।"

"जैसे तुम अमरीका को बदनाम कर रहे हो," जुडी ने कहा, "भाग जाओ यहां से।" जुडी ने बताया कि यह व्यक्ति अमरीका के दक्षिणी राज्य का एक पुनरुत्थानवादी है। उसका खयाल है कि 'हरे राम, हरे कृष्ण' सम्प्रदाय ईसाई धर्म के लिए खतरा बनता जा रहा है।

जुडी ने मुझसे पूछा, "तुम्हारा इस आंदोलन के विषय में क्या खयाल है? क्या ये भारत को बदनाम कर रहे हैं?"

"नहीं। मैं ऐसा नहीं सोचता। मैं स्वयं ही जानना चाहता हूं कि भारतीय अध्यात्म में उनकी दिलचस्पी क्यों और किस स्तर पर है?"

"तुम्हें एलेन गिन्सवर्ग से पूछना चाहिए, उसकी दिलचस्पी चरस में क्यों और किस स्तर पर है?" जुडी खिलखिलाकर हंस पड़ी, "तुम्हें पता है, गिन्सवर्ग ने एक बार स्वामी भक्तिवेदांत से चरस छोड़ने का उपाय पूछा। स्वामी भक्तिवेदांत ने उसे हर रोज तीन लाख बार रामनाम का जाप करने की सलाह दी। कुछ समय बाद गिन्सबर्ग ने स्वामी भक्तिवेदांत से कहा—'स्वामी, चरस तो दूर, मुझसे सिगरेट नहीं छूट रही है।

बर्कले में रामधुन में मग्न कीर्तनकार सोत्साह नृत्य करते हुए

इतना लम्बा जाप कठिन है । गिन्सबर्ग से जाप नहीं हुआ । मगर इन युवक-युवतियों में कितने ही ऐसे हैं जो लगभग हर रोज विधिवत जाप करते हैं।"

मैंने पूछा, "इसका क्या कारण है ?"

"कारण साफ है," जुडी ने कहा, "गिन्सबर्ग को इसकी जरूरत नहीं । गिन्सबर्ग कवि हैं । कवि की तन्मयता का क्षण उसकी कविता है । कविता एक आध्यात्मिक प्रक्रिया है । कविता के माध्यम से कवि यह निर्वैयक्तिकता प्राप्त करता है जिसे ये युवक-युवतियां कीर्तन और नृत्य द्वारा प्राप्त करते हैं।"

"मगर क्या वे उसकी दार्शनिक आधार-भूमि जानते हैं ?"

"क्या कोई कवि अपनी कविता की दार्शनिक भूमि तलाश करने के बाद कविता करता है ? मुझे बताया गया है कि तुम्हारे देश के भक्ति आंदोलन में 'सगुण' और 'निर्गुण' दो शाखाएं थीं । 'सगुण' शाखा ने ही तुम्हारी जनता को दर्शन की गुत्थियों से निकाल कर मुक्ति का सहज मार्ग सुलभ कराया । ये लोग 'सगुणिये' हैं । इन्हें चैतन्य महाप्रभु की तरह लय की तलाश है । वे जानते हैं लय ही सृष्टि है, लय ही विसर्जन है ।"

जुडी ने कहा, "मुश्किल यह है कि भारत, बल्कि समूचा पूर्व आज जिन शंकाओं से घिरा हुआ है, वे उसकी अपनी शंकाएं नहीं हैं । वे पश्चिमी शंकाएं हैं । पश्चिम ने उसे उलझन में डालने के लिए कुछ ऐसे सवाल दे दिये हैं उत्तर ढूंढ़ना उसका काम नहीं । बेचारा एशिया निष्ठावान स्कूली की तरह शायद पिटने के डर से सवालों से जूझ रहा है । "यह तकनीकी केवल चिंताएं देगी । यह कि वह सुविधाएं भी देती है, मगर ये सुविधाएं ही चिंताओं में बदल हैं । जीवन-पद्धति के विषय में क्रांति' जैसे नारे सरासर खोखले हैं । जिन देशों ने अभी तकनीकी के में प्रवेश नहीं किया है उन्हें इस में गहराई के साथ विचार करना चाहिए मैंने गांधी को पढ़ा है । गांधी ने तकनीकी को लेकर जो शंकाएं की थीं वे अर्थपूर्ण हैं । गांधी से अधिक किसी व्यक्ति ने यंत्र-सभ्यता की भयावहता को नहीं समझा । मैं एक बात और कहना चाहती हूं । बर्कले के छात्रों का विद्रोह केवल अमरीकी विदेश नीति के विरुद्ध नहीं था, बल्कि समूची जीवन-पद्धति के विरुद्ध था । 'हरे राम, हरे कृष्ण' आंदोलन भी इस जीवन-पद्धति के बाहर जाकर अपना खोया हुआ स्वत्व प्राप्त करने की उत्कट तलाश है । और कोई भी तलाश, चाहे वह हिप्पी युवक-युवतियों की हो या रुद्राक्ष मालाएं पहने इन लड़कियों की, बेमानी नहीं हो सकती अगर तुम यह नहीं समझ पाये तो न अमरीका को समझ पाओगे, न अपने आपको ।"

३० मार्च, १९६१

आज राज्यसभा के सत्र का अंतिम दिन था। घर से साउथ एवेन्यू तक पैदल गया। फिर टैक्सी लेकर अज्ञेयजी से मिलने चला गया। हिंदी में अज्ञेय ही हैं जो विश्वसाहित्य की नयी-से-नयी प्रवृत्ति के सम्पर्क में रहते हैं। बोलते वे बहुत कम हैं, शायद इसीलिए वे शीलवान दिखायी देते हैं। आज भी वे कम ही बोले, ज्यादा बातें मैं ही करता गया।

खंडवा के श्री विष्णु खरे ने इलियट के 'वेस्ट लैंड' का हिंदी में 'मरु प्रदेश' शीर्षक से अनुवाद किया है। इस अनुवाद के प्रकाशक हैं कटक के श्री प्रफुल्लचंद्र दास। पिछली बार जब मैं कटक गया था, प्रफुल्ल बाबू मुझे अपने दफ्तर में ले गये थे। हिंदी में श्रेष्ठ पुस्तकें निकालने का उत्साह उनमें बहुत दिखलायी पड़ा था। उनका आग्रह था कि 'मरु-प्रदेश' की भूमिका मैं ही लिखूं। भूमिका मैंने पिछले साल सितम्बर के आरम्भ में ही भेज दी थी। किताब छप कर आज आयी है। छपाई स्वच्छ है तथा गेट-अप भी मनोरम और गम्भीर है।

१ अप्रैल, १९६१

कल से हिंद-पाक सम्मेलन का जलसा चल रहा है। आज विज्ञान-भवन में उसका साहित्य समारोह मेरे सभापतित्व में हुआ। मैं जब बोलने को खड़ा हुआ, पश्चिमी पाकिस्तान के कवि हफीज जलंधरी ने कहा, "दिनकर साहब, आप उर्दू में बोलें।" यह सुनकर पूर्वी बंगाल के कवि जसीमउद्दीन खड़े हो गये और बोल उठे, "नो, नो, दिनकर! यू मस्ट स्पीक इन बेंगाली।" हफीज और जसीम, दोनों मेरे मित्र हैं। मैं पसोपेश में पड़ गया। निदान, मैंने कहा—"अगर यह बात है तब तो मुझे अंगरेजी में बोलना पड़ेगा।" और अपना भाषण मैंने अंगरेजी में ही दिया।
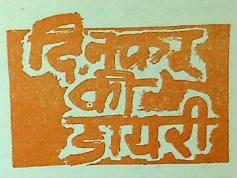
शौकत थानवी ने अपने भाषण में कहा, "पाकिस्तान में हमें उर्दू को आसान बनाना चाहिए। हिंदुस्तान में आप हिंदी को आसान बनाने की कोशिश करें।"

थानवी ने जब भाषण खतम किया, मैंने उसके कान में कहा, "मानते हो न, गांधीजी अभी भी पाकिस्तान और हिंदुस्तान के लिए 'रेलेवेंट' हैं?"

उसने कहा, "हां भाई, सो तो है।"

हफीज के साथ उनकी बेटी भी आयी हुई थी। जब हम लोग सभा से निकलने लगे, जसीम ने हफीज से कहा:

"वाह यार, तुमने अपनी गर्ल फ्रेंड से मेरा परिचय क्यों नहीं कराया ?"

हफीज ने कहा, "मैं उस तरह का आदमी नहीं हूं। जिसे तुम मेरी गर्ल फ्रेंड समझते हो, वह मेरी बेटी है।"

जसीम शर्म के मारे गड़ गया।

१७ अप्रैल, १९६१

रात एक सपना देखा कि अपने गांव सिमरिया और पास के गांव बीहट के बीच में खेतों के ऊपर आकाश में उड़ रहा हूं। इतने में पश्चिम की ओर से एक आदमी भैंसे पर चढ़ा हुआ आया और जहां मैं उड़ रहा था वहां आकर रुक गया। लगा, जैसे भैंसा और मनुष्य, दोनों मुझे पहचानते हैं। उनसे बात करने को मैं आकाश से पृथ्वी पर उतर आया और उस आदमी से मैंने पूछा, "क्या फिल्म बनाने आये हो ?" उस आदमी ने कहा, "हां, वृजदेव शर्मा की ओर से।" बस, इतने में नींद खुल गयी। स्वप्न में भय का भान नहीं हुआ था लेकिन जागने पर मैं इस स्वप्न पर चिंता करने लगा।

२० अप्रैल, १९६१

साहित्य अकादमी 'एकोत्तर शती' का हिंदी अनुवाद करवा रही है। अनुवादक हैं हजारीप्रसाद द्विवेदी, भवानीप्रसाद मिश्र और मैं। कृपलानी ने बताया कि गुरुदेव की इच्छा थी कि उनकी कविताओं का अनुवाद पद्य में नहीं किया जाए। इसीलिए हम तीनों व्यक्ति अनुवाद गद्य में ही कर रहे हैं। गद्य क्या, इसे पद्यगंधी गद्य कहना चाहिए।

२७ अप्रैल, १९[illegible]

राष्ट्रपति-भवन में सम्मान-[illegible]रोह। डॉक्टर विधानचन्द्रराय 'भा[illegible]' हुए हैं। उन्हें मैंने बधाई दी तो वे [illegible] "आप कहां के हैं ?" मैंने जब क[illegible] मेरा घर पटना है, वे बड़े खुश [illegible] पटना उनका भी जन्मस्थान है [illegible] बचपन में वे वहां रहे थे।

भीड़ में पंडितजी से भी भेंट [illegible] गयी। उन्होंने पूछा, "हमारे लोग '[illegible]' क्यों नहीं गाते हैं ? हिंदुस्तान में [illegible] ही तरह के गीत हैं। या तो दरबार के [illegible] जो 'क्लासिक' कहलाते हैं या फिर '[illegible] सांग'।"

मैंने कहा, "जनता में कोरस [illegible] सांग का ही चल सकता है।"

यह बात पंडितजी ने मुझसे एक [illegible] और कही थी जब चीन का सांस्कृ[illegible] शिष्ट-मंडल भारत आया था।

८ जुलाई, १९[illegible]

कौटिल्य ने अर्थशास्त्र में उन [illegible] को दंडनीय बताया है, जो आश्रितों [illegible] भविष्य का प्रबंध किये बिना संन्यास [illegible] लेते हैं अथवा जो स्त्रियों को संन्यासि[illegible] बनाते हैं।

नारद ने भी खास स्थितियों [illegible] संन्यासियों को दंडनीय माना है।

रूस-यात्रा की डा[illegible]

जब भी मैं विदेश-यात्रा पर [illegible] हूं, यात्रा की प्रमुख घटनाओं को [illegible]

जरूर कर लेता हूं। उन्हीं नोटों के आधार पर मेरे यात्रा-विवरण तैयार होते हैं। किंतु रूस-यात्रा पर जब मैं निकला, मेरा स्वास्थ्य कमजोर था। बदकिस्मती से मैं अपने शिष्टमंडल का प्रधान बना कर भेजा गया था। 'आप इस शिष्ट-मंडल के लीडर हैं,' ऐसा तो सरकार ने लिख कर नहीं दिया था, मगर रूस में

१९६१ का वर्ष १९६२ की व्यापक परिवर्तनशील घटनाओं का सूत्रधार था। दिनकरजी ने उन घटनाओं को कवि की सम्वेदनशील दृष्टि से देखा और अपनी डायरी में लिपिबद्ध किया है। इस अंक से हम उस डायरी के कुछ चुने हुए अंश क्रमशः प्रकाशित कर रहे हैं।

साहित्यिकों को जो उपहार देने थे, वे सभी मेरे जिम्मे कर दिये गये थे तथा जरूरी कागज-पत्र भी मैं ही ले गया था। इसलिए समझा यह गया कि शिष्टमंडल की जिम्मेदारी मेरे सिर पर।

साहित्यिकों के शिष्ट-मंडल में हम पांच व्यक्ति थे—उर्दू के कवि सागर निजामी, गुजराती के कवि श्री उमाशंकर जोशी, तमिल के उपन्यास लेखक वरद-राजन और कश्मीरी की ओर से जियालाल कौल (जो न तो कवि हैं, न लेखक) तथा हिंदी का प्रतिनिधि मैं। इन पांच मित्रों में से दो के मन में नेता के प्रति ईर्ष्या उत्पन्न हो गयी। इस ईर्ष्या से वे सारी यात्रा में जलते रहे और उन्होंने शिष्ट-मंडल की इज्जत बचाने के काम को एक 'टास्क' बना दिया। एक यह भी

कारण हुआ कि मेरी रूस-यात्रा नीरस हो गयी और मैं यात्रा के नोट ठीक से नहीं ले सका। यही समझिए कि आनंद-भ्रमण न होकर यह रस्मअदाई का काम हो गया।

अब जब मैं डायरी का सम्पादन करने लगा, कागजों के ढेर में सन १९६१ की दो-तीन अधूरी डायरियां एक के बाद एक मिल गयीं, जिनमें रूसी-यात्रा

की सभी तारीखें, आंकड़े वगैरा दर्ज हैं। उन्हीं के आधार पर रूस-यात्रा का कुछ थोड़ा-सा विवरण मैं लिख रहा हूं।

६ अक्तूबर, १९६१

६ अक्तूबर, १९६१ ई. शुक्रवार को हम रूसी जहाज से दिल्ली से उड़े। हम पांच साहित्यिकों के अलावा, उसी जहाज से संगीत-निर्देशक सचीन दे, एक महिला और कलकत्ते के एक प्रोफेसर भी रूस जा रहे थे। जब ताशकंद नजदीक आया, प्रोफेसर साहब ने ओवरकोट पहन कर मंकी-कैप भी पहन ली। मैंने उनसे पूछा, "सर्दी तो बहुत नहीं है, आप इतने गरम कपड़े क्यों पहन रहे हैं ?" उन्होंने कहा, "मैं अपनी पत्नी की आज्ञा का पालन कर रहा हूं। उन्होंने कहा था कि रूस की जमीन पर पांव धरने के पूर्व ही तुम गरम कपड़े पहन लेना। रूस की सर्दी का कोई भरोसा मत करना।"

ताशकंद में हम पांच साहित्यकार उन तीन हिंदुस्तानियों से अलग कर दिये गये। सचीन बाबू और प्रोफेसर साहब बार-बार मुझसे कहते रहे कि हमें भी अपने साथ ही मास्को ले चलिए, लेकिन रूसियों ने हमारी बात नहीं मानी। हम अलग कर ही दिये गये। पता चला कि सम-साहित्यिकों के लिए निर्धारित कार्यक्रम कुछ और था और उन लोगों का कार्यक्रम कुछ और।

ताशकंद में एक किस्सा और हुआ। जैसे ही जहाज ताशकंद में उतरा, [illegible] डॉक्टर जहाज में घुस आये और हम[illegible] हेल्थ सर्टिफिकेट जांचने लगे। [illegible] उन्होंने हमें कोई दवा पिलानी चाही। मैंने कहा, "इसके मानी ये हुए कि [illegible] समझते हैं कि भारत में हमने [illegible] और हैजे की सुइयां नहीं ली हैं। यह भार[illegible] सरकार के प्रबंध के प्रति अविश्वास है।" उमाशंकरजी को भी ताव आ गया। उन्होंने मुझसे कहा, "प्लीज़ सेट यो[illegible] फुट अगेन्स्ट इट ! इट डज नाट मै[illegible] इफ वी हैव टु रिटर्न फ्रॉम हियर।" निदान डॉक्टरों से मैंने कहा कि "आपकी दवा हम हरगिज नहीं पिएंगे। आप वहीं से हमें दिल्ली वापस भेजने का इंतजाम कीजिए।" इस रणनीति का असर तुरं[illegible] हुआ। डॉक्टर जहाज से बाहर जाकर फिर भीतर आये और उन्होंने कहा "खैर, दवा आप न पीते हैं तो न सही, मगर इस जहाज से उतर कर आपको दूसरे जहाज से मास्को जाना होगा।"

अतएव उस जहाज से उतर कर हवाईअड्डे के रेस्तरां में कुछ नाश्ता किया और फिर दूसरे जहाज में चढ़ कर हम मास्को के लिए रवाना हो गये। मास्को हम इंडियन स्टैंडर्ड टाइम के अनुसार डेढ़ बजे रात में पहुंचे। ताशकंद में मौसम खुला हुआ और साफ था, किंतु जब हम मास्को पहुंचे, वहां वर्षा हो रही थी।

(क्रमशः)

• योगेशचन्द्र शर्मा

क्या मृत्युदंड आवश्यक है?

सभ्यता की प्रगति के साथ-साथ मृत्युदंड के विधि-विधान में भी काफी परिवर्तन हुआ है। अब, कई राष्ट्रों में केवल विशेष अपराधों के लिए ही इस दंड की व्यवस्था है। मृत्यु की यातना को भी अब काफी कम करने का प्रयास किया गया है। इंग्लैंड में १७१८ में ३५० किस्म के अपराधों के लिए मृत्युदंड की व्यवस्था थी। १९३९ में यह घटकर २० हो गयी और १९६१ में केवल चार। १९६९ में इंग्लैंड की संसद ने भारी बहुमत से अपने देश में मृत्युदंड का उन्मूलन कर दिया।

इस समय लगभग ७० देशों में मृत्युदंड की व्यवस्था साधारणतः नहीं है। इनमें इंग्लैंड, इसरायल, स्विट्जरलैंड, मैक्सिको, नेपाल, नीदरलैंड, नार्वे, पुर्तगाल, आस्ट्रेलिया, रूमानिया, रूस आदि हैं। कुछ देश किसी भी स्थिति और अपराध के लिए मृत्युदंड के विरुद्ध हैं।

अमरीका में अपराध और दंड साधारणतः राज्य के विषय हैं। वहां पचास राज्यों में से दस में मृत्युदंड समाप्त हो चुका है। अन्य में भी मृत्युदंड-उन्मूलन के लिए आवाज उठ रही है।

भारत में भी मृत्युदंड समाप्त होने की मांग उठी है। स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद सर्वप्रथम यह मांग १९४९ में उठायी गयी थी। मगर, उस समय सरदार पटेल ने इस मांग को अस्वीकार कर दिया। उसके बाद तत्कालीन गृहमंत्री पं. गोविंदवल्लभ पंत ने भी इस मांग को समयानुकूल नहीं बतलाया। १९६२ में यह मांग पुनः संसद में प्रस्तुत की गयी। तब, सरकार ने इस पर विचार करने के लिए एक कमीशन की नियुक्ति की, जिसने भारतीय परिस्थितियों में मृत्युदंड-उन्मूलन उचित नहीं बताया। अन्य महत्त्वपूर्ण सिफारिशें ये थीं :

—अठारह वर्ष से कम आयु के व्यक्तियों को मृत्युदंड न दिया जाए।

—यह खुले रूप में नहीं होना चाहिए।

—महिलाओं को मृत्युदंड में कुछ रियायतें दी जा सकती हैं, मगर उन्हें इससे सर्वथा मुक्त नहीं रखा जा सकता।

—मृत्युदंड 'निश्चित', 'दयालु', 'शीघ्र' और 'सभ्य' रूप में होना चाहिए।

—मृत्युदंड के विरोधियों के जो तर्क हैं, उनमें उल्लेखनीय इस प्रकार से हैं—मृत्युदंड के पीछे बदले की भावना है,
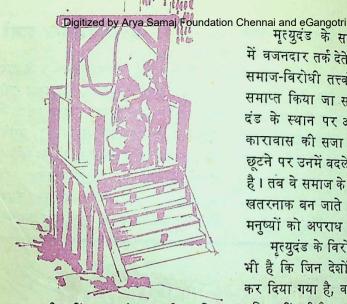
सुधार की नहीं; मृत्युदंड हमारी आदिम भावनाओं का सूचक है; मृत्युदंड पाये व्यक्ति के परिजनों को समाज में सम्मानित स्थान प्राप्त नहीं होता। इससे, उन्हें अत्यंत कष्टकर जीवन व्यतीत करना पड़ता है; यह एक वै ानिक हत्या है। इस संदर्भ में महात्मा गांधी के ये शब्द उल्लेखनीय हैं—"मैं एक आदमी द्वारा किसी की हत्या किये जाने और सरकार द्वारा किसी को फांसी पर लटकाये जाने में कोई भेद नहीं मानता।" मृत्युदंड के विरोधियों का सबसे प्रबल तर्क यह है कि न्यायालयों के निर्णय सदैव सही नहीं होते। उनसे भी गलती हो सकती है। अनेक उदाहरण देखने को मिलते हैं जिनमें निरपराधों को सजा दे दी जाती है और फिर वर्षों बाद पुनः जांच-पड़ताल करने पर वे निरपराध साबित होते हैं।

मृत्युदंड के समर्थक भी अपने पक्ष में वजनदार तर्क देते हैं—मृत्युदंड से ही समाज-विरोधी तत्त्वों को सदैव के लिए समाप्त किया जा सकता है; यदि मृत्यु-दंड के स्थान पर अपराधियों को केवल कारावास की सजा दी जाए तो जेल से छूटने पर उनमें बदले की भावना उभरती है। तब वे समाज के लिए और भी अधिक खतरनाक बन जाते हैं; मृत्युदंड का भय मनुष्यों को अपराध करने से रोकता है।

मृत्युदंड के विरोधियों का यह कहना भी है कि जिन देशों में मृत्युदंड समाप्त कर दिया गया है, वहां अपराधों में कोई वृद्धि नहीं हुई है, पर जिन देशों में मृत्यु-दंड की व्यवस्था है, वहां अपराधों की संख्या पूर्ववत है। उदाहरणार्थ, स्विट्जरलैंड में मृत्युदंड की व्यवस्था नहीं है फिर भी वहां दस लाख के पीछे एक अपराध होता है, जबकि मृत्युदंड की व्यवस्था वाले भारत में दस लाख के पीछे २९ अपराध होते हैं। मगर भारत और स्विट्जरलैंड की परिस्थितियों में आकाश-पाताल का अंतर है। लातीनी अमरीका के अधिकांश देशों में मृत्युदंड की व्यवस्था समाप्त की जा चुकी है, मगर वहां क्रांतियां और छापामार गतिविधियां प्रायः होती रहती हैं।

कुछ समय पूर्व संयुक्तराष्ट्रसंघ ने इस संदर्भ में एक सर्वेक्षण किया था। जिन देशों के उत्तर प्राप्त हुए, उनमें से ७५ प्रतिशत देशों ने मृत्युदंड की व्यवस्था

के पक्ष में अपने मत दिये ।

मृत्युदंड की व्यवस्था को आवश्यक मानते हुए भी इस तथ्य की उपेक्षा नहीं की जा सकती कि न्यायाधीश भी मनुष्य होते हैं और इसलिए उनसे भी गलती हो सकती है। इस आशंका को समाप्त करने के लिए यह आवश्यक है कि ऐसे अभियुक्तों को अपने को निरपराध प्रमाणित करने के लिए हर तरह की सुविधाएं दी जाएं। जिन मामलों में मृत्युदंड की व्यवस्था हो, उनमें भी आवश्यक रूप से अलग-अलग अदालतों में दो या तीन बार पुर्नविचार हो, ताकि गलती की आशंका न रहे।

मृत्युदंड के लिए दो बातें आवश्यक होनी चाहिएं—भयंकर अपराध, जैसे राष्ट्र-द्रोह, सामूहिक अथवा पूर्व-नियोजित हत्या आदि,तथा अभ्यस्त अपराधी जिसके सुधरने की कोई आशा नहीं ।

मृत्युदंड के साधनों में सुधार करना होगा। बिजली की कुरसी पर बैठाकर मृत्युदंड देना अधिक मानवीय है ।

जब किसी अपराधी को मृत्युदंड सुना दिया जाता है तो उसे अपील का अधिकार दिया जाता है और उसके बाद क्षमा-याचना का । इन सबमें उसके असफल होने के बाद ही मृत्युदंड की तारीख तय की जाती है। इसमें कभी-कभी छह महीने या उससे भी अधिक समय लग जाता है । उस अवधि में वह आशा और निराशा के बीच झूलता रहता है। उचित तो यह रहेगा कि अपराधी को मृत्युदंड की सूचना केवल तब दी जाए जब सभी अदालतों द्वारा उस पर विचार अथवा पुर्नविचार किया जा चुका हो ।

साधारणतः अपराधी को उसके अपराध के आधार पर ही दंड दे दिया जाता है और उन परिस्थितियों या विवशताओं का ध्यान नहीं रखा जाता जिनके कारण उसने अपराध किया है। अभ्यस्त अपराधी की बात अगर हम छोड़ दें, तो व्यक्ति या तो भावावेश के कारण अपराध करते हैं या परिस्थितियों के कारण। भावावेश के लिए व्यक्ति स्वयं उत्तरदायी है और इसलिए उसका सुधार होना सम्भव है। मगर जब परिस्थितियों से मजबूर होकर कोई अपराध करता है तो परि-स्थितियों को भी सुधारना जरूरी है। ●
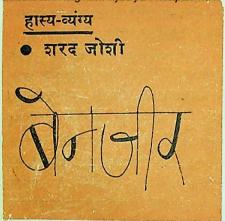
अंतरराष्ट्रीय राजनीति का वातावरण इन दिनों लाल-पीला नहीं वरन गुलाबी है। फिजां है चर्चा की, सीधी मुलाकात की। जो जहां कभी नहीं गया, वहां जा रहा है। भुट्टो शिमला और निक्सन मास्को। युद्ध युद्ध की जगह शांति शांति की जगह। रेखा के आर-पार दोनों शब्द ज्यों के त्यों हैं। बम भी चलें, हम भी मिलें। दोनों काम साथ-साथ। जमाना बीत गया जब युद्ध और शांति विकल्प थे एक-दूसरे के। अब दोनों समांतर पटरियां हैं, साथ-साथ जाती हैं। आप विएतनाम में युद्ध लड़ सकते हैं और पेरिस में शांति-वार्त्ता कर सकते हैं। मुकाम अलग, मौसम अलग, हवा अलग। यहां पत्ते फेंकिए, वहां गोले बरसाइए। यहां प्रस्ताव रखिए, वहां जहर बरसाइए। मुसकराइए और दांत पीसिए साथ-साथ। युद्ध एक कला है, बातचीत दूसरी कला है। हर मुल्क में दोनों किस्म के कलाकार रहते हैं। दोनों रंग कायम। शस्त्र भी, फूल भी। हर अदा और नाजो-अंदाज के लिए तैयार रहिए। उनके पास अगर सातवां बेड़ा है तो एक अदद मिस्टर कोनोली भी है जो जब चाहे आकर बातचीत कर सकता है। समांतर पटरी है फूल-कांटों से भरी जो चली जाती है।

डाकू माधोसिंह का मामला लीजिए। डाका डालता था और इसी बीच मुख्य मंत्री को पत्र लिखने या जयप्रकाश नारायण से मिलने की बात भी सोचता और प्रयत्न करता था। देश में दोनों किस्म के लोग होते हैं। पुलिस भी होती है और सर्वोदय कार्यकर्ता भी होते हैं। एक डाकू दोनों से दो किस्म का व्यवहार कर सकता है। मुठभेड़ और आत्मसमर्पण साथ-साथ। माधोसिंह ने वही किया जो निक्सन कर रहे हैं। उन्होंने विएतनाम में भीषण जानलेवा बमबारी नहीं रोकी और पेकिंग और मास्को भी गये। गुत्थमगुत्था और बातचीत साथ-साथ। शत्रु से सम्बन्धों में अब सर्प-नेवला योग नहीं रहा कि दिखे और लगे लड़ने! जब जैसा योग हो, स्थल हो, तब वैसा व्यवहार! यहां तक कि माधोसिंह ने मूरत सिंह से भी बातचीत की। दोनों के गैंग अलग, आपरेशन का क्षेत्र अलग, शिकार अलग, लूट अलग, मगर आत्मसमर्पण साथ-साथ। निक्सन ने पेकिंग और मास्को दोनों से बात की और एक जमीन की तलाश कर ली

जिस पर खड़े हो चीन और रूस ने एक-साथ विएतनाम पर दवाव डाला कि पेरिस-वार्त्ता में भाग ले और अपना मामला निवटाये। यदि माधोसिंह और शासन के बीच कोई पुल सम्भव नहीं है तो कोई सर्वोदयी सुब्बाराव सदैव प्राप्त हो सकता है। लड़ाई और भलाई साथ-साथ। नमकीन और मिठाई साथ-साथ।

सत्तरोत्तर राजनीति का यही मजा है। आप कोशिश करके अज्ञेय और नामवर सिंह को एक जगह बिठा सकते हैं। दीवारें हैं और उनमें सूराख भी हैं। आप दीवार का शोर मचा सकते हैं, सूराख का उपयोग कर सकते हैं। आत्म-समर्पण के पहले कुछ महीने मध्यप्रदेश के मुख्य-मंत्री प्रकाशचंद्र सेठी दस्यु-उन्मूलन की जोरदार तैयारियां कर रहे थे। पुलिस वालों की बैठकों में जोर-शोर से योजनाएं बन रही थीं। खत्म कर देंगे डाकुओं को, खत्म कर देंगे। मगर तभी पुलिस की खाकी देखरेख में सर्वोदय के श्वेत कार्यकर्ता चम्बल के भूरे टीलों के मध्य रेंगते हुए डाकुओं से मुलाकातें कर रहे थे। भुट्टो और बेनजीर जब शिमला-यात्रा के लिए कपड़े प्रेस करवा रहे थे तभी भारत-पाक सीमा पर छुटपुट गोलियां चल रही थीं, जमीनें खींची जा रही थीं। लोगों ने कहा यह शांति-वार्त्ता में अपना पक्ष प्रबल करने की भूमिका है। जब निक्सन शांति-प्रस्ताव रखते हैं उस दिन बमबारी का परिमाण विएतनाम में बढ़ जाता है। दोनों प्रगति करते हैं, युद्ध भी, शांति भी। सेक्शन अलग हैं, फाइलें अलग हैं, उनकी टेकनिक अलग हैं। देश की शान भी रखना है और चुनाव भी जीतना है। घुटने भी झुकाएंगे, नाक भी ऊंची रखेंगे। तेरी
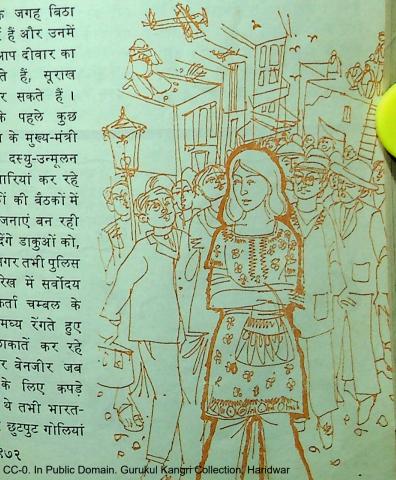
खुशी हमे पसंद नहीं, मगर तेरी बेटी हमें अच्छी लगी।

इसलिए यारो! शिमला को समझो, पूरे जमाने का अक्स नजर आ जाएगा। पानी के छोटे-से डबरे पर उसी आकाश की छाया है जिसे अंतरराष्ट्रीय आकाश कहते हैं। यह आंदोलन नहीं, मनन का विषय है। न समझ आ रहा हो तो हमसे ीक्षांत भाषण सुनो। लंका में क्या हुआ? चीनपंथी क्रांतिवादियों को सरकार ने कुचला। जहां से लाल किताब बंटने के लिए आती थीं वहीं से लंका की प्रधानमंत्री के लिए निमंत्रण आया। उखाड़ेंगे भी तुझे, जमेगी भी तुझसे। शिमला में जब हाथ मिल रहे थे तब अन्यत्र भी मिल रहे थे। हाथ मि और पंजा लड़ाना अलग बातें हैं। मौ मौके पर दोनों करने की बात नहीं, अ एकसाथ दोनों कर सकते हैं। कुश्ती औ मोहब्बत साथ-साथ। यही आजकल फै है। मनोविज्ञान किताबी गहराइयों उखड़ कर पहली सतह पर आ गया है नफरत के मूल में दबी मोहब्बत उखा जब जरूरी हो, नफरत के साथ जाहि की जा सकती है। इंदिराजी भुट्टो से नफ क्यों करती हैं? इस शिकायत के सा यह मांग की, बेनजीर यहां राजदूत ब कर क्यों नहीं आती? तेरे दर की तर नहीं देखेंगे, मगर तेरी गली से बारबार ुजरेंगे। यही सत्तरोत्तर तर्क है। पीढ़

और प्रेम साथ-साथ। दोनों की तीव्रता में कमी नहीं। यह भी मनोविज्ञान है जिसे राजनीति कहिए, कोई फर्क नहीं पड़ता।

प्रकाशचंद्र सेठी चाहते हैं कि शासन डाकुओं से सीधी बात करे, बीच में सर्वोदयवालों की दुकानदारी न हो। विएतनाम-अमरीका सीधे चर्चा करें, बीच में मध्यस्थ न हो। शिमला को समझो यारो! बस यही बात है कि हमारे मामले हम निवटेंगे, बीचवान की जरूरत नहीं। और मामलों का मजा यह है कि वे कभी नहीं निवटते! हर बात एक छोटी-मोटी ऊंचाई पर अटक जाती है और नीचे से वक्त गुजरता है। समस्याओं के घंटे शाश्वत लटके रहते हैं। जब जिसे जी आये बजाओ। मूड होना चाहिए, दम होना चाहिए, उसकी बोरियत को सहन करने का राष्ट्रीय धैर्य होना चाहिए। भुट्टो यही कह रहे थे कि मैं सीमांत के घंटे बजाना बंद करूं फिलहाल अपने मुल्क की कतिपय आंतरिक घंटियां बजाना चाहता हूं, जिसकी अनुगूंज में मेरा नेतृत्व मुखरित हो। उनकी प्रार्थना स्वीकार की गयी। इसे नया परिच्छेद कह लीजिए, मगर नयी किताब नहीं। घटनाक्रम के मुरझाये सूत्र आगे किस पन्ने पर खिल उठेंगे यह पढ़नेवालों और खुद लिखनेवाले को पता नहीं है। समांतर कथा चलेगी। युद्ध-बंदी लौटेंगे और उनके लिए वहां नयी वर्दियां सिलेंगी। कौन नहीं जानता? अगर सत्तर के बाद जिंदगी जीना है तो इस गुर को समझो। डाकुओं ने शरीर से आत्म-समर्पण किया, मगर बहुत-से गैरडाकुओं ने बुद्धि से किया। क्या होता है? खुराफात कभी भी की जा सकती है, बंदूक कभी भी उठायी जा सकती है। सभ्यता और असभ्यता एक-दूसरे के विकल्प नहीं, सहयात्री हैं। यारी और दुश्मनी साथ-साथ। तू डाल-डाल, मैं पात-पात। आजकल कौन बिना बघनखे से लैस किसी से मिलने जाता है? दोनों लैस हैं, दोनों सुरक्षित हैं, दोनों मित्र हैं। सच यह है कि दोनों शत्रु हैं। साम्यवाद का लक्ष्य है पूंजीवाद की चटनी बनाना, पूंजीवाद का लक्ष्य है साम्यवाद का अचार डालना। इसी भावभूमि पर सारे सम्बंध, समझौते, यात्राएं, हाट-लाइन, मुलाकातें, सहमतियां सजी रहती हैं। जंग और अमन साथ-साथ, सहरा और चमन साथ-साथ।

शिमला को समझो यारो! वहां बेनजीर न होती तो क्या होता, और न समझ आये तो मुझे दीक्षांत-भाषण के लिए बुलाओ। पारिश्रमिक और मार्ग-व्यय साथ-साथ।

"तुम्हारी पत्नी तो बिजली की तरह कार चलाती हैं!"
"हां—हमेशा पेड़ों पर प्रहार करती हैं।"

मंगोलिया में भारतीय संस्कृति

● डॉ. शारदा रानी

भारत की सांस्कृतिक विरासत का कोष अक्षय है। एशिया के कई देशों में भारतीय संस्कृति के प्रभाव अब भी देखने को मिलते हैं। ऐसा ही एक देश है मंगोलिया।

मंगोल देश में तिथियों की गणना भारत के समान होती है। चंद्रमा की गति के अनुसार पंचांग बनाया जाता है। अमावस्या और पूर्णिमा के दिन यहां संगीतमय पाठ का महोत्सव होता है। मंदिरों पर बाहर की ओर संस्कृत, मंगोल और भोट लिपि में लकड़ी के फट्टों पर नाम लिखे हैं।

गाण्डङग विहार के प्रवेशद्वार पर दो सिंह बने हैं जो विहार के रक्षक के रूप में सुशोभित हैं। इसके बाद प्रांगण है। यहां पर कई अलग-अलग भवन हैं। हरी और लाल छतों पर स्वर्णमंडित उत्तुंग शिखर भारत के स्वर्णमय शिखरों का स्मरण दिलाते हैं। प्रांगण में प्रवेश करते ही मुख्यद्वार पर धर्मचक्र और उसके दोनों ओर दो शांतमुख मृग हैं। घुसते ही तीन भवन हैं। इनके [illegible] में विशाल धूपपात्र है [illegible] मंगोल, भोट और चीनी [illegible] एक ओर दीक्षा-मंच है। [illegible] तीन भवन हैं--चंदनजोवो-[illegible] वज्रधर-भवन, पूजा-भवन। [illegible] का अपना एक विशाल पुस्त[illegible] है। उसका भवन पृथक है। इनमें [illegible] बड़े भवन में पूजा होती है। [illegible] संस्कृत नाम भारतीय अक्षरों में [illegible] है--'तुषितः महायानद्वीप'। [illegible] चारों ओर शंख, चक्र, मीन आदि [illegible] चित्र बने हैं।

अंदर घुसते ही चौकियों पर [illegible]रियों के लिए कोमल आसन बिछे [illegible] इनकी चार पंक्तियां हैं। मध्य स्थित [illegible] पंक्तियों में चौबीस आसन हैं। मुख्य [illegible] के समीप दोनों पंक्तियों में प्रमुख ला[illegible] के बैठने के आसन कुछ ऊंचे हैं। [illegible] हुए नागालंकृत विशाल ढोल बैठे[illegible] ही बजाये जाते हैं। इनको बजाने के [illegible] विशेष दंड होता है। दायीं ओर की [illegible] एक विशाल पटचित्र (थंका) से [illegible] है। इस थंका पर उभरे हुए भगवान [illegible] ध्यानिबुद्ध, अवलोकितेश्वर और [illegible] का मनोहारी दृश्य उपस्थित किया [illegible] है, जो हाथ का बना हुआ है। मंगोल [illegible] तिब्बत में कौशेय के ऊपर रंगीन [illegible] बनाने की प्रथा है। मंदिरों को उन्हीं [illegible] चित्रों से सजाते हैं। ये चित्र थंका [illegible] लाते हैं। इनको रंगने के लिए वास्[illegible]

स्वर्ण और चांदी का उपयोग किया जाता है।

दूसरा भवन वज्रधर की विशाल मूर्ति से सुशोभित है। भवन के सम्मुख एक विशाल धूपपात्र है और दंडवत प्रणाम करने के लिए दो काष्ठफलक बिछे हैं। इन पर दर्शन से पूर्व दर्शनार्थी दंडवत करके अपनी श्रद्धा व्यक्त करते हैं। प्रवेशकोष्ठ में चार लोकपालों के चित्र हैं। छत सुनहरे लहराते हुए नागों से अलंकृत है। नेपाल से आयी अवलोकितेश्वर की मूर्ति है। यह सहस्रों छोटी मूर्तियों से घिरी है। इस भवन में कंजूर का नार्थाङ संस्करण दोनों पार्श्वों में रखा है। इस भवन में हमने अपने साधुओं का दंड भी देखा। पूछा तो पता लगा कि १७वीं शताब्दी में तारानाथ के प्रथमावतार के समय अश्मांगुलि और एक अन्य आचार्य भारत से आये थे। उन्होंने यहां संस्कृत ग्रंथों का मंगोल में अनुवाद किया। उन्हीं का यह दंड है। अश्मांगुलि आचार्य ने भारतीय भोजन भी बनाना सिखाया। आज भी लामा पताशे को बातास कहते हैं। बीस वर्ष पूर्व इस विहार में ताड़पत्र पर लिखे संस्कृत के ग्रंथ थे। लांछा और भोट में लिखी एक धारणी इस प्रकार है—

ओं नमो भगवते भैषज्यगुरुवैडूर्यप्रभराजाय तथागताय अर्हते सम्यक्संबुद्धाय। तद्यथा। ओं भैषज्यं भैषज्यं महाभैषज्यं भैषज्यं। राजसमुद्गते स्वाहा॥

तृतीय भवन में चंदनजोवो की

देवी की कांस्य-प्रतिमा, जिसे प्रख्यात कला-शिल्पी इ-दुर्गेगन ने बनाया
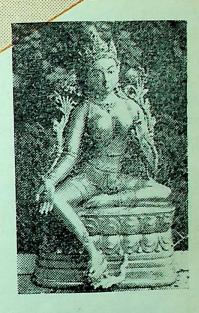
श्रृंगारयुक्त मंगोल सुंदरी

मूर्ति की भव्य प्रतिकृति है। प्रवेश करते ही गुम्फित बीजाक्षर ह्क्ष्म्ल्व्र्यं के दर्शन होते हैं। प्रवेश-कोष्ठ की छत पर धर्मचक्र बने हैं और छत पर पद्मनाभि में बीजमंत्र लिखे हैं। स्वर्ग दृश्यों और मूर्तियों से अलंकृत नवनीत-मेरुमंडल बना है। अत्यंत सुंदर बने इस स्तूप पर मध्य में बना वज्र अत्याकर्षक है। यह तोर्मा है।

चतुर्थ भवन पुस्तकालय है। इसका संस्कृत नाम इस प्रकार लिखा है--'तुषितः महायानद्वीपस्य पुस्तिकगंज'। भोट, चीनी, मंगोल में भी शीर्षक लिखा है। पुस्तकालय में अनेक सुम्बुम् हैं। मंगोल भाषा में बोधिमार्ग आदि हस्तलिखित ग्रंथ भी हैं। इसमें कालमुक लिपि के आविष्कर्ता जय-पंडित गगनसागर का चित्र भी था।

स्वागत-कोष्ठ एक छोटे-से फाटक-वाला गोल तम्बू होता है। इस तम्बू को ये लोग ेर कहते हैं। संस्कृत में गृह और मंगोल में गेर में बड़ा साम्य है।

मंगोल देश क्षेत्र में बहुत बड़ा है किंतु अत्यधिक शीत के कारण बस्तियां बहुत थोड़ी हैं। लोग प्रायः घोड़ों पर आते-जाते हैं। उलान्बातर को छोड़कर सब लोग तम्बुओं में रहते हैं। उलान् का अर्थ लाल और बातर का अर्थ बहादुर है। बहादुर शब्द बातर का ही भिन्न रूप है। इस प्रकार उलान्बातर का अर्थ लालबहादुर हुआ। उलान्बातर का रक्षक देवता गरुड़ है। मंगोलिया के राष्ट्रपति को उनकी भाषा में शम्भु कहते हैं। अपने ... चिह्न को सोयम्बु, अर्थात स्वयम्भू ... हैं। मंगोलिया में आपको यत्र-तत्र ... सुनायी पड़ेंगे—उत्पल, रत्न, कीर्ति, ... कुमुद, कुंद, कुबेर, चक्र, सुमेरु, जय, ... जिनमित्र, बृहस्पति, पंचरक्षा, पुष्प, ... वज्रपाणि, बुद्धरक्ष, महाश्री सुमति, ... पाल, पार्वती, पद्मबोधि, सुंदरी, ... आयुषी, अनिंद, उष्णीष, धर्मसिद्ध।

कुछ वर्ष पहले तक मंगोलिया ... बड़ी शान से विवाह होता था। ... और लड़की की कुंडली देखकर विवाह ... मुहूर्त पुजारी निकालता था। ... पुजारी, पंडित विवाहोत्सव में ... करते थे। कुंड में अग्नि जलाकर वर ... वधु उसमें मक्खन और चावल ... थे। पंडित दोनों के वस्त्रों में गांठ ... था और वर-वधू अग्नि की प्रद... करते थे। वर-वधू एक-दूसरे पर ... फेंकते थे और मंदिर में जाकर आशी... ग्रहण करते थे। विवाहोत्सव तीन ... दिन में सम्पन्न होता था।

मंगोल लिपि के कलात्मक ... मुख्यतः तीन हैं—फागस्पा, स्वयंभू, वा... फागस्पा और स्वयंभू के ३३-३३ प्र... हैं। वागिंद्र के दो प्रकार हैं। इस ... ६८ प्रकार से मंगोल लिखी जा ... है। इन रूपों पर कोई विशेष पुस्तक ... है। खुव्सुगुल झील के समीप पुस्त... में 'पंचतंत्र' का हस्तलिखित ग्रंथ ...

शमन-प्रार्थनाओं में अनेक संस्कृत नाम आते हैं। कुछ शमन-गीतों में 'राम' शब्द भी आता है। विक्रमादित्य की कथाएं यहां बहुत प्रिय हैं। राजा भोज और राजा किसन की कथाएं भी लोकप्रिय हैं। १७वीं शताब्दी के एक हस्तलिखित ग्रंथ में लिखा है कि यह उन्दुर्गेन के समय में भारतीय भाषा से मंगोल भाषा में अनुदित हुई। विक्रमादित्य की कथाओं की पुस्तक हमें भेंट-स्वरूप भी मिली हैं। सुभाषित रत्ननिधि भी संस्कृत से अनूदित एक प्राचीन ग्रंथ है। मंगोल में अमरकोश और मेघदूत का अनुवाद भी मिलता है।

बड़े विहारों के अपने मुद्रणालय भी होते थे। इनके यहां खुदे हुए काष्ठफलकों से छपाई होती थी। चाणक्य राजनीतिशास्त्र का प्राचीन अनुवाद मंगोल भाषा में है। उलिगेरुन् दालाइ अर्थात कथासागर कहानियों के लिए बहुत प्रसिद्ध है। मंगोल देश में प्रत्येक मंदिर में सहस्रों की संख्या में पुस्तकें रहती थीं। बड़े-बड़े पुस्तकालय थे। इनके अतिरिक्त, कंजूर-तंजूर नाम से सुविख्यात धर्मग्रंथ भी प्रत्येक पुस्तकालय में थे। कंजूर अर्थात भगवान के मुख से निकले प्रवचन और तंजूर उन प्रवचनों पर टीकाएं। कंजूर-तंजूर में अनेक विषयों से सम्बद्ध सहस्रों पुस्तकें हैं।

उलान्बातर में शासकीय पुस्तकालय बहुत विशाल है, जो प्राचीन हस्तलिखित ग्रंथों से परिपूर्ण है। भोट (तिब्बती) और मंगोल ग्रंथों का अद्भुत संग्रहालय है, जिसमें एक लाख भोट पुस्तकों का संग्रह है।

ताड़पत्र पर लिखा संस्कृत हस्तलिखित ग्रंथ यहां सुरक्षित है। इसमें रंगीन चित्र भी हैं। चांदी के पत्रों पर उभरे स्वर्णाक्षरों में लिखित 'गुह्यसमाजतंत्रराज' नामक ग्रंथ का सौंदर्य वर्णनातीत है। इसके प्रारम्भिक पत्रों पर बनी स्वर्णमयी मूर्तियां भारत की उत्कृष्ट कला के दर्शन कराती हैं। स्वर्ण और रजत के उभरे शाक्यमुनि, वज्रपाणि और स्वर्ग का मनोहारी दृश्य देखकर एसा लगता है कि संसार के महान कलाकारों की ये अमर कृतियां जगत में अज्ञात क्यों हैं? ये अनुपम कृतियां भारत के इतिहास की भी सुंदर झांकियां हैं। ●

उलान्बातर के विहार में लेखिका तथा डॉ. लोकेशचन्द्र, मंगोल बच्चों के साथ

भारतेन्दु : एक भावांजलि

• वियोगी

भारतेन्दु हरिश्चंद्र की गणना रससिद्ध कवियों में की गयी है। काल के अजर बही-खाते में उनका शुभ नाम सदा जमा की तरफ लिखा मिलेगा। काशीपुरी के पुण्य प्रांगण में उतरा था वह, एक सौ बाईस वर्ष पूर्व। पुलकित प्रकृति ने उस दिन सर्वत्र जैसे गुलाल बिखेर दिया था। वह बालक, क्योंकि, वाग्देवता का मंगल संदेश लेकर उतरा था। उसे सौ-पचास बरस नहीं रहना था यहां—चौंतीस बरस ही तो ठहरा और चल दिया। शीघ्र ही वह वाणी की आराधना में ध्यानस्थ हो गया। अल्पकाल में ही बहुत-कुछ सम्पदा लुटा देने का संकल्प था उसका। साधना-मंदिर में कवि को मधुमय वातावरण मिला, और उसने अपने आपको ऐसे छिटका दिया, जैसे आनंद-विह्वल मयूर अपने रंग-बिरंगे प्रफुल्लित पंखों को। और, वह नाच उठा—

भरित नेह नवनीर नित, बरसत सुरस अथोर;
जयति अपूरब घन कोऊ, लखि नाचत मन-मोर।

कवि का अंतर्घट श्यामघन के अनल्प रस से मुंह तक भर गया और छि... छलक उठा, उमंग उमड़ पड़ी—

भक्त-हृदय-वारिधि अगम, झलकत स्यामहि...
बिरह-पवन-हिल्लोर लहि, उमंगी प्रेम...

वह अब रस की हलकी-हलकी ... पर झूल रहा था। कल्पना बड़े ... कवि के आनंद-नृत्य को एकटक देख ... थी—उसे अपनी श्रृंगार-सुषमा ... सी दीखने लगी, वासना के निर्वा... में शताब्दियों से वह बंद पड़ी थी ... पीली पड़ गयी थी। कवि को रस... पर नाचते हुए देखकर कल्पना को ... वे दिन याद आ गये—जब सूर और ... ने कलिंदजा-कूल पर वंशी की ... विह्वल तानों से उसके अंतर को ... मीठे वेधा था, और जब रसखान ... घनानंद ने उसे अनुराग और विरा... रक्त-पीत पुष्पों से सजाया था।

हां, तो मधुमती कल्पना ... आनंद-नृत्य एकटक देख रही थी, और...

गा रहा था—

सम्हारहु अपने कों गिरिधारी।
मोर-मुकुट सिर पाग पेंच कसि राखहु
अलक संवारी ।।

अपने ही स्वरों और अपने ही ठाट पर गाते हुए सुना, तो अंतरिक्ष से आंधरे सूर ने कवि पर पारिजात-पुष्प वरसाये। और जब सूर के कान में यह भनक पड़ी—

हम तो मोल लिये या घर के।
दास-दास श्रीवल्लभकुल के, चाकर
राधावर के ।।

तब तो हर्ष का कोई पार नहीं रहा। मन हुआ सूर का कि 'अपने इस सखा को दौड़कर गले लगा लूं!'

धन्य ! वल्लभ-कुल की वह रस-परम्परा आज भी वैसी ही हरी है।

प्रकृति पुलकित हो उठी, अणु-अणु अरुणिमा से भीग गया। और कवि गाये जा रहा था—

रहे यह देखन कों दृग दोय।
गये न प्रान अजौं अंखियां ये जीवित
निरलज होय ।।

और, रसखान और घनानंद ने सुना कि कवि हरिश्चंद्र उन्हीं के स्वर में स्वर मिलाकर प्रेम-गाथा का गायन कर रहा है, तो वे भी वहीं आ पहुंचे। उन दोनों रसिकों ने प्रेम की मस्ती में झूमते हुए सुना—

हम हूं सब जानतीं लोक की चालनि, क्यों
इतनी बतरावती हौ ?
हित जामें हमारो बनै सो करौ, सखियां
तुम मेरी कहावती हौ ।।
'हरिचंदजू' या में न लाभ कछू हमें बातनि
क्यों बहरावती हौ ?
सजनी, मन हाथ हमारे नहीं, तुम कौनकों
का समझावती हौ ?

और निगोड़ी आंखों की कसक-कहानी भी सुनी प्रेम-पीर के उन दोनों मर्मियों ने—

इन दुखियान कों न सुख सपने हूं मिल्यौ,
यों ही सदा व्याकुल बिकल अकुलायंगी।
प्यारे 'हरिचंदजू' की बीती जानि औधि जोपै
जैहें प्राण तऊ ये तो साथ न समायंगी ।।

कवि की प्रेम-व्यथा में रसखान और घनानंद दोनों ने ही अपना-अपना प्रतिबिंब पाया। वे फूले नहीं समा रहे थे अपनी रस-लता को कुसुमित देख-देखकर। उनकी रस-परम्परा अभी भी सुरक्षित थी; क्योंकि विकास पर प्रसन्न दृष्टि थी कवि की, उच्छेद पर नहीं। हंसते-हंसते उसने प्रकृति के शृंगार-पुष्पों का रंग पलट दिया, राग और रस भी नये-नये खोज निकाले, किंतु मूल परम्परा का न त्याग किया, न उच्छेद। कवि ने अपने उद्यान में कल्पना-समीरण को सभी दिशाओं से मुक्त प्रवेश करने दिया, पर बार-बार निकला वह उद्यान के ही फूलों की गंध में भीग-भीग-कर। कवि की अब एक नयी ही दिशा की ओर दृष्टि पहुंची, जननी की दुर्दशा और व्यथा अंकित थी वहां। उसके आर्द्र अंतर से निर्झरिणी फूट पड़ी—और तब के उस युग में ! प्रस्तर-खंड भी कांप उठे उस दिन

जब उसने पराधीनता के मूक प्रतीकों को धिक्कारा, उन निर्वीर्य चुपचाप खड़े दर्शकों को—

काशी प्राग अयोध्या नगरी।
दीनरूप सम ठाढ़ीं सगरी॥
चंडालहु जेहि निरखि घिनाई।
रहीं सबै भुव मुंह मसि लाई॥
हाय पंचनद, हा पानीपत!
अजहुं रहे तुम धरनि विराजत॥
हाय चितौर निलज तू भारी।
अजहुं खरो भारतहि मंझारी॥

किसी वादविशेष की लचीली डाल तो पकड़ी नहीं थी उसने—न तो अटपटे प्रतीकों की धुंधली छाया को छूने दौड़ा वह, न किसी रहस्य के अवगुंठन के भीतर उसने अज्ञात आंखमिचौनी ही खेली, और न प्रगति के कोलाहल-प्रिय पथ पर ही उसने लम्बे-लम्बे डग भरे। वह तो अपने परिचित परम्परित प्रेम-पथ पर जीवन भर चलता रहा, और प्रत्येक पग पर अपनी पैनी दृष्टि से मापता रहा उस सबको, जो चारों ओर युग-युग की प्रकृति और इतिहास ने बिखेर रखा था। क्योंकि वह वैष्णव था, 'तदीय समाज' का संस्थापक, और इसीलिए सर्वोच्च शिखर पर चढ़कर देखा था उसने दूर-दूर तक की सृष्टि को अभेद की श्वेत-श्वेत दृष्टि से और समन्वय का देश राग अलाप उठा था वह—

अहो तुम बहुविधि रूप धरो।
कहुं ईश्वर कहुं बनत अनीश्वर, नाम अनेक धरो॥

वाग्देवता की उसने वि से आराधना और अर्चा की, उसे वह सूनी-बिह्नी-सी ही और मन रीता-रीता-सा लगता था

उसकी अंतर्वाणी ने कहा— भारती अब कुछ और ही पूजा चाहती है, सांगोपांग और युग के रूप।" कवि सब समझ गया, और के थाल को सजाने लगा नयी-नयी से, जो सांगोपांग थी और युग के भी। उसने गद्य में अब अपने को किया, जिसे वाग्देवता के उपास कवियों का 'निकष' कहा था। नाटक कथाएं कहीं, और इतिहास अंकित और निबंध भी बांधे।

अर्चा की सारी सामग्री कवि ने थाल में सजा ली।

वह संतुष्ट था अब। भारती ने आंचल में साहित्य-स्रष्टा की पूजा को स्नेह से रख लिया, और, कवि के पर वरदहस्त रखते हुए कहा— हरिश्चंद्र, तेरी साधना सफल हुई, तूने आंचल भर दिया। मेरे उपासक श्रद्धा युग-युग तेरा स्मरण करेंगे 'भारतेन्दु मंगलमय नाम से।"

भारतेन्दु हरिश्चंद्र का पुण्यस्मरण ही हमारी आंखों के आगे वह आकर खिंच जाता है, जब आधुनिक का मांगलिक जन्म हुआ था, और तहां उत्साह-ही-उत्साह उमड़ अनेक देदीप्यमान नक्षत्र भारतेन्दु

और जगमगा रहे थे--प्रेमघन, राधाचरण गोस्वामी, बालकृष्ण भट्ट, ठाकुर जगमोहन-सिंह, प्रतापनारायण मिश्र आदि।

महाभाग भारतेन्दु वस्तुतः आधुनिक हिंदी के जनक थे, जिसे 'भारतेन्दु-नंदिनी' कहें तो अत्युक्ति न होगी। गंगा को भी भागीरथी कहते ही हैं। हरिद्वार में, प्रयाग में और सागर-संगम तक गंगा ने भले ही अतुल वैभव अर्जन किया हो, पर भला, भगीरथ के साधना-स्थल हिमांचल के स्नेह-वत्सल अंक को कभी वह भूल सकती है? दैनंदिन वर्द्धमान वैभव देख-देखकर हिंदी का आनंद-पुलकित होना स्वाभाविक है, तथापि अपने बाल्य-काल की सुध कर भारतेन्दु के प्रांगण में प्राप्त वात्सल्य को वह अपना सच्चा सौभाग्य-वैभव मानती है, और वही उसका अपना कुल-शील है। गंगोत्री में गंगा को हम उसके विशुद्ध मूलरूप में देखते हैं। भारतेन्दु-काल में, इसी प्रकार, हिंदी को हम उसकी मूलप्रकृति में पाते हैं। गंगा का यात्रा-पथ कितना लम्बा है, कितना समृद्ध है, किंतु गंगोत्री से उसने कहां अपना परम्परित सम्बंध विच्छेद किया है? कितने ही स्थलों की जलराशि और कितने ही भूभागों की मिट्टी को अपनी लम्बी यात्रा में वह आत्मसात करती चली गयी है, किंतु गंगोत्री के जल-कणों को अपने अंग पर से भला कभी वह पोंछ सकती है? आभूषण उतारे और पहने जा सकते हैं, अंगराग धोया जा सकता है, किंतु बालिका ने मां के घर पर बचपन में जो गोदने गोदाये थे उन्हें वह कैसे उतार सकती है, कैसे पोंछ सकती है?
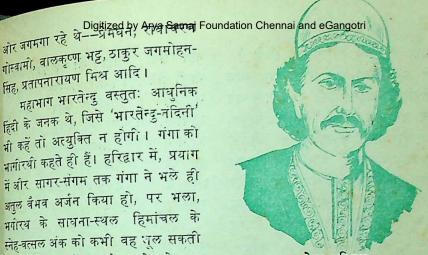
भारतेन्दु हरिश्चन्द्र

भारतेन्दु ने भाषा और साहित्य को नये-नये परिमार्जित रूपों में संवारा और नयी-नयी शैलियों में ढाला, किंतु पूर्व-परम्परा को भंग नहीं किया, श्रृंखला की कड़ियों को नहीं तोड़ा। खड़ी हिंदी व उर्दू में भी उन्होंने कविताएं लिखीं, पर ब्रजबोली का मजीठ-रंग वहां भी धोया नहीं, बल्कि उसी रंग की जमीन पर उन्होंने भांति-भांति के बेल-बूटों और तरह-तरह के रंग-बिरंगे फूलों को छापा। शंकर, श्रीधर, हरिऔध और प्रसाद ने भी पूर्व-परम्परा के मूल से ही जीवन-रस खींचा था। माइकेल और रवीन्द्र-जैसे विश्व-विश्रुत साहित्यकारों ने भी यही किया था।

इधर हम देखते हैं तो कुछ भय-सा

लगता है, कुछ निराशा-सी होती है कई अच्छे-अच्छे कवि और लेखक आज साहित्यिक परम्परा को जैसे मान-मान कर भंग कर रहे हैं। संस्कृत, प्राकृत, ब्रज और अवधी के साहित्य की ओर से मुंह मोड़ लिया है, आंखें उनकी आज दूसरी ही ओर हैं। पश्चिम से भी उन्होंने जो कुछ लिया है उसे भी हजम नहीं कर पाये हैं। साहित्य के यात्रा-पथ में यह एक अपशकुन है।

कई वर्षों से हम तुलसी, सूर और भारतेन्दु की जयंतियां मनाते आ रहे हैं, यह हिंदी-साहित्य के हित में शुभ और उत्साहवर्द्धक है। किसी भी राष्ट्र के साहित्यिक एवं सांस्कृतिक उत्थान में इस प्रकार के मंगलकारी आयोजन बड़े सहायक होते हैं। सही है कि राजनीति की चकाचौंध में साहित्य के रूप को और उसके बल को हम आज ठीक-ठीक देख नहीं पा रहे हैं। पर यह न भूलें कि साहित्य का रूप चिरज्योतिर्मय है, वहां राजनीति का प्रकाश खद्योत के प्रकाश से अधिक महत्त्व नहीं रखता। साहित्य की जड़ें कहीं ... गहरी होती हैं। हमारे राजनेता ... भी ध्यान दें, साहित्यिक और सांस्कृ... आयोजनों में योग देना सीखें। अ... तो वे मुलम्मे की चमक-दमक के ही ... दार रहे हैं, अब असली सुवर्ण के ... और ग्राहक बनें। यही उनकी ... राष्ट्र-सेवा होगी।

भारतेन्दु के चरणों पर अपने ... पुराने निर्गंध पुष्प चढ़ा देता हूं—

जय प्रातः स्मरनीय पूज्यवर हरिश्चंद्र ...
भारतेन्दु रससिंधु, किधौं कवि-कंज... रवि

हरिश्चंद्र-सो हरिश्चंद्र कवि, सतव्रत-धा...
प्रेमपुरी-वर-पथिक, दिव्य-साहित्य-विहा...
जय नाटक-आचार्य, आर्य सद्धर्म-उधा...
सुभ जातीय-विचार चारु स्वातंत्र्य-प्रचार...
'चंद्रावली' - चकोर - 'प्रेमफुलवारी', ...
'प्रेम-माधुरी'-मधुप, 'भक्तमाला' रसजा...
जन 'तदीय-सर्वस्व' प्रेम को मारग ग...
'नमो हरिश्चन्द्राय' भक्ति सों प्रति... कहि...

रात में सोने से पहले बंटू ने भगवान से प्रार्थना की, "हे भगवान, इंदिराजी को इंगलैंड का प्रधानमंत्री बना दो!"

पास लेटी मां ने आश्चर्य से पूछा, "यह क्या प्रार्थना कर रहे हो बेटे?"

"आज हम गलती से पर्चे में यही लिख आये हैं मम्मी," बंटू ने जवाब दिया।

हंसने का मौसम

महाशयजी को किसी काम से पंद्रह दिन के लिए बम्बई जाना पड़ा। एक दिन वे होटल में गये और वेटर से बोले, "मेरे लिए जल्दी ही दो जली हुई रोटियां, कंकड़ों से भरी दाल और बुरी तरह जली सब्जी ले आओ।"

"और कुछ साहब ?" वेटर ने पूछा।

"हां, ये चीजें लाने के बाद तुम मेरे सामने बैठ कर घर-गृहस्थी का रोना रोओ, मुझे घर की याद सता रही है।"

*

एक अभिनेता काम के लिए निर्देशक के पास गया, तो निर्देशक ने कहा, "मुझे कैसे विश्वास हो कि आप अच्छे अभिनेता हैं ?"

"मुझमें सिर्फ एक कमी है। मैं कुछ-कुछ बहरा हूं——आप तो समझते ही होंगे कि दर्शकों की अधिक करतल-ध्वनि से ऐसा हो ही जाता है !"

बचाव-पक्ष के वकील ने जिरह में अभियोगी से कहा, "तुमने हलफ उठाकर कहा है कि कार-चालक ने तुम्हें जान-बूझकर कुचला है। सोच-समझकर बोलो, क्योंकि तुम गम्भीर आरोप लगा रहे हो।"

"सोच-समझकर ही बोल रहा हूं वकील साहब ! यह आदमी चाहता तो मुझे छोड़ कर मेरे साथ खड़ी महिला को कुचल सकता था, पर इसने मुझे ही चुना !"

*

जार्ज बहुत ज्यादा पिये हुए था और सारे जहाज पर हुड़दंग मचा रहा था। कप्तान ने 'लॉगबुक' में लिख दिया— 'आज जार्ज पिये हुए था।' बाद में जार्ज ने बहुत खुशामद की, मगर कप्तान वह वाक्य काटने पर राजी न हुआ।

अगले दिन लॉग-बुक लिखने की बारी जार्ज की थी। जार्ज ने लॉगबुक में लिखा— 'आज कप्तान पिये हुए नहीं था।'

विंस्टन चर्चिल को जब अपने दामाद के बारे में यह ज्ञात हुआ कि वह बहुत आलसी है तो उन्हें बहुत घृणा हो गयी। दामाद ने जब कभी चर्चिल की नजरों में उठने की कोशिश की तभी उसे असफलता मिली। एक सहभोज पर दामाद ने चर्चिल की प्रशंसा के उपरांत पूछा, "आपकी राय में वर्तमान राजनीतिक नेताओं में ऐसा कौन है जो लम्बे समय तक जीवित रहेगा?"

दामाद को आशा थी कि चर्चिल या उनका कोई मित्र का ही नाम लेंगे, पर चर्चिल ने शांत स्वर में उत्तर दिया, "मुसोलिनी।"

"मुसोलिनी!" अत्यंत आश्चर्य से दामाद ने पूछा। वह जानता था कि चर्चिल मुसोलिनी को कितनी हेय दृष्टि से देखता है।

चर्चिल के एक मित्र ने भी आश्चर्य से पूछा, "ऐसा समझने का कारण?"

चर्चिल ने सिगार सुलगाते हुए कहा, "आजकल जितने भी राजनीतिक नेता हैं उनमें वही ऐसी हिम्मतवाला व्यक्ति है जिसने अपने आलसी दामाद को गोली से मरवा डाला था।"

*

"तुम तो कह रहे थे कि अगर मैं जज से विनम्र व्यवहार करूं तो वह मुझे सख्त सजा नहीं देगा, पर बिलकुल उलटा ही किया उसने। अदालत में जाते ही मैं जज के पास गया और कहा--'नमस्कार जी, मिजाज तो दुरुस्त हैं?' और उसने दहाड़ कर कहा-- 'पचास रुपये जुर्माना...अदालत की तौहीन के लिए'"

*

"ट्रेनें लेट चलती हैं तो टाइम टेबल बनाने से क्या लाभ है?"

"ट्रेनें अगर ठीक समय पर चलें तो फिर वेटिंग-रूम किस काम आएंगे?"

"इस वेश में कर्ज लेने वाले मुझे पहचान नहीं पाते!

इनकमटैक्सवालों के छापे के बाद 'हीरो' की हालत!"

जब कोई लड़की ... करे तो . . . ?

फिल्म

शैलेन्द्र जैसा मैंने देखा

शैलेन्द्र फिल्म-जगत के सुविख्यात गीतकार थे। उनके लिखे अनेक गीत लोकप्रिय हुए हैं। 'तीसरी कसम' उनके द्वारा निर्मित पहली और अंतिम फिल्म थी। उनके मित्र और उत्तर-प्रदेश फिल्म-पत्रकार संघ के अध्यक्ष श्री रामकृष्ण द्वारा उनके अंतरंग संस्मरण

● **रामकृष्ण**

शैलेन्द्र के साथ अपने परिचय को बहुत पुराना नहीं मानूंगा। स्थायी रूप से बम्बई बसने के इरादे से १९६१ के मध्य मैं वहां पहुंचा था। छिटपुट रूप से इसके पहले भी वहां मैं काफी रह चुका था, लेकिन फिल्मी लोगों से अच्छी-खासी राह-रस्म होने के बावजूद शैलेन्द्र से मैं पहले क्यों नहीं मिल पाया, यह अब भी मेरी समझ में नहीं आ पाता। उसके नाम से मैं परिचित न होऊं, यह भी नहीं था। फिल्मी गीतकार बनने के पहले भी 'हंस' और 'जनयुद्ध' आदि में छपी अपनी इक्की-दुक्की रचनाओं के माध्यम से वह पर्याप्त लोकप्रिय हो चुका था। मुझे स्वयं उसकी वे कविताएं खासी पसंद आती थीं जिनके माध्यम से बम्बई में रहने वाले मजदूर वर्ग की दैनंदिन समस्याओं का चित्रण वह किया करता था। बाद में मालूम हुआ कि वह स्वयं उसी वर्ग का है, और साथ ही मिल-मजदूरों के ट्रेड-यूनियन आंदोलनों की दिशा में भी उसने खासा काम किया है। यह मेरे लिए एक खुशी की ही बात थी। 'बरसात' में इसीलिए राजकपूर ने जब उसके गीतों को स्वर में व्यंजित करने की घोषणा की, तो लगा जैसे फिल्मी गीत-संसार में भी क्रांति का समावेश हो गया हो।

लेकिन वह आग फिर बरस नहीं सकी। बरसात की फुहार शायद इतनी जोरदार थी कि इन्किलाबी आग की चिनगारियां उसके प्रभाव में पूरी तरह बुझ गयीं, और साथ ही उस शैलेन्द्र का भी खात्मा हो गया जो किसी जमाने में धुएं, सीलन और पसीने की बदबू से भरी मजदूर-बस्ती में बैठकर क्रांति का राग अलापा करता था। फिल्मों की चकाचौंध ने उसके असंतोष पर यकायक ऐशोआराम की चादर फैला दी थी, और वह मात्र एक फिल्मी शायर बनकर रह गया था।

लेकिन शैलेन्द्र से हुए अपने उस प्रारम्भिक परिचय की चर्चा करने के पहले

हसरत के साथ हुए अपने उस अनोखे खेल-तमाशे का जिक्र करना भी जरूरी है।

हसरत—यानी फिल्मी गीत-लेखन के क्षेत्र में शैलेन्द्र का जोड़ीदार हसरत जयपुरी। स्वभाव से ही नहीं, रहन-सहन और चालढाल—सभी दृष्टियों से भरपूर शायर। क्रांति के गीत हालांकि उसने अपनी जिंदगी में कभी नहीं गाये, लेकिन रस की जिस

(बायें से) शैलेन्द्र, हसरत और संगीतकार दत्ताराम

अनुभूति की बदौलत सामान्य व्यक्ति कवि के रूप में परिवर्तित हो जाता है उसकी कमी उसके अंतर में कभी नहीं रही। आश्चर्य की बात तो यह है कि फिल्मी दुनिया की चकाचौंध भी अपनी परिवृत्ति में उसे कतई बांध नहीं पायी, और न ही अपरिमित यश, मान-सम्मान और धन-दौलत इकटठा करने के बावजूद ... व्यक्तित्व में किंचित अंतर ही आ ...

'सरिता' वाले उन्हीं दिनों ... एक नियमित फिल्म-स्तम्भ शुरू ... वाले थे। उसके सम्पादक विश्व... ने मुझे लिखा था कि मैं कुछ रोचक ... भेजूं। हसरत चूंकि मेरा नया-नया ... बना था और ईमानदारी के साथ ... यह बात महसूस हो रही थी कि ... के नामधारी पंडे उसके साथ पूरा ... कर रहे हैं, इससे पहला फीचर मैंने ... के बारे में तैयार किया। फीचर ... डेढ़-दो पन्नों का एक छोटा-सा लेख ... था, जिसमें बहुत हलके-फुलके ... हसरत के व्यक्तित्व को उभारने की ...

करते हुए फिल्मी गीत-साहित्य के विकास में किये गये उसके योगदान की चर्चा मैंने की थी। प्रकाशनार्थ भेजने के पहले उस लेख को मैंने स्वयं हसरत के घर जाकर उसे सुनाया, और उसने पसंद भी किया।

उस लेख का छपना था कि फिल्मी दुनिया के धरातल पर जैसे ज्वार-सा आ गया हो। लोगों ने कहना शुरू कर दिया कि उस लेख के जरिए जान-बूझकर मैंने हसरत का मजाक उड़ाया है। फिर यह बात इतनी अधिक चर्चित हुई कि हसरत को भी आखिर उस पर यकीन करना पड़ा। 'सरिता' सम्पादक को भी उसने लगातार तीन-चार चिट्ठियां लिख डालीं, जिन में आरोप लगाया गया था कि उस लेख के माध्यम से जान-बूझकर मैंने हसरत की बेइज्जती करने की कोशिश की है, और यह कि वह मुझ से या मेरे नाम से हरगिज वाकिफ नहीं है, और भूल से भी मैं कभी अगर उसके सामने पड़ गया तो मुझे अपनी जान से भी हाथ धोना पड़ सकता है।

उन्हीं दिनों पहली बार शैलेन्द्र से मेरी भेंट हुई। 'ब्लिट्ज' के हिंदी संस्करण का प्रकाशन उन दिनों शुरू ही हुआ था और उसके संपादक होकर आये थे मुनीश सक्सेना। मुनीश के स्वागत में ख्वाजा अहमद अब्बास ने अपने घर पर एक परिचय-गोष्ठी आयोजित की थी। शैलेन्द्र के साथ मैं भी उस गोष्ठी में आमंत्रित था और वहीं हम लोगों ने शायद पहली बार एक-दूसरे की शक्ल देखी। वापसी में शैलेन्द्र न सिर्फ अपनी गाड़ी पर मुझे पहुंचाने ही आया बल्कि घंटे, सवा घंटे मेरे घर बैठा भी। अपनी आदत के विपरीत अपनी तीन - चार

लेखक

कविताएं भी उसने मुझे सुना डालीं। मुझे लगा था जैसे फिल्मी माहौल में इतने दिनों रहने के बावजूद वह पूरी तरह फिल्मी नहीं हो पाया है। हसरत के सम्बंध में गंभीरतापूर्वक उस दिन शैलेन्द्र से मेरी कोई बातचीत नहीं हुई, लेकिन हलके-फुलके ढंग से उसकी जो चर्चा हम लोगों के मध्य हुई उससे मालूम होता था कि उस कांड की खासी जानकारी शैलेन्द्र को थी।

इस घटना के कुछ ही दिन बाद मैंने स्वयं बम्बई के लेखकों, पत्रकारों की एक अनौपचारिक गोष्ठी अपने घर आयोजित की थी। ख्वाजा अहमद अब्बास, कृश्न-चंदर, नरेन्द्र शर्मा, राजेन्द्रसिंह बेदी, पं. सुदर्शन, डॉ. धर्मवीर भारती, फणीश्वरनाथ रेणु, राजेन्द्र अवस्थी और दूसरे अनेक जाने, अनजाने बंधुओं के साथ शैलेन्द्र भी उसमें सम्मिलित हुआ था। हसरत की चर्चा, जान-बूझकर उस अवसर पर मैंने नहीं होने दी, लेकिन चलते समय अकेले बुलाकर शैलेन्द्र ने अचानक ही मुझसे

जो वात कही उसने अवश्य ही मुझे चिंता में डाल दिया। एक रहस्यमय मुसकान के आवरण में अपने चेहरे को ढकते हुए बहुत धीमी आवाज में उसने कहा था, "हसरत बेहद नाराज है तुमसे उस मसले को लेकर, और किसी भी दिन वह कुछ कर सकता है। फिर कुछ रुककर अपनी मुसकान में हितैषी का भाव संलग्न करते हुए उसने आगे कहा था, "यह बात तो दोस्त, मैं बहुत पहले तुम्हारे कानों में डालना चाहता था, लेकिन ज्यादा जान-पहचान न होने की वजह से मुमकिन नहीं हो पाया। होशियारी से रहना बस, और बात नहीं।"

शैलेन्द्र के इस अनिमंत्रित परा मैं अस्वीकार नहीं कर पाया था। हालांकि खार में रहता था और मैं क्रुज में, लेकिन तब भी हम लोगों के बीच मुश्किल से एक फर्लांग की रही होगी, और इसी से अपनी पहचान बढ़ाने में हमें कोई खास भी नहीं हुई। हम दोनों मौके,

एक-दूसरे के यहां आते-जाते रहे।

उन्हीं दिनों शैलेन्द्र ने अपनी 'तीसरी कसम' पर काम शुरू किया था। उसके कथाकार रेणु भी बम्बई में ही खार स्टेशन के पास वाले 'एवरग्रीन' होटल में रह रहे थे। मेरी अधिकांश शामें उन्हीं के साथ गुजरती थीं। वहीं पर, शायद पहली बार 'तीसरी कसम' के निर्देशक वासुदेव भट्टाचार्य से मेरी मुलाकात हुई। मेरी ही तरह वासु भी चूंकि तब तक बिलकुल अकेला था, इससे अकसर मेरे ही घर पर आ धमकता और हम लोग घंटों इधर-उधर की चर्चा में लग रहते। तब तक इस बात का मुझे कतई पता नहीं लग पाया कि विमलराय की बेटी रिंकी के साथ उसका रोमांस चल रहा है। गीतकार अनिल विश्वास के यहां भी उसकी अच्छी-खासी राह-रस्म थी और मुझसे या शैलेंद्र से उसे जब भी छुट्टी मिलती वह फौरन ही अनिल'दा की तरफ भाग उठता। बाद में मुझे मालूम हुआ कि अनिल'दा के यहां उसके आकर्षण की सिर्फ एक चीज थी, और वह था उनका टेलीफोन।

लेकिन संयोग से उन्हीं दिनों जब वासु-रिंकी के ये प्रेम-संवाद पूरे यौवन पर थे, मेरे यहां भी टेलीफोन आ गया और वासु ने खुद अपनी ही ओर से उसके उपयोग की पूरी छूट ले ली। अनिल'दा के यहां, सबकुछ होते हुए भी उसे वह आजादी नहीं मिल सकती थी जो मेरे यहां उसे सहज ही प्राप्त थी। इसका फल यह हुआ कि अपना समय वह मेरे यहां ही गुजारने लगा—दिन ही नहीं रात का भी समय, क्योंकि टेलीफोन-वार्ता का ज्यादा लम्बा दौर रात के सन्नाटे में ही चलना मुमकिन था।

कहना चाहिए, शैलेन्द्र से हुए अपने परिचय में जो हलकी-फुलकी दूरी मुझे दिखायी दे रही थी, वासु के सान्निध्य ने उसे पूरी तरह काट कर रख दिया। वासु न केवल शैलेन्द्र की 'तीसरी कसम' का निर्देशक ही था बल्कि उसके अलावा भी शैलेन्द्र के साथ उसकी बेहद दोस्ती थी। उसी दोस्ती की वजह से शैलेन्द्र भी करीबन हर सुबह मेरे घर पर आ पहुंचता। आते ही वह भी, बिलकुल नंगी जमीन पर हम लोगों के साथ आ बैठता, और फिर बगैर दूध-शक्कर की चाय के साथ रात की बासी बची खिचड़ी या दाल-चावल का नाश्ता हम लोग इस शान से करते मानो दुनिया की सबसे बड़ी नियामत हो वह।

अपनी उन्हीं बैठकों के बीच शैलेन्द्र को बिलकुल निकट से देखने, परखने और समझने का मौका मुझे मिला और मैं कह सकता हूं कि वह मुझे बेहद, बेहद पसंद आया। आनंदकुंज के फ्लैट नंबर नौ में बितायी गयी बारह, पंद्रह महीने की वह अवधि मेरे जीवन की सर्वाधिक स्मरणीय धरोहर है। अपनी उन्हीं बैठकों के बीच शैलेन्द्र ने न जाने कितने खट्टे-मीठे किस्से मुझे सुना डाले——अपने साथियों के, शंकर के, जयकिशन के, हसरत के, राजकपूर के।

(क्रमशः)

● डॉ. गौरीशंकर राजहंस

लेखक

भारत में श्रम संगठनों का विकास

संसार में जहां भी औद्योगीकरण हुआ है वहां स्वाभाविक रूप से श्रम-संगठनों ने जन्म लिया है। इंग्लैंड में औद्योगिक क्रांति के साथ-साथ श्रम-आंदोलन ने भी जोर पकड़ा। वहां छोटे-मोटे औद्योगिक विवादों को निबटाने के लिए बनी ट्रेड-यूनियन ने धीरे-धीरे 'लेबर पार्टी' का रूप धारण कर लिया।

भारत में ट्रेड-यूनियन का विकास कुछ भिन्न रूप से ही हुआ। यह कहानी भी बड़ी रोचक है। १८७५ के आस-पास इंग्लैंड में लंकाशायर तथा मैंचेस्टर के उद्योगपतियों ने आंदोलन शुरू किया कि भारत के श्रमिकों की दुःखद अवस्था की छानबीन की जानी चाहिए। उस समय सूती कपड़ा मिलों में भारतीय मज़... को नाम-मात्र की मजदूरी दी जाती ... और उनसे बहुत अधिक देर तक ... लिया जाता था। उन्हें अन्य कोई सु... नहीं दी जाती थी।

इस प्रकार इंग्लैंड की सूती ... मिलों की अपेक्षा भारत की सूती ... मिलों में मजदूरों पर होने वाला ... बहुत कम था। इसीलिए भारतीय ... कपड़े लंकाशायर और मैंचेस्टर के ... कपड़ों की तुलना में बहुत सस्ते थे। ... स्वरूप इंग्लैंड के सूती कपड़ों की ... कम होती गयी और वहां की मिलें ... से बंद होने लगीं। अतः यह आवश्य... चला था कि भारतीय मजदूरों की ...

में तत्काल सुधार लाया जाए। १८८१ में लंकाशायर के मिल-मालिकों के दबाव में आकर तत्कालीन ब्रिटिश सरकार ने प्रथम 'फैक्ट्रीज़ ऐक्ट' पारित किया जिसके कारण श्रम-आंदोलन को बल मिला।

शीघ्र ही 'बम्बई मिल मजदूर संघ' के नाम से प्रथम मजदूर संगठन का जन्म हुआ, जिसके संस्थापक और अध्यक्ष श्री नारायण मेघाजी लोखांडे हुए। यह एक रोचक बात है कि 'बम्बई मिल मजदूर संघ' में न तो सदस्यों की कोई निश्चित संख्या थी, न कोई कोष था और न कोई नियम-कानून।

पर आधुनिक ढंग की ट्रेड-यूनियन का जन्म १९१८ में मद्रास में हुआ जब श्री बी. पी. वाडिया ने 'मद्रास लेबर यूनियन' की स्थापना की। इन्हीं दिनों राष्ट्रीयता की लहर देश में फैल रही थी। मद्रास की बिन्नी कपड़े की मिल उन दिनों अंगरेजों के हाथ में थी। उनके व्यवहार से तंग आकर मजदूरों ने १९२० में हड़ताल कर दी। मालिकों ने भी तुरंत तालाबंदी कर दी। इसके अलावा उन्होंने श्री वाडिया और उनकी यूनियन पर मुकदमा चला दिया। न्यायालय ने फैसला दिया कि यूनियन और हड़ताल दोनों गैर-कानूनी हैं। न्यायालय के इस फैसले से श्रम-आंदोलन को गहरा धक्का लगा।

१९१८ में गांधीजी ने अहमदाबाद में सूती कपड़ा मिल-मजदूरों का नेतृत्व किया। राष्ट्रीयता की भावना के परिणाम-स्वरूप १९२० में लाला लाजपत राय की अध्यक्षता में 'अखिल भारतीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस' का जन्म हुआ। मजदूरों की इस संस्था का कांग्रेस पार्टी ने पूरी तरह समर्थन किया।

शीघ्र ही इस संगठन में साम्यवादी मजदूर नेता बहुत बड़ी संख्या में

महिलाएं भी पीछे नहीं—अधिकारों के लिए प्रदर्शन

घुस आये और उन्होंने उस पर आधिपत्य जमाने का भरपूर प्रयत्न किया। १९२८ में साम्यवादियों ने श्री जवाहरलाल नेहरू के विरुद्ध एक साधारण श्रमिक नेता श्री डी. वी. कुलकर्णी को अध्यक्ष-पद के लिए खड़ा किया। श्री नेहरू बहुत थोड़े-से वोटों से ही जीत सके। इस घटना ने अखिल भारतीय ट्रेड-यूनियन कांग्रेस की फूट को गहरा कर दिया। परिणामस्वरूप अगले वर्ष नागपुर-अधिवेशन में दक्षिण-पंथी मजदूर नेता श्री वी. वी. गिरि (वर्तमान राष्ट्रपति), श्री एन. एम. जोशी तथा श्री मृणालकांति बोस अपने समर्थकों सहित अधिवेशन से बाहर निकल आये और 'इंडियन ट्रेड-यूनियन फेडरेशन' की स्थापना की।

अनुभव ने दोनों ट्रेड-यूनियनों के नेताओं को सिखाया कि अल... मंच पर रहकर वे मजदूरों का हि... कर सकते। अतः १९३८ में ... में उसी स्थल पर जहां वे अलग हु... फिर अखिल भारतीय ट्रेड-यूनियन ... का अधिवेशन हुआ और दोनों ... के नेता मिलकर एक हो गये।

१९४७ में जब स्वतंत्रता मिली ... एक बार पुनः मजदूर-आंदोलन ... पड़नी शुरू हो गयी। सत्तारूढ़ ... चाहती थी कि मजदूर एक रचना... दृष्टिकोण अपनायें, उत्पादन-वृद्धि ... योगदान दें तथा सरकार उनकी सम... को सुलझाने में हर सम्भव योगदान ... इसके विपरीत साम्यवादी श्रम-ने... का मत था कि मजदूरों का संघर्ष ... रहना चाहिए। इस बीच कांग्रेस ...

वादी दल भी मजदूर-आंदोलन में सक्रिय हो उठा था। उसने भी इस मामले में साम्य-वादियों का साथ दिया। मजदूर-आंदोलन में फूट और गहरी हो उठी। कांग्रेस पार्टी अखिल भारतीय ट्रेड-यूनियन कांग्रेस पर अपना आधिपत्य नहीं जमा सकी। फल-स्वरूप १९४७ में कांग्रेस पार्टी के संरक्षण में 'इंडियन नेशनल ट्रेड-यूनियन कांग्रेस' का जन्म हुआ जिसे संक्षेप में 'इंटक' भी कहते हैं।

१९४८ में कांग्रेस समाजवादी दल ने अन्य समाजवादियों के साथ मिल कर 'हिंद मजदूर पंचायत' को जन्म दिया। बाद में इसका नाम 'हिंद मजदूर सभा' पड़ा। इस प्रकार स्वतंत्रता-प्राप्ति के शीघ्र बाद राजनीतिक दलों के आधार पर विभिन्न श्रम-संगठन बन गये। बाद में जब समाजवादी दल, साम्यवादी दल और कांग्रेस पार्टी में फूट पड़ी तो उनकी ट्रेड-यूनियनें भी अलग-अलग हो गयीं। आज प्रमुख श्रम-संगठनों में कांग्रेस की 'इंटक', दक्षिणपंथी साम्यवादियों की 'अखिल भारतीय ट्रेड-यूनियन कांग्रेस' और समाज-वादियों की 'हिंद मजदूर सभा' हैं। इस बीच भारतीय जनसंघ, स्वतंत्र-पार्टी तथा डी. एम. के. ने भी अपनी अलग-अलग यूनियनें बनायी हैं।

यह एक कटु सत्य है कि १९६० से १९७० के बीच उद्योगों में, प्रधानतः पश्चिम बंगाल की कोयला खानों एवं कारखानों में, भयानक औद्योगिक अशांति रही। इसका प्रमुख कारण यह था कि राजनीतिक दलों के आधार पर बंटी ये यूनियनें आपस में हिंसात्मक झगड़े करती रहीं। फलस्वरूप उत्पादन के क्षेत्र में तो हानि हुई ही, जान-माल की भी कम क्षति नहीं हुई।

यह काफी संतोष की बात है कि इन यूनियनों के प्रमुख नेताओं ने इस बात को महसूस किया है कि इस प्रकार के पारस्परिक कलह में न उनका हित है, न कारखानों का और न देश का। इसी कारण देश की प्रमुख तीन ट्रेड-यूनियनों ने मिलकर एक केंद्रीय परिषद बनायी है और फैसला किया है कि औद्योगिक विवाद के सारे मामले वे मिल-जुल कर तय करेंगे।

औद्योगिक प्रतिष्ठान में बहाली के समय यह ट्रेनिंग दी जाए कि अधिकार के साथ-साथ कारखाने, समाज और देश के प्रति उनकी क्या जिम्मेदारियां हैं। उत्पा-दन का बंटवारा न्याय-संगत हो, इससे कोई इनकार नहीं कर सकता; पर साथ ही यह भी बहुत आवश्यक है कि उत्पादन में किसी प्रकार की कमी न हो।

इस वर्ष के शुरू में राष्ट्रपति श्री गिरि ने कहा था कि हड़ताल और तालेबंदी पर तीन वर्ष की रोक लगा दी जाए। प्रधानमंत्री ने भी इस बात को दोहराया था। उन्होंने यह भी कहा था कि देश को आत्मनिर्भर बनाने का यह एक अमोघ अस्त्र है। जिस देश में उत्पादन कम होगा वहां आर्थिक विकास नहीं हो सकता। ●

कहानी

• अमरकान्त

प्रिय मेहमान

नीरज कमरे में टहल कर धीमे-धीमे स्वर में कोई गीत गुनगुना रहा है। दिन के दो बजे हैं। जुलाई के महीने में दो बारिशों के बाद मौसम लगभग साफ हो गया है और बाहर तेज, आंखों को चौंधियाने वाली धूप निकली है । पत्नी और बच्चों के बाहर जाने के कारण वह इन दिनों अकेला है। उसका नाश्ता और भोजन एक बुढ़िया बना जाया करती है। उमस-भरे उस रविवार के दिन उसने सवेरे-सवेरे हजामत बनवायी, पावरोटी, मक्खन और आमलेट का नाश्ता किया। फिर भोजन में पराठा, गोश्त, मीठी चटनी और सलाद का आनंद उठाया और लगभग साढ़े ग्यारह बजे गुदगुदे, दूधिया बिस्तरे में धसकर सुखपूर्वक खर्राटे भरने लगा। आधा घंटा पूर्व नींद खुलने पर उसने हाथ-मुंह धोकर नींबू का ठंडा शर्बत पिया था और अब उसकी तरावट का सुख अनुभव कर रहा था।

वह छतीस-सैंतीस वर्ष का खूबसूरत नौजवान था । रंग गोरा, नाक नुकीली, मुंह बड़ा और दाढ़ी-मूंछ सफाचट थी। वह विश्वविद्यालय का संतुष्ट, सुखी और शांतिप्रेमी शिक्षक था, जो लड़ाई-झगड़े से दूर रहता , लोगों से बहुत कम मिलता-जुलता, बीवी को 'आप' कहता, बच्चों से सदा अंगरेजी में बोलता और चुपचाप पैसा कमाने के कार्यों में लगा रहता-

वह सहसा चौंक पड़ा। बाहर से कोई दरवाजा खटखटा रहा है शायद!

उसने खूंटी पर से चिकन का कुर्ता पहना और आईने के सामने जाकर बालों को फिर संवारा, फिर कमरे से निकलकर गलियारे को पार करने के बाद दरवाजा खोला। आश्चर्य से उसकी आंखें फैल गयीं और मुंह खुल गया। नीलम ! इस समय?

नीलम ने दोनों हाथ जोड़कर नमस्कार किया। फिर थोड़ा मुसकरा कर और यह कहते हुए कि 'बड़ी गरमी है' वह अंदर चली आयी। उसका गोरा चेहरा तमतमाया हुआ था और उस पर पसीने की बूंदें झलक रही थीं। वह चौड़े किनारे की सफेद साड़ी पहने थी, जिसके आंचल के छोर से कहीं माथे को ढक लिया था। वह बहुत सुंदर नहीं कही जा सकती थी। लेकिन उसका लचकदार शरीर, और पतली कमर उसके व्यक्तित्व को आकर्षण प्रदान करते थे ।

वह सहसा घूम गयी और लोचदार

हिंदी के बहुचर्चित कथाकार । सन १९५० के आसपास लेखन प्रारम्भ किया । 'जिंदगी और जोंक', कहानी-संग्रह तथा 'सूखा-पत्ता' उपन्यास विशेष रूप से चर्चित रहे। आजकल मित्र प्रकाशन के सम्पादकीय विभाग में हैं। प्रस्तुत है उनकी एक ताजा कहानी...

स्वर में 'भाभीजी, भाभीजी' पुकारती अंदर चली गयी। नीरज का आश्चर्य और बढ़ गया। क्या उसे नहीं मालूम कि प्रमिला आजकल नहीं है !

जब वह कमरे के पास पहुंचा तो वह घर का निरीक्षण करके लौट चुकी थी। उसने पूछा, "भाभी नहीं दिखायी देतीं ?"

"आपको नहीं मालूम ?"

"नहीं ।"

"अच्छा ! एक महीने से वे लोग गये हुए हैं, मेरी ससुराल में शादी थी । अब आ जाना चाहिए ।"

वह जैसे मजबूरी में हंस पड़ी । फिर गम्भीर होकर बोली, "मैं नहीं जानती थी... बेकार में आपको कष्ट दिया । मैं लायब्रेरी चली गयी थी, वापस आयी तो माताजी घर में ताला लगाकर कहीं चली गयी थीं। चाबी-वाबी भी नहीं दे गयीं । सोचा कि चलकर भाभी के यहां नहा आऊं ! गजब की गरमी है . . ." इतना कहकर वह संकुचित-सी हो उठी।

"तो क्या हुआ ? आप अब भी शौक से नहा सकती हैं । गुसलखाने में खूब पानी आ रहा है, साबुन वगैरह भी वहीं पर है। कमरे में अलमारी के अंदर आपकी भाभीजी के कपड़े हैं... किसी बात का संकोच करने की जरूरत नहीं ।"

"आपको . . . ?"

"नहीं, मुझे कोई असुविधा न होगी । जाइए, चली जाइए । संकोच-वंकोच की जरूरत नहीं ।"

"मैं बहुत फ्रैंक हूं . . . "

फिर वह मुसकराती, शरीर को एक मनोहर लोच देती हुई अंदर चली गयी।

गुसलखाने में घुसकर जब नीलम ने दरवाजा भीतर से बंद कर लिया तो नीरज कमरे के अंदर जाकर खड़ा हो गया । उसने सहसा अनुभव किया कि उसका हृदय तेजी से धड़क रहा है ।

वह लगभग तीन वर्ष से उसको जानता था । कभी-कभी वह उसके घर आ जाती थी । उसकी उम्र पच्चीस वर्ष से अधिक नहीं थी, यद्यपि दूसरों के मामलों में बेहद

नहीं थी, यद्यपि दूसरों के मामलों में बेहद दिलचस्पी रखने वाले अनुभवी लोग तीस-बत्तीस बताते थे। वह प्राइमरी स्कूल की एक साधारण-सी अध्यापिका की लड़की थी, जिसको उसके पति ने जवानी में ही छोड़ दिया था और जिसे बाद में उसके पति के एक मित्र ने कुछ दिनों तक रखा और बाद में मार-पीटकर निकाल दिया था। नीलम ने अंगरेजी में एम. ए. कर लिया था। शादी और नौकरी के बारे में उसकी स्थिति लगभग समान थी। अचानक यह समाचार उड़ता कि फलाने से उसकी शादी होने वाली है, जो कुछ दिनों तक खूब गरम भी रहता और अंत में धीरे-धीरे ठंडा पड़ जाता। नौकरी उसको जितनी आसानी से मिलती उतनी ही आसानी से छूट भी जाती थी और वह इस तरह प्राइमरी से लेकर इंटर कॉलेज तक ऐसे विद्यालयों में साठ-साठ रुपये तनख्वाह पर पढ़ा चुकी थी जिनके व्यवस्थापक बड़े-बड़े विद्वान और मानवतावादी नेता थे। यह भी कहा जाता था कि महत्वाकांक्षी लोग शादी का लालच देकर उसको अपने जाल में फंसा लेते हैं और अंत में गन्ने की तरह चूसकर फेंक देते हैं और वह भी इस क्षेत्र की एक कुशल और अनुभवी खिलाड़ी बन गयी है।

वह उसके यहां आती तो आते ही जाने को तैयार हो जाती, लेकिन थोड़ा-सा आग्रह करने पर बैठ जाती और चाय पीने के बाद गपशप करती रहती। वह अकसर छोटी-मोटी चीजों के बारे में जिज्ञासा प्रकट करती। वह अपने बारे में बहुत ही कम बतलाती और अक्सर दूसरों से ही प्रश्न करती रहती। नीलम उसको देखते ही बहुत गम्भीर हो उठता। उसके आते ही वह अकसर उठकर चल देता या बैठा भी रहता तो उसके चेहरे पर कुलीनता का गाम्भीर्य बना रहता। वह अपनी पढ़ी-लिखी और तेज-तर्रार पत्नी से बेहद प्रभावित था और उसको एक आदर्श स्त्री समझता था और एक बदनाम लड़की के प्रति उपेक्षा प्रकट करके वह अपनी पवित्रता और पत्नी-भक्ति प्रकट करके संतोष प्राप्त करता। किसी स्त्री या लड़की के सामने पहुंचकर वह 'बड़ा भाई' या 'उपदेशक' बन जाता था।

खैर, इस समय एक प्रश्न उसके अंदर मथानी की तरह घूम रहा था। आखिर वह इस समय क्यों आयी है? यह तो हो नहीं सकता कि उसको प्रमिला के मैके जाने की बात मालूम न हो। एक महीना पहले जब वह आयी थी तो प्रमिला ने स्वयं उसको यह सूचना दी थी। और यदि वह उसकी बात भूल भी गयी हो तो उसको दूसरी जगहों पर इसका पता अवश्य लग गया होगा क्योंकि वह प्रमिला की अन्य कई सहेलियों के यहां आती-जाती रहती है। फिर मान लिया जाए कि उसको कुछ मालूम न हो और वह यहां अचानक ही चली आयी है तो वह नहाने को झट कैसे तैयार हो गयी। यदि कोई अन्य शरीफ औरत होती तो अपनी सहेली के पति को

पाकर फौरन रफूचक्कर हो जाती।

यह सब सोचकर उसके हृदय की धड़कन और तेज हो गयी और उसके शरीर में एक अत्यधिक मीठी उत्तेजना दौड़ने लगी। उसने सम्भावनापूर्ण परिस्थितियों के केंद्र में अपने को देखा और उसको अपने ऊपर गर्व हुआ—अपनी सुंदरता पर, अपनी योग्यता और प्रतिभा पर और दूसरे पर विजय प्राप्त करने की अपनी शक्ति पर।

इसमें तो कोई संदेह नहीं कि वह उससे बेहद प्रभावित है, सम्भवतः वह उससे मन-ही-मन प्यार भी करती हो, क्योंकि नारी इस संसार की अत्यंत रहस्यमयी हस्ती है। प्रेम-रोमांस में हर्ज ही क्या है; विशेष रूप से ऐसी परिस्थिति में ? घटनाशून्य जिंदगी भी कोई जिंदगी है ? फिर वह तो कुएं के पास गया नहीं बल्कि कुआं ही उसके पास सरक आया; इसलिए उसकी व्यक्तिगत नैतिकता पर कोई आंच नहीं आती और न उसकी किसी प्रकार की हेठी ही होती है। बहती गंगा में हाथ धोने की इच्छा किसकी नहीं होती ? ठीक से सोचा जाए तो यह एक मजबूर और सताई हुई औरत है। बेईमान अविवाहितों से तंग आकर एक शरीफ सुसंस्कृत विवाहित के प्यार का सहारा चाहती है तो हर्ज क्या है ? ऐसी स्थिति में उसके दुःख-दर्द कम कर देना एक परोपकार की भी बात होगी।

अब उसने एक शिकारी कुत्ते की तरह फौरन कान खड़े कर लिये। गुसलखाने से पानी गिरने की आवाज, बदन मलने की छपछपाहट और उसके भीतर से उभरती हुई मधुर कंठ की गुनगुनाहट

सुनायी दे रही थी। उसकी दृष्टि के सामने जल में भीगा एक कमल कांपने लगा। दिमाग में एक खुशबू भर गयी और वह उस खुशबू में स्वयं नहाने लगा। वह यह सोचकर बेहद अधीर हो उठा कि वह भी उसी के बारे में इस समय सोच रही होगी।

लेकिन अचानक उसके मन पर एक बात बोझ बन गयी। यदि प्रमिला को यह बात मालूम हो गयी तो ?

कुछ देर बाद गुसलखाने का दरवाजा खुला और नीलम निकलती दिखायी पड़ी। उसने अपनी ही साड़ी फिर पहन ली थी। वह आंख फाड़कर देख रहा था, गोया उसको पी जाएगा। आंगन में अलगनी पर तौलिया पसारने के बाद वह कमरे में आयी। वह सिर झुकाकर चल रही थी।

कमरे में आने से पहले उसकी नजर दरवाजे की ओर चली गयी थी। वह क्षण-भर के लिए सकपकायी, फिर मुसकराने लगी थी।

"बड़ी गरमी थी ..."

"स्नान हो गया ?" उसने साहस-पूर्वक ताजे फल के समान उसके शरीर का निरीक्षण किया।

"जी हां ..." वह दूसरी ओर देखने लगी।

"अच्छा तो यह आईना है, कंघी, आदि है। मैं बाहर चला जाता हूं ..." उसने अपनी उदारता का प्रभाव जमाया।

"नहीं, इसकी जरूरत नहीं ..."

"जरूरत कैसे नहीं, मैं जानता हूं !"

इतना कहकर वह तेजी से कमरे से बाहर निकल गया, पर निकलते समय उसने तिरछी दृष्टि से उसको देखा, जो मजाकिया ढंग से मुसकरा रही थी। इस मुसकराहट ने उसकी उत्तेजना को कई गुना बढ़ा दिया। उसको अपने वाक्य से कई-कई अर्थ उभरते हुए महसूस

"आप बाहर क्यों खड़े हैं ?"

वह बहुत ही उम्मीद से मुसकराने लगा। उसने कल्पना की आंखों से कि नीलम अपने शरीर को लोच हुए खड़ी है और उसको बड़ी अदा से रही है। यदि उसने उसको इस तरह तो यह निश्चित संकेत होगा कि उसके प्यार की भूखी है। तब वह बढ़कर उसका हाथ पकड़कर कहेगा कि तुमसे ... ! हां, इसमें कोई हर्ज नहीं...

वह कमरे के अंदर चला गया। लेकिन प्रवेश करते ही उसने देख लिया कि नीलम गम्भीरतापूर्वक दीवार पर एक चित्र को देख रही है। उसका और भी निखर आया था। पता नहीं क्यों, आज वह उसे बहुत अच्छी लग थी। पर यह गम्भीरता क्यों ? उसकी बात से वह नाराज तो नहीं हो गयी ? या भीतर से दरवाजा बंद करना उसको बुरा लगा है ? कहीं उसका सोचा गलत न हो जाए और वह कहीं प्रमिला से शिकायत न कर दे ! तब तो बड़ी गड़बड़ी हो जाएगी। देखते-ही-देखते उसके चेहरे पर आयी, लम्बी मुसकराहट लड़खड़ा कर लुप्त हो गयी।

"बैठ जाइए न !" उसने स्वयं गम्भीर आवाज में कहा।

उसने नीरज की ओर चौंक कर देखा, फिर एक कुरसी खींचकर बैठ गयी और अत्यंत मिठास से मुसकराने लगी।

नीरज की निराशा समाप्त हो गयी और उसके हृदय में पुनः इच्छाओं का ज्वार उमड़ने लगा।

"अच्छा, मैं आपको चाय पिलाता हूं!"

"नहीं . . .।" उसने सिर हिला दिया।

"वाह चाय तो पीनी ही पड़ेगी। मैं अभी बना लाता हूं . . . मेरी बनायी चाय उतनी अच्छी न बनेगी . . ."

"अच्छा तो चाय मैं बनाऊंगी . . . आप जगह और सामान बता दीजिए . . .।" वह हंसने लगी।

"अरे मैं पांच मिनट में बना लाता हूं।" उसने उसकी आंखों में मुसकराती हुई दृष्टि से घूरते हुए कहा।

"आप बैठिए, मैं यह काम अच्छा कर लेती हूं। रसोई में सब सामान तो होगा ही। मैं अभी बना लाती हूं . . ." वह गम्भीर हो रसोईघर की ओर चली गयी।

नीरज कुरसी पर हतप्रभ-सा बैठ गया। उसे शंका उत्पन्न हो गयी। कहीं यह सचमुच अनभिज्ञता की स्थिति में न चली आयी हो और इस समय उसकी भावनाएं कहीं पवित्र न हों! सब गुड़-गोबर न हो जाए। लेकिन जल्दी ही उसने इस शंका को भगा दिया।

वह कुछ ही देर में चाय बनाकर ले आयी। उसने एक छोटी मेज पर दोनों कप रख दिये और उसको उठाकर नीरज के सामने रख दिया। फिर एक कुरसी खींचकर वह भी बैठ गयी। फिर हंसकर बोली, "अब बताइए, कैसी बनी है चाय?"

नीरज जैसे किसी नशे में हो। उसने कप उठाकर चाय की दो-तीन चुस्कियां लीं, फिर उसकी आंखों में साहसपूर्वक घूरते हुए कहा, "वाह, खूब बनी है!"

"सच?" वह मुसकरायी।

"मैं झूठ तो बोलता नहीं . . .।" उत्तेजना से उसके मुंह पर लाली दौड़ गयी और वह नीचे देखकर मुसकराने लगा। वह अब बेहद उतावला हो रहा था। फिर भी मन में एक दबा-दबा संदेह था कि कहीं गड़बड़ न हो जाए! इस देश का दुर्भाग्य है कि यहां की लड़कियां पश्चिमी देशों की तरह फारवर्ड नहीं!

उसने जल्दी-जल्दी चाय पी। फिर कप को मेज पर रखकर बोला, "कैसा चल रहा है काम-धाम?"

"ठीक है . . ." नीलम ने भी चाय की अंतिम चुस्की ली।

"यह संघर्ष का जमाना है, तुमको अपना संघर्ष तेज करना होगा। डी. फिल. जरूर कर लो। खूब मेहनत करो, मेहनत ही जिंदगी है। मैं तो चाहता हूं कि इंसान इस्पात का बने। मैं सब ठीक करा दूंगा। तुमको घबराने की जरूरत नहीं . . ." अंतिम वाक्य उसने कोमल भुनभुनाहट के स्वर में कहा और फिर हंसकर इधर-उधर देखने लगा।

नीलम गम्भीर हो गयी थी। वह नीरज को देख रही थी। नीरज खुश हो रहा था। उसको विश्वास हो गया कि नीलम उसकी बातों से बेहद प्रभावित हो गयी है।

उससे और आत्मीयता जतलाता हुआ बोला, "मुझे कभी-कभी तुम्हारे लिए बड़ा अफसोस होता है। कभी-कभी मैं तुम्हारी मां के बारे में सोचता हूं तो बड़ा कष्ट होता है। कैसी जिंदगी है! दुनियाभर की बातें! खैर, मैं देख लूंगा सब को। बस, अपनी कोशिश यह रहनी चाहिए कि गलत लोगों से दूर रहा जाए। बस, तुम मेहनत करती जाओ। जो कठिनाई हो, मुझसे पूछ लिया करो।"

वह उसी तरह आंखें खोलकर उसको देखती रही।

नीरज उत्साहपूर्वक बोलता रहा, "मैं सब ठीक कर दूंगा। तुम्हारे भाग्य को बदल दूंगा। बस मिलते-जुलते रहना।" वह धीरे से हंसा, "तुम निश्चित-ही आगे बढ़ोगी। कोई तुम्हारा बिगाड़ नहीं सकता। तुम किस्मत की भी बहुत [illegible] हो, यह मैं तुम्हारे चेहरे को देखकर [illegible] सकता हूं। मैंने दो-तीन आदमियों [illegible] कुछ बताया है, वह ठीक-ठीक [illegible] है। तुम जरा अपना हाथ तो [illegible] करो . . ."

"हाथ?" वह धीमे स्वर में [illegible]

"हां, इधर मुझे एक बहुत बड़े ज्यो[illegible] के संग-साथ का सुअवसर मिला है।"

"आप विश्वास करते हैं?"

"एक साइंस तो है ही यह!"

"मैं भी जानती हूं कुछ-कुछ।" [illegible] व्यंग्यपूर्वक हंसी।

"तुम?" नीरज की आंखें फैल [illegible]

"हां, आपके जानने में और [illegible] जानने में फर्क है। आप हाथ देखकर [illegible] बताते हैं, मैं बिना हाथ देखे ही [illegible] सकती हूं।" वह कटुता से बोली।

"अच्छा!" नीरज उसको [illegible] नासमझी से देख रहा था।

"भाई साहब," वह आहत क्रुद्ध [illegible] की तरह उसको देखती हुई अत्य[illegible] अभिमानपूर्वक बोली, "मैं अभी, इसी [illegible] आपका हाथ देखे बिना आपके बारे [illegible] सैकड़ों बातें बता सकती हूं। अच्छा, [illegible] मैं चलूंगी . . ."

"अरे . . ." नीरज के मुंह से इ[illegible] अधिक कोई बात न निकल सकी।

नीलम अचानक उठ खड़ी हुई और [illegible] हल्का-सा नमस्कार करके इ[illegible] लाती हु[illegible] बाहर निकल गयी।

मेरे भैया का एम. बी. बी. एस. में एडमीशन हो गया, पर रैगिंग से परेशान होने पर मजबूर हो उन्होंने पिताजी से प्रार्थना की कि कोई नौकरी दिलवा दें। मुझे भैया पर क्रोध आ रहा था कि अपने 'सीनियर्स' से डर कर अपना भविष्य बिगाड़ रहे हैं।

पर जब मैंने प्रवेश लिया, तब... 'मिरांडा हाउस' में कदम रखते ही सीनियर्स का एक झुंड मुझे पुकार उठा--फ्रेशर! ज्यों ही उनका दल समीप आया तो मेरी बुद्धि और हिम्मत यों गायब हो गयी जैसे गधे के सिर से सींग।

ओफ! क्या हालत कर दी थी 'उन्होंने' मेरी उस दिन! सदा 'नीविया क्रीम' से संवारे जाने वाले चेहरे को उन्होंने संवारा काली बूट-पालिश से! पर अभी तो हमारा विवाह होना शेष था, जो होली के बचे रंगों से होना था। फिर पहनायी गयी 'मैं गधा हूं' की पुष्पमाला!

--शोभा, मिरांडा हाउस, दिल्ली विश्वविद्यालय

हमारी बी. एस-सी. (पार्ट वन) कक्षा में कुल ४५ विद्यार्थी थे, जिनमें

यह स्तम्भ युवावर्ग के लिए है। कालेज के छात्र-छात्राएं इसके लिए रोचक एनकडोट्स भेज सकते हैं। रचना के साथ अपना चित्र और पता लिखा, टिकट लगा लिफाफा भेजना आवश्यक है, अन्यथा रचना पर विचार नहीं किया जाएगा।

--सम्पादक

---

८ लड़कियां थीं। मिश्रा सर ने लड़कियों के बैठने के लिए सब से आगे सीटें रिजर्व कर दी थीं। एक दिन कुछ छात्रों ने कुछ पूर्व आकर लड़कियों वाली सीटें घेर लीं। कुछ दिन तक ऐसा ही होता रहा।

मैं एक दिन सर के सामने ही उठ खड़ा हुआ और आगे की सीट पर बैठे लड़कों से कहने लगा, "स्वतंत्र भारत के स्वतंत्र नागरिको! आज समानता का युग होते हुए भी, तुम अपनी बहनों से समानता का अधिकार छीन रहे हो, और उन्हें मजबूरन सबसे पीछे वाली कुरसियों पर बैठना पड़ रहा है।" मेरा इतना कहना था कि वे विद्यार्थी पीछे चले गये।

—ऋषि श्रीवास्तव, शासकीय महाविद्यालय, दतिया

हमारे कालेज की फाइनल कक्षा के छात्रों ने सामूहिक-नकल करने का फैसला कर लिया। निरीक्षकों को नकल न पकड़ने की कड़ी चेतावनी दे दी गयी। डॉक्टर हालदार अपनी कर्तव्य-परायणता के लिए छात्रों में 'बदनाम' हैं।

परीक्षा के पहले ही दिन डॉक्टर हालदार ने दो छात्रों को निकाल दिया। दूसरे पेपर में भी उन्होंने तीन लड़कों को पकड़ लिया। उस दिन मैदान में छात्रों ने उन्हें घेर लिया। वे कहने लगे, "मेरे बच्चो, मैं जब भी तुम्हारी नकल पकड़ता हूं, तो मुझे बहुत दुःख होता है। मैं चाहता हूं कि जो डिग्रियां तुम प्राप्त करते हो, उनके योग्य बनो ताकि तुम्हारा भविष्य प्रकाशमय हो। इस बुढ़ापे में, विद्यार्थी-जीवन का स्तर ऊंचा उठाना ही मेरा ध्येय रह गया है। हां, यदि मुझे मारने से तुम्हें किसी प्रकार का संतोष या तृप्ति मिलती है, तो मैं सहर्ष प्रस्तुत हूं।"

सारे छात्र चुपचाप चले गये!

—करनजीतसिंह सरन, जुन्नारदेव, छिंदवाड़ा (म. प्र.)

बी. एस-सी. की कक्षा माइक्रो-बॉयलोजी का अंतिम पीरियड उस दिन विभागाध्यक्षा लेने वाली थीं। काफी देर तक वे नहीं आयीं तो सर्वसम्मति से कक्षा छोड़ने का निश्चय किया। खाली कक्षा देखकर वे चली गयीं। इसके बाद प्रैक्टिकल थे। प्रैक्टिकल के समय विभागाध्यक्षा आयीं तो, लेकिन उन्होंने कुछ भी नहीं कहा।

दूसरे दिन पहला घंटा माइक्रोबॉयोलोजी का था, लेकिन दूसरी अध्यापिका का। उन्होंने आते ही कहा, "तुम लोग बहुत होशियार हो गयी हो, अतः आज से तुम्हें यहीं बैठकर स्वयं पढ़ाई करनी है। विभागाध्यक्षा ने अपने भी घंटे में टॉपिक बता दिया और स्वयं बैठी रहीं।

तीसरे दिन विभागाध्यक्षा बोलीं, "कुछ दिन मुझे पढ़ाने की इच्छा नहीं थी, आज पढ़ाने का मन है।" डांट नहीं पड़ी, लेकिन उस दिन से यह असर पड़ा कि यदि विभागाध्यक्षा को आने में देर हो जाती तो छात्राएं कभी भागने का नाम नहीं लेती थीं।

—उषा कानोड़िया, सोफिया कालेज फार वीमेन, बम्बई

होल्कर विज्ञान महाविद्यालय ने उस वर्ष 'सोशल-गैदरिंग' में मुख्य अतिथि के पद पर श्रीमती विजयलक्ष्मी पंडित को आमंत्रित किया था।

कार्यक्रम के पश्चात उनके हस्ताक्षर लेने वाले छात्रों ने उन्हें घेर लिया। बड़े धैर्य से वे हरेक को हस्ताक्षर देने लगीं। जब वे चाय पी रही थीं तब भी उनके सामने ढेर-सारी हस्ताक्षर-पुस्तिकाएं [illegible] थीं। उसी समय मैंने भी उनसे हस्[illegible] ले लिये।

बाद में ग्रुप-फोटो लिया गया। [illegible] के बाद भी छात्रों को वे हस्ताक्षर [illegible] लगीं। एक छात्र ने कागज का एक [illegible] उन्हें दे दिया। इस पर प्राचार्य ने उसे [illegible] कि तुम्हें बड़े लोगों के हस्ताक्षर लेना [illegible] आता।

इस पर श्रीमती पंडित ने टि[illegible] की कि इनके पास कागज के अति[illegible] और क्या [illegible] सकता है[illegible] फिर उन्[illegible] उसी पर्चे [illegible] तीन - च[illegible] स्थान पर [illegible] दूर हस्ता[illegible] कर दिये [illegible] यह कह [illegible]

उसे पर्चा लौटा दिया कि इसे अन्य [illegible] को भी दे देना। ऐसा उन्होंने कई विद्[illegible] थियों के कागज पर किया कि कोई [illegible] निराश न लौटे।

—अमोल केकरे, हरदा, जि. होशंगाबाद

विजयलक्ष्मी पंडित
२३.१२.६८

श्रीमती पंडित के हस्ताक्षर

थिरकते पैरों की छवि

• जयश्री त्रिवेदी

नृत्य-कला के प्रति मुझे बचपन से ही आकर्षण रहा है। कहूं कि हर वक्त मैं नृत्य के बारे में ही सोचा करती थी, तो अतिशयोक्ति न होगी। घर का वातावरण भी ऐसा था जहां रात-दिन नृत्य और संगीत की धुन गूंजा करती थी और जहां बाहरी तड़क-भड़क की जगह मन की सुंदरता पर जोर दिया जाता था। नृत्य और संगीत के इस माहौल में रहते हुए जब भी, जहां भी अवसर मिला मैंने नृत्य-प्रदर्शनों का कार्यक्रम देखने में चूक नहीं की। नृत्य के बारे में बहुत कुछ पढ़ा भी और पाया कि भारत-जैसे विशाल देश में, जहां अनेक प्रादेशिक और आंचलिक संस्कृतियां पुष्पित और पल्लवित हुई हैं, वहां इन संस्कृतियों की छाया में नृत्य की भी अनेक शैलियां प्रस्फुटित हुईं, जैसे भरत-नाट्यम, कथकली, कत्थक, मनीपुर तथा ओडिसी। भरत-मुनि के नाट्य-शास्त्र में उल्लिखित नियमों और निर्देशों पर ही नृत्य की ये प्रमुख शैलियां आधारित हैं।

भारत में कहीं भी चले जाइए, आपको दूर से ही मंदिरों के कलश दिखायी पड़ेंगे। इनमें अंकित मूर्तियों की भाव-भंगिमाएं यह संकेत देती हैं कि हमारे यहां सदा धर्म और नृत्य का घनिष्ठ संबंध रहा है। नृत्यकार हस्तमुद्रा, पद-संचालन और भाव के द्वारा आंतरिक आध्यात्मिक भावों को अभि-व्यक्ति का नया आयाम देते थे। उन दिनों कला और देवताओं के प्रति अर्पित ऐसी कन्याएं देवदासी की उपाधि से विभूषित की जाती थीं। पुराणों में, जो १५०० वर्ष पुराने हैं, ऐसी देवदासियों का उल्लेख है। कालांतर में सामाजिक और राज-नैतिक कारणों से यह प्रथा विलीन हो गयी।

ओडिसी नृत्य जैसा आज प्रचलित है, सर्वप्रथम ईसा-पूर्व द्वितीय शताब्दी में खारबेला के राज्यकाल में प्रकाश में आया। सातवीं शताब्दी से बाद के कुछ काल तक भुवनेश्वर का शिव-मंदिर ओडिसी नृत्य का केंद्र रहा। बाद में १६ वीं शताब्दी

अंग-संचालन

में इसे प्रश्रय देने का कार्य पुरी के जगन्नाथ मंदिर को मिला। ओडिसी नृत्य से सम्बंधित अधिकांश नृत्य-मुद्राएं उड़ीसा के मंदिरों में अंकित मूर्तियों में मिल जाती हैं।

कत्थक मूलतः एक धार्मिक नृत्य था। अपने विकास-काल में इसने सृष्टि के निर्माण की लय और ताल को बोलों के माध्यम से व्यक्त किया। देवी-देवताओं की कथाएं इसके माध्यम से कही जाती थीं, इसलिए इन कथाओं को कहने वाले 'कथक' कहलाये। आगे चलकर इन्हीं को कत्थक कहा गया। बाद में तो शताब्दियों तक कत्थक नाचने और गाने वाली जाति के रूप में जाने जाते रहे। उत्तर भारत के संगीत और नृत्य पर मुसलमानों की जो छाप पड़ी उसके कारण कत्थक धार्मिक नृत्य नहीं रहा। यवन शासकों के लिए तो नृत्य केवल आमोद-प्रमोद का माध्यम था। फिर भी करीब चार सौ वर्ष तक इन्हीं नर्तकियों ने 'कत्थक' नृत्य को सुरक्षित रखा।

१९ वीं शताब्दी के अंत तक भारतीय शास्त्रीय नृत्य करीब-करीब खत्म हो चुका था। विदेशी शासकों के प्रभाव के कारण हर विदेशी चीज अच्छी और देसी खराब समझी जाने लगी थी। १९१७ में रवीन्द्र ठाकुर ने मनीपुरी नृत्य को शांति-निकेतन में प्रचलित किया। उदयशंकर ने अनेक कथानकों पर नृत्य बनाये और पश्चिमी देशों का दौरा किया। बम्बई की मेनका ने कत्थक शैली के नृत्यों का प्रदर्शन विदेशों में किया और ख्याति अर्जित की। ओडिसी नृत्य को अपने प्रदेश के बाहर ख्याति दिलाने में इंटर-यूनीवर्सिटी यूथ फेस्टिवल और सेमीनार का बड़ा हाथ रहा, जिसने १९५८ में दिल्ली में हुए आयोजन में इसे प्रस्तुत किया। भरत-नाट्यम को ख्याति देने का श्रेय है प्रसिद्ध नर्तकी बाला सरस्वती को, जिन्होंने १९३४ की अखिल भारतीय संगीत-सभा में अपनी नृत्यकला के प्रदर्शन द्वारा उत्तर भारत में इस नृत्य के प्रति लोगों की रुचि जाग्रत की।

भाव-मुद्रा

आज भारत में नृत्य की ये समस्त शैलियां प्रचलित हैं। अपने को बहुत 'मॉडर्न' कहलाने वाले लोग भी विदेशी नृत्य की जगह भारतीय नृत्यों को ही पसंद करते हैं।

● ए. के. सिनहा

प्यार के खून से खिला फूल

ट्यूलिप के फूल अपने में प्यार की एक दर्दभरी कहानी समेटे हुए हैं। फारस की राजकुमारी शीरीं के प्रेमी फरहाद ने निराश हो कुल्हाड़ी से आत्म-हत्या कर ली थी। किंवदंती के अनुसार उसके शरीर से टपके खून की हर बूंद से एक सुंदर फूल खिला—वही फूल जिसे आज ट्यूलिप कहते हैं।

ट्यूलिप तुर्की का राष्ट्रीय फूल है। यह ईरान में भी पाया जाता है किंतु हालैंड में यह बहुतायत से होता है। सर्वप्रथम सन १५६२ में ट्यूलिप तुर्की से हालैंड लाया गया था।

ट्यूलिप बल्वनुमा फूलों की कोटि में आता है, लिली-परिवार का सम्बंधी है, और एशिया के समशीतोष्ण भागों का वासी है। कुछ ट्यूलिप भूमध्यसागर के भागों की जलवायु के अनुकूल हो गये हैं। इस का उत्पादन अत्यंत सरल और सस्ता है। इसके फूल काफी लंबे समय तक खिले रहते हैं। फलस्वरूप, यह बल्वनुमा फूलों में सर्वाधिक लोकप्रिय है।

अब अनेक देश ट्यूलिप के उत्पादन में रुचि लेने लगे हैं और जापान, अमरीका, फ्रांस, रूस अब हालैंड के प्रतिद्वंद्वी हो गये हैं।

ट्यूलिप की अब हजारों किस्में हैं। केवल हालैंड में इसकी १५०० किस्में पैदा की जाती हैं जो अनेक रंगों की होती हैं, जैसे सफेद, पीला, नारंगी, भूरा, काला, गहरा लाल, जामुनी, गुलाबी, सिंदूरी, तांबे के रंग का। इसके आकार भी अनेक हैं। डारविन ट्यूलिप का तना लंबा और फूल बड़े होते हैं। कुछ ट्यूलिप इंद्रधनुष-जैसे चमकते हैं। कुछ गुंथे या मरोड़े हुए ; कुछ पंखों-जैसे होते हैं। कुछ में रंगों के छींटे होते हैं। कुछ फूल लिली-जैसे होते हैं। नैरसिसी ट्यूलिप बड़ा मनमोहक होता है।

दोजातीयकरण तथा उद्भेदन द्वारा

वचन-वाणी

- भावना का स्थान हृदय में है। अगर हम हृदय शुद्ध न रखेंगे तो भावना हमें गलत रास्ते पर ले जाएगी।
  —महात्मा गांधी
- हर आदमी एक किताब है, बशर्ते कि तुम उसे पढ़ना जानते हो।
  —विलियम एलरी केनिंग
- न्याय कभी-कभी सो जाता है, लेकिन मरता कभी नहीं।
  —लॉ मैकिसम मोचे
- जीवन उनके लिए दुःखमय है जो महसूस करते हैं, और उनके लिए सुखमय है जो चिंतन करते हैं। —लॉ ब्लायर
- मैं उसे खोया हुआ मानता हूं जो अपनी शर्म खो चुका है।
  —प्लेटस
- समय मूल्यवान है, लेकिन सत्य समय से भी अधिक मूल्यवान है। —डिजरायली
- बुद्धिमान मूर्ख से उतना सीखता है जितना मूर्ख बुद्धिमान से नहीं।
  —केरो दि सेंसर
- स्त्री या तो प्रेम करती है या घृणा। उसके लिए मध्य-मार्ग कोई नहीं।
  —सायरस

ट्यूलिप की नयी-नयी किस्में पैदा हो गयी हैं, किंतु असली जंगली ट्यूलिप अब भी लोकप्रिय है। बीज से ट्यूलिप को पैदा करने में तीन से लेकर सात वर्ष तक लगते हैं। बीज से पैदा हुए ट्यूलिप के फूलों के रंग तथा रचना में काफी परिवर्तन हो जाता है।

ट्यूलिप के उत्पादन में कोई कठिनाई नहीं होती। इन्हें खाद या कृत्रिम खुराक की जरूरत नहीं। ये किसी भी प्रकार की मिट्टी में, जहां पानी का ठीक से निकास हो, उग सकते हैं। सितम्बर और अक्तूबर में इनका पौधा लगाया जाता है। कली की तुषार से रक्षा करनी पड़ती है। ५०, ६० डिग्री फारेनहाइट तापक्रम इनके लिए अनुकूल होता है। वसंत के प्रारम्भ में कलियों की पंखुड़ियां खुलने लगती हैं।

ट्यूलिप के पौधे छह या आठ इंच जमीन के अंदर लगाये जाते हैं और साधारणतः आठ से लेकर दस सप्ताह के भीतर जड़ें पकड़ लेते हैं। आरम्भ में भूमि को थोड़ा नम रखा जाता है। ●

तुम सब को धोखा दे सकते हो, अपने आप को नहीं दे सकते। इसीलिए जहाँ तुम समझते हो कि कोई नहीं है, वहाँ भी कोई जरूर है, वह तुम स्वयं हो। —बर्नार्ड शा

के. सिनहा

चित्र: प्रेम कपूर

• राजेन्द्रशंकर भट्ट

दिलवाड़ा के मंदिर
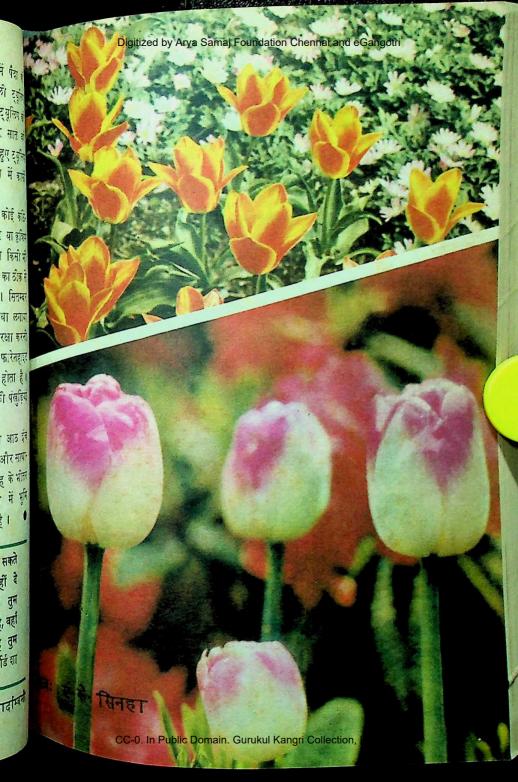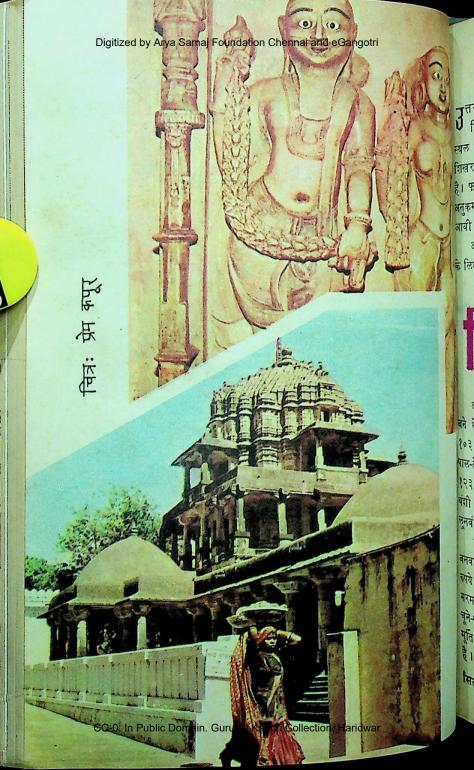
उत्तर में हिमालय और दक्षिण में नील-गिरि के बीच आबू पर्वत सबसे ऊंचा स्थल है, इसकी सबसे ऊंची चोटी 'गुरु शिखर' समुद्र-सतह से ५,६५० फुट ऊंची है। फल-फूल, पशु-पक्षी, सब प्रकृति-प्रदत्त अनुकम्पाएं आबू के हिस्से बहुलता से आयी हैं।

आबू दिलवाड़ा के दो जैन मंदिरों के लिए प्रसिद्ध है।

दोनों मंदिर दो सौ वर्षों के अंतर से बने थे। एक मंदिर विमलशाह ने सन १०३० में बनवाया था और दूसरा वस्तुपाल-तेजपाल नामक दो भाइयों ने सन १२३० में बनवाया था। पहले को विमल-वंशी और दूसरे को बड़े भाई के नाम पर लूनवंशी कहा जाता है।

जैन-परम्परा के अनुसार मंदिर बनवाने में उस समय, १८ करोड़ ५३ लाख रुपये लगे थे। सारा मंदिर, भीतर से संग-मरमर का बना है। बाहरी हिस्सा मामूली चूने-पत्थर का, अनाकर्षक है। मुख्य मूर्ति आदिनाथ ऋषभदेव भगवान की है। चारों ओर की दीवार से लगे ५२ छोटे-छोटे मंदिर और हैं, जिनमें नजै तीर्थंकरों की मूर्तियां हैं। स्तम्भों और छतों पर जो सूक्ष्म और सुंदर कारीगरी की गयी है उसी ने इस मंदिर को इतनी प्रसिद्धि दी है। कई जगह काम इतना बारीक है कि पत्थर की अंगुलियां सजीव अंगुलियों से अधिक सुंदर लगती हैं। पत्थर के फूल-पत्ते वास्तविक लगते हैं। देवी-देवता भी बहुत सुंदर बने हैं। कई जगह जैन-गाथाएं अंकित हैं।

दूसरा मंदिर, जो दो सौ साल बाद बना, इससे भी अधिक सुंदर है। जैन-परम्परा के अनुसार इसके निर्माण पर १२ करोड़ ५३ लाख रुपये लगे थे। यह भी भीतर से सफेद संगमरमर का बना है। मूर्ति बाईसवें तीर्थंकर नेमिनाथ की है।

इस मंदिर में भी, पहले मंदिर की तरह मूल गर्भगृह, गूढ़मंडप, नवचौकी, रंगमंडप, द्वारमंडप, खटक, चारों ओर की दीवारों के साथ छोटे-छोटे मंदिर (कुलिका) और हस्तिशाला हैं। संगमरमर में खुदाई का काम और भी अच्छा है। गर्भगृह के दोनों ओर बने खटक अथवा गोखे तथा कुछ छतों पर किया काम संसार भर में संगमरमर पर किये गये
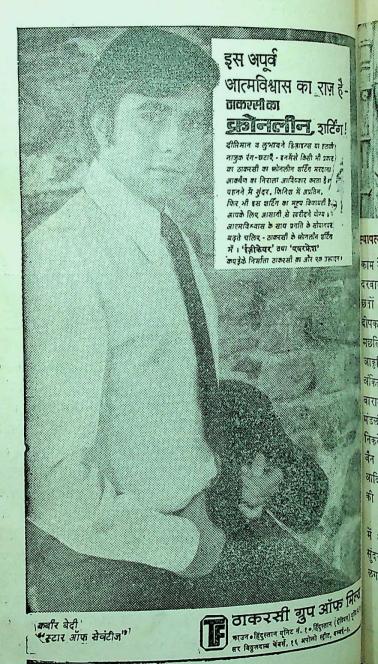
स्थापत्य-कला का एक आकर्षक नमूना

काम में सुंदरतम माना जाता है। दीवारों, दरवाजों, खम्भों, मंडपों, तोरणों तथा छतों पर अत्यंत आकर्षक फूल, पेड़, बेलें, दीपक, घंटे, घोड़े, हाथी, चीते, शेर, मछलियां, चिड़ियां तथा मानव एवं देव-आकृतियां बनी हैं। अनेक जैन-गाथाएं अंकित हैं, जिसके लिए राज-दरबार, जुलूस, बारात, विवाहमंडप, नाटक, संगीत-मंडली, युद्ध, समुद्र-यात्रा, चराई पर निकले पशु-समूह, चरवाहों का जीवन, जैन साधुओं तथा गृहस्थों की दिनचर्या आदि अनेक वस्तुएं एवं घटनाएं अंकित की गयी हैं।

वस्तुपाल-तेजपाल के बनवाये मंदिरों में आबू का लूणवंशी सबसे भव्य और सुंदर है। सात सौ कारीगर काम पर लगाये गये थे। फिर भी निर्माण-कार्य गति नहीं पकड़ सका। तब तेजपाल अपनी पत्नी अनुपमादेवी के साथ स्वयं आबू पर्वत पर आया।

अनुपमादेवी स्वयं कलाकारों के लिए प्रोत्साहन और प्रेरणा का कारण बनीं उन्होंने संगमरमर के काम में बारीकी लाने पर बहुत जोर दिया, मूर्ति बन जाने पर वे उसमें और बारीकी लाने को कहतीं। उसके बाद कहतीं—जितना और पत्थर छीलकर चूरा निकाला जायेगा उतने ही तौलकर तांबे के सिक्के दिये जाएंगे। चांदी और सोने के सिक्के भी कलाकारों को प्रोत्साहित करने को दिये गये।

दोनों मंदिर पास-पास हैं। यह कहना कठिन है कि इनमें से कौन अधिक सुंदर है?

मंदिर में निर्मित हाथी की मूर्ति
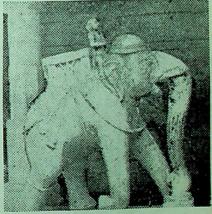
"तुमने इतने छोटे कद की महिला से विवाह क्यों किया ?"
"भाई, बला जितनी छोटी हो उतना ही अच्छा !"

व्यर्थ का शास्त्रार्थ

दार्शनिक ने अपने शिष्यों से कहा, "धर्म में विश्वास करना जितना अच्छा है, धर्मांध होना उतना ही बुरा।"

कट्टरपंथियों को दार्शनिक की यह बात बहुत बुरी लगी। उन्होंने कहा, "हमारे साथ शास्त्रार्थ करो।"

दार्शनिक बोला, "जो व्यक्ति स्वयं को आत्मिक और आध्यात्मिक ज्ञान से सम्पन्न समझता है या अपने आपको

महापंडित कहलवाने में मुझे गौरव अनुभव करता है उसकी ... में वह व्यक्ति कहीं अधिक भाग्य... है जो आध्यात्मिक ज्ञान में विपन्न ... हर किसी से कुछ सीखने को तैयार ... दूसरी ओर, जो आदमी सांसारिक ... माया में लीन हो गया है और हर ... दौलत के नशे में चूर रहता है ... तुलना में वह कहीं अधिक भाग्य... जो गरीब होने के बावजूद मानव-धर्म ... पालन करता है।" इतना कहकर ... दार्शनिक चुप हो गया।

महापंडितों को दार्शनिक की ... बात बहुत ही सतही लगी और ... उसका भंडाफोड़ करने की एक ... योजना बनायी। सारे शहर में ... पिटवा दिया गया कि अमुक तिथि को ... विद्वान दार्शनिक का भाषण होगा।

निश्चित दिन वे लोग किसी ... उस दार्शनिक को मंच पर ले आये ... पर आकर दार्शनिक ने श्रोताओं से ... "क्या आप जानते हैं कि मैं क्या ... वाला हूं?"

श्रोताओं ने एक स्वर से कहा, ...

"तब तो मुझे कुछ भी कहने की ... जरूरत नहीं।" इतना कहकर दा... मंच से उतर गया।

महापंडितों ने उस दार्शनिक ... बार और मंच पर जाने का आग्रह ...

दूसरी बार मंच पर चढ़कर दार्शनिक ने श्रोताओं से पूछा, "क्या आप जानते हैं, मैं क्या कहने वाला हूं?"

इस पर कुछ श्रोताओं ने 'हां' और कुछ ने 'नहीं' कहा।

तब दार्शनिक बोला, "यह तो और भी अच्छा है, जो लोग कुछ जानते हैं उन्हें ही उन व्यक्तियों को कुछ समझा देना चाहिए जो कुछ नहीं जानते। लेकिन एक बात कहे देता हूं कि सलाह, परामर्श, भाषण, प्रवचन आदि सब ऐसी चीजें हैं, जिनकी किसी विवेकशील को आवश्यकता नहीं होती और मूर्ख जिन्हें मानता नहीं है।"

पद्धति और शिल्प

किसी धार्मिक समारोह में एक महात्मा अपना प्रवचन कर रहे थे। उन्होंने कहा कि आज का प्राणी मोह-माया के जाल में इस कदर फंस गया है कि उसको आध्यात्मिक चिंतन के लिए समय ही नहीं रहता। उस पर भौतिकवाद का रंग चढ़ता जा रहा है।

जैसे ही उनका प्रवचन समाप्त हुआ, एक आदमी महात्मा के पास आकर पूछने लगा, "आप ईश्वर का इतना प्रचार करते हैं, क्या आपने कभी ईश्वर देखा है?"

महात्मा बोले, "मैं तो ईश्वर को हर क्षण देखता हूं। यदि आप प्रयत्न करें तो आप भी दर्शन कर सकते हैं!"

"कैसे?" आदमी ने कुछ हैरान होकर कहा, "मैं पिछले कई वर्षों से पूजा-पाठ करता रहा हूं, लेकिन ईश्वर के दर्शन आज तक नहीं हुए!"

"ईश्वर को प्राप्त करना कोई पद्धति (सिस्टम) नहीं, बल्कि शिल्प (टेक्नीक) है," महात्मा ने कहा।

उस आदमी ने फिर पूछा, "आखिर पद्धति और शिल्प में क्या अंतर होता है?"

महात्मा बोले, "मान लीजिए कि आपको कोई मकान, भवन या पुल बनाना है। उसके लिए पहले आप किसी वास्तुकार से एक नक्शा बनवाते हैं। लेकिन आप उस नक्शे को देखकर भवन या पुल नहीं बना सकते, क्योंकि वह नक्शा आपकी समझ से बाहर है। आपको फिर किसी इंजीनियर की शरण में जाना पड़ता है। वह नक्शे के आधार पर भवन या पुल बना देता है, क्योंकि वह उस शिल्प को समझता है। नक्शा केवल एक पद्धति है। ईश्वर के पास पहुंचने का रास्ता तो बहुत लोग दिखाते हैं, लेकिन शिल्प शायद ही कोई जानता हो!"

डॉ० एनरिको फर्मी जिन्होंने सबसे पहले अणु-शक्ति के उत्पादन का प्रदर्शन किया

अन्वेषणों का पुष्कल ज्ञान था। उस क्षेत्र में प्रगति के विषय में भी उन्हें जरमनी से किसी-न-किसी माध्यम द्वारा समाचार प्राप्त होते रहते थे। उन्हें, तथा विशेष रूप से यूरोपीय देशों से वहां आकर बसे वैज्ञानिकों को यह भय था कि कहीं हिटलर शीघ्र ही अणु-शक्ति का विकास करके अणु-बम का निर्माण न कर ले।

अणु-बम की कल्पना आइंस्टीन के ही मस्तिष्क की उपज थी। उनके सापेक्ष-वाद सिद्धांत के अनुसार भूत-द्रव्य (मैटर) ऊर्जा (एनर्जी) में परिणत किया जा सकता था। ऊर्जा का भी भूत-द्रव्य में रूपांतरण सम्भव था। उन्हीं के अनुसार, केवल एक किलो कोयले में उतनी शक्ति निहित है जितनी अमरीका के समस्त बिजली-घरों के एक महीने तक रात-दिन सक्रिय रहने पर ही उपलब्ध हो सकती है।

सन १९३९ में अंतरराष्ट्रीय स्थिति भयंकरतर होती जा रही थी। हिटलर की आक्रामक नीतियों और घोषणाओं से यूरोपीय देशों में आतंक फैल चुका था। अमरीकी वैज्ञानिक अणु-शक्ति के विकास और उसके सम्बंध में प्रयोग-विषयक विचार-विमर्श के क्षेत्र में ोपनीयता बरतने लगे थे।

कोलम्बिया विश्वविद्यालय के वैज्ञा-निक जार्ज बी. पैग्राम अणु में निहित अपार शक्ति और उसके सम्भावित सैनिक प्रयोग से इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने एनरिको फैर्मी और अमरीकी नौसेना के उच्चाधिकारियों के मध्य तत्सम्बंधी विशिष्ट विचार-विनिमय का आयोजन किया। अमरीकी वैज्ञानिक अब भी अणु-शक्ति के पर्याप्त विकास और उसके सैनिक प्रयोग के सम्बंध में आशा वान नहीं थे। किंतु अमरीका में बाहर से आकर बसे ल्यो जिलार्ड, फैर्मी आदि वैज्ञानिक ही उस पक्ष पर बराबर बल देते चले जा रहे थे।

रूजवेल्ट को आइंस्टीन का पत्र

जुलाई १९३९ में वैज्ञानिक जिलार्ड और
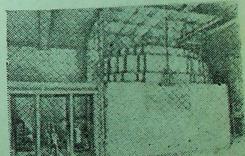
डॉ. एनरिको द्वारा आविष्कृत संसार का सबसे पहला आणविक रिएक्टर
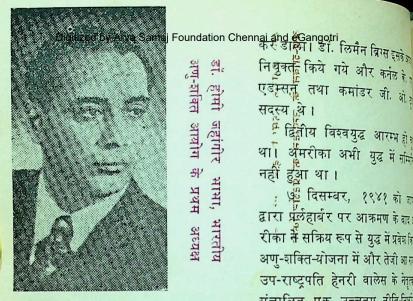
डॉ. होमी जहांगीर भाभा, भारतीय अणु-शक्ति आयोग के प्रथम अध्यक्ष

ई. पी. विजनर ने इस विषय में आइंस्टीन से विचार-विमर्श किया। ये तीनों ही वैज्ञानिक इतने व्यग्र हो उठे कि उन्होंने राष्ट्रपति रूजवेल्ट को भी एक पत्र लिखने की ठान ली। रूजवेल्ट को प्रभावित करने के उद्देश्य से उन्होंने राष्ट्रपति के एक मित्र, न्यूयार्क के प्रख्यात अर्थशास्त्री अलेक्जेंडर साश से भेंट की। उन्होंने साश को आइंस्टीन द्वारा लिखित एक पत्र राष्ट्रपति तक पहुंचाने के लिए राजी कर लिया।

द्वितीय विश्व-युद्ध

अक्तूबर, सन १९३९ में साश आइंस्टीन का पत्र लेकर 'व्हाइट हाउस' पहुंचे। आइंस्टीन का यह पत्र आगे चलकर अणु-युग के सूत्रपात का कारण बना।

'यूरेनियम' - सम्बंधी अनुसंधानों में नयी गति लाने के लिए रूजवेल्ट ने तुरंत एक परामर्शदात्री समिति का निर्माण कर डाला। डॉ. लिमैन ब्रिग्स इसके अ... नियुक्त किये गये और कर्नल के. ... एडम्सन तथा कमांडर जी. ओ. ... सदस्य थे।

द्वितीय विश्वयुद्ध आरम्भ हो ... था। अमरीका अभी युद्ध में सम्मि... नहीं हुआ था।

७ दिसम्बर, १९४१ को जा... द्वारा पर्लहार्बर पर आक्रमण के बाद अ... रीका ने सक्रिय रूप से युद्ध में प्रवेश कि... अणु-शक्ति-योजना में और तेजी आ ग... उप-राष्ट्रपति हेनरी वालेस के नेतृत्व ... संचालित एक उच्चतम नीति-निर्धार... मंडल के निदेशन में सारी योजना ... नयी गति प्रदान की गयी और ... १९४२ में राष्ट्रपति रूजवेल्ट के सम... एक रिपोर्ट प्रस्तुत की गयी जिसमें ... गया था कि केवल कुछ किलोग्राम '... नियम' या 'प्लूटोनियम' से ही उतनी श... का प्रस्फुटन सम्भव है जितनी हजारों ... टी. एन. टी. बारूद से।

मैनहट्टन योज...

राष्ट्रपति ने तुरंत निर्णय लिया ... उनके आदेशानुसार 'मैनहट्टन प्रोजे... नामक अणु-बम योजना का निर्माण कि... गया। प्राविधिक तौर पर सुरक्षा की दृ...

डॉ. जार्ज बी. पैग्राम—फर्मी और अमरीकी सैनिक अधिकारियों के माध्यम

से छद्मरूप में इसे डी. एस. एम. (डेवलप-मेंट ऑव सब्सीटीट्यूट मैटीरियल्स) कहा जाने लगा। इसके अध्यक्ष बनाये गये ब्रिगेडियर-जनरल लैजली आर. ग्रोव्स।

ब्रिटिश अणुबम-योजना

ब्रिटेन में भी लगभग उसी समय वैज्ञानिक मौड रे ने अणु-योजना के गठन के सम्बंध में प्रधानमंत्री चर्चिल को पत्र लिखा था। चर्चिल की प्रतिक्रिया भी वही हुई, जो रूजवेल्ट की हुई थी। इंग्लैंड में भी तुरंत अनुसंधान के लिए एक छद्मरूप 'डायरेक्टोरेट ऑफ ट्यूब एल्वौइज' योजना का निर्माण किया गया, जो वास्तव में अणु-बम योजना थी। रूज-वेल्ट के सुझाव पर अमरीकी और ब्रिटिश अणु-शक्ति-योजनाओं का सहकारी योजना के स्तर पर संचालन किया गया।

आणविक संयंत्रों की स्थापना

'मैनहट्टन योजना' के अधीन अमरीका में शिकागो विश्वविद्यालय, हैनफोर्ड तथा ओकरेज में अणु-शक्ति के विकास के लिए प्रयोगशालाएं स्थापित की गयीं। कनाडा में, 'चाक रिवर संयंत्र' प्रमुख था तथा इंग्लैंड में हारवैल।

२ दिसम्बर, १९४२ को फैर्मी स्वनिर्मित संसार के प्रथम न्यष्टि-प्रति-क्रियावाहक में न्यष्टि-विखंडन और उसके फलस्वरूप शृंखलाबद्ध प्रतिक्रिया द्वारा अणु-शक्ति उत्पादन में विश्व में प्रथम वार सफल हो गये।

फिर क्या था, अन्य आणविक प्रयोग-शालाओं के साथ न्यू मैक्सिको में लौस-अलामोस नामक स्थान पर अणु-बम को अंतिम रूप देने के लिए एक अत्यंत गोप-नीय प्रयोगशाला की भी स्थापना की गयी। रॉबर्ट ओपनहाइमर इसके निदेशक थे और फैर्मी उप-निदेशक।

आइंस्टीन : रूजवेल्ट के नाम इनका पत्र अणुबम के सूत्रपात का कारण बना
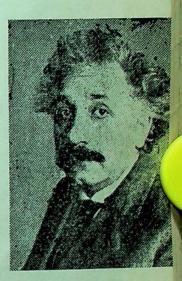
अमरीका और ब्रिटेन ने अपने देश की सुरक्षा को प्राथमिकता देते हुए वैज्ञानिकों के प्रस्तावों पर तुरंत अमल आरंभ कर १६ जुलाई, १९४५ को प्रथम अणु-बम का विस्फोट किया था।

अनुमान के अनुसार अमरीकी आण-विक योजना पर प्रारम्भ में कुल मिलाकर चार अरब डालर खर्च किये गये थे।

रूस की आणविक जासूसी

रूस उस समय युद्ध में अमरीका का मित्र-देश था। अमरीका ने रूस को

प्रचुर सैनिक सामग्री और प्रभूत सहायता उपलब्ध की थी और अब भी कर रहा था क्योंकि तब युद्ध समाप्त नहीं हुआ था।

अतः रूसी लाल सेना से सम्बद्ध गुप्तचर विभाग, जी. आर. यू. के अधीन आणविक जासूसी के संचालन का सूत्रपात किया गया। इसका मूल केंद्र था मास्को। लंदन में जी.आर.यू. का स्थानीय निदेशक साइमन दावेदोविच क्रैमर, अमरीका में सोवियत वाइस कौंसल पावेल मिकेलोव, जो वास्तव में जनरल दिमित्री शिनिकोव था (वह उत्तरी अमरीका स्थित जी.आर. यू. का रेजिडेंट डाइरेक्टर था) और कनाडा में मिलिटरी-अटैची कर्नल निकोलाई जेबोटिन ने आणविक जासूसी के संचालन का नेतृत्व किया था।

रूसी एजेंटों में दो ब्रिटिश वैज्ञानिक क्लौस फुश तथा एलन नन-मे, एक अमरीकी वैज्ञानिक मोर्टन सोबैत, एक अमरीकी तकनीशियन डेविड ग्रीन ग्लास तथा संदेशवाहकों के रूप में रोजनबर्ग दम्पती का दल था। इन्होंने इंग्लैंड, अमरीका तथा कनाडा की प्रयोगशालाओं से आणविक रहस्य प्राप्त कर रूसी दूतावासों में अधिकारियो के वेश मे जासूसी में व्यस्त रूसी जासूसों को प्रेषित किये थे।

इग्लैड मे तारवैल प्रयोगशाला, अमरीका म ओकरिज प्रयोगशाला, अर्गोन प्रयोगशाला, हैनफोर्ड आणविक सयंत्र तथा लौस अलामोस अनुसधानशाला (जहां अणु-बम को अंतिम रूप दिया गया था) और कनाडा में चाकरिवर आणविक संयंत्र में व्याप्त अत्यंत गोपनीयता की लौह दीवारों को तोड़कर रूसी एजेंटों ने वहां से आणविक रहस्यों की चोरी की थी।

फुश तथा ग्रीनग्लास तो उस प्रयोगशाला में भी कार्य कर रहे थे, जहां रॉबर्ट ओपेनहाइमर की अध्यक्षता में अणु-बम का निर्माण हो रहा था। वहां उपनिदेशक के रूप में फैर्मी ओपेनहाइमर की सहायता कर रहे थे। एलन नन-मे चाकरिवर में अनुसंधान-कार्य में व्यस्त था। फुश ने अणु-बम का रेखा-चित्र और सैकड़ों पृष्ठों में लिखित महत्त्वपूर्ण आणविक विवरण रूसियों को रोजनबर्ग गिरोह के माध्यम से प्रेषित किये थे। नन-मे ने शुद्ध विखंडनीय पदार्थ, यूरेनियम-२३५ की कुछ मात्रा भी दी थी। रूसियों के निदेशानुसार प्रथम अणु-बम और हिरोशिमा तथा नागासाकी पर गिराये गये यूरेनियम और प्लूटोनियम अणु-बमों का पूरा विवरण उपलब्ध किया गया था। फुश ने प्रथम अणु-बम-विस्फोट के प्रत्यक्ष दर्शन किये थे।

मैनहट्टन योजना के निर्माण के समय अमरीकी गुप्तचर विभाग, एफ. बी. आई. ने आणविक योजनाओं के अंतर्गत नियुक्तियों के हेतु २,६९,३०३ प्रत्याशियों के अंगूठों के निशानों के सम्बंध में विशद जांच-पडताल की थी। किंतु, रूसी जासूसों और एजेंटों ने सारी सुरक्षा-व्यवस्था और गोपनीयता को छिन्न-भिन्न कर दिया। ●

नौकरशाही के शैतानी पंजे

● डॉ. कैलाश वाजपे

नौकरशाही के शतानी पंजे में फंसे आदमी की स्थिति को देखकर यह सोचने को मन करता है कि इसकी शुरुआत क्यों और कैसे हुई। जुलाई, १७६४ में फ्रांसीसी दार्शनिक बैरों द ग्रिम ने अपने एक पत्र में यह संकेत दिया था कि 'हम नियम-विनियमों से आक्रांत होते जा रहे हैं। ग्रिम के आशय को समझते हुए एक अन्य चिंतक एम द गर्ने ने शिकायत की कि 'यहां (फ्रांस में) दफ्तर, क्लर्क, सचिव और निदेशकों की नियुक्ति इसलिए नहीं

मैक्स वेबर
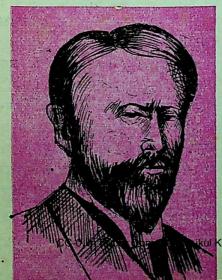
की जाती कि वे जनहित की रक्षा क वरन जनहित की दुहाई इसलिए दी ज है कि इन प्रतिष्ठानों की रक्षा हो सके गुर्ने से भी पहले इतालवी चिंतक मैक वेली ने राजकुमारों को यह सलाह दी थी वे सरकारी सचिव और नौकरों के ईमान बरकरार रखने के लिए समय-समय उन्हें पुरस्कृत करते रहें। मगर इन उदाहरणों से भी पहले जिस नौकरशाही हम चर्चा कर रहे हैं उसके बीज १६५ पूर्व की शासन-व्यवस्था में चीन में मौजूद

प्रश्न यह है कि 'ब्यूरोक्रेसी' का चलन जैसा कि उसे आज हम करते हैं—कब हुआ ? अठारहवीं शती भाषा में 'ब्रो' (जिसका अर्थ लि की मेज भी होता है) को कक्ष, सभा या दफ्तर के पर्याय के रूप में ग्रहण कि जाता था। जिसे 'डेमोक्रेट', 'अरिस्टो जैसे शब्दों के समानांतर संज्ञारूप देने पीछे ग्रीक भाषा का हाथ है। ग्रीक भा में 'क्रेट' शब्द 'नियम' के पर्याय के में भी प्रयुक्त होता है। ग्रीक शब्दा का प्रभाव तमाम यूरोपीय भाषाओं

होने के कारण अंगरेजी में शब्द बना 'ब्यूरोक्रेसी', फ्रांसीसी में 'ब्यूराक्रेती', जरमन में 'ब्यूरोक्राटी' और इतालवी में 'ब्यूरोक्रेसिया'।

नौकरशाही या दफ्तरशाही का मजाक उड़ाने वालों में सबसे पहला नाम है बालजक का। अठारह सौ छत्तीस में प्रकाशित बालजक के उपन्यास 'ल इमप्लाइज' का अधिकांश सरकारी कर्मचारियों के धूर्तता-पूर्ण लटकों से भरा है।

अंगरेजी में इस शब्द का आगमन गोरे की कृति 'जरमनी ऐंड द रेवल्यूशन' (१८१९) के अनुवाद के साथ हुआ।

"दफ्तरशाही—महाद्वीपीय (कांटीनेंटल) सिरदर्द है जो हमारे यहां कभी न पनप सकेगी; क्योंकि हमारे यहां प्रजातंत्र का स्वर प्रखर है।" ये शब्द कॉर्लायल के हैं जो उसने १८५० में अपने देश इंग्लैंड के पक्ष में कहे थे।

हालांकि यह कार्लायल की सदाशयता मात्र थी क्योंकि स्टुअर्ट मिल-जैसे दार्शनिक तब तक यह अच्छी तरह जान चुके थे कि नौकरशाही वह कैंसर है जिसका इलाज सिर्फ समर्पण है।

मिल जिस तरह की सरकार की कल्पना कर रहा था, कहते हैं कुछ-कुछ उसी तरह की शासन-व्यवस्था कालांतर में रूस में जन्म ले सकी, क्योंकि रूस में नौकरशाही पार्टी-सदस्यों के इशारे पर काम करती है।

मिल के विचारों से अलग हैं जरमन चिंतक मैक्स वेबर के विचार—"बिना नियमों के कोई संस्था चल नहीं सकती। नौकरशाही वह व्यवस्थित समूह है जो स्वयं भी उन नियमों का पालन करता है जिनके अनुसार वह समाज को चलाता है।"

आगे वेबर नौकरशाही को दो वर्गों में विभक्त करता हुआ एक को तर्कसंगत और दूसरी को पितृदायी या विरासती कहता है। दोनों में वह तर्कसंगत नौकरशाही को जिसमें लोग ठेके पर काम करते हैं—ज्यादा अच्छा समझता है। ध्यान रहे, मार्क्स का कहना था, "उपज के माध्यमों पर श्रमिक का अधिकार न होना बुराई की जड़ है" जब कि वेबर का नौकरशाह भी उपजाने का काम करता है। फर्क यह है कि नौकरशाह, खेती कागज पर करता है और उसे इसके साथ-साथ अधिकार भी प्राप्त हैं। इस वेबर का नौकरशाह मार्क्स के श्रमिक के ठीक विपरीत

मैकियावेली
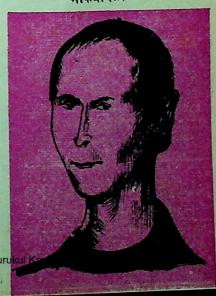
आया। इसीलिए वेबर ठेके पर काम करने वालों की नौकरशाही को अधिक वैज्ञानिक समझता था।

वेबर का कहना था, नौकरशाही से छुटकारा लगभग असम्भव है, इसीलिए वह कहता था, "नौकरशाही का ढांचा ठेके वाला होना चाहिए।" 'हायर ऐंड फायर' नौकरशाही का एक उदाहरण है अमरीका, जहां कूते गये परिणाम न दिखाने का अर्थ है नौकरी से हाथ धोना। इसके विपरीत पेंशन और सुरक्षा-नियमों से आश्वस्त पितृदायी नौकरशाही का उदाहरण है हमारा देश, जहां किसी भी काम का कोई भी परिणाम नहीं निकलता।

ऊपर हम मार्क्स का जिक्र कर चुके हैं। नौकरशाही के दुष्परिणामों से अवगत होते हुए भी उसकी बुनियादी बुराइयों पर मार्क्स ने विधिवत विचार नहीं किया। असल में, मार्क्स शासन-व्यवस्था चलाने वालों (नौकरशाहों) को नियुक्तिपत्र

जॉन स्टुअर्ट मिल

देने के बजाय बहतर समझता था
पिट्ठुओं का भी निर्वाचन हो
अधिकारी वर्ग ज्यादा जिम्मेदारी
काम कर सके।

मार्क्स ने अपने चिंतन में जो
छोड़ी उसे आगे चलकर पाटने की
की लेनिन ने। एक ओर लेनिन का
था कि पुराना शासनतंत्र ध्वस्त
अनिवार्य है। दूसरी ओर वह क
कि केंद्रीय सत्ता मजबूत हुए बि
हारा शासन-प्रणाली चल ही नहीं
मजबूत केंद्रीय सत्ता का मतलब
दूसरी तरह की नौकरशाही का
(लेनिन यह भी नहीं चाहता था)
ट्राट्स्की रूढ़ मार्क्सवादी चिंतन के
नौकरशाही को अलग से कोई वर्ग
के लिए तैयार ही नहीं था—
वह मुद्दा था जिसके कारण १९
लेनिन और ट्राट्स्की में मतभेद

रूस से बाहर इटली में
ने नौकरशाही को अपने सिद्धांतों
सेवाहिका के रूप में ग्रहण किया।
में दिये गये मुसोलिनी के एक
के अनुसार, "इटली को हर तरह के
से सिर्फ नौकरशाही ने बचाया।"

नात्सीवाद के प्रणेता हिटलर
भी नौकरशाही पर जरूरत से
भरोसा था। वह उसे भीतरी
संज्ञा देता था।

अंगरेजों के समय से नौकरशाही
जो ढांचा इस देश में तैयार किया

था उसका सबसे ज्यादा महत्त्वपूर्ण अंग था भारतीय लोक-सेवा-कार्यक्रम, यानी आई. सी. एस. जिसकी परीक्षा ब्रिटेन में होती थी और जिसमें उत्तीर्ण होने वाले अंगरेज के सबसे ज्यादा विश्वासपात्र भारतीय तालुक्केदार, जमींदार और 'राय' का खिताब पानेवालों के बेटे, भतीजे होते थे। एक तरह से, भारत में कार्यरत, तब की नौकरशाही का काम लगभग वही था जैसा हिटलर के समय में जरमन लोकसेवा के सदस्यों का—बल्कि उससे भी ज्यादा गर्हित, क्योंकि तब का आई. सी. एस. अपने देश के लोगों को, अंगरेजों द्वारा किये गये सांस्कृतीकरण के पश्चात अधिक हेय दृष्टि से देखता था। वह एकसाथ परास्त-भाव और स्फीत-अहम् का शिकार था। आज हम अपने देश के शेष जिन आई. सी. एस. अधिकारियों पर गर्व करते हुए उन पर प्रशस्तियां लिखते हैं ये असल में हमारे देश के वे अंतिम घटिया लोग हैं जिन्हें आजादी की लड़ाई के आखिरी वर्षों (सन बयालीस से छियालीस के बीच) में भी अंगरेजों द्वारा अपना सांस्कृतीकरण भाया। स्वतंत्रता मिलने के बाद क्योंकि राजनीति के क्षेत्र में अधिकांशतः ऐसे ही लोग थे जिनके आसपास अंगरेजियत का प्रभामंडल था, इसलिए यहां नौकरशाही का ढांचा बिना किसी रद्दोबदल के उसी तरह चलता रहा। अंगरेजों ने जो बीज यहां बोये थे उसका देशी फल आजादी के बाद आई. ए. एस. बना जो अपनी परम्परा और यूथ-स्मृति के कारण वफादार तब भी राजा के ही प्रति रहा—पहले अंगरेज राजा था, अब सत्तारूढ़ राजनीतिक दल।
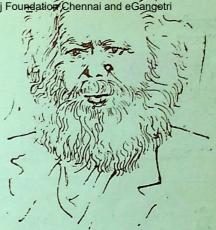
कार्ल मार्क्स

नौकरशाही, जिसके अस्तित्त्व की पहली शर्त जनसेवा या लोकसेवा है, दुर्भाग्य से इस देश में न पहले थी, न अब है। परिणाम यह है कि व्यवस्था चलाने के लिए नियम हैं, मगर सचिव या सूचना-अधिकारी काम वही करते हैं जिसमें विभागीय मंत्री खुश हो और इस तरह मंत्री की मरजी का एक काम कर डालने के बाद बाकी काम या तो मनमानी करते हैं या एकदम नहीं करते।

कम-से-कम शब्दों में कहा जाए तो कहा जा सकता है कि भारतीय नौकरशाही प्रजातंत्र के ठीक विपरीत कार्य करती है। उसकी कार्यपद्धति से तानाशाही का भ्रम होता है। ●

• रजनी पनिकर

मैं अभी तक सो नहीं पायी हूं। नींद नहीं आ रही, ऐसी बात नहीं है; क्योंकि मैं वैसे ही दो बजे सोने की आदी हो गयी हूं। कभी तीन भी बज जाते हैं और कभी-कभी सुबह तक जागती रहती हूं। लगता है कि सोना व्यर्थ है। कभी बहुत थक जाने पर दो मिनट के लिए आंखें झपक लेती हूं, उतने में ही नींद पूरी हो जाती है।

छोटे बच्चों की तरह मुझे भी ममी की पदचाप की प्रतीक्षा रहती है। वे आ जाएं तो मैं सोती हूं। जब से उन्हें ब्रिज खेलने की लत लगी है, मैं बहुत सतर्क हो गयी हूं। मुझे भय है कि ब्रिज में कभी ममी अपने को भी दांव पर न लगा दें!

टींऽ...टींऽ... ममी की गाड़ी आ गयी! गैरेज के फाटक बंद होने की आवाज... ताला बंद.... ऊंची पतली एड़ी की टिक टिक... लाल बजरी बजती रही। ममी ने लिफ्ट का दरवाजा खोला। घर्र...घर्र सपाट। और लिफ्ट बंद हो गयी।

अब ममी ने कूलर चला दिया है। केवल कूलर की आवाज है। ममी के [illegible] में ही अच्छा कार्पेट है। वह नाना [illegible] है। ड्राइंगरूम में कार्पेट नहीं। वहां [illegible] पर डैडी रात को सोते हैं।

घर डैडी का है, परंतु उनका [illegible] कमरा नहीं। ड्राइंगरूम में ही एक [illegible] में भोजन करने का स्थान बना है। [illegible] में पुस्तकों की दो अलमारियां हैं। [illegible] प्रतीकात्मक कलाकृतियां हैं, जिनका [illegible] ममी की भी समझ में नहीं आता [illegible] कलाकृतियां हैं, इसलिए लोग देखते [illegible] और अपनी समझ पर अफसोस [illegible] रह जाते हैं। एक चित्र में दो कं[illegible] लगते हैं, जो क्यूबिक आर्ट में ब[illegible] ममी से मैंने पूछा था कि उसका अर्थ [illegible] है तो बोलीं कि बिंदु तुम नहीं सम[illegible] जब बड़ी हो जाओगी तो स्वयं [illegible] जाओगी। उस समय मैं हायर [illegible] में थी। अब एम. ए. में पढ़ती हूं और [illegible] वर्ष की हूं। अब भी उसका अर्थ [illegible] समझती।

ममी पहले मुझे बेबी पुकारती [illegible]

फिर बिंदु कहने लगीं, अब बेबी बिंदु डार्लिंग पुकारती हैं। जाहिर है नामों के इस इजाफे से हम लोगों में फासला अधिक हो गया है। जब मैं बेबी थी तो ममी घर पर रहती थीं। ड्राइंगरूम में इतना सामान नहीं था। जमीन पर कार्पेट भी नहीं था। ममी कुछ काढ़ती रहतीं या सलाइयों पर स्वेटर बुनती रहती थीं। कभी-कभी रेडियो चलता रहता। डैडी ऑफिस से आते तो चाय बनती। मैं स्कूल से आकर नाश्ता करने पर भी एक बार डैडी के साथ और नाश्ता करती। तब ममी नहीं टोकती थीं कि मोटी हो जाओगी, पर अब ...

★

एक दिन नाना आये। ममी से बोले—"अनिता बेबी, तुम्हारी हालत अच्छी नहीं। राकेश अच्छी तनख्वाह लेता है। घर में कार्पेट नहीं, फर्नीचर नहीं, क्रॉकरी नहीं, अच्छा नौकर नहीं ! तुमने कभी बतलाया नहीं कि इतनी तकलीफें हैं!"

ममी बोली थीं, "नहीं, तकलीफ किस बात की ! फिर आपने भी तो बारह-तेरह वर्ष सुध नहीं ली!"

उसके बाद नाना ने हमारे यहां तीन अलमारियां, एक कार्पेट और मुन्नालाल रसोइया भेजा। ममी के नाम बहुत-सा रुपया बैंक में जमा करवा दिया। शायद पांच हजार मेरे नाम भी।

तब से हमारा जीवन बदल गया। ममी ने सबसे पहले अपने लिए नयी-नयी साड़ियां खरीदीं। मेरे लिए स्कर्ट और नये फ्रॉक आये। डैडी के लिए भी मां कुछ मंगवाना चाहती थीं, पर उन्होंने इनकार कर दिया। मुझे आज भी याद है। डैडी बोले थे, "मुझे दूसरों का रुपया नहीं चाहिए। जितना भगवान ने दिया है उसमें ही गुजारा कर लूंगा।"

मैं देख रही थी, ममी अजीब अतृप्ति से भर उठी थीं।

मुझे स्कूल से सीधा नृत्य सीखने जाना पड़ता। सप्ताह में दो दिन मैं बॉल-रूम डांस सीखती और तीन दिन कत्थक।

"आलू न खाओ, मोटी हो जाओगी !" ममी टोकती रहतीं।

सुबह उठकर नीबू गरम पानी में मिलता। मुझे कड़वा लगता, परंतु चुपचाप पी लेती। अब ममी और मुझमें दरार आ गयी थी। ममी इधर-उधर होतीं तो डैडी कहते—बिंदु, उतना ही परिश्रम करो जितना तुमसे हो सकता है। तुम्हें एक्ट्रेस नहीं बनाना।—

हिंदी की लोकप्रिय कहानी-लेखिका। 'मोम के मोती' तथा 'महानगर की मीता' उपन्यास विशेष रूप से चर्चित रहे हैं। आजकल आकाशवाणी, नयी दिल्ली में हैं। प्रस्तुत कहानी के माध्यम से उन्होंने समाज के खोखलेपन का बड़ा सजीव चित्र उपस्थित किया है

मैं हायर सेकंडरी में थी कि एक दिन नाना आये—जैसे हमारे लिए एक नयी दुनिया का पैगाम लेकर आये हों। उनके साथ दो-तीन जोड़े थे। अंकल पुरी और आंटी पुरी, वोहरा साहब विधुर थे, पायल बाई, आधी गुजराती और आधी ऐंग्लो—पिता भारतीय और मां अंगरेज। पायल बाई विवाहिता हैं या परित्यक्ता, कहना मुश्किल है। उन्होंने मां को गले लगा लिया। बस, फिर क्या था, रोज ताश-पत्तियां होने लगीं। हंसी-मजाक होता।

"अरे, तुम्हारे मियां हमसे क्यों खिंचे रहते हैं ?"

"तुम खतरनाक हो भई, कहीं फंस गये तो ?"

पायल बाई के मुंह पर वैसे लिखा था—विलास हमारा अधिकार है।

वे हंस पड़ीं, उनकी आंखें चमकने लगीं।

"मैं तुमसे खतरनाक तो नहीं ! वोहरा साहब, जैदी साहब, घोष बाबू और गुप्ता साहब सबका एक ही बार में काम तमाम कर दिया है !"

"वाह, छोड़ो भी, बनो मत। तुम क्लब में बैठी हो तो ऐसे लगता है जैसे सब बत्तियां बुझ गयी हों।"

डैडी ऑफिस से आते तो भीतर वाले कमरे में चले जाते। जब से ममी की सहेलियां और मित्र भीतर वाले कमरे में भी जाने लगे, डैडी मेरे कमरे में आ जाते। वहां आकर वे अपने कपड़े बदलते और इतमीनान से चाय पीते। उन्हें शोर-गुल पसंद नहीं। दिन भर के काम के बाद वे शांति चाहते।

पायल बाई नित्य नये लोगों को हमारे यहां लाती रहीं। डैडी का रवैया ऐसा था, जो हमारे यहां एक बार आ जाता, यदि वह डैडी का व्यवहार देखता तो दुबारा बार आने का नाम न लेता। पायल आंटी को इस सब की परवाह नहीं थी। वे आतीं और खूब धूम-धड़ाके से आतीं कभी किसी नयी झीनी साड़ी में, कभी किसी और ड्रेस में।

"अरे, अन्नु (अनिता)! इनसे मिलो, आजकल शहर में इन्हीं के चर्चे हैं! ये हैं वीरू उर्फ वीरेश्वर साहब। बांसुरी बड़ी अच्छी बजाते हैं। राधा के जमाने में यही कृष्ण रहे होंगे। चल न तू भी, आज कला-मंडल में इनका बांसुरी-वादन है। मैंने इनसे कहा था कि तुम्हारी बांसुरी की सराहना कौन करेगा, जब तक तुम्हारी राधा तुम्हें नहीं मिलती ? अन्नो, मैं सोचती हूं तुम्हारे जूड़े से, माथे पर बिंदी होने से तुम अच्छी राधा बन सकोगी !"

मुझ से रहा न गया। कह ही दिया, "आंटी, आप तो कृष्ण भगवान के लिए ऐसे हलके-से रिमार्क कर रही हैं !"

पायल बाई जोर-जोर से हंसने लगीं, 'बेबी डार्लिंग, तुम बहुत पिछड़ी हुई हो। कृष्ण के लिए मैंने यही कहा है कि वे बहुत बड़े रसिया थे। ये वीरू भी कम नहीं।

इन्हें एक राधा की आवश्यकता है। तुम्हारी ममी अच्छी राधा बन सकेंगी। और आज-कल के लड़के तो 'हरे कृष्ण, हरे राम' गाते फिरते हैं, क्या तुम नहीं गातीं ?"

मैंने उत्तर देना ठीक नहीं समझा। राधा-कृष्ण के विषय में स्कूल में मैंने खूब पढ़ा था। 'वी.रू' को देख केवल यह लगा कि वह कृष्ण की तरह सांवला है और कोई भी समानता नहीं। मेरी ममी राधा ? चलो, यही सही, क्योंकि वे सीता नहीं बन सकतीं।

*

ममी उस दिन से कला-मंडल में भी दिलचस्पी लेने लगीं। जब लोग आते, पाश्चात्य संगीत के रिकार्ड बजते। ममी शास्त्रीय-संगीत की व्याख्यात्मक गोष्ठियों में जातीं। वह सभी कुछ करतीं, जो कला के दावेदार करते हैं।

डैडी की बात बाद में कहूंगी, क्योंकि ममी के जीवन में जो तूफान आया उससे वे भौतिक रूप से अछूते रहे, परंतु मानसिक रूप से ? कैसे कहूं क्या-क्या हुआ !

पहले मेरी सुनिए ! कभी मेरे केश कट जाते, कभी लम्बे हो जाते। ममी ब्यूटी और फैशन-शो में प्रायः जाती रहतीं। मुझे भी ले जाने का प्रयत्न करतीं। मैं मना करूं तो नाराज हो जातीं। शो में कटे केशों वाली लड़की पसंद आए तो मेरे केश दूसरे दिन कॉलेज भेजने से पहले ही कटवा दिये जाते। लम्बे केशों वाली पसंद आ जाए तो महीने तक मैं केश छूती नहीं। ममी रात के एक बजे भी आकर मेरे केशों पर ब्रश करतीं। कॉलेज के साथी समझते कि शायद मैं किसी हिप्पी के जाल में फंसी हूं।

डैडी मेरी परिवर्तित वेशभूषा को देखते और मुसकरा भर देते।

ऐसे ही वातावरण में मैं बड़ी होने लगी। घर घर नहीं, होटल बन गया था। कई तरह के लोग आते, भोजन करते, चाय पीते, नहाते, धोते। कभी-कभी ग्रामो-

फोन रिकार्ड बजते, खूब नाच-गाना होता और मुझे भी शमिल होना पड़ता।
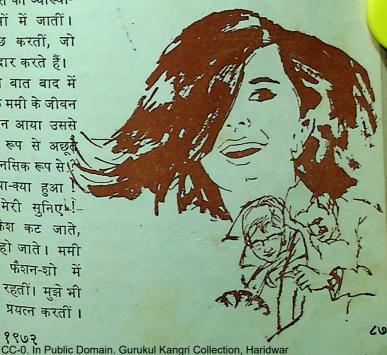
हमारे यहां जो लोग आते हैं, प्रायः उन सभी के पीछे पूरा इतिहास न हो तो दो-चार कहानियां अवश्य जुड़ी रहती हैं। किसी ने पत्नी छोड़ दी है। कोई पति-पत्नी अलग रहते हैं। किसी महिला ने तीसरा

विवाह किया है। प्रायः सभी टूटे परिवारों वाले हैं।

*

डैडी सुबह उठते हैं। अपना अखबार लेकर बैठते हैं। मुन्नालाल उनको चाय बना कर दे देता है। फिर वे साढ़े सात बजे पुनः चाय पीते हैं और लगभग नौ बजे नाश्ता और भोजन एकसाथ करके ऑफिस जाते हैं।

ममी और डैडी के स्वभाव में कि[illegible] अंतर है! इन विरोधाभासों में मुझे [illegible] कई आदतें पड़ गयी हैं। मैं अपनी [illegible] की तरह अफीम तो नहीं खाती, परंतु [illegible] मन बहुत उदास हो तो ममी की [illegible] से थोड़ी-सी चुरा कर पी लेती हूं और [illegible] से छोटी इलायची खा लेती हूं।

आजकल अमित हमारे यहां अ[illegible] आने लगा है। मेरा हाथ पकड़कर कहता है "चलो, 'डैन' में चलें।"

"वहां कुछ नहीं होता, केवल अर्द्धनग्न लड़कियां कुछ हिप्पियों के साथ नाच [illegible] होती हैं। मेरा तो वहां दम घुटता है।"

"तुम बड़ी बोर हो। तुमसे तुम्हारी ममी ही अच्छी हैं, जो कई बार 'डैन' में मेरे साथ जा चुकी हैं। हम लोग 'हरे राम, हरे कृष्ण' कीर्तन में भी भाग ले चुके हैं। उन्होंने हुक्के की चुस्की भी ली है।"

मैं चौंक उठती हूं। ममी अमित के साथ 'डैन' गयी थीं? अमित मुझे बोर समझ कर शायद पुनः ममी की तलाश में निकल पड़ता है। मैं दुनिया के परिवर्तन पर मुसकरा देती हूं।

एक घोष महोदय हैं, जो शायद समा[illegible] चार-पत्रों में ही पढ़-पढ़ कर अपने को 'नक्सलपंथी' समझते हैं। वे किसी बड़ी दुकान को लूटने की योजना लेकर मुझसे मिलने आते हैं। कॉफी के तीन प्यालों तक उनकी योजना चलती है। तीन प्याले पी लेने के बाद वे इस धरती पर उतर

आते हैं, "बिंदु, तुम अच्छी लड़की हो। हम नक्सलाइट न होता तो तुम से शादी बनाता।"

सोचती हूं, चलो छुटकारा हुआ!

दिलीप, पुरी अंकल का लड़का है। ममी के स्वप्नों वाला दामाद। बढ़िया कपड़े पहनता है। बिजनेस-मैनजमेंट का कोर्स कर रहा है। वह हम लोगों की तरह 'हरे राम, हरे कृष्ण' टाइप कपड़े नहीं पहनता। मुझे लगता है उसका सधा-सधाया जीवन-दर्शन मुझे रास नहीं आएगा।

"देखो, बिंदु डार्लिंग, मैं अपने पापा से प्रभावित हूं। काम के समय काम, आराम के समय आराम। हंसो-बोलो सब से, परंतु अपने खूंटे से हटो नहीं।"

वह ममी की तारीफ करता है, "हां, तुम्हारी ममी बड़ी माडर्न हैं।"

यह बात मुझे पसंद नहीं आती। मैं कहना चाहती हूं—ममी बड़ी अतृप्त हैं। अतृप्तता ही आधुनिकता है तो ठीक है।

"पापा कहते हैं कि अगर तुम भी अपनी ममी-जैसी होस्टेस बनोगी तो वे मेरा विवाह तुम्हारे साथ करेंगे, ठीक है न!"

मेरा हाथ उसे चांटा रसीद करने के लिए उतावला हो जाता है, परंतु रोक लेती हूं। यदि इसे मैं चांटा रसीद कर दूं तो इसमें और हममें कोई अंतर नहीं रह जाएगा।

उधर ममी के मित्र भी मेरे प्रति अपना कर्तव्य निभाना जरूरी समझते हैं। चलते-चलते मेरे केश खींच लेना, गाल सहला देना, पीठ पर या जरा नीचे एक धौल जमा देना।

वोहरा साहब को तो मेरी शान में कसीदा काढ़ते ममी ने एक दिन देख लिया।

वे ड्राइंगरूम में बैठे थे। मैं आयी तो वे उचक कर खड़े हो गये, "हलो डार्लिंग!"

"हल्लो अंकल!"

"यह अंकल-अंकल क्या लगा रखी है। तुम वोहरा कह सकती हो। यों 'प्रकाश' कहो तो और भी खुशी होगी।" थोड़ी देर के लिए वे रुके, फिर बोले, "तुम जानती हो, मुझे तुम बहुत अच्छी लगती हो! मैं तो तुम्हें देखने अधिक आता हूं।"

"मैंने सोचा था कि आप ममी के मित्र हैं।"

वे उठकर मेरे पास कोच पर आ गये, "बिंदु डार्लिंग, तुम बड़ी भोली हो। ऐसी मां की ऐसी बेटी!"

"मैं मतलब नहीं समझ रहीऽ..."

"अभी समझने लगोगी।"

और उन्होंने झट से पकड़कर मुझ चूम लिया। ओठों पर पहली बार किसी ने ऐसा किया था। कोई प्रतिक्रिया नहीं हुई। साथ ही एक तमाचा उन्हें किसी ने मारा। मारने वाली ममी थीं।

"कमीने, इस घर में मैंने तुम्हें इसलिए नहीं आने दिया कि तुम मेरी बच्ची को खराब करो!"

वोहरा साहब भी खुलकर खेलने-वालों में थे, बोले, "बच्ची का इतना खयाल है तो अपना आचरण बदलो। शरीफ औरतों

की तरह रहो।" कहकर वे चले गये।

ममी मुझसे कुछ बोलीं नहीं, वे अपने कमरे में बंद हो गयीं। कई दिन बाहर नहीं निकलीं, मानो उन्होंने सचमुच अपनी चाल-ढाल बदल ली हो। तभी पायल आंटी आ गयीं। दोनों में जाने क्या-क्या बातें होने लगीं। जब मैं कमरे में आयी तो पायल आंटी कह रही थीं, "मेरी उम्र के लोग रिश्ते निभाते नहीं चले जाते। यदि मैं रिश्ते निभाने लगूं तो सोचो जिंदगी कितनी जटिल हो जाएगी! जिन पुरुषों को मैं जानती थी, कुछ ने मुझे छोड़ दिया है, कुछ को मैंने छोड़ दिया है। जब कोई मेरे पास होता है तो मैं उसकी उपेक्षा नहीं करती। किसी को जी का जंजाल नहीं बनाती। मैं तो जानती हूं कि जीवन एक ऐसा सड़क है जहां ट्रैफिक एक ओर से ही होता है।"

"तुम कितनी समझदार हो डार्लिंग! यहां तो आदर्श से बंधे रहते हैं।"

पायल आंटी सचमुच दार्शनिक की भांति बोलीं, "अन्नो, स्त्रियों का जन्म इसलिए हुआ है कि पुरुषों को बतला सकें, देखो दुनिया कितनी सुंदर है! इसे यों ही बिता देना तो पाप है।"

ममी उस दिन आंटी के साथ चली गयीं। मुझे वोहरा अंकल के स्पर्श और अपने डैडी में विशेष भेद नहीं लगा।

जबसे मैं एम. ए. में आयी हूं, बिना क्रीम लगाये ही मेरी त्वचा बड़ी मुलायम हो गयी है। कुछ महीनों से मैंने देखा है, लोगों की आंखें, विशेषकर पुरुषों की, मुझे कुछ ढूंढ़ती-सी लगती हैं।

"मैं देख रहा हूं तुम कैसी लड़की हो दिलीप का विवाह तुमसे करूंगा।" एक दिन पुरी अंकल ने मेरा हाथ पकड़ लिया। वे मुझे इस तरह देखने लगे जैसे दिलीप का विवाह नहीं कर रहे, उसके लिए सूट सिलवा रहे हों।

मैं छिटक कर अलग हो गयी। ममी देख रही थीं। उनके ओंठ सट गये थे, उनका चेहरा लाल हो रहा था। वे शायद पुरी अंकल को कुछ कहने ही वाली थीं कि मैं उठ बैठी। उस दिन से पुरी अंकल का आना-जाना हमारे यहां कम हो गया

डैडी ने कभी नहीं पूछा कि किस का आना अधिक हुआ, किसका कम।

अब चार बजने लगे हैं। ममी तो नींद की गोली लेकर कबसे सो गयी होंगी। मैं सोच रही हूं कि मैं भी गोली क्यों न खा लूं। गोली खाऊंगी तो नींद ठीक से आएगी। खिड़की में देख रही हूं, अंधेरे-उजाले का सम्मिश्रण! ठीक वैसा जैसा मेरे मन में है। आज मुझे नींद नहीं आ रही। दिलीप, घोष और अमित बार-बार मेरी आंखों में उभर रहे हैं। इनमें कोई भी नहीं सोच रहा कि उसे बड़े होकर क्या करना है। दिलीप को थोड़ा-सा विश्वास है कि वह अपने पापा के पद-चिह्नों पर चलेगा। फिर भी . . सब ओर धुंध है अनिश्चय की धुंध। उसी में से हम अपना रास्ता बना रहे हैं।

गृहिणी-जीवन की समस्याएं

अकेली जिंदगी

कुछ समय पहले जब मुझे कालेज में व्याख्याता की नौकरी मिली तो घर भर में प्रसन्नता की लहर दौड़ गयी। अब हम लोग जीवन के एक नये मोड़ पर खड़े थे। मुझे अपनी सजी-संवरी गृहस्थी छोड़कर, दूसरे शहर में, अकेले ही नयी-गृहस्थी की व्यवस्था करनी थी।

किसी तरह मैंने अपने को नयी परिस्थिति के अनुरूप तैयार किया! मगर मेरी चारवर्षीया बच्ची इस बदलाव से समझौता न कर सकी। वह अब भी बार-बार अपनी बाल-सुलभ उत्सुकता से पूछती है कि हम पापा के साथ क्यों नहीं रहते? वह महसूस करती है कि अब वे मजे के दिन नहीं हैं जब पापा के साथ तरह-तरह के खेल खेलती थी, वह नाराज रहती है कि मैं भी उसे छोड़ कर कालेज क्यों चली जाती हूं।

अब तो मेरा गृहस्थ-जीवन ही अनोखा है! कालेज की ड्यूटी, नोन-तेल का झंझट और रसोईघर के कार्य तो सम्भल जाते हैं, मगर ऐसी समस्याएं भी उभरती रहती जिन्हें सुलझाना जटिल हो जाता है।

सोचती हूं, समाज में मेरी न जाने कितनी 'अकेली गृहिणियां' होंगी वे शहरी-जीवन की विषमताओं का कैसे सामना करती होंगी?

—दुर्गेशनन्दिनी, मुजफ्फर

दूसरे की कमाई

कमरे में पांव रखते ही मुझे मह हुआ कि एक अजीब-सी घुटन भरी हुई है। मैंने खिड़की खोलते हु कहा, "इतनी देर से आप यहां लेटे हैं कमाल है! खिड़की खोलने की जरू आपको महसूस नहीं हुई?"

"अब कोई जरूरत महसूस नहीं होती," उनके स्वर में उदासी थी। एकदम घूमकर खड़ी हो गयी और न जा क्या-क्या सोचने लगी!

लखनऊ से प्रशांत (ननदोई) आ हुए हैं। बहस के दौरान मैं पूछ बैठी "अच्छा, यह बताइए कि अगर आ किसी दिन कुसुम (ननद) की कमाई

निर्भर होना पड़े तो ?" प्रशांत चमक उठे, "वह दिन मेरी जिंदगी में कभी नहीं आएगा और यदि आया तो उस स्थिति में मैं मर जाना बेहतर समझूंगा।" लेकिन तभी कुसुम के जवाब ने मुझे गर्व से भर दिया। वह बोल उठी, "अरे छोड़ो भाभी ! इन बातों में क्या रखा है ! जो जाग चुका है, वह अधिक समय तक सोये रहने का अभिनय नहीं कर सकता..." कुसुम के स्वर में गजब की दृढ़ता थी।

सुना है पति-पत्नी दोनों एक-दूसरे के पूरक होते हैं, पर देख रही हूं कि यहां तो स्त्री के जीवन का प्रथम लक्ष्य पत्नीत्व तथा अंतिम मातृत्व ही समझा जाता है। उसका अस्तित्व पुरुष के वैभव की प्रदर्शनी तथा मनोरंजन का साधन तक ही सीमित रहता है। क्या हमारा एक स्वतंत्र व्यक्तित्व नहीं बन सकता ?

—प्रेम तुलस्यान, इन्दौर

दो बच्चे : दस समस्याएं !

छोटा परिवार, सुखी परिवार के नारे के अनुसार, मेरे दो ही बच्चे हैं, दोनों लड़के हैं—एक अठारह का, दूसरा ग्यारह का। सोचा था, इतना अंतर रहेगा तो दोनों का लालन-पालन अच्छी तरह हो जाएगा, पर अब यही अंतर मेरे लिए समस्या बन गया है। अपनी-अपनी उम्र भूल कर, हर बात के लिए दोनों होड़ लगा कर बैठ जाते हैं। झगड़ा करते हैं तो मैं किसी एक का पक्ष नहीं ले पाती। जिसका पक्ष लो खुश, विपक्षी मुंह फुलाकर दूसरी ओर बैठ जाता है।

बच्चों के जेब-खर्च की भी एक और समस्या है। थोड़े पैसों से उनका गुजारा नहीं, अधिक देना मेरी शक्ति के बाहर है। उस समय जो तनाव की स्थिति पैदा होती है उसे सहन करना मेरी ताकत से बाहर हो जाता है।

—लीला रूपायन, इंदौर

यह स्तम्भ विवाहित महिलाओं के लिए है। वे अपनी समस्याएं रोचक ढंग से लिखकर भेज सकती हैं। साथ में अपना ताजा चित्र, डाक-टिकट लगा, तथा पता-लिखा लिफाफा भेजना आवश्यक है; अन्यथा रचना पर विचार करना सम्भव न हो पाएगा।

—सम्पादक

(१)

वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद

● बलदेव वंशी

हमारे देश में अखिल भारतीय स्त पर कुछ ऐसे प्रतिष्ठान काम कर रहे हैं जिनसे हमारे पाठक पर्याप्त लाभ उठा सकते हैं। इनके सम्बंध में आवश्यक जानकारी वैसे भी उपयो है। इसलिए इस अंक से हम ऐसे प्रतिष्ठानों के बारे में प्रामाणिक लेखों का प्रकाशन आरंभ कर रहे हैं।

हमारे देश में खाद्यान्न, चिकित्सा तथा वैज्ञानिक-औद्योगिक क्षेत्रों में अनुसंधान-कार्य को विस्तार और निश्चित क्रम देने वाली अनेक संस्थाएं हैं। ये संस्थाएं नये-नये प्रयोगों द्वारा हमारे जीवन से सम्बद्ध वस्तुओं में आये-दिन परिवर्तन-परिवर्द्धन करती रहती हैं। कभी देश में 'हरित-क्रांति' द्वारा खाद्यान्न की वृद्धि की जा रही है तो कभी चलने के लिए नयी सड़कें पक्की और चौड़ी हो रही हैं, और कभी नयी बीमारियों के लिए दवाइयों की खोज की जा रही है।

ऐसे अनेक कार्य हैं जिन्हें तर और महत्त्व देने के लिए ये सरका प्रतिष्ठान निरंतर कार्यरत हैं। इन स्वरूप और कार्यप्रणाली का परिचय प्रा करना स दृष्टि से भी आवश्यक हो जा है कि इन प्रतिष्ठानों में जहां हमा वैज्ञानिक, चिकित्सा-शास्त्री तथा वि विशेषज्ञ अपनी सेवाएं अर्पित कर रहे हैं वहां प्रशासनिक तथा अन्य कार्यों के लि हजारों लोग सम्बद्ध हैं। बेकार युवा लो इनका किस प्रकार लाभ उठा सकते हैं इस बात का पता लगाने के लिए

'वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद' के महानिदेशक डॉ. येलवती नायुडम्मा से उनके रफी मार्ग, नयी दिल्ली स्थित कार्यालय में मिला। मेरा पहला प्रश्न परिषद के उद्देश्य के सम्बंध में था, जिसका उत्तर देते हुए उन्होंने कहा—

देश के आर्थिक विकास के उद्देश्य से प्राकृतिक उपादानों के प्रभावशाली उपयोग के लिए अनुसंधान-कार्य चलाना हमारा मुख्य उद्देश्य है। साथ ही सामाजिक न्याय से युक्त औद्योगिक उन्नति प्राप्त करना; बड़े, लघु तथा गृह-उद्योगों के लिए उपयुक्त कार्य-विधि का निर्माण करना, नयी खोजों के लिए उत्सुकता जगाना और उपयुक्त अवसर एवं साधन प्रदान करना भी हमारे उद्देश्य हैं।

आपके अधीन कितने अनुसंधान-केंद्र एवं संस्थान हैं, और वहां किन विषयों पर अनुसंधान हो रहे हैं ?

तीस प्रयोगशालाएं एवं संस्थान हैं तथा बारह सहकारी अनुसंधान-संस्थाएं हैं; जिन्हें यह परिषद अनुदान देती है। ये सब देश के विभिन्न भागों में हैं। इनमें अलग-अलग अनुसंधान-कार्य चल रहे हैं, जैसे—लोहा, इस्पात एवं अलौह धातु, खनन, कोयला, सिरैमिक्स, इनेमिल, यंत्र, बैटरियां, चमड़ा, कागज, लुगदी, भवन, सड़क-संरचना, वैमानिकी, खाद्य तथा कृषि पर निर्भर उद्योग एवं इलेक्ट्रानिक्स, भौतिकी पर आधारित उद्योग-धंधे आदि।

इस सम्बंध में परिषद के जनसम्पर्क-विभाग से हमें यह भी ज्ञात हुआ कि कई संस्थान बाहरी सहयोग एवं अनुदान पर स्थापित हुए हैं, जैसे—पिलानी स्थित केंद्रीय इलेक्ट्रानिक्स इंजीनियरिंग अनुसंधान-संस्थान, जिसके लिए बिरला ब्रदर्स ने भी अनुदान दिया था। यहां टेलीविजन के डिजाइनिंग और मार्डलिंग पर कार्य होता है। देश में बन रहे जे. के. टेलीविजन तथा अन्य टेलीविजन इन्हीं के आधार पर तैयार किये गये हैं।

इन संस्थानों में नौकरी किस प्रकार प्राप्त की जा सकती है ? उसके लिए क्या कोई फार्म भरना आवश्यक है ?

ये प्रशिक्षण-केंद्र नहीं, अनुसंधान-केंद्र हैं। यहां कोई फार्म नहीं भरा जाता। सभी रिक्त पद—वेतन-मान तथा आवश्यक अर्हताओं सहित विज्ञापित किये

डॉ. येलवती नायुडम्मा
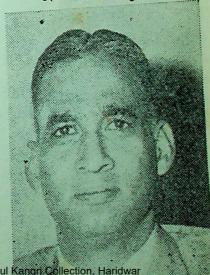
जाते हैं। नियुक्तियां चयन-समिति द्वारा की जाती हैं। हां, यदि कोई व्यक्ति चाहे तो वह सम्बंधित केंद्र में प्रार्थनापत्र दे कर अनुसंधान-कार्य ले सकता है। वह प्रयोगशाला में कार्य करता हुआ किसी भी विश्वविद्यालय से उपाधि ले सकता है क्योंकि हमारे बहुत-से वरिष्ठ वैज्ञानिक विश्वविद्यालयों में गाइड का कार्य भी करते हैं और अनुसंधान भी। हम विश्व-विद्यालयों के प्राध्यापकों को सम्बंधित

चमड़े की बनी कठपुतली : केंद्रीय चमड़ा अनुसंधान-संस्थान, मद्रास
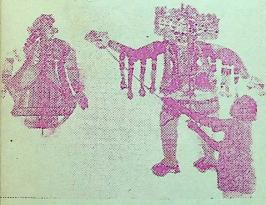
विषयों पर व्याख्यान देने के लिए आमंत्रित करते हैं और हमारे यहां के वैज्ञानिक वहां जाते रहते हैं। मैं स्वयं मद्रास के केंद्रीय चमड़ा अनुसंधान 'ए. सी. कालेज ऑफ टैकनालॉजी' से सम्बद्ध हूं। कभी-कभी संयुक्त रूप से भी अनुसंधान-कार्य चलाये जाते हैं। यदि विश्वविद्यालय का कोई प्राध्यापक या विद्यार्थी हमें योजना देता है तो हम उसे ले लेते हैं।

योजना खरीदने से आपका अभिप्राय है ?

उस योजना पर आने वाला व्यय हम अपने ऊपर ले लेते हैं और संधान करवाते हैं। पहले इस कार्य के एक समिति होती थी जो योजना स्वीकार या अस्वीकार करती थी। अब हम उसे विज्ञापित करते हैं और स्पर्धा के आधार पर कार्य करवाते हैं।

सभी सम्बद्ध प्रतिष्ठानों में विद्यार्थी-वैज्ञानिकों की इस समय कितनी संख्या है ?

कुल संख्या १६,००० है। १०,००० वैज्ञानिक तथा ६,००० प्रशासनिक कार्यों से जुड़े लोग हैं।

किस विषय की मांग अधिक है?

पहले इंजीनियरिंग और चिकि की ओर अधिक आकर्षण था किंतु उन क्षेत्रों में बेकारी के कारण निक्स की ओर अधिक झुकाव है।

आपके यहां अनुसंधान सहयोगी चयन का क्या आधार है ? क्या आपको कोई कठिनाई होती है?

अनुसंधान सहयोगी के चयन यदि वह प्रथम श्रेणी में एम. एस-सी तो कोई कठिनाई नहीं होती। यदि द्वि श्रेणी में हो तो उसे चयन-समिति निर्णय पर फेलोशिप दी जाती है। श्रेणी वाले को ४०० से ५०० रुपये

मास तथा द्वितीय श्रेणी वाले को ३०० रुपये प्रतिमास दिये जाते हैं।

अनुसंधान-कार्य की समाप्ति पर क्या आप नौकरी दिलाने का दायित्व लेते हैं ?

कोई गारंटी नहीं। यदि कोई स्थान रिक्त हो तो वह विज्ञापित किया जाता है, उपयुक्त व्यक्ति को चयन समिति ही चुनती है। अन्यथा कोई निश्चित नहीं कि कार्य मिले ही।

कम-से-कम और अधिक-से-अधिक वेतनमान क्या हैं ?

प्रशासनिक क्षेत्र में कम-से-कम वेतनमान सत्तर रुपये है जो कुल दो सौ रुपये के करीब पड़ता है, सबसे अधिक वेतन परिषद के सचिव का है कुल २,७५० रुपये। वैज्ञानिक क्षेत्र में प्रयोगशाला सहायक का वेतनमान डेढ़ सौ रुपये; कुल तीन सौ रुपये के लगभग है तथा महानिदेशक ३,५०० रुपये मासिक वेतन पाता है।

हर वर्ष कितने वैज्ञानिक देश के बाहर भेजे जाते हैं, कितनी अवधि के लिए और क्यों ?

प्रतिवर्ष लगभग एक सौ वैज्ञानिक विदेशों में भेजे जाते हैं। वरिष्ठ वैज्ञानिकों को दो या तीन सप्ताह के लिए और छोटे वैज्ञानिकों को लगभग एक वर्ष के लिए। बाहर भेजने का कार्य विभिन्न सरकारों के द्विपक्षीय कार्यक्रमों के अंतर्गत होता है। इसके लिए हमारे सम्बंध सत्रह देशों से हैं। उन देशों के वैज्ञानिक हमारे देश में आते हैं और हमारे वैज्ञानिक उन देशों में जाते हैं, किंतु संयुक्त राष्ट्र संघ के अधीन कोलम्बो योजना के अंतर्गत वैज्ञानिकों को बाहर भेजने का एक बहुद्देशीय कार्यक्रम भी है।

बाहर उन्हें नया और उपयुक्त वातावरण मिलता है। वहां वैज्ञानिक उपकरण और रसायन आसानी से मिल जाते हैं तथा अनुसंधान कार्य में काफी आसानी हो जाती है।

क्या हमारे देश में समान सुविधाएं नहीं हैं ? यदि नहीं तो उन्हें उपलब्ध क्यों नहीं किया जाता ?

वैलाडोना प्लास्तर वाले पौधे

अभी तो अपना देश इस आर्थिक स्थिति में भी नहीं है।

तब क्या आप उन्हें बाहर भेजकर उनमें अधिक निराशा उत्पन्न नहीं कर रहे ?

निराशा तो आती ही है, क्योंकि वे

विदेश की सभी सुविधाओं और सुविधाप्रद वस्तुओं के आदी हो जाते हैं। यहां आने पर वे सुविधाएं प्राप्त नहीं होतीं, यहां कम से कम आराम देने वाली वस्तुएं भी 'ऐशो-आराम' की श्रेणी में गिनी जाती हैं। विदेशों में अधिक निर्भीकता है—प्रश्न करने की आजादी भी है कि 'ऐसा क्यों है' और 'ऐसा ही क्यों है',

टेलीविजन: केंद्रीय इलेक्ट्रानिक इंजीनियरिंग अनुसंधान संस्थान, पिलानी, राजस्थान

जबकि अपने देश में इस बात का प्रश्न ही नहीं उठता। फिर विदेश से लौट कर अपने से छोटों के नीचे कार्य करना पड़ता है जो निराशा का कारण बनता है।

बाहर, समाज में यह आम धारणा है कि आपके यहां अध्यापक असंतुष्ट हैं, क्या यह ठीक है ?

यह मेरे यहां ही नहीं, सब कहीं है। देश में आज कौन संतुष्ट है? आज हर कोई अधिक से अधिक सुविधाएं चाहता है और हम उन्हें पूरा नहीं कर पा रहे हैं।

पिछले दिनों एक वैज्ञानिक ने आत्महत्या की, आपकी दृष्टि में उसके क्या कारण थे ? उन्हें दूर करने के लिए क्या कुछ उपाय किये जा रहे हैं ?

मैं कुछ विशेष कहना नहीं चाहता। अभी तक बहुत लोगों ने बहुत कुछ कहा है। सामान्यतः सब ओर निराशा है, निर्धनता है। वह तो धनी व्यक्ति था और हजार-बारह सौ वेतन पाने वाला अधिकारी था। यदि मैं उसके स्थान पर होता तो कभी आत्महत्या नहीं करता। उसे केवल पदोन्नति नहीं मिली। यही मुख्य कारण था। इसके लिए वह संघर्ष कर सकता था। उसके लिए सभी ओर रास्ते खुले थे। वह प्रधान-मंत्री के पास जा सकता था। फिर समाचार-पत्र हैं—और भी कई मार्ग हैं। मेरी सहानुभूति उसकी पत्नी के साथ है।

सो तो ठीक है, किंतु वह वैज्ञानिक अपने पीछे जो दस्तावेज छोड़ गया है उसके सम्बंध में आपका क्या कहना है?

मेरा प्रश्न सुनकर वे थोड़ी देर माथे पर हाथ रखकर चुप बैठे रहे, फिर बोले, "इसे रहने दो, वह व्यक्ति अब जा चुका है।" इतना कहने के बाद उनके चेहरे पर चिंता की रेखाएं उभर आयीं; सम्भवतः वे स पद पर नये हैं, इस कारण कुछ कहना उचित नहीं समझ रहे थे। कुछ भी हो, ऐसी आत्महत्याओं के पीछे के कारणों को अनदेखा-अनसुलझा नहीं छोड़ा जा सकता। अब समय आ गया है

कि प्रत्येक एसी अनियमितता के प्रति ठोस व्यावहारिक रुख अपनाया जाए, जिससे युवा पीढ़ी में तीव्रता से फैलती निराशा एवं अविश्वास को आशा और विश्वास में बदला जा सके। देश के धन पर चल रही इतनी बड़ी-बड़ी संस्थाएं—अभी तक ऐसे आंतरिक मामलों के प्रति, जो व्यवस्था और कर्मचारियों के जीवन से सीधे जुड़े हैं, उपेक्षा का रुख अपनाए हुए हैं, बहुत कुछ मूल्यवान के बलिदान देने पर ही वहां थोड़ी-सी हलचल होती है और फिर वही लम्बी चुप्पी। देखना है कि डॉ. नायुडम्मा अपने नेतृत्व और कुशल प्रशासन से किस हद तक इस परिषद से जुड़ी अनियमितताओं और विसंगतियों को दूर कर, अन्य सरकारी प्रतिष्ठानों के सम्मुख आदर्श प्रस्तुत करते हैं।

विस्तार की अन्य योजनाएं भी होंगी?—मेरा अंतिम प्रश्न था।

हां, यह तो एक निरंतर क्रम है। कुछ योजनाएं पूरी होकर समाप्त हो रही हैं और कुछ विस्तार पा रही हैं। वैसे हम निजी व्यवस्था के लिए नीतिनिर्माण कर रहे हैं। जैसे—

(क) पदोन्नति की रीति

(ख) संस्था के भीतर रहकर शिक्षण कार्य की व्यवस्था।
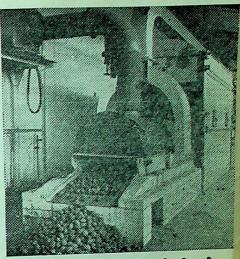
(ग) प्रत्येक प्रयोगशाला में श्रम-

कोयले के चूरे से गुटिकाएं बनाने की मशीन —केंद्रीय ईंधन अनुसंधान संस्थान, धनबाद

कल्याण अधिकारी की नियुक्ति।

(घ) अनुसंधान-निर्वहरण पर व्यवस्थापन के नये तरीके लागू करने का निर्णय आदि। क्योंकि यदि किसी फैक्ट्री में सौ कर्मचारी हों तो वहां एक श्रम-कल्याण अधिकारी होता है। हमारे यहां प्रत्येक प्रयोगशाला में ४०० से १,२०० तक कर्मचारी हैं। अब हमने उनकी शिकायतें सुनने और उन्हें निबटाने के लिए यह पग उठाया है। यह तो देश की आवश्यकता पर निर्भर है। इन सभी अपेक्षाओं को जल्दी से पूरा करना ही हमारा उद्देश्य है। ●

(अगले अंक में: भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद)

विज्ञान यदि एक समस्या सुलझाता है तो दस और खड़ी कर देता है।
—बर्नार्ड शा

मेवाड़ के महाराणा उदयसिंह के पुत्र कुमार शक्तावत बड़े साहसी और निर्भीक थे। एक बार महाराणा उदयसिंह ने एक नयी तलवार, धार की परीक्षा करने के लिए अपने नौकर को दी। नौकर ने कपड़े की एक बहुत मोटी तह बनायी और बार-बार उसे तलवार पर फेर कर धार की परीक्षा करने लगा।

• **कमला**

कुमार शक्तावत भी वहां उपस्थित थे। धार की परीक्षा करने का ढंग देखकर वे बोले, "अरे मूर्ख ! जिस तलवार से शत्रु का सिर काटा जाएगा उसकी धार की परीक्षा कपड़े पर नहीं होती !" इतना कहकर कुमार शक्तावत ने उसके हाथ से तलवार झटक ली और अपनी एक अंगुली पर उस तलवार से हल्का वार किया। खच से अंगुली कटकर अलग हो गयी, लेकिन कुमार के मुंह से 'उफ' तक नहीं निकली।

उन्होंने नौकर से कहा, "इस तरह होती है तलवार की धार की परीक्षा!"

स्वामी विवेकानंद की प्रेरणा से अनेक कर्मवीर भारतीय वेदांत के प्रचार के लिए अमरीका जाते थे। एक बार एक संन्यासी ने स्वामी विवेकानंद की शिष्या भगिनी निवेदिता से वेदांत-प्रचार की प्रणाली के बारे में पूछा। भगिनी निवेदिता ने एक क्षण सोचा, फिर संन्यासी से एक चाकू देने की प्रार्थना की, जो उनके पास रखा हुआ था। संन्यासी ने चाकू का धारवाला भाग स्वयं पकड़कर मूठ वाला भाग भगिनी निवेदिता की ओर बढ़ा दिया।

"बिलकुल ठीक," भगिनी निवेदिता ने कहा, "विदेश में कार्य करने की उचित शैली यही है। संकटों के सामने स्वयं रहो। सुरक्षित भाग दूसरों के लिए छोड़ दो।"

अमरीका में वेदांत का प्रचार कर, भारत लौटते हुए स्वामी रामतीर्थ जापान गये। वहां उनका खूब स्वागत सत्कार हुआ। उन्हें एक स्कूल में निमंत्रित किया गया। स्वामीजी ने एक नन्हें विद्यार्थी से पूछा, "तुम किस धर्म को मानते हो?"

"बौद्ध धर्म को," बालक ने उत्तर दिया।

स्वामीजी ने प्रश्न किया, "बुद्ध के बारे में तुम्हारे क्या विचार हैं?"

विद्यार्थी ने कहा, "बुद्ध तो भगवान

है !" यह कहकर उसने मन-ही-मन बुद्ध का ध्यान कर अपने देश की प्रथा के अनुसार बुद्ध को प्रणाम किया।

तब स्वामीजी ने उस विद्यार्थी से पूछा, "तुम कनफ्यूशियस को क्या समझते हो ?"

विद्यार्थी ने उत्तर दिया, "कनफ्यूशियस एक महान संत हैं।" और उसने बुद्ध की तरह कनफ्यूशियस का ध्यान करके उन्हें भी प्रणाम किया।

स्वामीजी ने पूछा, "अगर किसी दूसरे देश से जापान को जीतने के लिए एक सेना आये और उसके सेनापति बुद्ध या कनफ्यूशियस हों, तो तुम क्या करोगे ?"

विद्यार्थी का चेहरा तमतमा उठा। उसने जोश के साथ कहा, "तब मैं अपनी तलवार से बुद्ध का सिर काट लूंगा और कनफ्यूशियस को पैरों से रौंद दूंगा।"

स्वामी रामतीर्थ गद्गद हो गये। उन्होंने उस विद्यार्थी को लाड़ से अपनी भुजाओं में समेट किया। उनके मुंह से निकल पड़ा, "जिस देश के विद्यार्थियों में ऐसी देशभक्ति हो, वह कभी किसी का गुलाम नहीं हो सकता और उसकी उन्नति को कोई नहीं रोक सकता।"

विट्ठलभाई पटेल केंद्रीय धारा-सभा के अध्यक्ष थे। एक दिन जब वे धारा-सभा के बरामदे में खड़े थे तो इंग्लैंड से भारत घूमने आये एक अंगरेज दम्पती ने उन्हें साधारण वस्त्रों में देखकर धारा-सभा का चपरासी समझा और सभा-भवन दिखाने के लिए कहा। श्री पटेल ने एक गाइड की तरह उन्हें धारा-सभा के सभी कमरे दिखाये। जाते हुए आगंतुकों ने उन्हें इनाम देना चाहा, लेकिन उन्होंने नहीं लिया।

दूसरे दिन वे आगंतुक सभा की कार्यवाही देखने आये। उन्हें यह देखकर बहुत आश्चर्य हुआ कि जब श्री पटेल ने सभा-भवन में प्रवेश किया तो सभी सदस्यों ने खड़े होकर उनका स्वागत किया। जब श्री पटेल अध्यक्ष की कुरसी पर जाकर बैठे तो अंगरेज दम्पती अपने व्यवहार पर शर्म से पानी-पानी हो गया। ●

प्रसिद्ध दार्शनिक देकार्त से एक व्यक्ति ने दुर्व्यवहार किया, मगर देकार्त ने कुछ न कहा। इस पर उनके मित्र बोले, "तुम्हें उससे बदला लेना चाहिए था, उसका व्यवहार बहुत बुरा था।"

वे नरमी से बोले, "जब कोई मुझसे बुरा व्यवहार करता है तो मैं अपनी आत्मा को उस ऊंचाई पर ले जाता हूं, जहां कोई दुर्व्यवहार उसे नहीं छू सकता।"

गुजराती कहानी

● गुलाबदास ब्रोकर

नलिन के लिए आज का दिन बेहद खुशी का था——हर तरह से खुशी का ! वह बहुत खुश था। यहां बंगलौर में एक महत्त्वपूर्ण साहित्यिक सम्मेलन में, अपनी भाषा के प्रतिनिधि के रूप में वह आया था। आयोजकों ने सभी भारतीय भाषाओं के एक-एक प्रतिनिधि को आमंत्रित किया था। अपने प्रदेश से वह प्रतिनिधि के रूप में चुना गया था। यह स्वयं में कुछ कम गौरव की बात न थी।

लेकिन पिछले दो-तीन दिनों में जो घटनाएं घटी थीं, उन्होंने उसके आनंद को सौगुने से भी अधिक बढ़ा दिया था। उसे लेखकों की गोष्ठी में भाग लेने के लिए बुलाया गया था। हर भाषा के प्रतिनिधि उस गोष्ठी में बोलने वाले थे और दक्षिण भारत के एक विख्यात कवि उसमें अध्यक्ष-पद ग्रहण करने वाले थे। पांच - सात हजार श्रोता उसमें उपस्थित हुए थे।

गोष्ठी में भाग लेने जो वक्ता आये थे वे सब परिचित थे। उनमें से बहुतों को वह नाम से जानता था, कुछ को चेहरों से भी। अच्छे-भले लोग थे। उनसे मिलना भी [illegible] खुशी की बात थी।

कुछ समय बाद उसके बोलने की [illegible] आ गयी। अध्यक्ष तथा संचालकों ने [illegible] सूचना दे दी थी कि गोष्ठी में लिखा हु[आ] वक्तव्य नहीं पढ़ा जाएगा। भारी सं[ख्या में] श्रोता उपस्थित हों तब लिखा हुआ वक्त[व्य] पढ़ने से श्रोता ऊब जाते हैं।

उसने सोच रखा था कि उसे [illegible] क्या बोलना है ! बोलने की उसे [illegible] थी और बोलने में वह जरा भी नहीं घबरा[ता] था। लेकिन इस बार वह मन में जरा ——जरा-सा ही घबराया था; क्योंकि [illegible] पहले दो-तीन वक्ताओं ने काफी ल[म्बा] वक्तव्य दिया था, और इसके लिए अ[ध्यक्ष] द्वारा उन्हें अपनी बात जल्दी समाप्त क[रने] के लिए सूचना दी गयी थी। उसे भी [illegible] सूचना मिले तो उसे जरा भी अच्छा न[हीं] लगेगा। फिर वह जरा देर तक बो[लने] वाला था, यह वह जानता था। [illegible] की सजावट किये बगैर बोलने में [illegible] मजा आता ! थोड़ा नमक-मसाला ल[गाये] बगैर अपनी बात सुननेवालों के गले [illegible] कैसे उतारी जा सकती थी ? और [illegible] करने में, यदि अध्यक्ष बीच में ही [illegible] अथवा चिट भेजें तो !

गुजराती के सुविख्यात लेखक। जन्म ३० सितम्बर १९०९, पोरबं[दर] सौराष्ट्र में। कहानियों के अतिरिक्त नाटक, यात्रा-वृत्तांत, [illegible] ताओं आदि की कुल तीस पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं। सम्प्रति सा[हित्य] अकादेमी के सदस्य हैं। प्रस्तुत है उनकी एक सशक्त क[हानी]

इस घबराहट तथा उचाट के साथ वह बोलने के लिए उठ खड़ा हुआ, लेकिन दो-तीन मिनट में ही उसने देखा कि अब कुछ आपत्ति नहीं। श्रोतागण उसके वक्तव्य में पूरी तरह डूबते जा रहे हैं, उसने विषय को इस तरह आरम्भ किया, जिससे विलम्ब न हो और उसे कहने को भी कुछ शेष न रह जाए।

हुआ भी ऐसा ही। उसे किसी ने रोका-टोका नहीं। संतोष और प्रसन्नता के साथ उसने अपना भाषण पूरा किया। श्रोताओं की विशाल भीड़ ने तालियों की गड़गड़ाहट से उसका स्वागत किया। अपनी जगह लौटकर बैठा तो आस-पास बैठे विद्वानों ने उसे बधाई दी।

नलिन धन्य-धन्य हो गया।

विशेष खुशी तो उसे उस समय हुई जब कार्यक्रम पूरा हुआ और प्रशंसकों की भीड़ ने उसे घेर लिया। यह बिलकुल अपरिचित प्रदेश था, बिलकुल अपरिचित लोग। उसे इन लोगों ने पहचाना होगा तो मात्र इस भाषण से। फिर खुशी क्यों न होती उसे! जिसने ऑटोग्राफ मांगा उसे उसने ऑटोग्राफ दे दिया, जिसने लपककर हाथ बढ़ाया, उससे उसने हाथ मिलाया। मुसकराकर स्वागत करनेवालों को मुसकराकर उत्तर दिया। उस भीड़ में से एक महिला जब आगे आयी और विनम्रतापूर्वक उसके आगे आकर, कुछ झुककर उसका स्वागत किया तो उसे अपूर्व आनंद की अनुभूति हुई।

वह बोली, "मैं आपके अभिन्न मित्र डॉ. भट्ट की शिष्या थी, बम्बई में।"

"ओ होऽ, तब तो हम परिचित हैं।"

वह हंसी, "मेरा नाम रत्ना . . ,"

"हां, हां, पहचान लिया। भट्ट आपकी बहुत प्रशंसा किया करते थे।"

"उनकी मुझ पर बड़ी कृपा है किंतु साहब..."

"क्या ?"

"आपका भाषण बहुत अच्छा था !"

"ओह ! थैंक यू," उसने कहा।

फिर तो चाय-नाश्ते के समय भी इसी तरह के मधुर परिचय होते रहे। तभी इस प्रदेश में रहने वाले अपनी भाषा के एक युवक मित्र उससे मिले। वे भी सुप्रसिद्ध साहित्यकार थे और उनका उल्लेख भी नलिन ने अपने वक्तव्य में किया

था। अतः उनसे मिलना उसे अच्छा लगा, साथ ही साथ उन्होंने जो कुछ बताया वह विशेष रूप से अच्छा लगा।

"पता है, साहब! अध्यक्ष महोदय ने क्या कहा था?" उन्होंने पूछा।

"मुझे पता नहीं! मैं यहां की भाषा समझूं तब तो!"

"मैं कुछ-कुछ समझता हूं, और थोड़ी बात मेरे मित्रों ने मुझे बतायी थी।"

"क्या कहा था?"

"उन्होंने कहा कि गुजराती के विद्वान ने जो कहा उससे मैं सहमत हूं। और आपके वक्तव्य की दूसरी विशेषताओं की प्रशंसा भी उन्होंने की थी।"

"ऐसी बात है!" नलिन ने आश्चर्य प्रकट किया, क्योंकि अध्यक्ष महोदय यों सहज में, किसी की प्रशंसा करने वाले जीव नहीं थे।

"मुझे लगा कि आपको भी बतला दूं।"

"बहुत अच्छा," कहकर नलिन ने संतोष की सांस ली।

बगल में ही खड़ी पत्नी की तरफ उसने देखा। वह भी हंसी। नलिन को अनायास ही एक विचार आया। आज मैं इसे शायद इतना बेकार न लगा होऊंगा। लेकिन उसने उससे ऐसा कुछ कहा नहीं। नहीं तो, अन्य बहुत-सारी बातों में वह इतना चतुर नहीं है, यह वह सिद्ध कर देती। कुछ इस प्रकार का भय उसे लगा। लेकिन आज, कौन जाने क्यों, उसे वह भय भी मीठा लगा।

दूसरा दिन और भी आनंद[illegible] रहा। वह जहां ठहराया गया था [illegible] विभिन्न भाषा-भाषी मित्र भी ठहरे [illegible] उन सबके साथ वह प्रातः नाश्ता [illegible] गया तब उस प्रदेश के एक-दो मित्र [illegible] साथ थे। होटल में चाय-नाश्ता [illegible] और साथ ही साथ वे मित्र इस प्रदे[illegible] कुछ अखबार भी ले आये। पहले ही [illegible] पर कल के कार्यक्रम का एक बड़[illegible] चित्र था। चित्र में साहित्यकार बैठ[illegible] और नलिन खड़ा व्याख्यान दे रहा था[illegible] चित्र के नीचे उसका विशेष रूप से उल्ले[illegible] था। मित्र कह रहे थे—

"बंधु, यह हमारा सबसे अधिक [illegible] जाने वाला सर्वश्रेष्ठ पत्र है।"

"और ये," नलिन के चित्र [illegible] तरफ अंगुली से इशारा कर कश्मीरी [illegible] ने कहा, "गोष्ठी के सर्वश्रेष्ठ वक्ता!"

सब हंस पड़े।

दोपहर में गुजराती भाषा के साहि[illegible] कार मित्र मिलने आये। उनकी [illegible] तथा बालक भी साथ थे। गोष्ठी का का[illegible] क्रम पूरा हो चुका था। अब घूमना-फिर[illegible] ही शेष था। उसके लिए ये मित्र सपरि[illegible] साथ थे। उन्होंने मिलकर 'कब्बन पा[illegible] जाने का निश्चय किया।

हवा खुशगवार थी। बंगलौर [illegible] समस्त सौंदर्य इस पार्क में बिखरा [illegible] बच्चों की छोटी रेलगाड़ी में बड़े लो[illegible] बैठे और वे सब पांच-सात मिनट के [illegible] बच्चे बन गये।

और फिर आगे चलने लगे। चलते-चलते उस युवक मित्र ने अपने जीवन के गीत की बात भी कही। अमरीका में वे काफी समय रहे थे। उनके वे अनुभव बड़े रोचक एवं उद्बोधक थे। और फिर साहित्य की बातें हुईं। बातों में बहस। बहस में गरमी। गरमी में आनंद। उस आनंद द्वारा बढ़ा हुआ स्नेह लेकर वे सब पार्क से बाहर निकले।

इतने आनंद के बाद, पेट में चूहे कूदने लगे। और पेट के चूहों को शांत करने के लिए बंगलौर का 'एम. टी. आर. रेस्त्रां' तैयार था। उन्होंने उसकी काफी प्रशंसा सुनी थी। इसलिए वहीं गये।

सुंदर व्यवस्था थी। जितनी सीटें थीं उतने ही लोग प्रवेश पा सकते थे। बाकी लोग बाहर राह देखते खड़े रहते। सर्वत्र स्वच्छता थी। कहीं भी कुछ ऐसा नहीं दीखता था जो मन को अच्छा न लगे। सबने आनंद अनुभव किया। एक मेज पर वे सब बैठ गये। सामने की मेज पर एक जवान जोड़ा बैठा था। दोनों एक-दूसरे में मुग्ध लगते थे। उनकी मुग्धता से इन दोनों साहित्यिकों को हर्ष हुआ, और हर्ष के साथ उन्होंने उनकी तरफ देखा तो उस पुरुष को अपनी ही तरफ देखता पाया। साथ की युवती से धीमी आवाज में कुछ कह भी रहा था।

नलिन को लगा जैसे उसके ही विषय में कुछ बातें हो रही हैं। सहज ही उसका हाथ अपने गंजे सिर पर चला गया। 'कैसी गंजी खोपड़ी है!' कहता-सा वह अपने बालों का सौंदर्य पत्नी के हृदय में उड़ेल रहा होगा! कुछ पता नहीं चला, लेकिन हंसी आ गयी। वह भी सामने से हंसा। पूछा, "आप गुजराती हैं?"

"हां, क्यों?"

"नहीं, कुछ नहीं, यों ही," कह उसने साथ की युवती की तरफ देखा। उसने स्वीकृति में गरदन हिलायी।

घबराया हुआ-सा नलिन, उनकी तरफ देख रहा था। युवक समझ गया। हंसकर बोला, "यहां लेखकों की गोष्ठी में आये हैं न?"

नलिन की समझ में कुछ-कुछ बात आयी। वह भी हंसा, "आप वहां आये थे?"

"नहीं।"

"फिर?"

"यहां के दैनिक पत्र में आपका

फोटो आज आया है। मैं अपनी पत्नी से कह रहा था कि आप वही हैं। लेकिन यह मान नहीं रही थी।" युवक ने पत्नी की तरफ देखा।

वह मधुर हंसी हंसी। नलिन भी हंसा। अब भी दोनों ऐसे स्नेह से हंस सकते हैं—इस बात की धन्यता अनुभव करता हुआ-सा।

★

आनंद और उल्लास-भरा तीसरा दिन शुरू हुआ। खरीदारी के अलावा अब कुछ भी शेष न था। पति-पत्नी निकल पड़े। नलिन को ऐसा लग रहा था जैसे आज उतना आनंद नहीं मिलेगा। खरीदारी, वह भी पत्नी के साथ! लेकिन वह बंगलौर के इस काव्यमय सौंदर्य को बिगाड़ना नहीं चाहता था। बीच में दखल देते ही तूफान उठ खड़ा होगा न! पैसा चुकाने के सिवा कहीं बीच में दखल नहीं यह उसने तय कर लिया था।

दोनों एक आलीशान दुकान में लाखों रुपयों की रंग-बिरंगी चारों तरफ सजी थीं। साड़ियां सुंदर नारी-देह वहां खड़ी हों तो! की आंखों के आगे सौंदर्य का एक बाग लहलहा उठा। बाग की सुंदरता वह देख ही रहा था कि कानों में पड़ी—"कहां खो गये ?"

वही चिर-परिचित आवाज! से जो हमेशा सुनायी देती थी, वही भरी आवाज, लेकिन आक्षेप के नलिन ने उन शब्दों की दिशा में बाग अदृश्य हो गया था, लेकिन सारे पुष्प जैसे एक पुष्प में आकर गये हों, इस तरह एक सुंदर, सुमधुर मुसकराहट बिखेरती सामने आ खड़ी और पत्नी कह रही थी—

"यह कह रही हैं कि यह आपकी पुत्री को अच्छी लगेगी।"

"लगेगी ?" नलिन ने युवती से

"मुझे लगती है तो उसे क्यों लगेगी ?" वह बोली।

"वह तुम्हारे समान सुंदर नहीं।

वह हंस पड़ी—मधुर और बोली, "हर एक तरुणी सुंदर होती है

उसकी उस मुग्धता पर नलिन हंस पड़ा।

मनपसंद साड़ियां बिना रोक ली जा सकें, इस खयाल से पत्नी

और इस प्रकार हास्य के साथ वह बरात वहां से बाहर निकली।

*

नलिन ने कहीं पढ़ा था -- 'ब्यूटी बिगिंस ह्वेयर द पेवमेंट एंड्स'। और वह जानता था 'ड्यूटी बिगिंस ह्वेयर ब्यूटी एंड्स।' ब्यूटी का काम पूरा हो चुका था, और ड्यूटी का आरम्भ !

छोटी-छोटी चीजें, फुटकर सामान, दवा आदि खरीदनी थीं। फिर समय रहा तो मित्रों से मिलना था।

पति-पत्नी दोनों ये सारी चीजें खरीदने 'सिटी मार्केट' निकल गये। आज स्वयं खाना बनाने की व्यवस्था की थी। गुजराती खाना खाने का स्वाद यहां और कहां मिलता ! किसी तरह व्यवस्था हो गयी, यही कम खुशी की बात न थी। लेकिन बाजार का यह त्रास ! छोटी-छोटी बहुत-सारी चीजें खरीद लेने के बाद पत्नी सब्जी लेने मार्केट के अंदर गयी, तब नलिन बाहर सड़क पर खड़ा रहा।

थोड़ी ही देर में वह घबरा उठा। एकाएक पुरानी पीड़ा फिर उभर रही थी। पेट में ऐंठन होने लगी। यहां ऐसा कोई उचित स्थान नहीं था। अनजाना शहर और वह भी मार्केट में ! लाचार-सा वह चारों ओर देखने लगा। हाथ के पैकेट कांपने लगे थे।

चौकीदार-जैसे दीख रहे एक व्यक्ति ने उसे देखा, "साहब, आपका स्वास्थ्य क्या ठीक नहीं है ?" उसने पूछा। नलिन की हालत जानकर मार्केट के एक ऑफिस में ले गया।

थोड़ी राहत मिलने पर नलिन पुन. मौज में आ गया। उस व्यक्ति का बहुत-बहुत आभार माना। उसने पूछा, "नये आये हैं ?"

"दो-तीन दिन ही हुए हैं, यहां आये।"

"व्यापार के सिलसिले में ?"

"नहीं, साहित्यकारों की गोष्ठी में।"

"ओ होऽ, गोष्ठी में आये हैं ! लेखक हैं ! चलिए, चाय पिलाऊं।"

वह भी साहित्य-रसिक निकला। कविता लिखता था। कुछ सुनायीं भी। उसकी भाषा नहीं समझ पा रहा था नलिन, यह उसका सौभाग्य था या दुर्भाग्य यह वह तय नहीं कर सका।

पत्नी आयी। वह चलने लगा। देशी दवा की दुकान कहां होगी, पूछा। साथ के कवि महोदय ने कहा, "थोड़ी दूर है। ये गलियां छोटी हैं। कोई बात

क्या आप के
सफ़ाई के पाउडर से
चिकनाहट के गंदे निशान
रह जाते हैं?
विम से रह जाती है
केवल चमक दमक!
न चिकनाहट रहे!
न पाउडर चिपका रहे!
न खरोंच पड़े!
Vim
with super
का एक उत्कृष्ट उत्पादन

नहीं, चलिए, मैं आपको छोड़ दूं!"

"आपको व्यर्थ तकलीफ..."

"आप हजारों मील से आ रहे हैं, आपको तकलीफ नहीं हुई और कदम-दो-कदम चलने में हमें तकलीफ होगी!" वह हंसा। नलिन पुनः आनंद के आवेग से भर उठा।

★

दुकान अच्छी थी। बड़ी थी। दुकानदार गुजराती था। उसे अपनी बोली बोलते देखकर नलिन को खुशी हुई। वह हंसा। मालिक-जैसे दीखते दो व्यक्ति थे। दोनों भाई होंगे!

"कितने वर्षों से यहां व्यापार करते हैं?" नलिन ने पूछा।

"बीस वर्षों से," कहा तो सही, किंतु प्रश्न अकारण है ऐसा कुछ भाव चेहरे पर झलका। विशेष कुछ बात करना शेष नहीं था। आवश्यक चीजें खरीद लीं। मित्र के पुत्र से मिलने जाना था। याद आया कि फोन करना है। अनुमति मांगी। मिल गयी।

वह भी आखिर मनुष्य ही था।

नलिन ने नाम बतलाया। किसलिए वह यहां आया है, यह भी कहा। तुरंत आता हूं, यहां से खाली होकर—उसने कहा था। उधर से मित्र के पुत्र ने विश्वास-भरे स्वर में कहा, "गोष्ठी सफल रही। आप जरूर आएं।"

नलिन उठ खड़ा हुआ। पैकेट लिये। पैसे चुका दिये। फोन के पैसे भी दे दिये।
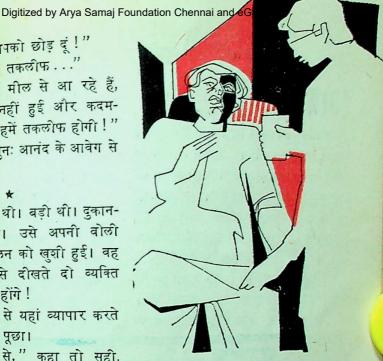
पहले ने दूसरे की तरफ तटस्थ-भाव से देखकर पैसे ले लिये। नलिन ने अपने मित्र के पुत्र के ऑफिस का पता पूछा। उतने ही तटस्थ-भाव से उसने वह भी बता दिया।

नीचे उतरा तब धीमे-से एक भाई ने दूसरे से पूछा, "इन्हें पहचाना?"

कुतूहल से नलिन के कान चौकन्ने हो गये।

"नहीं पहचाना! इनके लेख तो हमने स्कूल-कॉलेज में भी पढ़े हैं!"

"तो?"

"टेलीफोन के पैसे..."

नलिन की गति तेज हो गयी।

—अनु. गोपालदास नागर

दुनिया समाप्ति की ओर

• एमिल जुब्रीन

आर्नोल्ड क्रुम हेलर अद्भुत व्यक्ति हैं। उनकी कुछ भविष्यवाणियां आश्चर्यजनक रूप से सही सिद्ध हुई हैं। लेकिन कोई उन्हें ज्योतिषी कहकर सम्बोधित करे तो उनकी सहज मुसकान गायब हो जाती है। "मुझे ज्योतिषी न कहिए," कुछ उत्तेजित होकर वे कहते हैं, "मैं 'ब्रह्मांड जीवशास्त्री' (कॉस्मोबॉयोलॉजिस्ट हूं।" क्रुम हेलर मैक्सिकोवासी हैं।

क्रुम हेलर ने सिद्ध किया है कि वे 'ब्रह्मांडजीवशास्त्र' के जनक हैं। ज्योतिष और ब्रह्मांडजीवशास्त्र साथ-साथ चलते अवश्य हैं, लेकिन दोनों के गुण-निर्देश भिन्न हैं।

"ज्योतिष में नक्षत्रों का अध्ययन किया जाता है, जबकि 'ब्रह्मांडजीवशास्त्र' में नक्षत्रों का जीवन और मानव-जीवन पर पड़ने वाले उनके प्रभाव का उल्लेख होता है।"

क्रुम हेलर अपने विषय में स्वयं कहते हैं, "निर्विवाद रूप से मैं दुनिया का सबसे बड़ा द्रष्टा और भविष्यवक्ता हूं।"

इसमें संदेह नहीं कि क्रुम हेलर का साधारण जीवन इस बात का प्रतीक ...

भविष्यद्रष्टा क्रुम हेलर ने पूरी ... के लिए एक अत्यंत अशुभ सूचना दी ... उनका कथन है कि १० जुलाई, ... को चार बजे यह दुनिया समाप्त हो जाएगी !

वे आगे कहते हैं—

"इतनी बुरी खबर देते ... दुःख है, लेकिन उस महाविनाश के ... पहले से ही तैयार रहना बेहतर है ... अभी पूरा एक दशक का समय है ...

"उस समय परमाणु युद्ध शुरू ... यह युद्ध १२ मिनट तक रहेगा। ... महाविनाश के बाद सब महाद्वीपों में ... एशिया, अफ्रीका, आस्ट्रेलिया आदि ... केवल ७० हजार लोग बच पाएंगे ...

मंद मुसकराहट के साथ क्रुम ... बोले, "मैं इस बात पर जोर देना ... हूं कि जब मैं कहूं कि अमुक बात ... तो वह अवश्य होती है।"

धुआंधार सिगरेट पीनेवाले क्रुम हेलर ने अपनी पुरानी फाइलों को ... स्वीकार किया कि बारह प्रतिशत ...

भविष्यवाणियां गलत निकली हैं।

"किसी भी भविष्यवक्ता के लिए यह औसत से कहीं ज्यादा है," उन्होंने कहा, "मैं अपने उद्देश्य में लगभग नब्बे प्रतिशत सही रहा हूं।"

महानाश की भविष्यवाणी करने वाले भविष्यवक्ता ने यह भी बताया कि अपनी भविष्यवाणी को चरितार्थ देखने के लिए मैं जीवित नहीं रहूंगा।

"नक्षत्रों की स्थिति से मुझे पता है कि मेरी मृत्यु हृदय-गति रुकने से होगी। सन १९७३ के अप्रैल या सितम्बर में मेरी मृत्यु होगी," उन्होंने ठंडे स्वर में कहा।

क्रुम हेलर ५९ वर्ष के हैं। २७ वर्ष पूर्व उन्होंने ब्रह्मांडजीवशास्त्र का अध्ययन शुरू किया था। २३ नवम्बर, १९३५ को उन्होंने भविष्यवाणी की कि द्वितीय विश्व-युद्ध में हिटलर पराजित होगा।

इस बीच और भी भविष्यवाणियां उन्होंने कीं। ये भविष्यवाणियां प्रकाशित होती रहीं।

लगातार कई भविष्यवाणियां सही सिद्ध होने से क्रुम हेलर की प्रसिद्धि बढ़ती चली गयी। १९५८ में मैक्सिको के विध्वंसकारी भयंकर भूचाल की भविष्य-वाणी भी उन्होंने की थी। स्तालिन, नेहरू, मार्टिन लूथर किंग की मृत्यु-सम्बंधी पूर्व सूचनाएं भी उन्होंने दी थीं।

मैक्सिको के डाउन-टाउन स्थित क्रुम हेलर के आफिस में जाकर उनकी प्रस-कतरनों को देखिए तो पता चलेगा कि लॉस एंजिल्स वाले भूचाल की भविष्य-वाणी भी क्रुम ने ही की थी।

क्रुम महोदय का विश्वास है कि आगामी दस वर्षों में कई भूचाल आएंगे। और उत्तरी केलिफोर्निया तहस-नहस हो जाएगा। १९८२ में पूरा कैलिफोर्निया प्रायद्वीप मुख्य भूमि से अलग होकर एक द्वीप बन जाएगा। इसके अलावा और भी कई परिवर्तन होंगे।

आर्नोल्ड क्रुम हेलर

अपनी भविष्यवाणियों के सम्बंध में क्रुम हेलर कहते हैं, 'बहुत-से लोग विश्वास नही करते; सोचते हैं मैं धूर्त हूं। जबकि सच यह है कि मैं अपनी भविष्यवाणियां गम्भीरता से करता हूं

और चाहता हूं कि लोग उन्हें गम्भीरता से लें। १९६१ में पुलिस का घेरा तोड़कर मैंने अमरीका के राष्ट्रपति जॉन. एफ. कैनेडी को एक परची दी थी, जिसमें लिखा था कि २२ नवम्बर, १९६३ को उनकी मौत होगी। कैनेडी ने परची पढ़कर फेंक दी और हंस पड़े।"

उन्होंने कुछ अद्भुत भविष्यवाणियां की हैं—

१९७२ में पोप पॉल त्यागपत्र देंगे या उनका निधन हो जाएगा।

सितम्बर, १९७३ में साम्यवादी चीन रूस पर आक्रमण करके मास्को पहुंच जाएगा।

अमरीका में रंगभेद-नीति के कारण भयंकर युद्ध होगा जिसमें एक लाख मारे जाएंगे।

लगभग एक दर्जन लोग भविष्य जानने के लिए क्रुम हेलर के रोज आते हैं।

"मैं उनसे कुछ नहीं लेता," कहना है, "घुड़दौड़, स्टॉक मार्केट जुए आदि की भविष्यवाणियां मैं नहीं करता। उन बातों पर मेरा नहीं और शायद इसीलिए गरीब हूं

एक बार किसी ने पूछा कि प्रकार आप सूचनाएं प्राप्त करते हैं और किस तरह ये चौंकाने वाली भविष्यवाणियों का रहस्य आप ज्ञात करते हैं

क्रुम हेलर ने उत्तर दिया, "

में सब कुछ है। उनकी भविष्यवाणियों पर संदेह नहीं किया जाना चाहिए। ब्रह्मांडजीवशास्त्र के विकास से महीनों और सालों पहले की सूचनाएं ही सम्भव नहीं हैं, बल्कि नक्षत्रों के जीवन, उनके आपसी सम्बंध और व्यक्ति या मानवता पर पड़ने वाले उनके प्रभावों का भी पता चलता है। इसके लिए बहुत कुछ करना पड़ता है। सूर्य के फैलाव को नापने से लेकर पृथ्वी के परिप्रेक्ष्य में नक्षत्रों की स्थिति-स्थापना तक। यह प्रक्रिया इतनी उलझी हुई है कि कह कर समझायी नहीं जा सकती...

"संक्षेप में कहा जा सकता है कि नक्षत्रों की स्थिति देखकर भविष्य का पता चलता है। दुर्घटना या अचानक मौत से लेकर महाविनाश तक की पूर्व सूचनाएं मिल सकती हैं। मैं नहीं चाहता कि मुझे महाविनाश का द्रष्टा कहा जाए, लेकिन व्यक्तिगत या सांसारिक स्तर पर सभी लोग अपनी-अपनी त्रासदियों में लगे हुए हैं, मेरी बात सुनने की फुर्सत ही किसे है?

"मैंने साल भर पहले ही रूस द्वारा अंतरिक्ष-विजय की भविष्यवाणी की थी, जो सच निकली।" ●

तीन व्यक्तियों में कोई बात तभी गुप्त रह सकती है, यदि उनमें से दो इस संसार से कूच कर जाएं। —फ्रैंकलिन

कौन समझाये उन्हें

सुना है कि उनके शहर में
बड़ी भीड़ रहती है
शब्दों के सौदागरों के काफिले
कुछ इस क़दर बढ़ रहे हैं कि
सड़कों और सरायों में
जगह भी नहीं मिलती है
कि हर रात लगती है महफिल
और मची रहती है यों अजीब-सी हलचल
मगर ये भी सुना है कि एक भी क़ता
उन्हें रास नहीं आता है
अफसोस कि कोई भी स्वर
उन्हें पुरसोज नहीं कर पाता है
झंकार निकलने भी नहीं पाती कि
मिजराब बहक-बहक जाता है
और यों बीच में ही टूट जाती है
कशिश दिये बिना हर छेड़ी गजल
जाने क्या हो गया है उन्हें कि
हमारे खतों को पढ़े बिना ही
उड़ा देते हैं आवारा हवाओं में
और यों शिकवाई सवालातों के दरिंदे
अटके रह जाते हैं मंजिल की फिजाओं में
कौन समझाये उन्हें कि
इन्हीं में छिपे हुए हैं न जाने कितने
खयालातों के हसीन ताजमहल

—सावित्री परमार
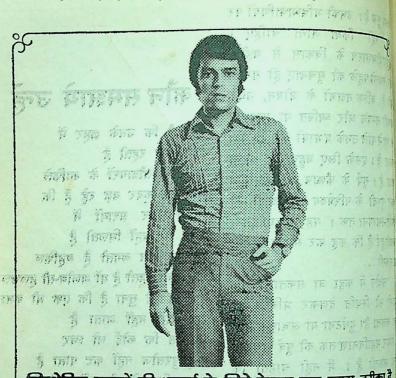
तमिल काव्यों में

वर्षा ऋतु और

इन्द्रोत्सव

• शीरीन भारती

प्राचीन तमिल साहित्य में प्रकृति का जितना सुंदर वर्णन बिखरा पड़ा है, उतना संस्कृत साहित्य के अतिरिक्त किसी अन्य भारतीय भाषा में उपलब्ध नहीं है। संत तिरुवल्लुवर द्वारा रचित तमिलवेद 'तिरुक्कुरल' तमिल साहित्य की गौरव-निधि तो है ही, विश्व-साहित्य में भी इसका विशेष स्थान है। 'तिरुक्कुरल' में समस्त सृष्टि के प्राण मेघ की वंदना इस प्रकार की गयी है—"समय पर न चूकने वाली वर्षा के द्वारा ही धरती अपने को धारण किये हुए है, इसीलिए मेह को लोग अमृत कहते है। सभी खाद्य-पदार्थ वर्षा की ही देन हैं। जल-वृष्टि न हो तो समस्त पृथ्वी अकालग्रस्त हो जाएगी, हालांकि वह चारों ओर से समुद्र से घिरी हुई है। स्वर्ग के जलस्रोत सूख जाएं तो कृषक खेतों में हल नहीं चला सकेंगे। वर्षा में नष्ट करने और नष्ट हुए को पुनर्जीवित करने की अपार शक्ति है। वर्षा के बिना धरती पर घास भी नहीं उग पाएगी। समुद्र अपने आप में शक्तिशाली है और वर्षा को जन्म देता है, किंतु उसे भी वर्षा के जल की आवश्यकता होती है। समुद्र में वर्षा का स्वच्छ जल न मिले तो जलजीवों में त्राहि-त्राहि मच जाएगी और मोती उत्पन्न होना बंद हो जाएंगे।"

'तोल्काप्पियम' में, जिसे अगस्त्य मुनि के बारह शिष्यों में प्रधान तोल्काप्पिया ने लिखा था, रससृष्टि के लिए प्रकृति को विशिष्ट साधन माना है, जिसमें वर्षा ऋतु का विशेष स्थान है। तमिल साहित्य के संधिकाल में जितनी रसपूर्ण कविताएं लिखी गयीं सबमें प्रकृति का मनोरम वर्णन है। एक तमिल कविता में वर्षा को उपमान बनाकर नायिका की एक सखी नायक से कहती है—"हे रूपवान, आपके दर्शन न पाकर मेरी सखी इस प्रकार मुरझा जाती है जैसे खेत में पड़ा बीज वर्षा के अभाव में सूख जाता हो। और आपको दूर से आता देखकर वह यों लहलहा उठती है जैसे प्रातःकालीन वर्षा से शस्य पुलकित हो उठा हो।"

जैन महाकवि इलंगोवडिगल की रचना 'शिलप्पधिकारम' के मंगलाचरण में सूर्य, चन्द्र, वर्षा आदि की वंदना की गयी है—

"हम वर्षा की वंदना करते हैं
क्योंकि चोल राज की भांति यह वर्षा भी
रत्नाकर मेखला-भूमि को समृद्ध बनाती है"

महाकवि कम्बन द्वारा रचित 'कम्ब रामायण' एक अद्वितीय ग्रंथ है। कम्बन ने मेघाच्छादित पर्वतों, नदी, नालों तथा

हरियाली से भरपूर प्रदेशों का वर्णन अपने काव्य में चमत्कारिक सजीवता से किया है। राष्ट्रकवि सुब्रह्मण्यम भारती के उल्लेख के बिना वर्षा-वर्णन अध्याय अधूरा लगेगा। भारती ने वर्षा-ऋतु के जिस उग्र रूप का वर्णन किया है, वह देखते ही बनता है—

"अष्ट दिशाएं बिखर गयी हैं। पर्वत टूट गये हैं। भयंकर बाढ़ आने लगी है। सारा ब्रह्मांड टूट रहा है। वायु भयंकर रूप से चल रही है। बिजली कौंध रही है। सागर की लहरें आकाश को छू रही हैं। मेघ मूसलाधार वर्षा के साथ गरज रहा है। तेज आवाज के साथ वायु आकाश को भी छेद रही है। गगन ताल बजा रहा है। भयानक वर्षा आठों दिशाओं को विदीर्ण कर रही है।" वर्षा-ध्वनि को प्रतिध्वनित करने वाले शब्दों तथा उग्र या परुष वर्णों का प्रयोग करके प्रकृति की उग्रता को भारती ने भाषा द्वारा मुखरित कर[illegible] है।"

इंद्र को वर्षा का देवता माना [illegible] है। इंद्रोत्सव, इंद्रध्वज या उत्सव [illegible] की विधि का संस्कृत-ग्रंथों में [illegible] मात्र है। कालिदास के रघुवंश में [illegible] ध्वज का नाम इस प्रकार है—"इंद्र[illegible] की तरह नयी-नयी उन्नति करते हुए [illegible] महाराज को उत्सुकता से देखकर [illegible] बच्चों वाले प्रजाजन बड़े ही आनं[illegible] हुए।"

रघुवंश की टीका में मल्लि[illegible] ने लिखा है, "इंद्रध्वज की पूजा राजा[illegible] वर्षा के लिए किया करते हैं। कालि[illegible] के समय में लोग इंद्रोत्सव मनाते थे।

भादों की अष्टमी से द्वादशी [illegible] पांच दिन इंद्र की पूजा के साथ इंद्रो[illegible] मनाया जाता था। उत्तरापथ में [illegible] कालिदास के महाकाव्यों का प्रचार [illegible]
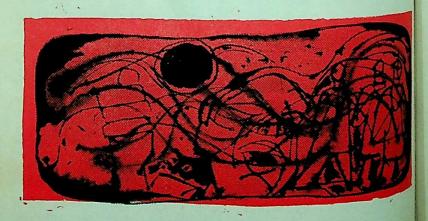
प्रसार हो रहा था उसी समय दक्षिणापथ में तमिल के इलंगोवडिगल कवि ने 'शिल-प्पधिकारम' लिखा। महाकाव्य मणि-मेखलैं' घटनाक्रम की दृष्टि से 'शिलप्प-धिकारम्' का ही उत्तरार्ध है, जिसे कवि शीत्तलैच्चात्तरनार ने लिखा, जो बौद्ध-धर्म से प्रभावित थे। इन दोनों महाकाव्यों में इंद्रोत्सव का विस्तृत वर्णन है।

प्राचीनकाल में चोलदेश में कावि-रिप्पूम्पट्टिनम् नगरी में एक प्रतापी राजा थे। मलय पर्वत पर तपस्या करनेवाले अगस्त्य मुनि ने उनके देश को सर्व सम्पन्न बनाने हेतु इंद्रोत्सव मनाने का आदेश दिया। राजा ने इंद्रदेव के पास जाकर प्रार्थना की—"हे इंद्रदेव ! मैं अपने नगर में अट्ठाईस दिनों तक इंद्रोत्सव मनाना चाहता हूं। अतः आप देवताओं-सहित वहां उपस्थित रहकर हमारे उत्सव को सफल बनाएं।" इंद्रदेव ने चोल राजा का आमंत्रण स्वीकार कर लिया और इस प्रकार दक्षिणापथ में इंद्रोत्सव मनाने की परम्परा का सूत्रपात हुआ, जिसे चोल-राजा के वंशजों ने भी कायम रखा। एक बार काविरिप्पूम्पट्टिनम् में निवास करनेवाले पुरोहितों, ज्योतिषियों, विभिन्न भाषा-भाषी व्यापारियों, मंत्रिगणों तथा उच्च पदाधिकारियों ने एक बैठक बुलायी जिसमें इंद्रोत्सव आयोजित करने की योजना बनायी गयी। उनकी धारणा थी कि पर-म्परानुसार इंद्रोत्सव नहीं मनाया जाएगा तो सब पर भारी विपत्ति टूट पड़ेगी। नगर के बीच रहने वाला बाजार का भूत उन्हें बहुत सताएगा और पापियों को मार-कर खानेवाला चौराहे का न्यायी भूत नगर से भाग जाएगा। बाजार के भूत से तात्पर्य चोरबाजारी करनेवालों से था।

पापियों को खानेवाला 'चौराहे का भूत' न्याय-देवता था जिसके डर से चोर-लुटेरे कम अपराध किया करते थे। इंद्रोत्सव की तैयारी इस प्रकार की जाने लगी—हाथी पर वज्रायुध मंदिर का डंका चढ़ाया गया। डंका पीटने वाला बहुत ही प्राचीन कुल से सम्बंधित था। उसके कुल का आरम्भ उस समय से हुआ था जब संसार में चारों ओर धरती पर पर्वत-श्रेणियां ही दिखायी देती थीं। कहीं पर समतलभूमि का चिह्न तक नहीं दिखायी देता था। डंका पीटनेवाले ने सर्वप्रथम राजधानी काविरिप्पूम्पट्टिनम् की प्रशंसा के गीत गाये। उसके बाद कहना आरम्भ किया—"बादल की खूब गर्जना हो और महीने में तीन बार वर्षा हो। राजा का शासन नीतिपूर्ण हो। इंद्रोत्सव के समय स्वर्ग को रिक्त कर इंद्रराज सभी देवताओं सहित यहां उपस्थित रहते हैं, इसलिए राजवीथियों के प्रवेश-द्वारों में तथा मंदिरों के द्वारों में पूर्ण कुम्भ और स्वणपालिकाओं की स्थापना करो। विभिन्न प्रतिमाओं से अंकित दीपमालिकाओं को सम्पूर्ण नगर में जगमगाने दो। सुपारी के गुच्छे, केले, गन्ने और पुष्पलताओं से

उड़ चलिए
बंबई
न्यू यॉर्क
बंबई
एक तरफ़ा किराये से भी
कम ख़र्च में!
न्यू यॉर्क की यात्रा और वापसी
१४/१२० दिनोंवाली हमारी एक्सकर्सन फ़ेयर
योजना के अन्तर्गत मात्र ४००४ रु. में!
न्यू यॉर्क के लिए रोज़ाना ७४७ की उड़ाने
दिल्ली/न्यू यॉर्क/दिल्ली —४००४ रु.
कलकत्ता/न्यू यॉर्क/कलकत्ता —४७३२ रु.
मद्रास/न्यू यॉर्क/मद्रास —४६७४ रु.
एयर-इंडिया
एयरलाइन जो आपके पैसे बचाती है।
AI-5014

भवनों को सजाओ। खम्भों को मोती की मालाओं से सजाओ। सड़कों से पुरानी बालुका हटाकर नयी बालुका भरो। विभिन्न रंगों के कपड़ों की ध्वजाएं द्वार तथा गोपुरों पर फहराने दो। धर्मोपदेशको, आप लोग सभा-मंडपों तथा सार्वजनिक-स्थलों में जाकर अपने-अपने व्याख्यान सुनाइए। हे सिद्धांतवादियो, आप सब विद्या-मंडप में बैठकर वाद-विवाद कीजिए और किसी से वैर-भाव न रखते हुए, क्रोध को किंचित जन्म न दें।" महाकवि इलंगोवडिगल के अनुसार इस प्रकार के आयोजनों के साथ इंद्रोत्सव मनाना आरंभ हो गया। लोगों में अपूर्व उत्साह आ गया और प्रत्येक नागरिक ने अपने अनुरूप कार्यक्रम में भाग लिया। अंत में घोषणास्वरूप निम्नलिखित शब्द कहे गये—

भूख, रोग और ईर्ष्या का अंत हो जाए एवं वर्षा और सम्पत्तियों का स्रोत सदा बहता रहे।

'मणिमेखलै' महाकाव्य में भी इंद्रोत्सव का वर्णन हुआ है, जिसके एक सर्ग में लिखा है कि —"महर्षि अगस्त्य के आदेश के अनुसार चोलराजा अट्ठाईस दिन तक इंद्रपूजा मनाते रहे। पूहार अर्थात काविरिप्पूम्पट्टिनम् नगर में सब लोग इसमें भाग लेते हैं। पिछली बार नर्तकी माधवी ने ग्यारह प्रकार के नृत्य कर नागरिकों का मनोरंजन किया था, किंतु इस बार वह नहीं आयी। उसकी पुत्री मणिमेखला भी नहीं आयी, क्योंकि दोनों मां-बेटी बौद्ध तपस्विनी बन गयी थीं।"

इस प्रकार वर्षा और इंद्रोत्सव से सम्बंधित और भी कई आख्यान तमिल साहित्य में हैं। तमिल का प्राचीन साहित्य द्रविड़ों की विरासत है, जिसमें देश और काल की व्यवस्था और आस्था के साथ-साथ मानवीय विकास के रूप दिखायी देते हैं। धीरे-धीरे चोलराजा समय के बहाव के साथ बहकर जब इंद्रपूजा करना भूल गया तब इंद्र के प्रकोप से उसकी राजधानी काविरिप्पूम्पट्टनम् अर्थात पूहार समुद्र में डूब गयी। ●

अमरीकी सेनापति ग्रांट कहीं टहलते-टहलते सिगार पी रहे थे, पर उस स्थान पर धूम्रपान निषिद्ध था। वहां तैनात चौकीदार ने उनसे कहा, "श्रीमान, आप यहां सिगार नहीं पी सकते।"

"क्यों?"

"जी, यहां सिगार पीना मना है।"

"तो क्या तुम्हारा आदेश है कि मैं सिगार न पीऊं।"

"जी," पहरेदार ने नम्रतापूर्वक, पर दृढ़ता से कहा।

"बहुत अच्छा," कहकर ग्रांट ने तुरंत सिगार फेंक दिया।

गोष्ठी

प्रजेश बाला, जयपुर : 'आटोग्राफ' का क्या इतिहास है ? सर्वप्रथम किसने किससे 'आटोग्राफ' लिया था ?

'आटोग्राफ' का अर्थ आजकल दस्तखत या हस्ताक्षर ही हो गया है, लेकिन शुरू में ऐसा नहीं था। वास्तव में इस शब्द का अर्थ है—स्वलिखित, और शुरू में हाथ से लिखी गयी किसी भी चीज को, जैसे—पत्र, नुस्खा या पांडुलिपि—आटोग्राफ कह दिया जाता था। यह बताना तो बड़ा मुश्किल है कि सबसे पहले किसने किससे आटोग्राफ लिया होगा। हां, अनुमान लगाया जा सकता है कि हजारों साल पहले, जब शायद डाक-व्यवस्था शुरू नहीं हुई होगी, किसी प्रियजन ने भावावेश में निशानी के तौर पर अपने आटोग्राफ दिये होंगे। हो सकता है, उससे इस तरह की फरमाइश ही की गयी हो। इधर आटोग्राफ हासिल करने की प्रथा भी पुरानी पड़ चली है। वाशिंगटन, लंदन, बर्लिन और पेरिस-जैसे महानगरों में बड़े-बड़े पुस्तकालयों और संग्रह... में अनेक इतिहास-पुरुषों के आटो... मौजूद हैं। अनेक लोगों ने इसे रो... रोटी कमाने का धंधा बना रखा है... वे प्रसिद्ध व्यक्तियों के हस्ताक्षरों के... बम बनाकर बेचते हैं। कई बार ये... सार्वजनिक नीलाम में इन्हें भारी क... देकर खरीदते हैं। १९४९ में अब्राहम लि... के हाथ का लिखा हुआ, उनके गेटिस... निवास का पता अमरीका में नीलाम कि... गया। जानना चाहेंगी, यह बोली कितने... छूटी ? केवल ५४,००० डालर में !

●

वेदप्रकाश आर्य, कड़ाबीन, इंदौर : छींक क्यों आती है ? क्या कारण है कि... मनुष्य छींकते समय अपनी आंखें खुली न... रख सकता ?

मानव-शरीर की संरचना इस प्रका... हुई है कि इसका लगभग प्रत्येक अंग अप... ऊपर आनेवाले खतरे का मुकाबला क... सके। नाक बहुत सम्वेदनशील अंग है... जब कभी कोई अप्रिय या हानिकार... चीज नाक में चली जाती है, उसे बाह... निकाल फेंकने के लिए शरीर छींक का... सहारा लेता है। छींक से विजातीय वस्... बाहर निकल जाती है और छींकने वा... को राहत मिलती है। छींकते समय आं... बंद हो जाने का कारण यह है कि आं... और नाक की तंत्रिकाओं में घनिष्ठ संबं...

है और छींकते समय पूरे जोर से विजातीय पदार्थ को बाहर फेंकने के लिए जब नाक सिकुड़ती है तो आंखें भी सिकुड़ जाती हैं। दूसरी बात यह है कि आकस्मिक धमाके की प्रतिक्रिया में आंखें अपने आप बंद हो जाती हैं, और छींक आखिर छोटा-मोटा धमाका तो है ही !

●

भगवानदास हेडा, खिरकिया, होशंगाबाद : प्याज काटते समय आंसू क्यों आने लगते हैं। कटा हुआ आधा प्याज सिर पर रख लेने से आंसू क्यों बंद हो जाते हैं?

कच्चे प्याज का स्वाद तीखा होता है और उससे एक तीव्र गंध आती है। इसका कारण यह है कि प्याज में एक तरह का तेल होता है जो छिलका उतारते समय या प्याज को काटते समय वाष्पकणों में बदल जाता है और हवा में मिल जाता है। जब वह हवा सांस के साथ हमारी नाक में पहुंचती है तो इससे नाक की वे अत्यंत सम्वेदनशील तंत्रिकाएं प्रभावित होती हैं जिनका सम्बंध हमारी आंखों की तंत्रिकाओं से होता है। आंख में, जरा ऊपर एक अश्रुग्रंथि होती है जिसमें एक खारे घोल का स्राव होता रहता है जो आंख की पुतली को धोकर स्वच्छ करता रहता है। धूल या किसी अन्य विजातीय कण से आंख की रक्षा करने की जिम्मेदारी आंसुओं पर होती है। प्याज काटने से उसमें उड़ने वाले कुछ कण आंखों में भी जा पड़ते हैं जो आंख को सह्य नहीं होते और घ्राणेंद्रिय के कारण पहले से ही उत्तेजित अश्रुग्रंथि आंख की हिफाजत के लिए आंसू बहाना शुरू कर देती है।

सिर पर आधा प्याज रखकर प्याज काटने से आंसू बंद होने का तरीका आपने भले ही आजमाया हो, हमारा कहना यह है कि एक बार प्याज की गंध अपना काम करने लगे तो आधा प्याज क्या, प्याज का बोरा सिर पर रख लेने से भी आंसू बंद नहीं होंगे।

●

राजनेव, डालाचक, गुरदासपुर : नेत्रदान क्या है? इसकी शुरूआत कब और कैसे हुई?

नेत्रदान का अर्थ है, अपनी आंखें दान में दे डालना। शायद यह अकेला दान ऐसा है, जिसे आदमी मरने के बाद सम्पन्न कर सकता है। पहले के लोगों का कहना था कि आदमी से तो बैल अच्छा कि मरने के बाद भी उसकी खाल काम आ जाती है। अब यह बात नहीं। अब आदमी चाहे तो मरने से पहले अपनी आंखों की वसीयत किसी अनजाने अंधे के लिए कर सकता है।

कोई भी व्यक्ति किसी नेत्र-कोश में

जाकर नेत्रदान का फ़ार्म भरकर अपनी आंखों की वसीयत मानवता के लिए कर सकता है। फार्म में व्यक्ति को अपना नाम-पता तो लिखना ही होता है, एक ऐसे व्यक्ति का नाम-पता लिखकर उससे हस्ताक्षर भी कराने होते हैं, जो नेत्र-दानी की मृत्यु होने पर नेत्र-कोश को सूचना देने की जिम्मेदारी ले। नेत्र-दानी को अपना यह निर्णय अपने परिवार में तथा उत्तराधिकारियों को भी बता देना चाहिए क्योंकि जब तक उसका उत्तराधिकारी या इष्ट जन नेत्र-दान के कागजों पर हस्ताक्षर नहीं करेगा, डॉक्टर आंखें नहीं निकाल सकता। दूसरी बात यह है कि नेत्र-दानी की मृत्यु की सूचना तुरंत दी जानी चाहिए; क्योंकि मृत्यु के बाद तीन घंटों के अंदर आंखें न निकाली जाएं, तो वे काम की नहीं रहतीं। पहले नेत्र-कोश की स्थापना १९४५ में न्यूयार्क में हुई।

●

अरविन्द हर्वे, इंदौर : भाषाओं की उत्पत्ति कैसे हुई? क्या सभी भाषाएं किसी एक भाषा से निकली हैं? इस कथन में कितना सत्य है कि सभी भाषाएं संस्कृत से निकली हैं? क्या संस्कृत से पहले किसी अन्य भाषा का अस्तित्व था? यदि हां, तो वह भाषा कौन-सी थी?

भाषाओं की उत्पत्ति का प्रश्न सदा से विवादग्रस्त रहा है, किंतु भाषाओं से पहले बोलियां अस्तित्व में आयी।

ऐसा नहीं लगता कि सभी भाषाएं किसी एक भाषा से निकली होंगी। अलग-अलग बोलियां अलग-अलग जलवायु और परिस्थितियों से प्रभावित हुई होंगी।

संस्कृत इतनी प्राचीन भाषा नहीं है जितना उसके कुछ उत्साही समर्थक समझते हैं। ३,१०० ई. पू. में सुमेर सभ्यता के लोग एक तरह के भाषा-संकेतों का विकास कर चुके थे। ३,००० ई. पू. में मिस्र में भी इस प्रकार के भित्तिलेख और

चित्रलेख मिलते हैं, यद्यपि उन्हें बाकायदा भाषा की संज्ञा नहीं दी जा सकती। हां, इसमें संदेह नही कि लिखित भाषा के रूप में संस्कृत विश्व की प्राचीनतम भाषाओं में से एक है। आज दुनिया में प्रयुक्त होने वाली भाषाओं की संख्या कम से कम ३,००० और अधिक से अधिक ६,००० है। इन सभी की उत्पत्ति संस्कृत (या किसी भी अन्य एक) भाषा से हुई हो, यह तर्कसम्मत नही लगता।

●

चलते-चलते एक प्रश्न और ...

कु. क. ख. ग. : मनुष्य ने दर्पण का आविष्कार क्यों किया?

इसलिए कि शृंगार करती हुई पत्नी को देख-देख कर झुंझला सके।

—बिन्दुभास्कर ●

चिंता

मंत्रीजी कह रहे थे—
रात बारिश बहुत तेज थी
सुना है, आंधी-पानी से
शहर में गिर गये हैं कई घर
अफसर ने कहा—
वह तो ठीक है, पर आपको
जुकाम तो नहीं हुआ, सर ?

—रमेश यादव

खुशी

खुशी एक आहट है
जिसके लिए
दौड़ कर द्वार खोला जाता है
पर मालूम पड़ता है
वह तो पड़ोसी के घर आयी है

—कृष्ण विहारी पाण्डेय

पांव

गीतों के घुंघरुओं का बजना
निर्भर करता है इस बात पर
कि कितने थिरकते हैं
पीड़ा के पांव

—परमानन्द अनुज

काश !

सीता नहीं
उर्मिला बनने की सीख
मिली होती
हर पत्नी को . . .
तो, घर-गृहस्थी के झंझट से
कुछ वर्षों के लिए तो
मुक्ति मिल जाती
बेचारे पति को . . .

—राजेश जोशी

धर्मनिरपेक्ष

न हिंदू चाहिए
न मुस्लिम चाहिए
केवल चाहिए 'अधर्मी' आज
क्योंकि यह है धर्मनिरपेक्ष राज !

—वीणा

मशीन

अंतड़ियों में
कहीं कुछ खिंच रहा है
सौ की जगह
काम कर रही है
एक मशीन
और भूखा आदमी देख रहा है
अपोलो का प्रस्थान !

—शिवशंकर अवस्थी
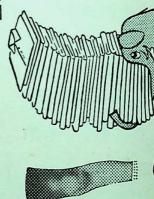
• शुभा वर्मा

कनाडा के लेखक एल्विन टॉफ्लर के अनुसार, हम आठ सौवीं जिंदगी जी रहे हैं। अगर पिछले पचास हजार सालों के 'जीवन-वर्षों' को प्रति 'जीवन-वर्ष' अनुमानतः बासठ मानकर विभाजित करें तो करीब आठ सौ जिंदगियां बनती हैं। इन आठ सौ जिंदगियों में से पूरी छह सौ पचास जिंदगियां गुफाओं में गुजरी हैं। पिछली सत्तर जिंदगियों के बारे में ही हमें कुछ पता चलता है। छह जिंदगियों में लिखने-पढ़ने का प्रचार-प्रसार हुआ है, चार जिंदगियों में समय को बारीकी से परखा गया है और दो जिंदगियों या 'जीवन-वर्षों' से हम बिजली के करीब आये हैं।

विकास की इस प्रक्रिया से स्पष्ट हो जाता है कि परिवर्तन की गति निरंतर बढ़ती रही है, और आज तो परिवर्तन एक ऐसा चमत्कार बन गया है जिसमें देखते-देखते 'था' 'है', और 'है' 'होगा' में बदल जाता है, लेकिन फिर भी आसानी से कोई इसे स्वीकारता नहीं, सजग रहना तो दूर की बात है। संस्कृतियों का इतिहास इस बात का गवाह है कि परिवर्तनों को किस सीमा तक झुठलाया गया है, किस हद तक इसकी उपेक्षा हुई है। लेकिन क्या यह रोका जा सका है? अरस्तू पहला व्यक्ति था जिसने तर्क की कसौटी पर कसकर परिवर्तन को पहली बार मान्यता दी थी। तभी से इसे स्वीकारा जाने लगा। इसकी प्रगति हुई। मानव-जीवन का परिवर्तन उसके विकास में मुखरित हुआ। परिवर्तन की गति इतनी

पांच वर्ष पूर्व कनाडा में एक ग्यारह-वर्षीय बालक की मृत्यु एक अजीब 'बीमारी'—'प्रोजीरिया' यानी समय से पूर्व बुढ़ापा से हुई। ११ वर्ष का यह बालक वृद्धावस्था का शिकार हो गया। इस सम्बंध में बहुचर्चित पुस्तक 'फ्यूचर शॉक' के रचयिता एल्विन टॉफ्लर का कहना है कि यह 'घटना' पश्चिम में तेजी से हो रहे एक नये परिवर्तन का संकेत है—बहुत-से लोगों के साथ, बड़ी तेजी से, बहुत-सी बातें हो रही हैं, उनमें असमय बुढ़ापा भी एक है। यहां हम इसी पुस्तक के बारे में कतिपय महत्त्वपूर्ण जानकारी दे रहे हैं

तेज होती जा रही है कि भविष्य के लिए एक खतरा पैदा होने लगा है।

१९६७ में कनाडा में एक बच्चा ग्यारह साल की उम्र में मर गया। डॉक्टरों के अनुसार मौत का कारण बुढ़ापा था। ग्यारह वर्ष का बच्चा और बुढ़ापा ! दो नितांत विरोधी बातें ! लेकिन फिर चमत्कार भी तो होते ही हैं ! और इन्हीं चमत्कारों में कभी-कभी भविष्य की झलकियां भी मिल जाती हैं। एल्विन महोदय ने भी शायद ऐसा ही कुछ महसूस किया होगा।

एक जमाना था जब किस्मत का हवाला देकर हम आने वाले समय का मुकाबला करते थे। अब किस्मत की दलील हमें संतुष्ट नहीं कर पाती। हम किस्मत से आगे कुछ और देखना-समझना चाहते हैं। किसी समय कल्पना की गति तेज मानी जाती थी। आज परिवर्तन की गति ने कल्पना को कुंठित कर दिया है। हम सोच भी नहीं सकते कि परि... की गति हमें कहां ले जाकर छोड़ दें... पुरानी पीढ़ी बदलते हुए मूल्यों को मा... नहीं। नयी पीढ़ी पीछे मुड़कर क्यों दे... उसका वर्तमान है यौन-संबंधों की कु... नशा, पोशाक—और इनमें भी अब को... नवीनता नहीं। परिवर्तन दोनों ही के लि... एक हौवा बन गया है। लोग महसूस क... हैं कि कुछ बदल रहा है, लेकिन क्या बदल रहा है, कहां बदल रहा है, बदल... रहा है या नहीं—कोई जानना न... चाहता। जानता भी है तो मानता नहीं। पहले जिंदगी का दायरा सौ साल से ऊ... था। अब जिंदगी पचास साल से भी क... रह गयी है। एल्विन टॉफ्लर ने अ... 'फ्यूचर शॉक' में कहा है कि भविष्य में शायद यह सिर्फ बारह साल की रह जाए... क्योंकि विकास की रफ्तार बड़ी तेज है।

निस्संदेह परिवर्तन इस शाश्वत ज... की जरूरी मांग है। और जब वह जरू...

मांग पूरी हो रही है तो द्विविधा, अनिश्चय, विकराल रूप धारण करके आदमी को क्यों डरा रहे हैं ? एल्विन टॉफ्लर का कहना है कि इसीलिए उन परिवर्तनों के पीछे आदमी अंधा होकर भाग रहा है।

तब क्या परिवर्तनों को रोक दिया जाए ? उसे संतुलित किया जाए, नये समाज के नयेपन में आदमी उलझकर न रह जाए। विभिन्नता की बाढ़ में हाथ-पैर छोड़कर इस कदर न बहे कि कुछ तय करना असम्भव हो जाए। 'क्या करें, क्या न करें' का विवेक उसके पास बना रहना आवश्यक है।

उत्तर-औद्योगिक 'हाई वोल्टेज' से भविष्य में हादसे और भी होंगे। विशेषज्ञों का कहना है कि परिवर्तन जितनी तेजी से होते हैं, उतनी ही गम्भीरता से शारीरिक बीमारियां बढ़ती हैं और उम्र का दायरा कम होता जाता है।

'भविष्य की विकासशील दुनिया' में औसत आयु बारह वर्ष न हो, इसके लिए सतर्कता अभी से जरूरी है। होने वाले परिवर्तनों को एक संतुलित रूप दिया जाए। विकास के नाम पर किसी भी परिवर्तन को स्वीकार लेना विवेक नहीं है। उसके लिए नयी योजना, नयी नीति, समय को देखते हुए नितांत नयी शिक्षा-पद्धति, नयी सक्रिय संस्थाएं जरूरी हैं। चकाचौंध के बाद की स्थिति को देखने के लिए आंखों में ठहराव चाहिए। टेकनॉलॉजी को सामाजिक और राजनीतिक

स्तर पर काबू में रखना जरूरी है।

कहते हैं आदमी के जीवन में परिवर्तन जरूरी है या परिवर्तन ही जीवन है। दोनों बातों में कोई अंतर नहीं, लेकिन असंतुलित, दिशाहीन, असीमित परिवर्तन आदमी का शत्रु भी है। अगर यह अंकुश में है तो एल्विन टॉफ्लर द्वारा सुझाये हुए भविष्य के हादसे से बचाव हो सकता है। साथ ही एक स्वस्थ, विकसित, संतुलित जिंदगी का हकदार भी आदमी बनता है। वरना परिवर्तनों से उत्पन्न इस आग ने आज पश्चिम की उत्तर-औद्योगिक सभ्यता को झिंझोड़ दिया है। परिवर्तन या विकास एक आतंक बनकर मनुष्य के मन-मस्तिष्क पर छाता जा रहा है कि आखिर प्रगति के ये चरण कहां रुकेंगे ! ●

● के. सी. वर्मा

सन् १८५९ में मैक्समूलर ने घोषित किया कि वेद-मंत्रों की रचना १२०० वर्ष विक्रमी-पूर्व हुई थी। तीव्र आलोचनाओं के बाद उन्होंने स्वीकार किया कि निश्चित ही वेद-मंत्रों की रचना कम-से-कम ३,००० वर्ष विक्रमी-पूर्व हुई थी। उसी समय से वैदिक सभ्यता की प्राचीनता तथा आर्यों के भारत-आगमन की समस्याएं प्रत्येक भारतविद (इंडोलॉजिस्ट) को असमंजस में डाले हुए हैं।

निश्चित तो इतना ही कहा जा सकता है कि यदि आर्य बाहर से आये, तो उनके आगमन-काल और वैदिक काव्य के सृजन के बीच समयांतर इतना अधिक था कि दंतकथाओं द्वारा प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष यह संकेत कहीं भी नहीं मिलता कि वेदों के रचयिता ऋषि-मुनियों को अपने पूर्व-पुरुषों के मूल निवास के बारे में पता था।

यह बीच का काल कितना लम्बा था? इसकी कल्पना यह सोचकर की जा सकती है कि इस वैदिक साहित्य की सुरक्षा के लिए ही संहितापथ, पादपथ, ज्ञानपथ, कर्मपथ आदि की रचना की गयी जो शायद विश्व-साहित्य के इतिहास में एक अद्वितीय प्रयास है। इस प्रयास की सफलता इस तथ्य से आंकी जा सकती है कि ५,००० वर्ष के बाद भी वैदिक मंत्र अपने मूल रूप में हैं।

लोकमान्य तिलक तथा जरमन विद्वान हरमान जैकोबी ने अलग-अलग, पर लगभग एक ही समय, सन् १८९३ में, वैदिक साहित्य में नक्षत्र-विद्या से सम्बंधित श्लोकों पर खोज की। दोनों ही इसी निष्कर्ष पर पहुंचे कि वैदिक काल ४,५०० ई. पू. में आरम्भ हुआ जब मृगशिरा-नक्षत्र तथा वसंत-विषुव (जब रात-दिन बराबर हो जाते हैं) एकसाथ घटित हुए थे। बाद के तीन वेदों, ब्राह्मण-साहित्य और उपनिषदों की रचनाएं २,५०० ई. पू. में हुईं जब वसंत-विषुव और कार्तिक-नक्षत्र एकसाथ

समाजवादी लोकतंत्र ही एक मात्र सच्चा लोकतंत्र है

समाज के प्रत्येक वर्ग को केवल अपने स्वार्थ के ही लिये नहीं, वरन सभी की भलाई के लिये काम करना चाहिए। इसी भावना से काम करने पर वह अवस्थाएं पैदा हो सकती हैं, जिनमें मानवता की सभी शक्ति ऊंचा से ऊंचा विकास करने में लग सकती है।

—श्रीअरविन्द
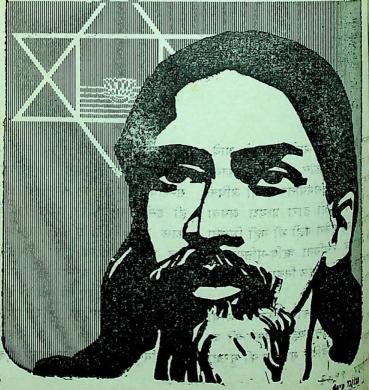
घटित हुए थे।

पुनः तिलक ने मांडले जेल में सन १९०८ तथा १९१४ के बीच 'गीता-रहस्य' की रचना की तो उन्होंने देखा कि उपनिषद में यह तिथि १६८० विक्रमी-पूर्व थी। तत्पश्चात वैदिक साहित्य के रचना-काल के बारे में प्रसिद्ध वेदविदों, जैसे—पी. सी. सेनगुप्त, बी. वी. कामेश्वर अय्यर, केतकर, कर्णादिकर, शंकर बालकृष्ण दीक्षित, गोरखप्रसाद, मेघनाथ साहा, जोगेशचन्द्र रे, नरेन्द्रनाथ लॉ तथा अन्य अनेक विद्वानों ने व्यक्तिगत रूप से नक्षत्र-विद्या प्रणाली के माध्यम से खोजें कीं।

ये सभी विद्वान एक ही निष्कर्ष पर पहुंचे—

(क) सेनगुप्त ने यह स्पष्ट किया कि ऋग्वेद (भाग ४०, ५–९) में उल्लिखित केवल एक सूर्यग्रहण २६ जुलाई, सन ३९२८ ई. पू. में लगा था।

(ख) कामेश्वर अय्यर ने छानबीन के दो मार्ग बताये—एक वेद-मंत्र में वर्णित नक्षत्रों आदि पर आधारित तथा दूसरा ऋतु और वर्षारम्भों के अनुसार। इनसे यही निष्कर्ष निकला कि ब्राह्मण-काल लगभग २,५०० वर्ष विक्रमी-पूर्व आरम्भ हुआ था।

(ग) लॉ ने सिद्ध किया कि तिलक और जैकोबी के विरुद्ध जो आलोचनाएं ह्विटने, विंटरनित्ज, मैकडॉवेल, कीथ आदि विद्वानों ने प्रस्तुत कीं वे सब गलतफहमियां थीं तथा तिलक और जैकोबी द्वारा दर्शाये वैदिक साहित्य के सही अर्थों को न समझ पाने के कारण उपजी थीं।

तिलक और जैकोबी द्वारा की गयी खोजों की पुष्टि ऐतिहासिक, आंकिक, जीव-वैज्ञानिक तथा पुराणों में वर्णित युगगान-प्रथा द्वारा बार-बार हो चुकी है।

सम्राट हिट्टाइट (तुर्की) के शाही अभिलेखागार की खोज सन १९०७ में जरमन पुरातत्ववेत्ता ह्यूगो विंक्लर ने की। इस महत्त्वपूर्ण खोज के बाद इस समस्या पर वाद-विवाद का एक और रास्ता खुल गया। विंक्लर को १०,००० से भी ज्यादा अभिलिखित मिट्टी की ईंटें मिलीं, जिनमें उस संधि का विवरण है जो हिट्टाइट तथा मितान्नि के राजाओं के बीच १,४०० ई. पू. में हुई थी। इस संधि में पांच देवों का उल्लेख है।

सबसे पहले जैकोबी ने सन १९०९ में यह निष्कर्ष निकाला कि उपर्युक्त पांच देव वैदिक काल के बाद के हैं, पर वैदिक काल १,५०० से लेकर १,२०० ई. पू. तक बताने वाले विद्वान जैकोबी के निष्कर्ष से सहमत नहीं हुए। इन विद्वानों के एक दल का, जिनमें 'मिस्र-अध्ययन-विशेषज्ञ' एडवर्ड मेयर शामिल थे, विचार था कि १,४०० ई. पू. तक भारत तथा यूरोप का विच्छेद नहीं हुआ था। गोल्डनबर्ग, कीथ आदि विद्वानों का मत था कि इन देवों के वर्णन का काल भारत-यूरोप विच्छेद के बाद तथा भारत-ईरान

काल के पहले का था।

सन १९४७ में पी. ई. ड्यूमांत, वोलफ्रॉम वॉन सॉडेन, एच. क्रोनासर तथा अन्य विद्वानों ने सिद्ध किया कि नूजी और सीरिया की प्राचीन पुस्तकों में कम-से-कम बीस ऐसे नाम आये हैं जिनका जन्म संस्कृत भाषा से हुआ है और इनका सम्बंध १८वीं शताब्दी विक्रमी-पूर्व से है। यह भी प्रमाणित किया गया कि १४वीं शताब्दी वि. पू. में घोड़ों की शिक्षा के सम्बंध में प्रयुक्त तकनीकी शब्द भी संस्कृत से उद्भूत हैं।

आश्चर्य तो यह है कि प्रोफेसर डब्ल्यू. एफ. ऑलब्राइट तथा टी.ओ. लैम्बिडन ने 'कैम्ब्रिज ऐंशियेंट हिस्ट्री' (भाग १) के अनुसार यह स्वीकारा है कि भारत में आर्यों का आगमन १४–१५वीं शताब्दी ई. पू. के बजाय १८वीं शताब्दी ई. पू. में हुआ। फिर भी ये दोनों विद्वान मॉर्टीमर व्हीलर तथा स्टुअर्ट पिगॉट आदि से इस सम्बंध में सहमत हैं कि अर्ध-सभ्य आर्यों ने युद्ध-देवता इंद्र के नेतृत्व में भारतीय सभ्यता नष्ट की और ऋग्वेद में एक महान सभ्यता के विनाश का वर्णन है।

वेद और शब्दज्ञान के ज्ञाता थीम ने यह बताया कि वैदिक साहित्य में कोई भी प्रमाण नहीं मिलता जो यह सिद्ध करे कि आर्यों ने हड़प्पा की [illegible] नष्ट की थी।

यह बताना असंगत न होगा कि [illegible] और अमरीकी विद्वान अब भी भा[illegible] आर्यों के आगमन के समय के [illegible] १,५०० ई.पू. पर अड़े हैं, हालांकि [illegible] सत्य है कि भारत-यूरोपीय उद्गम [illegible] ग्रीसवासियों के ग्रीस में आगमन का [illegible] १,२०० वि. पू. से, बढ़ा कर १,९०० वि[illegible] और अब २,३०० वि. पू. माना जाने [illegible] है। ल्यूवियन-भाषी भारोपीयों का [illegible] तोलिया में आने का समय तो ३,०[illegible] २,८०० वि. पू. निश्चित किया गया है।

यह विचित्र बात है कि कई भा[illegible] विद वैदिक साहित्य की प्राचीन [illegible] मानने में संकोच करते हैं, किंतु [illegible] असीरिया-अध्ययन-विशेषज्ञ भी मानते [illegible] कि संधि में वर्णित देव वैदिक काल [illegible] उपरांत के हैं। भंडारकर ओरियंटल [illegible] इंस्टीट्यूट' के डॉ. पुशालकर का यह [illegible] भी इनमें से कुछ विद्वान मानते हैं [illegible] भारतीय आर्य सिंधु-घाटी के नगरों [illegible] पहुंचकर वहां की सभ्यता को बढ़ाने [illegible] सहायक हुए थे, नष्ट करने में नहीं।

इन शोधों के संदर्भ में संगत [illegible] होगा कि ऋगवेद का रचना-काल [illegible] आर्यों के आगमन-काल का पुनःनिर्धा[illegible] किया जाए।

—अनु. मी[illegible]

मैं परमात्मा से डरता हूं, और उसके बाद उस व्यक्ति से डरता हूं जो परमात्मा से नहीं डरता।

—शेख सादी

चित्र: सूरज एन. शर्मा

चित्रों में आखेट

● मोहनलाल गुप्त

आखेट का इतिहास उतना ही प्राचीन है जितना स्वयं मनुष्य का। प्रागैतिहासिक युग में जब मनुष्य गुफाओं में रहता था तब जानवरों को मारकर उनका मांस खाता था और उनके चमड़े से अपना शरीर ढकता था। आखेट के लिए वह जिन शस्त्रों का प्रयोग करता था वे पत्थरों को काट-छांट कर बनाये जाते थे। शिकार के अनेक दृश्य गुफा-भित्तिचित्रों में उपलब्ध हैं। मिर्जापुर, रामगढ़, होशंगाबाद, चम्बल घाटी, पचमढ़ी, भोपाल आदि स्थानों में प्राप्त भित्तिचित्रों से पता चलता है

राजा और रमणियां — सतीश गुजराल की मौलिक कलाकृति

राजा और रमणियां
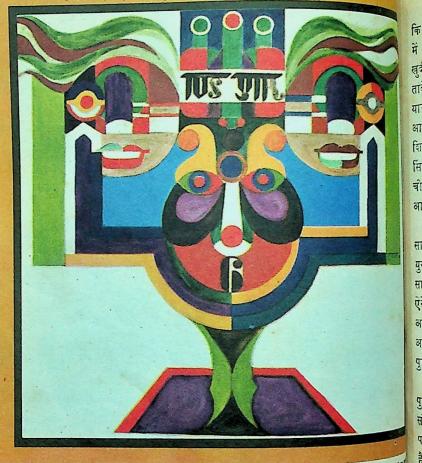
उनकी कहानियां कुछ अध्यायों में नहीं बल्कि पूरी पुस्तकों में लिखी गई हैं। वह हमें ऐसे युग की याद दिलाते हैं जिसकी मानव-कथाओं में कोई तुलना नहीं मिलती। वह हमें आकर्षित करते हैं क्योंकि यही स्त्री पुरुष हैं जो जीवन को पूर्ण रूप में सार्थक करते हैं।

वह केवल काले और सफेद से सन्तुष्ट नहीं। वह अपनी कल्पना शक्ति से एक ही रंग में लाखों रंग देखते हैं और हर रंग को पहचान सकते हैं। उनकी यह कल्पना शक्ति उन्हें हर सांस में एक सम्पूर्ण आनन्दमय जीवन की झलक देखने में समर्थ करती है।

यही स्त्री और पुरुष जो यौवन के अमृत का पान करते हैं, जिनके लिए जीवन नई उमंग लेकर आता है, वह लोग हैं जिन्हें मोदीपोन सन्तुष्ट करने का प्रयास करता है। परन्तु स्वयं मोदीपोन कभी सन्तुष्ट नहीं होता। वह हमेशा नई सम्भावनाओं, नए रंगों की तलाश में रहता है। मोदीपोन हर समय खोज में लगा रहता है।

कि आदिम मानव आखेटक था। राजस्थान में कालीबंगा, आहाड़, बागोर, गिलूंड, खुर्दी स्थानों की खुदाइयों में पत्थर और तांबे के हथियार मिल चुके हैं। इन हथियारों में छेनी, दरांती, गदा, तीर, चाकू, आरा आदि हैं। जिन पशु-पक्षियों का शिकार उस युग में होता था उनमें बारहसिंगा, शूकर, गैंडा, सांभर, सेही, भैंसा, चीता, शेर, घोड़ा, हाथी, बंदर, मयूर आदि के नाम गिनाये जा सकते हैं।

कालांतर में मानव की प्रगति के साथ लौह का प्रयोग होने लगा। लौह-युग से हथियारों में विविधता आयी और साथ ही शिकार की विधियों में भी। ऐसे हथियार नोह, सांभर, रेढ़, रंगमहल आदि स्थानों में मिले हैं। रेढ़ की सामग्री आमेर संग्रहालय में तथा सांभर की जयपुर संग्रहालय में है।

पौराणिक कथाओं, साहित्य और पुरातत्वीय आधारों पर शिकार के अनेक संदर्भ मिलते हैं। भरहुत के एक शिलापट्ट पर शूकर-आखेट का दृश्य अंकित है। महाकपि जातक में वाराणसी के राजा का तलवार, भाले, कटार, धनुष लिये योद्धाओं-सहित, बानरों को मारने का वर्णन है। अजंता की गुफा नं. १७ में जातक-कथा में राजा, मंत्रियों-सहित, घोड़ों पर तरकश भरकर शिकार हेतु जाता दिखायी देता है। व्याघ्र को धनुष बाण से मारते हुए, समुद्रगुप्त का अंकन है। कादम्बरी, रघुवंश, रामायण, मालविकाग्निमित्र, अभिज्ञान शाकुंतल में आखेट के प्रचुर वर्णन हैं। राजस्थान की मध्यकालीन प्रतिमाओं में भी शिकार के दृश्य हैं। चित्रों में सोलहवीं शती के शिकार के चित्र मुगल शैली के अधिक हैं। राजस्थान में बैराठ और भारमल की छत्री (आमेर) के भित्तिचित्रों में भी शिकार के दृश्य हैं।

सूअर का शिकार
मेवाड़ शैली (१८ वीं सदी)

अकबर को चीतों द्वारा शिकार कराने का बड़ा शौक था। चीतों को पिंजड़े में रख अभ्यास कराया जाता था। चीतों को अकबर ने आठ श्रेणियों में विभा-

जित किया था। श्रेणियों के अनुसार ही उन्हें खुराक दी जाती थी। उनकी पीठ पर जवाहरातों से जड़ी गद्दियां होती थीं और उन्हें गलीचों पर बिठाया जाता था। शिकार-स्थल पर उन्हें आंख पर पट्टी बांध और गाड़ी में बैठा कर ले जाया जाता था। एक चीते ने हरिण को पकड़ने के लिए बहुत बड़ी खाई पार की। इस पर उसको 'चीता-ए-खास' का खिताब दिया गया। उसके आदर में सवारी के समय नक्कारे बजाये जाते थे।

जहांगीर और अकबर को हाथियों एवं जानवरों की लड़ाई देखने का शौक था। नूरजहां ने एक बार गोली से छह शेर एकसाथ मारे थे।

लोहे की छड़ों का एक मजबूत पिंजरा उस स्थल पर रख दिया जाता था जहां शेर प्रायः आते-जाते रहते थे। पिंजड़ा खुला रहता था और अंदर बकरा बंधा रहता था। शेर के अंदर घुसते ही कम्पन से पिंज़रा बंद हो जाता था।

एक विषाक्त बाण को हरे रंगे हुए धनुष पर लगाकर पेड़ की शाखा से यों बांधते थे कि तनिक कम्पन से बाण चल जाए। जब शेर वहां से होकर निकलता तो बाण सिंह को वेध देता और वह मर जाता था। एक साहसी और अनुभवी शिकारी भैंसे पर सवार होकर शेर के सामने आता और भैंसे को लड़ा[illegible] भैंसा शीघ्रता से शेर को अपने सींगों [illegible] रख लेता था और उसको इतना [illegible] उछालता था कि शेर नीचे गिर कर [illegible] जाता था।

हरिण भी शिकार के लिए प्रशि[illegible] किया जाता था। हरिण के सींग पर [illegible] जाल बांध देते थे। फिर उसे वन्य ह[illegible] के सामने छोड़ दिया जाता था। [illegible] हरिण पालतू हरिण से लड़ता। [illegible] सींग एवं पैर जाल में फंस जाते थे [illegible] झाड़ी में छिपे शिकारी उसे पकड़ लेते [illegible] हरिण पकड़ने की एक और प्रणाली [illegible] हेरा' थी। शिकारी एक ढाल या [illegible] को उलटा पकड़ता और उसकी [illegible] प्रकाशित दीपक रखता था। फि[illegible]

भाले से शिकार : मेवाड़ शैली

घंटा बजाने लगता था। दीपक के प्रकाश और घंटे की आवाज से हरिण उस स्थान की ओर आकर्षित हो जाता था। तब छिपे हुए शिकारी उसे बाणों से मार देते थे। शिकारी गीत गाकर भी हरिणों को मोहित कर लेते थे।

सूअर के शिकार का बहुत प्रचलन था। वह मरने के आखिरी वक्त तक शिकारी से जूझता रहता था। दो शेरों के बीच सूअर पानी पीने का साहस कर सकता था। शेर को अपनी दांतुली के झटके से अधमरा कर सकता था और घोड़े को शिकारी सहित जमीन पर ला पटकता था। कटार हाथ में लेकर घोड़े की पीठ से सूअर को मारना अदम्य साहस और कुशलता का काम समझा जाता था। घोड़े पर बैठकर सूअर का पीछा करते हुए उसपर भालों का प्रहार किया जाता था। कभी-कभी भाला टूट कर सूअर की पीठ में घुसा रह जाता था। उस समय सूअर में प्रतिशोध की ज्वाला भड़क उठती थी। बाज, शाहीन, शुनगार, बाशा, बहरी, शिकरा, तुरमती, लगड़ और झगड़ को पाला जाता था और उनसे शिकार का काम लिया जाता था। मोल-चीन कुलंग का शिकार करता था। कव्वां, गवरैयां, बोदना और शारू को भी शिकार की शिक्षा दी जाती थी। यदि बाज शिकार को जीवित या मृत पकड़ लाता था तो पारितोषिक बाज की चतुराई तथा शिकार के आकार के विचार से दिया जाता था।

राजस्थान में आबू पर्वत से लेकर कुम्भलगढ़, चम्बल घाटी होते हुए मध्य-प्रदेश की सीमा झालावाड़ तक घने जंगल थे जो शिकार के लिए उपयुक्त थे।

श्री गोपीकृष्ण कानोड़िया (कलकत्ता) के संग्रह से कोटा-शैली का एक चित्र डगलस बैरट की 'भारतीय चित्रकला' पुस्तक में प्रकाशित हुआ है जिसमें महा-राजा रामसिंह द्वारा शेर के शिकार का दृश्य है। ओदी चारों ओर से बांसों के जंगल से ढकी है और सामने छोटा जला-शय है जिसमें शेर पानी पीने आया है। पेड़ से भैंसा बंधा हुआ है। हरिण गोली की आवाज से भाग रहे हैं। एक शेर मर चुका है और दूसरा गरज कर उछल रहा है।
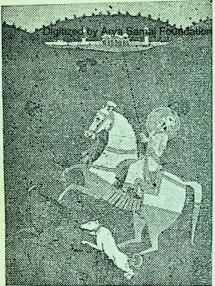
शिकार : किशनगढ़ शैली (१८वीं सदी)

रामसिंह मखमल के नीले चोगे में दिखाये गये हैं और गोली चला रहे हैं। रानियां भी बंदूक से शेर का शिकार करती दिखायी गयी हैं। ऐसा एक चित्र आर्चर की पुस्तक में प्रकाशित है, जो बूंदी-शैली का १८४० ई० का सुंदर प्रमाण है।

श्री विजयवर्गीय के संग्रह में बीकानेर-शैली के राजा गोपालदास माचेड़ी के बड़े सुंदर चित्र हैं जिनमें वे हरिण, सूअर और बत्तखों का शिकार कर रहे हैं। एक अन्य चित्र में रानियां हरिण का शिकार कर रही हैं। ये चित्र बीकानेर-शैली के उत्तम चित्र कहे जा सकते हैं। चित्रों को देखने से पता चलता है कि शिकार के समय मूंगिया रंग के कपड़े पहने जाते थे। शिकारी स्वयं को पत्तों से ढक लेता था ताकि जानवर सशंकित न हों। घुटने तक चमड़े के मोजे पहनकर उनमें पाजामे की मोहरी डाल लेते थे। वस्त्रों के ऊपर जिरह[illegible] कोठा, चहलता, कंटोप और दस्ताने [illegible] लिये जाते थे, पर विशेषकर [illegible] पशुओं के शिकार के समय कमरबंद में [illegible] तलवार, कटार आदि लगे होते थे।

श्री संग्रामसिंह, जयपुर के संग्र[illegible] कोटा-शैली के अद्वितीय चित्र हैं जि[illegible] कोटा क्षेत्र का प्राकृतिक चित्रण, [illegible] चट्टानें, सूखे हुए जंगल, उनके बीच [illegible] शिकार की ओदियां और भागते हुए [illegible] पक्षियों का चित्रण बहुत ही सजीव [illegible] कोटा-शैली (१७४० ई.) में बना सूअर [illegible] शिकार का चित्र बड़ा आकर्षक है, जि[illegible] बांसों का झुरमुट, पहाड़ी का ढलान [illegible] घोड़े पर बैठकर भोज का सूअर पर [illegible] टना बहुत ही वेगपूर्ण है। इसी प्र[illegible] महाराजा उम्मेदसिंह कोटा का (१[illegible] ई.) मचान से बंदूक द्वारा शेरों को [illegible] का चित्रण है जिसमें शेर उछलकर [illegible] के ऊपर तक खड़ा हो गया है। [illegible] शिकार के चित्र भीखा, साहजी, [illegible] और जुगारी कलाकारों के बनाये उ[illegible] हुए हैं। बीकानेर-शैली में अधि[illegible] हरिण के शिकार के चित्र हैं। ज[illegible] शैली में शिकार के चित्र बहुत कम [illegible] प्रतीत होते हैं। किशनगढ़-शैली में [illegible] यही प्रवृत्ति मिलती है। आर्चर की पु[illegible] 'भारतीय चित्रकला' में राजा उम्मेद[illegible] कोटा का शिकार का एक चित्र प्रका[illegible] हुआ है जो एलबर्ट म्यूजियम [illegible] में सुरक्षित है।

तीन ताल

•

खम्भों पर चढ़ गयी रोशनी

खम्भों पर चढ़ गयी रोशनी
जो दिन भर थी राहों पर
लोग कह उठे——रात हुई
अंधियारों ने
पर फैलाये
सड़कों से गलियारों तक
जैसे खबरें
फैला करतीं
शहरों से अखबारों तक
पहर-पहर लिख रही रोशनी
अनगिन लेख गुनाहों पर
दुनिया स्याह दवात हुई
लोग कह उठे——रात हुई
सारे दिन की
थकन बांधकर
लौटी घर को चहल-पहल
जैसे तट छूकर
लौटी हों
सागर की लहरें चंचल
सिर रखकर सो रही रोशनी
श्यामल तम की बांहों पर
हर तारे से बात हुई
लोग कह उठे——रात हुई

—कुंअर—

स्वीकृति

कगारों को तोड़कर उफनता हुआ
सागर-ज्वार अब लौट गया...
बच रही है
डूबती-तिरती लहरों पर
खंडित प्यार की अनुगूंज
अब तक जो दिया, वह झूठ
जो लिया, सब भ्रम
जो जिया, वह शंख-सीपी-सा
तट पर ही छूट गया
सार्थक क्षणों में कहा-सुना
सब गलत
सच थे, ये नन्हे-नन्हे कंकरीट
जिन्हें हमारे-तुम्हारे बीच
पुल बनकर उगना था
लेकिन, जो खड़ी कर गये
असमंजस की दुर्लंघ्य दीवारें
अंतहीन यात्रा के गीले अनुबंधों का
शब्द-पाश टूट गया।

—सुशील गुप्ता—

प्रश्न-चिह्न

टालो भी यार
और मुंह ढक कर सो जाओ
बड़े-बड़े दर्शन
'औ कर्म बहुत छोटे
क्या हुआ नहीं पहने
अगर सौ मुखौटे
बैठे-ठाले ही
कोई गीत गुनगुनाओ
शब्द अवज्ञा करते
अर्थ नहीं ढोते

दो-दो मिलकर हरदम
चार नहीं होते
जिद करें चुनौतियां
तो पहेलियां बुझाओ
राजपथों पर
सिर धुनती जययात्राएं
दिशाशूल की मारी
कहो कहां जायें ?
जागते सवाल
नींद की गोलियां खिलाओ

——उमाकांत मालवीय——

(बाजार के नुक्कड़ के पास बने छोटे तिकोने पार्क में कनात से घेरकर एक मिनी-नुमाइश लगी है। माइक पर फुल-वाल्यूम में 'ओ मेरी शर्मीली ...आओ न!' बज रहा है। धीरे-धीरे छात्र और छात्रा-नियों की भीड़ इस खुली कनात की ओर बढ़ रही है। पार्क के किनारे एक बड़ा बोर्ड लगा है-- 'मास्टरान और फर्स्ट डिवीजनरान आकर वक्त बरबाद न करें!'... पूरी नुमाइश एक बहुत लम्बी मेज पर लगी है, जिसपर ढेरों सामान चुना है और कई छात्र-छात्रानियां डिमांस्ट्रेटर-रूप में तरकीब-इस्तेमाल समझा रहे हैं...)

एक छात्र–प्यारे कामरेडो! इधर देखो! बेहतरीन चाकू और छुरे!... हर सब्जेक्ट के हर इनवीजीलेटर की साइज के हथियार!... डराने वाले अलग ...पेट में उतारने वाले अलग!... इधर देखिए! ये हैं वे आजमाये हुए छुरे जिनकी नोक पर नया इतिहास, केमिस्ट्री, बॉटनी वगैरा लिखी गयी है!...

एक छात्रा–आगे बढ़िए... बढ़ते चलिए! ....हैव ए लुक कामरेड्स!.... **(पर्चियों, पुर्जियों, गाइडों और कुंजियों का सजा हुआ ढेर दिखाकर)** आजमाये हुए नुस्खे!... पेटीकोट और गरारे से लेकर टाइट पतलून की हिप-पाकि[...] आसानी से सरकाये जाने योग्य प[...] सामग्री! ... प्यारे, तेंतीस परसेंटिये भा[...] और बहनो! न मैं कोई डाक्टर हूं [...] नर्स हूं! ... बल्कि आपकी तरह ही [...] परीक्षा-पीड़ित छात्रानी हूं!... कारी[...] के बेहतरीन नमूनों पर नजर डालि[...] ... आज ताजमहल के फनकार जिंदा [...] तो शायद पुर्जियों पर बना यह [...] काम देखकर आत्महत्या कर लेते! [...] इतिहास का पूरा फर्स्ट और सेकंड [...] सिर्फ माचिस की डिबिया पर अंकित [...] ... इनसानी अंगुलियों का कमाल!.. **(कुछ लड़के अपनी नोटबुकों पर [...] उतारने लगते हैं)**

दूसरा छात्र–बढ़ते चलो कामरेडो! [...] दूसरों को भी देखने-सुनने का मौका [...] एक नजर इधर भी!... इन पर्चि[...] पेंसिलों, रबड़ों, रूमालों और धूप के [...] पर परीक्षा की पूरी तैयारी! ... ध्यान [...] देखो! ...पूरे का पूरा सवाल रबड़ [...] हल है! ... तरकीब-इस्तेमाल के [...]

● के. पी. सक्सेना

पचास पैसे वाला बुकलेट खरीदो ! . . . कामयाबी कदम चूमेगी !

दूसरी छात्रा—एक नजर इधर भी ! . . . पचास पेज की पूरी गाइड पचास पैसे में ! . . . कापियां सरकाने, पर्चे पास करने, कापियां बदलने, बाथरूम में नोट्स कनसल्ट करने, . . . इक्जामिनर का पता लगाने और मस्का मारने के आजमाये हुए नुस्खे ! . . . सिर्फ पचास पैसे ! . . . परीक्षार्थी हितकारी यूनियन की अनुपम भेंट ! ....ओनली फिफ्टी पैसे !

(कई लड़के-लड़कियां गाइड खरीदते हैं).

एक हिप्पीनुमा छात्र—भीड़ से बच कर इधर निकल आओ प्यारो ! . . . देखो और गुनो कि जमाना कहां से कहां सरक गया ! ...इस स्टाल को ठाकुरद्वारा न समझो..जरा बारीकी से समझो कामरेडो ! ..

(एक ऊंची चौकी पर तीन-चार टीचर-नुमा लोगों की तसवीरें फ्रेम में मढ़ी रखी हैं, उन पर ताजे हार चढ़े हैं और अगरबत्तियां सुलग रही हैं। . . . चौकी के नीचे एक महीन दुपट्टा रखा है जिस पर महीन कलम से नोट्स लिखे हुए हैं . . . पास ही एक रेकार्ड-प्लेयर पर धीमे स्वर में गाना बज रहा है—'इन्हीं लोगों ने ले लीना दुपट्टा मेरा ...)...प्यारे कामरेडो! ...) इन्हीं लोगों ने सिर्फ दुपट्टा ही नहीं बल्कि कमीजों की आस्तीनें और पाजामों के पांयचे तक ले लिये ! ... अपने दुपट्टों, पाजामों, कुर्तों वगैरा का साहित्य इनके निर्मम हाथों से बचाने के लिए हमारी यह बुकलेट हाजिर है ! ....दाम वही पचास पैसे ! ....सिर्फ पचास पैसे !
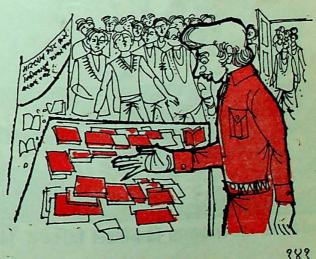
धोती कमीज पहने एक अधेड़ (अपने लड़के से)—जरूरत का सामान ले ले बेटा !

लड़का (कोकाकोला की नली सूंट कर)—अभी जल्दी क्या है, पप्पा ! . . . मेरा फाइनल अगले साल है ! ... तब तक कुछ और तकनीकी तरक्की हो जाने दो !

(भीड़ धीरे-धीरे बढ़ती जाती है) ●

हमेशा मिले हुए-
विटामिन ए-डी-बी१-बी२
कैल्शियम-प्रोटीन, दूध, गेहूँ,
शक्कर, ग्लुकोज़

बच्चे बढ़ते मज़े उठा कर
पारले ग्लुको बिस्किट खा कर

भारत के सबसे ज़्यादा बिकनेवाले बिस्किट पारले ग्लु
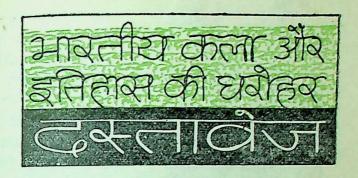
• लक्ष्मीकान्त सरस

पाषाण, ताम्र या अन्य धातु की बनी प्राचीन मूर्तियों में कुछ ऐसी भी हैं जिनके हाथों में दस्तावेज के रूप में पत्र या पेड़ की छाल दिखायी गयी है। यह प्रायः उन देवी-देवताओं की मूर्तियों के हाथों में है जो बुद्धिमत्ता और ज्ञान के प्रतीक माने जाते हैं। ब्रह्मा को ज्ञान, विवेक और बुद्धि का भंडार माना जाता है। इस बात को दर्शाने के लिए प्राचीन मूर्तिकारों ने ब्रह्मा के बायें हाथ में एक किताब दिखायी है। ऐसी मूर्तियां कई जगह पायी गयी हैं। जबलपुर के कारीतलाई ग्राम से प्राप्त ग्यारहवीं शती की पाषाण ब्रह्मा-मूर्ति आजकल रायपुर के 'महंत घासीदास स्मारक संग्रहालय' में है। इसमें ब्रह्मा को लम्बी दाढ़ीयुक्त दिखाया है। उनके चार हाथों में से ऊपर के बायें हाथ में एक ग्रंथ है। और 'अयहोल' 'बादामी' गुफा में स्थापित ब्रह्मा की मूर्ति के बायें हाथ में भी एक पुस्तक है। बम्बई के निकट एलीफेंटा गुफा में अर्धनारीश्वर पेनल से प्राप्त गुप्त मैत्रक शिल्पकला का उत्कृष्ट नमूना है।

सरस्वती विद्या और कला की देवी मानी जाती है। सरस्वती की मूर्ति अपने चतुर्मुखी देवता के एक किनारे पर स्थित है। उसके हाथ में चारों वेद (ऋगवेद, अथर्ववेद, सामवेद और यजुर्वेद) हैं। ये वेद अंक देकर लिखे गये गीत रूप में हैं। मथुरा में जो सबसे प्राचीन मूर्ति सरस्वती की पायी गयी है उसका सिर खंडित है। उसके बायें हाथ में एक किताब है जो खजूर की पत्तियों से बंधी है या सम्भवतः उसे धागों से बांध दिया गया है। सरस्वती के

एलीफेंटा की एक मूर्ति

सरस्वती की खंडित मूर्ति (मथुरा)

चरणों के समीप लेख उत्कीर्ण है।

शिव की कुछ मूर्तियों में भी उन्हें किताब पकड़े दिखाया गया है। देवगढ़ में एक गुप्तकालीन मंदिर से विष्णु की एक बहुत पुरानी मूर्ति मिली है जिसके बायें हाथ में पुस्तक है और दाहिना हाथ व्याख्यान की मुद्रा में है। ऐसी ही व्याख्यान-मुद्रा में तथा एक हाथ में पुस्तक पकड़े बुद्ध की भी मूर्ति मिली है। बुद्ध के प्रथम उपदेश 'धर्मचक्र परावर्तन' की मुद्रा ऊपर उठी हुई एक हथेली खुली रखकर दिखायी गयी है।

दक्षिण भारत में न केवल राजाओं या प्रशासकों बल्कि भक्तों, साहित्यकारों तथा कलाकारों की मूर्तियां गढ़ने तथा बनवाने की परम्परा आज भी चली आ रही है। बहुत पहले शिव का एक बड़ा भक्त था 'मणिक्कावासाका'। उसकी मूर्ति के बायें हाथ में उसकी एक दिखायी गयी है। श्रीलंका में लम्बी नीचे झुकी मूंछ वाले तथा जटाधारी वयोवृद्ध विद्वान की खड़ी मूर्ति जिसके दोनों हाथों में लम्बे पत्र-पुस्तक है। कुछ लोग उसे अगस्त्य और कुछ उसे संत तिरुवल्लुवर मानते और उसके हाथ की पुस्तक को तिरुकु बताते हैं। कुछ लोगों का खयाल है वह श्रीलंका के एक प्रतिभासम्पन्न रा 'पराक्रमबाहु' की मूर्ति है। जो भी हो इसमें संदेह नहीं कि वह मूर्ति किसी म कलाकार की उत्कृष्ट कृति जरूर है।

प्रारम्भिक काल चित्रकला में वि को एक बूढ़े आदमी-जैसा दर्शाया

विष्णु की मूर्ति (देवगढ़)

व्याख्यान-मुद्रा में बुद्ध की मूर्ति

है, जिसके एक हाथ में छतरी और दूसरे में खजूर के पत्र का दस्तावेज है।

दस्तावेज के लिए एक प्रचलित नाम है — पत्र। इस नाम से उसकी मौलिकता झलकती है। सर्वप्रथम लिखने के लिए वृक्षों के पत्ते ही प्रयोग में लाये जाते थे। ये पत्ते तालपत्र या भोजपत्र होते थे जो एक निश्चित आकार में काट लिये जाते थे। तालपत्र का चलन दक्षिण में अधिक था जबकि भोजपत्र का उत्तर भारत में। बौद्ध-साहित्य में पन्ना तथा पत्तों पर लिखे जाने का उल्लेख 'जातक' कथाओं में है। खजूर की पत्तियों का उपयोग होता था। इसकी चर्चा चीनी यात्री ह्वेनसांग ने की है। ह्वेनसांग जब भोजपत्रों को लेकर नाव में समुद्रमार्ग से चीन लौट रहा था उस समय उसके साथ भारत के दो बौद्ध विद्यार्थी भी थे। नाव अधिक भार से डूबने लगी। भार हलका करने के लिए ह्वेनसांग ने भोजपत्रों में से कुछ फेंक देना चाहा, लेकिन बौद्ध विद्यार्थियों ने कहा, "ज्ञान के जिस भंडार के लिए आप भारत आये थे वह इन भोजपत्रों को फेंक देने से पूरा नहीं हो पाएगा। हमारा शरीर नाशवान है किंतु भोजपत्रों पर लिखित ज्ञान की बातें अमूल्य और अमर हैं। नाव का भार कम करने के लिए हम समुद्र में कूद जाते हैं।"

खजूर-पत्र के बाद दस्तावेज ताम्र-पत्रों पर लिखे जाने लगे। बुलर ने लिखा है कि बुद्ध-निर्वाण के बाद प्रथम संघ बनने पर जो नियम बनाये गये उन्हें खजूर-पत्रों पर ही लिखा गया था। ग्रंथ और प्रबंध, पत्रों पर लिखे जाते थे। उन्हें एकसाथ बांधकर पुस्तकाकार रूप दे दिया जाता था। छंद, सर्ग, पाटल शब्द इन्हीं पत्रों के विशेष अर्थ रखनेवाले लेखों को विभाजित करने के लिए बनाये गये।
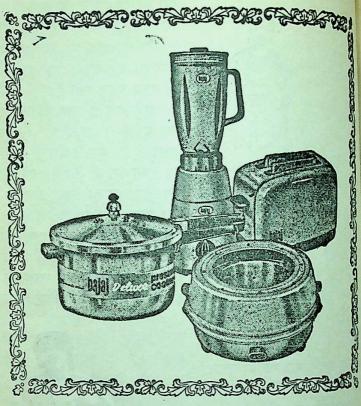
शिवभक्त मणिकवासाका की धातुमूर्ति का रेखाचित्र

दस्तावेज का प्रारम्भिक इतिहास जानने के लिए हमें दक्षिण भारत के प्राचीन ग्रंथों से बहुत कुछ जानकारी मिल सकती है। तमिल भाषा में पृष्ठ के लिए 'ओलइ' शब्द का प्रयोग किया जाता है। इसका अर्थ खजूर की पत्तियां हैं। राजकीय आदेश को पहले खजूर-पत्रों पर लिखा जाता था। तत्पश्चात ताम्रपत्रों, पत्थरों आदि पर लिखा जाता था। इस बात का वर्णन 'तिरूवालांगाडु' से प्राप्त एक शिलालेख में है। महाराजा राजेन्द्र चोल ने सम्राट अशोक की भांति ही प्रजाहित की भावना से घोषणा कर रखी थी—"रात हो या दिन, समय, कुसमय जब भी प्रजा को आवश्यकता हो वह महाराज से मिल सकती है।" राजेन्द्र चोल एक दिन भोजन-कक्ष में बैठे भोजन कर रहे थे। उन्हें सूचना दी गयी कि पच्चीस परिवार के व्यक्ति, जो राजेन्द्रकोलापाट्टि ग्राम के वासी हैं, 'तिरूवालांगाडु' में तेल के वितरण के लिए राजा की आज्ञा चाहते हैं।" राजा ने तुरंत आज्ञा दे दी। इस आदेश को पत्थर पर भी खुदवा दिया गया।

दस्तावेज का एक अन्य प्रकार 'लेख' है। 'लिपि' शब्द भी इसी प्रकार प्रचार में आया। इसका एक उदाहरण सुपरिचित 'धर्मलिपि' है जिसका रूप अशोक के अभिलेखों में है—'इयं धम्मलिपि लिखापिता'। 'लिखापिता' शब्द अक्षरों की खुदाई करने और 'लिपि' शब्द अक्षरों की चित्रकारी करने के अर्थ में लिये जाते थे। 'लेखा' का प्रयोग दस्तावेज के आदान-प्रदान के लिए होता था। सर्वप्रथम इसकी रूपरेखा स्याही या मसि से बनायी जाती थी। बाद में ताम्र, पत्थर आदि में खोद दी जाती थी। दस्तावेज का यह माध्यम स्थायी था।

अगस्त्य, संत तिरुवल्लुवर या पराक्रमबाहु की मूर्ति ?

ताम्रपत्रों में लिखित दस्तावेज पूरे भारत में बड़ी संख्या में पाये गये हैं। लोग ताम्रपत्रों को संभाल कर रखा करते थे, क्योंकि उनमें राजा द्वारा प्रदत्त जमीन या सम्पत्ति का विवरण रहता था। कुछ ताम्रपत्रों में दान देने की विधि और विवरण का उल्लेख है। पेड़ों के पत्तों या वृक्षों की छालों पर राजा के आदेशों का विवरण 'अक्षापातलिका' या 'दिविरापति' द्वारा रखा जाता था। 'दिविरापति' खुदाई करनेवालों को स्थायी दस्तावेज का रूप देने के लिए हस्तांतरित कर देते थे। ●

जज ने मुवक्किल से पूछा, "क्या तुम उस आदमी का हुलिया बता सकते हो जिसने तुम्हारे साथ मारपीट की ?"
मुवक्किल रुआंसा होकर बोला, "साहब, मैं उस आदमी का हुलिया ही बता रहा था कि उसने मारपीट कर डाली।"

हंसी की रंगीन किरणें लिपस्टिक

• सरोजनी प्रीतम

चेहरा एक दर्पण है जिसमें मनुष्य का व्यक्तित्व प्रतिबिम्बित होता है। यदि आंखें व्यक्ति के मन की अतल गहराइयों के भेद खोलती हैं तो अधरों पर लहराती निश्छल मुसकान आपके सौम्य स्वभाव का परिचय देती है। ओठों पर मुसकान की किरणें फूटते ही मुखमंडल उद्दीप्त हो उठता है। आप अपने ओठों को नया रूप देकर अपनी मुसकान को रंगीन बना सकती हैं। इसके लिए आपको लिपस्टिक का ठीक ढंग से प्रयोग करना जानना चाहिए।

लिपस्टिक का प्रयोग

लिपस्टिक सीधे कंटेनर से ओठों पर न लगाकर ब्रश का प्रयोग करें। सीधे लगाने से लिपस्टिक ओठों पर पूरी तरह नहीं लगती और चाय, कॉफी या पानी के साथ आपके भीतर भी पहुंच जाती है। ब्रश पर कंटेनर से थोड़ी लिपस्टिक लगाकर अधरों की बाह्य रूपरेखा बनाइए। तत्पश्चात उसमें ब्रश से फिर लिपस्टिक लगाइए इससे लिपस्टिक अधर के किनारों से बाहर नहीं जा पाएगी।

लिपस्टिक लगाकर एक [illegible] प्रतीक्षा करें। फिर उसे टिशू-पेपर [illegible] हल्का-सा पोंछ दें। उसके बाद पुनः लिपस्टिक लगाकर फिर टिशू-पेपर का प्र[illegible] करें। इससे लिपस्टिक जल्दी नहीं [illegible] और गाढ़ी भी नहीं रहेगी।

ओठों को नया आकार [illegible]

यदि आपको लगे आपके ओठों [illegible] आकार ठीक नहीं है तो आप उसे [illegible] नया आकार दे सकती हैं। यदि निच[illegible] ओठ पतला तथा ऊपर का ओठ मोटा है [illegible] ऊपर के ओठ पर गहरे रंग की लिपस्टिक लगाइए और निचले ओठ पर हल्के [illegible] की। निचले ओठ के किनारों पर गहरे [illegible] लिपस्टिक की आउटलाइन खींच दीजिए। गहरे और हल्के रंगों में विपरीत [illegible] (कंट्रास्ट-कलर) का प्रयोग कर सकती हैं, जैसे नारंगी के साथ गुलाबी अथवा लाल रंग।

बड़े मुंह के लिए...

यदि आपको ऐसा प्रतीत हो [illegible]

आपके अधरों का फैलाव अधिक है और छोटे चेहरे पर मुंह बड़ा लगता है तो इसे भी आप लिपस्टिक से नया रूप प्रदान कर सकती हैं। पहले अपने मेकअप की 'फाउंडेशन' को पूरे चेहरे के साथ ओठों पर भी लगा दीजिए ताकि ओठों की रेखाएं लुप्तप्राय हो जाएं। अब ब्रश से अपने ओठों की नयी रेखा खींचिए, पर ध्यान रहे कि ओठों की दो-दो रेखाएं दिखायी न दें। अब तेज लाल लिपस्टिक ऊपर के ओठ पर तथा उसी रंग से निचले ओठ की रेखा खींच लें। निचले ओठ की उन

गहरी रेखाओं में आप गुलाबी शेड का प्रयोग कर सकती हैं।

इसी प्रकार मोटे ओठों को भी पतले, सुंदर ओठों में परिणत किया जा सकता है। आवश्यकता है तनिक सावधानी बरतने की।

रंगों का चुनाव

हल्के कोमल रंग आपके चेहरे को नया रूप प्रदान करते हैं। तपती दोपहरी में यदि गहरे रंग का प्रयोग करेंगी तो आपका सुंदर चेहरा भी विकृत हो उठेगा।

अतः लिपस्टिक के 'शेड्ज' के चुनाव में विशेष ध्यान दें। केवल एक-दो लिपस्टिक ही हर रोज हर साड़ी के साथ मैच नहीं करतीं। लिपस्टिक के 'शेड्ज' के चुनाव के समय पहले अपनी साड़ियों की ओर दृष्टि डालिए। भूरा, मूंगिया शेड आपकी भूरी, हरी तथा पीली साड़ियों के साथ मैच करता है। गुलाबी रंग काली, नीली और पेस्टल पिंक साड़ियों के साथ आकर्षक दिखायी देता है। अतः 'शेड्ज' वही लें जो मैच करते हों और आपके आकर्षण को और अधिक निखार दें।

कुछ और भी

लिपस्टिक पर गरमी का विशेष प्रभाव पड़ता है। अतः गरमियों में इसे किसी ठंडे स्थान में रखना चाहिए।

अगर ओठ शुष्क रहते हैं तो पहले ओठों पर कोल्डक्रीम का प्रयोग करें, फिर लिपस्टिक लगाएं।

सुरुचिपूर्ण मेकअप आपके व्यक्तित्व को एक विशिष्ट आकर्षण प्रदान करता है। बस! संवरे-निखरे चेहरे पर हंसी की रंगीन किरणें बिखरा दीजिए। ●

• ग्याबनी गॉरें

बंदूक की तलाश

पादरी कैमिलो को शिकार का बेहद शौक था। देश के स्वतंत्रता-संग्राम में वह पेपोन के साथ दुश्मनों से लड़ा था। लड़ाई समाप्त होते समय उसने अपनी राइफल पेपोन के पास रख दी थी जो आज तक उसे वापस नहीं मिली थी।

एक शाम उसने जैसे-ही चर्च-टॉवर की घंटियां बजायीं एक कर्णभेदी स्वर से सारा आसमान गूंज उठा। पता चला कि किसी बदमाश ने पटाखों की लड़ी बांध दी थी। उसे शक हुआ कि शायद पेपोन के आदमियों की ही करामात है क्योंकि पिछले दिनों उसने पेपोन से कई बार राइफल के लिए तकाजा किया था।

पादरी को बहुत गुस्सा आया पर ईश्वर की सलाह मानकर वह चुपचाप बिस्तर पर लेट गया। उसकी आंखें झपकने ही लगी थीं कि किसी ने दरवाजे पर दस्तक दी। पादरी ने दरवाजा खोला तो देखा कि पेपोन की पत्नी खड़ी है।

"यहां क्या करने आयी हो! चर्च में प्रार्थना या कंफेशन का समय है," पादरी ने अपना गुस्सा पेपोन के बजाय उसकी पत्नी पर उतारा।

"पादरी साहब! किसी की नादानी से यह हुआ होगा। पर इस समय तो मैं आपसे मदद लेने आयी हूं। मेरे पति पास के गांव में झगड़ा करने गये हैं उनकी जान खतरे में है..."

"तो मैं क्या कर सकता हूं? घर में जाओ। पर हां, यदि तुम्हारा पति मारा गया तो जरूर मेरी आवश्यकता होगी, उससे पहले नहीं!" पादरी ने हंसकर उत्तर दिया।

"कैसे ईश्वर के सेवक हैं आप! मेरे पति राइफल लेकर गये हैं। यदि गोली चल गयी तो अनर्थ हो जाएगा।"

राइफल का नाम सुनकर पादरी की आंखें चमक उठीं, "अच्छा तुम जाओ मैं कुछ प्रबंध करूंगा!" पादरी साइकिल पर सवार होकर चल दिया।

चांदनी रात में पादरी ने देखा कि

पुलिया पर पेपोन बैठा है और पास ही साइकिल खड़ी है।

"क्यों, वहां से लौट आये ?"

"जी नहीं। मैं ने इरादा बदल दिया," पेपोन ने पादरी को पहचानते हुए कहा, "पर आप यहां कैसे ?"

"यों ही।"

"अच्छा, एक पादरी रात को रेसिंग-साइकिल पर सवार, हाथ में गैर-कानूनी हथियार लिये कैसा लगता होगा ? आपने कभी सोचा ?" इतना कह कर पेपोन जोर से हंसा, पर उसकी हंसी सहसा विलुप्त हो गयी और तभी नाले में छपाक की आवाज आयी !

वापस लौटकर पादरी ने ईश्वर से रिपोर्ट की—"सब काम आपके आदेशानुसार हुए प्रभु !"

"शाबाश, मेरे पुत्र ! पर पेपोन को पैर पकड़ कर नाले में डालने का आदेश तुम्हें किसने दिया था ?"

"ठीक से याद नहीं, वैसे पेपोन ने कहा था कि वह पादरी जो रात को डाकुओं की तरह घात लगाये घूमता है, उसे अच्छा नहीं लगता। इसलिए मैंने सोचा कि नाले की गहराई से उसे यह अप्रिय दृश्य नहीं दिखायी देगा।"

प्रभु चुप रहे। सूर्योदय से पहले पेपोन चर्च आया।

"बाहर शायद पानी बरस रहा है ?" पादरी ने मुसकरा कर पूछा।

"नहीं, कोहरा था।" दांत पीसते हुए पेपोन बोला, "क्या मैं अपनी साइकिल वापस ले सकता हूं ?"

"क्यों नहीं ! वह सामने रखी है। मैंने सोचा शायद कोहरे में साइकिल चलाने में तुम्हें तकलीफ हो इसलिए साथ ले आया था।"

"बड़ी कृपा की, पर साइकिल में एक राइफल लटकी थी..."

"राइफल ! वह किस चीज का नाम है ?" इतना कहकर पादरी अंदर जाने लगा तो पेपोन बुदबुदाया, "जीवन में एक ही भूल की ! कल पटाखे के बदले आधा टन बारूद लगा देता तो..."

बिशप का आगमन

यद्यपि डॉन कैमिलो छोटे-से कसबे के गिरजाघर का पादरी था, पर उसकी शोहरत दूर-दूर तक थी। कुछ लोगों ने बिशप तक को उसके सत्कार्यों से अवगत करा दिया था, अतः बिशप ने काफी बुजुर्ग होने के बावजूद इसके चर्च
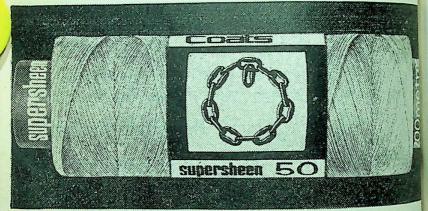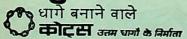
का निरीक्षण करने का निर्णय किया।

पेपोन ने ढिंढोरा पिटवा दिया कि शीघ्र ही एक विदेशी प्रतिक्रियावादी सत्ता का नुमाइंदा कसबे में आ रहा है। अतः किसी को भी उसके स्वागत में सम्मिलित नहीं होना चाहिए।

जब पादरी पर इसकी कोई प्रतिक्रिया न हुई तो पेपोन ने एक और चाल चली। बिशप के आगमन के एक दिन पहले, पाइप बिछवाने का बहाना बनाकर चर्च जाने वाली सड़क खुदवानी शुरू कर दी।

पादरी का धैर्य अब टूटने लगा। पेपोन से पूछा तो उसने बड़े भोले भाव से कहा कि उसे क्या मालूम था कि बिशप अपाहिज हैं ओर पैदल नहीं चल सकते।

दूसरे दिन बिशप की कार आयी। लोगों ने पेपोन के पूर्वादेशानुसार कोई ध्यान नहीं दिया। यहां तक कि बार-बार हार्न बजाने पर भी लोग सड़क से न हिले।

बिशप देखते ही स्थिति समझ गये। वे मुसकराते हुए कार से उतरे। अब लोगों से नहीं रहा गया। पेपोन का ही एक चेला सहारा देकर उन्हें भीड़ से बाहर निकालने लगा।

थोड़ी दूर चल बिशप पेपोन का बनवाया 'जनता-भवन' देखकर बोले, "बेटा, इतनी सुंदर इमारत किसने बनवायी ?"

"यह जनता की सम्पत्ति है, फादर।"

"इसे देख सकता हूं ?"

"क्यों, नहीं !"

अब तक डॉन कैमिलो भी वहां आ गया था। उसने बिशप को इस प्रकार अपने विरोधी दल के पक्ष में जाते देखा तो पीछे से पेपोन को एक लात जमायी।

'जनता-भवन' देखने के बाद बिशप ने कहा कि वे थक गये हैं। पेपोन ने अपनी कार मंगाने का आदेश दिया। खुदी सड़क पर पेपोन के आदमियों ने तख्ते बिछाकर कार को दूसरी तरफ निकाल दिया।

जब बिशप पादरी के साथ कार पर बैठकर चलने लगे तो उन्होंने पेपोन से कहा, "बेटा, मैंने तुम्हारा घर देखा, अब क्या तुम हमारे घर नहीं चलोगे ?"

न चाहते हुए भी पेपोन अपने अनुयायियों के सामने ही 'विदेशी प्रतिक्रियावादी सत्ता के नुमाइंदे' के साथ कार में बैठकर चर्च की ओर चल दिया।

चर्च से थोड़ी दूर पहले बिशप के स्वागत के लिए सैकड़ों बच्चे गुलदस्ते लिये खड़े थे। कार के रुकते ही बच्चों के दल में से फूलों से लदा सुंदर बालक आगे आया। उसने बिशप को फूल अर्पित किये। और बहुत मधुर ध्वनि में भजन गाया।

तभी पादरी डॉन कैमिलो के कान में पेपोन बुदबुदाया, "देखता हूँ इस बेवकूफ बालक को ! तुमने इसे धार्मिक प्रवृत्ति से भ्रष्ट कर दिया है। कल ही मैं इसे पो नदी में डुबो दूंगा।" डॉन कैमिलो मुसकराया, "अवश्य ! पर जरा अच्छी तरह से बच्चे को पहचान लो। यह तुम्हारा ही बेटा है ?"

—प्रस्तोता : अखिलेश तिवारी

संसार का सबसे छोटा गणतंत्र

सान मारीनो

● सुरजीत

डालमीशिया का एक ईसाई मूर्तिकार मारेनस ३०१ ईसवी में रोमन सम्राट डायवकलेटन के अत्याचारों से तंग आ गया और उसने भागकर पूर्वी इटली में रेनी पर्वत-शृंखला में शरण ली। उसके साथ कुछ वीर साथी भी थे। समय बीतने के साथ-साथ उनमें एक राष्ट्र की सभी विशेषताएं उत्पन्न हो गयीं। मारेनस ने अपने साथियों के अंदर स्वतंत्रता की भावना उत्पन्न की थी। यहां के रहनेवालों ने नये राज्य का नाम अपने उपकारी के नाम पर 'सान मारीनो' रखा। चौबीस वर्गमील में फैला यह प्रदेश संसार का सबसे प्राचीन गणतंत्र और सबसे छोटा देश है। इसका अपना कोई बंदरगाह नहीं है, न ही हवाईअड्डा। राजधानी सहित केवल चार नगर हैं।

सान मारीनो का झंडा

कुछ मील दूर जहां रोमेगना का मैदानी प्रदेश समाप्त हो टटानो पर्वत-शृंखला आरंभ होती है, एक बोर्ड दिखायी देता है—"स्वतंत्रता की प्राचीन धरती आपका स्वागत करती है।" सान मारीनो की सीमा आरम्भ होती है यहां से।

यहां की कुल जनसंख्या १८,३६० है। ये लोग सारे यूरोप में सबसे अधिक हंसमुख और सुंदर हैं। राज़धानी का नाम भी सान मारीनो है, जिसमें ढाई हजार लोग रहते हैं। ये एक ही बिरादरी के सदस्य दिखायी देते हैं। बाजार में चलते किसी व्यक्ति को रोककर आप अगर मोची की दुकान पूछें तो हो सकता है वह कहे, "वह सामने मेरे भाई की दुकान है।"

जनतंत्री सान मारीनो देश में १९०६ तक परिवारों के मुखिया चुनाव में महत्त्वपूर्ण कार्य सम्पन्न करते थे। १९०६ से वयस्क मताधिकार का रिवाज चला, किंतु १९५० तक स्त्रियों को मतदान का अधि-

कार न मिला। मतदान के लिए २१ वर्ष की उम्र अनिवार्य है, किंतु देश में आवास या ठहरना आवश्यक नहीं।
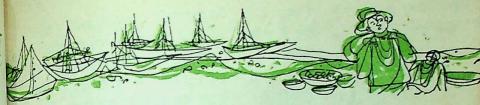
विधान-सभा में साठ सदस्य हैं। व्यवस्थापक-परिषद में बारह सदस्य होते हैं। विधान-सभा के चुनाव हर चार वर्ष के बाद होते हैं, किंतु व्यवस्थापिका की एक-तिहाई संख्या हर तीन वर्ष बाद अवकाश ले लेती है। सबसे विचित्र बात यह है कि व्यवस्थापिका के मुखिया, अर्थात देश के राष्ट्रपति दो होते हैं और इन दोनों का राज्यकाल केवल छह महीने का होता है। हर वर्ष पहली अप्रैल और पहली अक्तूबर को परम्परागत आन-बान के साथ राष्ट्रपति-पद ग्रहण किये जाते हैं। राष्ट्रपति-पद की अवधि समाप्त होने के बाद अगले तीन वर्ष तक इस पद के लिए पुनः चुनाव नहीं हो सकते, किंतु विधान-सभा जिस व्यक्ति को राष्ट्रपति मनोनीत कर दे, उसे पद स्वीकारना पड़ता है। इनकार की अवस्था में सम्पत्ति जब्त हो सकती है, देश-निकाला भी दिया जा सकता है।

राष्ट्रपति, विधायकों और व्यवस्थापिका के सदस्यों को वेतन नहीं दिया जाता। न उन्हें दैनिक भत्ते का अधिकारी समझा जाता है। सभी अवैतनिक रूप में काम करते हैं।

राष्ट्रपति महोदयों पर वैधानिक बंधन है कि वे सदा इकट्ठे रहें। यात्रा-पर्यटन और खाने-पीने में भी इन्हें एक-साथ रहना पड़ता है। यह व्यवस्था एक-दूसरे के विरुद्ध षड्यंत्रों की रोकथाम के लिए की गयी है। राष्ट्रपति के कार्यकाल में ये देश से बाहर नहीं जा सकते, और न ही कोई व्यवसाय कर सकते हैं।

परिवारों के मुखिया वर्ष में दो बार व्यवस्थापिका को जनता की शिकायतें बताते हैं। लालफीते का चक्कर यहां नहीं

> क्षेत्रफल—केवल २४ वर्गमील
> जनसंख्या—केवल १८,३६०
> कारें—३,३००
> राष्ट्रपति—दो, और दोनों अवैतनिक
> भिखारी—केवल एक
> कुल नगर—केवल चार, राजधानी सहित
> सन—अन्य देशों से ३०१ वर्ष पीछे

है। पुलिस के कर्मचारी और न्यायाधीश अन्य देशों से भरती किये जाते हैं ताकि पक्षपात और अन्याय न हो सके।

सान मारीनो कई क्रांतियों से गुजरा है। सेना में कुल १,२०० सिपाही हैं। हर स्वस्थ नागरिक को सोलह से साठ वर्ष की आयु तक अवैतनिक रूप में सेना में बुलाया जा सकता है, पर अपने इतिहास के दीर्घकाल में इसने युद्धों से परहेज किया है। मध्य-पूर्व की लड़ाइयों में यह जनतंत्र तटस्थ रहा। यूरोप के एक सम्राट ने इस पर आक्रमण किया, पर पड़ोसी

सान मारीनो की एक सुंदरी

देश फेल्टर के शासकों ने उसकी रक्षा की। १५०३ में बोरगिया ने इस पर कब्जा कर लिया, पर शीघ्र ही स्वतंत्र कर दिया गया। १७३९ में कारडीनल अल्बरोनी ने इस पर अधिकार कर लिया। एक वर्ष बाद नेपोलियन ने इसे स्वतंत्रता दिलाई और पेशकश की कि अपनी सीमा में और क्षेत्र शामिल कर ले, पर इस देश ने इनकार कर दिया। दूसरे महायुद्ध में अन्य सान मारीनो तटस्थ रहा, फिर भी इसे भारी बमवर्षा का निशाना बनना पड़ा।

सान मारीनो ने दूसरों की स्वतंत्रता के लिए कई बार अपनी रक्षा को भी संकट में डाला है। इटली के प्रसिद्ध देशभक्त नेता गैरीबाल्डी को आस्ट्रिया, फ्रांस और स्पेन की संयुक्त सेनाओं ने पराजय दी। पराजित नेता ने अपने १,५०० सैनिकों को अस्त-व्यस्त कर दिया और सान मारीनो में शरण ली। यूरोप के तीन शक्तिशाली देश छोटे-से देश को घेरे खड़े थे। शरण आये नेता को शत्रु के सुपुर्द करने के बजाय किसी प्रकार समुद्र-तट तक पहुंचा दिया, जहां से वह न्यूयार्क चला गया और अंत में इटली को शत्रुओं के पंजे से मुक्त कराने में सफल हो गया। जिस कैफे में वह आकर ठहरा था, उसे आज भी 'गैरीबाल्डी रेस्तरां' कहा जाता है।

दूसरे महायुद्ध के दौरान लगभग एक लाख शरणार्थी यहां आ पहुंचे। सान मारीनो ने उन्हें अपने अंदर जज्ब कर लिया। पहले जिस घर में दो प्राणी रहते

थे, वहां अब सत्रह-सत्रह प्राणी ठुंसे हुए थे। सान मारीनो के नागरिक बहुत कम खाते रहे, किंतु विस्थापितों को कोई कष्ट न होने दिया।

सान मारीनो के लोग रोमन कैथोलिक हैं। साम्यवादी सरकार के शासन में जुएबाजी को वैधानिक रूप दे दिया गया। साम्यवादी शासन बारह साल तक रहा, पर न तो यहां सामूहिक फार्म अस्तित्व में आये और न किसी उद्योग या जमीन का राष्ट्रीयकरण किया गया।

सान मारीनो की साठ प्रतिशत भूमि कृषि-अधीन है। मुजारे पैदावार का छप्पन प्रतिशत भाग स्वयं रखते हैं और शेष स्वामी के हवाले कर देते हैं। भूमि-कर और अन्य खर्चे दोनों मिलकर करते हैं। आधुनिकतम मशीनों द्वारा कृषि की जाती है।

सान मारीनो का किसान बहुत खुश है। सहायता के रूप में सरकार उसे नकद रुपया देती है। यही कारण है कि देश में अन्न की बहुतायत है और उपज का आधा भाग निर्यात किया जाता है।

सान मारीनो का किसान

सान मारीनो का मुख्य उद्योग मूर्ति-निर्माण था, पर आज यह लगभग समाप्त हो गया है। जिन पर्वतों पर आबादी है, वहां पत्थर काटने पर प्रतिबंध है।

मिट्टी के बर्तन यहां बहुत अच्छे बनाये जाते हैं। कारखानों में लड़के बर्तनों पर चित्रकारी करते हैं।

यहां ३,३०० कारें हैं। एक व्यक्ति के अतिरिक्त कहीं भिखारी नजर नहीं आता और यह भिखारी भी केवल शुक्र के दिन भीख मांगता है। उस दिन लोग उसकी व्याकुलता से प्रतीक्षा करते हैं। वह उन्हें दुआएं देता है।

राज्य-भाषा इतालवी है। सिक्का भी इतालवी लीरा है। इसका अपना पृथक सन है, जो ईसवी सन से ३०१ वर्ष कम है। वास्तव में राष्ट्रीय जीवन की गणना ही उस वर्ष से की गयी है जब सेंट मारीनो ने इसकी नींव रखी। ●

नया पारले मारी बिस्किट का
मज़ा चाय के साथ लीजिए
PARLE MARIE BISCUITS
PARLE
MARIE
पारले
मारी
बिस्किट
ग्लुको, मोनेको और अन्य स्वादिष्ट बिस्किटों के उत्पादक पारले आपके लिए खास पेश करते हैं– चाय की लज्ज़त बढ़ानेवाला–
अनोखे स्वादवाला – फॉइल पैकिंग में
everest/1080a/PP/T

वेदों में अनेक मंत्रों में टेक की तरह 'प्रण आयूंषि तारिषत्' वाक्य प्रयुक्त हुआ है। यह वाक्य किसी नवीन संकल्प के ग्रहण करने का संकेत है। इस वाक्य का अन्वय (वयं) नः आयूंषि प्रतारिषत् करके 'हम अपनी आयु का विस्तार करने का संकल्प लेते हैं या लें' अर्थ करना उचित होगा। इस तरह का संकल्प लेने का तात्पर्य जीवन को कर्मकेंद्रित बनाना भी है। है—मिश्रण एवं अपमिश्रण अर्थात मेल-मिलाप एवं अलगाव। मेलमिलाप किससे? कर्म से, परिस्थिति से, समाज से। और, अलगाव? कर्मविरोधी भावना से, समाज-विरोधी भावना से। मेलमिलाप का नाम ही तो योग है। गीता में कहा गया है—योगः कर्मसु कौशलम्। कर्मकुशलता को प्राप्त करने के लिए मन को कर्मकेंद्रित करना आवश्यक है। अनेक दिशाओं में

मनोविज्ञान

जीवन को सार्थक बनाइए

● डॉ. बद्रीप्रसाद पंचोली

जीवन तभी तक है और उसे तभी तक होना चाहिए जब तक कि उसकी सार्थकता या उपयोगिता हो। इसी तरह व्यक्ति को तभी तक जीवित कहा जा सकता है जब तक उसमें अपने जीवन को सार्थक या उपयोगी सिद्ध करने की चेतना विद्यमान हो।' 'जिजीविषा' का अर्थ ही जीवन जीने की योग्यता को प्रमाणित करना है। अनुपयोगी या निरर्थक जीवन का होना, न होना बराबर है। सार्थक या उपयोगी जीवन की अवधि का नाम ही आयु है। 'आयु' शब्द में यु धातु का अर्थ

बंटा हुआ मन किसी कार्य को सफल नहीं बना सकता। आयु एक दिशा में बहती हुई सोद्देश्य जीवन-धारा है।

आयुर्वृद्धि के अनेक उपाय आयुर्वेद में सुझाये गये हैं। उन उपायों से जीवनावधि की वृद्धि भले ही हो जाए, आयु की वृद्धि सम्भव नहीं है। आयु की वृद्धि के लिए क्षण-क्षण को सार्थक बनाने की आवश्यकता है—सांस-सांस को सोद्देश्य बनाकर जीने की आवश्यकता है—

सांस-सांस पर हरि भजो
वृथा सांस मत खोय।

सांस-सांस को सार्थक बनाकर जीने की कामना ही जीवनावधि को 'आयु' संज्ञा प्रदान करती है। आयु को बढ़ाने का तात्पर्य है सार्थक जीवन जीने की लगन पैदा करके अधिक-से-अधिक समय को कर्म से संयुक्त करना। **'वर्ष अठारह क्षत्रिय जीए, आगे जीवन को धिक्कार'** इस उक्ति में कम-से-कम समय में अधिकाधिक सार्थक जीवन जीने की कामना छिपी हुई है। 'प्रग आयूंषि तारिषत्' वाक्य में लम्बे समय तक जीवन को सार्थक बना जीने की उतनी ही उत्कट कामना है।

मनुष्य दो प्रकार के होते हैं। कुछ ऐसे होते हैं जो जहां भी हों वहीं वातावरण में कुछ नवीनता और सुंदरता पैदा कर देते हैं। इसके विपरीत कुछ ऐसी प्रवृत्ति के होते हैं जो अपने वातावरण में दीर्घकाल तक जीवित रह कर भी कोई उल्लेखनीय कार्य नहीं कर पाते। ऐसे लोगों को जीते हुए ही मृत कहा जा सकता है। उनके जीवन काल को आयु नहीं कहा जा सकता।

आयु बढ़ाने का तात्पर्य है—जीवन में नवीनता और सुंदरता लाने के अवसरों को बढ़ाना। **'नवनवो भवति जायमानः'** —प्रत्येक प्राणधारी (अपने जीवन को सार्थक करने के लिए) नवीन होता है। नवीनता का सुंदरता से सम्बंध है भी। **'क्षणे-क्षणे यन्नवतामुपैति तदेव रूपं रमणीयतायाः'** नित्य नवीन प्रतीत होना सुंदरता का लक्षण है। सुंदरता का पर्यायवाची शब्द है—रमणीयता। इसकी व्युत्पत्ति उसी रम धातु से है जिससे 'राम' शब्द भी बनता है। अंतर्मन की उस प्रवृत्ति को राम कहा जा सकता है जो जीवन को रमणीय अथवा नवीन और सुंदर बनाने में सक्रिय रहती है। कबीर आदि निर्गुण संतों का राम इसी प्रवृत्ति से सम्बद्ध है। जो राम का हो जाता है वह तुलसीदास की मान्यता के अनुसार जीवन को सार्थक कर लेता है।

मनुष्य श्रम करता है तो देवता उसके साथी बन जाते हैं। दिव्यता उसके जीवन की सहचरी और शक्ति बन जाती है। दिव्यता के क्षण ही मनुष्य की आयु बढ़ाते हैं। इन क्षणों की उपलब्धि के लिए ही उपर्युक्त मंत्रार्द्ध में संकल्प धारण करने की बात कही गयी है—हे परमेश्वर! हम अपनी आयु को बढ़ायें, अपने जीवन को सार्थक करके जीने के कालखंड को अधिकाधिक विस्तीर्ण करें, जीवन में नवीनता और सौंदर्य की सृष्टि करें। ●

सन १९२५ में जार्ज बनार्ड शा को नोबल पुरस्कार देने की घोषणा की गयी। 'शा' ने पुरस्कार स्वीकार कर लिया किंतु राशि लेने से इनकार कर दिया—"अब मेरे पास गुजारे लायक काफी धन है। इनाम की रकम स्वीडन के गरीब लेखकों को दे दी जाए।"

"जन्म—१ दिसम्बर, १९४८ को हैदराबाद में। शिक्षा—एम. ए. (हिंदी) रूसीभाषा में डिप्लोमा। मातृभाषा तेलुगु है। सम्प्रति प्राध्यापिका हूं। पहली कविता 'तितली' सात वर्ष की आयु में लिखी। 'कलेक्टिव सफरिंग' के इस दौर में अपने अस्तित्व को सुरक्षित रखने के लिए लेखन एक सशक्त माध्यम है। भोगने की प्रक्रिया में रचनात्मक क्षण आश्वस्ति देते हैं, स्थैर्य भी, बस इसीलिए लिखती हूं।"

दो कविताएं

आज तुमने ये क्या किया
आईना मेरे आगे रख दिया
कुहासों-उगी सुबह
सलवटों भरी दोपहर
शाम की टूटन
सबका सब उघड़ गया
दूर कहीं सोया था
अंतस का सूनापन
सांसों की छुअन में
पल भर को सिहर गया
बेख्वाब आंखों में
ठिठक गयी रात
जागा अस्तित्व-बोध
पारे-सा फिसल गया
गढ़ने जो बैठा था
अनदेखे कोण मूरत के
शिल्पी वो पुज गया
विन्यास बिखर गया

●

बिम्बित छवियों में
परिचय खोजना व्यर्थ है
शो-केसों में सजते हैं
चित्र वेश्याओं के
गुफाओं में मंडराता आक्रोश
बन गया आर्ट गैलरी
घिस गये शब्द, संदर्भ गले
टुकड़ों में जीते अर्थ हैं
चेतना की षपड़ायी परतों में
कसकते हैं घाव वंचना के
चिंतन के धुंधलाये वर्कों में
खो गया दिशा-बोध
भीतर से खोखले
बाहर से बहुत समर्थ हैं

—शशि कमलेश

• रीता अग्रवाल

विद्युत झटकों से बचिए

आधुनिक जीवन में विद्युत का उपयोग अधिकाधिक महत्वपूर्ण होता जा रहा है। क्या घर, क्या बाहर, नित्य ही हमें विद्युत-उपकरणों से वास्ता पड़ता है। परंतु कभी-कभी यही शक्ति जरा-सी लापरवाही से प्राणों की ग्राहक बन जाती है। अतः यह आवश्यक है कि हम विद्युत सम्बंधी प्रारम्भिक बातों को जान लें।

विद्युत-आघात वोल्टेज तथा विद्युत-धारा के एक विशेष ढंग से मिलने पर उत्पन्न होते हैं। अकेली वोल्टेज अथवा अकेली विद्युत-धारा हमें कोई हानि नहीं पहुंचा सकती। यही कारण है कि कभी तो केवल ५० वोल्ट का झटका ही मृत्यु का कारण बन जाता है और कभी कई हजार वोल्ट से भी कुछ नहीं बिगड़ता।

$$\text{धारा} = \frac{\text{वोल्टेज}}{\text{प्रतिरोध}}$$

इस सूत्र के अनुसार प्रतिरोध जितना अधिक होगा, विद्युत-सर्किट में उतनी ही कम बहेगी और उससे हुई हानि भी उसी अनुपात में कम हो जाएगी। हमारे शरीर का स्वयं भी आंतरिक प्रतिरोध होता है तथा यह प्रतिरोध त्वचा की शुष्कता एवं विद्युत धारा के स्पर्श में आये शारीरिक क्षेत्रफल पर निर्भर करता है। शुष्क त्वचा का प्रतिरोध सामान्यतया १००,००० ओम से ६००,००० ओम तक होता है, परंतु शरीर भीगा होने पर यह प्रतिरोध घट कर लगभग १००० ओम रह जाता है। यदि आंतरिक प्रतिरोध और घटकर ५०० ओम हो जाए तो ५० वोल्ट पर केवल १०० मिली-एम्पियर की धारा मृत्यु का कारण बन सकती है। अतः विद्युत-उपकरणों पर कार्य करते समय वोल्टेज तथा प्रतिरोध का ध्यान अवश्य रखना चाहिए तथा शरीर को सीलन से बचाना चाहिए।

शरीर पर विद्युत-आघातों का प्रभाव विद्युत-धारा की तीव्रता तथा उसकी आवृति पर निर्भर होता है। आवृत्ति जितनी अधिक होगी, शारीरिक क्षय भी उतना ही अधिक होगा। घर में प्रयुक्त विद्युत जिसकी आवृत्ति लगभग ५०-६० प्रति सेकंड होती है, मस्तिष्क के तंतुओं पर प्रभाव डालती है। ८ से १५ मि. एम्पियर तक की धारा का आघात होने पर शरीर को पीड़ा होती है, परंतु हमारा अपनी मांसपेशियों पर इतना अधिकार रहता

कि हम स्वयं को पीछे खींचकर स्पर्श को समाप्त कर देते हैं। १५-२० मि. ऐम्पियर की धारा अधिक पीड़ा देने के साथ-साथ मांसपेशियों पर से हमारा नियंत्रण भी समाप्त कर देती है, जिससे हम अपने आप को विद्युत-स्रोत से तब तक अलग नहीं कर पाते जब तक कि विद्युत-प्रवाह समाप्त न कर दिया जाए। यदि धारा २०-५० मि. ऐम्पियर के बीच हो तो पीड़ा अत्यधिक तीव्र होती है तथा फेफड़ों का काम बंद हो जाने से व्यक्ति की मृत्यु हो जाती है।

१०० से २०० मिली-ऐम्पियर की ए. सी. जिसकी आवृत्ति ६० प्रति सेकंड हो, हृदय की धड़कन तेज कर देती है। बाहरी उत्तेजना ग्रहण करते ही हृदय अत्यधिक तीव्र गति से धड़कने लगता है, जिससे उसके आलिंदों में सिकुड़न हो जाती है तथा शिकार मृत्यु के मुख में पहुंच जाता है। २०० मिली-ऐम्पियर से अधिक की धारा हृदय को तुरंत निष्क्रिय कर देती है, जिससे तत्काल मृत्यु हो जाती है। हां, यदि व्यक्ति को छुड़ाकर आघात लगने के दो-तीन मिनट के भीतर ही हृदय को पुनरुज्जीवित किया जा सके तो उसके बचने की कुछ संभावना है।

ऐसे अवसरों को टालिए

घर में बिजली के तार आदि फिट कर रहे हों तो सबसे पहले मेन स्विच बंद कर दीजिए। बिजली का कोई भी काम नम जमीन या सीमेंट के बने फर्श पर खड़े होकर मत कीजिए, विद्युत आपके जूतों में से गुजर कर आपको गिरा सकती है। गीले हाथ-पैरों से रेडियो का वाल्यूम धीमा या तेज करना अथवा स्विच ऑन या ऑफ करना भी खतरनाक है। पहले शरीर को अच्छी तरह सुखाइए, फिर किसी लकड़ी की चीज पर खड़े होकर ही सावधानी से कुछ छुइए। आमतौर पर स्विच विद्युत्त-रोधक होते हैं, परंतु कभी-कभी वायरिंग में कुछ दोष रह जाने से अथवा स्विच में दरार इत्यादि पड़ जाने के कारण ये पूर्णतया विद्युत-रोधक नहीं रह जाते। यदि आप किसी औजार से बिजली की कोई चीज छू रहे हैं तो ध्यान रखें कि आपका हाथ केवल उस औजार पर बनी लकड़ी की मूठ तक ही रहे।

सबसे पहले विद्युत-सर्किट को तोड़ने का प्रयत्न करना चाहिए। सावधानी से स्विच ऑफ़ कीजिए जिससे बिजली से चिपके व्यक्ति को जल्दी-से-जल्दी अलग किया जा सके। साथ ही उस व्यक्ति की पहुंच से बाहर रहें, नहीं तो हो सकता है कि घबराहट में वह आपको छूकर आपको भी साथ ले डूबे। अलग करने के बाद यदि उस व्यक्ति को सांस लेने में कठिनाई हो रही हो तो डाक्टर को शीघ्र बुलाएं। आप स्वयं उसे कृत्रिम श्वास दिलाने का प्रयत्न करें तथा उसके हृदय पर तेजी से मालिश करते रहें। आघात खाये व्यक्ति को कदापि अकेला न छोड़ें। यदि वह होश में हो तो उसे धैर्य दिलाएं तथा डाक्टर आने तक हृदय को ताकत देने वाली ... जैसे ग्लूकोज आदि पिलाएं।

यदि आप विद्युत-सम्बंधी आव... नियमों को समझ लें तो दुर्घटना होने की आशंका कम है, परंतु 'थोड़ा ज्ञान खतरनाक है' वाली बात को ध्यान में रखते हुए बिना ... से अधिक छेड़छाड़ न करें। दस्तानों ... आवश्यक औजारों के बिना बिजली के तार न छुएं। प्रयोगशाला में कार्य करते समय उपकरण के विषय में अच्छी तरह से जान लें कि उसमें कहां-कहां ... होने पर विद्युत-आघात हो सकता है।

(२)

महाभारत में विदुर का व्यक्ति के नाते अपना एक विशिष्ट स्थान है। इसके अलावा वह एक विशेष वर्ग का था। उस सारे वर्ग का भी एक विशेष कार्य इस कथा में है। इस वर्ग के जो दुःख-दर्द थे वे तो विदुर के थे ही, परंतु खुद उसकी भी अपनी शिकायतें थीं। विदुर 'क्षत्ता' था। 'क्षत्ता', 'सूत' अथवा 'पारशव' आदि नाम इस वर्ग के थे। कर्ण इसी वर्ग का था। एक क्षत्रिय कुमारी ने जन्मतः ही जिसे छोड़ दिया था और एक सूत ने उसे अपना पुत्र माना था, इस कारण वह सूत था।

सूत क्षत्रियों के अपने बहुत निकट के आप्त ही मालूम होते थे। विदुर और उसके भाई सब एक ही पिता के पुत्र थे, परंतु पहले दो की माताएं क्षत्रिय-कन्याएं और मृत राजा की पत्नियां थीं। उसकी माता दासी थी, परंतु मृत राजा की पत्नी नहीं। यदि ऐसा न होता तो विदुर राजा

• इरावती कर्वे

ही हो गया होता।

धृतराष्ट्र का विदुर से प्रेम था, परंतु उसमें भी एक प्रकार की हुकूमत का रौब था। जब कभी समय-असमय आवश्यकता होती वह विदुर को बुलाने भेजता। इसी तरह जब कभी पांडवों को भी कुछ संदेशा भिजवाना होता, तो वह विदुर को ही भेजता। एक बार गुस्से से धृतराष्ट्र ने विदुर को राजमहल से निकाल दिया था, पर उसे पश्चात्ताप हुआ और विदुर को वापस बुला लिया गया। उससे क्षमा मांगी। इस प्रकार का हृदयंगम वर्णन महाभारत में आता है। भाई तो जरूर था, परंतु ऐसा कि जिसे अन्न-वस्त्र के अलावा और किसी प्रकार का कोई हक नहीं था। भीष्म यद्यपि कुल-ज्येष्ठ था, तो भी पांडवों और कौरवों के साथ वह समान रूप से व्यवहार करता था। उसने ऐसा प्रयास भी किया कि युद्ध न हो, परंतु विदुर के मन का झुकाव पांडवों की ओर था।

विदुर शब्द का अर्थ ज्ञानी होता है, और सम्पूर्ण महाभारत में विदुर के ज्ञानी होने का जो परिचय मिलता है वह पारमार्थिक है। वह इस बात पर जोर देता था कि जगत में समभाव और न्याययुक्त व्यवहार करना चाहिए। लोभ नहीं रखना चाहिए। उसने जिसको इस ज्ञान का पाठ पढ़ाया वह धृतराष्ट्र आंखों से अंधा था। खुद राज्य का अधिकारी था, किंतु वह उसे पा न सका था। इसका दुःख उसे था और यदि 'मुझे न मिल[illegible] तो कम-से-कम मेरे पुत्रों को तो [illegible] ऐसी ईर्ष्या उसके मन में थी, जिससे [illegible] सदसद्विवेक नष्ट हो गया था।

पहले-पहले उसने पांडवों के [illegible] वयस्क रहते हुए विदुर की बा[illegible] कोई ध्यान नहीं दिया। और जब [illegible] सुनने लगा तो यह कह कर कि मैं [illegible] कर सकता हूं, पुत्र अब मेरे हाथों में [illegible] रहा' कहकर विदुर के उपदेश से [illegible] बचाव कर लिया करता था। कि[illegible] पास समझदारी थी, परंतु सत्ता [illegible] द्रौपदी-स्वयंवर के बाद उसने एक [illegible] धृतराष्ट्र को नीचा दिखाया था। [illegible] बाद सारा युद्ध समाप्त होने पर [illegible] कहा—"अब पश्चाताप से क्या [illegible] जब पांडव जुए में हार गये थे तब [illegible] छोटे बच्चे की तरह अपने पुत्रों की [illegible] पर तुम नाचने लग गये थे। मैं कह[illegible] रहा—'भैया, यह विजय नहीं, [illegible] है।' तब तुमने नहीं सुना। अब [illegible] जैसा बर्ताव करो और शोक न [illegible]

विदुर कभी इस बात के लिए [illegible] नजर नहीं आया कि खुद उसे कु[illegible] नहीं। यों देखा जाए तो महाभा[illegible] अन्य पात्रों के मुकाबले उसका [illegible] सुख में ही बीता। उसने विवाह कि[illegible] अपने ही घर में रहकर वह भज[illegible] मनन-चिंतन में मग्न रहता था।

विदुर का जीवन एक प्र[illegible] ऊंचा उठा हुआ दिखायी देता है, [illegible]

तरफ बिलकुल भुला दिया जाता है। ऐसा लगता है मानो उसने अपने लड़कपन में ही अपनी विफलता पीकर जीवन का एक विशिष्ट भाग निश्चित कर लिया था।

यों तो महाभारत में सभी पात्रों के मन के विचारों को वाचा दी गयी है, परंतु विदुर के विषय में कहीं कुछ भी नहीं कहा गया है। क्या सचमुच ही वह विदुर और ज्ञानी था? या प्रत्यक्ष यम——धर्म—का अवतार था, इसलिए दरअसल जीवन के उतार-चढ़ाव ने उसे छुआ ही नहीं? यह भी नहीं कह सकते कि वह बिलकुल उदासीन ही था। वह पांडवों का कृपालु रक्षक था। क्रूरता और अन्याय से उसे घृणा थी, परंतु उसने अपना स्थान नहीं छोड़ा। युद्ध के पहले दिन ही खुल्लमखुल्ला पांडवों से जाकर मिल गया, परंतु पांडवों को न्याय दिलाने के लिए धृतराष्ट्र से निरंतर झगड़ते हुए भी विदुर ने धृतराष्ट्र को नहीं छोड़ा। धृतराष्ट्र की भर्त्सना भी उसने की, परंतु धृतराष्ट्र जब संकट में, शोक में पड़ा तब सांत्वना भी विदुर ने ही उसे दी थी।

भीष्म ने लड़कपन में धृतराष्ट्र और पांडु का जिस प्रकार लालन-पालन किया वैसा ही विदुर का भी किया था। विदुर बड़ा होने पर विदुरत्व को प्राप्त हो गया था। राज-सभा में, विशेषतः द्रौपदी-चीरहरण और कृष्ण-मध्यस्थता के समय विदुर और भीष्म ने भी भाषण दिये थे। परंतु उन दोनों के बीच एक-दूसरे से बातचीत या विचार-विनिमय हुआ हो, ऐसा कहीं दिखायी नहीं पड़ता। आदि-पर्व के अध्याय १०३ में उनके सम्भाषण का जो प्रसंग आया है, वह स्पष्टतः प्रक्षिप्त मालूम होता है। वह इस प्रकार है—भीष्म विदुर से कहता है, 'सुबल की पुत्री (गांधारी) मद्र की राजकन्या (माद्री) और यादवी (कुंती) को अपनी पुत्रवधू बनाएं, ऐसा मुझे लगता है। विदुर, इस पर तुम्हारा क्या मत है?" विदुर कहता है, "आप ही हमारे माता-पिता, बड़े सब-कुछ हैं। जैसा आप ठीक समझें, कर लें।"

इस समय विदुर के दोनों बड़े भाइयों के विवाह का विचार चल रहा था। विदुर का विवाह अभी होना शेष था। सब लोग बीस वर्ष से कम आयु के होंगे। विदुर सबसे छोटा था। ऐसी अवस्था में भीष्म का विदुर से सलाह लेना संभव नहीं लगता। भीष्म ने अपने दोनों बड़े भतीजों का विवाह करने के बाद देवक नामक राजा की दासी-पुत्री से विदुर का विवाह किया। उसे अच्छी संतान भी हुई थी। महाभारत में हुई मानसिक तथा शारीरिक भीषण स्पर्द्धा से विदुर ने खुद को अलिप्त ही रखा है। यही नहीं, अपने परिवार को भी अछूता ही रखा। फिर भी मन में यह शंका आ ही जाती है कि विदुर अंदर-अंदर गहराई में कहीं गुंथ गया हो, लिप्त रहा हो।

विदुर पांडवों का पृष्ठपोषक था,

हर खुशी के मौके पर-मोनेको बिस्किट एक-मज़े से खाने के तरीके

यूं ही खायें तो लाज़वाब—मनपसंद चीज़ें उस पर लगा के खायें तो और मज़ेदार

मोनेको—कुरकुरे-नमकीन बिस्किट—सुबह हो या शाम, हर वक्त खाये जा सकते हैं। हां, तो इसी वक्त मोनेको मांगिये और मज़े से खाइये।

पारले मोनेको

भारत के सबसे ज़्यादा बिकनेवाले नमकीन बिस्किट

everest/257
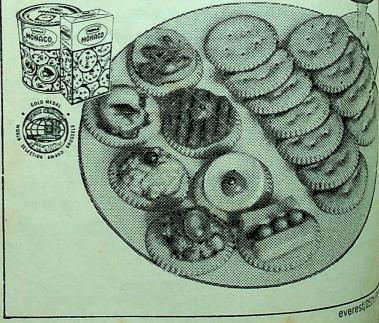
परंतु सभी पांडवों से उसका संबंध एक-जैसा नहीं था। उसका युधिष्ठिर से खास निकट का सम्बंध था। यह बराबरी की मित्रता का नाता भी नहीं था। युधिष्ठिर ने जैसा कहा है, उसके अनुसार विदुर ने पिता के तौर पर पांडवों की रक्षा की थी। युधिष्ठिर और विदुर में एक विलक्षण साम्य भी है। विदुर नीतिज्ञ और धर्मज्ञ होने के कारण इस नाम से प्रसिद्ध था, तो युधिष्ठिर अपनी पीढ़ी का बड़ा विद्वान, विचारशील और धर्मज्ञ माना जाता था। पांडु का, अर्थात राज्याभिषिक्त राजा का ज्येष्ठ पुत्र होने के कारण वंशपरंपरागत राज्य उसे मिल जाना चाहिए था, परंतु उसमें भी झंझट और कठिनाई पैदा हो गयी। लड़कपन में ही उसे शत्रु के यहां चुपचाप दीन, असहाय होकर रहना पड़ा। वह राज्य का अधिकारी है, यह बात क्षण भर के लिए भी भूल जाने-जैसी नहीं थी। यही क्यों, उसके छोटे भाई तथा माता ने भी उसे यह बात कभी भूलने नहीं दी।

धर्मराज सभी बड़े-बुजुर्गों का मान रखता था, परंतु विदुर के प्रति उसे हार्दिक प्रेम था। इन सब बातों पर ध्यान देने से मन में ऐसी शंका पैदा होती है कि विदुर का और धर्मराज का सम्बंध कहीं पिता-पुत्र का तो नहीं था! महाभारत में ऐसी बहुत-सी बातें हैं जिनसे इस शंका को पुष्टि मिलती है। कुंती यद्यपि राजकन्या थी, तो भी विदुर सूत था। सूत से उत्पन्न पुत्र होने के कारण ज्येष्ठ होने पर भी युधिष्ठिर का अधिकार दुर्योधन के मुकाबले में क्या कम साबित होता? यह एक प्रश्न उठता है। इसका महाभारत में कोई उत्तर नहीं है। आदि-पर्व में जिस समय किसी एक देवता को बुलाकर पुत्र उत्पन्न कराने का निश्चय होता है, तब सहसा यम—धर्मराज—की ही याद होना, आश्चर्यजनक जरूर है।

विदुर एक शापित यम-धर्म ही था। यहां मांडव्य ऋषि की कथा देखने योग्य है। विदुर कुंती का छोटा देवर था। इस न्याय से वह नियोग के लिए बिलकुल योग्य था। धर्म की आज्ञा के अनुसार होने के कारण भी युधिष्ठिर का नाम 'धर्म' होने की सम्भावना थी। इससे ऐसा प्रतीत होता है कि 'धर्म' विदुर का पुत्र होना चाहिए।

दूसरे भी एक-दो प्रसंग ऐसे हैं, जिनसे यह तर्क पुष्ट होता है। धृतराष्ट्र, गांधारी, कुंती और विदुर ये सब अरण्यवास में थे। 'धर्म' तथा दूसरे पांडव उनसे मिलने के लिए वन में जाया करते थे। ऐसे एक समय विदुर दिखायी नहीं दिया, तो युधिष्ठिर ने उसकी पूछताछ की। तब धृतराष्ट्र ने कहा, "विदुर घोर तप कर रहा है। कभी-कदास अरण्य में फिरता हुआ वह लोगों को दिखायी दे जाता है।" वह इतना कह पाया था कि एक अस्थि-पंजर सर्वांग में धूलि-धूसरित, नंग-धड़ंग विदुर दूर जाता दिखायी देता है, ऐसा

लोगों ने बताया। यह सुनकर युधिष्ठिर यह पुकारते हुए कि 'विदुर ठहरिए मैं आपका प्यारा युधिष्ठिर हूं', उसके पीछे-पीछे दौड़ा गया। इस तरह एक-दूसरे के पीछे भागते हुए, घने जंगल के एकांत में विदुर एक पेड़ के सहारे खड़ा हो गया। फिर जब दोबारा युधिष्ठिर ने अपना परिचय दिया कि 'मैं युधिष्ठिर हूं' तब विदुर अपनी एकटक दृष्टि राजा की दृष्टि में गड़ाकर उसके अंग-अंग में योगबल से प्रविष्ट हुआ। अपने प्राण, इंद्रियां, तेज सब-कुछ विदुर ने राजा को दे दिया। मृत्यु के समय का यह व्यवहार पिता-पुत्र के योग्य ही है।

व्यास ने कहा है, "पहले विचित्रवीर्य की दासी से मेरे द्वारा साक्षात धर्मराज ही योगबल से जन्मा और उसने योगबल से कुरुराज युधिष्ठिर को जन्म दिया। जो धर्मराज वही विदुर, पांडव और वही धृतराष्ट्र। जिस तरह तुम्हारा वह भाई तुम्हारी सेवा-चाकरी कर रहा था वैसा ही युधिष्ठिर व धर्म तुम्हारी कर रहे हैं।"

कुंती ने अपने छोटे देवर से धर्मराज को उत्पन्न किया। यह बात सारा युद्ध समाप्त होने तक गुप्त रखकर महाभारत में उसको ऐसे समय प्रकट किया है कि अंत में विदुर और धर्मराज की एकता पिता-पुत्र की एकता थी या दोनों ही साक्षात यम-धर्म के पुत्र थे, संदेह बाकी रह ही जाता है। कुंती को विदुर से सिर्फ एक ही पुत्र हुआ, दूसरा क्यों नहीं? इस तरह विचार करें तो फिर ऐसा मालूम होता है कि यदि नियोग से किसी पुरुष का संग किया जाए तो वह सिर्फ एक ही पुत्र की प्राप्ति के लिए, ऐसी धारणा थी। इसलिए विदुर और कुंती का दोबारा संयोग न हुआ और उसे दूसरे पुरुषों को बुलाना पड़ा।

यदि ऐसा मान लें कि विदुर और धर्मराज का पिता-पुत्र का नाता था—तो समस्त महाभारत की कथा को एक दूसरा ही मोड़ देना होगा। यदि धर्मराज विदुर का औरस पांडु का क्षेत्रज पुत्र है तो भारतीय युद्ध केवल दो भाइयों के पुत्रों का युद्ध न होकर, तीन भाइयों के पुत्रों का युद्ध हो जाएगा। परंतु तिहरी लड़ाई होती नहीं, क्योंकि एक व्यक्ति दोनों का लड़का हुआ न! पांडु दूर हिमालय में इसलिए गया कि किसी को यह मालूम न हो कि मेरे क्षेत्रज पुत्र का पिता कौन था। यह किसी को भी पता नहीं लगा कि उसके पुत्रों का पिता कौन था? धर्म की तरह पांडवों का पितृत्व कभी स्पष्ट नहीं हुआ। विदुर पुत्र के लिए कभी किसी षड्यंत्र में नहीं पड़ा। अंत तक उदासीन और अलिप्त ही रहा।

—अनु. हरिभाऊ उपाध्याय

(आगामी अंक में : द्रौपदी)

समृद्धि का दायां हाथ उद्यम और बायां मितव्ययिता है। —जानसन

आपका भवितव्य

● पं. गोपेशकुमार ओझा

१ ता. को वैष्णवों का श्रीकृष्ण जन्माष्टमी व्रत है; ३ ता. को जया एकादशी। ५ ता. को सांयकाल भौम प्रदोष व्रत; ७ ता. को कुशोत्पाटिनी भाद्रपद की अमावस्या; १० ता. को तृतीया - हरितालिका व्रत; ११ ता. को गणेश - चतुर्थी : इसी दिन सांयकाल भाद्र शुक्ला चतुर्थी है, जिस दिन चन्द्रमा का दर्शन मना है। १२ ता. को ऋषि-पंचमी; १३ ता. को लोलार्क षष्ठी—सूर्य षष्ठी व्रत। १५ ता. को सोलह दिन के महालक्ष्मी व्रत का आरंभ। १६ ता. को सूर्य संक्रांति, सूर्य कन्या राशि में प्रवेश करेंगे। १८ ता. को दशावतार व्रत; १९ ता. को पद्मा एकादशी। २०ता. को वामन द्वादशी; सांयकाल प्रदोष। २२ ता. को अनंत-चतुर्दशी : सायंकाल पूजन करने वाले २२ ता. को पूर्णिमा व्रत करेंगे; दोपहर को पूजन करने वाले २३ ता. को। पूर्णिमा का स्नान, दान २३ को प्रातः होगा। इसी दिन उमा-महेश्वर व्रत, लोकपाल पूजा तथा महालय प्रारंभ। पितृपक्ष (कनागतों) में प्रतिपदा को श्राद्ध करने वाले २३ ता. को श्राद्ध करेंगे। २४ ता. को द्वितीया का श्राद्ध; २५ ता. को तृतीया का श्राद्ध। २६ ता. को गणेश चतुर्थी तथा चतुर्थी का श्राद्ध। २७ ता. को पंचमी का श्राद्ध; २८ ता. को षष्ठी का श्राद्ध; २९ ता. को सप्तमी का श्राद्ध। ३० ता. को अष्टमी का श्राद्ध, जीवित्पुत्रि का व्रत तथा लक्ष्मी व्रत की समाप्ति।

इस मास में जन्मे बालक

इस मास में निम्नलिखित तारीखों में उत्पन्न बच्चों के लिए जन्म से सत्ताइसवें दिन नक्षत्र-शांति करानी चाहिए—ता. ५ को प्रातः ६-३५ से ता. ७ को प्रातः ७-२२ तक। ता. १४ को रात्रि के १०-४६ से ता. १६ को रात्रि के (ता. १७ की प्रातः) ४-५ तक। ता. २३ को रात्रि के (ता. २४ को प्रातः) १-५० से ता. २५ को रात्रि के ८ बजकर ५८ मिनट तक।

२१ मार्च से २० अप्रैल तक

७ ता. तक सुखोपकरणों पर विशेष व्यय। ५ ता. तक संतान या विद्या-संबंधी कार्यों में विशेष दत्तचित्तता। ता. १२ और १५ को कुछ उद्वेग। १६ ता. के आस-पास किसी महत्त्वपूर्ण पत्र या दस्तावेज पर हस्ताक्षर। ६-७ अप्रैल को जन्मे व्यक्तियों को दाम्पत्य-क्षेत्र में या अपने उच्चाधिकारी से संघर्ष। १८-१९ अप्रैल को जन्मे व्यक्तियों को इस मास में लाभ, पदोन्नति या विद्या में उत्कर्ष। १२ से १५ ता. तक सभी को यात्रा में सावधानी बरतनी चाहिए, विशेषकर अप्रैल में जन्मे व्यक्तियों को। शुभ दिन २, ७, १०, १८, २१, २२, २७।

२१ अप्रैल से २२ मई तक

संतान-सम्बंधी कार्यों की ओर विशेष ध्यान देना पड़े। फैशन की वस्तुओं पर विशेष व्यय। आगंतुक व्यक्तियों के संसर्ग से सुख। मास के प्रारंभिक तीन सप्ताह में जो योजना बनायी है, उसकी पूर्ति की आशा चतुर्थ सप्ताह में है। चतुर्थ-सप्ताह भाग्योदय के लिए अच्छा है। जीर्ण रोगियों को उदर-विकार की संभावना है, इसलिए स्वास्थ्य की ओर विशेष ध्यान दें। विद्यार्थियों को विद्या-सम्बंधी झंझट हो सकती है। २२ अप्रैल के आस-पास जन्म लेने वाले व्यक्तियों को विशेष सफलता या हर्ष संभावित। शुभ दि[illegible] ३, ८, १४, २४, २८।

२३ मई से २१ जून तक

इस मास में परिश्रम और [illegible] दायित्व में वृद्धि। पारिवारिक कि[illegible] वृद्ध पुरुष के स्वास्थ्य से उद्वेग। साझेदा[illegible] के कार्य में किसी वयोवृद्ध धनी व्यक्ति [illegible] सहायता से लाभ। गृह-सम्बंधी का[illegible] के कारण कुछ चिंता, किंतु परिणा[illegible] लाभ। ७ ता. के बाद मनोभिलषित [illegible] प्राप्त होंगे। २८ ता. को चित्त कुछ [illegible] रहे। ७-८ जून को जन्मे व्यक्तियों [illegible] नवीन संसर्गों से हर्ष। १०-११ जून [illegible] जन्मे व्यक्तियों को इस मास में शारीरि[illegible] परिश्रम अधिक और आराम कम है[illegible] शुभ दिन ४, ६, १८, १९, २३, [illegible]

२२ जून से २२ जुलाई तक

इस मास के प्रथम सप्ताह में [illegible] आकर्षण के केंद्र बने रहेंगे। साज-[illegible] की ओर विशेष ध्यान रहेगा। धन[illegible] भी अच्छा है। नौकरी के लिए जो प्र[illegible] कर रहे हैं उन्हें सफलता प्राप्त होगी[illegible] किसी पड़ोसी या रिश्तेदार से वाद-विवा[illegible] की सम्भावना। पत्राचार में यदि [illegible] प्रकट करने की प्रवृत्ति हो तो [illegible] रखें। व्यापारी-वर्ग मास के अंत में [illegible] साझेदारी के कार्य में संलग्न होंगे। [illegible] यह कि ७, ८, ११, १२, १४, १५ [illegible]

को जन्मे व्यक्तियों को व्यय अधिक, शारीरिक या मानसिक परिश्रम या पारिवारिक स्थिति में उलझन का योग है। शुभ दिन ३, ६, ७, १८, २१, २५, २७, २८।

२३ जुलाई से २२ अगस्त तक

इस मास में अल्पवयस्क तथा आकर्षक व्यक्तियों के सम्पर्क से आपको हर्ष होगा। प्रथम सप्ताह में यात्रा, पत्र-व्यवहार तथा किसी नवीन आयोजना के विचार में संलग्न रहेंगे। संचित द्रव्य में से अनेक कार्यों पर व्यय करने की प्रवृत्ति होगी, उस पर संयम रखें। किसी वयोवृद्ध पुरुष की सहायता से लाभ हो या ७ ता. के बाद कोई अच्छा सौदा हो। विद्यार्थी-वर्ग के लिए यह मास अनुकूल है। २१-२२ अगस्त को जन्मे व्यक्तियों को विशेष सफलता या लाभ की सम्भावना है। शुभ दिन २, ७, ९, १३, १८, १९, २७।

२३ अगस्त से २२ सितम्बर तक

६ ता. से २१ ता. तक आपको अपने कार्य में विशेष सफलता की आशा है। आप में बल और स्फूर्ति का संचार होगा, उसका सदुपयोग करें। १२ ता. से १६ तक विस्फोट की स्थिति पैदा हो सकती है, उसके बाद निर्णय लें। यात्रा में विशेष सावधानी बरतें। २३ अगस्त को जन्मे व्यक्तियों को यह मास विशेष अच्छा है; १२ से १६ सितम्बर को उत्पन्न व्यक्तियों को विशेष परिश्रम और संघर्ष, ७ तथा २२ सितम्बर को उत्पन्न व्यक्तियों को इस वर्ष स्थान या कार्य-परिवर्तन। शुभ दिन ४, ६, १८, १९, २३ २८।

२३ सितम्बर से २२ अक्तूबर तक

प्रथम सप्ताह में चित्त को हर्ष देने वाले कार्यों में प्रवृत्त होंगे। नवीन मित्रता, मित्रों के समागम से हर्ष। किसी सम्बंधी से शुभ समाचार प्राप्ति। इस मास में व्ययाधिक्य है, विशेषकर ७ ता. से २२ तक। यदि आप किसी उद्योग में लगे हैं तो पत्र-व्यवहार अथवा यात्रा से लाभ हो। विशेष यह कि ९-१० अक्तूबर को जन्मे व्यक्तियों को यदि अस्वास्थ्य हो या अधिकारी-वर्ग से संघर्ष चल रहा हो तो वह अभी कुछ दिन चलता रहेगा। बाद में स्थिति अनुकूल हो जाएगी। धैर्य रखें। शुभ दिन ३, ८, २४, २८।

२३ अक्तूबर से २१ नवम्बर तक

२२ ता. तक आपके उद्योगों की सफलता के लिए समय अनुकूल है। लाभ तथा धनागम की भी सम्भावना है। किसी नवीन आयोजना या मित्रों की सहायता से आपकी स्थिति में सुधार होगा। यदि कहीं से पत्र की अपेक्षा है तो २५ ता. के बाद संतोषजनक समाचार आएगा। १२ से १५ तक सहसा विशेष व्यय, किंतु इस

मास में आय अच्छी रहेगी और जो धन प्राप्ति हो उसे संचित रखें क्योंकि आगे के मास में व्यय का विशेष योग है। शुभ दिन २, ७, १०, १८, २१, २२, २७।

२२ नवम्बर से २२ दिसम्बर तक

मास के प्रथम सप्ताह में आप कुछ गुप्त-योजना बनाएंगे। यह मास भाग्य के लिए उत्कर्षकारक और सफलतादायक है। यदि आप किसी उच्चाधिकारी की कृपा चाहते हैं तो ता. १ से १० तक और ता. २१ से ३० तक इसके लिए समय अनुकूल है। परंतु जिनका जन्म १० से १४ दिसम्बर के बीच हुआ है उन्हें शारीरिक श्रम और मानसिक संघर्ष विशेष है। १० से १६ ता. तक कलह, रोग आदि से बचें। जटिल प्रश्नों को इस समय न सुलझाएं, आगे सरका दें। शुभ दिन ४, ६, २१, २५, २९।

२३ दिसम्बर से २० जनवरी तक

इस मास के प्रारंभ में किसी की साझेदारी या सहयोग से लाभ हो। बाद के तीन सप्ताहों में किसी गुप्त योजना से हर्ष हो। पदोन्नति या किसी की कृपा प्राप्त करने के लिए समय अनुकूल है, पर मास के मध्य में यदि किसी कार्य की प्रगति में अवरोध हो या शारीरिक या मानसिक परिस्थिति प्रतिकूल हो तो धैर्य रखें, अंततः परिणाम अच्छा निकलेगा।

इधर कुछ समय से आपका जो व्यय
हो रहा है, उसमें २५ ता. के बाद
होगा। शुभ दिन ३, ६, १०, २०,
२७, २८।

२१ जनवरी से १९ फरवरी तक

आपने पिछले मास जो
स्थिर किया था उसमें परिवर्तन हो
किसी नवीन संसर्ग से विनोदपूर्ण
व्यतीत होगा, किंतु किसी कुटुम्बीजन
अस्वास्थ्य से चिंता भी होगी।
के साथ-साथ धन-व्यय का भी योग है
यदि द्वितीय सप्ताह में कुछ संघर्ष हो
धैर्य रखें, परिस्थिति स्वयं अनुकूल
जाएगी। विद्या या संतान-सम्बंधी
की ओर विशेष ध्यान देना पड़ेगा।
दिन ३, ६, १०, २०, २४, २७,

२० फरवरी से २० मार्च तक

इस मास के प्रारम्भिक ८ दिन
जो साझेदारी का कार्य करते हैं उन्हें
दारी टूटने, या व्यापार-सम्बंधी कलह
भी आशंका है, इसलिए संयम तथा
की अधिक आवश्यकता है।
किसी विद्वान या धनी व्यक्ति से
स्थापित होगा। पदोन्नति के लिए
प्रयत्न कर रहे हैं, उनके कार्य में
होने की २५ ता. तक विशेष सम्भा
है। शुभ दिन ४, ६, ११, २१,
२९।

• डॉ. शशि शर्मा

तीन नये उपन्यास

पिछले अंक में हमने तीन नवप्रकाशित कहानी-संग्रहों की चर्चा की थी। अब तीन नये उपन्यासों की चर्चा कर रहे हैं।

एब्सर्ड नाटक और अब एब्सर्ड उपन्यास! साहित्य के मूल में 'एब्सर्ड' एक प्रकार की विश्रृंखलता, अव्यवस्था तथा अनियमितता मानी गयी है, जो मानसिक धरातल पर परस्पर गहरी अनुस्यूत होती है। नरेन्द्र कोहली की कृति 'पांच एब्सर्ड उपन्यास' नाम देखकर लगा कि इसमें भी कुछ ऐसा ही होगा। कहा जाता है कि किसी भी नयी प्रवृत्ति का आगमन पूर्व-प्रवृत्ति की असमर्थता पर आधारित होता है, किंतु इसे पढ़कर समझ में नहीं आया कि इसे 'एब्सर्ड' नाम देने में लेखक की कोई विवशता थी अथवा नयी प्रवृत्ति के उत्प्रेरक होने की लालसा!

कुछ स्थितियों में बेतुका हेर-फेर करने से ही रचना 'एब्सर्ड' नहीं बन जाती। इसमें संग्रहीत पांचों रचनाएं उपन्यास के स्थान पर शब्दचित्र तथा संस्मरण के अधिक निकट हैं। हास्य-व्यंग्य-शैली में लिखी इन रचनाओं में औत्सुक्य एवं रोचकता का विशेष पुट है, लेकिन पुस्तक के नाम के अलावा कुछ भी तो नया नहीं!

★

मेहरुन्निसा परवेज की पुस्तक 'उसका घर' औपन्यासिक दृष्टि से अपेक्षाकृत बेहतर है। एक मध्यवर्गीय ईसाई परिवार की आंतरिक टूटन पर आधारित इस उपन्यास के तीन बिंदु हैं—एलमा, रेशमा तथा आंटी। एलमा तलाकशुदा युवती है, जो जीवनपर्यंत आघात सहती रहती है। उस पर दमे के जानलेवा रोग का बोझ सहती हुई एकाएक लड़खड़ा जाती है, जब उसका भाई चंद सिक्कों के लिए उसे होटल के अंधेरे कमरे में भेज देता है, जहां वह बिना किसी प्रतिकार के भद्दे और घिनौने 'बॉस' की कामना उत्तप्त करती रहती है। इसके विपरीत रेशमा अपने हिंदू प्रेमी की प्रेमिका तथा एक बच्चे की बिन ब्याही मां होते हुए भी पश्चात्ताप के स्थान पर अधिकारों की मांग करती है।
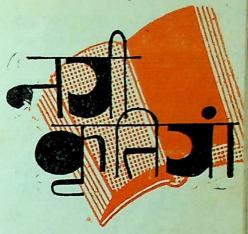
वस्तुतः एलमा आधुनिक परिवेश

से कटी-सी लगती है। उसका बिना प्रति-रोध के घिनौनी स्थितियों को सहते चले जाना गले से उतरता नहीं। रेशमा इसकी अपेक्षा अधिक सशक्त पात्र है। एलमा जहां बिना कुछ पाये सब कुछ खोती जाती है, वहां रेशमा बिना कुछ खोये सब कुछ पाने का सार्थक प्रयत्न करती है।

लेखिका का दूसरा उपन्यास होते हुए भी इसमें रचना-कौशल का चमत्कार देखने को मिलता है।

*

तीसरा उपन्यास हिमांशु जोशी का है --'महासागर'। यह उन लोगों की कहानी है जिन्हें नियति अलग-अलग स्वनिर्मित द्वीपों में निर्वासित होने के लिए विवश करती है। साकेत, छाया, रूप, नीना, दीप 'दी आदि ऐसे ही पात्र हैं जिनकी सीमाएं क्षितिज की भांति मिली हुई हैं। वे धरती-आकाश की तरह निरंतर पास आने का उपक्रम करते रहते हैं। साकेत और नीना का प्रेम भी कुछ इसी प्रकार का है। इसे पढ़कर जॉर्ज इलियट के 'दि मिल ऑन दि फ्लास' की मैगी याद आती है।

साकेत का आदिवासी मजदूरों टोली की एक लड़की की सेवाओं से होकर उससे विवाह कर लेना उस की सहजता को आघात पहुंचाता हालांकि नीना की मृत्यु के पश्चात प्रेम हृदय की अनंत गहराइयों का करता है। उपन्यास का प्रत्येक पात्र घटना आदर्श है। दीप 'दी के चित्रण लेखक ने औपन्यासिक कौशल का परि दिया है। मुंह से कुछ न कहती हुई मां अपनी मूक व्यथा पाठकों तक पहुंचा दे है।

उपन्यास का प्रमुख आकर्षण अंड निकोबार की आंचलिक पृष्ठभूमि संभवतः इस आंचलिक परिवेश में लि यह प्रथम सशक्त हिंदी उपन्यास ताड़ी, नारियल, आबनूस और सु के ऊंचे-ऊंचे वृक्ष तथा चांदनी रात रेतीले तट से टकराती लहरों का वि पाठक को अपने साथ बहा ले जाता है

पांच एब्सर्ड उपन्यास : लेखक--नरेन्द्र कोहली; प्रकाशक : नेशनल पब्लिशिंग हाउस, २३ दरियागंज, दिल्ली--६; पृष्ठ--१०३, मूल्य--३.५० रु.

उसका घर : लेखिका--मेहरुन्निसा परवेज; प्रकाशक : उपर्युक्त; पृष्ठ--१६६, मूल्य--६.०० रु.

महासागर : लेखक--हिमांशु जोशी; प्रकाशक : उपर्युक्त; पृष्ठ-- १५५, मूल्य--६.०० रु.

दो साहित्यिक कृतियां

'अप्रवासी की यात्राएं' डॉ. नगेन्द्र के विदेश-यात्रा संस्मरण हैं। इसमें पांच यात्रा लेख हैं। चार लेखों में यात्रा-संस्मरण तथा पांचवें में अमरीकी विश्व-विद्यालयों में हिंदी शिक्षा की रूपरेखा है। विदेशों में हिंदी की स्थिति का ज्ञान प्राप्त करने के लिए यह लेख उपयोगी है। लेखक ने प्रस्थान से लेकर वापसी तक की सभी गतिविधियों का उल्लेख किया है। विभिन्न लोगों से वार्त्तालाप, विभिन्न विश्वविद्यालयों में दिये गये भाषणों, भारतीय प्रवासियों के साथ बिताये अंतरंग क्षणों के स्मृति-संस्कारों को रोचक शैली में प्रस्तुत किया गया है। यद्यपि वर्णन में अध्यापकीय छाप मौजूद है तथापि शब्द-प्रवाह के साथ-साथ पाठक यात्रा के प्रत्येक पड़ाव पर स्वयं को लेखक के साथ पाता है। लेखक ने इस यात्रा का उद्देश्य चूंकि शैक्षिक माना है, कदाचित इसीलिए वह कतिपय स्थलों को छोड़कर दर्शनीय स्थानों के सौंदर्य-वर्णन में अधिक नहीं जम पाया है। बौद्धिक आदान-प्रदान में लेखक का आलोचक साथ रहा है। कुल मिलाकर यह पुस्तक यूरोपीय देशों की यात्रा की संक्षिप्त रूपरेखा प्रस्तुत करती है।

*

'साहित्य नया और पुराना' डॉ. विनयमोहन शर्मा के साहित्यिक निबंधों का संकलन है। लेखक ने समीक्षक की परिष्कृत और बहुचर्चित रुचि को ही आलोचना का प्रतिमान माना है। जहां उसने पुराने साहित्य की बात कही है वहां तो विषय के साथ न्याय किया है, किंतु जहां नये साहित्य की बात आयी है वहां प्रत्येक नये वाद और प्रयोग को नकारा है। नयी कविता के सम्बंध में केवल नग्नता, उच्छृंखलता का दिग्दर्शन कराया गया है।

लेखक ने नये साहित्य के प्रति अपना आक्रोश व्यक्त किया है। नये साहित्य के शब्दों में वह अर्थभेद नहीं कर पाया है। 'साहित्य में प्रगतिवाद' के अंतर्गत प्रगति-शील और प्रगतिवाद दोनों शब्दों को एक ही अर्थ में ग्रहण किया है।

पूरी पुस्तक में लेखक के अध्यापकीय व्यक्तित्व की छाप है। आधुनिक नये साहित्य के प्रति लेखक का यह दुराग्रही रुख पीढ़ियों की स्वाभाविक प्रतिक्रिया कही जा सकती है।

अप्रवासी की यात्राएं : लेखक—डॉ. नगेन्द्र; प्रकाशक—नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दरियागंज, दिल्ली-६; पृष्ठ—८८; मूल्य— ३.०० रु.

साहित्य नया और पुराना : लेखक— डॉ. विनयमोहन शर्मा; प्रकाशक—उपर्युक्त; पृष्ठ—१६५; मूल्य—११.०० रु.

सार-संक्षेप

अठारह मार्च, १८४७ !

मौसम बेहद सुहावना था। काफी दूर तक चहलकदमी करने के बावजूद मैं जरा भी थकान महसूस नहीं कर रहा था। खुली हवा ने जैसे जिंदगी को फिर से तरोताजा बना दिया था। मैं बेहद खुश था, पर जैसे ही घर पहुंचा, नौकर के हाथ में एक लिफाफा देखकर मेरी सारी खुशी कपूर की तरह उड़ गयी। मेरे सारे शरीर में एक अजीब-सी सिहरन दौड़ गयी। मैंने कांपते हाथों से लिफाफा थामा और लड़खड़ाते कदमों से कमरे की ओर बढ़ गया।

कमरे में पहुंचकर मैं अपनी कुरसी पर जा गिरा। उस लिफाफे को खोलने की मुझमें जरा भी हिम्मत न थी, पर मैं विवश था। कांपती अंगुलियों से लिफाफे की सीलें तोड़ीं। उसमें के मजमून का मैं भलीभांति अंदाजा सकता था। वह साधारण खत नहीं, की मौत का परवाना था। पर जैसे मैंने खत को पढ़ा, खुशी से पागल हो मुझे लगा, जैसे किसी भयानक अजगर ने सहसा मुझे अपनी गिरफ्त से अचानक ही छोड़ दिया मैंने चैन की सांस ली। खुशी के मारे आंखों में आंसू छलक आये।

खत में मेरी बर्खास्तगी का आदेश

मैंने डबडबायी आंखों से अपने पर टंगी बड़ी-बड़ी तसवीरों को देखा ये तसवीरें मेरे पुरखों की थीं।

फ्रांस का सबसे बदनाम खानदान ! ऐसा खानदान, जिसका नाम लेते ही लोग सिहर उठते, नफरत से नाक-मुंह सिकोड़ लेते। मेरे खानदान ने जाने कितने अपराधियों और निरपराधियों को फांसी के तख्ते पर चढ़ाया था।

मैंने पितामह के चित्र पर नजर डाली। वे शिकारी की पोशाक में बंदूक लिये शान से खड़े थे। फिर मैंने अपने पिता के चित्र की ओर देखा। वे हाथ में हैट लिये मुसकराते हुए खड़े थे।

मैंने घंटी बजाकर नौकर को बुलवाया। जब वह आया तो मैंने उसे एक बरतन में पानी लाने का आदेश दिया।

कुछ ही क्षणों के बाद नौकर पानी से भरा पात्र रखकर वापस लौट गया।

अपराध की सबसे बड़ी सजा है—मृत्युदंड! मृत्युदंड के भी कई अमानवीय तरीके मानव ने ईजाद किये, जिन के विषय में सुनकर रोंगटे खड़े हो जाते हैं। फ्रांस के शाही जल्लाद हेनरी सैंसन ने अपनी आत्मकथा के माध्यम से फ्रांस के मृत्युदंड का भयानक इतिहास प्रस्तुत किया है, जिसे पढ़कर लगता है जघन्य अपराधियों को दंड देने वाला सभ्य समाज भी कम जघन्य अपराधी न था। इन सनसनीखेज लोमहर्षक संस्मरणों के प्रस्तोता हैं—विद्याभूषण

मैं अपने दोनों हाथ धोने लगा। क्षण-भर के लिए मुझे ऐसा प्रतीत हुआ मानो मेरे हाथों से पानी नहीं खून गिर रहा हो, उन लोगों का खून जिन्हें मैंने—चार्ल्स हेनरी सेंसन द्वितीय—फ्रांस के शाही जल्लादों ने—फांसी पर चढ़ाया था।

हाथ धोकर मैं अपनी वृद्धा मां के पास गया। मैंने उन्हें अपनी बर्खास्तगी की खबर सुनायी। वे एक लम्बी सांस लेते हुए बोलीं, "बेटा, भगवान का शुक्र है कि हमारे ख़ानदान से यह अभिशाप मिटा। मुझे मालूम था कि तुम बर्खास्त कर दिये जाओगे। क्यों? क्योंकि तुम्हारे कोई बेटा न था।

मां को यह खबर देकर मैं फिर से अपने अध्ययन-कक्ष में लौट आया। यहां सुनहरी जिल्दों में बंधी मेरे प्रपितामह, पितामह और पिता की निजी डायरियां थीं। उनमें वे रोजनामचे थे, जिनमें फांसी पर चढ़ाये गये लोगों का, उनके अपराधों का, मौत के घाट उतारते समय उनकी वेदनाओं का चित्रण था। मैं उन डायरियों को कई बार पढ़ चुका था। उन्हें पढ़ते हुए ऐसा प्रतीत होता था, जैसे वे सामने घट रही हों। ये डायरियां, ये रोजनामचे एक प्रकार से फांसी के तौर-तरीकों के इतिहास थे। उनसे पता लगता था कि सभ्यता के विकास के साथ-साथ जान लेने के तौर-तरीके में भी कितना सुधार हुआ। इनसे मेरे अपने देश, यानी फ्रांस के सामाजिक रहन-सहन और नैतिक-राजनीतिक प्रश्नों के प्रति आम जनता के दृष्टिको[...] भी पता चलता है। इसके साथ-सा[...] और सम्भ्रांत समझे जाने वाले [...] के गोपनीय रहस्यों का राज खुल[...] मेरे प्रपितामह ज्यां बापतिस्ते सेंसन [...] केवल सात वर्ष की अवस्था में [...] जल्लाद का पद सम्भालना पड़ा [...] इतनी कम उम्र का बालक किसी को [...] पर नहीं चढ़ा सकता था। फांसीदे[...] ने उनकी सहायता के लिए एक सहा[...] और प्रशिक्षक रख दिया था, पर फ[...] के वक्त वहाँ उन्हें रहना पड़ता [...]

मेरा प्रपितामह के बाद मेरे पिता[...] शाही जल्लाद नियुक्त हुए।

पितामह को अनिच्छापूर्वक स[...] सम्राज्ञी एवं कुलीन सरदारों के सिर क[...] करने पड़े। बाद में उन्हें कुछ क्रांतिका[...] की भी जान लेनी पड़ी।

उन घटनाओं को याद कर [...] उठता हूं। रोजनामचों की काली [...] के बीच मुझे अपने खानदान के [...] जल्लादों और उनके शिकार बंदि[...] चेहरे बार-बार उभरते से प्रतीत हो[...] हैं।

इनमें सबसे पहले उभरता है चेह[रा] चार्ल्स सेंसन द' लांगवाला का! वे [...] खानदान के पहले पुरुष थे जिन्होंने [...] प्रेमपाश में पड़कर यह पेशा अप[नाया] था और उनके साथ ही उभर आता है एक सुंदर चेहरा, मदाम ताइक्वेत [...] उस सुंदरी का जिसे उन्हें मौत के [...]

उतारना पड़ा था ।

सूली पर सुंदरी

एंगेलिक कारलियर अपूर्व सुंदरी थी । बुद्धिमती और चतुर भी। उसके पिता मुद्रक, प्रकाशक और पुस्तक विक्रेता थे। स्वभावतया वह तत्कालीन पेरिस के सम्भ्रांत समाज का आकर्षण बन बैठी। कारलियर से विवाह करने की इच्छा करने वाले लोगों की संख्या दिनोंदिन बढ़ती गयी। इनमें फ्रांस के सम्पन्न, कुलीन परिवारों के युवक भी थे। ताइक्वेत नामक एक युवा मजिस्ट्रेट कारलियर के प्रति आकर्षित हुआ। ताइक्वेत संसत्सदस्य भी था। उसने अपने परिश्रम और योग्यता के बल पर यह सम्मान अर्जित किया था।

कारलियर को ताइक्वेत की प्रतिभा ने प्रभावित किया था। ताइक्वेत ने भी कारलियर को प्रसन्न करने में कोई कसर न छोड़ी। कारलियर के जन्मदिन पर उसने उसे हीरों और रत्नों से जड़ा फूलों का गुलदस्ता भेंट किया था।

शीघ्र ही ताइक्वेत और कारलियर की शादी हो गयी, किंतु कारलियर के लिए यह विवाह वरदान की अपेक्षा अभिशाप सिद्ध हुआ। उसका यह विश्वास कि उसका पति अपार सम्पत्ति का स्वामी है—यों चूर हो गया जैसे पत्थर की चोट लगने पर आईना।

इसी बीच ताइक्वेत ने अपनी पत्नी का परिचय अपने एक मित्र से, जो फ्रांसीसी पहरेदारों की सेना में कप्तान था,

फांसी का एक दृश्य

कराया। वह सुंदर, स्वस्थ एवं आकर्षक था। उसका नाम था—मांतज्योरज़।

अपने पति से ऊबी कारलियर मांत के प्रति आकर्षित हुई। यह आकर्षण इतना बढ़ गया कि उसने सरेआम अपने पति का अपमान करना आरम्भ कर दिया। यही नहीं, एक दिन कुछ लोगों ने ताइक्वेत की हत्या का भी प्रयत्न कर डाला। उस पर एक साथ कई गोलियां चलायी गयीं, किंतु वह भाग्य से बच गया।

टाइक्वेट

कारलियर को मुख्य षड्यंत्रकारी समझा गया। मुकदमा चला और काफी बहस-मुबाहसे के बाद उसे फांसी की सजा सुना दी गयी।

नियत समय पर कारलियर को यातनागृह में ले जाया गया। वहां उसे मौत का फरमान पढ़कर सुनाया गया। फिर उससे पूछा गया कि क्या वह अपना अपराध स्वीकार करती है? कारलियर ने अस्वीकार करते हुए सिर हिलाया। इस पर उसे एक तरल पदार्थ पीने के लिए विवश किया गया। उसे पीते ही कारलियर की नस-नस में पीड़ा होने लगी।

उन दिनों अपराध स्वीकार कराने के लिए तरह-तरह की यातनाएं दी जाती थीं। जब कारलियर ने यातना पहुंचाने वाले अन्य उपकरणों को देखा तो उसकी हिम्मत जवाब दे गयी। उसने अपना अपराध स्वीकार कर लिया।

अब कारलियर को गाड़ी को बैठाकर वध-स्थल की ओर ले जाया गया। स्थल पर काफी लोगों की भीड़ थी। उन तमाशबीनों में कारलि[illegible] प्रशंसक भी थे। कारलियर को देख[illegible] उन्होंने शोर मचाना शुरू कर दि[illegible] धीरे-धीरे भीड़ की सहानुभूति कार[illegible] के प्रति होने लगी। वे सब उत्तेजित [illegible] में वध-मंच की ओर बढ़ने लगे। [illegible] लियर के पहले एक और व्यक्ति को [illegible] के घाट उतारना था। पहले उसे [illegible] लिये गये। अब कारलियर की बारी [illegible]

नपे-तुले कदमों से मंच की [illegible] पर चढ़ने लगी। शाही जल्लाद के [illegible] पहुंचकर उसने मीठे स्वरों से [illegible] "महोदय कृपा कर बताइए कि मैं [illegible] तरह, कहां खड़ी रहूं, सिर किस स्थान [illegible] रखूं?"

शाही जल्लाद ने नियत स्थान [illegible] ओर संकेत किया। कारलियर बिना [illegible] सिर झुकाकर बैठ गयी।

अगले ही पल शाही जल्लाद [illegible] दुधारी तलवार सिर तक उठाकर [illegible] लियर की गरदन पर वार किया। खून [illegible] फव्वारा छूट पड़ा, पर कारलियर का [illegible] पूरी तरह धड़ से अलग नहीं हुआ [illegible]

भीड़ में क्रोध की लहर दौड़ [illegible]

शाही जल्लाद ने दोबारा [illegible] चलायी। इस बार भी सिर अलग [illegible] हुआ।

भीड़ क्रोध से पागल हो गयी। [illegible] शाही जल्लाद ने पूरी ताकत से [illegible]

वार किया।

कारलियर का सिर एक ओर लुढ़क गया। शाही जल्लाद के एक सहायक ने उसके कटे सिर को उठाकर एक पेटी पर रख दिया। कारलियर का चेहरा अभी उतना ही सुंदर और शांत था।

खेल खत्म हो चुका था। तमाशबीनों की भीड़ छंटने लगी थी। मेरे पितामह ने किसी को कहते हुआ सुना था—"छल-प्रपंच का परिणाम कितना भयानक होता है!"

यह किसकी ओर संकेत था, ज्ञात नहीं। ताइक्वेत की ओर या कारलियर की ओर!

चक्कों पर मौत

कारलियर के साथ-साथ एक और अपराधी की मुझे याद आती है। उसका नाम कारतुशे था। उसे चार्ल्स सेंसन द्वितीय ने मौत के घाट उतारा था। कारतुशे एक भयंकर अपराधी था। उसके कारनामे सुनकर मजबूत-से-मजबूत दिल वाले कांप जाया करते थे। १५ अक्तूबर, १७२१ को जब वह पकड़ा गया तो सारे पेरिस में सनसनी फैल गयी थी। चारों ओर शोर मच गया कि कारतुशे पकड़ा गया है!

कारतुशे को देखने के लिए लोगों की भीड़ उमड़ पड़ी। वह बेहद बदसूरत था, और उसकी जवांमर्दी पर पेरिस की सम्भ्रांत, कुलीन महिलाएं दीवानी थीं। कारतुशे एक बार जेल से भागने में करीब-करीब सफल भी हो गया था, पर ऐन मौके पर वह पकड़ लिया गया। अब उसके मुकदमे में देरी नहीं की गयी। २६ नवम्बर को उसे फांसी की सजा सुना दी गयी। सजा में कहा गया कि पूछताछ की भीषण यातनाओं के बाद उसकी हड्डी-हड्डी तोड़ दी जाए। यह एक भयानक सजा थी। कारतुशे के दो साथियों को फांसी पर लटकाने की आज्ञा दी गयी थी।

२७ नवम्बर को कारतुशे को यातनाएं देने का काम शुरू कर दिया गया। उसे यातनाकारी जूते पहनाये गये, पर कारतुशे ने अपराध स्वीकार करने से इनकार कर दिया। इसी बीच बढ़इयों को पांच चक्के और फांसी के दो तख्ते तैयार करने का हुक्म दे दिया गया था।

नियत तिथि को वध-स्थल पर लोगों की काफी भीड़ एकत्र हो गयी। वध-स्थल के आस-पास मकानों की खिड़कियों की कीमत बढ़ गयी। मौत के इस तमाशे

गिलोटीन का आविष्कारक

को देखने के लिए काफी ऊंची दरों पर लोगों ने टिकटें खरीदीं।

थोड़ी देर बाद एक गाड़ी से कारतुशे को लाया गया। उसे देखते ही भीड़ शोर मचाने लगी।

कारतुशे का खयाल था कि उसे फांसी पर लटकाया जाएगा, पर जब उसने विशाल चक्कों को देखा तो उसकी हिम्मत जवाब दे गयी, पर वह बेहद चालाक था। उसने अपराध स्वीकार करने में एक दिन की मोहलत मांगी। यह मोहलत भी उसे दे दी गयी, पर अंत में कारतुशे को मौत के चक्कों में पिसना ही पड़ा। यह एक भयानक दृश्य था, पर वध-स्थल के आसपास मौजूद भारी भीड़ को इसमें तमाशे का मजा आ रहा था।

चार्ल्स सेंसन द्वितीय ने अधिक जिंदगी नहीं जी। वे पैंतालीस वर्ष की आयु में ही चल बसे। उनके बाद उनके बड़े बेटे चार्ल्स ज्यां बापतिस्ते को सात वर्ष की अवस्था में ही यह काम सम्भालना पड़ा।

इस समय सेंसन परिवार दूसरों को मौत के घाट उतारने के अभिशाप से बड़ी आसानी से मुक्त हो सकता था, पर चार्ल्स सेंसन की विधवा पत्नी को यह मंजूर न था। उन्होंने सरकारी अधिकारियों से लिखा-पढ़ी कर अपने सात वर्षीय पुत्र को शाही जल्लाद बनवा कर ही चैन की सांस ली। बाद में जब ज्यां बापतिस्ते सेंसन को लकवे से पीड़ित होने के कारण यह काम छोड़ना पड़ा तो उनके छोटे भाई गैबरियल सेंसन ने अस्थायी ... पर शाही जल्लाद का काम किया, ... अंततः यह पद ज्यां बापतिस्ते सें... पुत्र चार्ल्स हेनरी को ही मिला।

ज्यां बापतिस्ते सेंसन के रोजनामचे ... एक बड़ी ही करुणाजनक घटना ... उल्लेख है।

बात जो पैंतीस वर्ष बाद ... एक रात उनके विवाह के ... में नृत्य-भोज का आयोजन किया ... था। उसमें पेरिस के अन्य जल्लाद ... उनके परिवार के सदस्य शामिल हुए ...

अचानक मकान के बंद द्वार ... थपथपाहट की आवाज हुई।

रात काफी बीत चुकी थी। ... मेहमान के आने की आशा न थी। मेजबान के नाते ज्यां बापतिस्ते ने आगे बढ़ ... स्वयं द्वार खोला। बाहर कुछ युवक खड़े ... वे वर्षा से बुरी तरह भीगे थे और ... भर शरण लेने के इरादे से वहां आये ... खिड़की से निकलते प्रकाश और ... वरण में बिखरती संगीत लहरियों ने ... अनायास ही आकर्षित कर लिया ... वे सब युवक कुलीन परिवार के ... पड़ते थे। उनमें से एक सुंदर युवक ... रिश वंश का-जैसा जान पड़ता था।

ज्यां बापतिस्ते ने उन सब ... स्वागत किया। उन्हें नृत्य और भोज ... सम्मिलित होने का निमंत्रण दिया। ... जिंदादिल युवकों ने इस प्रस्ताव को ... स्वीकार कर लिया।

रातभर नृत्य-संगीत के साथ-साथ खाना-पीना भी होता रहा। सूरज की पहली किरन फूटने के साथ यह कार्यक्रम समाप्त हुआ।

सहसा ज्यां बापतिस्ते ने उन युवकों से हंसते हुए पूछा, "क्या आप लोग जानते हैं कि आपका मेजबान कौन है? किसने आपकी खातिरदारी की है?"

युवकों ने भी हंसकर कहा, "नहीं!"

तब मेरे पितामह ने मुसकराते हुए कहा, "मैं ज्यां बापतिस्ते सेंसन हूं—पेरिस का शाही जल्लाद! और मैं ही नहीं, आपको छोड़कर और जितने भी लोग यहां मौजूद हैं, वे सब भी मौत के घाट के मल्लाह हैं।"

ज्यां बापतिस्ते सेंसन का परिचय जानते ही उन युवकों के चेहरे का रंग पीला पड़ गया। पर उनमें से एक युवक हंसता रहा। उसने कहा, "आपका परिचय जानकर बहुत खुशी हुई। मैं स्वयं आपसे मिलना चाहता था। मेरी बड़ी इच्छा थी कि मैं किसी जल्लाद से मिलूं। उसके वे हथियार देखूं जिनसे आदमी क्षण भर में किसी और दुनिया में चला जाता है।"

ज्यां बापतिस्ते क्षण भर के लिए हिचकिचाये। फिर वे उस युवक को एक कमरे में ले गये। इनमें वे हथियार रखे हुए थे, जिनसे वे मृत्यु दंड के अपराधियों को तरह-तरह की यातनाएं देने के बाद मौत के घाट उतारा करते थे। इस युवक के साथ-साथ अन्य युवक भी कमरे में

गिलोटीन का शिकार सम्राट लुई

आ गये थे। यातना-यंत्रों की विचित्र बनावट पर उन्हें बेहद आश्चर्य हो रहा था। तभी उस युवक की नजर 'न्याय की तलवार' पर पड़ी।

उसने उत्सुक हो तलवार उठानी चाही। मेरे पितामह ने उसे तलवार देते हुए कहा, "इस तलवार ने कई लोगों को एक ही बार में मौत के घाट उतारा है!"

युवक ने आश्चर्य और अविश्वास से कहा, "मुझे लगता नहीं कि आप किसी की गरदन एक ही वार में धड़ से अलग कर सकते हैं!"

ज्यां बापतिस्ते ने हंसकर कहा, "समय आने पर मैं यह भी सिद्ध कर दूंगा कि सचमुच एक ही वार से किसी की गरदन काट सकता हूं।"

"मुझे भरोसा नहीं होता!" युवक ने अपने हठ पर अड़ते हुए कहा।

ज्यां बापतिस्ते ने आगे बहस नहीं की।

बेकार की बहस से तल्खी ही पैदा होती।

इस घटना को कई वर्ष बीत गये। मेरे पितामह बूढ़े हो चले। उनका स्थान मेरे पिता ने ले लिया।

अचानक पेरिस में एक मुकदमे की धूम मच गयी। काउंट द' लैली तालनदेल को फांसी सुनायी गयी। उन पर आरोप लगाया कि उन्होंने भारत में फ्रांसीसी हितों की भलीभांति देख-रेख नहीं की। सम्राट की प्रतिष्ठा को हानि पहुंचायी है।

जब मेरे पितामह को लैली तालनदेल के मृत्युदंड का समाचार मिला तो उन्होंने अपने पुत्र चार्ल्स हेनरी सेंसन से कहा, "बेटा, इस कैदी को मैं स्वयं मौत के घाट उतारूंगा।" फिर ३५-३६ पूर्व एक बरसात की रात को घटी घटना को ब्यौरेवार सुनाते हुए उन्होंने कहा, "इस युवक ने मेरी शक्ति पर, तलवार की धार पर संदेह किया था। मैं आज पैंतीस वर्षों बाद उसके संदेह को दूर करना चाहता हूं।"

चार्ल्स हेनरी को बेहद अचरज हुआ। उनके वृद्ध पिता का दायां हाथ लकवे के कारण बेकार-सा हो गया था। अब वे पहले-जैसे बलिष्ठ भी नहीं रह गये थे। इस समय तो वे काफी अशक्त और असहाय थे। पर उनकी जिद के आगे किसी की न चली। उन्होंने लैली तालनदेल के लिए वही तलवार चुनी, जिसे देखकर उसने आश्चर्य व्यक्त किया था।

वध-स्थल पर पहुंचने पर उन्होंने देखा कि तालनदेल मंच पर सिपाहि... घिरा खड़ा है। उसके हाथ पीछे को... बंधे हैं, सिर पर गरदन तक एक ... पड़ा हुआ है।

चार्ल्स हेनरी न्याय की तलवार ले... बढ़े, पर उनके पिता ने उन्हें रोक लि... उन्होंने तालनदेल के सिर से चोगा ... रते हुए कहा, "महोदय, इस वस्त्र... का मैं ही स्वामी हूं। पैंतीस वर्ष ... बरसात की एक रात आप मेरे मेह... थे। आज भी आप मेरे मेहमान हैं। पैं... बरस पहले आपने एक शंका की ... आज उसे दूर करने का समय आ ... है।" तालनदेल ने ज्यां बापतिस्ते ... गौर से देखा। फिर मुसकरा उठा। ... कहा, "मेरे हाथ खोल दो।"

मौत के चक्कों को हे...

ज्यां बापतिस्ते ने असमर्थता ... की तो तालनदेल ने पास खड़े ... हेनरी से कहा, "अच्छा तो तुम्हीं ... वास्केट उतारकर उसे दे दो। यह ... ओर से उसे छोटी-सी भेंट है।"

तालनदेल की वह वास्कट ... कीमती थी। उसमें भारतीय जरी ... काम किया गया था। बटन में ... रत्न जड़े थे। ज्यां बापतिस्ते ने ... भेंट स्वीकार की। फिर उन्होंने ताल... को बलिवेदी पर सिर रखने के लिए ...

शायद इस समय तक तालनदेल ... अपनी भावनाओं पर पूरी तरह नि... कर लिया था। उसने चुपचाप अपना ...

बलिवेदी पर रख दिया। अगले ही क्षण मेरे पितामह का एक बार उसकी गरदन पर पड़ा। पर यह क्या ? गरदन पूरी तरह अलग नहीं हुई ! ज्यां बापतिस्ते की आंखें मृत तालनदेल की खुली आंखों से जा मिलीं ! उन्हें लगा, जैसे वे उनका उपहास कर रही हों ।

अगले पल मेरे पितामह ने फिर से वार किया । दूसरे ही क्षण सिर एक ओर लुढ़क पड़ा।

शाही जल्लाद के सहायकों ने उसे उठाकर भीड़ को दिखाया। वह शोरकर उठी।

ज्यां बापतिस्ते सेंसन के बाद उनके पंद्रह वर्षीय पुत्र चार्ल्स हेनरी सेंसन ने शाही जल्लाद का काम संभाला । पंद्रह वर्ष की अवस्था बहुत अधिक नहीं होती ! पेरित के अन्य जल्लादों ने इसी आधार पर हमारे खानदान से यह काम छीनना चाहा, पर मेरी परदादी के कारण उनकी एक नहीं चलने पायी। यह उनके लिए प्रतिष्ठा की बात थी। और अपनी प्रतिष्ठा बनाये रखने के लिए उन्होंने जमीन-आसमान एक कर डाला। उनके प्रयत्नों के कारण ही शाही जल्लाद का पद सेंसन परिवार के हाथों से नहीं गया।

मृत्युदंड से पूर्व

चार्ल्स हेनरी के समय फांसी की सजा पाये कैदियों को एक चक्के में फंसाकर मारा जाता था। यह मृत्यु बड़ी यातनापूर्ण होती थी । बंदी की चीखों से पत्थर भी दहल उठते थे। किंतु एक घटना के बाद फांसी का यह अमानवीय तरीका सदा के लिए समाप्त कर दिया गया।

हुआ यह कि मास्टर मायुरिन नामक एक लोहार का इकलौता युवक पुत्र ज्यां वालतेयर, रूसो आदि चिंतकों के विचारों से बहुत प्रभावित था। वह सरेआम अपने नये विचारों को व्यक्त करता रहता था। स्वाभावतया पुरानी पीढ़ी के पिता को यह सब नापसंद था। अतः पिता-पुत्र में आयेदिन संघर्ष हुआ करता था।

संघर्ष की इस आग में घी का काम

किया एक प्रौढ़ा ने जिसकी पुत्री से ज्यां प्यार करता था। वह ज्यां से चिढ़ती थी। उसे तंग करने के लिए उसने बूढ़े लोहार यानी ज्यां के पिता से अपनी बेटी का विवाह भी तय कर दिया। जब ज्यां को इस विवाह की खबर मिली तो उसने अपनी प्रेमिका को भगा ले जाने की योजना बनायी, किंतु शायद भाग्य ज्यां के विरुद्ध था! अपने इस प्रयत्न में बूढ़े पिता से उसकी लड़ाई हो गयी जिसके फलस्वरूप वृद्ध पिता चल बसे। ज्यां पर हत्या का आरोप लगाया गया और एक लम्बे मुकदमे के बाद उसे फांसी के तख्ते पर चढ़ाने का हुक्म दे दिया गया।

इसी बीच ज्यां के युवा-मित्र चुप नहीं बैठे थे। उन्होंने इस सारे मामले को

वध-स्थल का भयानक दृश्य

राजनीतिक रूप दे दिया। वहां के ज्यां के समर्थन में आंदोलन करने

आखिर फांसी का दिन आ

ज्यां को एक गाड़ी में बिठाकर स्थल की ओर ले जाया जाने लगा। के दोनों ओर लोगों की भारी भीड़ थी। ज्यां की प्रशंसा में लोग नारे लगे थे। चार्ल्स हेनरी को लगा कि उपद्रव न छिड़ जाए!

जैसे-तैसे यह जुलूस वध-स्थल पहुंचा। वहां लकड़ी का मंच तैयार दिया गया था। यातना के यंत्र रखे गये थे। उत्तेजित जनता ज्यां मुक्त कराने के लिए व्यग्र थी। मेरे पिता- मह ने शीघ्रता करनी चाही, किंतु तक काफी देर हो चुकी थी। भीड़ ने स्थल पर हमला कर दिया था। आक्रोश के साथ यातना के यंत्रों मृत्यु-चक्कों की होली जला रही

मेरे पितामह भयभीत हो उठे। जीन के एक मित्र ने, जो भीड़ का कर रहा था, उनसे कहा "चार्ल्स, भयभीत होने की आवश्यकता नहीं। तुमसे नहीं, तुम्हारे पेशे से, तुम्हारे के यंत्रों से घृणा है!"

उधर यातना के यंत्र धूं-धूं कर रहे थे। इसके साथ ही मृत्यु-चक्र कर फांसी देने का तरीका भी के लिए समाप्त हो गया था।

गिलोटीन का

फ्रांस की जनता फांसी की सजा

कार्दो

कैदियों को मृत्यु के पूर्व दी जाने वाली यातनाओं के खिलाफ हो गयी थी। उनके इस विरोध को वाणी दी थी, डॉक्टर गिलोटीन ने, जिनके नाम पर आगे चलकर फांसी के एक विशिष्ट यंत्र का नाम पड़ा।

डॉक्टर गिलोटीन ने फ्रेंच एसेम्बली में प्रस्ताव पेश कर बार-बार मांग की कि मृत्यु-दंड पाये कैदियों के साथ भेदभाव न किया जाए। न तो उन्हें मृत्यु-पूर्व भीषण यातनाएं दी जाएं और न उनकी सम्पत्ति ली जाए। न उनके परिवारों को लांछित किया जाए।

उन दिनों फ्रांस में फांसी के बाद शव के प्रदर्शन की प्रथा थी। यह दृश्य बड़ा वीभत्स होता था। सिर कलम करवा कर प्राण दंड पाने वाले बड़े सौभाग्यशाली समझे जाते थे, क्योंकि इससे उन्हें मृत्यु-पूर्व की यातनाएं नहीं सहनी पड़ती थीं। अतः डॉक्टर गिलोटीन ने ऐसे यंत्र की खोज शुरू की जिससे सिर आसानी से काटे जा सकें।

इस सिलसिले में वे मेरे पितामह से भी मिले। पर लम्बी-लम्बी चर्चाओं के बाद भी कोई संतोषजनक समाधान न मिल पाया। फिर दोनों ने मिलकर प्रायः सभी देशों के फांसी के तरीकों पर विचार-विमर्श किया। इसके लिए कई पुस्तकालय छाने गये। प्राचीन शिल्पों, चित्रों और संदर्भ-ग्रंथों को देखा गया। उन्हें इटली के एक खुदाई-चित्र में अंकित फांसी का तरीका जंच गया। इसे मानाइया कहते थे। पर मानाईया ही बाद में गिलोटीन-यंत्र का आधार बना।

पर इसके पूर्व फ्रेंच एसेम्बली में इस प्रश्न पर काफी बहस हुई। बड़ी बारीकी से प्रत्येक बात पर विचार किया गया। यहां तक कि तत्कालीन सम्राट ने एक अजनबी का वेश धारण कर यंत्र बनाने वालों को कुछ सुझाव दिये। वे चाहते थे कि फांसी के तख्ते का चाकू ऐसा हो, जो सभी तरह की, मोटी-से-मोटी गरदन भी काट सके।

आखिर एक दिन गिलोटीन यंत्र तैयार हो गया। उसकी कार्यक्षमता जांचने के लिए तीन लाशों पर प्रयोग किया गया।

कुछ दिन बाद की बात है। पेलेतिन नामक एक व्यक्ति को चोरी और हत्या के प्रयत्न के आरोप में पकड़ा गया। उसे फांसी की सजा सुना दी गयी। पेलेतिन गिलोटीन को देखते ही मूर्च्छित हो उठा।

मैं आज सोचता हूं, क्या गिलोटीन वाकई फांसी का कम क्रूर तरीका था! फिर भी उन दिनों उसे फांसी का एक सर्वमान्य तरीका स्वीकार कर लिया गया था। उसने चोरों से लेकर क्रांतिकारियों तक को समान रूप से मौत के घाट उतारा था। स्वयं सम्राट लुई सोलहवें एवं क्रांतिकारी राब्सपियरे को 'गिलोटीन' के नीचे आना पड़ा था। कितनी बड़ी विडम्बना थी कि इन दोनों ने स्वयं

कादम्बिनी

भारतीय भाषाओं की विशिष्ट पत्रिका

नव-वर्षांक

डेट धुलाई की टिकिया
साबुनों के मुक़ाबले 1½ गुनी ज़्यादा शक्तिशाली —खारे पानी में भी
डेट धुलाई का पाउडर
सफ़ेद या नीला—कई साइज़ के पैक में मिलता है. कपड़ों को इसके घोल मे भिगोइये और धो लीजिये.
हाथों को मुलायम भी रखता है.
एन-डेट
दाग़-धब्बे नाशक एनज़ाइमयुक्त धुलाई का पाउडर, सक्रिय लेकिन हानिरहित.
new!
det
detergent washing cake
NEW!
TRIPLE ACTION
det
WASHES WHITEST
enzyme
det
washes away stubborn stains
न कभी थी, न मिलेगी; ऐसी सफ़ेदी—डेट उत्तम पदार्थों से
Shilpi HPMA 5A/74 Hin

चेहरे पर लाए...

...दिल की जवानी

जीती जागतीं, उमंगों में इठलातीं, खुशियों के जवान रंगों में इतरातीं, आप ...! लेकिन यदि चेहरे पर इनकी झलक न आए ? ... तो यह काम पाण्ड्स कोल्ड क्रीम को दे दीजिए न ! आपकी त्वचा में मौजूद सभी गुणकारी 'प्राकृतिक' तेलों से मिश्रित है पाण्ड्स कोल्ड क्रीम. मुश्किल यह है कि ये सौंदर्य तेल आपके शरीर को बराबर नहीं मिलते ... इसलिए पाण्ड्स कोल्ड क्रीम मलिए—
—अपनी त्वचा के पोषण, जाड़े की सूखी, ठण्डी हवाओं और चिलचिलाती, चिपचिपी गर्मी से इसकी रक्षा के लिए. फिर इसकी अधिक चिपचिपाहट पोंछ दीजिए और आपकी त्वचा फिर से जवान, जगमग !

पाण्ड्स कोल्ड क्रीम

संसार में सर्वाधिक बिक्री वाली कोल्ड क्रीम

चीज़ब्रो पाण्ड्स इन्क. (सीमित दायित्व के साथ यू. एस. ए. में स्थापित)

लिंटास - CPC. 5.71 Hi

SILVER PRINCE
STAINLESS
SILVER
PRINCE
STAINLESS

nova
NOVA
alcum Powder
Eclat
COLD CREAM
NOVA
nova
Eclat
TOILET SNOW
NOVA

रोशनी की दुनिया में
फ़िलिप्स बेपनाह
खूबसूरती पेश करते हैं—
लियोनोरा शृंखला में
तरह-तरह के काँच शेड्स.
डिजाइन, खूबसूरती
और निर्माणकौशल
में इतना आगे जो
कल्पना को भी पीछे
छोड़ जाए. काँच, रंग
और कल्पना का अपूर्व
इन्द्रधनुषी मेल. रोशनी
और रंग-रूप में एक
अभिनव अनुभव.

PHILIPS

फ़िलिप्स

फ़िलिप्स इंडिया लिमिटेड

उत्तर रेलवे

समय सारिणी सूचना

उत्तर रेलवे की नई समय सारिणी १ अक्तूबर, १९७४ से लागू हो गई है जिसमें अधोलिखित महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए हैं :

नई गाड़ियां चालू की गईं

१३१ अप/१३२ डाउन जयन्ती जनता एक्सप्रेस की आवर्तन जो नई दिल्ली और मैंगलोर/कोचीन के मध्य चलती है, सप्ताह में दो बार से सप्ताह में तीन बार बढ़ा दी गई। अतिरिक्त यात्रा नई दिल्ली से बृहस्पतिवार व मैंगलोर से मंगलवार को आरम्भ हो गई है।

वर्तमान गाड़ियां जो रद्द की गईं

यात्रियों के कम होने के कारण निम्नलिखित गाड़ियां रद्द कर दी गईं :

गाड़ी नं.	सेक्शन जिन पर रद्द की गईं
३ बी आर आर/४ बी आर आर	रिवाड़ी—रतनगढ़
१ बी के एफ/४ बी के एफ	कोटकपुरा—फाजिल्का
५ एफ एफ/८ एफ एफ	फिरोजपुर—फाजिल्का
३ एए/४ एए/५ एए/६ एए	अमृतसर—अटारी
३ एडी/४ एडी	डेराबाबा नानक—अमृतसर
५ जे एच/८ जे एच	जालंधर सिटी—होशियारपुर
१ एन जे/२ एन जे	नवांशहर दोआबा—जालंधर सिटी
१ जे एन/२ जे एन	जालंधर सिटी—नकोदर
१ एस आर/२ एस आर	संभल हातिमसराय—राजा का सहसपुर
५ एच आर/६ एच आर	हरिद्वार—ऋषिकेश
१ ए टी/२ ए टी	अकबरपुर—टांडा
३ जे एन के/४ जे एन के	जिंद—नरवाना—कुरुक्षेत्र
१ एचएच/२ एचएच/५ एचएच/६ एचएच	हाथरस जंक.—हाथरस किला
३३९ अप/३४० डाउन	भटिण्डा—अबोहर

निम्नलिखित गाड़ियां यद्यपि नई समय सारिणी में नहीं दर्शाई गई हैं फिर भी अपने मौजूदा समय पर चल रही हैं :—

३४५ अप/३४६ डाउन	भटिण्डा—फिरोजपुर
७ जे एच (नया नं. ५ जे एच)	होशियारपुर—जालंधर सिटी होशियारपुर से १३.३५ बजे छूटती है

गाड़ियों का चलना समाप्त किया गया :

२ आर डी जी दिल्ली और गाजियाबाद के बीच।

२ यू के एन/२ एन के नरवाना और कैथल के बीच।

नए स्टापेज प्रदान किए गए :

६१ अप/६५ अप जनता एक्सप्रेस चन्दोक पर ।
६१ अप/६२ डाउन)
६५ अप/६६ डाउन) जनता एक्सप्रेस हरचंदपुर पर ।

स्टाप खत्म किए गए :

६१ अप/६५ अप जनता एक्सप्रेस बलावली, अंजी शाहाबाद व रहीमाबाद पर ।
८१ अप/१०३ अप व १०४ डा./८२ डा. ए. सी. एक्सप्रेस फतेहपुर पर ।
६४ डा. अवध एक्सप्रेस अजगेन व सोनिक पर ।
६३ अप अवध एक्सप्रेस अमौसी पीपरसंद, हरौनी, कुसुंभी, मगरवार व कानपुर ब्रिज बांयें किनारे पर ।

गाड़ियों के समय में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन :

२१५ अप (१५ अप) चेतक एक्सप्रेस दिल्ली सराय रोहिल्ला से १२.१५ बजे के स्थान पर १२.५० बजे छूटती है व उदयपुर ८.५५ बजे के स्थान पर ८.५२ बजे पहुंचती है ।
२ बी एस ए सूरतगढ़ से ७.०० बजे के स्थान पर ५.०० बजे छूटती है व अनूपगढ़ पर १०.०५ बजे के स्थान पर ८.१० बजे पहुंचती है ।
२१६ डाउन (१६ डाउन) चेतक एक्सप्रेस उदयपुर से १८.३५ बजे के स्थान पर १८.०० बजे छूटती है व दिल्ली सराय रोहिल्ला पर १५.३० बजे के स्थान पर १३.५० बजे पहुंचती है ।
१.बी एस ए अनूपगढ़ से १०.४५ बजे के स्थान पर ९.३० बजे छूटती है व सूरतगढ़ १३.१५ बजे के स्थान पर १२.५५ बजे पहुंचती है ।
६ डाउन अमृतसर - हावड़ा मेल अमृतसर से १९.४५ बजे के स्थान पर १९.३५ बजे छूटती है ।
३५० डाउन अमृतसर - देहरादून पैसेंजर अमृतसर से १७.४५ बजे के स्थान पर १७.३५ बजे छूटती है ।
३६३ डाउन आगरा - दिल्ली पैसेंजर दिल्ली १९.२३ बजे के स्थान पर १९.०५ बजे पहुंचती है ।
३७० डाउन फिरोजपुर - दिल्ली पैसेंजर २३.५० बजे के स्थान पर २३.३० बजे दिल्ली पहुंचती है ।
२ डी जे पी १९.५० बजे के स्थान पर १९.३० बजे दिल्ली पहुंचती है ।

थ्रू कोचेज के प्रचलन में परिवर्तन :

एक द्वितीय श्रेणी का डिब्बा जोधपुर - फुलेरा के बीच २०७ अप/२०८ डाउन गाड़ी में प्रतिदिन लगाया जा रहा है ।
एक द्वितीय श्रेणी का डिब्बा जोधपुर - जयपुर के बीच २०७/डब्लु आर ७ अप—डब्लु आर ८/२०८ डाउन गाड़ियों में हफ्ते में दो दिन के स्थान पर अब प्रतिदिन लगाया जा रहा है ।
एक द्वितीय श्रेणी का डिब्बा जोधपुर व पोकरन के बीच १ जे जे जे/२ जे जे जे गाड़ियों में प्रतिदिन लगाया जा रहा है ।

शब्दसामर्थ्य बढ़ाइए

• विशालाक्ष

१. **गोलमाल**——क. हेराफेरी, ख. गबन, ग. टंटा, घ. गड़बड़।

२. **सुगम**——क. सरलता से गम्य, ख. सरलता से लभ्य, ग. सरल, घ. सरलता से बोध्य।

३. **झल्लाना**——क. क्रोधित होना, ख. झुंझलाना, ग. भड़कना, घ. झनझनाना।

४. **दिग्भ्रम**——क. किधर सही किधर गलत, यह संदेह, ख. रास्ता भूलना, ग. भटकना, घ. अनिश्चय।

५. **द्विविधा**——क. दो विवि[illegible] दोबारा, ग. असमंजस, घ. [illegible]

६. **भद्र**——क. सभ्य, ख. [illegible] ग. सज्जन, घ. संन्यासी।

७. **धौंस**——क. घुड़की, ख. [illegible] ग. भभकी, घ. रोब।

८. **पधारना**——क. शुभागमन [illegible] ख. आना, ग. विराजना, घ. [illegible]

९. **नगण्य**——क. असंख्य, ख. [illegible] के योग्य, ग. उपेक्षा के योग्य, घ. [illegible]

१०. **दुरदुराना**——क. बड़बड़ाना, [illegible] दलना, ग. तिरस्कारपूर्वक दूर [illegible] घ. काटना।

(पृष्ठ २१ पर देखिए

दो द्वितीय श्रेणी के डिब्बे नई दिल्ली व खुर्जा के बीच चलने वाली २ एन डी एच/६ के एम—१ के एम/१ एन डी एच गाड़ियों से कम यात्री होने के कारण रद्द कर दिए गए हैं।

स्लीपर कोचेज के प्रचलन में परिवर्तन :

साधारण द्वितीय श्रेणी डिब्बे के स्थान पर ३ टायर शयन यान दिल्ली-ऋषिकेश के बीच चलने वाली ४१/३ एच आर/६ एच आर/[illegible] गाड़ियों में लगाया जा रहा है।

३ टायर शयन यान नई दिल्ली व समस्तीपुर के मध्य चलने वाली ८६/१ एस बी - २०/८५ गाड़ियों में लगाया जा रहा है।

२ टायर शयन यान दिल्ली व बरेली के बीच चलने वाली ३७६ ३७५ पैसेंजर गाड़ियों में लगाया जा रहा है।

वातानुकूलित कोचेज के प्रचलन में परिवर्तन :

४१ अप/४२ डाउन मसूरी एक्सप्रेस में लगने वाला वातानुकूलित डिब्बा दिल्ली से १६-१०-७४ व देहरादून से १७-१०-७४ से शीत काल में बंद कर दिया गया है।

ट्रेनों के समय, थ्रू सेक्शनल कैरेजेज के चालू करने/रद्द करने इत्यादि के संबंध में विस्तृत जानकारी हेतु अक्तूबर १९७४ की समय सारिणी देखनी चाहिए जो रेलवे बुकिंग/आरक्षण/पूछताछ कार्यालयों एवं प्रमुख स्टेशनों के बुक स्टालों पर बिक्री हेतु उपलब्ध है।

सम्पादक की ओर से
सभी के लिए
प्रकाश-पर्व की हार्दिक
शुभकामनाएं.
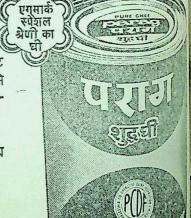
११. **वत्सल**—क. प्रेमी, ख. अनुरक्त, ग. आसक्त, घ. छोटों पर स्नेह करने-वाला।

१२.**दीक्षा**—क. गुरु द्वारा नियम-पूर्वक मंत्रोपदेश, ख. शिक्षा, ग. प्रशिक्षण, घ. गुरुमंत्र।

१३. **परमार्थ**—क. दूसरे का हित, ख. यथार्थ तत्त्व, ग. पारलौकिक हित, घ. पुण्य।

१४. **मतवाला**—क. उद्दंड, ख. पागल, ग. मदोन्मत्त, घ. उद्दाम।

शब्द-सामर्थ्य के उत्तर

१. घ. गड़बड़, गड़बड़ी। धन में, चुनाव में, नियुक्तियों में **गोलमाल**। लो. भा., सं., पुं.। **घपला**, उलटा-सीधा करना, **घोटाला**। संस्कृत-गोलयोग।

२. ग. सरल, सरलता से गम्य, बोध्य, लभ्य। **सुगम** स्थान, पाठ, आय। तत्., वि., उ. लिं.। **सुकर, आसान, सहज**।

३. ख. झुंझलाना। सुनते ही, देखते ही **झल्ला** उठा। तद्., क्रि. अ.। **भभक उठना**। लो. भा.—झल, संस्कृत—ज्वल।

४. क. किधर सही किधर गलत, यह संदेह। चलते-चलते, व्याख्या करते-करते उसे **दिग्भ्रम** हो गया। तत्., सं., पुं.। **दिशा-भ्रांति**, एक दिशा को दूसरी समझना।

५. ग. असमंजस। जाऊं या न जाऊं, इस **द्विविधा** में पड़ा हूं। तत्., सं., स्त्री.। **दुविधा, पसोपेश**। संस्कृत—द्विविध।

६. ख. संस्कारी। भद्र जन, व्यवहार। तत्., वि., पुं.। **सभ्य, शिष्ट, शरीफ, साधु**।

७. घ. रोब। **धौंस** किसको देते, दिखाते हो? लो. भा., सं., स्त्री.। **भभकी, धाक**। संस्कृत—दंश-ध्वंसन।

८. क. शुभागमन करना, किसी के आगमन के लिए आदरपूर्ण शब्द। कब **पधारे** गुरुदेव, **पधारिए**। लो. भा., क्रि.अ.।

९. ख. गणना के अयोग्य। **नगण्य** व्यक्ति, काम, योगदान। तत्., वि., पुं.। **तुच्छ**, अति साधारण, लेखा-योग्य नहीं।

१०. ग. तिरस्कारपूर्वक दूर करना। गंदे को सभी **दुरदुराते** हैं। लो. भा., क्रि. स.। **दुतकारना**, 'दूर हो' कहना।

११. घ. छोटों पर स्नेह करनेवाला—प्रजा **वत्सल**, **वत्सल** गुरु, पिता, **वत्सला** माता। तत्., वि., पुं.। संस्कृत—वत्स, बच्चा, बछड़ा। **मातृवत् स्नेह**।

१२. क. गुरु द्वारा नियमपूर्वक मंत्रो-पदेश। **दीक्षा** दी, ली; **दीक्षांत** भाषण। तत्. सं., स्त्री.। **गुरुमंत्र, व्रतोपदेश, व्रत-ग्रहण**।

१३. ख. यथार्थ तत्त्व। केवल स्वार्थ नहीं, **परमार्थ** भी साधिए। तत्., सं., पुं.। **उच्चतम हित, कल्याण, सत्य**।

१४. ग. मदोन्मत्त। **मतवाले** सैनिकों की भीड़; **मतवाला** हाथी; होली के **मतवाले**। तद्., वि., पुं.। **मत्त, उन्मत्त, मस्त, मस्ती से पागल**। संस्कृत—मत्त, हिंदी—वाला।

कादम्बिनी

आकल्पं कवि नूतनाम्बुदमयी कादम्बिनी वर्षतु

निबंध एवं लेख

२६. कैलाश भारद्वाज
अंधेरे से उजाले की ओर

३०. निखिलचंद्र जोशी
हजारों वर्षों तक ...

३५. जैनेन्द्र वात्स्यायन
'बरम' के प्रतीक यक्ष

४०. भिक्षु चमनलाल
जवाहरलाल नेहरू ...

४६. पद्माशा
जयप्रकाश नारायण अब कहां हैं?

५८. सुरेश राम
महिला जिसने वाटरलू ...

६९. मन्नू भंडारी
लेखक कोई मसीहा नहीं है

७८. श्रीधर पाठक
ह्वेनसांग

८२. त्रिवेदी 'मजबूर'
गजल मेरी है अफसाना किसी का

८६. राजेन्द्र यादव
एक पराजित वक्तव्य

१०१. वियोगी हरि
एक विनीत व्यक्तित्व

११८. डॉ. ओमप्रकाश शर्मा
मधुमेह

१२२. शैला नाटू
वे शैतान को पूजते हैं

१२६. स्वदेशकुमार
सारे साल ...

१४४. प्रकाश बाथम
अदालत में हास्य

१४८. श्रीशचन्द्र मिश्र
कैरेबेयिन द्वीपसमूह

१५६. योगेशचन्द्र शर्मा
हड़तालें : तब और अब

१६७. पी. टी. सुन्दरम
आपकी भाग्यरेखाएं

संपादक
राजेन्द्र अवस्थी

कथा-साहित्य

११. रमेश बतरा
खूटे, जहर, गोलियां

११२. अमरकांत
बधाई

१३४. हरपाल कौर
अंतिम पड़ाव

कविताएं

१६. नरेन्द्र भारद्वाज
बाती तुम्हें तो . . .

सार-संक्षेप

१७८. फ्रेडरिख ड्यूरनमट
एक अंतहीन प्रतीक्षा

स्थायी स्तंभ

शब्द-सामर्थ्य-१८, समय के हस्ताक्षर-१९, काल - चिंतन - २४, विज्ञान : नयी उपलब्धियां-५६, हंसिकाएं-६४, लक्ष्मी-स्तवन-६६, बुद्धि - विलास - ८९, प्रेरक प्रसंग-१४२, दफ्तर को जिंदगी-१५४, कालेज के कम्पाउंड से-१६०, क्षणिकाएं-१६३, प्रवेश-१६५, गोष्ठी-१७३, नयी कृतियां-१७५

सह-संपादक : शीला झुनझुनवाला, उप-संपादक : कृष्णचन्द्र शर्मा, दुर्गाप्रसाद शुक्ल, विजयसुन्दर पाठक, चित्रकार : सुकुमार चटर्जी

मुखपृष्ठ : छाया : प्रदीपचन्द्र

काल-चिंतन

-- वह दीपक जला रही थी और कोई अलक्ष्य हाथ उसे बार-
जाता था।

-- उसने पूछा, 'कौन हो तुम ?'

-- उत्तर में एक अट्टहास प्रतिध्वनित हुआ, 'मैं शाश्वत सत्य हूं।
बांधा जा सकता, न मिटाया जा सकता, न तोड़ा जा सकता
बांटा जा सकता! मैं अंधकार हूं।'

-- सतत प्रयत्न करने के बाद भी वह युवती दीपक नहीं जला
-- युग-पर-युग बीत गये, अंधेरा नहीं गया, दीप चिरंतन नहीं रह
-- इसलिए अंधकार एक सत्य है, और जीवन की अनिवार्य नि

●●

-- अंधकार से विद्रोह एक निरंतर प्रक्रिया है। कवियों ने उस
के स्रोत खोजने की अपेक्षा, हमें भटकाया अधिक है।

-- कहा गया है : दीपक महा ज्योति है। दीपक महा शक्ति है।
वायु है और अंधकार पर शासन करता रहा है।

-- सत्य क्या इनसे विपरीत नहीं है ?

-- ज्योति पर निरंतर आक्रमण करते हुए पतंगे एक स्वर नहीं
हम आशिक हैं अंधेरे के--
जलकर तुम उसे बुझाना चाहते हो ?
इसलिए हम--
बार-बार तुम पर आक्रमण करते हैं!

-- पतंगे अंधकार-प्रिय हैं, इसीलिए वे प्रत्येक ज्योति पर टूट
-- थके हुए क्षणों के लिए अंधेरा आवश्यक है!
-- अंधेरा अनिवार्य है, प्रकाश की प्रतीक्षा के लिए।
-- रात अनिवार्य है, नये जीवन के लिए।
-- जिन देशों में सूर्य नहीं डूबता, वे बनावटी अंधकार बना
में छिपते हैं।
-- सच यह है कि प्रकाश ही जीवन नहीं है। दुनिया का सारा
को पागल बना देता है।

— संपत्ति और समृद्धि की प्रतीक लक्ष्मी का वाहन दीपक नहीं है ;
— दीपक प्रेम का इष्ट नहीं है, वह प्रेम में बाधक है ।
— दीपक स्वयं में कोई शक्ति नहीं है । उसे शक्ति देनेवाला स्नेह जब समाप्त हो जाता है, ज्योति लड़खड़ा उठती है ।
— दीपक के प्रतीक, चाहे वे प्राकृतिक हों या मशीनी, शाश्वत नहीं हैं ।
— नश्वर और सामर्थ्यहीन दीपक तब दूसरों को कितना, क्या दे सकता है ?

●●

— अंधकार महाबलि है, अनंत है । वह सहस्त्र दीपकों के प्रकाश को भी आत्मसात कर लेता है ।
— महा अंधकार के बीच जलती एक दीप-ज्योति चिता की भयावह अग्नि का आभास देती है ।
— विज्ञान ने यह सिद्ध कर दिया है कि अपराध अंधकार में नहीं, प्रकाश में अधिक होते हैं । (वैज्ञानिकों का कहना है कि पूर्णिमा की रात्रि अपराध का अग्रणी केंद्र है, क्योंकि महासागर की तरह मनुष्य के भीतर के जल पर भी चंद्रमा का प्रभाव पड़ता है ।)
— सभी विकसित और प्रकाशित हो जाएं तो भेद की संज्ञा कहां रहेगी ?

●●

— अंधकार यदि बुराइयों का प्रतीक है तो अर्थ यह हुआ कि मनुष्य केवल अच्छाइयों से अपूर्ण है ।
— उसे पूर्णता की ओर ले जानेवाली शक्ति प्रकाश है ।
— उसी को पाने के लिए मनुष्य सतत संघर्षरत है ।
— अपनी दौड़ में वह अंधकार पर थूकता है, और उसे गालियां देता है ।
— और निरंतर संघर्ष करते हुए, अंधकार को पराजित न कर सकने की अपनी अक्षमता के सामने वह दीपक का सहारा लेता है ।
— तो आओ, हम आज एक सत्य को पहचानें—अंधकार की सत्ता को स्वीकारें और उसके बीच प्रकाश की किरणें पैदा कर अपने साथ अंधेरे को भी बदलते चलें ।
— अन्यथा वह दीप जलाती रहेगी और अंधकार उसे पीता रहेगा ।

[handwritten signature]

● कैलाश भारद्वाज

अंधेरे से उजाले की ओर

बाजार चौक में रामलीला चल रही है। चारों ओर रामचंद्रजी की जय-जयकार की धूम मची हुई है। बच्चे, वयस्क, बूढ़े सभी राम के रंग में रंगे हुए हैं। लोग राम-कथा की प्राचीनता के विषय में पूरी तरह आश्वस्त हैं। उनका दृढ़ विश्वास है कि राम-कथा करोड़ों वर्ष पुरानी चीज है। उनकी अखंड आस्था है कि चारों युग (सत, त्रेता, द्वापर और कलि) क्रम से आते हैं तथा प्रत्येक त्रेता युग में राम का अवतार होता है, सीता-हरण होता है, रावण-वध होता है और राम-राज्य की स्थापना होती है।

राम-कथा के विषय में मेरा भी यही विचार है। मैं भी इसे अति-प्राचीन कथा मानता हूं। वाल्मीकि, तुलसी आदि कवि तो इसके बाद के गायक हैं। यह कथा अपनी समग्रता में ऋग्वेद में मौजूद है, राम-कथा ऋग्वेद से भी पुरानी है।

जैसा कि हम जानते हैं, ऋग्वेद का सबसे अधिक शक्तिशाली देवता इंद्र है। उसका सबसे प्रबल शत्रु वृत्र नामक असुर है। इंद्र उषा का प्रेमी तथा सीता (हल चली हुई उर्वरा भूमि) का पति है। वृत्र बादल रूप में इंद्र के प्रेम को पृथ्वी तक न पहुंचने देता, अथवा वृत्र अंधकार के रूप में आकाशी प्रकाश को संसार तक पहुंचने से रोकता है। इस प्रकार पति-पत्नी के बीच में आकर वृत्रासुर वैदिक सीता का हरण कर लेता है। इंद्र वज्र की सहायता से वृत्र का वध करता है तथा इंद्र और सीता का पुनर्मिलन हो जाता है।

इंद्र—सूर्य का प्रतीक

ऋग्वेद के भाष्यकार यास्क इंद्र-वृत्र युद्ध को रूपक द्वारा वर्षा-वर्णन मानते हैं। ऋग्वेद में इंद्र के एक से अधिक रूप मिल जाते हैं, परंतु इंद्र वस्तुतः सूर्य ही है।

ऋग्वेद में प्राप्त कई प्रकार के वर्णन इंद्र को सूर्य ही सिद्ध करते हैं। हो सकता है, किसी युग में इंद्र नामक कोई अत्यंत पराक्रमी ऐतिहासिक राजा रहा हो अथवा 'इंद्र' शक्तिशाली राजाओं की उपाधि के रूप में काम आता रहा हो। परंतु ऋग्वेद में वर्णित इंद्र अधिकांश में सूर्य ही है।

इंद्र को वर्षा का देवता माना जाता है, मगर अब यह जग जाहिर बात है कि वर्षा का कारण सूर्य ही है। और वृत्र है बादल (अथवा अंधकार)। फिर 'सीता' तो पृथ्वी पर पड़ी हल की रेखा अर्थात हल-वाही भूमि है ही। इंद्र वर्षा करके

सीता को कृषि, वनस्पति आदि की जननी बनाता है। बीच में आ जाता है वृत्रासुर अर्थात बादल। वह वर्षा के पानी को रोक इंद्र और सीता को वियुक्त कर देता है तथा यों सीता-हरण कर लेता है।

इंद्र वज्र द्वारा वृत्र का वध कर देता है और न केवल वर्षा का जल भूमि तक पहुंच जाता है, बल्कि बीच का व्यवधान हट जाने के कारण इंद्र और सीता का पुर्नमिलन हो जाता है। इस प्रकार राम-राज्य स्थापित हो जाता है।

अब यदि ध्यान से देखें तो ऋग्वेद का यह कथा-सूत्र ही राम-कथा का विस्तृत विस्तार ओढ़ लेता है : इंद्र राम बन जाता है और धरती सीता। वृत्रासुर रावण का रूप ले लेता है। शेष कवि की कल्पना - बुद्धि का इतिहास-सम्मत चमत्कार है।

राम का इंद्र से संबंध

प्रश्न पूछा जा सकता है कि राम का इंद्र से क्या संबंध है? राम तो विष्णु के अवतार हैं। अब मजेदार बात यह है कि इंद्र और राम तात्विक दृष्टि से दो नहीं हैं : इंद्र का ब्रह्मरूप ऋग्वेद में ही प्राप्त है। दूसरी ओर राम भी विष्णु के ही अवतार हैं और विष्णु तथा ब्रह्म दो नहीं हैं।

इसके अतिरिक्त विष्णु भी सूर्य ही है। वैदिक आर्यों ने सूर्य की भिन्न-भिन्न शक्तियों से भिन्न-भिन्न देवताओं की कल्पना की थी। इंद्र सूर्य है, मित्र सूर्य है, सविता सूर्य है, आदित्य सूर्य है, भग सूर्य है, विष्णु सूर्य है। कहने का आशय यह कि प्राचीन

अंधकार का प्रतीक

समय में बारह महीनों के बारह सूर्य माने जाते थे, जिनमें से एक विष्णु था।

विष्णु सूर्य को ही कहते हैं—इस तथ्य की पुष्टि कुछ अन्य प्रमाणों से भी हो जाती है, यथा—विष्णु का एक स्थान क्षीर-सागर बतलाया गया है, जहां वे शेषनाग की शय्या पर निवास करते हैं। यह चित्र स्पष्टतः उत्तरी ध्रुव पर सूर्योदय का ही चित्र है। नीचे तो क्षीर (दूध)—

जैसी उजली वर्फ ही बर्फ है। उसके ऊपर छह महीने की लंबी रात्रि के अंधकार का काला शेषनाग है और उसके ऊपर है उदय होता हुआ सुबह का सूर्य, ज्योति-रूपिणी लक्ष्मी जिसके चरण दवा रही हैं। यही क्षीर-सागर का शेषशायी विष्णु है।

ऋग्वेद में विष्णु के वामन-रूप का भी उल्लेख है (१।१५४।३)। उस में लिखा है कि उच्च प्रदेश में रहनेवाले, अभीष्ट-वर्षी तथा सब लोकों में प्रशंसित विष्णु ने अकेले ही अति विस्तारवाले तीन लोकों को तीन पग द्वारा मापा था।

यह कार्य सूर्य नित्य ही करता है। हर सुबह अपनी किरणों के द्वारा वह द्युलोक, अंतरिक्ष और पृथ्वी को मापता है। बहुत अधिक दूर होने के कारण सूर्य बहुत छोटा (वामन) ही दिखायी पड़ता है। सूर्य प्रकाश-पुंज का विस्तार करता है तो अपने शत्रु अंधकार (बलि) को दूसरे गोलार्ध (पाताल) में धकेल देता है।

यों वामन-अवतार उदित होता हुआ सूर्य है और असुरराज ... रात्रि का अंधेरा। सीता ... सूर्यास्त बलि के चंगुल में ...

राम-कथा में राम विष्णु ... होने के साथ-साथ सूर्यवंशी ... प्रकार राम मूल रूप में ... ही हैं। सीता 'सीता' है और ... असुरराज बलि। वृत्रासुर ... रचना थी। इसी प्रकार ... ताओं की अपनी रचना है।

विष्णु वास्तव में सूर्य ही ... और भी प्रमाण हैं। 'विष्णुलोक' ... नाम 'गो-लोक' है। साधारण... गाय को कहते हैं। कृष्ण को ... गया है। लेकिन 'गो-पालक' ... की उपाधि है। वहां 'गो' का ... होकर 'किरण' है। इस प्रकार ... और सूर्य—तीनों मूल रूप में ...

वास्तविकता यह है कि ... और अंधकार का यह युद्ध ... हर रोज होता आया है। ... अंधेरे की छीना-झपटी में ... अर्थात मानव-समाज बराबर ... है। यही युद्ध समय-समय पर ... वामन-बलि, राम-रावण, कृष्ण-... के युद्धों के रूप में वर्णित होता ... आम आदमी ने इस पर ... का आरोप करके इसे अपनी ... आधार बनाया है।

सोचता हूं, अंधकार और ... का यह संघर्ष उस समय की ...

सूर्य (विष्णु) की सहधर्मिणी

मनुष्य प्रकाश पैदा नहीं कर सकता था तथा चारों ओर से सुई से भेदने योग्य अंधेरे से घिरा हुआ था। ऋग्वैदिक-काल के कवियों ने प्रकाश के प्रश्न को इंद्र-वृत्र-वृत्तांत के रूप में उभारकर प्रकाश-प्राप्ति की कामना को वाणी दी थी।

और तो और, सावित्री-सत्यवान की कथा भी अपने मूल रूप में आलोक और अंधकार के सतत संघर्ष की ही गाथा है। सावित्री सूर्य की ज्योति है। सूर्य का एक नाम 'सविता' भी है। इसी कारण सावित्री सूर्य की रोशनी है। दूसरी ओर सत्यवान अर्थात सत्य इसी ठोस-यथार्थ संसार का नाम है और यमराज है अंधकार। सांझ को जब सावित्री अपने उद्गम-केंद्र सूर्य में सिमट जाती है तो अंधकार का यमराज इस सत्यवान अर्थात सत्तावान संसार को अपने प्रभुत्व में जकड़ लेता है। सारी रात यही स्थिति रहती है। उषा-काल में सावित्री यमराज का पीछा करती है तथा अंततः 'सत्यवान' को यमराज से वापस छीन लेती है। अंधेरे का यमराज तिरोहित हो जाता है। वह सावित्री (सूर्य-ज्योति) से हार जाता है तथा दिन के प्रकाश में यह सत्तावान संसार पुनः पहले-जैसा हो जाता है।

विचार करने पर सावित्री-सत्यवान नामक 'आख्यान इंद्र-वृत्र-कथा से भिन्न नहीं निकलता। कहने का मतलब यह कि प्रागैतिहासिक युग का वह प्राणी, जिसके पास प्रकाश पैदा करने का ज्ञान

शेषशायी की ज्योति

नहीं था, अंधकार पर प्रकाश की विजय के गीत गाता था तथा कवि-रूप में उसके रूपक गढ़ता था। प्रकाश-प्राप्ति के बाद भी मनुष्य उस रूपक-परंपरा को आगे बढ़ाता रहा है तथा ऐतिहासिक, अर्ध-ऐतिहासिक व कभी-कभी काल्पनिक व्यक्तित्वों पर उजाले-अंधेरे का आरोप करके प्रकाश की विजय पर नत-मस्तक रहा है।

बल्कि मैं तो यहां तक कहूंगा कि दीपावली का पर्व भी अंधकार पर प्रकाश की विजय का ही संकेत-रूपक है, नहीं तो विद्युत ज्योति के इस युग में हम मिट्टी के चार दीवले जलाकर अंधकार की पराजय का नाटक क्यों रचते हैं?

—भारद्वाज-आश्रम, रानी-ताल-बाग, नाहन (हि. प्र.)

हजारों वर्षों तक जलते हुए दीपों का रहस्य

• निखिलचन्द्र जोशी

सन १५५० ई. वसंत का मौसम ! इटली के निसिदा टापू में, जिसे प्राचीनकाल में नेसिस कहते थे, नागदौन (ऐस्पेरेगस) के एक खेत में काम कर रहे किसी किसान का फावड़ा एक बड़े पत्थर से जा टकराया। उसने समीप ही काम कर रहे अपने किसान भाइयों को आवाज लगायी और वे हाथ का काम छोड़ तुरंत वहां जा पहुंचे। इन स्थानों पर अकसर खजाने पाये जाते थे और यह टापू अपने प्राचीन ग्रामगृहों के लिए प्रसिद्ध था।

किसानों ने कुछ ही देर में एक मकबरा खोद निकाला, जिसके दरवाजे मसाले और सीसे की चटकनियों से बुरी तरह जकड़े हुए थे। मकबरे की छत भी बड़ी मजबूत थी।

उत्सुक किसानों ने मकबरे का दरवाजा तोड़ डाला। वे जल्दी ही खजाना पाना चाहते थे, क्योंकि नेपल्स में संग्रहकर्ता उन्हें प्राचीन मूर्तियों, आभूषणों, बरतनों आदि की खासी रकम देते थे।

लेकिन जब किसानों ने टूटे द्वार से भीतर झांका तब वे आश्चर्यचकित रह गये और उनके कंठों से प्रार्थना निकलीं। भीतर संभावित अंधकार के उन्हें तेज रोशनी दिखायी दी, जो किसी की कब्र के पास रखे एक दिये से निकल रही थी।

भय और संशय से घिरे किसान दिये को उठाकर बाहर लाये। उसकी एकदम साफ और नयी लगती थी वह शीशे के एक मर्तबान में बंद था।

किसान आपस में तर्क करने लगे। कोई उसे दैवी क्रिया बताता तो किसी की राय में वह मृतक की अशांत आत्मा थी। अंततः उन्होंने मर्तबान को भूमि पर दे दिया। वह फूट गया, दिये की लौ जाती रही।

मकबरे में दिया? कुछ देशों के लिए यह अजीब बात हो सकती है, लेकिन इटलीवासियों के लिए यह साधारण बात है। आज भी महान कैंपो सैंटो जो मिलान के समीप है, मकबरों में

रात रोशनी की जाती है।

प्राचीन रोमवासियों का यह परंपरागत विश्वास था कि जब इहलोक की एक रात जीवित प्राणी के लिए भयावह और कष्टकारी हो सकती है तब परलोक की अनंतकालीन रातें मृतक के लिए कितनी आतंकप्रद होती होंगी! इसलिए ऐसा नियम था कि हर मकबरे में दिया अवश्य जलाया जाए। लेकिन ऐसा दिया जो एक हजार वर्षों तक जलता रहे, शीशे के बंद बरतन में बिना किसी तेल हवा के अखंड रूप से–वास्तव में अचंभे की बात है।

पादुआ से १७ मील दूर एस्टे नामक एक प्राचीन शहर में, मैक्सिमस के मकबरे में भी अखंड रूप से जलता हुआ एक दिया पाया गया है। इसका उल्लेख प्राचीन इतिहासकार लिसेटस की पुस्तक दे ल्यूसरनिस ऐंटीक्यूरम रिकांडाइटिस' में मिलता है।

लिसेटस ने ओलिबियस-मकबरे से प्राप्त दिये का विस्तृत वर्णन किया है। उसके अनुसार यह मिट्टी के आपस में जुड़े हुए दो बरतनों में बंद था। दिये को दो हौजों से, जिनमें से एक सोने का और दूसरा चांदी का था, जोड़ा गया था। उन हौजों में एक प्रकार का अज्ञात तरल पदार्थ भरा हुआ था। उन बरतनों के बाहर खुदे लेख के अनुसार दिया प्लूटो, अर्थात ग्रीक पुराण के यमदेवता को समर्पित था।

साथ ही यह भी चेतावनी खुदी थी, "सावधान! इस दिये के साथ कोई छेड़-खानी न करे और न ही छूने का दुस्साहस करे, क्योंकि इसके भीतर के सभी तत्त्वों को गुप्त रूप से अभिमंत्रित कर दिया गया है और इस दिये को युगों तक निरंतर जलते रहने की समर्थता प्रदान की गयी है।" लिसेटस इस दिये की उम्र ५०० वर्ष

OMTEX

बताता है। अनुमान है कि यह दिया चौथी शताब्दी में कभी जलाया गया होगा।

तेल के स्थान पर तरल सोना

अंगरेज इतिहासकार विलियम कैमडन ने सन १५८२ में प्रकाशित अपनी वृहत पुस्तक 'ब्रितानिया' में लिखा है—"पिछले युग (१५३६–१५३९) में जब बहुत-से पुराने मठों को ध्वस्त किया जा रहा था, तब एक गुप्त मकबरे पर एक ऐसे दीपक को पाया गया जो युगों से निरंतर जलता आ रहा था। जनश्रुतियों के अनुसार उस मकबरे में सम्राट कांस्टेंटियस को दफनाया गया था।" वह आगे लिखता है, "उस दीपक में तेल के स्थान पर तरल सोना था। इससे ऐसा प्रतीत होता है कि प्राचीन वैज्ञानिक सोने को ऐसी तरलता में परिणत करने की कला जानते थे, जिससे दीपक को युगों तक जलाया जा सके।"

संत आगस्टीन (ई. सन ३५४—ई. सन ४३०) अपने ग्रंथ 'दे सिविटेट देई' में सौंदर्य की देवी वीनस के मंदिर में निरंतर जलते रहनेवाले एक ऐसे दीपक का उल्लेख करता है जो कि खुले स्थान में रखा रहता और जोरों की वर्षा और तेज हवा से तनिक भी प्रभावित नहीं होता था।

निरंतर जलते रहनेवाले दीपक का सबसे ताजा उदाहरण सन १८४० में स्पेन के कोरदोवा स्थान में एक रोमन परिवार के सामूहिक मकबरे में हुआ है।

आधुनिक प्रयोग

हाल में कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय के

तानसेन बनते हो तो लो
तंबूरा और गाओ दीपक राग

वैज्ञानिक इन दियों-जैसी रोशनी का आविष्कार करने में सफल रहे हैं, लेकिन यह रोशनी कुछ ही सप्ताह तक कायम रह पायी। उन्होंने ईंधन के रूप में 'मेथिल नाइट्रेट' का प्रयोग किया था।

प्रश्न उठता है कि इन अखंड दियों के निर्माता क्या 'मेथिल नाइट्रेट' जैसे किसी अन्य रसायन से परिचित थे? इन दियों को जिस तरल पदार्थ से जलाया जाता था, कहीं वह कम्प्रेस की गयी गैस तो नहीं थी जो तरल पदार्थ में परिणत हो सकती है? क्या प्राचीन वैज्ञानिक 'शीत - प्रकाश' के सिद्धांत से तो अवगत नहीं हो गये थे? इस सिद्धांत का प्रयोगात्मक प्रदर्शन प्राग के प्रो. हांज मौलिश

ने सन १९१४ में वियेना के विज्ञान-प्रदर्शन में किया था। उन्होंने एक मुहरबंद शीशे की ट्यूब को 'साल्टपीटर' और 'जीलेटिन' के एक मिश्रण द्वारा भीतर से पोत दिया था और उस मिश्रण को किसी प्रकाशशील बैक्टीरिया से क्रियाशील बना दिया था। दो, तीन दिन के भीतर ही ट्यूब से नीली-हरी रोशनी निकलने लगी, जो २१ दिन तक स्थिर रही।

जूडो पैंसीरोलिस (१५२३-१५९९) अपने समय का सुप्रसिद्ध कानूनी विशेषज्ञ और पुरातत्त्ववेत्ता था। वह अपने इतिहास संबंधी एक ग्रंथ 'रेरुम मेमोरेबिलियम-लिबरी दुओ' में प्राचीनकाल में प्रयोग लायी जानेवाली विभिन्न वस्तुओं का उल्लेख करता है, जिसे आधुनिक युग फिर अपनाने लगा है, जैसे कभी न मिटनेवाली बैंगनी स्याही, एस्बेस्टस और सूत के कपड़े, प्रकाशधर्मी धातु और विभिन्न प्रकार के मसाले। वह दो अन्य वस्तुओं का भी उल्लेख करता है—कभी नष्ट न होनेवाली दिये की बत्तियां और जलकर भी न चुकने वाला तेल।

वह यह भी लिखता है कि रोमवासी एस्बेस्टस को खान से निकालने, उसे शुद्ध करके, कातने और फिर उससे बत्तियां बनाने की कला में प्रवीण थे।

एस्बेस्टस की बत्ती

पैंसीरोलिस की इस बात की सत्यता प्लीनी के वृहद ग्रंथ 'नेचुरल हिस्ट्री' से भी प्रमाणित होती है, वह भी अपने ग्रंथ में लिखता है कि रोमवासी एस्बे... परिचित थे। ऐसा ही कथन ग्रीक... शास्त्री और इतिहासकार स्ट्रैबो ... प्लीनी का यह कथन यहां प्रस्तुत... अप्रासंगिक न होगा कि रोमन... विभिन्न आविष्कारों, जीव-... ज्योतिष, ऋतु-विज्ञान, विभिन्न वस्तु... निर्माण की प्रक्रिया से परिचित थ...

पैंसीरोलिस अखंड दियों में एस्बे... की बत्तियों के प्रयोग के समर्थन में ... कांस्टेंटियस क्लोरस की एक ... को उद्धृत करता है कि "इस 'पत्थर' ... कभी न नष्ट होनेवाला कपड़ा तैयार ... वाया जाए, जो कि दियों में प्रयुक्त हो ... विशेषकर गुसलखानों के दियों में।" पैंसीरो... लिस इस 'पत्थर' को एस्बेस्टस कहता ...

पैंसीरोलिस के अनुसार कांस्टें... इस प्रकार के अखंड दियों द्वारा ... ४,४०,००० वर्गगज क्षेत्र में फैले ... घर को रात-दिन प्रकाशित रखता था।

पैंसीरोलिस ने एक जगह इस ... लिखा है, "प्राचीनकाल में लोग एक ... तेल बनाना जानते थे जो प्रयोग ... जाने के बावजूद खर्च नहीं होता ... इस प्रकार के तेल से जलता हुआ एक ... उसी के युग में सिसरो की पुत्री तुलिया ... कब्र में पाया गया है। यह दिया ... साल तक अनवरत जलता रहा, ... ताजी हवा में रखने पर बुझ गया।"

—८, नवाबयूसुफ रोड, सिविल ... इलाहा...

'बरम' के प्रतीक यक्ष

● जैनेन्द्र वात्स्यायन

यक्ष-पूजा भारतीय लोकधर्म की एक अत्यंत प्राचीन लोकप्रिय पूजा है। यक्ष का उल्लेख ऋग्वेद, यजुर्वेद, अथर्ववेद, ब्राह्मण, उपनिषद, गृह्यसूत्र, पुराण, बौद्ध साहित्य, जैन आगम साहित्य एवं संस्कृत साहित्य में प्राप्त होता है। इन्हें संस्कृत में यक्ष, यक्षी, यक्षिणी, पाली में यक्ख, यक्खी, यक्खिणी, प्राकृत में जक्ख, जक्खिणी एवं सिंहली में यका, यकी कहा जाता है।

'यक्ष' शब्द की उत्पत्ति के संबंध में मतभेद है। रामायण के उत्तरकांड सर्ग ४ में एक कथा इस प्रकार है—प्रजापति ने जल का निर्माण किया और उनकी रक्षा के लिए कुछ सत्वों की रचना की,

प्रजापतिः पुरासृष्ट्वा अपः सलिलसंभवाः।
तासां गोपायने सत्वानसृजत् पद्मसंभव।।

उन्होंने ब्रह्मा से पूछा, "हम क्या करें?" (**किं कुर्म इति भाषंतः क्षुत्पिपासामयार्जितः**) ब्रह्मा ने कहा, "**रक्षध्वम्।**" उत्तर में कुछ ने कहा, "**यक्षामः।**" '**रक्षामः**'

ऊपर : देवताओं के राजा इन्द्र का उल्लेख यक्षों की सूची में भी है।
नीचे : वज्र-यक्ष जो यम से बहुत कुछ मिलता जुलता है।

कहनेवाले राक्षस हुए (**रक्षाम इति यैरुक्तं राक्षसारते भवन्तुवः**) और '**यक्षामः**' कहनेवाले यक्ष (**यक्षाम इति यैरुक्तं यक्षा एव भवन्तुवः**)। कुमारस्वामी ने 'यक्षामः' का अर्थ भक्षण किया है। इसे यक्ष धातु से निकला हुआ भी माना गया है, जिसका अर्थ किया गया है, तीव्रगति से या चपलता से जानेवाला। एक अन्य सुझाव यह भी है कि यक्ष वैदिक संस्कृत धातु यज् से ही निकला है, जिसका अर्थ है—पूजा या आदर करना अर्थात् पूज्य या आदर के योग्य। एक अन्य धारणा के अनुसार यह अनार्य भाषा का भी शब्द हो सकता है।

'यक्ष' शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग जैमिनीय ब्राह्मण में है, जहां उसका अर्थ एक आश्चर्यजनक वस्तु से किया गया है।

शिव का एक नाम भूतेश्वर है यानी भूतों का स्वामी। यक्षों को भूत भी कहा गया है, जो कालांतर में यक्ष हो गये। प्रायः प्रयोगों में इस शब्द के प्रति विरोधाभाव भी है, जैसे एक स्थल पर वरुण और मित्र से यह प्रार्थना की जाती है कि हम अपने शरीर में यक्ष का आविर्भाव न देखें—**या कस्याद्भुतक्रतू यक्षं भुजमातनूभिः माशेषसामातनसा** (**ऋग्वेद** ५/७०/४)। अथवा अग्नि से ऐसी प्रार्थना की जाती है कि वे ऐसे व्यक्ति के घर में न जाएं, जो यक्ष सदन में जाता हो—**माकस्य यक्षं सदमिद्रधुरोण मा वेशस्य प्रमिनतो मापेः** (**ऋ.** ४/३/१३)। यहां ऐसे व्यक्ति का अर्थ है, जो अनार्य है और

यक्षों की पूजा करता है। अ...
के पूज्य थे इसीलिए अग्नि को ...
में न जाने की सलाह दी गयी है ...
महत्त्व वहां दिखायी पड़ता है ...
गया है कि अग्नि यक्षों के भी ...
यक्षस्याध्वक्षं बृहन्तं (**ऋ.** १०/८८...

उपर्युक्त उद्धरणों से यह ...
निकाला जा सकता है कि यक्ष ...
ताओं से निम्न हैं और उन्हें ...
ही श्रेयस्कर है, लेकिन ऋग्वेद में ...
अन्य स्थलों पर इनके सुंदर रूपों का ...
मिलता है। एक स्थल पर मरुतों ...
कल्पना की गयी है, वे यक्ष के समान ...
हैं—**अत्यासो न ये मरुतः स्वञ्चो ...**
दृशो न शुभयन्त मर्याः (**ऋ.** ७/५६/...

अथर्ववेद में यक्ष राजा की भी ...
और यहीं से यह संकेत भी प्राप्त होते ...
है कि कुबेर का धन-वैभव से ...

अथर्ववेद में कुछ अन्य प्रयोग ...
जिनमें यक्ष शब्द का एक दार्शनिक ...
प्रतीकात्मक ढंग से व्यवहार है और ...
भी यही अनुमान निकलता है कि ...
अत्यधिक लोकप्रिय देवता रहे होंगे ...
हरण के लिए वरुण, ब्रह्म या प्रजापति ...
यक्ष नाम देकर यह कल्पना की गयी है ...
प्रारंभ में यह महान यक्ष ही अपने ...
प्रभाव से जल पर स्थित था और ...
अंदर ही सभी देवता एवं सभी ...
समाविष्ट थे। प्रत्येक जीव के ...
रहनेवाले ब्रह्म को यक्ष कहा गया है ...

'ब्रह्म' शब्द का प्रयोग हुआ ...

पदों में प्राप्त होता है जहां पर इसका संबंध यक्ष से जोड़ा गया है। बृहदारण्यक उपनिषद् में इस प्रकार का वक्तव्य है कि जो महान यक्ष को प्रथम उत्पन्न या प्रथमज के रूप में जानता है, उसे ही ब्रह्म या सत्य का ज्ञान है। केनोपनिषद् की प्रसिद्ध कथा में भी इंद्र, अग्नि आदि देवताओं के सम्मुख ब्रह्म यक्ष के रूप में प्रस्तुत किये गये हैं।

वैदिक साहित्य में यक्ष शब्द के साथ-साथ प्रायः महत या महान विशेषण जुड़ने का भी महत्त्व प्रतीत होता है। ऐसा अनुमान किया जा सकता है कि दीर्घनिकाय (ब्रह्मजालसुत) में जहां आदित्य नाम से सूर्य पूजा और श्री देवी के आह्वान को सामान्य लोगों का धर्म मानकर भिक्षुओं के लिए वर्जित किया गया है, वहां महदुपट्ठानं की पूजा को भी वर्जित करने में संभवतः यक्ष पूजा की ओर संकेत है। बुद्ध ने सावधान करते हुए कहा था, 'संपूर्ण जन साधारण यह समझ जाए कि गौतम आदिच्यपूजा, यक्षपूजा, सिरिदेवता का आह्वान जंगल में जलते हुए भारी प्रकाश में विश्वास, इस प्रकार की ऊलजलूल बातों से ऊपर उठ चुके हैं।'

जातकों में स्थान-स्थान पर यक्ष-यक्षी देवताओं को महान शक्तिवाला कहा गया है। सौम्य और उग्र दोनों ही रूपों की कल्पना की गयी है। उग्ररूप विशेषकर यक्षिणियों की कल्पना में उभरता है।

है कि यक्ष को ब्रह्म की भी संज्ञा दी गयी है और वही ब्रह्म यानी बरम आज भी हमारे लोकधर्म में विद्यमान हैं। 'बरम बाबा', जिसे गांवों में 'डीह' भी कहा जाता है,

डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल का मत

शुंगकालीन हाथी पर सवार यक्ष-प्रतिमा : भरहुत (मध्य भारत) से प्राप्त

पीपल के वृक्ष के नीचे बने चबूतरे पर गांवों में देखे जा सकते हैं। यक्ष प्रश्न-परंपरा ज्यों-की-त्यों विद्यमान है और यह तब

होता है जब किसी के सिर ये सवार हो जाते हैं। डॉ. अग्रवाल, काशी के लहुरावीर (छोटा बीर यानी छोटा यक्ष) बुल्लानाला (बुल्लावीर) का संबंध यक्ष से जोड़ते हैं और काशी के अन्य वीरों की पूजा को यक्ष पूजा का अवशेष मानते हैं। इस मत से मैं सहमत नहीं हूं। डॉ. अग्रवाल के मत के विरोध में एक प्रमाण प्रस्तुत किया जा सकता है, वह यह है कि कंकाली टीला की खुदाई से महाक्षत्रप स्वामी शोडाष के राज्यकाल की मथुरा से सात मील दूर मोरा नामक गांव से मिले एक अभिलेख में पांच वृष्णिवीरों के एक मंदिर का वर्णन है।

इन वृष्णिवीरों की पांच प्रतिमाओं में से तीन खंडित प्रतिमाएं भी मिली हैं। यह सामग्री प्रथम शती ईसा पूर्व की है। प्रश्न यह है कि वृष्णियों के पंचवीर कौन हैं, जिनकी पूजा होती थी? महायान बौद्ध धर्म में हमें पांच बोधिसत्वों की कल्पना मिलती है—वैरोचन, अक्षोभ्य, रत्नसंभव, अमिताभ एवं अमोघसिद्धि। धीरे-धीरे भागवत धर्म फैलने के कारण पांच ध्यानी बुद्धों का स्थान पांच वृष्णिवीरों ने लिया। डॉ. ल्यूडर्स ने जैन साहित्य के आधार पर यह सिद्ध किया था कि बलदेव, अक्रूर, अनाधृष्टि, सारण एवं विदूरथ, ये वृष्णियों के पंचवीर थे। इसमें कृष्ण का नाम नहीं। ल्यूडर्स की यह पहचान मान्य नहीं हो सकती है। वायु-पुराण में (अध्याय ९७) में वृष्णियों के पंचवीरों का स्पष्ट उल्लेख

दीपक नियोजन

मिलता है। ये मनुष्य होते हुए भी देवपद को प्राप्त हुए। इन पंचवीरों की यह पहचान, जिसमें वासुदेव का नाम भी है, पांचरात्र भागवतों के व्यूह के साथ यथार्थ रूप में मिलती है। अतः यही मान्य है। पतंजलि ने महाभाष्य में जनार्दन विष्णु के चतुर्व्यूह का उल्लेख किया है—**जनार्दनस्त्वात्मचतुर्थ एव** (६।३।५) यानी वह जिसमें जनार्दन या वासुदेव चौथे हैं। इसी सूची में संकर्षण, अर्थात बलराम कृष्ण के भाई थे, प्रद्युम्न उनके पुत्र थे और अनिरुद्ध प्रद्युम्न के पुत्र यानी कृष्ण के पोते थे। इस चतुर्व्यूह में सांब का नाम जोड़ देने से वृष्णियों के पंचवीरों की संख्या पूरी हो जाती है।

इनकी पूजा आभारी करते थे। अतः वीर या बीरों का संबंध उन बीरों से नहीं करना चाहिए, जिसे डॉ. अग्रवाल ने यक्ष का अवशेष या परिवर्तित रूप कहा है।

——द्वारा—मैसर्स कलाधर प्रसाद ऐंड संस, नीची बाग, वाराणसी-२२१००१

• भिक्षु चमनलाल

जवाहरलाल नेहरू मेरे प्रिय मेजबान

पंडित जवाहरलाल नेहरू, जिन्हें मैं अपना 'हीरो' मानता था, इस सदी के दूसरे दशक में मेरे बड़े भाई, जीवनपर्यंत मेरे मेजबान तथा मेरे बौद्ध भिक्षु होने के उपरांत प्रिय भक्त रहे। नेहरूजी मित्र तथा मेजबान के रूप में कैसे थे, यहां मैं उनके मानवीय पक्ष की, उनकी करुणा, प्रेम और आत्माभिमान की झांकी प्रस्तुत करता हूं।

एक दिन दोपहर को भोजन के लिए वे तीनमूर्ति भवन आ रहे थे। विकट गरमी के दिन थे। उन्होंने तपती धूप में सड़क पर एक वृद्ध सिख को पैदल चलते देखा। अपनी कार रुकवाकर उसे वे अपने साथ ले आये। वह सरहदी सूबे का एक पुराना कांग्रेस कार्यकर्ता था। उन्होंने उससे वहां के शरणार्थियों की करुण गाथा सुनी और द्रवित हो उठे। उन्होंने उसके लिए तुरंत एक स्कूटर मंगवाया।
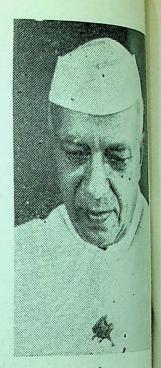
पैंतीस साल पहले एक कम्युनिस्ट महिला ने श्री नेहरू पर बेवकूफी-भरा एक भद्दा रिमार्क कसते हुए उनके भाषण में बाधा डालने की कोशिश की। नेहरूजी ने यह कहते हुए उसे झिड़क दिया कि "... आप नहीं जानतीं कि मैं बहुत ही इज्ज... आदमी हूं, मुझे बेइज्जत नहीं किया ... सकता!" यह सुनकर श्रोता हंस पड़े ... वह महिला सभा में से उठकर चली ... महान स्वतंत्रता-सेनानी होते हुए ... अंगरेज-शासकों के प्रति सहृदय रहे ...

१९४६ में, मैं महात्मा गांधी ...

मिलने गया। वे दिल्ली में भंगी कॉलोनी में ठहरे हुए थे। सरदार पटेल मुझे हमेशा इस बात के लिए चिढ़ाते रहते थे कि नेहरूजी मेरे नेता हैं। पटेल ने मुझे चिढ़ाते हुए कहा, "चमनलाल, तुमने एक किताब में गिरजा-शंकर वाजपेयी के अमरीका में भारत-विरोधी प्रचार का भंडा फोड़ा। लेकिन फिर भी वाजपेयी सेक्रेटरी जनरल हो गये।"

मैंने कहा, "वह भी तुम्हारे डिप्टी प्राइम मिनिस्टर होते हुए?"

उन्होंने कहा, "यह तुम्हारे नेता के कारण हुआ है, तुम्हारे नेता ने ही उन्हें सेक्रेटरी जनरल बनाया है।" गांधीजी ने बीच में हस्तक्षेप करते हुए कहा, "इसमें गलती भी क्या है! वाजपेयी को जब ब्रिटिश सरकार पैसा देती थी तब वह उसके सुर-से-सुर मिलाता था। अब वह तुम्हारे सुर में सुर मिलाएगा।" मैंने यह बात नेहरूजी को बतायी तो वे बोले, "भारत के प्रतिभा-शाली व्यक्तियों ने आई. सी. एस. बनकर ब्रिटिश सरकार की सेवा की है। अब वे स्वतंत्र भारत की सेवा करेंगे।"

सन १९३१ में कराची कांग्रेस में एक रात हम नेहरूजी के कैंप में बैठे थे। कैंप में कमला नेहरू, कृष्णा नेहरू, इंडियन लैजिस्लेटिव असेंबली के बुजुर्ग सदस्य राय-जादा हंसराज और मैं था। कृष्णा नेहरू ने रायजादा से शिकायत की, "चाचाजी, चमनलाल मुझे तंग करते हैं।" रायजादा ने कहा, "चिंता मत करो, मैं इन्हें जालंधर ले जा रहा हूं। मैंने इनके लिए सीट रिजर्व करा रखी है। मैं कोई दुलहन ढूंढ़कर इनकी शादी करा दूंगा।" तभी नेहरूजी अंदर आये। उन्होंने यह बात सुन ली और मुझसे पूछा, "तुम्हें दुलहन चाहिए या 'स्कूप'?" मैंने कहा, "पत्रकार होने के नाते मैं दुलहन के बजाय 'स्कूप' चाहूंगा।" नेहरूजी ने रायजादा से कहा, "इनका रिजर्वेशन रद्द करा दो। ये मेरे साथ जाएंगे, मैं इन्हें 'स्कूप' दूंगा।" सभी लोग हंस पड़े। अगली सुबह मैं नेहरूजी के साथ लौट पड़ा। रेल में नेहरूजी ने पूछा, "कांग्रेस अधिवेशन की सबसे बड़ी खबर क्या है?" मैंने कहा, "आपने मुझे जो 'स्कूप' बताने का वायदा किया है, पहले आप उसे पूरा कीजिए।" नेहरूजी ने कहा, "कराची छोड़ने से पहले कांग्रेस कार्यसमिति ने निर्णय किया है कि कानफ्रेंस में गांधीजी को पूर्णरूपेण प्रतिनिधि बनाकर भेजा जाए।"

मुझे 'स्कूप' मिल गया और मैंने 'हिंदुस्तान टाइम्स' के लिए एक्सप्रेस तार बनाकर नेहरूजी को दे दिया ताकि वे उसे हैदराबाद (सिंध) से भिजवा दें। मैंने उन्हें तार के लिए रुपये भी दिये, लेकिन उन्होंने नहीं लिये। दूसरे दिन मैं दिल्ली आ गया, जहां उसी दिन मेरी शादी की बात पक्की हो गयी और दो महीने बाद शादी हो भी गयी। अठारह साल बाद हम दोनों एक-दूसरे से मैत्रीपूर्ण ढंग से अलग हो गये, क्योंकि पूर्वी तथा पश्चिमी ढंग के रहन-सहन पर हमारे बीच तीव्र मतभेद हो गये थे। तब नेहरूजी ने मुझसे

कहा था, "मुझे खेद है कि मैं तुम्हें उस दिन अपने साथ ले गया जिससे तुम गलत गाड़ी पर ही नहीं गये, गलत दुलहन भी ले आये।" मैंने कहा, "अच्छा ही हुआ, क्योंकि बौद्ध भिक्षु बनने की हार्दिक इच्छा थी।"

सन १९५५ में, सारनाथ में भगवान बुद्ध के जन्मदिवस पर मैं बौद्ध भिक्षु बना। मंदिर के प्रधान पुजारी ने मुझे बौद्ध भिक्षु के गेरुए वस्त्र दिये और कहा, "इन्हें तभी पहनना जब कि तुम्हारी लड़की की शादी हो जाए।" लड़की की शादी के अगले दिन मैंने वे वस्त्र धारण कर लिये। सारनाथ जाने से पूर्व मैं नेहरूजी से विदा लेने गया। नेहरूजी ने मुझे इन वस्त्रों में देखकर कहा कि इन वस्त्रों में बहुत सुंदर लगते हो। मैंने कहा, "मेरे पास इस तरह के वस्त्रों के दो जोड़े हैं। एक जोड़ा आप पहन लें और मेरे साथ मिलकर युद्धोन्मादी देशों में भगवान बुद्ध के शांति-संदेश के प्रचार के लिए चलें!"

नेहरूजी ने कहा, "अभी नहीं, पहले मैं अपनी पंचवर्षीय योजना पूरी कर लूं।" पांच वर्ष बाद नेहरूजी ने मुझे सात सप्ताह के लिए अपने अतिथि के रूप में आमंत्रित किया ताकि मैं दिल्ली में चरित्र-निर्माण अभियान शुरू करूं।

एक दिन सुबह लॉन में टहलते हुए मैंने उन्हें याद दिलाया, "आपने पांच साल बाद बौद्ध भिक्षु होने का वायदा किया था।" उन्होंने कहा, "तुमने मेरी बात को गलत समझा। मैंने पंचवर्षीय योजनाओं की बात कही थी न कि एक पंचवर्षीय योजना की। मैं प्रधानमंत्री के रूप में बने रहने को उत्सुक नहीं हूं, लेकिन पंचवर्षीय योजनाओं को पूरा करने के लिए उत्सुक हूं; क्योंकि इन्हीं योजनाओं से लोगों को आर्थिक स्वाधीनता और समृद्धि मिल सकती है।"

मैंने कहा, "पंडितजी, तब तो मुझे लगता है कि आप कभी भी रिटायर नहीं होंगे और आप इसी घर में ही मरेंगे। लेकिन मैं आपकी इस अदम्य इच्छा की कि आप देश को समृद्ध देखना चाहते हैं, सराहना करता हूं।"

इसके चार साल बाद नेहरूजी का उसी घर में देहावसान हो गया।

नेहरूजी ने मृत्यु से तीन महीने पूर्व एक प्रातः टहलते हुए मुझसे कहा था, "तुमने दर्जनों पुस्तकें लिखी हैं। पाठ्य-पुस्तक के रूप में भारतीय संस्कृति पर एक पुस्तक क्यों नहीं लिखते?" मैंने आध घंटे बाद नेहरूजी को इस पुस्तक की रूप-रेखा बनाकर दी, जिसे उन्होंने पसंद किया। मैंने उन्हें बताया कि मैं इस समय दो पुस्तकों पर पिछले कई वर्ष से कार्य कर रहा हूं। यह कार्य अगले कुछ महीनों में समाप्त हो जाएगा। तब इस पुस्तक को आरंभ करूंगा। उन्होंने पूछा, "क्या इन किताबों को पूरा करने के लिए तुम शिमला जाना चाहोगे?" मैंने शिमला जाना स्वीकार कर लिया तो उन्होंने पंजाब के राज्यपाल को फोन कर 'डेन्सफॉली'

कॉटेज मुझे छह महीने के लिए देने को कह दिया। मैंने नेहरूजी को बताया कि मेरी आगामी दो पुस्तकें 'इंडिया—मदर ऑव अस आल' तथा 'टेक्स्ट बुक ऑव इंडियन कल्चर' शीर्षक से होंगी। नेहरूजी ने कहा, "पता नहीं मैं कितने दिन और जिऊं, इसलिए 'टेक्स्ट बुक आफ इंडियन कल्चर' की भूमिका अभी लिखे देता हूं।" और उसी दिन मेरे शिमला जाने से पूर्व उन्होंने भूमिका लिखकर मुझे दे दी।

मैंने उसी शाम नेहरूजी से विदा ली, जो इस जीवन में उनसे अंतिम विदाई थी। तीन महीने बाद जब मैंने पांडुलिपियां पूरी कर लीं तब २० मई को मैंने तार द्वारा नेहरूजी को इसकी सूचना दी और उनसे मिलने की इच्छा प्रकट की। उन्होंने जवाब दिया "मैं तीन दिन के लिए देहरादून जा रहा हूं अतः २६ मई को दिल्ली में सुबह नाश्ते पर मिलूंगा।" मैं दिल्ली गया और सरदार हुकमसिंह के आग्रह पर उनके यहां ठहरा। नेहरूजी के प्राइवेट सेक्रेटरी ने मुझे सूचना दी कि मैं अगले दिन नाश्ते पर नेहरूजी से मिलूं, लेकिन अगले दिन वे अचानक बीमार पड़े और इस संसार को छोड़कर चले गये। नेहरूजी की अंत्येष्टि के दूसरे दिन मैं तीन महीने के लिए ज्युरिच के दौरे पर चला गया, जहां हर रात मैं सपने में नेहरूजी को देखता था, जिसमें वे मुझसे शिकायत करते थे कि "चमनलाल, तुमने अपना वायदा पूरा नहीं किया।" आज भी कभी-कभी उन्हें सपने में देखता हूं।

कुछ आलोचक नेहरूजी को [illegible] वार राज्यों के गठन के लिए दो[illegible] राते हैं, लेकिन वे भाषाई [illegible] को हृदय से घृणा करते थे। एक [illegible] उन्होंने मुझे बुलाया और अपने [illegible] को खाना खिलाते दिखाया। मैंने [illegible] से कहा, "आपने इन जानवरों को [illegible] पार्क में क्यों रख लिया है? आप [illegible] उन्मादियों को घेरकर यहां उनके [illegible] चिड़ियाघर क्यों नहीं बना देते, [illegible] लोग कुछ खाने के लिए डाल दिया करें।"

उन्होंने जवाब दिया, "इस तरह [illegible] मुझे सारे देश को ही भाषाई उन्मादियों का चिड़ियाघर घोषित करना पड़ेगा।"

नेहरूजी बुद्ध की भांति करु[illegible] थे। वे स्वभाव से इतने कोमल थे कि [illegible] के शत्रुओं के प्रति भी कठोर नहीं हो [illegible] थे। सन १९६० में, मैं कई सप्ताह [illegible] उनका अतिथि रहा। मैं जनता में नै[illegible] और चारित्रिक सुधार के भाषण देता [illegible] लोगों ने मुझसे शिकायत की थी कि [illegible] नेहरूजी का अतिथि हूं तो उनसे [illegible] बाजारी, मुनाफाखोरी और मिलावट [illegible] बंद कराने के लिए क्यों नहीं कहता, [illegible] इनके बिना चारित्रिक सुधार की [illegible] बेकार हैं। एक दिन नाश्ते के बाद [illegible] नेहरूजी को १२ मांगों की एक सूची [illegible] की। मैंने बताया कि जनता काला[illegible] रियों और खाद्य तथा दवाओं में मि[illegible] करनेवालों से तंग आ चुकी है और [illegible]

राष्ट्रपति से मांग करेगी कि उन लोगों के खिलाफ अध्यादेश निकालकर कठोर कार्यवाही की जाए और जो अपराधी पाये जाएं उनका सामान जब्त किया जाए। नेहरूजी ने कहा, "तुम तो बौद्ध भिक्षु हो, फिर ऐसे कठोर उपायों की बात कैसे कह रहे हो ?" सन १९४३ में मुझे दिये गये एक ऐतिहासिक 'इंटरव्यू' में उन्होंने कहा था कि "यदि मेरे पास शक्ति आ जाए तो मैं हरेक चोरबाजारिये को पास के खंभे से बंधवाकर गोली से उड़वा दूं।" मैंने यह बात याद दिलायी तो वे बोले, "तब मैं प्रधानमंत्री नहीं था।"

मैंने कहा, "तब आप सत्ता चाहते थे। वह अब आपको मिल गयी है तो अब आप उसका इस्तेमाल क्यों नहीं करते ?" इसके उत्तर में उन्होंने कहा कि वे कठोर रुख अपनाने में असमर्थ हैं। इस पर मैंने कहा, "पंडितजी, फिर आप अपनी कुरसी पर किसी शक्तिशाली आदमी को बैठा दीजिए।" उन्होंने कहा कि एक बौद्ध भिक्षु को ऐसे कठोर उपायों का सुझाव नहीं देना चाहिए। मैंने कहा, "आप तो भिक्षु नहीं हैं, आप तो प्रधानमंत्री हैं, जिसके पास राष्ट्र के प्रति हो रहे अपराधों को रोकने की पर्याप्त शक्ति है और यदि आप दृढ़ नहीं रह सकते तो अच्छा हो कि आप प्रधानमंत्री-पद छोड़ दें।"

"आपने मुझे अमरीका से भाषण-दौरे को रद्द कराकर यहां पर चरित्र-निर्माण अभियान के लिए क्यों बुलाया था ?" इस पर उन्होंने खेद प्रकट किया तथा कहा, "तुम मुझे बदल नहीं सकते, मैं किसी के प्रति कठोर नहीं हो सकता।"

कुछ लोग नेहरूजी को कम्युनिज्म और रूस का पक्षपाती कहते हैं, लेकिन यह गलत है। सच यह है कि वे रूस के शांति-प्रयासों के कारण रूस के समर्थक थे। १९६० में नेहरूजी ने जब मुझे जिप्सियों के मूल उद्गम के खोज-कार्य के संबंध में यूरोप के लगभग आधा दर्जन देशों की यात्रा पर भेजा था तब मुझसे स्पष्टतः कह दिया था कि मैं रूसी सरकार से किसी सुविधा तथा कृपा को स्वीकार न करूं।

उन्होंने तिब्बत के मामले में चीन के प्रति जो दुर्बल प्रतिरोध किया, उसका कारण यह था कि भारत में शक्ति नहीं थी। उन्होंने मुझसे कहा था, "हम अयथार्थ की दुनिया में रह रहे हैं और उसका नतीजा भी देख रहे हैं।"

नेहरूजी भगवान बुद्ध के महान उपासक थे। मैं जापान से हाथीदांत की बनी बुद्ध की एक प्रतिमा लाया था, जो कि जापान के शाही परिवार ने बाजार में बेच दी थी। नेहरूजी ने इस प्रतिमा को बहुत ही पसंद किया था। वे प्रायः कहा करते थे कि भगवान बुद्ध की यह प्रतिमा हम दोनों के बीच मिलानेवाली एक कड़ी है। यह प्रतिमा आज भी तीनमूर्ति भवन के संग्रहालय में नेहरूजी के अध्ययन-कक्ष में सुरक्षित रखी हुई है। मैं जब भी वहां जाता हूं, तब अपनी श्रद्धा अर्पित करता हूं। ●

● पद्माशा

उस दिन सूरज अत्यंत उदास था और सुबह पीली धूप में कांपती हुई आयी थी। चैत की खुश्क हवा बेरुखी से वह रही थी। बाजार में सड़कों पर चलते हुए लोग अनमने दीखते थे। किसी आगत आशंका में लोगों के चेहरे जर्द थे। माताएं बच्चों को घर से बाहर खेलने जाने को मना कर रही थीं। कालेज, यूनीवर्सिटी के अहाते सूने थे क्योंकि तेरह मार्च को अचानक विश्वविद्यालय बंद होने की घोषणा के बाद छात्रों को छात्रावास
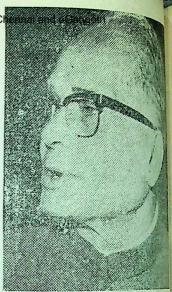
जयप्रकाश बाबू अब कहां हैं?
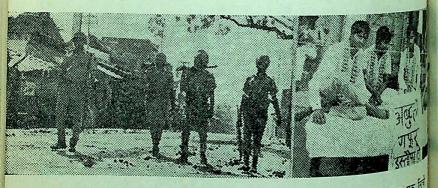
खाली कर देने का आदेश दे दिया गया था। खेल के मैदान भी खाली थे और वहां गाय-भैंसें चर रही थीं। सुबह से ही शहर खामोश था—तूफान आने के पहले की-सी खामोशी।

१८ मार्च, ७४! सुबह एक ठि हुई चुप्पी की तरह थी और दो एकबारगी सैकड़ों हथगोलों की फट पड़ी थी। बिहार-आंदोलन की वि षिका में पटना धू-धू कर जल उठा था।

जनता का बढ़ता मनोबल ?

देखते-देखते पटना सचिवालय से शुरू होकर यह आग सारे शहर में फैल गयी। दोपहर को बिहार के हर शहर से एकत्र छात्रों का विशाल जुलूस अपनी मांगों के साथ सचिवालय की तरफ चल पड़ा था और वहां पहुंचते-पहुंचते जुलूस ने क्रोधित भीड़ का रूप धारण कर लिया। आंदोलनकारियों ने सचिवालय को घेर लिया। सचिवालय-भवन के भीतर घुसने की कोशिश में भीड़ ने चारों तरफ लगी कांटों की बाड़ तोड़ डाली। विधायकों पर हमला होने तक पुलिस हक्की-बक्की देखती रही, क्योंकि ऊपर से उसे किसी कार्रवाई का आदेश तब तक नहीं मिला था। छात्रों ने कई बसें भी अपने कब्जे में ले ली थीं। खुद छात्र ही उन्हें ड्राइव कर रहे थे और उनमें बैठे छात्र पुलिस पर पथराव कर रहे थे। छात्र और पुलिस के बीच लगभग तीन घंटे तक मुकाबला हुआ, जिसमें पुलिस को विशेष सफलता नहीं मिली। वस्तुतः सभी बड़े पुलिस अधिकारी मंत्रियों की जान बचाने में लगे हुए थे।

आगजनी के पीछे कौन ?

सचिवालय से लौटती हुई क्रोधित भीड़ ने कुछ होटलों पर धावा किया और 'सुजाता', 'राजस्थान पैलेस' आदि बड़े होटलों में आग लगा दी। इसी आगजनी का शिकार बिहार के दैनिक 'सर्चलाइट' का दफ्तर हुआ। 'सर्चलाइट' वस्तुतः छात्र-आंदोलन का समर्थक ही रहा है। प्रश्न उठता है कि इस अखबार के कार्यालय में आग लगानेवाले आंदोलनकारी छात्र थे या इसमें

उसे फ़ोरहॅन्स की आदत भी सिखाइए

नियमित रूप से दाँत ब्रश करने और मसूढ़ों की मालिश करने से मसूढ़ों की तकलीफ़ और दाँतों की सड़न दूर ही रहती है

दाँतों के डाक्टर की राय में मसूढ़ों को मजबूत और स्वस्थ रखने का सर्वोत्तम उपाय है उनकी नियमित मालिश...और दाँतों को सड़ने से बचाने का सबसे बढ़िया तरीक़ा है दाँतों को हर रात और सवेरे व हर भोजन के बाद नियमित रूप से ब्रश करना ताकि सड़न पैदा करनेवाले सभी अन्न कण दाँतों में फँसे न रहें।

अपने बच्चे को दाँतों के डाक्टर द्वारा खास तौर से बनाए गये फ़ोरहॅन्स टूथपेस्ट से नियमित रूप से दाँतों को ब्रश करना और फ़ोरहॅन्स डबल एक्शन जूनियर टूथब्रश से मसूढ़ों की मालिश करना सिखाइए।

फ़ोरहॅन्स से दाँतों की देख-भाल सीखने में देर क्या, सबेर क्या

मुफ़्त! "आपके दाँतों और मसूढ़ों की रक्षा" नामक रंगीन सूचना-पुस्तिका* मुफ़्त प्राप्त करने के लिए २५ पैसे के टिकट (डाक-खर्च के लिए) इस कूपन के साथ इस पते पर भेजिए : मैनर्स डेण्टल एडवाइजरी ब्यूरो, पोस्ट बैग नं. १००३१, बम्बई-४०० ००१ K-O B

नाम.................................उम्र..........

पता..

• कृपया जिस भाषा की पुस्तिका चाहिए, उसके नीचे रेखा खींच दीजिए: हिन्दी, अंग्रेजी, मराठी, गुजराती, उर्दू, पंजाबी, बंगाली, आसामी, तामिल, तेलगु, मलयालम, कन्नड़.

131F.10

कुछ अन्य तत्त्व तथा गुंडे भी शामिल थे, जो छात्रों की आड़ में अपना उल्लू सीधा करने पर तुले थे ?

ये सब कुछ अचानक नहीं हुआ । छात्र बहुत दिनों से आंदोलन की योजनाएं बना रहे थे । बिहार में यह पहला ही मौका था जब छात्र-संघर्ष-समिति का गठन व्यापक आधार पर किया गया था। छात्र-संघर्ष-समिति में विद्यार्थी परिषद (जनसंघ) युवा कांग्रेस (संगठन कांग्रेस), छात्र परिषद (कांग्रेस) समाजवादी युवजन सभा (सोपा), समाजवादी युवजन सभा (संसोपा), समाजवादी युवजन सभा (किशन पटनायक गुट), क्रांतिकारी युवक संघ तथा क्रांतिकारी युवा संघ के प्रतिनिधि शामिल हुए । इसके अतिरिक्त इस समिति को राज्य के २५० महाविद्यालयों के छात्र-प्रतिनिधियों का सहयोग भी प्राप्त हुआ । प्रारंभ में एक छात्रनेता ने आंदोलन के उद्देश्य पर प्रकाश डालते हुए कहा था कि छात्रों ने आपसी मतभेदों को भुलाकर आंदोलन को अंत तक चलाने का संकल्प लिया है । इस आंदोलन को नारा दिया गया—महंगाई, बेरोजगारी, भ्रष्टाचार तथा गलत शिक्षानीति के खिलाफ संघर्ष ।

छात्रों ने आंदोलन के प्रति अपनी प्रतिबद्धता की सूचना भी सरकार को समय से भेज दी थी। इसके बावजूद आंदोलन की पहली लहर को रोकने में प्रशासन विफल ही रहा। राज्य के मुख्य सचिव मेनन ने इस कमजोरी के लिए सरकार की आलोचना भी पत्रकार-सम्मेलन में की । आंदोलन के मूल कारणों के संदर्भ में बिहार की स्थिति पर गृहमंत्री ने जो वक्तव्य दिया वह बहुत कम तथ्यों पर प्रकाश डाल सका। वस्तुतः आर्थिक विकास में उत्तरोत्तर अवरोध तथा उसके भीषण परिणाम इस असंतोष की जड़ में हैं।

सचिवालय की ओर बढ़ता छात्रों का जुलूस
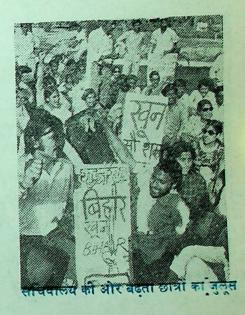
बिगड़ती हुई आर्थिक स्थिति

१९६१ की जनगणना के बाद बिहार में जितनी तेजी से जनसंख्या बढ़ी है उतनी ही तेजी से आर्थिक उपादानों में कमी आयी है। जहां १९६१ में काश्तकारों का अनुपात ५८. ८ प्रतिशत था, दस साल के अंदर घटकर ४२.३ प्रतिशत रह गया।

खेतिहर मजदूरों का अनुपात १९६१ के अनुसार २२.९ प्रतिशत था, दस साल के बाद ३८.२ प्रतिशत हो गया। आज बिहार में ३८ प्रतिशत भूमिहीन लोगों के गल्ले का दैनिक प्रबंध स्थायी तौर पर अनिश्चित है। बिहार यों भी अभावग्रस्त राज्य है। अब खाद्य वस्तुओं की कीमतें आकाश छू रही हैं। हरित क्रांति के समय भी बिहार का कृषि-उत्पादन कम ही था। हदबंदी पर बिहार में नहीं के बराबर अमल हुआ। आज भी ऐसे जमींदार हैं जिनके पास सैकड़ों एकड़ जमीन है और वे 'लेवी' में उचित गल्ला नहीं देते।

इन आर्थिक विषमताओं का असर छात्रों पर भी पड़ता है। छात्र ज्यादातर मध्यवर्गीय परिवारों से आते हैं। उनके अभिभावक उनकी दैनिक तथा सामान्य मांगें—कागज, किताब, खाना, कपड़ा, फीस आदि—की आपूर्ति में दिनोंदिन अक्षम होते जाते हैं।

एक छात्र-नेता ने गुजरात-आंदोलन से बिहार-आंदोलन की तुलना करते हुए बताया कि 'यह आंदोलन महंगाई, भ्रष्टाचार, बेरोजगारी और गलत शिक्षा-नीति के विरोध में अभिव्यक्त राष्ट्रव्यापी निराशा और आक्रोश के संघर्षात्मक रूप की ही एक कड़ी है। गुजरात में आंदोलन अचानक ही फैला, किंतु बिहार में योजनाबद्ध ढंग से चल रहा है।

यह पूछे जाने पर कि यह आंदोलन सरकार-विरोधी राजनीतिक दलों से प्रेरित तो नहीं है, एक छात्र-वक्ता ने स्पष्ट किया कि या उनका यह आंदोलन राजनीतिक गुटों से संबद्ध नहीं है, किंतु यदि संघर्ष के दौरान राजनीतिक दलों की मदद मिलती है तो वह स्वीकार्य होगी।

आंदोलन की संभावनाओं पर बात करते हुए एक अनशनकारी छात्र ने कहा कि कम-से-कम यह आंदोलन इस अर्थ में सार्थक होगा कि यह हजारों वर्षों से जनता के टूटे हुए मनोबल को जगाएगा।

इस तरह प्रारंभ में छात्रों में अदम्य उत्साह, उतावला आवेश था, स्थिति को शीघ्र निबटाने की बेचैनी थी जो कि कई बार उनकी अनुभवशून्यता की द्योतक भी थी।

आंदोलन का पहला चरण तोड़फोड़ को लेकर आया तथा प्रशासन ने उसे दबाने में सफलता प्राप्त कर ली। दूसरे चरण तक आते-आते क्रांति का रूप बदल जाता है। छात्र दीर्घकालीक योजना के अंतर्गत धरना, सत्याग्रह, मौन जुलूस, शोक दिवस, श्राद्ध दिवस, सभा, भूख हड़ताल, चेतावनियां, सरकारी दफ्तरों को ठप करने की योजना आदि के द्वारा जनता एवं प्रशासन दोनों को अपने उद्देश्य की तरफ आकृष्ट करते हैं। यहीं से इस आंदोलन के चरित्र, उपलब्धियों, पार्टियों की भूमिका एवं आंदोलन की संभावनाओं पर ध्यान केंद्रित होता है।

आंदोलन के दूसरे चरण से पहले तक जयप्रकाश नारायण उससे संबंधित

नहीं थे। आंदोलन पूर्णतः छात्रों द्वारा ही परिचालित था। छात्रों ने घोषणा की थी कि जनजीवन के हित के लिए वे किसी गुट से प्रभावित हुए बिना अंतिम दम तक लड़ने को तैयार होंगे।

जयप्रकाश नारायण का प्रवेश

आंदोलन-विस्फोट के दस दिन बाद ही जयप्रकाश नारायण ने स्वयं ही अपने को इस आंदोलन के लिए सौंपा था छात्रों को सही निर्देश देने के लिए। चूंकि जयप्रकाश बाबू राजनीतिक दलबंदियों से मुक्त माने गये हैं, इसलिए छात्र-संगठन ने उनके नेतृत्व का स्वागत किया।

इसमें संदेह नहीं कि जयप्रकाश बाबू ने आंदोलन को गति दी है, लेकिन आंदोलन को विवादास्पद भी बनाया है।

वे सबसे पहले जिस पड़ाव पर पहुंचना चाहते हैं वह है विधानसभा का विघटन। गत जून में विधानसभा भंग करने के समर्थन में डेढ़ लाख व्यक्तियों के हस्ताक्षर लेकर वे गवर्नर से मिले थे और एक विशाल जुलूस का आयोजन किया था। विधानसभा भंग नहीं हुई, बल्कि मंत्रिमंडल में तनिक हेर-फेर हो गया।

विकल्प क्या है ?

प्रश्न यह है कि विधानसभा भंग होने के बाद जयप्रकाश बाबू के सामने शासन का कौन-सा विकल्प है? यदि पुनर्निर्वाचन होना है तो क्या उन्हें इस बात का विश्वास है कि अगला चुनाव न्यायपूर्ण होगा? जब तक जनता पूर्ण जागरूक न हो जाए, चुनाव, अर्थ-[illegible] एवं बल से प्रभावित होंगे ही। विधानसभा भंग होने पर अहं की तुष्टि चाहे हो जाए, समस्याओं का निदान कभी नहीं होगा।

जयप्रकाश बाबू ने अपने कार्यक्रम के अंतर्गत काम-बंद की घोषणा की तथा छात्रों से एक वर्ष तक पढ़ाई बंद करने और परीक्षाओं का बहिष्कार करने की अपील की। दूसरी तरफ सरकार ने परीक्षाएं स्थगित न करने की ठान ली।

तीन महीने के असामान्य अवकाश के बाद गत पंद्रह जुलाई को बिहार के सभी विश्वविद्यालय खोल दिये गये। पुलिस की देखरेख में सभी कालेज खोले गये, लेकिन हैरत की बात है कि कक्षा में विद्यार्थी आये ही नहीं!

तीन दिन बाद परीक्षाएं होनेवाली थीं। शुरू के दो दिनों में परीक्षार्थियों की उपस्थिति नगण्य होने के बावजूद बाद में उपस्थिति बढ़ती गयी और कहीं-कहीं छिटपुट वारदातों के अतिरिक्त अधिक केंद्रों में परीक्षाएं सफलतापूर्वक समाप्त हुईं। ये परीक्षाएं जयप्रकाश बाबू तथा सरकार के बीच कसौटी बन गयीं।

प्रशासन की ओर से कहा गया कि परीक्षा न होने से विद्यार्थियों का एक वर्ष खराब होगा। वस्तुतः यह तर्क निराधार है। एक दशाब्दी से बिहार में परीक्षाएं कभी समय से नहीं हुईं।

दूसरे, जब पहले से ही इतनी बड़ी संख्या में उत्तीर्ण होकर बैठे बेरोजगार
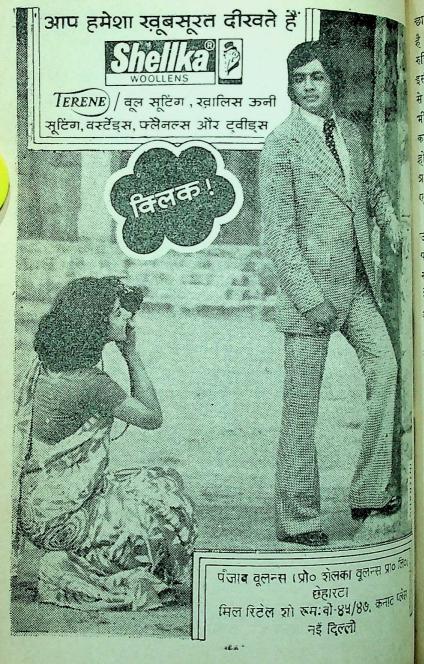
छात्रों में सरकार कोई रुचि नहीं ले सकी है तब फिर इसी वर्ष परीक्षाओं में इतनी रुचि लेने का क्या उद्देश्य समझना चाहिए।
इसी तरह, जयप्रकाश नारायण की ओर से भी परीक्षाएं न होने देने की कोशिश भी सारहीन थी। इसके विपरीत यदि कालेजों में नियमित रूप से छात्र एकत्र होते तो उन्हें परस्पर वैचारिक आदान-प्रदान का मौका मिलता, जिससे उनकी एकता तथा आंदोलन को बल मिलता।

जयप्रकाश बाबू छात्र-शक्ति का पूरा उपयोग नहीं कर पा रहे हैं। इसी का परिणाम है कि सरकार - विरोधी अथवा सरकार - समर्थक राजनीतिक दल छद्मवेश में आंदोलन में घुसपैठ कररहे हैं। इस कारण आम लोग अब उदासीन हो गये हैं।

गरीबी, बच्चों के अनिश्चित भविष्य, बेरोजगारी और अनाचार से जूझने के लिए जिस आंदोलन की जरूरत है वह १८५७ या १९४२ की क्रांति से कहीं ज्यादा ठोस और बलिदानपूर्ण होना चाहिए। जयप्रकाश बाबू द्वारा निर्देशित कतिपय कार्य, जैसे विधानसभा के समक्ष धरना देना, साइकिल-जुलूस निकालना, तिकोनी टोपी पहनना आदि आंदोलन के गंभीर कारणों को हास्यास्पद बनाते हैं।

जयप्रकाश बाबू ने छात्रों को कक्षा-बहिष्कार करने तथा एक वर्ष तक शिक्षा-संस्थानों को बंद रखने के लिए निदेश तो दिये, किंतु इस बीच छात्रों के लिए कोई नियमबद्ध कार्यक्रम स्पष्ट नहीं किया। यह स्वयं जयप्रकाश बाबू की दिमागी उलझनों की ओर इंगित करता है। उन्होंने विश्वविद्यालयों से इतर शिक्षा-केंद्र की स्थापना करने का इरादा जाहिर किया है। जिन साधनों पर वे केंद्रीय विश्वविद्यालय खोलने की योजना बनाते हैं उनका उपयोग ग्रामीण समाज के उत्थान में लगाते तो अच्छा होता। विधानसभा के द्वार को छोड़कर छात्रों को साथ लिये हुए वे बिहार के उन गांवों में जाएं जहां भूख, अशिक्षा, लाचारी और जड़ता है, उन लोगों की सोयी हुई बुद्धि को जगाएं और उन्हें अन्याय के खिलाफ लड़ाई के लिये प्रवृत्त करें।

अपनी कमजोरियों और आलोचनाओं के बावजूद लोगों के हृदय में आंदोलन के प्रति आस्था है।

जयप्रकाश बाबू ने आंदोलन को भ्रष्टाचार हटाने का एकमात्र उपाय बताते हुए कहा है – 'भ्रष्टाचार केवल नैतिकता का मुद्दा नहीं है, यह जन-जन की रोटी को भी प्रभावित करता है। ...मैं सिर्फ यही मांग करता हूं कि प्रशासन में सुधार हो, शिक्षा-पद्धति में आमूल परिवर्तन हो तथा भूमि-सुधार कानूनों को कड़ाई से लागू किया जाए।'

प्रशासन इस गुरिल्ला-युद्ध से अपने को बचाने की कोशिश में है और जयप्रकाश बाबू अपने प्रयोगों में व्यस्त हैं। अब वे आंदोलन के पर्याय बन गये हैं और छात्रों का नेतृत्व बहुत पीछे छूट गया है।

—एम. डी. डी. एम. कालेज, मुजफ्फरपुर

एक जिगर नकली

प्रति वर्ष यकृत (जिगर) की खराबी से मरनेवालों की संख्या हजारों में होती है। इनमें बहुत-से तो कम-उम्र होते हैं। रोग के प्रारंभिक लक्षण निश्चित रूप से समझ में नहीं आते, क्योंकि उनके विविध प्रकार होते हैं। यकृत का काम जीवन के लिए आवश्यक तत्त्वों का निर्माण तो है ही,

खतरनाक तत्त्वों का खात्मा करना भी है। वह रक्त के एक रंगद्रव्य पित्तारुण का निर्माण करता है तथा पित्तरस में उसका समावेश करता है। पित्तरस छोटी-छोटी नलिकाओं द्वारा पित्ताशय में पहुंचता है। वहां से वह एक अन्य नलिका द्वारा आंत में पहुंचकर पाचन-क्रिया में भाग लेता है। पीलिया रोग के लिए उत्तरदायी पित्तारुण को एक प्रकिण्व यकृत के अंदर जल में घुलनशील एक पदार्थ के रूप में, पित्त में उत्सर्जन के पूर्व, बदल देता है। दोषपूर्ण यकृत समुचित मात्रा में प्रकिण्वों की रचना नहीं कर पाता, इससे एक प्रकार का पीलिया उत्पन्न करा... पित्त के उत्सर्जन में भी बाधा उत्प... जाती है। रक्त में पित्तारुण बना रहे... इससे गुर्दे को हानि हो सकती है।

यकृत जो प्रकिण्व तैयार करता... उनमें वे संवाहक भी हैं जो रक्त में ... के निर्माण को नियंत्रित करते हैं। ... यकृत में रक्तस्राव के समय ये थक्के न... होते। विषैले तत्त्वों से मानसिक विकृ... उत्पन्न हो जाती है।

इसके बावजूद, यकृत में पुनर्नि... की अद्भुत शक्ति होती है। यदि ... इलाज शुरू कर दिया जाए तो ... केसों को भी ठीक किया जा सकता है। लंदन के किंग्स कालेज हास्पिटल के ... शोध-केंद्र ने कई गंभीर यकृत-केसों का सफलतापूर्वक उपचार किया है।

इस अस्पताल में कृत्रिम यकृत-व्य... वस्था का व्यवहार किया जा रहा है। इसे तब तक प्रयोग किया जाता है जब तक यकृत दोषमुक्त न हो जाए। रोगी के रक्त में प्रोटीन तत्त्व तथा थक्के बनानेवाले तत्त्वों का प्रवेश कराके, ताकि रक्तस्राव न हो, यकृत के संश्लिष्ट कार्य को बहुत कुछ बढ़ाया जा सकता है। यकृत-रक्तस्राव की प्रबलता का पता करने के लिए सा... धानी से निरीक्षण की जरूरत है। य... के उत्सर्जन-संबंधी कार्यों का बदलना मुश्किल होता है।

एक दूसरा उपाय सूअर के यकृत का

प्रयोग है। इसे कृत्रिम रूप से चालू रखा जाता है ताकि यह रोगी के दोषयुक्त यकृत का कुछ घंटे तक काम कर सके। हालांकि अस्थायी सुधार हो सकता है, लेकिन स्थिति फिर विगड़ सकती है; अतः यह अंतिम प्रयोग प्रायः नहीं होता।

यकृत बदला भी जाता है। जिन रोगियों के यकृत गंभीर रूप से दोषयुक्त होते हैं, उनके लिए अंतिम चारा यही है कि उनका यकृत बदल दिया जाए, लेकिन यकृत-दानी बहुत कम मिलते हैं।

उपर्युक्त शोध-केंद्र से संबंधित कैंब्रिज विश्वविद्यालय के प्रोफेसर आर. वाई. काल्ने ने पिछले पांच वर्ष में ३६ यकृत-बदलाव के केस निबटाये हैं। इनमें से तीन व्यक्ति अभी जीवित हैं।

डी. एन. ए. की जुगलबंदी

प्रोफेसर जेम्स वाटसन (हार्वर्ड विश्वविद्यालय) तथा प्रोफेसर फ्रांसिस क्रिक (कैवेंडिश लेबोरेटरी, कैंब्रिज, इंगलैंड) ने २१ वर्ष पूर्व एक शोध-प्रबंध में सिद्ध किया था कि डी. एन. ए. के अणु जोड़ों में गुंथे रहते हैं। उनके बीच निर्माण करनेवाली चार इकाइयों के पूरक रसायन द्वारा संयुजन रखा जाता है। इन इकाइयों को रसायनशास्त्र में प्यूरिन एवं पिरीमिडिन आधार कहा जाता है। सहज सिद्धांत यह है कि डी. एन. ए. के अणु इस आधार के मध्य आकर्षण के कारण परस्पर गुंथे रहते हैं।

प्रोफेसर वाटसन ने प्रोफेसर क्रिक के अपने उपर्युक्त शोध के विषय में एक पुस्तक (The Double Helix) प्रकाशित की है। आरंभ में इनके निष्कर्षों से बहुत कम वैज्ञानिक सहमत थे। इनके अनुसार डी. एन. ए. अणुओं की यह विशिष्ट जुगलबंदी शारीरिक संरचना - सामग्री के लिए प्रतिलिपि - प्रक्रिया की संभावना व्यक्त करती है। वर्तमान आणविक जैविकी आज प्रो. वाटसन एवं प्रोफेसर क्रिक की शोध पर ही आधारित है। इसका महत्त्व डारविन के विकासवाद से कम नहीं है।

यह सिद्ध किया जा चुका है कि कोषों के विभाजन के समय डी. एन. ए. अणु, जिनसे अनेक गुणसूत्र बनते हैं, सीधा हो जाता है और प्रत्येक जोड़ीदार दूसरे अणु के संयोग के लिए आदर्श बन जाता है।

जेम्स वाटसन (बायें) तथा फ्रांसिस क्रिक। पृष्ठभूमि में डी. एन. ए. की आणविक संरचना का माडल।

महिला जिसने वाटरगेट को स्टीलगेट बना दिया

● सुरेश राम

इतिहास में यह पहली ही मिसाल है जब किसी देश में एक अखबार द्वारा एक कांड का पर्दाफाश किये जाने पर वहां के राष्ट्रपति को इस्तीफा देना पड़ा। गत ५ अगस्त तक अमरीका के राष्ट्रपति निक्सन यह कहते रहे कि वाटर-गेट कांड से उनका कोई वास्ता नहीं है, लेकिन उस दिन उन्होंने स्वीकार किया कि वे अब तक मामले को छिपाये रहे। फिर भी अपने पद से हटने को तैयार नहीं हुए। लेकिन दो दिन बाद उन्होंने एलान किया कि अलग हो रहा हूं और ९ अगस्त को उपराष्ट्रपति फोर्ड ने राष्ट्र-पति-पद की शपथ ग्रहण की।

निक्सन (रिपब्लिकन) की विरोधी डेमोक्रेटिक पार्टी का प्रधान कार्यालय वाटरगेट नामक एक भवन में था। वहां १७ जून, १९७२ को पांच सेंधमार रंगेहाथ पकड़े गये। इसकी खबर 'वाशिंगटन पोस्ट' ने छापी। इस खबर के साथ-साथ ही 'पोस्ट' के दो तरुण रिपोर्टरों की एक रिपोर्ट भी छपी। राष्ट्रपति के प्रवक्ता ने इसे 'तीसरे दरजे की निकम्मी डकैती' बताया और कहा कि सरकार का उससे कोई संबंध नहीं है। 'वा... पोस्ट' ने एक संपादकीय में इसका... किया और निक्सन-प्रशासन की... गतिविधियों के खिलाफ 'वाशिंगटन...' एक आंदोलन-सा छेड़ दिया। ... प्रमुख सूत्रधार थीं 'पोस्ट' के प्रबंध... की पिछले ग्यारह साल से अध्यक्ष... स्वामिनी श्रीमती कैथरीन ग्राहम।

कैथरीन का जन्म १६ जून, १९१... हुआ। उनके पिता यूजेन मेअर एक प्र...ष्ठित साहूकार थे, जिन्होंने सन... और अठ्ठाईस के बीच खूब संपत्ति कमा... महामंदी आने के पूर्व वे साहूकारी से अ... हो वाशिंगटन में बस गये। बाद में ... के दैनिक अखबार 'वाशिंगटन पो...' को उन्होंने आठ लाख डालर (लग... साठ लाख रुपये) में खरीद लिया। कैथरीन की प्राथमिक शिक्षा मैडीरा स... में हुई। फिर वे वासर कालेज चली ... और अंत में शिकागो यूनीवर्सिटी से ग्रेजु... हुईं।

पत्रकारिता से शौक होने की वजह से वे 'सैन फ्रांसिस्को न्यूज' नामक दैनिक की रिपोर्टर हो गयीं। यहां उन्होंने ... वर्ष तक काम किया। उसके बाद वे 'वाशिं...गटन पोस्ट' के संपादक-मंडल में आ गयीं।

उसी समय, १९४० में, उनकी शादी फिलिप ग्राहम नामक एक प्रतिभाशाली युवक से हुई। १९४८ में मेअर ने 'वाशिंगटन पोस्ट' दामाद के हाथों में सौंप दिया। फिलिप ने बड़े उत्साह से इस दैनिक का काम

वाशिंगटनपोस्ट' के संपादक बेंजामिन ब्रैडली तथा 'पोस्ट' की अध्यक्षा और स्वामिनी कैथरीन ग्राहम : विनोद का आनंद लेते हुए

संभाला और छह साल बाद वाशिगटन के एक अन्य प्रतिद्वंद्वी दैनिक 'टाइम्स हेरॉल्ड' को खरीदकर 'पोस्ट' में ही मिला दिया। इसके बाद उन्होंने १९६१ में प्रख्यात साप्ताहिक 'न्यूजवीक' को भी ले लिया और उनकी गिनती अमरीका के अत्यंत शक्तिशाली पत्र-संचालकों में होने लगी। श्रीमती कैथरीन बड़ी तत्परता से पति के काम में हाथ बंटातीं।

फिलिप की आत्महत्या

फिलिप बहुत ही साहसी, विनोदप्रिय और परिश्रमी थे। उन्होंने ही समाज-सुधार के बारे में राष्ट्रपति जानसन के सामने कुछ सुझाव रखे, जो आगे चलकर 'महान समाज' के नाम से विश्व भर में ख्यात हुए। लेकिन फिलिप को कभी-कभी घोर निराशा आ घेरती। धीरे-

धीरे उनके स्वभाव में असंतुलन व चंचलता आने लगी। कैथरीन ने बहुत धीरज से इस संकट का सामना किया। एक दिन फिलिप ने अचानक आत्महत्या कर ली। इस वज्रपात ने कैथरीन को आहत कर दिया।

'पोस्ट' का दायित्व संभाला

श्रीमती कैथरीन को 'पोस्ट' के संचालन के संबंध में उच्च-स्तरीय निर्णय लेने पड़े। उनकी पकड़ बढ़ती गयी और साख ऊंची उठती गयी। इस प्रकार १९६३ से श्रीमती कैथरीन ने 'पोस्ट' का सारा दायित्व अपने ऊपर ले लिया।

१९६५ में उन्होंने अपनी जिंदगी का एक बहुत हिम्मतभरा फैसला किया, प्रसिद्ध पत्रकार बेन ब्रेडली को प्रबंध-संपादक नियुक्त किया। 'पोस्ट'-जैसे एक व्यवस्थित और सौम्य दैनिक के लिए यह बड़ा पराक्रमी निर्णय था, क्योंकि श्री बेन टक्कर लेने और मोर्चाबंदी के लिए मशहूर हैं। बेन और श्रीमती ग्राहम के सहयोग से 'पोस्ट' में प्रखर आक्रमण के साथ-साथ उत्तरदायित्व का अद्भुत संगम हो गया। कुछ ही अरसे में श्रीमती कैथरीन में एक नया आत्म-विश्वास आ गया और वे निर्भीकता एवं शालीनता के साथ 'पोस्ट' का संचालन करने लगीं।

१९६८ में अपने चुनाव से पहले भू. पू. राष्ट्रपति रिचर्ड निक्सन को एक दिन श्रीमती कैथरीन ने दोपहर के भोजन पर बुलाया। अपनी सूझ-बूझ, योजना और पद्धति से उन्होंने संपादकों को बहुत प्रभावित किया, लेकिन कुछ समय ... ही व्हाइटहाउसवाले 'पोस्ट' को ... दुश्मन मानने लगे और जब ... पति एग्न्यू का आम विरोध हुआ ... अधिकारीगण हाथ धोकर 'पोस्ट' के ... पड़ गये। श्रीमती कैथरीन उन ... वालों में नहीं थीं जो व्हाइटहाउस ... कृपा-दृष्टि के लिए तरसते हैं। ... कोई चिंता नहीं की।

वाटरगेट और 'वाशिंगटन ...

वाटरगेट कांड की खबर जब 'वाशिंगटन पोस्ट' में छपी तब अमरीका में ... मच गयी। उसके दो तरुण पत्र... बाब वुडवर्ड और कार्ल बर्नस्टाइन ... अपनी लंबी-लंबी रिपोर्टों द्वारा ... रहस्य खोलकर रख दिया।

यह एक महत्त्वपूर्ण तथ्य है कि ... इस खोज में 'पोस्ट' अकेला था। ... तो 'न्यूयार्क टाइम्स' तक ने इस ... को महत्त्व नहीं दिया।

राष्ट्रपति निक्सन के दोबारा ... कर आने पर व्हाइटहाउस के अधि... रियों ने 'पोस्ट' की उपेक्षा शुरू कर दी ... जनवरी, १९७३ में उन्होंने 'पोस्ट' ... बदला लेने की ठानी। फ्लोरिडा ... में 'पोस्ट' के दो टी. वी. केंद्र चलते ... वहां की स्थानीय समाचार-एजेंसियां ... जिनका व्हाइटहाउस से गुप्त ... संबंध था, उन केंद्रों की प्रामाणिकता ... चुनौती दी ताकि 'पोस्ट' को सबक ... उनका मामला अभी तक फेडरल ...

निकेशन कमीशन में चल रहा है।

एक अभियोगी की स्वीकारोक्ति

जनवरी में ही वाटरगेट के सात अपराधियों पर न्यायाधीश सिरिका की अदालत में मुकदमा चलाया गया। जब यह मुकदमा चल रहा था तो श्रीमती कैथरीन हांगकांग में 'न्यूजवीक' के अंतर्राष्ट्रीय संस्करण की तैयारी में लगी हुई थीं। २३ मार्च को एक अभियोगी जेम्स मैककार्ड ने न्यायाधीश को लिखित सूचना

लंदन से प्रकाशित दैनिक 'टाइम्स' ने एक लंबा संपादकीय छापकर 'वाशिंगटन पोस्ट' पर दोष लगाया कि राष्ट्रपति निक्सन के विरुद्ध वाटरगेट कांड का इतना प्रचार कर वह 'प्रचार द्वारा मुकदमा' ही करना चाहता है और 'एक न्यायपूर्ण मुकदमा चलना असंभव बनाये दे रहा है।' व्हाइटहाउस ने इस संपादकीय के करोड़ों प्रिंट छपवाकर जनता में बंटवाये।
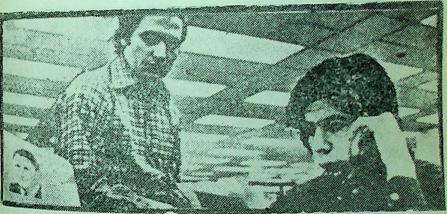
बर्नस्टीन (बायें) तथा वुडवर्ड : जिन्होंने 'वाटरगेट' का पर्दाफाश किया

दी कि उन पर मौन रहने के लिए राजनीतिक दबाव डाला जा रहा है।

'पोस्ट' की ओर से उन्हें टेलीफोन कर सारी खबर दी गयी। सारा समाचार सुनकर श्रीमती कैथरीन की जान में जान आयी और उन्हें पक्का विश्वास हो गया कि नौ महीने से जारी 'पोस्ट' का आंदोलन अवश्य सफल होगा।

इस घटना के कुछ अरसे बाद श्रीमती कैथरीन किसी कार्यक्रम में भाग लेने इंगलैंड पहुंचीं। वहां ब्रिटिश पत्रकारों ने उनसे पूछा कि 'आप क्यों निक्सन साहब के पीछे पड़ी हैं?' लंदन के 'टाइम्स' की टीका का भी हवाला दिया गया। इसके जवाब में लंदन के गिल्डहाल में श्रीमती कैथरीन ने कहा, 'अगर मेरा अखबार 'वाशिं-

भारत की संसार को सबसे उपयोगी देन

बहुत पहले मनुष्य पत्थरों को आधार बना कर अपनी चीजें गिना करता था. धीरे-धीरे उसने हाथ की अंगुलियों का सहारा लेकर गिनना शुरू किया, लेकिन इस तरह वह दस से आगे नहीं गिन सकता था.

भारत ने ही सबसे पहले दस चिह्नों द्वारा मनुष्य को गिनना सिखाया और इस प्रकार उसे अंगुलियों द्वारा गिनने के बन्धन से मुक्त कर दिया. मानवता को भारत द्वारा दिये गए उपहारों में सबसे सूक्ष्म लेकिन बहुत ही अनमोल उपहार है—शून्य का चिह्न. शून्य के प्रयोग ने गिनती के क्षेत्र में एक क्रान्ति पैदा कर दी.

1 2 3 4 5

6 7 8 9 0

ये दस अंकों के चिह्न पूजा के काम में लाए जाने वाले यज्ञ-कुण्ड के चौकोर आकार से लिए गए हैं. हर चिह्न का मूल्य अंक में उसके स्थान पर निर्भर करता है. इन चिह्नों द्वारा सब कुछ गिना जा सकता था.

ये अंक सम्राट अशोक के युग (२७३-२३२ ई० पू०) में खूब प्रचलित थे. इसके एक हजार साल बाद मोहम्मद इब्न-ए-मूसा अलख्वारज़मी ने बग़दाद में इनका प्रचार किया. अरबों के यहां प्रयोग में रहने के बाद ये अंक योरोप पहुंचे. गिनती को सादा और आसान बनाकर इन चिह्नों ने अनगिनत को भी गिन डाला.

इसके साथ ही मनुष्य अपनी विभिन्न जरूरतों के अनुसार अंकों और गणित की दूसरी समस्याएं सुलझाने के लिए नए नए साधनों की खोज भी करता रहा.

आधुनिक युग के प्रगतिशील साधनों में कंप्यूटर ने हमको इस योग्य बना दिया है कि हम गिनती और आंकड़ों के कठिन से कठिन प्रश्नों को क्षण भर में हल कर सकते हैं. इस तरह जीवन की उन समस्याओं को हल करना संभव हुआ जिनका पहले कोई हल नहीं था.

भारत में बने आई बी एम कंप्यूटर देश की विकास-शक्ति को लाखों गुना बढ़ाने में सहायक हो रहे हैं.

मानव-शक्ति को और अधिक बढ़ाने के लिए आज जीवन के हर क्षेत्र में मनुष्य के हर काम में मनुष्य कंप्यूटर का उपयोग कर रहा है.

IBM

गटन पोस्ट' के बजाय 'लंदन पोस्ट' होता तो मुझे इतनी परेशानी उठानी ही न पड़ती। कारण, अगर आपका प्रधान-मंत्री इस तरह की हरकत करता और मामले को दबाता तो आपकी संसद में उसके खिलाफ सवालों की झड़ी लग जाती, उसके खिलाफ प्रस्ताव आते और उसकी सरकार ही गिर जाती। इस दृष्टि से आपके प्रेस का काम काफी हलका हो जाता, लेकिन अमरीका में राष्ट्रपति को किसी संसद, सदन या भवन के आगे नहीं आना पड़ता और उसकी सत्ता सर्वोपरि है। अब अगर प्रेस का भी मुंह बंद हो जाए तो फिर राष्ट्रपति के गलत कारनामों को कौन टोक सकेगा? इसलिए अमरीकी प्रेस की जिम्मेदारी ब्रिटिश प्रेस की अपेक्षा कहीं ज्यादा बड़ी और संगीन है। आप ही बताइए कि जब सरकारी तंत्र जांच होने में बाधा डाले, गवाहों को बयान देने से डराकर, धमकाकर, फुसलाकर तोड़ ले, एक के बाद एक नया रोड़ा लगा दे, तो जन-हित को प्रोत्साहन किस तरह दिया जा सकता है? 'टाइम्स' का यह आरोप कि हम निष्पक्ष मुकदमे में अड़चन खड़ी कर रहे हैं, एकदम निराधार है। आपने उपराष्ट्रपति एग्न्यू के मामले में देखा ही कि हमने जो प्रकाशित किया उससे अदालत को मदद ही मिली और फिर बहुत-सी बातें जिनकी हमें खबर तक नहीं थीं, वे भी सामने आयीं। फिर जहां तक राष्ट्रपति निक्सन का मामला है, उसमें तो तथ्यों को और भी भयानक रूप से छिपाया जा रहा है।'

श्रीमती कैथरीन ने आगे कहा, 'वास्तव में तीन अदालतों के सामने मामला पेश है—कानून की अदालत, अमरीका की कांग्रेस और लोकमत। इस ड्रामे में प्रेसीडेंट निक्सन के अलावा उनके वर्तमान और भूतपूर्व घनिष्ठ सहयोगी भी फंसे हैं और अपनी बचत के लिए वे व्यक्तिगत तथा सरकारी, सभी तरह के साधनों का निर्ममतापूर्वक उपयोग कर रहे हैं। अगर प्रेस चुप्पी साध लेता है तो इसे कौन खोलकर रखेगा? सरकार का बस चले तो जनता का सारा अभिक्रम, सारी चेष्टाएं, सारे अधिकारों को कुचल दे और हावी हो जाए। क्या उस स्थिति में हमारा लोकतंत्र सुरक्षित रहेगा?'

श्रीमती कैथरीन के इस कथन के साढ़े चार माह के अंदर ही प्रेसीडेंट निक्सन को राष्ट्रपति से अलग होना पड़ा। 'वाशिगटन पोस्ट' ने जिस सत्य का प्रतिपादन किया था उसकी पुष्टि हो गयी। एक पत्र के लिए इससे बढ़कर उपलब्धि क्या हो सकती है? इस पर श्रीमती कैथरीन ग्राहम को गौरव अनुभव करना स्वाभाविक ही है। उनकी निश्चलता, कर्तव्यपरायणता, दूरदर्शिता के कारण ही वाटरगेट का रूपांतर स्टील-गेट में हो गया, जिसे निक्सन तक नहीं लांघ सके।

—सर्वोदय-कुटी, ५२, शहराराबाग, इलाहाबाद-३

अध्यापक और छात्र

अध्यापक : तुम्हारे पिता को दो सौ रुपये वेतन मिले। अगर उनमें से सौ रुपये वे तुम्हारी माता को दे दें तो बताओ उनके पास क्या बचेगा ?

छात्र : कुछ नहीं।

अध्यापक : क्यों ?

छात्र : बाकी सौ रुपये मां अपने आप ले लेंगी।

★

अध्यापक ने पूछा वह कौन-सी चीज है, जो हमेशा बढ़ती है ?

"मछली," एक छात्र ने उत्तर दिया।

"वह कैसे ?"

"जी, मेरे डैडी ने एक मछली का शिकार किया था। वे जब भी किसी से उसकी चर्चा करते हैं तब हमेशा उसके आकार को पिछली बार से दो इंच बढ़ाकर बताते हैं।

"मुझे खुशी है कि तुम कक्षा में ... रहे। आशा है, आगे भी अच्छे अंक ... करोगे ?" प्रिंसिपल ने छात्र से ...

"जी, पर आप भी पर्चे ... प्रेस में ही छपने के लिए भेजते ...," छात्र ने आश्वासन मांगा।

★

अध्यापिका ने टोनी से पूछा, "... तुम्हें अपने पिताजी की जेब में दो ... मिलें तो तुम क्या करोगे?"

"तब मैं रोज उनकी जेब देखा करूं...," टोनी ने कहा।

★

विद्यार्थी ने अध्यापक से कहा, "... पर्चा इतना खराब तो नहीं हुआ था ... आप मुझे जीरो देते।"

"यह तो मैं भी समझता हूं कि ... जीरो नहीं दिया जाना चाहिए था, ... इससे कम अंक जानता ही नहीं।"

अदालत

एक मुकदमे में एक गवाह ने ... बार यह सिद्ध करने का प्रयास किया ... अमुक होटल में बदमाशों का अड्डा है ... बचाव-पक्ष का वकील बराबर ... करता रहा—"उस होटल में बद... का अड्डा है, यह सिद्ध करने के लिए तुम... जो दलीलें पेश की हैं, उनमें दम नहीं है ... कोई ऐसी ठोस वजह बता दो ... तुम्हारी बात पर विश्वास किया जाए।"

"एक बार मैंने आपको भी ... बैठे देखा था," गवाह ने जवाब दिया।

समाचार पत्र

एक व्यक्ति को मकान की जरूरत थी। एक दिन अखबार में खाली फ्लैटों का विज्ञापन पढ़कर वह विज्ञापनदाता के पास पहुंचा। फ्लैट देख लेने के बाद उसने किराया पूछा तो मकान-मालिक ने बताया, "ग्राउंड-फ्लोर का ३०० रुपये, फर्स्ट फ्लोर का २५० रुपये और सेकंड फ्लोर का १७५ रुपये।"

"ओह! माफ कीजिएगा, आपकी इमारत मेरी जरूरत के मुताबिक ऊंची नहीं है।" और वह चला गया।

—रेणु गुप्ता

ग्राहक और दुकानदार

ग्राहक : ये मिठाइयां तो कल की हैं!

दूकानदार : हां, कल ही की हैं।

ग्राहक : तुम कल की मिठाइयां बेच रहे हो! यह ठीक नहीं।

दूकानदार : क्यों, कल कोई खराब दिन था क्या?

★

ग्राहक : (साड़ी की दूकान पर) कोई अच्छी-सी, कम कीमत की साड़ी दिखाइए।

दूकानदार : जी हां! यह देखिए।

ग्राहक : क्या कीमत है इसकी?

दूकानदार : सिर्फ ३५ रुपये की है।

ग्राहक : ठीक है। इस पर ७० का लेबल लगा दीजिए—शादी में भेंट देनी है। —रेखा

हंसिकाएं काव्य में

दुःशासन

तथाकथित कौरवों ने फिर
प्रतिज्ञा दोहरायी
कि पांच बरस तक सत्तारूढ़ होंगे
सिर्फ उन्हीं के
भतीजे-भाई

जांच

कहने लगे वह
खुदाई में निकले हैं अब की बार
तस्करों के गिरोह

सुझाव

बाल-बाल कर्ज में
बाप रे बाप
बाल कटवा क्यों नहीं लेते आप

सहारा

उन्हें कौन समझाये
कि बुढ़ापे का सहारा है
सिर्फ वही लाठी
जो
औरों की भैंसें हांक लाये

हिसाब

उम्र का हिसाब देते हुए
बोलीं तुरंत
अब तक बीते हैं—तीस पतझर
चार वसंत

—डॉ. सरोजनी प्रीतम

लक्ष्मी-स्तवन

ओंकार परमानन्दं क्रियते सुख सम्पदा ।
सर्वमंगलमांगल्ये शिवे सर्वार्थ साधिके ।।

—लक्ष्मीजी ! आप ओंकारस्वरूपा और ब्रह्मा-विष्णु-शिव तीनों की शक्ति से संपन्न हैं। परमानंददात्री हैं। सुख-संपत्ति प्रदान करती हैं। सारे मंगलों की खान हैं। कल्याणकारिणी हैं। सारी कामनाओं को पूर्ण करती हैं।

पीताम्बरधरां देवीं नानालंकारभूषिताम् ।
तेजः पुंजधरां श्रेष्ठांध्यायेद्बालकुमारिकाम् ।।

—मुसकानभरी बालकुमारी लक्ष्मीजी का ध्यान करना चाहिए, जो पीत-परिधान से युक्त हैं, विविध प्रकार के अलंकारों से सुसज्जित हैं, परम तेजस्विनी हैं और जिनसे कोई श्रेष्ठ नहीं है।

प्रसीद मे महालक्ष्मी सुप्रसीद महाशिवे।
अचला भव संप्रीत्या सुस्थिरा भव मद् गृहे।।

—महालक्ष्मीजी ! मुझ पर कृपा करो। आप परम कल्याणकारिणी हैं। मुझ पर अनुग्रह करो। प्रीतिपूर्वक अचल भाव से मेरे घर में दृढ़तापूर्वक स्थिर रहो।

नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः ।
नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताः स्म ताम् ।।

—देवी महादेवी को नमस्कार। कल्याणकारिणी को निरंतर नमस्कार। प्रकृति-भद्रा को नमस्कार। हम उसे स्थिर भाव से नतमस्तक हो नमस्कार करते हैं।

स श्लाघ्यः स गुणी धन्यः सः कुलीनः स बुद्धिमान् ।
स शूरः स च विक्रान्तो यस्त्वया देवि वीक्षितः ।।

—लक्ष्मीजी ! तुम्हारी जिस पर कृपादृष्टि है वही प्रशंसनीय, कुलीन, बुद्धिमान, परमवीर और अजेय है।

• मेक्सिको में प्राप्त
लक्ष्मी-प्रतिमा →

बम्बई के प्रसिद्ध महालक्ष्मी
मंदिर में लक्ष्मी की मूर्ति

छाया-एम० एस० अग्रवाल

सन्तोष ही जीवन का रस है...
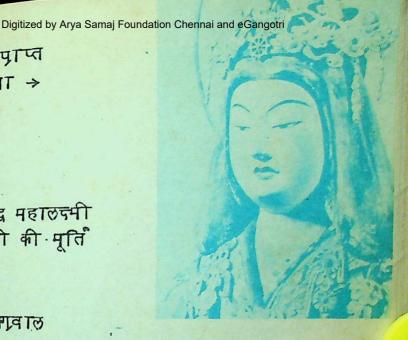
सत्यैषी--बीकानेर, ज्ञानबहादुर श्रेष्ठ--काठमांडो, बसंतकुमार चकोर -- मुजफ्फरपुर, शिवेश्वर तिवारी--सुपौल, भगवतस्वरूप शर्मा--ऋषिकेश, विनोदकुमार राजपूत--वाराणसी, अचिंतकुमार माहेश्वरी--मेरठ, वली मोहम्मद कुरैशी--बाड़मेर : आपको लेखन-प्रेरणा कब, किस परिस्थितिवश और कहां मिली? आपने किसकी प्रेरणा से लिखना शुरू किया? क्या आपने लेखन के क्षेत्र में किसी को अपना गुरु माना? इस पथ में आनेवाली सहयोगी एवं विरोधी परिस्थितियों का उल्लेख करें। आप आधुनिक लेखकों में किससे अधिक प्रभावित हैं? लेखन को

क्यों और क्यों नहीं?

इस लेखमाला के अंतर्गत अब तक अमृतलाल नागर, पंत, अज्ञेय, बच्चन, यशपाल, धर्मवीर भारती, जैनेन्द्र, 'रेणु', महादेवी वर्मा, भगवतीचरण वर्मा, हजारीप्रसाद द्विवेदी, उपेन्द्रनाथ 'अश्क', इलाचंद्र जोशी, राजेन्द्र यादव, लक्ष्मीनारायण लाल, शैलेश मटियानी, कृष्णा सोबती, निर्मल वर्मा, भवानीप्रसाद मिश्र एवं शिवप्रसाद सिंह पाठकों के प्रश्नों के उत्तर दे चुके हैं। इस अंक में प्रस्तुत हैं मन्नू भंडारी

लेखक कोई मसीहा नहीं है

— मन्नू भंडारी

आप दैवी प्रेरणा, जन्मजात कला मानती हैं या प्रयास से साध्य?

आपका 'कब, कहां और कैसे' वाला प्रश्न पढ़कर तो मुझे लगा मानो एक पाठक नहीं वरन वकील या पुलिसमैन हत्या-संबंधी जिज्ञासा कर रहा हो। लिखना क्या सचमुच कोई ऐसी दुर्घटना है जो इन सवालों के जवाब खोल सके। प्रेरणा कोई ऐसी ठोस वस्तु तो नहीं जिसके पाने की तिथि, स्थान आदि का ब्योरा प्रस्तुत किया जा सके। जहां तक मैं समझती हूं, वह क्रमशः अपनी भीतरी और बाहरी स्थितियों के प्रति तीव्र ढंग से रिएक्ट करना है। बचपन से ही हर छोटी-बड़ी बात की तीखी प्रतिक्रिया मेरे भीतर होती है, जिसके लिए उस समय कहा जाता था कि 'मन्नू बहुत गुस्सैल है, बात-बात पर झनझना उठती है।' घर के साहित्यिक-राजनीतिक वातावरण ने इन्हीं प्रतिक्रियाओं को एक सही और सर्जनात्मक दिशा दे दी।

लेखन क्या, जिंदगी में ही कभी किसी को गुरु नहीं माना। यहां तो 'आपहि गुरु

और आपहि चेला' वाली उक्ति पर ही जीवन टिका है।

बाहरी परिस्थितियां न सहयोगी रहीं न विरोधी, अपना मन और मूड ही सहयोगी - विरोधी स्थितियों का निर्माण करते रहे।

लेखकों में किसी व्यक्ति विशेष से न मैं पहले कभी प्रभावित हुई न आज ही हूं, पर अच्छी रचनाओं ने मुझे हमेशा प्रभावित किया है, फिर वे चाहे किसी प्रतिष्ठित लेखक की हों या साधारण की, पुराने लेखक की हों या आधुनिक की। क्या करूं 'हीरो-वरशिप' वाली वृत्ति मैं अपने भीतर पनपा ही नहीं सकी।

बड़ा टेढ़ा प्रश्न है आपका! लेखन-कला का विश्लेषण करते समय 'दैवी-प्रेरणा, जन्मजात-कला या प्रयत्न-साध्य' में से न किसी एक पर अंगुली रखी जा सकती है और न ही किसी की उपेक्षा की जा सकती है। वास्तव में लेखन-कला इतनी उलझी हुई और ऐब्सट्रैक्ट है कि उसके मूल-स्रोत को यों परिभाषित कर देना संभव नहीं।

नंदिनी सहस्रबुद्धे, नागपुर: आपकी कहानी कौन-सी है? क्या आपने विषय अपने आसपास के परिवेश चुना था? क्या प्रथम कहानी के में आपने कोई कठिनाई महसूस की

पहली कहानी 'मौत' शीर्षक से समाज' पत्रिका में छपी थी, पर बाद दो-तीन साल तक न कुछ लिखा छपा। इसलिए सही अर्थों में पहली कहानी 'मैं हार गयी' है, जिसे श्री भैरव गुप्त ने 'कहानी' में छापा था। दोनों कहानियों का कथ्य आसपास के जीवन से चुना गया था। लिखते समय चाहे से जितना भी जूझी होऊं, पर तो कोई कठिनाई नहीं हुई थी।

सुधांशु शेखर त्रिवेदी, पटना: कल्पना और सुनी-सुनायी बातों के पर प्रौढ़ लेखन की संभावना कहां तक क्या आपने ऐसी रचना कभी की है

बिलकुल नहीं। जी नहीं, मुझे दुस्साहस करते कभी नहीं बना।

अरविंदकुमार, भागलपुर: (१) कार के साथ जीवन बिताने की

मां-बेटी (टिंकू)—प्यार भरे क्षण

मधुर हो सकती है, लेकिन जीवन नहीं।" 'एक इंच मुस्कान' की इस पंक्ति के वातायन से यदि मैं आपके व्यक्तिगत जीवन को देखूं तो मेरे इस दृष्टिकोण के संबंध में आपके क्या विचार होंगे ?

(१) मेरे विचार ? वातायन से किसी के व्यक्तिगत जीवन में झांकना सभ्य समाज की नजरों में अशिष्टता है और दुर्भाग्यवश मैं सभ्य समाज की ही एक इकाई हूं।

(२) 'एक इंच मुस्कान' की पात्रा अमला अंत तक रहस्यमयी बनी रहती है। क्या आप बता सकती हैं कि अपने वैवाहिक जीवन में उसके खुश न रहने के क्या कारण थे ? एक हिंदू स्त्री के लिए यह कहना--'अपने पति से अलग रहकर मैं ज्यादा खुश हूं' कहां तक उचित है ?

(२) 'एक इंच मुस्कान' कोई जासूसी उपन्यास नहीं है, जहां शुरू से आखिर तक हर स्थिति और पात्र को रहस्यमय बनाकर रखा जाए और अंत में उन सबका उद्घाटन हो। जिंदगी में बहुत-से लोग आते हैं, जो कभी खुली पुस्तक-जैसे लगते हैं तो कभी पुरानी ऐतिहासिक इमारतों-जैसे रहस्यमय। अमला जैसी है, वैसी है। उसके व्यक्तित्व के जिस पक्ष ने मुझे प्रभावित किया उसे आंकना ही मेरा लक्ष्य था। उसकी संपूर्ण जीवनी लिखने का न मेरा आग्रह था न ही उसकी आवश्यकता थी।

हिंदू आदर्श और आज के भारतीय जीवन को दोहरी भाषा में बोलने-समझने का ढोंग आप कितने दिनों तक और चलाये रखना चाहते हैं ? प्रश्न के इस अंश पर तो पूछने का मन होता है—आप बीसवीं शताब्दी के सातवें दशक में ही जी रहे हैं न ? मुझे तो संदेह हो चला है !

पूरन वाल्मीकि, छिंदवाड़ा : क्या आज

ऊपर : दो दुश्मन ? ... नहीं दोस्त भी !
नीचे : अध्ययन में मग्न

का मनुष्य ईश्वर और धर्म के रूढ़िबद्ध रूप से किनारा करके अपनी सार्थकता, मानव-मूल्यों पर अपनी दृढ़ आस्था तथा प्रकृति से स्व-आदम-संपर्क-सूत्रों की विशेषता को जिंदा रख सकता है?

नीत्शे ने अपनी सहज, दार्शनिक भाषा में तो यह कहा था कि 'ईश्वर मर गया है' और आपका प्रश्न सुनकर मुझे लगा कि उसे जिंदा रहने का कोई हक नहीं है। आप ईश्वर को नहीं, सच्चे भारतीय की तरह ईश्वर की रूढ़ि को प्यार करते हैं। ईश्वर तो एक आस्था का नाम है बंधु, और वह आस्था अपने आसपास भी हो सकती है और अपने भीतर भी। ईश्वर और धर्म के रूढ़िबद्ध रूप का पालन करके तो हम तिलक लगाकर जिंदगी भर माला ही जपते रह जाएंगे। जीवन के वृहत्तर मूल्यों के लिए और अपनी सार्थकता के लिए विवेक, मानवीय संवेदना और सह-अनुभूति की आवश्यकता होती है, ईश्वर की नहीं।

विंदेश्वरीप्रसाद, अंडाल: क्या आपके विचार में कहानी लिखने के लिए व्यक्ति, अनुभव या स्थिति इनमें से किसी एक का वास्तविक होना जरूरी नहीं है?

बिलकुल जरूरी है। वास्तविकता का दामन छोड़कर खयाली पुलाव ही पकाया जा सकता है, अच्छी कहानी नहीं लिखी जा सकती।

पवनकुमार, तिनसुकिया: आप कितनी भाषाओं की जानकार हैं? क्या आपकी कोई रचना दूसरी भाषा में अनूदित है?

अपनी भाषा को छोड़कर मुझे कोई प्रांतीय भाषा नहीं आती। रचनाएं अवश्य सभी भारतीय भाषाओं और कुछ विदेशी भाषाओं में अनूदित हुई हैं।

वागीश्वरी पांडे—पटना, राकेशकुमार —झाझा, अशोककुमार साहू—, लता—दतिया, लेखराम मृदुल—: 'आपका बंटी' में एक बच्चे के मनो... का बड़ा ही सुंदर चित्रण हुआ है। ... यह लिखने की प्रेरणा कहां से मिली? इसका लेखन-कार्य कब प्रारंभ हुआ? ... पात्र बंटी एक कल्पना मात्र है या वास्तविकता? 'आपका बंटी' में आपने ... लाइलाज समस्या को उठाया है ... हलका-सा भी समाधान अपनी ओर से प्रस्तुत न करके पाठक को बंटी की तरह एक गहरी दुश्चिंता और मानसिक बेचैनी में चौराहे पर ही छोड़ दिया ... आज सफल और प्रभावपूर्ण उपन्यास वे ही होते हैं जो पाठक की चेतना को झकझोरकर उसे दुविधा की स्थिति में ... दें, ऐसा क्यों?

भारतीय समाज में निरंतर बदलती हुई परिस्थितियों के बीच विवाह ... को भी एक संक्रांति से गुजरना पड़ ... है। बड़े शहरों में यह समस्या ... और अधिक तीखे रूप से सामने आ ... क्योंकि नारी और पुरुष के व्यक्तित्व ... दो स्वतंत्र इकाइयों के रूप में उभ...

आते हैं। पिछले कुछ वर्षों की अधिकांश कहानियां इन्हीं संबंधों के बदलाव को रेखांकित करती हैं। मेरे परिचय में भी ऐसे कई परिवार थे। संबंधों की इस खींचतान में मेरा ध्यान सबसे अधिक आकर्षित हुआ अचानक असुरक्षित महसूस करनेवाले इन निरीह बच्चों की ओर। बंटी का जन्म ऐसे ही दो-तीन परिवारों के बीच हुआ। मां-बाप के संबंधों में बहुत कुछ विविधता हो सकती है, लेकिन हर जगह बंटी को एक ही यातना से गुजरना है—असुरक्षा और कहीं भी न जुड़ पाने की नियति। इस यातना ने हर बंटी को अलग-अलग मनःस्थितियां और मनोविज्ञान दिये हैं—कहीं वह बहुत आक्रामक और उद्दंड है तो कहीं बहुत निरीह और बुझा हुआ। मेरा बंटी इन्हीं तीन-चार परिवारों में पलनेवाले बंटियों का मिलाजुला रूप है।

समाधानवादी उपन्यास प्रेमचंदजी ने अपने ही समय में समाप्त कर दिये थे। आज का लेखक तो केवल स्थिति की विषमता और समस्या को ही रेखांकित कर सकता है। और समाधान दे भी क्यों? क्या हमारी आज की सारी अव्यवस्था और दयनीयता का कारण हवाई समाधान और झूठे आदर्शवाद में रहना ही नहीं है? वास्तविकता जिस रूप में हमारे सामने आती है, हम अपनी पूरी संवेदना के साथ उसी रूप में पाठक तक पहुंचा देना चाहते हैं, क्योंकि अकसर समस्याओं और यथार्थ की कटुताओं के बीच रहनेवाला पाठक उनके प्रति 'इम्यून' (संवेदना-रहित) हो जाता है। उस संवेदना को जगाना और अपने आसपास के प्रति सजग करना ही आज का लेखकीय दायित्व है। इस प्रकार समस्या जब सबकी हो जाती है तो उसका समाधान भी सामूहिक रूप से ही खोजा जा सकता है। लेखक मसीहा बनकर

जिंदगी में कभी किसी को गुरु नहीं माना

समस्याओं के समाधान देता रहे, यह स्थिति आज संभव नहीं है। कभी थी भी, इसमें भी मुझे संदेह है।

विनोदकुमार पांडेय : आप रचना स्वांतः-सुखाय करती हैं या दूसरों को सुख देने के लिए ?

लिखती अपने सुख के लिए हूं... वाती दूसरों के सुख के लिए।

दिलीप सुदीप--रांची, नीरा अवस्थी--लिलुआ, आनंदकुमार सिंहानिया--दतिया : 'यही सच है' कहानी आपके अपने व्यक्तिगत जीवन पर लिखी गयी है या कल्पना का सजीव रूप है ? इस कहानी के माध्यम से आप कहना क्या चाहती हैं ? 'यही सच है' पर जो फिल्म बन रही है उससे आपको क्या ... हैं ?

मेरे अपने व्यक्तिगत-जीवन पर नहीं लिखी गयी है, पर इतना ज़रूर ... कि दूसरों का अनुभव भी रचना ... तक आते-आते कहीं लेखक का ... अनुभव हो जाता है। बात असल ... है कि लेखकीय अनुभूति और ... अनुभूति का मिलन-बिंदु कहां ... यह रचना-प्रक्रिया का ऐसा टेढ़ा ... है कि इसका विश्लेषण संभव नहीं ...

इतना निश्चित है कि दूसरों की अनुभूतियां संवेदना की आंच में एक-एककर जब इतनी अपनी हो जाती हैं कि 'स्व' और 'पर' का भेद ही मिट जाता है, सृजन तभी संभव हो पाता है; पर जिस अर्थ में आप पूछ रही हैं उस अर्थ में यह मेरे व्यक्तिगत जीवन पर आधारित नहीं है।

'यही सच है' के माध्यम से जो कहना चाहती थी उसी के लिए तो मैंने कहानी लिखी थी। अगर आप ऐसा मानते हैं कि कहानी अपना कथ्य स्पष्ट नहीं कर सकी है और इसके लिए अलग से एक टिप्पणी की अपेक्षा है तो मान लेती हूं कि यह कहानी की असफलता है।

लेखन और फिल्म दो भिन्न माध्यम हैं, इसलिए यह निश्चित है कि एक कथाकृति जब फिल्मायी जाएगी तो उसमें रद्दोबदल और हेरफेर तो होगा ही। इस फिल्म से मुझे इतनी ही अपेक्षा है कि रद्दोबदल और सारे परिवर्तनों के बावजूद कहानी की मूल संवेदना ज्यों-की-त्यों सुरक्षित रहे। दूसरी अपेक्षा है कि मुझे मेरा पैसा मिल जाए।

अजय खत्री--हजारी बाग, प्रेमप्रकाश शुक्ल, शिवनारायण शिवहरे--सोहागपुर: मानव-मन बड़ा अद्भुत है। जिसे वह प्यार करता है उसी से कभी-कभी ईर्ष्या भी करने लगता है, विशेषकर तब जबकि वह प्रसिद्धि के क्षेत्र में उससे आगे निकल जाए! 'एक इंच मुस्कान' छपने के बाद क्या आप लोगों के जीवन में इस प्रकार का कुछ हुआ? लेखन के क्षेत्र में आप दोनों में प्रतिस्पर्धा की भावना नहीं होती है क्या? आप दोनों के साहित्यिक होने से आपके पारिवारिक जीवन में कठिनाई आयी है?

ईर्ष्या या प्रतिस्पर्द्धा की भावना तो कभी नहीं आयी! बात यह है कि मुझे न लेखक होने का मुगालता है न आगे निकल जाने का भ्रम! इस क्षेत्र में मैं कतई महत्त्वाकांक्षी नहीं हूं, न ही मुझे अपनी औकात और राजेन्द्र की सामर्थ्य को लेकर कभी कोई गलतफहमी हुई! इसलिए इस तरह का संकट हम दोनों के बीच कभी आया ही नहीं?

दोनों के साहित्यिक होने से पारिवारिक जीवन में यदि कुछ कठिनाइयां आयी हैं तो निश्चित रूप से कुछ सुविधाएं भी मिली हैं।

पुष्पा सिंह--मुरलीगंज, विजय अग्रवाल--दिल्ली, विनोदकुमार पांडेय--अंडाल: शादी से पूर्व यादवजी आपसे परिचित थे? अगर हां तो किस रूप में? आपके जीवन में साहित्य की रोशनी शादी से पूर्व आयी या पश्चात? क्या साहित्यिक अभिरुचि से ही प्रभावित हो आपने यादवजी से संबंध स्थापित किया?

जी हां थे, मित्र के रूप में। शादी से पहले ही मुझे थोड़ा-बहुत लिखने-पढ़ने का शौक था और यही रुचि आरंभ में हमारी मित्रता का आधार भी बनी।

पद्मकांत शर्मा 'प्रभात'--बिसवां, पुष्पा भारती, ओमप्रकाश पांडे--पटना : क्या यह सच है कि आपके और राजेन्द्रजी के संबंधों में दिनोंदिन दरार बढ़ती जा रही है? क्या आप अपने पारिवारिक जीवन से संतुष्ट हैं? आपके कितनी संतान हैं?
आपके और राजेन्द्रजी के बीच साहित्य-रचना करते झगड़ा भी होता है?

प्रभातजी, देख रही हूं कि दूसरों के निहायत निजी जीवन में आपकी गहरी दिलचस्पी है। चाहती तो इस प्रश्न को छोड़ भी सकती थी, पर जवाब दूंगी। पिछले पंद्रह सालों से स्थिति यह है कि एक दिन दरार पड़ती है और दूसरे ही दिन भर जाती है, इसलिए बढ़ नहीं पाती।

अब उलटकर एक सवाल आपसे पूछ लूं? मेरे इस नकारात्मक उत्तर से आपके मन में तो कोई दरार नहीं पड़ी?

पारिवारिक जीवन से आज तक कोई संतुष्ट हुआ है भला? यह असंतोष ही तो इस जीवन का रस है। एक कन्या! वैसे निवेदन कर दूं कि इस संतोष और संतान का आपस में कोई संबंध नहीं होता।

साहित्य-रचना करते समय तो झगड़ा करना संभव ही नहीं है। हां, उस पर आलोचना-प्रत्यालोचना करते अवश्य हो जाया करता है; पर हमारी भाषा में उसे झगड़ा नहीं, मतभेद कहते हैं।

—२९/७१ जयशंकर मार्ग, शक्तिनगर, दिल्ली-११०००७

नीति की गति

एक राजकुमार बड़ा अत्याचारी था। राजा ने उस दुर्बुद्धि को सुधारने की बड़ी कोशिश की, लेकिन वह नहीं सुधरा। बुद्ध उसे सुमति देने के लिए स्वयं उसके पास गये। वे उसे नीम के एक पौधे के पास ले गये और बोले, "राजकुमार, इस पौधे का एक पत्ता चखकर तो बताओ कि कैसा है?"

राजकुमार ने पत्ता तोड़कर चखा। उसका मुंह कड़वाहट से भर उठा। उसे तुरंत थूककर उसने नीम का पौधा ही जड़ से उखाड़ फेंका।

बुद्ध ने पूछा, "राजकुमार, यह तुमने क्या किया?"

राजकुमार ने उत्तर दिया, "यह पौधा अभी से ऐसा कड़वा है, बढ़ने पर तो पूरा विष-वृक्ष ही बन जाएगा। ऐसे विषैले पेड़ को जड़ से उखाड़ फेंकना ही उचित है।"

अब बुद्ध ने गंभीर वाणी में कहा, "राजकुमार! तुम्हारे कटु व्यवहार से पीड़ित जनता भी यदि तुम्हारे प्रति ऐसी ही नीति से काम ले तो तुम्हारी क्या गति होगी? यदि तुम फलना-फूलना चाहते हो तो उदार, दयावान और लोकप्रिय बनो।"

उसी दिन से राजकुमार ने बुराई की राह छोड़ भलाई का मार्ग अपना लिया।

—श्रीकृष्ण

ह्वेनसांग भारत यात्रा से पूर्व

● श्रीधर पा...

पृथ्वी पर ऐसे कम ही भाग्यवानों ने जन्म लिया होगा जिन पर सरस्वती और लक्ष्मी की समान कृपा हो। ह्वेनसांग इन में से एक था। चीन के सांगतांग प्रांत के गवर्नर 'किन' के प्रपौत्र ह्वेनसांग का जन्म ६०४ ई. में चीन में हुआ था। उसके पितामह ने चीन की प्रशासनिक सेवाओं में नीति-निर्धारक पदों पर कार्य किया था। त्सेई राजवंश-काल में वे पीकिंग के शाही महाविद्यालय के मुख्याचार्य रहे थे। ह्वेनसांग के पिता 'हुई', जो बड़े हृष्ट-पुष्ट थे, अपने शाही रहन-सहन तथा नित नये फैशन के लिए विख्यात थे। उनके वृषभ-स्कंधों पर झूलते लंबे वस्त्रों से विद्वता टपकती थी। ग्रंथों के अध्ययन के लिए समय निकालने के निमित्त उन्होंने सुई राजवंश का पतन होते ही गवर्नर और दंडाधिकारी के पदों पर होनेवाली अपनी नियुक्तियों को अस्वस्थता के बहाने अस्वीकार कर दिया। उनके चार पुत्रों में ह्वेनसांग बचपन से ही बड़ा मेधावी था। उसकी प्रत्युत्पन्न-मति के कारण 'हुई' उससे बड़ा प्रसन्न रहा करता था।

एक दिन ह्वेनसांग के पि... उच्च साहित्य पढ़ रहे थे। जैसे ही ... स्थल पर आये जहां त्सांग त्सेऊ ... स्वामी की आज्ञा सुनते ही उठ खड़ा ... था, अचानक आठ-वर्षीय ह्वेनसांग ... अपने कपड़े संभाले और उठ खड़ा ... कारण पूछने पर उसने तपाक से ... दिया, "त्सांग त्सेऊ की तरह ...

ह्वेनसांग : एक पुराने चित्र के आधार ...

भी बैठा नहीं रह सकता जब कि वह (अपने पिता के) इतने प्रिय वचन सुन रहा हो।" प्रसन्न हो उसके पिता ने अपने परिवार के सदस्यों को बुलाया और उन्हें बधाई देते हुए कहा, "इस बालक में—महान राज-संस्कार हैं!" 'हुई' को दुःख था तो सिर्फ इतना कि वह अपने पुत्र के तेज को देखने के लिए शायद जीवित न रह सके।

बौद्ध ग्रंथों तथा वृद्ध संतों के उपदेशों का अध्ययन करनेवाला यह बालक हम-उम्र बालकों के साथ समय नहीं गंवाता था। ह्वेनसांग की अध्ययन की प्रवृत्ति को विकसित किया उसके भाई चांङत्गसी ने, जो पहले ही बौद्ध हो चुका था। वह लोयांग के गुरुकुल में पढ़ रहा था। वह ह्वेनसांग को अपने साथ ले गया।

इसी समय निःशुल्क सुविधाओं सहित लोयांग में निवास करने के लिए चौदह भिक्षुओं के पद विज्ञापित किये गये। अवयस्क ह्वेनसांग निराश चयनहाल के बाहर दरवाजे पर खड़ा था। मुख्य चयन-अधिकारी ने उसे बाहर देखकर पूछा, "मित्र, क्या मैं आपका परिचय जान सकता हूं?" ह्वेनसांग द्वारा परिचय दिये जाने पर उसने पूछा, "क्या तुम भी अपना चयन चाहते हो?"

"अवश्य, लेकिन उम्र कम होने के कारण मैं प्रतियोगिता में सम्मिलित नहीं हो सकता," निराश ह्वेनसांग ने उत्तर दिया।

"लेकिन, भिक्षु होने से आपको क्या मिलेगा?"

"मेरा एक ही लक्ष्य है श्रीमन!—तथागत के महान धर्म का विदेशों में प्रचार," ह्वेनसांग ने उत्तर दिया।

इस भावात्मक उत्तर से प्रभावित हो अधिकारी उसे लेकर चयन-मंडल के सम्मुख उपस्थित हुआ और कहा, "यदि आप इस बालक का चुनाव कर लें तो निःसंदेह यह शाक्य के महान धर्म का तेजस्वी सदस्य होगा।" चयनोपरांत ह्वेनसांग अपने भाई के साथ ही रहने लगा।

गुरुकुल में किंग नामक भिक्षु निर्वाण-सूत्रों का पाठ किया करता था। इन्हें प्राप्त कर ह्वेनसांग तब तक न सोया जब तक कि उन्हें पूरा पढ़ न लिया। महाभिक्षु येन से उसने महायानसूत्रों को सीखा। उसकी स्मरण-शक्ति इतनी तीव्र थी कि एक बार पढ़कर ही वह पुस्तक याद कर लेता था। तेरह वर्ष की उम्र में उसने भिक्षु-सम्मेलनों में मान्यता प्राप्त कर ली। इसी समय 'सुई' राजवंश के हाथों से साम्राज्य निकल गया। न्याय और दंड-व्यवस्था के ध्वस्त हो जाने से गलियां नरमुंडों से पट गयीं। ह्वेनसांग ऐसी स्थिति में अपने भाई के साथ तांग के राजकुमार के साथ रहने यंगान चला गया।

पहला साल उसने वूतेह में बिताया। देश में युद्धनाद ही सुनायी देता था। कनफ्यूशियस और बुद्ध भुला दिये गये। ६०५ ई. में 'सुई' राजवंश के द्वितीय राजा

यांगची के पूर्वी राजधानी (लोयां
चार मठों की स्थापना कर शांति
की, किंतु उसके अंतिम वर्षों में पुनः अ
वस्था फैल गयी। लोग देश छोड़कर
चले तो ह्वेनसांग ने अपने भाई से
“अब यहां कोई भी धार्मिक कृत्य
नहीं किया जा सकता। आइए, हम
के राज्य में दक्षिण-पश्चिम चीन
और अपना अध्ययन जारी रखें।”
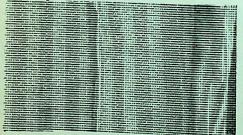
दोनों भाई त्सेऊ वू घाटी पार कर
हानचून प्रांत पहुंचे, जहां उन्हें
गुरुकुल के दो आचार्य कोंग और
मिल गये। इस प्रांत में धार्मिक
अधिक होने के कारण धर्मसभाओं का
नियमित आयोजन हो सका। ह्वेनसांग
ने साइत्सिन से महायान 'सम्परि
शास्त्र' और 'अभिधर्मशास्त्र' का अध्ययन
किया। तीन वर्षों में उन्होंने बौद्ध
की समस्त शाखाओं पर अधिकार
लिया। इसी समय शुह के अतिरिक्त
अन्य सभी प्रांतों में सूखा पड़ जाने से
के प्रत्येक कोने से धर्म-पुरोहित शुह
में आने लगे। वहां उपदेश-महा
ह्वेनसांग ने अपनी विद्वता से सभी
प्रभावित किया था।

चीन में कोई ऐसा बहुश्रुत
था जो ह्वेनसांग को न जानता हो
उसका भाई भी अपनी बहुमुखी प्रतिभा
के लिए संपूर्ण चीन में प्रसिद्ध था।
वह इतिहास का श्रेष्ठ ज्ञाता था।
प्रांत के गवर्नर त्सान कुंग ने उसे

राजसम्मान-चिह्न प्रदान किया था।

बीस वर्ष की अवस्था में ह्वेनसांग ने 'विनय' का पाठ पूर्ण किया। ध्यान-सूत्रों और शास्त्रों के अध्ययन के समय उद्भूत गूढ़ प्रश्नों का उत्तर प्राप्त करने के लिए वह राजधानी के आचार्यों से मिलना चाहता था। अध्ययन-क्रम में बाधा पड़ने की आशंका से अपने भाई का साथ छोड़कर वह चुपके से व्यापारियों के साथ हांगचाऊ प्रांत जा पहुंचा। उसने स्वयं आये हुए हानयांग के राजा की शंकाओं का समाधान किया। शास्त्रार्थ में अनेक पंडितों को पराजित कर उपहारों को ग्रहण करने से इनकार कर दिया। प्रसिद्ध पंडितों के साथ उत्तर में सियांगचाऊ के निकट जाकर आचार्य हिउ के सम्मुख अपनी समस्याएं रखीं। मार्ग में अनेक आचार्यों से ग्रंथों का अध्ययन करते हुए वह चांगान पहुंचा। वहां वह शंग और पिन नामक दो धर्मज्ञों से मिला, जिनके शिष्य बादलों की भांति चीन में फैले थे। शास्त्रार्थ में ह्वेनसांग के गंभीर प्रश्नों से प्रभावित होकर उन्होंने कहा, "हे महापुरुष! तुम शाक्य के धर्म में पूर्ण दीक्षित हो। तुमसे विद्या का सूर्य पुनः चमकेगा, किंतु खेद है कि हम आयु-जर्जर लोग उस दिन को न देख सकेंगे।"

अब ह्वेनसांग का यश चारों ओर फैल गया। वह विभिन्न आचार्यों से मिला और इस परिणाम पर पहुंचा कि सभी की मान्यताएं अलग-अलग हैं। सबके सब अंधकार में हैं। यथार्थ ज्ञान की प्राप्ति के लिए उसने पश्चिम दिशा की यात्रा का निश्चय किया।

बुद्ध की जन्मभूमि का दर्शन करने के लिए वह लालायित था। अपनी योजना किसी को बताये बिना वह शिष्यों और मित्रों के साथ राजदरबार में पहुंचा जहां विदेश-गमन की याचिका प्रस्तुत की। साथियों ने उसका साथ छोड़ दिया, किंतु उसने अकेले ही चलने का निश्चय किया। राजधानी के एक पवित्र मंदिर में कठि-नाइयों से रक्षा के लिए उसने देवों से प्रार्थना की। ६३० ई. में उसकी मां का स्वप्न सत्य सिद्ध हुआ। स्वप्न में सफेद कपड़े पहनकर पश्चिम की ओर जाते हुए ह्वेनसांग से उसकी मां ने पूछा था, "पुत्र, तुम कहां जा रहे हो?" बिना पीछे देखे उसने उत्तर दिया था, "मैं सत्य की खोज में जा रहा हूं।"

२६ वें वसंत में यात्रारंभ की रात्रि में उसने स्वप्न देखा था कि घनघोर गर्जन के बीच समुद्र में भासित सुमेरु पर उसे लहरें स्वयं चढ़ा देती हैं। यह प्रतीक था उसकी सफलता का। यात्रा अकेले आरंभ करनेवाले ह्वेनसांग को मार्ग में तमाम साथी मिलते गये।

—द्वारा रमापति पाठक, सेंटर ऑव ऐडवांस्ड स्टडी इन फिलासफी, बनारस हिंदू यूनीवर्सिटी, वाराणसी

अकबर इलाहाबादी का जन्म १६ नवंबर, १८४६ को इलाहाबाद जिले के बारा नामक कस्बे में हुआ था। उनके पिता सैयद तफज्जुल हुसैन बड़े विद्वान थे। आठ-नौ वर्ष की अवस्था तक अकबर घर पर ही पढ़े, फिर इलाहाबाद आ गये। यहां कुछ समय तक मौलवियों से पढ़कर १८५६ में वे जमुना मिशन स्कूल में भर्ती हो गये। दो-तीन वर्ष की पढ़ाई के बाद उनका जी ऊब गया और इधर-उधर की नौकरियों के बाद कचहरी में नकल-नवीस हो गये। इस नौकरी को भी छोड़ दिया

गजल मेरी हैः अफसाना किसी

● त्रिवेदी 'मजबूर'

और मुख्तारी का इम्तहान पास किया। फिर नायब तहसीलदार हो गये। लेकिन यहां भी ज्यादा दिन नहीं ठहरे और इलाहाबाद हाईकोर्ट में मिसिल-ख्वां हो गये। १८७२ में उन्होंने वकालत पास की और सात वर्ष तक वकालत की। १८८० में मुंसिफी के लिए चुन लिये गये। अपनी विशिष्ट योग्यता एवं प्रतिभा के कारण उन्हें जज बना दिया गया। वे इलाहाबाद हाईकोर्ट के जज बननेवाले ही थे कि उनके चौदह वर्षीय पुत्र हाशिम की मृत्यु हो गयी। इससे पहले अपनी तीसरी बेगम की मौत से वे दुखी थे ही। इन सदमों ने अकबर इलाहाबादी—जैसे व्यक्ति को तोड़ दिया और

वे पेंशन लेकर घर बैठ गये। ... १९२१ को उनका देहावसान हुआ।

अकबर इलाहाबादी ने ... उम्र में ही शायरी करना शुरू ... था, लेकिन उन्होंने २१ वर्ष की ... में अपनी पहली गजल पढ़ी थी—

समझे वही इसको जो हो दीवाना किसी का
'अकबर' ये गजल मेरी है अफसाना किसी का

उनका पहला कविता-संग्रह ... से लेकर १९०८ तक की रचनाओं ... जिसे स्वयं उन्होंने तीन दौरों में ... पहले दो दौर गजलों के हैं, तीसरा ... गजलों के साथ-साथ व्यंग्य और ... कविताओं का है।

अकबर के साहित्य को मुख्यतया ... भागों में बांटा जा सकता है—(१) ... परंपरावादी, (२) नये युग की कविताएं ... जिन पर अंगरेजी काव्य का प्रभाव है ... (३) हास्य एवं व्यंग्यपूर्ण कविताएं।

पहले भाग की झलकियां देखिए—

हम आह भी भरते हैं तो हो जाते हैं बदनाम
वो कत्ल भी करते हैं तो चर्चा नहीं होता
जब उनको रहम कुछ आया हया ने ...
बिगड़-बिगड़ गयी तकदीर मेरी बन-बन ...
पूछता हूं मैं जो हसरत से मआले ...
रास्ता गोरे गरीबां का दिखा देती है

दूसरे भाग की कुछ रचनाएं देखें——

जो देखी हिस्टरी इस बात पर कामिल यकीं आया
उसे जीना नहीं आया जिसे मरना नहीं आया

★

उसकी बेटी ने उठा रक्खी है दुनिया सर पर
खैरियत गुजरी के अंगूर के बेटा न हुआ

★

हुक्म इंगलिश का, मुल्क हिंदू का
अब खुदा ही है भाई सल्लू का

★

मैं हुआ रुखसत उनसे ऐ 'अकबर'
वस्ल के बाद 'थैंक यू' कहकर

अब हास्य एवं व्यंग्यपूर्ण कविताओं की वानगी लीजिए——

मगरिब ने खुर्दबीं से कमर उनकी देख ली
मशरिक की शायरी का मजा किरकिरा हुआ

★

रेजोल्यूशन की कोशिश है मगर उसका असर गायब
प्लेटों की सदा सुनता हूं और खाना नहीं आता
खुदा के फज्ल से बीवी-मियां दोनों मुहज्जब हैं
हिजाब उसको नहीं आता, इन्हें गुस्सा नहीं आता

★

इश्क नाजुक-मिजाज है बेहद
अक्ल का बोझ उठा नहीं सकता

★

हुस्न देखो बुताने-काशी का
चेहरा है चांद पूर्नमाशी का
चश्मेतर देखकर वो मिस बोली
यह महकमा है आबपाशी का
हो गया फेल इम्तहानों में
अब इरादा है बद-मआशी का

सामाजिक एवं आर्थिक समस्याओं को वे जिस दृष्टिकोण से देखते थे, वह आज भी हमारे दृष्टिकोण से मेल खाता है।

प्रसिद्ध शायर अकबर इलाहाबादी

मिलता नहीं घी तो खुश्क रोटी ही सही
नेअमत जो बड़ी नहीं तो छोटी ही सही
मैं कौम की फरब ही का मुश्ताक नहीं
बस जाइए, मेरी अक्ल मोटी-मोटी ही सही

राजनीतिक जीवन के विरोध में अकबर ने लिखा था——

तमाम कौम एडीटर बनी है या लीडर
सबब ये है कि कोई और दिल्लगी न रही

सांस्कृतिक परिवेश पर अकबर साहब ने लिखा था——

कर दिया कर्ज़न ने ज़न मर्दों की सूरत
देखिए
आबरू चेहरे की सब फैशन बनाकर पोंछ ली
क्या करें इनसान को योरुप ने अंधा कर दिया
इब्तदा दाढ़ी से की और इंतहा में मोंछ ली

धर्म के बारे में उनके व्यापक दृष्टि-कोण का आशय इन शेरों से स्पष्ट होता है—

भाई गांधी खुदसरी की आरज़ू के साथ हैं
और साहब लोग गरबी रंगो बू के साथ हैं
मालवीजी सबसे बहतर हैं मेरी दानिस्त में
यानी मंदिर में हैं और अपनी गऊ के साथ हैं

अहिंसा के विरोध को अकबर ने इस प्रकार व्यक्त किया था—

हों मुबारक हुज़ूर को गांधी
ऐसे [illegible] नसीब हों किसको
कि पिटें खूब और सर न उठा[illegible]
और खिसक जाएं जब कहो खिस[illegible]

अकबर इलाहाबादी की [illegible] निर्भीकता और मानव-प्रेम का [illegible] सागर है।

अकबर ने अंगरेजी हुकूमत के [illegible] लिखा था—

तोप खिसकी, प्रोफेसर पहुंचे
जब बसूला हटा तो रंदा है

मानव-प्रेम को प्रदर्शित कर[illegible] अकबर की चंद अमिट पंक्तियां दे[illegible]-

जान ही लेने की हिकमत में तरक्की [illegible]
मौत का रोकनेवाला कोई पैदा न [illegible]

पड़ा है कहत, बशर मर रहे हैं, फाकों से
खुशी हो क्या मुझे शबरात के पड़ाकों से
बुझी हुई है तबीयत, ये रोशनी है फुजूल
उतार लीजिए साहब चिराग ताकों से

अकबर रचनाओं में ही विनोद-प्रिय नहीं थे बल्कि व्यक्तिगत जीवन में भी उनमें विनोदप्रियता का माद्दा आखिरी उम्र तक रहा।

एक बार अकबर इलाहाबादी अपने पुत्र इशरत हुसैन के यहां पहुंचे। उनकी बैठक में स्थानीय बड़े लोगों का जमाव था। अकबर बेचारे सीधे-सादे-शेरवानी पहने एक ओर जा बैठे। किसी ने उनकी ओर ध्यान न दिया। अंत में किसी ने फुसफुसाकर कहा कि ये डिप्टीसाहब के वालिद हैं। फिर क्या था, चारों ओर से सम्मान की झड़ियां लग गयीं। थोड़ी 'हां-हूं' के बाद बोले, "मियां, और भी कुछ सुना? सुना है कि लंदन में अल्लाह मियां आये थे!" सब लोग हैरत से उनकी ओर देखने लगे तो उन्होंने बात पूरी की, "वे चारों तरफ कहते फिरे कि मैं खुदा हूं, लेकिन किसी ने उन्हें अपने यहां घुसने न दिया। आखिर जब उन्होंने कहा कि मैं ईसा मसीह का बाप हूं तो लोग चारों तरफ से दौड़े और उन्हें हाथों-हाथ ले लिया।" सुननेवालों ने शर्म से गरदन नीची कर ली और अपने व्यवहार के लिए क्षमा मांगी।

अंतिम दिनों में अकबर ने जो शेर लिखे थे, उनमें से कुछ ये हैं—

एक बार गांधीजी इलाहाबाद आये और आनंद भवन में ठहरे। सवेरे गांधीजी हाथ-मुंह धो रहे थे और जवाहरलालजी पास खड़े बातें कर रहे थे। कुल्ला करने के लिए गांधीजी ने जितना पानी लिया, वह समाप्त हो गया तो उन्हें दूसरी बार फिर पानी लेना पड़ा। गांधीजी बड़े खिन्न हुए और बातचीत का सिलसिला टूट गया। जवाहरलालजी ने कारण पूछा तो उन्होंने कहा, "मैंने पहला पानी अनावश्यक रूप में खर्च कर दिया और अब फिर पानी लेना पड़ रहा है। यह मेरा प्रमाद है।"

जवाहरलालजी हंसे और कहा, "यहां तो गंगा-यमुना दोनों बहती हैं! रेगिस्तान की तरह पानी कम थोड़े ही है। आप थोड़ा अधिक पानी खर्च कर लें तो चिंता की क्या बात है?"

गांधीजी ने कहा, "गंगा-यमुना मेरे ही लिए तो नहीं बहतीं। प्रकृति में कोई चीज कितनी ही उपलब्ध हो, मनुष्य को उसमें से उतना ही खर्च करना चाहिए जितना उसके लिए अनिवार्य हो।"

—ऋषिकुमार श्रीवास्तव

साहब में सब बुराई, लेकिन खूब चौकस
गांधी में सब भलाई, लेकिन वो महज बेबस
दुनिया तो चाहती है हंगामाए-टिरोजन
और यां है जेब खाली, जो मिल गया सो भोजन

—९, मोहन बाड़ी रानी बाजार, बीकानेर

शब्द प्रबंध मैंध

एक पराजित वक्तव्य

राजेन्द्र याद

बात कागज के संकट की थी। एक मिल के लगभग सर्वेसर्वा ने बड़ी शिष्टता से कहा : "देखिए, आप बुरा मत मानिए। एक तरफ जब बच्चों को टेक्स्ट-बुक न मिल रही हों, इम्तिहान के लिए कापियां न मिल रही हों तब आपको किस्सा-कहानी-कविता के लिए कागज की जरूरत क्यों है?" उस समय सचमुच बुरा ही लगा था, लेकिन शांत मन से सोचने पर लगा, उनकी बात में व्यवस्था की पूरी मानसिकता बोल रही है। शासन और व्यवस्था की निगाह में साहित्य और संस्कृति निहायत गैरउपयोगी, फालतू और कहीं हिकारत से देखने की चीज बन गये हैं, शायद एक अच्छा मनोरंजन भी नहीं हैं। शासन ने कुछ नारे दिये थे, कुछ योजनाएं और घोषणाएं उछाली थीं और देश के साहित्यकार तथा बुद्धिजीवी को आह्वान दिया था कि राष्ट्र के पुनर्निर्माण में वह भी अपना योग दे... सुविधाओं, सुरक्षाओं और सम्मान के आश्वासन मिले थे... सब कुछ हुआ; लेकिन व्यवस्था को बुद्धिजीवी का वह मुक्त सहयोग नहीं मिला। बल्कि इन सत्ताइस वर्षों में उसका स्वर आ... और विरोध का ही होता चला ... सुविधाओं पर लपकने के बावजूद ... आवाज में वह खुला और बेबाक ... नहीं आ पाया जिसकी प्रत्याशा ... की थी। वह सिर्फ तटस्थ होकर ... या निहायत ही शास्त्रीय (एकेडेमिक ... और व्यक्तिगत समस्याएं सुलझाने ... जिन्हें ये सुविधाएं नहीं मिली थीं, ... सचमुच इनकी चाह नहीं थी उनके ... का डंक और तेज होता गया। स्वाभा... ही था कि बुद्धिजीवियों के नाम पर ... 'नपुंसकों और निंदकों' की जमात में ... शासन का मोह भंग हो गया और ... प्रति एक निश्चित उदासीनता, ... या शत्रुता की भावना पैदा होने ... ऐसे सांपों को क्यों पाला जाए जो ... अवसर पर ही आपकी ओर फन नि... कर खड़े हो जाते हैं।

हर व्यवस्था अपना समर्थन चाह... है, जो यह नहीं देता वह असामा... गैरजिम्मेदार और राष्ट्रद्रोही होने ... लिए अभिशप्त है। उसे तो चुप करा... ही होगा। कागज के संकट ने यह ...

बेहद खूबसूरत ढंग से हल कर दी है... देखें कितने लोगों की हिम्मत है जो पत्रिकाएं निकालकर, पुस्तकें छापकर देश में असंतोष और अव्यवस्था फैलाते हैं...? मुद्रित शब्द का अस्तित्व ही जब संकट में है तब 'बुद्धिजीवी की स्वतंत्रता', 'अभिव्यक्ति का अधिकार', 'संप्रेषण की समस्या', 'विरोध की आवश्यकता' जैसी धारणाओं को शहद लगाइए और ड्राइंगरूमी बहसों में चाटिए... "जब लोगों को खाने को अन्न, उद्योगों को ईंधन या जिंदा रहने की नितांत आधारभूत चीजों के दर्शन दुर्लभ हैं तब आपका यह कागज ..." लेखक महोदय, अपनी हाथी-दांती मीनारों से नीचे आइए और देखिए कि जनता किस हालत में रह रही है, लोग भूख-बाढ़-सूखे और मिलावट से कैसे मर रहे हैं... 'वह बोला और वह मुस्करायी' की जबान में कब तक और अपने आपको या दूसरों को बेवकूफ बनाते रहेंगे? कितना घिनौना, अश्लील और हास्यास्पद लगता है कत्लगाह में बैठकर इजारबंद के रेशे गिनना ... या अपने होने का अहसास करने-कराने के लिए किसी दूर देश के नृशंस अत्याचार के खिलाफ वक्तव्य जारी करते रहना ...

रोटी और शब्द

संबंधों और सिद्धांतों का ऐसा रोमानी बुखार उतर जाने के बाद हर लेखक एक बार ठहरकर सोचता है कि अब वह ऐसा क्या लिखे जो सार्थक और प्रासंगिक हो, जो रचनात्मक क्षमता की गहनतम अनुभूतियों को संपूर्ण और प्रभावशाली अभिव्यक्ति दे सके ... लेखकीय मान्यता के बाद रचनात्मक सार्थकता की यातनाप्रद तलाश से हम सबको गुजरना होता है और इसी बिंदु पर हम सबने पाया है कि सार्थकता कहीं नहीं है।

अभी कुछ समय पहले ही एक युग आया था जब बाहरी परिवेश के संदर्भ में हमने अपने अंदर को समझना चाहा, कभी इतिहास और कभी पुराणों से समानांतर रूपक लेकर अपने 'आज' को परिभाषित करने का प्रयत्न किया, अस्तित्ववादी शब्दावली के माध्यम से अपने 'होने' की तकलीफ देती नस और नब्ज पर अंगुली रखनी चाही, हिप्पी भाषा में सब कुछ को तिरस्कृत करके मुक्त होने के प्रयास किये—और इन सारे देशी-विदेशी कोणों और आयामों से देखने के पीछे कहीं एक ईमानदार तड़प थी अपने वास्तविक व्यक्तित्व या 'इयत्ता' की तलाश—राष्ट्रीय अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर हर रोज इधर से उधर फेंक देनेवाली लहरों के बावजूद 'अपने आप की पहचान'—हर रोज कहीं कुछ ढह जाने, टूट जाने और मर जाने के बीच, जो भी कुछ बचा और बन रहा है उसका 'संपूर्ण' दर्शन ... अपने होने और उसकी सार्थकता के आपसी संबंध का समाधान ... और यह सारा प्रयत्न जितना व्यक्तिगत था उतना ही राष्ट्रीय।

(क्रमशः)

विशिष्ट नवीन प्रकाशन

आवारा मसीहा
विष्णु प्रभाकर

अमर कथाशिल्पी शरतचन्द्र चट्टोपाध्याय का पन्द्रह वर्षों के परिश्रम से लिखा सर्वत्र प्रशंसित जीवन-चरित्र। उपन्यास से भी अधिक रोचक। पचासों दुर्लभ चित्र। चित्ताकर्षक साज-सज्जा। 45.00

कविता

पहले मैं सन्नाटा बुनता हूं : अज्ञेय
मूर्धन्य कवि की 1970 से '73 तक लिखी गई नवीनतम कविताओं का आकर्षक संकलन। 10.00

कुरुक्षेत्र : दिनकर
विख्यात काव्य का कवि द्वारा विशेष रूप से लिखी गई टिप्पणियों सहित नवीन संस्करण। 8.00

नाट्यकला

पारसी-हिन्दी रंगमंच : डा० लक्ष्मीनारायण लाल
नाटक सम्बन्धी एक महत्वपूर्ण पहला समग्र अध्ययन। पचासों दुर्लभ चित्र। 20.00

प्रसाद के नाटक तथा रंगमंच: डा० सुषमा पाल मल्होत्रा
अमर नाट्यकार जयशंकर प्रसाद के नाटकों का रंगमंच की दृष्टि से विशद अध्ययन। 20.00

उपन्यास-कहानी

हरा समन्दर गोपीचन्दर : लक्ष्मीनारायण लाल
समसामयिक स्थिति पर गहरा व्यंग्यात्मक चोट करने वाला प्रभावी उपन्यास। 12.00

वह आदमी: वह औरत: अमृता प्रीतम
लोकप्रिय लेखिका की पंद्रह ताजी कहानियां। 6.00

अंतिम चित्र : बलराज साहनी
लोकप्रिय अभिनेता और लेखक की भावपूर्ण कहानियां जिनकी भूरि-भूरि प्रशंसा की गई है। 6.00

एक घटना : मोहन राकेश
लेखक की पहली बार पुस्तक रूप में प्रकाशित आरंभिक कहानियाँ। 6.00

भैरवी चक्र : गुरुदत्त
स्वतंत्र यौनाचार को वैध मानने वाले प्राचीन काल के भैरव सम्प्रदाय पर लोकप्रिय लेखक का नवीनतम उपन्यास। 12.00

राजपाल एण्ड सन्ज़, कश्मीरी गेट, दिल्ली-110006

बुद्धि-विलास

१. वह कौन-सा खेल है जिसमें जीतने-वाली पार्टी पीछे हटती है ?

२. एक घर में एक वृद्धा की हत्या हो गयी। घर की खिड़की से लगी सीढ़ी को देखकर पुलिस ने अनुमान लगाया कि हत्या बाहर के किसी व्यक्ति ने की होगी।

पुलिस के आने से पूर्व सीढ़ी बारह फुट की ऊंचाई पर थी, लेकिन एक सिपाही के सीढ़ी पर चढ़ते ही सीढ़ी की ऊंचाई ग्यारह फुट, आठ इंच रह गयी। यह देखते ही पुलिस का अनुमान बदल गया। क्या आप बता सकते हैं कि पुलिस का नया अनुमान क्या था ?

३. एक तालाब के पास एक पहाड़ है, लेकिन इसके बावजूद पहाड़ की पर-छाईं तालाब में क्यों नहीं दिखायी देती ?

४. कुछ दिन पूर्व एक सज्जन इंग-लैंड गये। वहां उन्होंने अपना एक कोट सिलवाया। लेकिन दर्जी के लिए चेक लिखते समय वे पौंड की संख्या शिलिंग में लिख गये तथा शिलिंग की संख्या पौंड में। दर्जी ने जब इस गलती की ओर ध्यान आकर्षित किया तब उन सज्जन ने देखा कि उस गलती से उन्होंने चेक की रकम दूनी कर दी है। इसके अतिरिक्त एक बात और हुई। उन्होंने चेक पर लिख दिया था—'बीस पौंड से ऊपर नहीं'। यह ठीक लिखा था। क्या आप बता सकते हैं कि चेक पर क्या धन-राशि लिखी हुई थी, और क्या लिखी होनी चाहिए थी ?

५. एक व्यक्ति ने ४,००० रुपये में चार मकान खरीदे। सबसे बड़े मकान के लिए उसने उससे छोटेवाले से १२५ रुपये अधिक दिये। दूसरे के लिए उसने उससे छोटेवाले से ५० रुपये अधिक दिये। तीसरे के लिए उसने सबसे छोटे से १२५ रुपये अधिक दिये। बताइए, उसने हर मकान के लिए क्या दिया ?

अपनी बुद्धि पर जोर डालिए और यहां दिये प्रश्नों के उत्तर खोजिए। उत्तर इसी अंक में कहीं मिल जाएंगे। यदि आप सारे प्रश्नों के सही उत्तर दे सकें तो अपने साधा-रण ज्ञान को श्रेष्ठ समझिए, आगे से अधिक में सामान्य और आधे से कम में अल्प।

—संपादक

---

६. मोहन और सोहन ने आपस में सायकिल-रेस करने की ठानी। दोनों एक-दूसरे से अपने को तेज सायकिल चलाने-वाला समझ रहे थे, लेकिन उनके पास सायकिल एक थी। वे सोचने लगे कि क्या किया जाए। अंत में मोहन को एक उपाय सूझा, बोला, "पहले मील से पांचवें मील के पत्थर तक मैं सायकिल पर चढ़कर दौड़ूंगा। पांचवें मील से दसवें मील तक सायकिल तुम चलाना, दोनों का समय घड़ी में देख लिया जाएगा। जो कम समय लेगा वही जीता हुआ माना जाएगा।" इस बात में आपको कुछ गड़बड़ नजर आती है ?

७. वह कौन-सी वस्तु है जिसमें एक और मिलाया जाए तब भी उसकी संख्या

बढ़ती नहीं, बल्कि वही रहती है ?

८. गांधीवादी विचारधारा के दो प्रमुख हिंदी कवियों के नाम बताइए।

९. ... से मिलती-जुलती इमारत बताइए।

१०. टेस्ट-क्रिकेट में भारत ... का सबसे अधिक नेतृत्व किसने ... और उसका क्या रिकार्ड रहा है ?

११. भारत की क्रिकेट-टीम के ... कप्तान का नाम और उसका ... बताइए।

१२. क्या बता सकते हैं कि वह कौन ... लेखक है जिसकी कृतियों के सबसे ... भाषाओं में सर्वाधिक अनुवाद हो ...

१३. एक धर्मार्थ औषधालय के ... एक लंबे-चौड़े बोर्ड पर वार्षिक दानियों ... सूची लिखी थी—पं. रामप्रसाद—४८, ... केशव—६०, हृदयनारायण—३६, ... कुमार—७२, श्यामकुमार—९६ आदि।

क्या आप बता सकते हैं कि किसी ... नाम के सामने कोई विशेष संख्या ... क्यों लिखी है ? जैसे, ३६ या ७२ के ... पर ४० या ८० क्यों नहीं है ?

१४. पूना से ८० किलोमीटर दूर ... जुन्नार मार्ग पर नारायणगांव के ... अर्वी नामक ग्राम क्यों प्रसिद्ध है ?

१५. भारत के दक्षिण में १,... मील दूर हिंद महासागर में वह कौन-... छोटा द्वीप है जो बहुत चर्चा का ... बन गया है ? अमरीकी प्रशासन उस ... तीन करोड़ डालर व्यय करनेवाला है ... और वह ब्रिटेन के अधीन है।

१६. साथ दिये हुए चित्र को ... से देखिए। बताइए कि यह क्या है ?

खोयी हुई कहानी-१९

खूंटे, जहर, गोलियां

रमेश बतरा

आत्म-कथ्य

बचपन से ही कहानियां पढ़ने का चाव था। आरंभ से ही विज्ञान और तकनीकी का छात्र रहते हुए भी, क्यों और कैसे लिखना शुरू कर बैठा? कुछ लिखने का विचार बेरोजगारी के उमसभरे दिनों में आया। तब मेरे जेहन में इतनी बात उभरी थी कि इस तकलीफ से उबरने और वक्तकटी के लिए यह अच्छा शुगल रहेगा। पर जीवन को साक्षात देखने और परखने पर समझ आया कि लेखन तो सिर्फ माध्यम है, आदमी और आदमी के बीच हो रहे संघर्ष को अभिव्यक्ति देकर जीवन में स्वयं को तलाशते हुए जीवन से जुड़ने का। और यह युद्ध चूंकि हर मोरचे पर जारी है और उसमें भाग लेता हुआ मैं भी घायल होता हूं तो तकलीफ होती है और जब तकलीफ होती है तो रहा नहीं जाता।

आयु—२४ वर्ष, शिक्षा-स्नातक, संप्रति—लो. नि. वि. हरियाणा में

वह पति की सांस से परिचि[illegible] और आज उसकी सांस क[illegible] थी कि वह परेशान है.... और कुछ [illegible] सोच रहा है जो तकलीफदेह है। [illegible] पूछा, "जाग रहे हो?"

पति, बीस-पच्चीस घंटों के [illegible] में आ पड़नेवाले व्यय से निवटने के [illegible] बनाये जा रहे जुगाड़ों के क्रम को [illegible] नहीं चाहता था। वह चुप ही लेटा रहा [illegible] पत्नी ने उसका सिर थपथपाते हु[illegible] पूछा, "बोलते क्यों नहीं?"

"तुम भी तो नहीं सोयीं!"

"क्या सोच रहे हो?"

"कुछ नहीं।"

"झूठ... सच-सच बताओ।"

"सोच रहा था... यदि [illegible] हुआ तो?"

"ईश्वर भला करेगा।"

"बहुत मेहरबान है न हम पर[illegible]"

"फिर पत्थर मारने लगे [illegible] को! कम-से-कम इन दिनों तो [illegible] करो। जानते हो इन दिनों माता-[illegible] में हुई हर बात का प्रभाव होनेवाली सं[illegible] पर पड़ता है।"

"तुम जानो।"

"अभिमन्यु की कथा नहीं सुनी तुमने[illegible] अर्जुन ने सुभद्रा को चक्रव्यूह में युद्ध [illegible] का ढंग बतलाया... तो अभिमन्यु ने [illegible] गर्भावस्था में ही सीख लिया।"

वह असहाय होकर खिसिया[illegible] हंसी हंसकर रह गया। उसका मन [illegible]

वह साफ-साफ बतला दे कि डॉक्टर एक बार नहीं, कई बार ऑपरेशन होने की संभावना प्रकट कर चुकी है, जबकि उसकी गांठ एकदम खाली है। सहायता के लिए वह जहां कहीं भी गया है, हर किसी ने इतनी मुस्तैदी से कान हिला दिये हैं कि वह स्वयं को अपाहिज-सा महसूस करने लगा है... अभिमन्यु पैदा करना उसके बस का रोग नहीं !

वह सोचता रहा, सोचता रहा और सोचता ही रहा। कभी कुछ और कभी कुछ। पैसा जुटा सकने के एक ढंग को दूसरे से नकारकर वह तीसरा ढंग सोचता और फिर तीसरे को भी ठीक न समझकर कोई चौथा कारगर ढंग सोचने लगता। एक-के-बाद एक उसके सोचे हुए सभी समाधान परस्पर कटते चले गये और सोच-सोचकर निराश होने के बाद जब उसका मस्तिष्क कुंद हो गया तब अकस्मात किसी दुधारी तलवार-सा एक समाधान शैतान बनकर उसके सिर पर लटकने लगा, "चोरी ? चोरी भी तो की जा सकती है !"

मां के ट्रंक में लगे अलीगढ़-ताले की चाबी का पता-ठिकाना वह खूब जानता है। वहां तक पहुंचना भी मुश्किल नहीं। ट्रंक में हजार-डेढ़ हजार रुपया हर समय पड़ा रहता है। वह सिर्फ पांच सौ उठा लाएगा... सिर्फ पांच सौ, ताकि बाद में लौटाया भी जा सके। फिलहाल वह वहां एक चिट छोड़ आएगा। मां और बाबूजी उससे चाहे कितने भी विलग क्यों न हो गये हों, इतने दुश्मन नहीं हुए कि उसे पुलिस के हवाले कर दें... या इतनी-सी बात के लिए उसे जलील करें। यह भी हो सकता है कि पुत्र का कष्ट और पौत्र का वात्सल्य मां और बाबूजी को फिर से उनके साथ जोड़ दे।

यह रिस्क उसे ले ही लेना चाहिए।

शादी से पहले एक बार उसके सिर में एकाएक दर्द शुरू हुआ था तो मां ने उसकी मालिश करके उसे सुलाने के लिए इसी तरह उसका सिर थपथपाते हुए कहा था, "बिल्लू, लगता है मुझे बहू का मुंह देखना नसीब नहीं होगा ।"

"तुम्हारे भाग्य में तो दादी-परदादी होना लिखा है, मां ! चिंता न करो।"

"कहीं कोई लड़की ताड़ तो नहीं
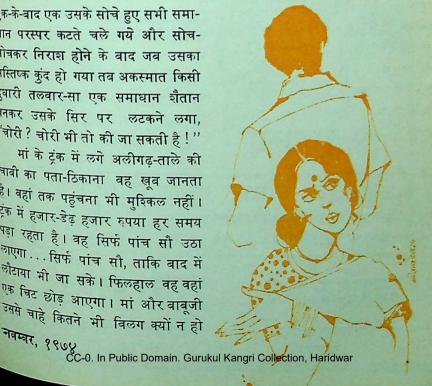
रखी तूने ?”

“एक है तो सही,” उसने बता ही दिया था, “जब कहूंगा, उसी से शादी करवा देना ।’

“तो यह ले,” मां ने दाहिने हाथ में पहनी अपनी तीन अंगूठियों में से एक उतारकर उसे थमा दी थी, “अबके मिले तो उसे मेरी तरफ से दे दीजियो और कहियो कि मैंने घर बुलाया है ।”

और आज ? आज उसी लड़की के लिए मां ने विष-बुझे लहजे में शाप दे दिया था, “जिस निगोड़ी ने मेरे घर का सुख-चैन छीन लिया ...भगवान उसे कभी सुखी न रखे !”

और बाबूजी ? शादी के लि
जोर देनेवाले बाबूजी ने भी आज
झाड़कर उसके मुंह पर थूक दिया
“मर गया तेरा बाप ! किस मुंह से
मेरे पास ? जिस बूते पर शादी की
अब उसी बूते पर बच्चे भी पैदा

जिस लड़की को एक नजर
के लिए मां एक बार नहीं सैकड़ों बार
चुकी थीं, उसे देखने और उससे
होने के बाद मां ने कहा था, “तू
तू गैर जात में ब्याह करेगा ?
बिरादरी तो हमें नुक्कड़ पर बिठा

और रात को बाबूजी के लौटने
उसने लंबी भूमिका बांधकर अपना
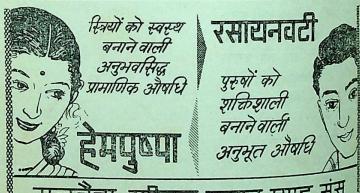
प्रकट करते हुए कहा था, "और मैं चाहता हूं बाबूजी, कि सीधा-सादा आदर्श विवाह किया जाए। न घोड़ी, न बारात, न शोर-शराबा और न ही दहेज ।"

मां कुछ कहने को हुई ही थी कि बाबूजी ने रोक दिया था और ऐनक उतारकर कुरते के छोर से उसका शीशा पोंछते हुए बोले थे, "बिल्लू बेटे, तूने इतनी बड़ी-बड़ी बातें तो सोच लीं, लेकिन हम... जिन्होंने तुझे इतना सोचने लायक बनाया... उनके बारे में कुछ नहीं सोचा ?

"तू चाहे तो हम समझौता कर सकते हैं...बस, यह शर्त मत रख कि बारात नहीं सजेगी और दहेज नहीं लिया जाएगा । हां, हम अपनी ओर से मांगेंगे कुछ नहीं !"

बस, इतनी-सी बात और एक आदर्श तथा एक प्रथा में टकराव के बीच सभी रिश्ते चकनाचूर होकर कांच-कांच हो गये ! और वह उस दलहीज को सदा-सदा के लिए लांघ आया जो उसके घर से निकलते ही उसकी बाट जोहने लगती थी और वह किसी भी वक्त चाहे कितनी भी देर से क्यों न लौटे, स्वागत किया करती थी !

फिर उसने शादी की थी। न बारात, न घोड़ी, न शोर-शराबा, न आडंबर। और न ही दहेज। चार मित्रों की उपस्थिति में चार भांवरें और सगुन के नाम पर कन्या-वालों से एक रुपया लेकर, वह उस लड़की को पत्नी रूप में अंगीकार कर लाया था।

तब पढ़ाई छोड़कर उसने नौकरी कर ली और भूल गया कि इस संबंध के लिए उसे बड़ी भारी कीमत चुकानी पड़ी थी। अपितु उसे संतोष था कि उसे मनचाही पत्नी मिल गयी है। वरना आदर्शवादियों को तो दुनिया ने खूंटे, जहर और गोलियों के अतिरिक्त कभी कुछ नहीं दिया।

लोग उससे कटते चले गये। उसने कोई परवाह नहीं की। वह हर ओर से निडर, पत्नी के साथ मस्त रहकर, अपना घर-संसार संभालने में लगा रहा।

पर एक दिन अनहोनी हुई। उसकी गृहस्थी भी उसके हाथ से फिसल गयी और ऐसी फिसली कि वह बौखला गया !

उस दिन उसकी पत्नी ने भी त्योरियां चढ़ा ली थीं, "क्या सुख देखा है मैंने तुमसे शादी करके ! तीन साल हो गये हैं, कोई जेवर-गहना तो दूर, ढंग का कपड़ा तक नहीं बन सका ! मुंह से कभी इतना भी नहीं फूटा कि कुछ बनवा ही दूंगा। गरीबी सिर्फ हमारे लिए रह गयी है। दुनिया खाती है, पीती है, घूमती है, सिनेमा देखती है और क्या-क्या नहीं करती ?"

"इसमें मैं क्या कर सकता हूं ?"

"तो शादी क्या बहुत जरूरी थी ?"

"तुम अंधी थीं उस वक्त ? न करतीं शादी !" मारे अपमान के वह ताव खा गया था, "मेरे पास तो यही कुछ है। रहना है रहो . . . नहीं तो जा बैठो उसके पास जो मौज करवा सके।"

"जा बैठूंगी . . . जरूर जा बैठूंगी, और जब जाऊंगी तो तुमसे पूछूंगी नहीं।"

उस दिन वह अपने-आप से हार

बाती तुम्हें तो . . .

जला-जलाकर
दीप पंक्ति में
सारा आकाश
जलाना होगा

सर्द आग
हथेली रखकर
क्रांति-गीत भी
गाना होगा

सिरा-सिराकर
लाश आस की
अब भी और
भटकना होगा

तेल दिया पी ले
न जब तक
बाती तुम्हें तो
जलना होगा

—नरेन्द्र भारद्वाज

५०, दरियागंज,
दिल्ली—११०००६

गया था। जिन आदर्शों को वह ... सुख और कर्तव्य समझता रहा, ... बोझ लगने लगे थे।

सुबह दफ्तर जाने के लिए ... निकलकर भी वह दफ्तर नहीं पहुंचा ... दिन भर कभी किसी पार्क और कभी ... में घूमता शहर भर की धूल ... रहा। शाम उतरते-उतरते वह ... घर पहुंचा, तो रोजाना की तरह ... सीधे रसोईघर में नहीं गया। पत्नी ... देखकर मुसकरायी भी, पर वह ... फुलाये सीधा कमरे में चला गया ... कपड़े बदलकर बिस्तर में जा घुसा।

पत्नी उसे उखड़ा-उखड़ा पाकर ... पास जा बैठी।

"नाराज हो?" वह रुआंसी हो ... थी, "यहां मेरा कौन है जिसे ... दुखड़ा सुनाऊं? मां-बाप हुए न हुए ... बराबर हैं। एक तुम ही हो और तुम ... नहीं सुनना चाहते तो मेरा गला ... दो . . . जहर दे दो।" पत्नी ... लगी।

पत्नी की आंखों में पलते दर्द ... महसूस करके वह पिघल गया था ... उसने उसे क्षमा करके आत्महत्या ... इरादा भी त्याग दिया था। शरीर के किसी ... अंग पर घाव हो जाए तो जब तक ... जरूरी न हो उसे काटकर अलग नहीं ... किया जाता, अपितु उसका इलाज किया ... जाता है कि वह ठीक हो जाए और ... से अपना काम करने लगे।

फिर भी वह संतुष्ट नहीं हो सका था। दरअसल पत्नी से हुई झड़प के पश्चात वह शंकाग्रस्त रहने लगा था कि पत्नी द्वारा मांगी गयी क्षमा बस दिखावा मात्र थी। उसने उसे फुसलाये रखने का ढोंग रचा लिया है ताकि पूरी तैयारी के साथ भाग सके।

भय का यह भूत कई बार उसे इतना परेशान कर देता था कि समय-असमय दफ्तर से उठकर वह यह देखने घर जा पहुंचता कि उसकी अनुपस्थिति में कहीं कोई उसकी पत्नी को फुसलाने की कोशिश तो नहीं कर रहा? या वह ही इधर-उधर किसी से मिलने तो नहीं जाती?

पत्नी हर बार उसे घर में अकेली या किसी पड़ोसिन के साथ बैठी ही मिली।

इस पर भी वह संशय-मुक्त नहीं हो सका। एक दिन उसने अपनी समस्या दफ्तर के ही एक बुजुर्ग के सामने रख दी, तो उन्होंने सीधा-सादा टोटका समझाते हुए कहा, "बिल्लू बेटे, पत्नी अपने पति को छोड़ जाए . . . ऐसा तो बहुत देखा-सुना है। पर मां संतान को छोड़ दे . . . यह बहुत कम हुआ करता है। जल्दी से बाप बन जाओ। सारा दिन घर में अकेली पड़ी पत्नी का मन भी लग जाएगा और तुम घर-संसार का पूरा आनंद भी उठा सकोगे।"

उस दिन, कहना चाहिए कि उसी क्षण उसने कम-से-कम पहले पांच वर्ष निःसंतान रहने के अपने निर्णय को ताक पर रखने की ठान ली थी। वह खुश-खुश घर जा पहुंचा था। एक अरसे बाद उसे इस प्रकार मुसकराता देख पत्नी भी गद्गद हो गयी थी। बुजुर्ग की सलाह में उसे सब कुछ ठीक ढर्रे पर आ जाने के लक्षण दिखायी दे रहे थे। तब समय रहते पत्नी गर्भवती हुई थी और ज्यों-ज्यों दिन चढ़ते गये थे, उसे लगता रहा था कि उसके प्रति पत्नी का मोह भी बढ़ता जा रहा है। वह उसे पहले से अधिक चाहने लगी है . . . और आज वह प्रसव की निकटतम अवस्था में स्वयं अस्वस्थ होते हुए भी उसके लिए चिंतित थी। उसका सिर थपथपा रही थी . . .!

अकस्मात सिर थपथपाती हुई पत्नी का हाथ रुक गया। उसे नींद आ गयी थी। शायद न भी आयी हो? जानने के लिए वह अनायास उठकर बैठ गया। उसके सिर पर पड़ा रह गया हाथ एक ओर लुढ़क जाने पर भी वह सोयी ही रह गयी तो वह उठ खड़ा हुआ।

दूर किसी मुरगे की बेवक्त बांग सुनायी दे रही थी।

पत्नी पर चादर उढ़ाते हुए उसे कफन का खयाल आ गया। उसकी कंप-कपी छूट गयी। उसे लगा, इस तमाशे में दुनिया भर की आंख का शिकार होने से बेहतर है कि रात डूबने से पहले ही वह भाग जाए . . .! उसे बुद्ध-जयंती के उपलक्ष्य में निकाले जा रहे उस जलूस का ध्यान हो आया, जिसे उसने सुबह
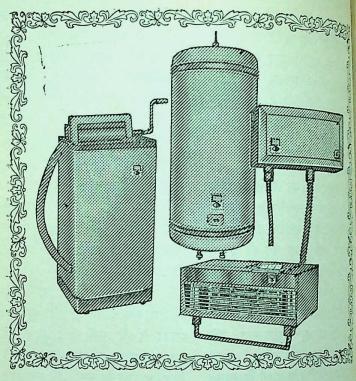
जीवन की खुशियां तब हों बजाज साधन घर में जब हों

सर्दी में गर्मी-सा मौसम

घरमें गर्म और खुशनुमा वातावरण बनाए रखने में अगर आपकी दिलचस्पी है तो आप पाएंगे कि बजाज साधन ही आपकी ज़रूरत को पूरा कर सकते हैं। दरअसल सारे बजाज साधन खुशनुमा-जीवन के लिए बनाए गए हैं जैसे रूमहीटर, इमर्शनहीटर, पोर्टेबल गीज़र, वाशिंग मशीन आदि। और केवल बजाज ही ऐसी कंपनी है जिसके भारत-भर में २५०० विक्रेता और १६ शाखाएं हैं। इस तरह हम आपको विक्री के पहले और बाद में भी संतोषप्रद सेवा दे सकते हैं।

heros' BE-215 HIN

मां और बाबूजी से मिलकर लौटते हुए देखा था।

जलूस देखकर एक बार तो उसके मन में भी आ गया था कि वह भी दीक्षा ले ले लेकिन बाद में वह अपने ही सोचे हुए पर हंस दिया था। अब उसे लगा कि उसे ऐसा कर ही लेना चाहिए। पत्नी साथ रही तो उम्र भर कोई न कोई शिकायत करती रहेगी और मर गयी तो वह अपने-आपको कभी माफ नहीं कर सकेगा। सभी झंझटों से मुक्त होने का एक अच्छा उपाय है कि अर्जुन की तरह गांडीव छोड़कर भिक्षापात्र ले, सिद्धार्थ हो जाए।

कुछ क्षण खड़ा वह पत्नी को घूरता रहा। फिर उसका हाथ ठीक से रखकर द्वार की ओर बढ़ गया।

किवाड़ खोलने से पहले उसने गरदन घुमाकर पीछे देखा। पत्नी बेसुध सो रही थी। वह किवाड़ से पीठ टेककर खड़ा हो गया। अस्पताल, ऑपरेशन-थियेटर की लाल-हरी-पीली बत्तियां, दम तोड़ती हुई पत्नी और एक मरा हुआ बच्चा एक—एक करके उसके सामने से तैरते हुए गुजर गये। मोह-माया का प्रेमी मन उसे फिर से वहीं जाकर सो जाने को प्रेरित करने लगा। अनिश्चय की स्थिति थी!

एड़ियों के बल वापस घूमकर आहिस्ते से किवाड़ खोलते हुए वह फिर से ठिठक गया, 'तू बुद्ध बनेगा? महात्मा बुद्ध, और तू? किस चक्कर में है? सिद्धार्थ ने दीक्षा ली . . . वह राज-परिवार का सदस्य था। लोगों ने कहा—वह महान है। मिले-मिलाये ऐश्वर्य को ठोकर मार दी! . . वह तेरे-ऐसी खस्ता हालत में होता तो लोग कहते कि भाई ने रोटी-पानी का जरिया ढूंढ़ लिया है! . . . और अगर उसे तनिक भी संदेह होता कि उसके चले जाने पर उसकी पत्नी और पुत्र एड़ियां रगड़ते मर-खप जाएंगे तो वह भी कभी न जाता।'

खड़े-खड़े थकावट महसूस होने पर वह वहीं फर्श पर ही बैठ गया। वहीं रहने का निर्णय लेकर भी वह खोया नहीं। उठा और परेशान-सा दहलीज से पलंग और पलंग से दहलीज के बीच टहलता-टहलता बाहर निकल गया। और सूर्य की आंख खुलने से कुछ पहले वापस पहुंचा तो उसके चेहरे पर चढ़ते सूरज की सुर्ख लाली थी। उसकी जेब में सौ-सौ के पूरे दस नोट थे और . . . और वह मां के ट्रंक में कोई चिट भी नहीं छोड़ आया था!

—३६२५/२३–डी, चंडीगढ़–२३

नाराज पति ने चिल्लाकर कहा, "मैं पूछता हूं कि इस घर में किसका हुक्म चलता है—मेरा या तुम्हारा?"

"यह न पूछो तभी ठीक है। जानकर तुम्हें खुशी नहीं होगी," पत्नी ने तमककर जाते हुए कहा।

राष्ट्रीय बचतों पर अब

ब्याज की अधिक आकर्षक दरें

	प्रतिवर्ष
डाकघर बचत बैंक	५ % करमुक्त
७-वर्षीय राष्ट्रीय बचत पत्र द्वितीय और तृतीय निर्गम	६ % करमुक्त
७-वर्षीय राष्ट्रीय बचत पत्र चतुर्थ और पंचम निर्गम	१०.२५ %
डाकघर सावधि जमा :	
१-वर्षीय	८ %
२-वर्षीय	८.५ %
३-वर्षीय	९ %
५-वर्षीय	१० %
५-वर्षीय डाकघर आवर्ती जमाखाता	९.२५ %
१०-वर्षीय डाकघर बढ़ने वाला सावधि जमाखाता*	६.२५ %
१५-वर्षीय लोक भविष्य निधि खाता*	७ %

*इन खातों पर दोहरा फायदा-करों में छूट और ब्याज की राशि कर-मुक्त। २३ जुलाई, १९७४ से पहले सावधि जमा खातों में जमा राशि और जारी किए गए राष्ट्रीय बचत पत्रों पर भी २३ जुलाई, १९७४ से इन बढ़ी हुई दरों पर ब्याज मिलेगा।

अन्य योजनाओं पर, जिनमें दूसरी निर्दिष्ट स्कीमें भी शामिल हैं ३,००० रु. प्रतिवर्ष तक कमाया गया ब्याज करमुक्त होता है।

राष्ट्रीय बचत संगठन

पो. बा. नं. ९६, नागपुर

डीएवीपी ७४/१९..

एक विनीत व्यक्तित्व

• वियोगी हरि

क्या कारण है जो हमारे यहां, विशेषतः उत्तरी राज्यों में, राजनेता, उनमें भी मंत्री, कोई खास विद्वान देखने में नहीं आते हैं। हां, अपवाद-रूप में ये तीन नाम लिये जा सकते हैं : मेरे पिता डॉ. भगवानदास, आचार्य नरेन्द्रदेव और डॉ. सम्पूर्णानन्द— कोई अठारह वर्ष हुए होंगे जब श्रीप्रकाशजी ने राजनीतिक चर्चा के दौरान यह बात कही थी।

"आपका भी नाम इनमें जोड़ दिया जाए, तो अनुचित नहीं होगा," मैंने कहा।

"अशर्फियों के साथ आप कौड़ी रखना चाहते हैं!" श्रीप्रकाशजी ने हंसते हुए बात को काट दिया।

उच्चकोटि के विद्वान होते हुए भी वे बड़े विनीत थे। उनके जवाब से मैं कायल नहीं हुआ। विरासत के रूप में अपने ऋषि-कल्प पिता से उन्होंने बहुत-कुछ सीखा और पाया था। साहित्य-चर्चा में खासा रस लेते थे वे। कितनी ही संस्कृत, हिंदी, उर्दू और अंगरेजी की सूक्तियां उन्होंने कंठस्थ की थीं। बातचीत में उनका समयानुसार वे बड़ा उपयुक्त प्रयोग करते थे।

डॉ. भगवानदास का मैं सदैव भक्त रहा हूं, और श्रीप्रकाशजी को अपना श्रद्धेय बंधु माना है। कलकत्ता में श्री लक्ष्मीनिवास बिरला द्वारा संस्थापित बंगला-हिंदी-मंडल ने जब कुछ उत्तम ग्रंथ लिखाने और उन पर पारितोषिक देने का विचार किया, तब मेरी भी उस योजना में सलाह ली गयी थी। उस योजना के अंतर्गत विदद्वर डॉ. भरतसिंह उपाध्याय ने एक अच्छा शोधपूर्ण ग्रंथ लिखा था— 'बौद्ध-दर्शन तथा अन्य भारतीय दर्शन'। जिन विद्वानों की निर्णयात्मक सम्मतियां उस पर ली गयी थीं, उनमें श्रीप्रकाशजी भी थे। इसी सिलसिले में मैं उनसे तीन-चार बार मिला था। पूरा ग्रंथ पढ़े बिना वे अपनी सम्मति लिखने को तैयार नहीं
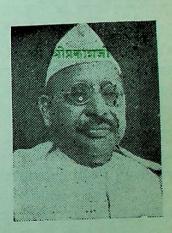
थे। पुरस्कृत होने के पश्चात बंगाल-हिंदी-मंडल ने बड़े आकार में दो खंडों में इसे प्रकाशित किया था। पृष्ठ-संख्या इसकी लगभग १,२०० है। उन दिनों श्रीप्रकाशजी के साथ दर्शन विषय पर जो चर्चा होती थी, उसकी छाप आज भी मेरे हृदय पर अंकित है।

जब श्रीप्रकाशजी मद्रास राज्य के राज्यपाल थे, तब वहां दो बार मैं उनसे मिला था। सौजन्य और मिलनसारी क्या कभी उनकी भूल सकती है? आत्मीयता से मिलते और हृदय खोलकर रख देते थे।

दो बार बंबई के राज-भवन में भी उनसे मिलने का अवसर मिला था, जब वे महाराष्ट्र के राज्यपाल थे। पाकिस्तान में भारत ने उन्हें अपना हाईकमिश्नर नियुक्त किया था। वे केंद्रीय मंत्री भी थे, और कई राज्यों में राज्यपाल भी; पर इन पदों ने उनको बहुत आकृष्ट नहीं किया था। उनके विचार शासन के चौखटे में 'फिट' नहीं होते थे। सरकारी नीतियों की खुलकर आलोचना नहीं कर सकते थे। अतः मुक्त हो जाने का उन्होंने निश्चय कर लिया था।

राजनीतिक क्षेत्र से अलग रहते हुए भी एक दिन मेरे मन में एक विचार आया। मैंने उनको लिखा :

स्वर्ण काटेज, एच-४/३, मॉडल टाउन, दिल्ली
दिनांक २५-१०-'६१

प्रिय बंधुवर,
सादर सप्रेम नमस्कार।

मेरे मन में कई दिनों से एक विचार आ रहा है। उसे आज मैं साहस... रहा हूं। आपके शील-स्वभाव... हुए डर लग रहा था कि कदाचित... प्रस्तावित विचार पर ध्यान... और यह समझें कि बिना... ही मैंने आपको यह पत्र लिख... किंतु न लिखता, तो मुझे लगता... अच्छे विचार के प्रति मैं न्याय नहीं... हूं। एक-दो मित्रों के आगे... अपने विचार को जब रखा, तब... उसका बड़े हर्ष और उत्साह से समर्थन... और इसलिए भी मुझे यह पत्र लिखने... साहस हुआ।

भारत ने, स्वतंत्र होते ही, अपना... राष्ट्रपति देश के एक ऐसे... को बनाया, जो हरेक दृष्टि से... लिए सर्वथा उपयुक्त सिद्ध हुए... त्याग, तप, संस्कारिता, सूझ-बूझ... नता, आत्मीयता आदि जो सद्गुण... बाबू ने अपने जीवन में विकसित... उनपर प्रत्येक भारतवासी को गर्व है...

राजेन्द्र बाबू का स्वास्थ्य अब... नहीं है कि वे अगले वर्ष भी राष्ट्र... दायित्व निभा सकें। इस सत्य को... साथ हमें स्वीकार करना पड़ता है।

चारों ओर दृष्टि दौड़ाने पर... उत्तराधिकारी कौन हो सकता है... बहुत गहराई से सोचने का विषय... हैं। यों उपराष्ट्रपति डॉ. राधाकृष्णन... बहुतों की नजर जा रही है।... वे ऊंचे विद्वान हैं, अंतर्राष्ट्रीय ख्याति...

मिली है और हमारे आदरणीय हैं, किंतु वह बात कहां, जो राजेन्द्र बाबू में हम देखते हैं! उनकी-जैसी हृदय की उदारता, शालीनता और राष्ट्र के प्रति भक्तिभावना अन्यत्र शायद ही देखने को मिलेगी।

श्रद्धेय टंडनजी की ओर दृष्टि जा सकती थी, परंतु वे रोग-शय्या पर पड़े हुए हैं।

तब विचार उठा, या भगवान ने ही सुझाया, कि साहस बटोरकर आपकी ओर देखा जाए। आपकी सहज विनम्रता, मैं जानता हूं, इस प्रस्ताव पर सहानुभूतिपूर्वक विचार करने के लिए तैयार नहीं होगी। परंतु यह व्यक्तिगत प्रश्न नहीं है, सारे राष्ट्र का प्रश्न है, जिसके आगे व्यक्ति की विनम्रता या संकोच के लिए कोई स्थान नहीं। आपके पीछे एक लंबा इतिहास है। लोकप्रियता और सुयोग्यता आपकी पैतृक संपत्ति है। एक मित्र के नाते मैं आपकी प्रशस्ति नहीं कर रहा हूं, पर जो सत्य है उसे कैसे छिपाऊं और क्यों?

कृपया मेरे इस प्रस्ताव पर आप अवश्य ध्यान दें। संदेह नहीं कि यदि आप राष्ट्रपति-पद के लिए खड़े होंगे, तो आपको देश का पर्याप्त समर्थन मिलेगा, और राजेन्द्र बाबू का सुयोग्य उत्तराधिकारी पाकर हम सभी को हार्दिक आनंद होगा।

इतना तो आपके ध्यान में रहेगा ही कि यह पत्र एक ऐसा आदमी लिख रहा है, जिसका राजनीति से कभी कोई संबंध नहीं रहा, और जिसके स्वभाव में किसी प्रकार की चाटुकारिता नहीं है।

आपका,

वियोगी हरि

इस पत्र का उत्तर उन्होंने १२ दिसंबर, १९६१ को निम्नलिखित दिया :

राजभवन, मुंबई-६

१२ दिसंबर, १९६१

प्रियवर,

आपके २५ अक्टूबर के दोनों कृपापत्र मिले। अनेक धन्यवाद। क्षमा कीजियेगा इसके पहले आपको उत्तर न दे सका। अब बहुत बूढ़ा हो रहा हूं। शासन-संबंधी कार्य से ही थक जाता हूं। आगंतुकों और
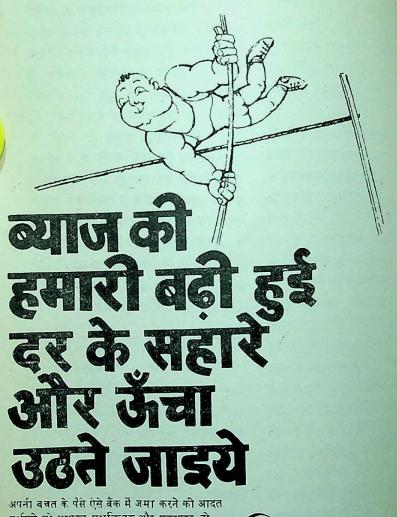
जब हनुमान तमिल में बोले

बात तब की है जब स्वर्गीय श्रीप्रकाशजी मद्रास (अब तमिलनाडु) के राज्यपाल थे। तमिलभाषियों को अपनी भाषा एवं संस्कृति पर बहुत गर्व है। एक बार मद्रास में किसी सांस्कृतिक समारोह में श्रीप्रकाशजी भाग ले रहे थे। तमिलभाषियों के उस संगम में वे अभिभूत हो गये! श्रीप्रकाशजी सहज ही किसी से भी प्रभावित हो जाया करते थे, वे तमिल भाषा से भी प्रभावित हो उठे और रामायण के प्रसंग में एक कथा सुनाते हुए उन्होंने कहा, "श्रीलंका जाकर हनुमान ने राम की अंगूठी देते हुए सीताजी से जिस भाषा में बात की थी, वह तमिल थी।" यही प्रसंग जब नागपुर की एक सभा में उन्होंने दोहराया तो दर्शक हंस पड़े।

हर के समारोहों से परेशान रहता हूं। द है कि व्यक्तिगत पत्र-व्यवहार पड़ा जाता है। आपके भी पत्र रह गये, का विशेष दुःख है।

जिस दिन आपने इस पत्र को लिखा है दिन इत्तिफाक से मैं काशी में था। ां से लखनऊ, कानपुर होता हुआ २७ दिल्ली पहुंचा। राज्यपाल-सम्मेलन कार्यों में तीन दिन लगा रहा। फिर रादून, मेरठ होता हुआ वापस बंबई गया। मालूम पड़ता है कि आपका मेरे पीछे-पीछे घूमता रहा। इसके द भी बराबर दौरे पर जाना पड़ा, इस रण पत्र मुझे बहुत देर करके मिला। भी इसके पहले तो लिख ही सकता। क्षमा कीजिएगा।

आपके दूसरे पत्र को पढ़कर मैं तो कुल ही स्तब्ध हो गया। मेरा तो इस रफ स्वप्न में भी विचार नहीं गया था। पने क्यों और कैसे ऐसा विचार किया, है मेरी समझ में नहीं आता। यह आपकी दारता है कि आप मेरे संबंध में ऐसे साधु व रखते हैं। मैं तो इनके योग्य अपने ो कभी भी नहीं समझ सकता। किन ब्दों में मैं आपका धन्यवाद दूं, यह मेरी मझ में नहीं आ रहा है। मैं तो अब किसी ाम के लायक नहीं रह गया। ५० वर्ष के परिश्रम करते रहने के अभ्यास के कारण ही चला जा रहा हूं, पर अब काम नहीं होता। बकाया पड़ जाता है, जो मुझे पसंद नहीं है। थक जाता हूं। झुंझलाने भी लगता हूं। वास्तव में १० दिसंबर को मेरा यहां का ५ वर्ष का कार्यकाल समाप्त हो गया। मुझे आशा थी कि छुट्टी मिल जाएगी और मैं यहां से चला जाऊंगा, पर निर्वाचन आ रहा है। इस कारण राष्ट्रपतिजी का आदेश हुआ कि 'अभी ठहरे रहो।' ऐसी अवस्था में तीन महीने और ठहर गया। इसी बात की प्रतीक्षा है कि चले जाने का दिन जल्दी आये और मुझे छुट्टी मिले।

आपकी असीम कृपा है कि आपने मुझे राष्ट्रपति-भवन में बैठाना चाहा है। ऐसा विचार आप छोड़ दें। मैं इसके योग्य नहीं हूं। इस अवस्था में कुछ कर भी नहीं सकता। अपनी आर्य-संस्कृति और परंपरा का भी मैं भक्त हूं। एक अवस्था के बाद वानप्रस्थ लेना ही चाहिए और कम उमर के लोगों को जिम्मेदारी के स्थानों पर बैठाना चाहिए। ऐसा न करने के ही कारण आज कांग्रेस की आंतरिक स्थिति इतनी गड़बड़ा गयी है और आपस के राग-द्वेष के कारण सारी संस्था ही संकट में पड़ गयी है। यदि मेरे ऐसे बूढ़े हटें और ४० से ५५ वर्ष के लोगों को उन स्थानों पर बैठाया जाए जिनको हम छेके हुए हैं, तो काम भी अच्छी तरह चले और हम बूढ़ों की तरफ किसी को मत्सर भी न हो। साथ ही परामर्श आदि के लिए और बिना शुल्क के काम करने के लिए भी हम सब जब तक जीते रहेंगे मौजूद ही रहेंगे। अस्तु, जो कुछ हो, मेरी तरफ से तो आप यह विचार पूरी तरह हटा लीजिए।

ऐग्रो के
बेमिसाल जाम
विटामिनों से भरपूर, आपके परिवार के स्वास्थ्य का वरदान है।
मिक्सड फ्रूट, स्ट्राबेरी, ऐपल, एप्रीकोट, मैंगो।
Agro
Agro
MIXED FR
Agro
APPLE
Jam
Agro
Agro
STRAWBERRY
Jam
ऐग्रो
यू० पी० स्टेट ऐग्रो इण्डस्ट्रियल कॉरपोरेशन लि०,
२२, विधान सभा मार्ग, लखनऊ

इस प्रसंग में एक बात कहनी बहुत जरूरी है। उत्तर और दक्षिण का बड़ा संघर्ष हो रहा है। राष्ट्रपति के पद के लिए डेवढ़ बांध देना चाहिए। एक बार उत्तर और एक बार दक्षिण से राष्ट्रपति को लेना चाहिए। कभी-कभी पच्छिम से अर्थात गुजरात, महाराष्ट्र से भी लेना होगा। यदि हम ऐसा नहीं करेंगे, तो देश खंड-खंड में विभक्त हो जाएगा। एकता जाती रहेगी तब स्वतंत्रता को कौन बचा सकेगा? इसमें कोई संदेह नहीं कि श्रीराजेन्द्रप्रसाद-जी के ऐसा कोई नहीं मिल सकता। वे अपने देश के सच्चे प्रतीक हैं। पूर्वकाल और वर्तमान काल का उनमें बड़ा सुंदर समन्वय है। यूरोपीय संस्कारों का भी उन्हें ज्ञान है और इनका भी उनपर प्रभाव है। ऐसा राष्ट्रपति तो नहीं मिलेगा, पर काम तो चलाना ही पड़ेगा। राजाजी को राष्ट्रपति बनाया जा सकता है। उनमें बहुत-से ऐसे गुण हैं, जो उन्हें इस उच्च पद के योग्य बनाते हैं, पर अब तो उनको कोई स्वीकार नहीं करेगा। ऐसी अवस्था में डॉक्टर राधाकृष्णन का ही वहां जाना ठीक होगा। अधिक क्या लिखूं? टंडनजी से मैं दो बार मिलने प्रयाग गया था। बड़ा दुःख है कि वे इस समय असहाय हो कर रोग-शय्या का सेवन कर रहे हैं। संभवतः उस पर से उठेंगे नहीं। अपने कष्टों का वे साहस से सामना करते हैं। भोजन, औषध आदि के संबंध में अपने सिद्धान्तों पर दृढ़ हैं। मुझे तो आश्चर्य होता है कि वे कैसे चले जा रहे हैं। उनका आध्यात्मिक बल है, जो उन्हें संभाले जा रहा है। ईश्वर उनको स्वस्थ करें और उन्हें शारीरिक पीड़ा से बचायें।

आपको मैं सच्चे हृदय से बारबार धन्यवाद देता हूं कि आपने मुझे लिखा। वास्तव में आपके पत्र से मुझे आश्चर्य हुआ। यद्यपि आपके नाम और कृतियों से तो मैं बहुत दिनों से परिचित रहा, पर परस्पर का संपर्क तो कभी-कभी ही होता रहा, तथापि आपने मेरे संबंध में ऐसे भाव रखे, यह मेरे लिए सौभाग्य की बात है, पर वास्तव में आपको धोखा हो रहा है। मालूम पड़ता है कि मैं बहुत ही उच्चकोटि का मक्कार हूं, क्योंकि इसी प्रकार का धोखा बहुत-से लोगों को मेरे बारे में रहा है। मैं वैसा नहीं हूं जैसा लोग समझते हैं। मैं तो एक बहुत ही साधारण-सा मनुष्य हूं, जो अपना दिन भर का कर्तव्यपालन करना जानता है और रात्रि को सो रहता है। मेरे में कोई और गुण नहीं है, और न मैं किसी कार्य के योग्य ही हूं। मुझे तो यही आश्चर्य आता रहा कि जवाहरलालजी ने मुझे क्यों बारबार पकड़ा और भिन्न-भिन्न कांग्रेस और शासन के पदों पर जबरदस्ती रखा। अब तो मैंने उनसे भी आग्रह कर दिया है कि मुझे छुट्टी मिलनी चाहिए। वे चाहे जब तक काम करते जाएं, पर मैं नहीं कर सकता। मेरी समझ में तो उन्हें भी हटना चाहिए। मैंने उनसे कई बार यह कहा भी, पर वे

प्रस्ताव स्वीकार नहीं करते। लाचारी है। ईश्वर उनको पर्याप्त शक्ति दें, जिससे वे अपने भयंकर बोझ को वहन कर सकें। वास्तव में, आपका हृदय अत्यधिक उदार है। ईश्वर आपको सदा सुखी रखें। आपके ऐसे सज्जनों को देखकर आशा होती है कि अभी संसार में साधुता और स्वच्छता है—बिलकुल गायब नहीं हो गयी है।

आशा है, आप स्वस्थ और प्रसन्न होंगे। सब मित्रों से मेरा यथोचित अभिवादन कह दीजिएगा।

सस्नेह सधन्यवाद
सदा आपका
श्रीप्रकाश

मुझे ऐसे ही उत्तर की आशा करनी चाहिए थी।

महाराष्ट्र के राज्यपाल-पद से अवकाश लेने के बाद हिंदी-साहित्य-सम्मेलन के प्रथम-शासन-निकाय के अध्यक्ष के नाते उन्होंने जो एक पत्र मुझे लिखा था, उसमें यू. को. बैंक के काम की भूरि-भूरि एवं बिड़ला-बंधुओं की प्रशंसा की है:

प्रियवर नमस्कार।

आपका ५ अक्टूबर का कृपा-पत्र मिला। अनेक धन्यवाद। उसके साथ आपने यूनाइटेड कमर्शियल बैंक वालों का भी पत्र भेजा है। मैं फौरन ही श्री गोपालचन्द्रजी को लिख रहा हूं। अवश्य ही वे उचित कार्रवाई करेंगे। मेरा निज का भी सब पैसा-रुपया उसी बैंक में रहता है और मैं तो उनके व्यवहार और कार्यकुशलता से बहुत मुग्ध हूं। वास्तव में बिड़ला-बंधुओं के सभी कारखाने प्रशंसा के योग्य हैं। उनके कुटुंबीजनों की तो पर्याप्त प्रशंसा नहीं ही की जा सकती। वास्तव में अद्भुत कुल है। अपने देश में तो शायद ही ऐसा दूसरा होगा। सबके साथ ही इनके निज के सब व्यापारी कोठियों के व्यवहार बड़े अच्छे, सच्चे और सुंदर होते हैं।

सधन्यवाद, आपका
श्रीप्रकाश

मैंने श्रीघनश्यामदास बिड़ला द्वारा लिखित 'वे दिन' नामक पुस्तिका श्रीप्रकाशजी को भेजी थी। उन्होंने उसका उल्लेख करते हुए १ जनवरी, १९६३ को लिखा:

सेवाश्रम, वाराणसी-१
१-१-१९६३

प्रियवर हरिजी, नमस्कार।

आपका २६ दिसम्बर का कृपापत्र मय श्री घनश्यामदास की पुस्तिका 'वे दिन' के घूमता-फिरता मुझे कल यहां काशी में अपने घर पर मिला। अनेक धन्यवाद। कुतूहलवश मैंने पुस्तिका को फौरन ही पढ़ना आरंभ किया और एक सांस में पढ़ गया। बहुत ही रोचक और शिक्षाप्रद पाया। मैं घनश्यामदासजी को भी लिखूंगा। आपने इसे मेरे पास भेजने का जो कष्ट किया एतदर्थ अनुगृहीत हूं। आशा है, १२ तारीख को प्रयाग में आपसे मुलाकात होगी। मैं यहां २४ नवंबर को ही कुछ विवादों के सिलसिले में आया। बीमार पड़ गया। इनफ्लूएंजा ने जकड़ा। हफ्तों पड़ा रहा।

शिकाकाई, आमला, ब्राह्मी
सुन्दर बालों का सदियों पुराना रहस्य,
हेलीन कर्टिस के
टियारा शिकाकाई हर्ब शैम्पू में
इस में शुद्ध शिकाकाई की मृदु स्वच्छतादायक सफ़ाई और आमला ब्राह्मी आदि जड़ी-बूटियों की स्वास्थ्यप्रद केशवर्धक क्षमता का सुंदर संगम होने के कारण यह आपके बालों को मुलायम, सुगंधित और सुशोभित रखता है और उनमें स्वाभाविक निखार ला देता है।
टियारा शिकाकाई हर्ब शैम्पू इस्तेमाल कीजिए और प्यार से अपने बालों की देखभाल कीजिए।
यह केवल शैम्पू ही नहीं है, एक संपूर्ण सौंदर्य प्रसाधन है।
TIARA
SHIKAKAI
HERB
SHAMPOO
दो साईज़ों में मिलता है
१५० मि.ली. तथा ७० मि.ली.
न टूटने वाले साफ़
प्लास्टिक की बोतल में
जे. के. हेलीन कर्टिस लि., बम्बई-४०० ००१ का एक उत्कृष्ट उत्पादन

बड़ा कमजोर हो गया। इस बीच कुटुंब पर भयानक विपत्ति पड़ी। मेरे छोटे चचेरे भाई सूर्यप्रताप ४८ वर्ष की अल्पावस्था में चले गये। लकवा का प्रकोप हुआ। हम सब दुःखी हैं। नये बुरे कानूनों ने पुराने कुटुंबों को भयावह संकट में डाल दिया है। कृत्यादि से कल छुट्टी होगी। कानूनी गुत्थियों के कारण यहीं बेतरह फंस गया हूं। ईश्वर देश के नेताओं को सद्बुद्धि दें और हम सब का कल्याण करें। फरवरी में देहरादून लौटूंगा।

आप प्रसन्न होंगे।

सधन्यवाद आपका

श्रीप्रकाश

एक बार काशी में जब मैं उनके निवास-स्थान पर जाकर मिला, उन्हें खिन्न मुद्रा में देखा। अकेले बैठे थे। कहने लगे, "मेरे आगे ही मेरी सात पीढ़ियों की कमाई समाप्त हो गयी। बीते दिनों की याद आती है। इतने बड़े मकान की रखवाली कर रहा हूं एक स्वामिभक्त कुत्ते की तरह। बिजली का कनेक्शन दो दिन पहले काट दिया गया था कि हमने बिल का पैसा नहीं चुकाया। कैसा अंधेर! पैसा तो उसी दिन भिजवा दिया था, फिर भी अंधेरे में रातें काटीं दो दिन।"

अंतिम भेंट कलकत्ते में एक नव-निर्मित अस्पताल में हुई थी। प्रोस्टेट का आपरेशन कराने के लिए वे तीन दिन पहले अस्पताल में दाखिल हुए थे। मैं मिला उसके दूसरे दिन आपरेशन होना था। कितने प्रेम से मिले और घरेलू तथा देश की गिरावट के बारे में जो बड़ी व्यथा के साथ बातें की, वे आज भी याद आ रही हैं। जीवन-संध्या के दिनों में अनैतिकता एवं देश की अधोगति देखकर और सुनकर उनका देशानुरागी हृदय व्यथित रहता था। कई लेख इस विषय पर उन्होंने पत्र-पत्रिकाओं में लिखे थे। निराश थे। सबसे बड़ी व्यथा उनके मन में यह थी कि देश और समाज का कितनी तेजी से ह्रास और पतन हो रहा है और वे कुछ नहीं कर पा रहे। मैं जब मिला उससे आधा घंटा पहले प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी भी उनसे मिलने वहां गयी थीं।

कहने लगे, "वे दिन याद आ रहे हैं जब खादी के थान कंधे पर रखकर बनारस की गलियों में घूम-घूमकर मैं बेचता था। आज खादी का विस्तार- क्षेत्र तो बहुत बढ़ गया है, पर तब की वह भावना कहीं देखने में नहीं आ रही।" बाबू शिवप्रसाद गुप्त द्वारा निर्मित काशी के 'भारतमाता-मंदिर' का जिक्र किया, तो आंखों में आंसू छलक आये। काशी-विद्यापीठ के बारे में भी व्यथाभरी कई बातेंकीं। अस्वस्थ थे और बातों का तांता टूट नहीं रहा था। मैं नमस्कार करके जाने को उठ खड़ा हुआ। दोनों हाथ पकड़ लिये और बोले कि अस्पताल का पता मैं दे रहा हूं, मुझे अवश्य पत्र लिखना। घनश्यामदासजी (बिड़ला) मिलें तो उनको मेरा नमस्कार कह देना।

—एफ १३/२, माडल टाउन,

दिल्ली-११०००९

कहानी
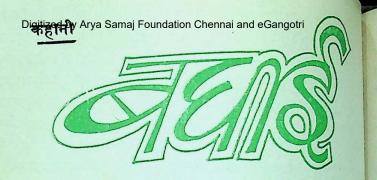
आकाश नीला और खुशनुमा है। लगभग पांच बजे हैं और धूप भाग रही है। प्रतुल एक चितकबरे खरगोश को अपने दोनों हाथों में लेकर घर से निकला। वह काला नेकर, सफेद कमीज और किरमिच के सफेद जूते पहने था। बाहर कदम रखते ही उसने अपनी प्रफुल्लित दृष्टि चारों ओर दौड़ायी। कुछ दूर आगे बढ़ने पर तो उसे खूब मजा आने लगा। उसने दो-तीन बार मुंह से सीटी की आवाजें निकालीं, खरगोश की पीठ सहला-सहला कर 'टिकू-टिकू' पुकारा और अंत में उसे नीचे जमीन पर रखकर तथा कंकड़ और ढेले बीन-बीनकर किसी काल्पनिक प्रसिद्ध क्रिकेट-खिलाड़ी के विरुद्ध जबरदस्त 'गेंदबाजी' करने लगा।

खरगोश हरी घास पर तेजी से दौड़ने लगा। उस बस्ती में दिन भर के सन्नाटे के बाद अब चहल-पहल दिखायी दे रही थी। बच्चे स्कूलों से लौटने के बाद बाहर खेल-कूद रहे थे और कुछ लोग स्कूटरों या साइकिलों पर दफ्तरों [illegible] गये थे। गृहपत्नियां [illegible] साड़ियां पहन, जूड़ों को [illegible] भरे सजीव होंठों पर [illegible] या तो बरामदों या लानों [illegible] कर रही थीं अथवा अपने [illegible] सामने खड़ी होकर पड़ोसि[illegible] कर रही थीं।

प्रतुल ने कई काल्पनि[illegible] को आउट करने के पश्चा[illegible] तलाश में इधर-उधर देखा [illegible] दूरी पर स्थित एक झाड़ी के [illegible] ठिठक गया था और घास [illegible] था। प्रतुल छलांगें लगाकर [illegible] हुआ उधर लपका। उसने [illegible] हाथों में उठाते हुए पुचका[illegible] कहा, "टिकू, बड़ा पाजी है [illegible]

वह खरगोश को लेकर [illegible] बस्ती बहुत बड़ी नहीं थी। [illegible] दक्षिण लंबाई में फैली थी। [illegible] थी। वहां अधिकतर [illegible]

एवं उच्च नौकरीपेशा लोग रहते थे। प्रोफेसर, अध्यापक, लेखक, पत्रकार, इंजीनियर, ऐडवोकेट, एकाउंटेंट तथा अन्य कई किस्म के उच्चाधिकारी आदि। उनमें से हर व्यक्ति को इस बात पर गर्व था कि वास्तव में देश का कर्णधार वही है, पर जितनी प्रतिष्ठा एवं सम्मान उसको मिलना चाहिए, वह उसको इस समाज में प्राप्त नहीं है। उनमें से लगभग हर व्यक्ति अच्छा खाता था, अच्छा पहनता था, आधुनिक फैशन से रहता था, बीवी के साथ सैर-सपाटे करता था, अपने बच्चों को अंगरेजी स्कूलों में पढ़ाता था और राष्ट्रभाषा हिंदी का प्रबल समर्थक था। लगभग हर व्यक्ति का विश्वास था कि उसकी राजनीतिक और सामाजिक समझ बहुत मौलिक एवं दूरदर्शितापूर्ण है और हरेक के पास देशोत्थान की अपनी-अपनी मौलिक योजना भी थी। इस प्रश्न पर तो उनमें अद्भुत एकता थी कि सभी अपने बच्चों को शिक्षित, परम अनुशासनप्रिय, सभ्य, सुसंस्कृत, महान और कलक्टर, डाक्ट तथा इंजीनियर बनाना चाहते थे।

प्रतुल की ख्याति उस बस्ती में अच्छी नहीं कही जा सकती। वह एक कालेज के साधारण अध्यापक का लड़का था, जिसने बड़ी कठिनाई से वहां दो कमरों का एक मामूली मकान बनवाया था, जो अनधिकार चेष्टा है, यह बहुतों का मत था। पढ़ने-लिखने में प्रतुल बुरा नहीं था, पर खेल-कूद में उसकी तबीयत जितनी लगती थी, उतनी किसी चीज में नहीं। खेल-कूद भी कैसे? विचित्र फूल और तितलियों की तलाश में डग-डग घूमना, लट्टू नचाना और गोलियां खेलना। उसको खास तौर पर पशु-पक्षियों और भिखमंगों से बहुत प्यार था। वह अपने मां-बाप का इकलौता लड़का था, पर उसके शौकों से वे बहुत परेशान थे। उसी की जिद पर घर में तोता-मैना पाले गये थे और शीशे के जार में रंगीन मछलियां भी पाली जा रही थीं, पर सबसे अधिक कठिनाई उस समय होती

लेखक

जब वह किसी आवारा पिल्ले या बिल्ली के बच्चे को उठा लाता। वह दिन-रात उन्हीं में व्यस्त रहने लगता। एक बार वह सड़क के किनारे पड़े एक भिखमंगे को, जो भूख और रोग से त्रस्त था, देखकर बड़ा दुःखी हुआ। उसकी सारी दिलचस्पियां भिखमंगे में ही केंद्रित हो गयीं। जब फुरसत होती, वह भिखमंगे के पास पहुंच जाता, घर से उसके लिए खाना ले जाता, उसको खिलाता, उसे पानी पिलाता, अपने पैसे से उसके लिए कुछ खरीद देता। उसके मां-बाप को बड़ी चिंता हुई और उन्होंने चुपके से उस भिखमंगे को अस्पताल भिजवा दिया। दूसरे दिन जब प्रतुल ने भिखमंगे को वहां नहीं देखा तो वह अत्यधिक उदास हो गया और कई दिनों तक उदास रहा। यही नहीं, उसमें संग्रह-वृत्ति भी जबरदस्त थी और इस समय उसके पास बीस फाउंटेनपेन, पचास पेंसिलें, अनगिनत रबड़, लट्टू, फूल आदि थे। खरगोश भी वह अपनी ननिहाल से जिद करके लाया था और उसको प्राण से भी अधिक प्यार करता था। पर इन्हीं सब आदतों की वजह से बस्ती के लोग उससे नाराज रहते थे और अपने बच्चों को उसके खेलने से मना करते थे। क्या मन के यही लक्षण हैं? न कोई अनु... न कोई शिष्टाचार!

प्रतुल उस बस्ती के बायें ... होकर जा रहा था। बस्ती के ... पर एक पार्क पड़ता था, जिसके ... एक बड़ी कोठी थी। कोठी के ... पर एक चौकीदार खड़ा रहता था। कोठी शहर के एक बहुत बड़े रईस ... की थी, जिनके शहर में कई मकान ... अपार संपत्ति। कई कारें, नौकर-चाकर ... वे शहर के बड़े ही प्रभावशाली ... थे और कई राजनीतिक, सामाजिक ... सांस्कृतिक संस्थाओं के अध्यक्ष ... संरक्षक थे।

वह पार्क प्रतुल के लिए विचित्र ... एवं आकर्षण का स्थान बन गया ... पिछले दिन उसने वहां एक ... सूरत और प्यारी-सी बच्ची देखी ... जो एक चपरासी के साथ वहां ... आयी थी। वह लड़की बार-बार ... खरगोश को लालच-भरी दृष्टि से ... करती थी। प्रतुल उसको ललचाने ... लिए बार-बार खरगोश को उसके ... ले गया था। प्रतुल उस लड़की को ... भी ललचाना चाहता था। इससे ... अपने प्यारे खरगोश पर बड़ा गर्व होता ...

जब प्रतुल पार्क में पहुंचा तो ... वहां पहले से मौजूद थी। आज ... साथ कोई गोरी और अधेड़ ...

जो कीमती साड़ी पहने थी। यह स्त्री रईस रामलाल की पत्नी थी और छोटी - सी बच्ची उसकी पुत्री थी। स्त्री के हाथ में एक जंजीर थी, जिससे एक छोटा-सा झबरा कुत्ता बंधा था। विदेशी जाति का वह कुत्ता बड़ा प्यारा था, जिसको देखकर प्रतुल की आंखें चमकने लगीं। ऐसा प्यारा कुत्ता तो उसने देखा तक न था। कुत्ते के लिए उसका मन ललचने लगा।

प्रतुल जब उस लड़की के पास पहुंचा तब उसकी मां ने उसे अपने पास बुलाया।

"यह खरगोश कहां से मिला, लड़के ?" स्त्री ने पूछा।

"मैं अपने मामा के यहां से लाया हूं जी! वह पटने में रहते हैं।"

"खरगोश मुझे दे सकते हो?"

"क्यों?" प्रतुल तन गया।

"यह खरगोश बहुत प्यारा है और मेरी बेबी को बहुत पसंद है। तुम जितने रुपये कहोगे, उतने दूंगी। पचास रुपये मैं तुम्हें दे सकती हूं।"

"मुझे रुपये नहीं चाहिए जी।"

"फिर तुम्हें क्या चाहिए? जो तुम कहो। भैया, यह बेबी को बहुत पसंद है।"

"मुझे यह कुत्ता दे दीजिए।" प्रतुल ने साहस करके कहा।

स्त्री गंभीर हो गयी और उसको रुखाई से देखने लगी, पर उसकी बेबी जिद करने लगी, "मम्मी, दे दो न।" कुछ देर बाद वह स्त्री मुसकराने लगी। बोली, "अच्छी बात है, यह कुत्ता विदेशी जाति का है और बड़ी मुश्किल से मिला है। इसकी कीमत भी काफी है, पर मेरी बच्ची को यह खरगोश बहुत पसंद है इसलिए यह मुझे हर कीमत पर चाहिए ही। तुम खरगोश दे दो, कल मैं कुत्ता तुम्हारे यहां पहुंचवा दूंगी। तुम मुझे अपना पता बता दो।"

कुत्ते के लालच में प्रतुल ने खरगोश दे दिया। वह बहुत खुश था। कितना
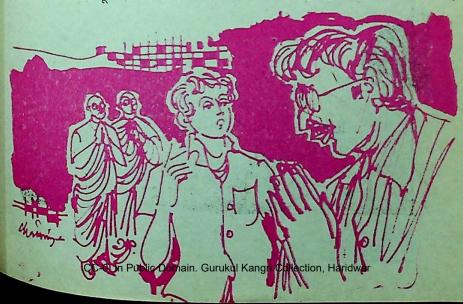
ठाकरसी के
'टेरीन' ब्लेंडेड फॅब्रिक्स
सूटिंग्स □ शर्टिंग्स □ प्रिंट्स
TF
ठाकरसी
ग्रुप ऑफ मिल्स

प्यारा कुत्ता है ! जब वह घर चला तो उसका हृदय गेंद की तरह उछल रहा था।

दूसरे दिन शाम के धुंधलके में उस बस्ती में एक अजीब दृश्य देखने में आया। एक बढ़िया-सी फिएट कार प्रतुल के दरवाजे पर आकर रुकी। रामलाल की पत्नी कार को ड्राइव कर रही थीं। पीछे की सीट पर वह विलायती कुत्ता था। उसके साथ बहुत-सा सामान था—कुत्ते के कपड़ों का एक बक्सा, उसके खाने-पीने के बरतन, रूमाल, साबुन, पाउडर, दवाइयां आदि। उसके सामान में बिस्तरा एवं दो चार्ट भी थे, जिनमें से एक कुत्ते की वंश-परंपरा तथा दूसरा उसके उपयुक्त भोज्य-पदार्थों से संबंधित था। प्रतुल की खुशी का ठिकाना नहीं था। वह कभी बाहर जाता और कभी भीतर। प्रतुल के पिता आश्चर्य-चकित थे! यह क्या बवाल है? फिर भी वे गद्गद थे कि इतने बड़े आदमी की पत्नी स्वयं उनके यहां आयी हैं। वे किसी से कहलवा सकती थीं और यहां से कोई भी जाकर ला सकता था, पर बड़े आदमियों की बात बड़ी होती है। यही नहीं, सारी बस्ती में तहलका मच गया और कुछ बच्चों और बड़े लोगों की भीड़ भी इकट्ठी हो गयी।

प्रतुल ने अपने कमरे में ही उस कुत्ते को रखा। उसकी आंखें प्रसन्नता से चमक रही थीं। उसने स्वयं कुत्ते को खाना खिलाया, पानी पिलाया, टहलाने के लिए ले गया। सोने के पहले कुत्ते की सफाई की, उसको पाउडर लगाया और उसका बिस्तर लगाकर उसे सुला दिया। वस्तुतः वह इतना उत्तेजित था कि रात भर उसे ठीक से नींद भी नहीं आयी।

लेकिन दूसरे दिन सवेरे लगभग आठ बजे से ही प्रतुल के घर में लोगों का आगमन शुरू हो गया। उसमें वे सभी सभी बड़े-बड़े अफसर थे, जो प्रतुल के पिता को देखकर मुंह फेर लेते थे या व्यंग्यपूर्वक मुसकरा पड़ते थे। वे लोग आ-आकर प्रतुल के पिताजी को बधाइयां देने लगे। पहले लोग बधाइयां देते, फिर कुत्ते की प्रशंसा करते।

"भई, ऐसा प्यारा कुत्ता तो मैंने देखा नहीं!"

"और बड़प्पन देखिए, यहां खुद पहुंचाने आयीं!"

"आपका लड़का भी होनहार है। मैं तो पहले से ही जानता था ..."

प्रतुल के पिता पागल की तरह उनको देखते और बेवकूफ की तरह सिर हिलाते।

शाम को भी यही सिलसिला शुरू हुआ और रात देर तक चलता रहा।

प्रतुल पीछेवाले कमरे में अकेले सिर लटकाकर बैठा था। चारपाई से नीचे लटके हुए उसके पैर निरर्थक ढंग से हिल रहे थे। उसकी आंखों से चमक गायब हो गयी थी। कुत्ते के प्रति उसका सारा प्यार और उत्साह भी समाप्त हो चुका था। उसे कुत्ते पर बेहद गुस्सा आ रहा था।

—२०/५ करेलाबाग कॉलोनी, इलाहाबाद

मधुमेह
रोग से बचना आपके हाथ में

● डॉ. ओमप्रकाश श

मधुमेह रोग नया नहीं है। प्राचीन काल में सुश्रुत ने इस रोग की व्याख्या की थी और इसके उपचार के लिए व्यायाम की उपयोगिता बतायी थी। जब रक्त में शर्करा (ग्लूकोज) की मात्रा अधिक हो जाती है (हाइपरग्लाइसीमिया) और फलस्वरूप पेशाब में शर्करा छन-छनकर आने लगती है तो उसे मधुमेह रोग कहते हैं। हम जो भोजन करते हैं उसका अधिकांश भाग ग्लूकोज के रूप में रक्त में मिल जाता है। यह ग्लूकोज रक्त के ही माध्यम से विभिन्न अंगों में पहुंचकर उन्हें ऊर्जा प्रदान करता है। इसका कुछ भाग 'ग्लाइकोजन' के रूप में यकृत तथा मांसपेशियों में जमा हो जाता है। रक्त में ग्लूकोज की मात्रा सामान्यतः स्थिरप्राय रहती है (प्रति १०० मि. ली. रक्त में ८० मि. ग्रा. से १०० मि. ग्रा. तक)। इसे स्थिर रखने में इंसुलिन का बहुत बड़ा योगदान रहता है, जो क्लोम (पैंक्रियाज) नामक ग्रंथि में बनती है। इंसुलिन की कमी से ही रक्त में ग्लूकोज की मात्रा बढ़ जाती है तथा पेशाब में भी शर्करा छन-छनकर (ग्लाइ-कोसूरिया) आने लगती है।

मधुमेह के कारणों में पैतृकता (हे... का विशेष स्थान है। यदि मा... को यह रोग हो तो बच्चों को भी हो... आशंका रहती है। ऐसे बच्चों का ... अधिक नहीं बढ़ने देना चाहिए और ... वर्ष के बाद नियमित रूप से उनके ... की जांच करवाते रहना चाहिए।

वैसे तो यह रोग किसी भी ... में हो सकता है, किंतु अधिकांश ... से ६० वर्ष की उम्र के बीच के ... ही इसके शिकार होते हैं। स्त्रियों ... अपेक्षा पुरुषों को यह रोग अधिक ... तुलनात्मक रूप में कमउम्र में हो ... जाता है।

आलसी तथा शारीरिक परि... कम करनेवाले लोग विशेष रूप से इस... शिकार होते हैं। मेहनत करनेवाले ... मजदूर वर्ग के लोग प्रायः इससे बचे र... हैं। ग्रामीणों के बजाय शहरी इसकी ... में अधिक आते हैं।

मोटापा मधुमेह को आमंत्रित क... है। इसी प्रकार हृदय-रोग, उच्च र... चाप और पित्ताशय की बीमारियां ... इसके अन्य साथी हैं।

यदि इंसुलिन शरीर की आवश्यकता से कम मात्रा में बने तो यह रोग हो जाता है। बचपन में होनेवाला मधुमेह 'जुविनाइल डायबिटीज' कहलाता है और उसका एकमात्र उपचार इंजेक्शन द्वारा जीवनपर्यंत इंसुलिन देते रहना है। वृद्धावस्था में मधुमेह होने का कारण प्रायः इंसुलिन को बनानेवाली कोशिकाओं में कमजोरी आ जाना है। इसके उपचार के लिए बाहर से इंसुलिन देना आवश्यक नहीं है। यह कुछ अन्य दवाओं से भी, जिन्हें 'ओरल हाइपोग्लाइसीमिक एजेंट' कहते हैं, ठीक हो जाती है। शरीर में इंसुलिन को नष्ट करनेवाली 'इंसुलिन ऐंटीबाडीज' भी मधुमेह का कारण बन जाती हैं।

क्लोम (पैंक्रियाज) तथा पीयूष-ग्रंथि (पिट्यूटरीग्लैंड) के रोग भी मधुमेह का कारण बन जाते हैं।

आधुनिक युग में मधुमेह के रोगियों की संख्या बढ़ने का एक कारण मानसिक तनाव भी है, किंतु इस तरह होनेवाला मधुमेह प्रायः अस्थायी होता है, जो मानसिक तनाव दूर होने पर जाता रहता है।

मधुमेह रोग के लक्षण

आजकल चिकित्सा-विज्ञान की प्रगति के कारण इस रोग का निदान लक्षणों के स्पष्ट रूप से प्रकट होने से पूर्व ही कर लेना संभव है। इस रोग में शुरू-शुरू में रोगी को अधिक प्यास लगती है। कुछ रोगियों को भूख अधिक लगती है। कुछ को रात में दो-तीन बार लघुशंका के लिए उठना पड़ता है। इसके अतिरिक्त पेशाब की मात्रा भी बढ़ जाती है। जहां पेशाब करते हैं वहां चीटियां लग जाती हैं। कभी-कभी नजर कमजोर होती जाती है। चश्मे का नंबर प्रायः हर साल बदलवाना पड़ता है। कुछ लोग हाथ-पैरों में कमजोरी या सनसनाहट की शिकायत करते हैं। रात में बार-बार शौच के लिए जाना भी इस रोग का लक्षण है। गुप्तांगों में खुजली तथा जननेंद्रिय में दरारें पड़ जाना भी इस रोग के प्रारंभिक लक्षण हैं। इस रोग के फलस्वरूप शरीर का रोगों के प्रति प्रतिरोध कम हो जाता है। फोड़े-फुंसी निकलने लगते हैं। मामूली जख्म भी देर से भरता है।

रोग का निदान

मधुमेह के निदान के लिए सबसे पहले पेशाब तथा रक्त की जांच करानी चाहिए। पेशाब की जांच करने का तरीका सरल है। इसे 'बैनेडिक टेस्ट' कहते हैं। कांच की एक परखनली में ५ मि. लीटर बैनेडिक घोल लेकर उसमें पेशाब की आठ बूंदें डाल दी जाती हैं। इस मिश्रण को गरम करके ठंडा किया जाता है। ऐसा करने पर यदि मिश्रण का रंग बदल जाए तो यह मधुमेह का द्योतक है। पेशाब में यदि शर्करा न हो तो रंग नीला ही रहता है। यदि रंग हरा हो जाए तो शर्करा .५ प्रतिशत, पीला हो तो १ प्रतिशत, मटमैला हो तो १.५ प्रतिशत और लाल हो तो २ प्रतिशत या उससे अधिक शर्करा होती है।

इस टेस्ट के द्वारा लगभग ९५ प्रतिशत सही निदान हो जाता है। शत-प्रतिशत निदान के लिए रक्त में ग्लूकोज की मात्रा का मापन करना पड़ता है। इन टेस्टों को 'ब्लड शुगर फास्टिंग' व 'पोस्ट प्रैंडियल' तथा 'जी. टी. टी.' के नाम से जानते हैं।

रोग का उपचार

मधुमेह के उपचार में सही वजन, विशेष आहार तथा व्यायाम का भी उतना ही महत्त्व है जितना दवाओं का। मध्यावस्था में मोटापे के कारण जो मधुमेह होता है

उसमें वजन कम करने ... उपचार हो जाता है। ... का संबंध है, मधुमेह के रोगि... का प्रयोग नहीं करना ... कम-से-कम करना चाहिए। ... चाय या कॉफी, गरिष्ठ ... से दूर रहना चाहिए। मीठे ... अंगूर आदि का भी प्रयोग ... चाहिए। तली हुई गरिष्ठ ... कारक होती हैं। प्रोटीन ... जैसे दूध, दालें, पनीर, अंडा ...

वजन तालिका

(२५ वर्ष तथा उससे अधिक आयु की स्त्रियों के लिए)

कद फुट–इंच	वजन पौंड
४–११	११०–११८
५–०	११२–१२०
५–१	११४–१२२
५–२	११७–१२५
५–३	१२०–१२८
५–४	१२४–१३२
५–५	१२७–१३५
५–६	१३०–१४०
५–७	१३४–१४४
५–८	१३७–१४७
५–९	१४१–१५१
५–१०	१४५–१५५
५–११	१४८–१५८

(२५ वर्ष तथा उससे अधिक आयु के पुरुषों के लिए)

कद : फुट–इंच	वजन
५–२	[illegible]
५–३	[illegible]
५–४	[illegible]
५–५	[illegible]
५–६	[illegible]
५–७	[illegible]
५–८	[illegible]
५–९	[illegible]
५–१०	[illegible]
५–११	[illegible]
६–०	[illegible]
६–१	[illegible]
६–२	[illegible]
६–३	[illegible]

आदि का प्रयोग [illegible] है। हरी सब्जी तथा खट्टे फलों का प्रयोग भी उत्तम है।

दवाओं में प्रमुख है इंसुलिन। इसकी मात्रा रक्त तथा पेशाब में शर्करा की मात्रा के ऊपर निर्भर करती है। .५ प्रतिशत के लिए १० यूनिट, १ प्रतिशत के लिए २० यूनिट, १.५ प्रतिशत के लिए ३० यूनिट तथा २ प्रतिशत के लिए ४० यूनिट इंसुलिन दी जाती है। आवश्यकतानुसार इससे अधिक भी दी जा सकती है। आजकल खाने की भी कुछ दवाएं हैं जिनसे मधुमेह का उपचार किया जाता है। बाजार में ये दवाएं डायबिनीज, रेस्टीनान, डी. बी. आई., डायोनिल आदि नाम से आती हैं। इन दवाओं का प्रयोग डॉक्टर की सलाह से करना चाहिए।

जिनके माता-पिता को यह रोग हो चुका हो उन्हें अपना वजन नियंत्रित रखना चाहिए। उम्र और कद के हिसाब से कितना वजन होना चाहिए इसकी तालिकाएं आती हैं। वजन यदि बढ़ने लगे तो कुछ दिनों के लिए भोजन की मात्रा कम करके तथा व्यायाम के द्वारा वजन नियंत्रण में ले आना चाहिए। ३५ वर्ष की उम्र के बाद नियमित रूप से रक्त की जांच करवाते रहने से इस रोग से तथा इसके फलस्वरूप उत्पन्न होनेवाले उपद्रवों, जैसे आंखों पर कुप्रभाव (डायबिटिक रेटीनोपैथी) तथा गुर्दों, नाड़ियों आदि पर होनेवाले कुप्रभावों से बचा जा सकता है।

—सफ़दरजंग अस्पताल, नयी दिल्ली

बुद्धि-विलास के उत्तर

१. रस्साकशी। २. किसी परिवारवाले [...] हत्या की क्योंकि सीढ़ी का चार इंच धंस[...] बताता है कि उस पर पहले कोई नहीं चढ़ा[...] ३. प्रतिबिंब के लिए प्रकाश आवश्यक है [...] पार्श्व से आता हो, अतः पहाड़ का प्रतिबि[...] नजर नहीं आता। ४. तेरह पौंड छह शिलि[ंग] छह पौंड तेरह शिलिंग। ५. १,१५० रुप[ये] १,०२५ रुपये, ९७५ रुपये, ८५० रुपये [...] ६. हां, पांचवें मील तक सोहन कैसे जाए[...] और दसवें मील पर सोहन का समय दे[...] मोहन कैसे जाएगा। फिर, मोहन को [...] चार मील साइकिल चलानी है और सो[हन] को पांच मील! ७. बूंद। ८. सोहनल[ाल] द्विवेदी, सियारामशरण गुप्त। ९. [...] बीबी का रोजा। १०. मंसूर अली [...] पटौदी ने। ३६ टेस्ट मैचों में उन्होंने [...] जीते, १७ हारे और १२ अनिर्णीत [...] ११. कर्नल सी. के. नायडू, चार टेस्टों [...] नेतृत्व इंगलैंड में। तीन मैच जीते [...] अनिर्णीत। १२. लेनिन। १९६१ से १९[...] तक की अवधि में १,८७४ बार ये अनु[...] छपे। १३. ये संख्याएं मासिक चंदे [...] रकम हैं। ४८ का अर्थ है—चार [...] मासिक, ६० का अर्थ है—पांच [...] मासिक, आदि। १४. यहां भारत [...] प्रथम कृत्रिम उपग्रह भू-स्टेशन है। [...] दिएगो-गार्सिया। १६. इसरायल में [...] मुख्य पाइप लाइन जो जल पहुंचाती [...]

● शैला नाटू

वे शैतान को पूजते हैं

शैतान, आम तौर पर, सभी धर्मों में घृणा और तिरस्कार का पात्र है और विश्वास किया जाता है कि उसे पूजनेवाले केवल किस्से-कहानियों में मिला करते हैं। यह सच नहीं है। तिगरिस नदी के किनारे, जहां तुर्की, सीरिया और ईराक की सीमाएं मिलती हैं, येज्दी नामक एक जाति रहती है, जो सदियों से ईश्वर की नहीं, शैतान की पूजा करती आ रही है।

तुर्की के मार्दिन प्रांत में हराबिया नामक एक गांव है। येज्दी वहीं रहते हैं। कद-काठी और वेशभूषा से येज्दी कुर्दों की भांति ही दिखायी देते हैं। उनकी भाषा भी कुर्दी है। चूंकि येज्दी पहले लंबी-लंबी दाढ़ी रखा करते थे, लोग उन्हें 'दाढ़ीवाले कुर्द' नाम से भी पुकारा करते थे। येज्दी कान और नाक के बाल भी बढ़ाये रहते हैं। मूलतः येज्दी परंपराप्रिय हैं और सदियों से चली आ रही परंपराओं को आज के अंतरिक्ष युग में भी त्यागने के लिए तैयार नहीं।

एक बार एक सिपाही दो येज्दी चोरों का पीछा कर रहा था। उन दोनों की तुलना में वह कुछ कमजोर भी था, फिर भी उसने [illegible] पीछा करना नहीं छोड़ा। पीछा करते वह एक खुले मैदान में जा [illegible] सिपाही को विश्वास था कि एक [illegible] हाथ आते ही दूसरा आसानी से [illegible] आ जाएगा। सिपाही ने एक चोर के [illegible] पहुंचकर उसके चारों ओर भूमि पर [illegible] खींच दी। यह देखते ही वह [illegible] घबरा उठा और ठिठककर [illegible] गया। लगता था, जैसे उसके चारों [illegible] किसी ने आग का घेरा खड़ा कर दिया [illegible] उसे वहीं छोड़ सिपाही ने दूसरे चोर [illegible] पीछा करना शुरू किया और अंत में [illegible] भी उसी प्रकार पकड़ने में सफल हो [illegible] सिपाही की सफलता का कारण येज्दी [illegible] का यह विश्वास था कि भूमि पर [illegible] लकीर को पार करना पाप है।

येज्दी भूमि को अत्यंत पवित्र [illegible] हैं और उस पर कभी थूकते नहीं। [illegible] किसी और व्यक्ति को अपने गांव की [illegible] पर थूकने देते हैं। धरती के [illegible] वे सूर्य और चंद्र की भी पूजा करते [illegible] मोटे तौर पर येज्दी धर्म संसार के [illegible] धर्मों का विचित्र मिश्रण है। उसमें [illegible] ईसाई, इसलाम, पारसी धर्मों की [illegible] बातें पायी जाती हैं, जैसे येज्दी [illegible]

इसलाम धर्म को नहीं मानते, फिर भी उनके यहां मुल्ला-मौलवियों की परंपरा है। वे मुहम्मद साहब और इब्राहम को पैगंबर मानते हैं। येज्दी ईसाइयों-जैसा बपतिस्मा भी करते हैं और ईसामसीह को मानव रूप में देवदूत मानते हैं। येज्दी धर्म में हमें ईरानी और असीरियन तत्त्व भी

उनके अनुसार मलिक तौस ही ईसा और शेख अदी के रूप में पुनः अवतरित हुए थे। येज्दी धर्म में मलिक तौस की कल्पना एक मयूर के रूप में की गयी है। इसका एक कारण शायद यह है कि उन्होंने मोर के फैले पंखों को एक चक्र माना है, जो सतत जीवन और सूर्य का भी प्रतीक है। येज्दियों का

मिलते हैं। ईरान से उन्होंने अग्निपूजा ली है। येज्दी इस बात पर भी विश्वास रखते हैं कि उनकी सृष्टि मानव जाति से बिलकुल अलग की गयी है। वे आदम की औलाद नहीं हैं।

येज्दी लोग मलिक तौस नामक एक फरिश्ते को सर्व शक्तिमान मानते हैं।

विश्वास है कि मलिक तौस अपने अन्य छह साथियों के साथ संपूर्ण ब्रह्मांड पर शासन करते हैं। मलिक तौस सहित इन छह देवदूतों की मयूर के रूप में पूजा की जाती है। मयूर की ये प्रतिमाएं लोहे या कांसे की बनी होती हैं। उन्हें 'संजग' कहते हैं।

येज्दी अद्वैतवादी या द्वैतविरोधी हैं।

वे 'दुई' में विश्वास नहीं करते। येज़िदियों की एक कथा के अनुसार एक बार शैतान को बेहद घमंड हो गया था कि वही सबसे अधिक शक्तिमान है। इस अभिमान के कारण शैतान को देवदूतों के प्रमुख पद से हटा दिया गया। बाद में शैतान को बहुत पश्चात्ताप हुआ। उसने ईश्वर के समक्ष अभिमान करने के अपने पाप को स्वीकार कर लिया। इस पर ईश्वर ने उसे क्षमा कर दिया और पुनः उसके पुराने पद पर आसीन कर दिया। शैतान संबंधी इसी धारणा के कारण शायद येज्दी शैतान-पूजक के रूप में बदनाम हो गये।

येज़िदयों की धर्म पुस्तक का नाम है—यलवाह। उनकी एक और धर्म पुस्तक है, जिसका नाम है 'किताब अल जिलवाह' येज़िदयों के अनुसार यह पुस्तक एक पर्वत के शिखर पर किसी रहस्यमय जगह में छिपाकर रखी गयी थी और उस तक कोई भी नहीं पहुंच सकता।

येज्दी लोगों में प्रचलित एक कथा के अनुसार किसी कारण से मलिक तौस को नरक का कारावास मिला। कहते हैं कि वह पतित हो गया था और इसी कारण उसे नरक में सात हजार वर्षों तक रहना पड़ा। इन वर्षों में मलिक तौस ने पश्चात्ताप का जीवन विताया और दिन-रात आंसू बहाता रहा। वह इतना रोया कि उसके आंसुओं से नरक में रखे सात विशाल पात्र भर गये। बाद में इन्हीं आंसुओं से नरक की अग्नि सदा के लिए बुझा दी गयी। इस तरह लोगों को नरक की अग्नि से छुटकारा मिल गया। इस परोपकारपूर्ण कार्य के लिए मलिक तौस को स्वर्ग में स्थान दिया गया। जिन दिनों मलिक तौस नरक में था, उन दिनों उसकी भेंट ल्यूसिफर नामक एक अन्य दूत से हुई। ल्यूसिफर भी नरक में कारावास का जीवन बिता रहा था। चूंकि ये दोनों दूत नरक के निवासी थे अतः उन्हें शैतान का रूप मानकर उसकी पूजा शुरू कर दी।

येज्दी लोगों का कोई देव स्थान नहीं होता। मोसूल के समीप शेख अदी की कब्र को ही वे अपना धार्मिक स्थान मानते हैं। शेख़ अदी का काल भी अज्ञात है, पर यह समझा जाता है कि वे भी येज्दी लोगों द्वारा पूजित सात दूतों में से एक थे। अपने सत्कर्मों द्वारा ही उन्हें यह पद प्राप्त हुआ था। सत्कार्यों में विश्वास रखना और शैतान की पूजा करना, ये परस्पर-विरोधी बातें हैं, पर येज्दी इन दोनों का बड़ी सफलतापूर्वक पालन करते हैं। येज्दी प्रातः सूर्य की और संध्या को चांद की पूजा करते हैं। वे अन्य धर्मावलंबियों के आगे अपनी कोई धार्मिक विधि नहीं करते। येज्दी धर्म में अन्य लोगों को प्रवेश की अनुमति नहीं है। किसी व्यक्ति को धर्म से बहिष्कृत कर देना मृत्युदंड से भी भयंकर सजा है। एक बार किसी ने हराबिया स्थित येज्दी लोगों के धर्मगुरु से पूछा कि आपके यहां सबसे बड़ा पाप और सबसे बड़ी सजा क्या है? उन्होंने उत्तर दिया, 'धर्मत्याग का विचार और धर्म से बहिष्कार।' ●

सारे साल गुलाब

• स्वदेशकुमार

ज्यादातर लोगों का खयाल है कि गुलाब एक बार लगा दीजिए और फिर कुछ करने की जरूरत नहीं है, बस माली पर छोड़ दिया कि खाद-पानी दे देगा। लेकिन यह कोई तरीका नहीं है गुलाब उगाने का। गुलाबों को आप बच्चों के समान ही समझिए। गुलाब समझ जाते हैं कि आप उन्हें प्यार करते हैं या नहीं और उसी के अनुसार वे भी व्यवहार करते हैं।

उत्तरी भारत के मैदानी इलाकों में गुलाब खिलने का मौसम दिसंबर से मार्च तक है। लेकिन इन दिनों बढ़िया फूल खिलें, इसके लिए पौधों की देखभाल सारे साल करना जरूरी है। मैं यहां पूरे साल का कैलेंडर दे रहा हूं कि कब क्या करना है। हर महीने की पहली तारीख को यह लेख फिर पढ़ लीजिए और देखिए कि महीने आपको क्या करना है? गुलाब वर्ष अक्तूबर से शुरू होता है। तो इसी महीने से शुरू करते हैं—

अक्तूबर : पहली से दस अक्तूबर बीच गुलाब की क्यारियों में पानी कर दीजिए। मिट्टी को छह इंच खोदकर छोड़ दीजिए। पौधों के चारों तरफ एक फुट के दायरे में तीन-चार इंच मिट्टी हटाकर जड़ों को धूप में छोड़ दीजिए। मिट्टी इस होशियारी से हटाइए कि ऊपर की जड़ें न कट जाएं। दस से पच्चीस अक्तूबर के बीच थोड़े-थोड़े पौधे रोज प्रून (कटाई-छंटाई) कर दीजिए। बरसात में पौधे बहुत बढ़ जाते हैं, ऐंडी-बैंडी टहनियां निकल आती हैं। प्रूनिंग का मतलब है कमजोर, सूखी, अंदर को बढ़ती हुई टहनियों को बिल्कुल काट देना; केवल चार-पांच स्वस्थ टहनियां रहने देना और उन्हें भी ऊपर से एक-तिहाई काट देना, (बाहर की तरफवाली आंख (चश्मा) के एक-चौथाई इंच ऊपर अंदर की तरफ तिरछा), पत्ते भी सब काट देना। सही प्रूनिंग पर ही आगे फूलों की बहार बहुत-कुछ निर्भर करती है।

प्रून करने के बाद एक मुट्ठी बोन-मील, एक मुट्ठी सुपर-फास्फेट, एक मुट्ठी नीम, सरसों या मूंगफली की खली का चूरा और एक छोटी टोकरी गोबर की खूब सड़ी हुई खाद हर पौधे की खुली हुई जड़ के चारों तरफ भर दीजिए। अगर दीमक का डर हो तो साथ ही एक बड़ा चम्मच गैमेक्सीन पाउडर भी मिला दीजिए। बाकी क्यारी में एक इंच मोटी तह सड़ी हुई गोबर की खाद को मिलाकर क्यारी को हमवार कर दीजिए। कटे-छंटे पौधों पर फौलीडौल, बासूडीन या रोगर—किसी भी एक कीटाणुनाशक दवा का स्प्रे, कर दीजिए। अब क्यारी भरकर पानी दे दीजिए।

नये पौधे भी अक्तूबर में ही लगाने चाहिए।

नवंबर: कटे-छंटे पौधों में नया फुटाव आना शुरू हो जाएगा। हर दूसरे हफ्ते के बाद हर पौधे के नौ इंच दूर दायरे में एक बड़ा चम्मच रासायनिक खाद—जैसे रोजमिक्स, टाप रोज आदि डालकर निलाई कर पानी दे दीजिए। यदि फोलियर फीड मिल जाए, तो उसे स्प्रे कीजिए। अगर बना-बनाया नहीं मिलता है तो खुद बना लीजिए। तरीका है: १.२५ ग्राम यूरिया को १.२५ ग्राम पोटेशियम डाइहाइड्रोजिन फास्फेट के साथ मिला लीजिए। इसका एक बड़ा चम्मच एक बाल्टी पानी में अच्छी तरह घोलकर हर हफ्ते पौधों पर स्प्रे (छिड़काव) करिए, जब तक कलियां न निकलनी शुरू हो जाएं।

दिसंबर: नवंबर की तरह ही रासायनिक खाद देते रहिए, पर फोलियर फीड देना बंद कर दीजिए। अब दिल थामकर बैठिए—कली निकली, चटकी, खिलने लगी, खिली और फूल मुसकराने लगे!

कुछ भागों में इस महीने में और कुछ में मार्च-अप्रैल में मिलड्यू बीमारी की आशंका रहती है। पत्तों और कलियों के

अच्छी मेहनत: बढ़िया गुलाब

वे सफेद पाउडर जम जाता है और तेजी फैलता है। कैराथेन मोरेस्टन या कोसान हर हफ्ते छिड़काव करिए, जब तक मारी दूर न हो जाए।

जनवरी: फूलों की पहली बहार हो जाएगी। पौधों में फिर से जान लाने के लिए गोबर की खाद की एक मोटी तह पूरी क्यारी में बिछाकर लाई कर दीजिए। खाद न डालने से गर-यों और बरसात में पौधों के मर जाने का तरा है। रासायनिक खाद और फोलियर डिंग चालू रखिए।

फरवरी : फूलों की दूसरी बहार एगी। फोलियर फीडिंग पूरे महीने तक द रखिए।

अक्तूबर से फरवरी तक क्यारियों में बारह-पंद्रह दिन बाद भरकर पानी देना चाहिए। उसके बाद निलाई करके दो-तीन दिन जमीन को धूप-हवा लगने दीजिए और फिर रासायनिक खाद डालकर पानी भर दीजिए। इन दिनों गमलों में हर तीसरे दिन बाद पानी की जरूरत पड़ेगी, चौथे दिन निलाई, और पांचवें दिन फिर पानी।

इसी दौरान निम्नलिखित विशेष लिक्विड (तरल) खाद क्यारियों और गमलों में देने का कष्ट उठा सकें तो सोने में सुहागा हो जाए :

दो बड़ी-बड़ी मुट्ठी : गाय-भैंस का गोबर

एक बड़ी मुट्ठी : नीम, सरसों या मूंगफली की खली

एक छोटी मुट्ठी : यूरिया

अगर आप मछली खाते हों तो उसको साफ करके जो भाग बच जाता है, उसे फेंकने के बजाय इस घोल में ही डालकर सड़ा लीजिए, और भी फायदेमंद रहेगा।

इन सबको एक कनस्तर पानी में घोल दीजिए, हफ्ते भर में सड़-गल जाएगा। बीच-बीच में डंडे से चलाते रहिए।

इस घोल को एक किलो वनस्पति के डिब्बे के बराबर लेकर आठ किलो पानी में मिला लीजिए। इस प्रकार कुल नौ डिब्बे घोल तैयार हो जाएगा। एक-एक डिब्बा हर पौधे के चारों तरफ हर हफ्ते डालिए—टानिक का काम देगा। गमलों में लगे गुलाबों के लिए तो यह घोल बहुत ही जरूरी है।

फरवरी में, या उससे पहले, या बाद में (यह मौसम पर और स्थान पर निर्भर करता है) निम्नलिखित कीटाणु पौधों को नुकसान पहुंचा सकते हैं। उनका इलाज भी साथ ही बताया गया है:

शेफर बीटिल : बी. एच. सी. पाउडर और डी. डी. टी. पाउडर को ५० : ५० के अनुपात में मिलाकर भुरकाव कर दीजिए, या फौलीडोल, मैलाथियन, पैराथियन या डाइमेक्रोन में से किसी एक का स्प्रे कर दीजिए।

एफिड्स : कलियों पर भूरे धब्बे पड़ जाते हैं। बासूडिन, फौलीडोल, मैलाथियन, पैराथियन या डाइमेक्रोन में से किसी एक
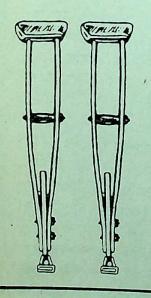
का स्प्रे कर दीजिए।

थ्रिप्स : पंखुड़ियों के किनारे काले पड़ जाते हैं। फूल और पत्तियां मुड़-तुड़कर बदशक्ल हो जाती हैं। ऊपरवाली कोई भी कीटाणुनाशक दवा का स्प्रे कीजिए।

कई कीटाणुओं के लिए लगभग एक ही प्रकार की कीटाणुनाशक दवाएं हैं। ये अलग - अलग कंपनियों की बनी होती हैं। एक साल जिस कंपनी की दवा का प्रयोग करें, दूसरे साल उसे बदल दें।

मार्च : फूलों का आखिरी दौर आएगा। इस बार एच. टी. (बड़े-बड़े आकार-प्रकारवाले फूल) के बजाय फ्लोरिवंडा और मिनिएचर (छोटे आकार-प्रकार के गुच्छों में आनेवाले फूल) की बहार ज्यादा रहेगी। थोड़ी गरमी पड़ने लगती है, इसलिए एच. टी. का आकार थोड़ा छोटा हो जाता है, और रंग भी थोड़ा हलका पड़ जाता है।

इस महीने रासायनिक खाद देते रहिए, पर फोलियर फीडिंग बंद कर दीजिए।

अप्रैल-मई : गरमी पड़ने लगी। फूलों का मौसम गया। छोटे-छोटे बदरंग फूल निकलते रहेंगे, जिन्हें काट देना ही बेहतर होगा। रासायनिक खाद देना बंद कर दीजिए। क्यारियों में हर तीसरे दिन और गमलों में हर रोज पानी दीजिए। गरमी ज्यादा हो तो और भी जल्दी-जल्दी पानी दीजिए। जमीन एक दिन को भी सूखी न रहे। गमलों में तो सुबह-शाम पानी देना पड़ सकता है। हर शाम पौधे पर पानी का छिड़काव कीजिए—चाहे फुहारे से या नलीसे। पौधों को दिन भर की गरमी-लू के बाद शाम को नहाने से बड़ा सकून मिलता है। गमलों को लू से बचाने के लिए आड़ में रखिए, या घने पेड़ के साये या बरामदे में।

पंद्रह - बीस दिन बाद क्यारियों की केवल आध-पौन इंच गहरी हलकी-हलकी निलाई कीजिए।

जून-जुलाई-अगस्त : इन महीनों में अगर अच्छी बरसात हो जाए, तो पानी की तभी जरूरत पड़ेगी जब हफ्ते भर को बारिश रुक जाए। यदि इससे पहले भारी वर्षा हुई है एवं क्यारियों में पानी की जरूरत ही नहीं है, तीन-चार इंच नीचे अगर जमीन गीली है तो फिर पानी नहीं, एक इंच गहरी निलाई कर दीजिए।

अगर लगातार कई दिन तेज वर्षा के कारण क्यारियों में पानी खड़ा हो जाए, तो डौल काटकर पानी बाहर निकाल दें, नहीं तो जड़ें गल सकती हैं।

इन दिनों जंगली घास-फूस बराबर निकालते रहिए। पौधे की बड-यूनियन के नीचे और जड़ से जो फुटाव निकले, उसे काट दीजिए, क्योंकि वह देसी गुलाब होता है। देसी गुलाब के पौधे पर ही विलायती गुलाब की आंख या चश्मा बांधा जाता है।

अधिक और लगातार वर्षा के कारण रेड-स्केल (लाल-भूरे रंग के खसरा की तरह के दाने) बीमारी गुलाब की

टहनियों पर लग जाती है। यह खतरनाक होती है और जल्दी इलाज न किया जाए तो पौधे को सुखा देती है। फौलीडोल का स्प्रे हर हफ्ते कीजिए। चार बार में कीटाणु मर जाने चाहिए। पुराने टूथब्रश को फॉलीडोल में भिगोकर टहनियों पर रगड़ने से इन्हें दूर किया जा सकता है। फौलीडोल की जगह मेथिलेटेड स्प्रिट से भी काम चलाया जा सकता है। इनके मरने की पहचान—ब्रश रगड़ने से दाने भूसी बनकर उड़ जाएंगे। इन दिनों दीमक का भी खतरा रहता है।

इन महीनों में कभी - कभी पत्ते पहले पीले, फिर भूरे पड़कर गिरने लगते हैं। वैसे तो कोई बात नहीं, यह गरमी-बरसात का असर है, लेकिन इसके बाद अगर पौधे भी काले पड़कर सूखने लगें, तो उसके निम्नलिखित कारण और निदान हो सकते हैं :

बहुत अधिक वर्षा : फालतू पानी एक दिन भी क्यारियों में मत रहने दीजिए।

ब्लैक स्पाट्स (पत्तों पर काले धब्बे): यह एक प्रकार की बीमारी है। कैप्टन दवा का स्प्रे कीजिए।

पिछले महीनों में खाद आदि की कमी : अक्तूबर से मार्च तक खाद देने की जो मात्रा बतायी गयी है, उसका पालन करें। रासायनिक खाद अधिक मात्रा में देने का कुप्रभाव अगर हाथ के हाथ नहीं दिखायी दिया है तो वह इन दिनों दिखायी दे जाएगा, यानी पौधा मर जाएगा। वैसे अब कुछ विशेषज्ञों की राय है कि रासायनिक [illegible] का प्रयोग कम-से-कम हो, क्योंकि [illegible] पौधे की आयु घटती है। चार-पांच [illegible] तक तो खूब बहार देगा, फिर इक्का-दुक्का फूल ही निकलेगा।

शेफर ग्रब : यह बड़ा मूली [illegible] होता है—मोटा, गिलगिला, सफेद, मुड़ा हुआ। एक इंच लंबा यह कीड़ा पौधे की [illegible] के नीचे या आसपास पैदा हो जाता है। जड़ों को खोलकर, इसे बाहर निकाल [illegible] मार दीजिए। एक बड़ा चम्मच [illegible] जड़ों में डालकर मिट्टी वापस भर दीजिए।

सितंबर : जब वर्षा रुक जाए और क्यारियां सूख जाएं, तो एक बार [illegible] करके महीने में दो-तीन बार पानी दे दें।

इसके बाद फिर अक्तूबर : नयी [illegible] की फिर से तैयारियां शुरू।

साल भर बाद गमलोंवाले गुलाबों की खाद - मिट्टी भी बदलनी चाहिए। [illegible] में से पूरा पौधा निकाल लीजिए। [illegible] बारीक जड़ों का गोल गुच्छा बन जाए [illegible] उसे प्रूनर से काट दीजिए। पौधे को [illegible] करके पूरा-का-पूरा पानी में तीन-[illegible] घंटे डुबा दीजिए। गमले में नयी खाद-मिट्टी [illegible] आधी-आधी, एक छोटी मुट्ठी बोन-[illegible] दो बड़े चम्मच सुपर-फास्फेट के साथ [illegible] कर पौधे को शाम के वक्त गमले में [illegible] दीजिए। भरकर पानी दीजिए। [illegible] छाया में रखिए, फिर धूप में।

—आर १९, हौजखास [illegible]
नयी दिल्ली-११[illegible]

अंतिम पड़ाव
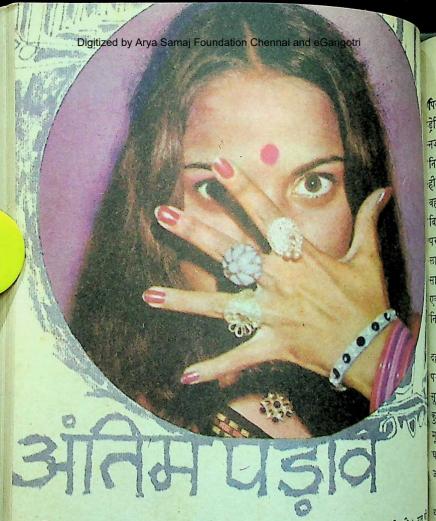
हिंदुस्तान में रहते हुए भी समय की यह पाबंदी !

अचानक नियम टूट जाए तो पड़ोसी भी प्रश्न करने लगते हैं। आधी रात के बाद एकाएक सरला की चीख ने सारे घर में तबाही मचा दी। उसकी प्यारी बिल्ली लूसी, जो सोफे में अचेत सो रही थी, आसपास चक्कर लगाने लगी। डॉ. जगन दांत पीस रहा था। उसकी पत्नी सरला बिल्ली के पंजों की तरह अपनी पांचों अंगुलियां फैलाये अपना खूबसूरत चेहरा ढकने का प्रयत्न कर रही थी। रात ... तनहाई में काले अंधेरे की तरह एक नाटक उस फ्लैट में खेला जा रहा था। ... हलका-सा प्रकाश था जो शायद ही खिड़कियों, दरवाजों या प्रकाश-स्तंभों ... बाहर जा सकता हो। नाटक के ... एक दृश्य की तरह दस-पंद्रह मिनट ... यह सब चला होगा कि एक विराट ... वहां छा गयी। इसके बाद कब सुबह हुई किसी को पता नहीं ...!

जगन ने २३ बोर का छोटा-सा पिस्तौल अपनी जेब में रखा और ड्रेसिंग-टेबल पर रखी हुई टाइमपीस पर नजर डाली। ७ बजकर, १७ मिनट हुए थे। नित्य के प्रतिकूल आज वह तेरह मिनट पूर्व ही उठ गया था और इन तेरह मिनटों में वह बहुत कुछ कर सकता था। सब काम बिलकुल ठीक हो रहा था। सामने बिस्तर पर खून से लथपथ उसकी सुंदर पत्नी की लाश पड़ी थी। उसे कुछ अधिक कष्ट का सामना भी नहीं करना पड़ा था। बस एक हलकी-सी आवाज उसके गले से निकली और फिर मौन छा गया था।

सरला की बड़ी-बड़ी काली आंखें दहशत के मारे फटी हुई थीं। उसके सीने पर हृदय के स्थान पर एक छोटा-सा सूराख साफ नजर आ रहा था, जिससे कुछ देर पहले ही खून बहना बंद हुआ था। मूल्यवान कालीन पर खून के बड़े-बड़े धब्बे साफ दिखायी दे रहे थे, पर डॉ. जगन को इसकी कोई परवाह न थी।

जगन एक बलिष्ठ एवं चतुर व्यक्ति था फिर भी उसे सरला की फटी-फटी आंखों से भय अनुभव हो रहा था, अतः उसने उसकी आंखें बंद कर दीं और फिर उसकी लाश को उठाकर कालीन पर रख दिया। ऐसा करते समय उसने सरला के खून से अपने कपड़ों को बचाये रखा था। कुछ देर तक जगन सोच में खोया रहा और फिर उसने रबर के गुदगुदे गद्दे पर से चादर हटायी। गद्दे पर चेनवाला खूबसूरत कवर चढ़ा हुआ था। उसने एक झटके से चेन खोल दी। सामने सौ-सौ के नोटों की खूबसूरत गड्डियां रखी हुई थीं। नोटों को देखकर जगन के होठों पर एक कुटिल मुसकराहट तैर गयी। उसे लगा, अब सारी समस्याओं का अंत हो जाएगा। उसने जल्दी से सब नोट ब्रीफकेस में भरे और कुछ आवश्यक वस्तुएं भी ले लीं। सूटकेस उसने जानबूझ कर नहीं लिया।

फिर उसने जल्दी से कपड़े बदले और ब्रीफकेस उठाकर कमरे से बाहर जाने लगा। जाते-जाते उसने सरला पर नजर डाली और मुसकराकर व्यंग्यात्मक स्वर में कहा, "अब तुम बड़े आराम

से सोती रहो। मुझे विश्वास है कि दो घंटे तक कोई तुम्हारे आराम में हस्तक्षेप नहीं करेगा।"

हॉल में आकर उसने दीवारघड़ी की ओर देखा। सात बजकर, चालीस मिनट हुए थे। जगन और सरला दोनों ही समय की पाबंदी के कारण खासे प्रसिद्ध थे। उन्होंने हर बात का टाइम-टेबल बना रखा था। मजाल है कि कुछ मिनट भी इधर-से-उधर हो जाएं। आज तो जगन के लिए समय की पाबंदी बेहद जरूरी थी ताकि किसी को संदेह न होने पाये: एक-एक मिनट और एक-एक सेकंड देख-भाल कर व्यय करना था। जगन ने रसोई-घर में प्रवेश किया तो रसोईघर की घड़ी सात बजकर, बयालीस मिनट की घोषणा कर रही थी। उसने पांच टोस्ट लिये और मुसकराकर तीन टोस्ट नित्य के अनुसार सरला के लिए रख दिये। तीन अंडों में से एक अंडा फ्राई किया। जब वह नाश्ता कर उठा तो फिर उसने घड़ी की ओर देखा। सात बजकर, अड़तालीस मिनट हुए थे। बाहर से अखबार उठाने और 'लूसी' को अंदर बुलाने का समय हो चुका था। लूसी उसकी प्यारी बिल्ली थी, पर सरला को उससे जैसे जन्मजात बैर था। केवल उससे नहीं, वह जगन की हर चीज को घृणा से देखती थी, इसलिए वह लूसी को रात भर घर में प्रवेश न करने देती थी। जगन ने घर का मुख्यद्वार खोल-कर पुकारा, "लूसी! लूसी!!" और फिर अखबार उठाकर बगल [...] लिया। सहसा बराबर के मकान [...] वाजा खुला और जगन की पड़ोसिन [...] लूथरा बाहर आयीं। वे मुसकरा[...] बोलीं, "नमस्कार डॉक्टर साहब [...] आपने दो मिनट पहले ही लूसी को पु[...] क्या बात है?"

जगन का चेहरा एक क्षण [...] फीका पड़ गया, पर तुरंत ही [...] लते हुए मुसकराकर कहा, "नहीं [...] ठीक समय पर ही लूसी को पुकारा [...] मेरा विचार है कि आपकी घड़ी [...] समय बता रही होगी।"

श्रीमती लूथरा ने जगन की [...] पर नाक-भौं चढ़ायी और कहा, [...] होना असंभव है। मेरी आटोमेटिक [...] बिलकुल नयी है। रात ही मैंने उसे [...] से मिलाया है।"

जगन ने मुसकराकर कहा, [...] तो फिर संभव है कि मेरी ही घड़ी [...] चल रही हो।"

इतने में एक छोटी-सी सफेद [...] धीरे-से दुम हिलाती हुई जगन की [...] आयी और उसके कदमों में लोट[...] 'म्याऊं-म्याऊं' करने लगी।

जगन ने उसे गोद में बैठाकर [...] किया।

श्रीमती लूथरा चहककर बोलीं, [...] बिल्ली आपसे बहुत प्यार करती है [...]

जगन ने रिस्टवाच की ओर [...] सात बजकर, इक्यावन मिनट हुए [...]

उसने क्षमा मांगते हुए कहा, "क्षमा कीजिएगा मिसेज लूथरा! लूसी को दूध पिलाने का समय हो गया है।"

श्रीमती लूथरा ने स्वीकृति में सिर हिलाकर कहा, "कोई बात नहीं, समय की पाबंदी आपके लिए आवश्यक है।"

जगन पुनः रसोईघर में गया। उसने एक प्याली में दूध निकालकर लूसी को दिया। फिर जब वह ड्राइंग-रूम में आया तो टाइम पीस में सात बजकर, पचपन मिनट हुए थे।

सहसा फोन की घंटी बजी। जगन ने रिसीवर उठाकर कहा, "हैलो, मैं जगन बोल रहा हूं!"

दूसरी ओर से शहर के बदनाम जुआघर के मालिक यूनुस ने 'ही ही' करते हुए कहा, "नमस्कार, मैंने आपको जगा तो नहीं दिया?"

"तुम्हें मालूम नहीं कि इस समय मैं अखबार पढ़ा करता हूं," जगन ने क्रोध से कहा।

दूसरी ओर से कहकहे की आवाज आयी और फिर यूनुस ने कहा, "मैं अभी यही कह रहा था कि डॉ. जगन नींद लेने की बजाय नाश्ते के बाद अखबार पढ़ रहे होंगे, और सचमुच मेरी बात सच निकली।"

जगन ने कहकहा लगाकर कहा, "हां, तुम्हारा अनुमान ठीक निकला! तुम्हें तो पता है कि मैं समय का कितना पाबंद हूं। क्या तुम्हें रुपये मिल गये?"

दूसरी ओर से हंसी की आवाज आयी और फिर कहा गया, "बहुत-बहुत धन्यवाद। आशा है, काठमांडू में आपकी दो सप्ताहों की छुट्टियां मजे में बीतेंगी।"

जगन ने रिसीवर क्रेडल पर रख दिया और पास ही एक आरामदेह कुरसी

पर बैठकर सोचने लगा, 'अब थोड़ी देर ही की बात है। मैं आठ बजकर, दस मिनट पर घर से निकल जाऊंगा। साढ़े आठ बजे एयरपोर्ट पर पहुंचूंगा। आठ बजकर, पैंतालीस मिनट की उड़ान से काठमांडू चल दूंगा और जब पुलिस को सरला की लाश मिलेगी, उस समय तक मैं एक नया नाम अपनाकर यूरोप के किसी अन्य देश में पहुंच जाऊंगा।"

सहसा वह चौंक पड़ा। काल-बेल बज रही थी। जगन ने उठकर दरवाजा खोला। एक हंसमुख व्यक्ति हाथ में बहुत-से पैकेट उठाये खड़ा था। जगन को देखते ही वह बोला, "क्षमा कीजिएगा, क्या श्रीमती सरला जगन का मकान यही है?"

एक क्षण के लिए जगन घबरा गया, पर फिर हिम्मत कर बोला, "जी हां, फरमाइए ! क्या बात है?"

"कृपया उन्हें बुला दीजिए !"

जगन का चेहरा भय से पीला पड़ गया, पर उसने अपने होश-हवास ठीक करते हुए कहा, "बात वास्तव में यह है कि . . कि . . भई बात यह है कि . . वे अभी सो रही हैं और मैं उनको जगाकर नाराजगी मोल नहीं लेना चाहता। मुझसे कहो, क्या बात है?"

उस व्यक्ति ने जगन की ओर पैकेट बढ़ाते हुए कहा, "उन्होंने हमारी कंपनी को कुछ कास्मेटिक्स के आर्डर दिये थे। कृपया पचास रुपये दे दीजिए।"

जगन ने पैकेट ले लिये और दरवाजा बंदकर अंदर आ गया। ब्रीफकेस से सौ रुपये का नोट लेकर उसने फिर दरवाजा खोला। नोट उस व्यक्ति को देकर दरवाजा पुनः बंद कर मेज की ओर बढ़ा, जिस पर अखबार रखा हुआ था। अभी वह मेज के पास ही पहुंचा था कि काल-बेल फिर बजी। जगन ने वापस मुड़कर दरवाजा खोला। वही व्यक्ति खड़ा हुआ था। कुछ नोट उसने जगन की ओर बढ़ाते हुए कहा "आप सौ का नोट देकर भूल गये थे। लीजिए शेष रुपये।"

जगन फिर घबरा गया। उसने कहा, "अरे, मेरी स्मरणशक्ति भी कितनी कमजोर हो गयी है।"

और फिर उसने दरवाजा बंद कर दिया। संतोष की लंबी सांस लेकर उसने घड़ी देखी। आठ बजकर, दो मिनट हुए थे। हर काम समय के अनुसार हो रहा था। कुछ देर तक वह अखबार का अध्ययन करता रहा और जब वह घर से बाहर निकला तब आठ बजकर, दस मिनट हुए थे। बराबर में श्रीमती लूथरा अपने छोटे-से बगीचे में क्यारियां ठीक कर रही थीं। जगन को देखकर उसने रिस्टवाच पर नजर डाली और फिर खुरपे से जमीन को खोदते हुए कहा, "डॉ. जगन आप ठीक समय पर निकले हैं। लगता है कि आपकी घड़ी ठीक हो गयी है।"

जगन ने मुसकराकर कहा, "आप ठीक कह रही हैं श्रीमती लूथरा। क्षमा कीजिएगा, मुझे देर हो रही है। इसलिए मैं आपसे अधिक देर तक बातचीत नहीं कर सकता।"

और, कुछ देर बाद वह सांताक्रुज एयरपोर्ट पर यात्रियों के प्रतीक्षालय में बैठा हुआ एक पत्रिका पढ़ रहा था। पंद्रह मिनट बाद अनाउंसर ने यात्रियों को विमान में पहुंचने की सूचना की। जगन ब्रीफकेस उठाकर बड़े हॉल से होता हुआ रन-वे की ओर चल दिया। इस समय उसका
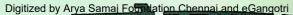
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिल बुरी तरह धड़क रहा था। अभी उसने आधा रास्ता ही तय किया था कि पीछे से आवाज आयी — "डॉक्टर जगन, ठहरिए !"

जगन को लगा, जैसे उसका दिल उछलकर गले में आ गया हो। उसने पीछे मुड़कर देखा। एक पुलिस इंस्पेक्टर कुछ सिपाहियों के साथ खड़ा था। उसने कहा, "डाक्टर जगन, खेद है कि आप काठमांडू की सैर का आनंद नहीं ले सकेंगे। मैं आपको श्रीमती जगन की हत्या के अभियोग में गिरफ्तार करता हूं।"

जगन का चेहरा सफेद हो गया। उसके हाथ से ब्रीफकेस छूट गया। उसे पुलिस इंस्पेक्टर ने उठा लिया और जगन के हाथों में हथकड़ी पहना दी। जगन ने विस्मय से पूछा, "किंतु आप कैसे कह रहे हैं कि मैं ही हत्यारा हूं!"

इंस्पेक्टर के होंठों पर व्यंग्यात्मक मुसकराहट उभरी और उसने कहा— "डॉ. जगन, इसमें कोई संदेह नहीं कि आपने बड़ी बुद्धिमत्ता का प्रमाण दिया है, किंतु अपराधी कितना ही चालाक क्यों न हो, एक-न-एक गलती कर ही जाता है। जिससे उसके अपराध से परदा उठ जाता है। सो, आपने भी यही किया। आपको शायद पता हो कि आपकी तरह आपकी पत्नी भी समय की बहुत पाबंद थीं और आपकी पड़ोसन श्रीमती लूथरा दूसरों के मामलों में हस्तक्षेप करने का शौक रखती हैं। यह हैं वे बातें जो आपकी गिरफ्तारी का कारण बनीं। अब गौर से सुनिए। जब आप आठ बजकर, दस मिनट पर दफ्तर चले जाते तब आपकी पत्नी आठ बजकर, बीस मिनट पर लूसी को उठाकर बिना नागा, ठीक समय पर बाहर फेंक देती थीं। आज जब नियम के प्रतिकूल आपकी प्रिय बिल्ली बाहर नहीं फेंकी गयी तब आपकी पड़ोसन को चिंता हुई और जब वे इसका कारण जानने आपके शयन-कक्ष में पहुंचीं तो वहां . . . "

पूर्णता के लिए

पानी से भरे घड़े के ऊपर रखी छोटी-सी कटोरी ने घड़े से शिकायत की, "तुम प्रत्येक बरतन को, जो तुम्हारे पास आता है, अपने शीतल जल से भर देते हो। किसी को भी खाली नहीं लौटाते, परंतु मुझे कभी नहीं भरते, जबकि मैं सदा तुम्हारे साथ रहती हूं। इतना पक्षपात तो तुम्हें शोभा नहीं देता !"

घड़े ने शांत स्वर में उत्तर दिया, "इसमें पक्षपात की कोई बात नहीं। अन्य सब बरतन मेरे पास आकर विनीत भाव से झुकते हैं, जिससे मैं उन्हें अपने शीतल जल से भर देता हूं; परंतु तुम तो गर्व में चूर, हमेशा मेरे सिर पर सवार रहती हो, इसीलिए मैं तुम्हें भर नहीं पाता। यदि तुम भी नम्रता से जरा झुकना सीखो तो तुम भी खाली नहीं रहोगी।"

एशिया के ही एक सुदूर देश में जिस समय धन के लालच में लोगों ने अनेक देवी-देवता बना लिये थे, सैकड़ों मूर्तियां स्थापित कर उन पर भेंट चढ़ाने की प्रथा पनप रही थी, उसी समय हजरत मोहम्मद साहब ने इन बंधनों से मुक्ति का मार्ग दिखाया और एकेश्वरवाद का पाठ पढ़ाया।

चिंतन-मनन के लिए वे एक खजूर के पेड़ के नीचे बैठते थे। कुछ समय बाद जब उन्होंने दूसरे स्थान के लिए प्रस्थान किया, तब उस पेड़ को कटवा दिया। लोगों ने असमंजस के साथ उनसे इसका कारण पूछा। उत्तर में उनके शब्द थे, "इसलिए कि मेरे उपदेशों की अपेक्षा लोग कहीं इस पेड़ को ही ईश्वर ... न पूजने लग जाएं।"

—अलीमुहम्मद ...

बंबई में आर्यसमाज-मंदिर के ... के लिए एक निधि शुरू की ... लोग उसमें यथाशक्ति दान दे ... एक मारवाड़ी सज्जन महर्षि ... के निकट आये और नम्रता से ... "स्वामीजी, मेरे पास दस हजार रुपये ... ये सारा रुपया मैं आर्य-समाज-... के कोश में समर्पित करता हूं। कृपया ... तुच्छ भेंट स्वीकार कीजिए।"

स्वामीजी ने उनकी भावना ... प्रशंसा करते हुए कहा, "मैं अतीव ... हूं कि आपके हृदय में इतना धर्मप्रेम ... परंतु मैं आपकी संपूर्ण पूंजी लेकर ... परिवार को परमुखापेक्षी नहीं ... चाहता। उस मंदिर की क्या शोभा ... जिसके बनने में आपका व्यापार ... जाए? हां, अधिक से अधिक ... हजार रुपया लिया जा सकता है।"

फर्रुखाबाद में कुछ लोग ... जिन्हें वहां के निवासी 'साधु' ... हैं। वे सभी काम-धंधा करके ... करते हैं और घरद्वारवाले होते ... उनके हाथ का भोजन ब्राह्मण, वैश्य ... खाते। एक दिन इन्हीं में से एक ... थाली में कढ़ी-भात परोसकर बड़ी ... से स्वामी दयानंदजी के लिए ...

स्वामीजी ने उस अन्न को प्रसन्नता से ग्रहण किया। इस पर ब्राह्मण लोग असंतोष प्रकट करते हुए कहने लगे, "स्वामीजी! आप तो भ्रष्ट हो गये।"

स्वामीजी ने हंसते हुए उत्तर दिया, "अन्न दो प्रकार से दूषित होता है—दूसरे को दुःख देकर प्राप्त किया जाए अथवा कोई मलिन वस्तु उसमें पड़ जाए। इन साधुओं का अन्न तो परिश्रम के पैसे का है, इसलिए पवित्र है।"—**कांतिलाल मोदी**

सिकंदर और उसके गुरु अरस्तू एक बार घने जंगलों में से होते हुए कहीं जा रहे थे। मार्ग में एक उफनता हुआ बरसाती नाला पड़ा। गुरु-शिष्य में इस बात को लेकर बहस होने लगी कि इस नाले को पहले कौन पार करे। सिकंदर इस बात पर अड़ा था कि नाला पहले वही पार करेगा। थोड़े विवाद के बाद अरस्तू ने सिकंदर की बात मान ली। पहले सिकंदर ने ही नाला पार किया, फिर अरस्तू ने।

पार पहुंचकर अरस्तू ने पूछा, "तुमने मेरी बेइज्जती नहीं की?"

सिकंदर ने घुटने टेक दिये और विनम्रता से बोला, "ऐसा करना मेरा कर्तव्य था, क्योंकि अरस्तू रहेगा तो हजारों सिकंदर तैयार हो सकते हैं, किंतु सिकंदर एक भी अरस्तू नहीं बना सकता!"

स्पेन में उन दिनों गृहयुद्ध छिड़ा हुआ था। फासिस्ट सेना ने मैड्रिड शहर पर घेरा डाल रखा था जिसके कारण नागरिकों का जीवन अस्त-व्यस्त हो गया था। सेना ने खेत भी जला दिये थे, इसलिए घोर अन्न-संकट पैदा हो गया था।

सेनापति ने लोगों की सहानुभूति प्राप्त करने के लिए हवाईजहाज से डबलरोटियां गिराने का आदेश दिया। रोटियों के लिए कुत्तों और आदमियों में

छीना-झपटी होने लगी, किंतु बच्चों पर इसकी प्रतिक्रिया उलटी ही हुई। उन्होंने रोटियां जमाकर पुलिस-थाने पहुंचा दीं। भूख से तड़पते बच्चों के स्वाभिमान और उनकी त्याग-भावना से बड़े लोग गर्व से झूम उठे। दूसरे दिन सभी रोटियां कागजों में लपेटकर फासिस्टों की खंदकों में फेंक दी गयीं। जिन कागजों में उन्हें लपेटा गया था, उन पर लिखा था—"**मैड्रिड को फासिस्टी रोटियों से नहीं जीता जा सकता। हमारी भूख हमारे देश-प्रेम और सम्मान से बड़ी नहीं है।**" —कमला

● प्रकाश

अदालत वह जगह है जहां मुकदमों की वीरानियां होती हैं। दो फलते-फूलते घर आपस की मुकदमेबाजी से धीरे-धीरे उजड़ते रहते हैं। वहां हत्या होने पर एक घर उजड़ा हुआ आता है, और दूसरा उजड़ने के लिए प्रतीक्षारत होता है! अदालत के कमरे के अंदर गर्द होती है, संजीदगी होती है; कसा हुआ वातावरण होता है। वहां लोगों के अंदर तनाव, जद्दोजहद और मुकदमे के फैसले की चिंता में दिन-दिन मरता-बुझता मन-मस्तिष्क होता है। लेकिन जिजीविषा से भरा इनसान जहां भी रहेगा, हंसेगा-हंसाएगा। अदालतों में भी ऐसा होता है। वकील या जजों के मुंह से कुछ बातें ऐसी निकल जाती हैं कि हंसी छूट ही जाती है।

एक बार इलाहाबाद हाईकोर्ट में दो वकीलों के बीच जोरों की बहस चल रही थी। एक वकील साधारण शरीर के थे, दूसरे बहुत मोटे—इतने मोटे कि कुरसी में

फंस जाते थे। बहस के बाद ... पूछा, "क्यों मिस्टर बनर्जी, इस ... आपको कोई एतराज है?" ... नहीं बोले। जज ने एक बार और ... फिर भी उनकी ओर से कोई आवाज ... आयी। जज ने स्टेनो को डिक्टेशन ... शुरू कर दिया। जब वे दस-बारह ... बोल चुके तब बनर्जी महोदय की ... सुनायी पड़ी, "माई लार्ड, मुझे इन ... पर एतराज है।" जज ने पूछा, "... आपसे एतराज जाहिर करने की ... थी तब आप कहां थे?"

साधारण शरीरवाले वकील ने ... से जड़ दिया, "माई लार्ड, ये ... कुरसी से छुटकारा पाने में लगे हु..."

फैसले तक ...

जुडीशियल कमिश्नर एम. ए. ... मुकदमों को बहुत धीरे-धीरे ... थे और उनकी अदालत से मुकद... फैसले होने में वर्षों लग जाते थे। ... उन्हीं की अदालत में नबीउल्लाह ... एक हिंदू विधवा की तरफ से बहस ...

खड़े हुए । उसका बयान पढ़ते हुए उन्होंने कहा, "हुजूरेवाला, मैं एक बूढ़ी हिंदू बेवा हूं . . ." इवांस साहब ने ताज्जुब से पूछा, "मिस्टर नबीउल्लाह, क्या आपको यकीन है कि इस केस के लिए आपकी उम्र, आपका धर्म, और सेक्स नहीं बदल गया ?" नबीउल्लाह साहब कब चूकने वाले थे ! उन्होंने जड़ दिया, "हुजूरेवाला, मैं दूसरे परिवर्तनों के बारे में तो नहीं जानता, हां इतना यकीन जरूर है कि जब तक इस मुकदमे का फैसला होगा, मैं उम्र में बूढ़ा जरूर हो जाऊंगा !"

काबलियत का मेहनताना

सर वजीर हसन साहब एक ताल्लुकेदार के मुकदमे की सुनवाई के लिए जज की कुरसी पर बैठे थे। सर तेजबहादुर सप्रू बहस कर रहे थे। बहस के बीच सर वजीर ने उनसे कहा, "सर तेज, इस मुकदमे में आपको तीन हजार रुपया प्रत्येक दिन के लिए मिलता है, जब कि मुझे केवल सौ रुपये मिलते हैं !"

"माई लार्ड, इसका कारण हमारे बीच केवल तीन फुट की दूरी है। आप बीच के जंगले को पार कर इधर चले आइए और तीन हजार रुपया रोज कमाने लगिए।"

उसी अदालत में एक बार एम. ए. जिन्ना बहस करने के लिए खड़े हुए । वे अपनी बहस शुरू ही करनेवाले थे कि सर वजीर ने वही सवाल उनसे भी कर दिया। जिन्ना ने उत्तर दिया, "हुजूर, मेहनताना काबलियत के मुताबिक ही मिलता है !"

झूठ की उम्र क्या ?

अदालत में बहस करते हुए वकील साहब कई बार यह कह चुके थे कि गवाह के बुढ़ापे को देखते हुए यह कतई नहीं समझा जा सकता कि वह झूठ भी बोल सकता है, क्योंकि बुढ़ापे में जब आदमी अपने को मौत के निकट महसूस करता है तब सारे छल-कपट छोड़कर सचाई को अपनाता है। यह तर्क सुनकर न्यायमूर्ति वॉल्श पूछ बैठे, "किस उम्र में पहुंचकर आदमी झूठ बोलना छोड़ देता है ?" वकील ने जवाब दिया, "सर ! मैं समझता हूं लगभग साठ साल का होने पर।" यह जवाब सुनकर न्यायमूर्ति वॉल्श तो चुप हो गये, लेकिन उन्हीं के साथ बैठे न्यायमूर्ति पीव्स ने पूछ ही लिया, "क्या

आप यह कहना चाहते हैं कि जब हाई-कोर्ट के जज रिटायर होने लगते हैं?" वकील ने विनम्र होकर सिर झुकाया और कहा, "सर, सचाई कुछ इसी तरह है।"

एक-एक करके

गरमियों के दिनों में भी अदालत में बड़ी ठंडक थी। चारों तरफ खस की टट्टियां लगी थीं। दस बजते ही दोनों जज आकर बैठ गये। बहस शुरू हुई। पियारेलाल बनर्जी बहस कर रहे थे। उन्होंने देखा एक जज झपकी ले रहा है।

थोड़ी देर बाद उन्होंने देखा, दूसरे जज ने भी सोना शुरू कर दिया। बनर्जी महोदय बहुत ऊंची आवाज में बोले, "माई लार्ड्स, माई लार्ड्स!" दोनों जज जाग गये और पूछा, "क्या बात है?" बनर्जी ने निवेदन किया, "एक-एक करके, माई लार्ड, एक-एक करके!"

गलत भी हो सकता हूं

एक बार अपनी बहस के दौरान पंडित मोतीलाल नेहरू एक बात को समझाने के लिए उसे दोहरा-तेहरा रहे थे। जज ने बीच में कई बार उनसे कहा, "आगे बढ़िए।" लेकिन शायद मोतीलालजी उसके कहने के बावजूद यह समझ रहे थे कि बात अभी साफ नहीं हो पायी है। उन्होंने उसी बात को फिर दोहराया। जज ने खीझकर कहा, "मिस्टर नेहरू, क्या आप समझते हैं मैं बेवकूफ हूं?" पंडितजी ने उत्तर दिया, "कतई नहीं, माई लार्ड; लेकिन मैं गलत भी हो सकता हूं।"

बांदी या स्टेपनी!

एक बार सर तेज बहादुर सप्रू एक रजवाड़े के मुकदमे में बहस कर रहे थे। बहस के दौरान 'बांदी' शब्द कई बार आया। सुनवाई अंगरेज जज कर रहे थे।

उन्होंने पूछा, "'बांदी' शब्द के क्या माने होते हैं?" सर तेज ने समझाया, "माई लार्ड, राजाओं के वैवाहिक जीवन की जो मोटर गाड़ी होती है, यह बांदी उसी की स्टेपनी होती है।"

तेज औरतें, धीमे घोड़े

एक रजवाड़े के मुकदमे में सर रासबिहारी घोष बहस कर रहे थे। वे उस राजा की ओर से बहस कर रहे थे जिसने सारी दौलत उड़ा डाली थी। जज ने पूछा, "इतनी बड़ी रियासत चली कहां गयी?"

घोष बाबू ने समझाया, "तेज औरतों और धीमे घोड़ों के पास!"

बुरा मान गये?

सर वजीर हसन की जरा-सी गणित की भूल पर जस्टिस बेनेट ने कटाक्ष किया, "जब मैं हिंदुस्तान आया तब मुझे यह नहीं मालूम था कि यहां के वकीलों को मुझे प्रारंभिक गणित भी पढ़ाना पड़ेगा!"

सर वजीर ने तुरंत जवाब दिया, "हम वकील तो आपको कानून की जरा-जरा-सी बातें समझाते हैं और हुजूर जरा-सा गणित ठीक करने में बुरा मान गये!"

—३५६, डॉ. बायम रोड, रेल बाजार, कानपुर-४

कैरेबियन द्वीपसमूह के युवा मेहमान

● **श्रीशचन्द्र मिश्र**

वेस्ट इंडीज की क्रिकेट-टीम अपनी पिछली पराजय का बदला लेने आ चुकी है। केवल प्रथम मैच का परिणाम देखकर श्रृंखला के अन्य चार मैचों के बारे में निश्चित मत नहीं बनाया जा सकता। वेस्ट इंडीज की इस टीम में अधिकांश खिलाड़ी यद्यपि युवा हैं, पर अनुमान लगा

एवं कालीचरण-जैसे युवा खि... है। कालीचरण और रो ने दो वर्षों... वधि में ही न्यूजीलैंड, आस्ट्रेलिया ... के कुशलतम गेंदबाजों की बखिया ... है। इसके विपरीत इंगलैंड में तेज ... के आगे भारतीय बल्लेबाजों की ... की मूलभूत कमजोरी पूरी तरह ... सामने आ गयी है। अब यदि ... वेस्ट इंडीज पर विजय प्राप्त करनी ... उसके बल्लेबाजों को जमकर खेलना ...

लेना कि टीम कमजोर है, भ्रामक होगा।

भारत के धीमे पिचों पर वेस्ट इंडीज के तेज गेंदबाज सफल नहीं हो पाएंगे, ऐसा कुछ समीक्षकों का मत है। १९७४ के आरंभिक महीनों में इंगलैंड के विरुद्ध वेस्ट इंडीज के बल्लेबाजों की सफलता देखते हुए भारत के मुकाबले वेस्ट इंडीज के बल्लेबाजों का स्तर अधिक ऊंचा लगता है। इंगलैंड के विरुद्ध वेस्ट इंडीज ने दो बार पांच-पांच सौ से अधिक रन संख्या बनायी और इन बड़े-बड़े स्कोरों तक पहुंचाने का श्रेय मुख्य रूप से फ्रेडरिक्स, लारेंस रो

भारत के विरुद्ध पांच टेस्ट मैच ... वाली वेस्ट इंडीज की टीम की घोषणा ... दी गयी है। श्रृंखला शुरू होने से पांच ... पूर्व ही वेस्ट इंडीज की टीम की ... से भारत को निश्चित रूप से आ... है, क्योंकि हमारे यहां तो ओलंपिक ... भी दल का चयन एक मास पूर्व कि... है। वेस्ट इंडीज की टीम का यह ... भारतीय भ्रमण है। इससे पूर्व १९... ४९ में, १९५८-५९ में एवं १९... में वेस्ट इंडीज की टीम भारत आ... १९६६-६७ में वेस्ट इंडीज की टीम ... कार...

कप्तान गैरी सोबर्स थे। वेस्ट इंडीज की टीम उस समय विश्वविजेता का अनौपचारिक खिताब पा चुकी थी, अतः उसने बिना कड़े प्रतिरोध के भारत को तीन टेस्ट-मैचों की शृंखला में २-० से हरा दिया।

इस बार टीम की बागडोर तीस वर्षीय क्लाइव लॉयड को सौंपी गयी है। लॉयड इससे पूर्व सफल उप-कप्तान रह चुके हैं। वेस्ट इंडीज की टीम के घोषित खिलाड़ियों के नाम इस प्रकार हैं—क्लाइव लॉयड (कप्तान), लियोनार्ड बेचन, लांस गिब्स, रॉय फ्रेडरिक्स एवं एलविन कालीचरण (गुआना), गोर्डन ग्रीनिज, कीथ बायस, एलबर्ट पैडमोर, वैनबर्न होल्डर (बारबडोस डेरिक मुरे (उप-कप्तान एवं विकेटकीपर); बर्नार्ड जूलियन (त्रिनिदाद), आर्थर ग्रैरेट, लारेंस रो (जमैका), विवियन रिचर्ड्स एवं एडी राबर्ट्स (एंटिगुआ) और इलेक्यूमेडो विलेट (नेविस)।

टीम के सबसे अनुभवी खिलाड़ी कप्तान लॉयड के चचेरे भाई लांस गिब्स हैं। बारबडोस के प्रारंभिक बल्लेबाज गोर्डन ग्रीनिज, ऑफ स्पिनर एलबर्ट पैडमोर, गुआना के प्रारंभिक खिलाड़ी लियोनार्ड बेचन और एंटिगुआ के मध्य-क्रम के बल्लेबाज विवियन रिचर्ड्स को पहली बार वेस्ट इंडीज की टीम में शामिल किया गया है। घोषित टीम में पिछले कप्तानों—गैरी सोबर्स तथा रोहन कन्हाई और मॉरिस फॉस्टर एवं चार्ली डेविस के नाम न देखकर खेलप्रेमियों को आश्चर्य हुआ। कन्हाई को नेतृत्व तथा बल्लेबाजी में असफल होने के कारण टीम में स्थान नहीं दिया गया। चचा गैरी सोबर्स एवं भतीजे फॉस्टर ने व्यापारिक [illegible] से भारत आने में असमर्थ [illegible] अतः उन्हें टीम [illegible]

गैरी सोबर्स, जिन्होंने वेस्ट इंडीज टीम को विश्वविजेता के अनौपचारिक स्तर तक पहुंचाया, इस बार टीम में शामिल नहीं हैं।

वेस्ट इंडीज के भारत-भ्रमण का एक मनोरंजक पहलू यह है कि घोषित खिलाड़ियों में से दो लॉयड एवं गिब्स ही १९६६-६७ में भारत आये थे। यही नहीं,

घोषित खिलाड़ियों में से केवल लॉयड, बॉयस, गिब्स, फ्रेडरिक्स, होल्डर एवं बैरेट १९७१ में भारत के विरुद्ध खेले थे।

रोहन कन्हाई के स्थान पर कप्तान नियुक्त किये गये क्लाइव लॉयड का जन्म ३१ अगस्त, १९४४ को जार्जटाउन गुआना में हुआ था। अपने टेस्ट-जीवन की शुरुआत लॉयड ने १३ दिसंबर, १९६६ को बंबई में खेले गये प्रथम टेस्ट में की थी। उस टेस्ट मैच की दोनों पारियों में लॉयड ने क्रमशः ८२ एवं ७८ (आउट नहीं) रन बनाकर वेस्ट इंडीज को शानदार विजय दिलाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया। लॉयड ने पिछले आठ वर्षों में ३६ टेस्ट मैचों में अपने देश का प्रतिनिधित्व किया है। उन्होंने कुल २,२८२ रन बनाये हैं जिसमें पांच शानदार शतक हैं।

लांस गिब्स आज वेस्ट इंडीज के सर्वश्रेष्ठ स्पिनर माने जाते हैं। वे टीम के सबसे वरिष्ठ एवं अनुभवी खिलाड़ी हैं। खेलते हुए उन्हें डेढ़ दशक से ज्यादा हो चुका है लेकिन उनकी गेंद में अब भी वही घुमाव और पैनापन है। १९६२ में वेस्ट इंडीज में भारतीय खिलाड़ियों को पहली बार गिब्स की खतरनाक गेंदों का सामना करना पड़ा। तीसरे टेस्ट मैच में ब्रिजटाउन में गिब्स ने ३८ रन पर ८ विकेट लेकर विजय का मार्ग प्रशस्त किया था। गिब्स ने ६६१ टेस्ट मैचों में २९.०९ के औसत से २६४ विकेट ले लिये हैं। वेस्ट इंडीज में अब तक कोई गेंदबाज इतने विकेट नहीं ले पाया है।

१९७१ में भारत के विरुद्ध खेलनेवाले अन्य खिलाड़ी हैं कीथ बॉयस, राय फ्रेडरिक्स, वैनबर्न होल्डर एवं आर्थर बैरेट। कीथ बॉयस एक कुशल मीडियम पेसर हैं। वे अब तक केवल १२ टेस्ट खेल पाये हैं, जिनमें उन्होंने ४१ विकेट लिये हैं। वे बल्लेबाजी का दायित्व भली-भांति निभा सकते हैं। ३२ टेस्ट मैचों में फ्रेडरिक्स २,२८३ रन बना चुके हैं। एक पारी में उनकी सर्वाधिक रन संख्या १६३ है। वैनबर्न होल्डर

कालीचरण जिन्होंने इंगलैंड की टीम के छक्के छुड़ाये थे, पहली बार भारत के विरुद्ध खेलेंगे

एक कुशल राउंडर हैं, १६ टेस्ट मैचों में २९० रन बनाने के साथ-साथ उन्होंने ४० विकेट भी उखाड़े हैं। आर्थर बैरेट ने १९७१ में भारत के विरुद्ध दो टेस्ट मैच खेले थे। फिर लगभग तीन वर्ष के अंतराल के बाद उन्होंने वेस्ट इंडीज की टीम में प्रवेश पाया।

विभिन्न प्रकार
के
वाहनों
के लिये
जलवा
के
हार्नों
की श्रृंखला
Jalwa
KING
Jalwa
PRINCE
mini
Jalwa
Jalwa
JUNIOR
निर्माता:
जलवा ऑटो इलैक्ट्रिक
३/१५-ऐ, जवाहरमल मैनशन, आसफ अलीरोड
नई दिल्ली-११०००१
फोन : २६८३०९, २७०६३९
एकमात्र वितरक:
जलवा ऑटो स्टोर
एन-३३/८, कनॉट
नई दिल्ली-११०००१
फोन : ४०४९६
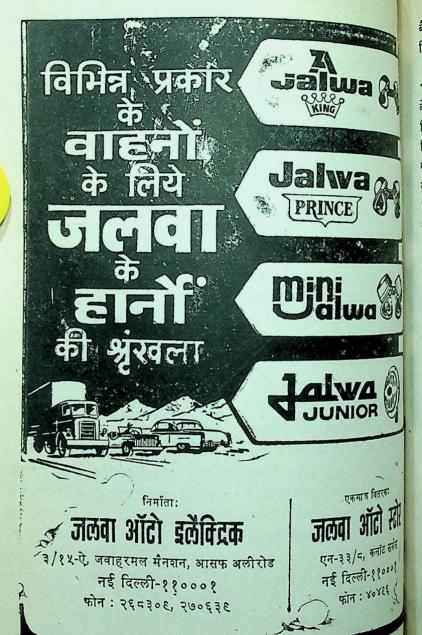
बैरेट ने ४ टेस्ट मैचों में अब तक ११ विकेट लिये हैं।

मुरे, कालीचरण, जूलियन, रो, रावर्ट्स, विलेट, पैडमोर, रिचर्ड्स, बेचन एवं ग्रीनिज पहली बार भारत के विरुद्ध टेस्ट मैच खेलेंगे। इनमें पैडमोर, रिचर्ड्स, बेचन एवं ग्रीनिज को टेस्ट मैच खेलने का कतई अनुभव नहीं है। ग्रीनिज और बेचन प्रारंभिक खिलाड़ी हैं जबकि रिचर्ड्स मध्यक्रम के बल्लेबाज हैं। पैडमोर ऑफ स्पिनर हैं। अन्य खिलाड़ियों को टेस्ट-मैच खेलने का थोड़ा बहुत अनुभव है। टीम के उप-कप्तान विकेट कीपर डेरिक-मुरे पहली बार भारत के विरुद्ध खेलेंगे। त्रिनिदाद के निवासी मुरे जितने अच्छे विकेटकीपर हैं, उतने अच्छे बल्लेबाज भी हैं। २२ टेस्ट मैचों में उन्होंने ५६७ रन बनाये हैं।

एलविन कालीचरण, बर्नार्ड जूलियन और लारेंस रो १९७२-१९७३ की एक वर्ष की अवधि में ही वेस्ट इंडीज के क्रिकेट जगत में तेजी से उभरे हैं। कालीचरण ने पहला टेस्ट न्यूजीलैंड के विरुद्ध १९७२ में जार्जटाउन में खेला था और उसी में उन्होंने शतक भी बनाया था। अगले टेस्ट में भी कालीचरण ने शतक लगाया। इसी वर्ष इंगलैंड के विरुद्ध कालीचरण ने दो शतक बनाये। १५ टेस्ट मैचों में कालीचरण १,१२२ रन बना चुके हैं। जूलियन का टेस्ट-कैरियर १९७३ में इंगलैंड के विरुद्ध शुरू हुआ था। केवल आठ टेस्ट मैचों में जूलियन ने तेईस विकेट लिये हैं और ३९२ रन बनायें हैं। कालीचरण की भांति रो ने भी टेस्ट-जीवन न्यूजीलैंड के विरुद्ध १९७२ में प्रारम्भ किया था। अंतर इतना है कि कालीचरण चौथे टेस्ट में पहली बार खेले थे जबकि रो ने पहले ही टेस्ट में अपना टेस्ट जीवन शुरू किया था। किंग्सटन में खेले गये पहले ही टेस्ट में रो ने पहली और दूसरी पारी में क्रमशः २१४ एवं १०० (आउट नहीं) रन बना डाले, लेकिन इसके बाद मानो रो रूपी ग्रह को ग्रहण लग गया। लेकिन रो ने अगले ही टेस्ट ब्रिजटाउन में सौ या दो सौ रन नहीं, बल्कि पूरे ३०२ रन बनाकर अपनी श्रेष्ठता सिद्ध की। इसके बाद तो रो को बांध सकना इंगलैंड के लिए मुश्किल हो गया। अंतिम टेस्ट में उन्होंने एक शतक जड़ दिया। रो ने बारह टेस्टों में १,२०० से अधिक रन बनाये हैं।

एडी रावर्ट्स को विश्व के प्रख्यात क्रिकेट-समीक्षकों ने विश्व का सबसे तेज गेंदबाज माना है। पहले यह सम्मान आस्ट्रेलिया के डेनिस लिली को प्राप्त था। एडी अब तक केवल एक टेस्ट मैच ही खेल पाये हैं, लेकिन इंगलैंड के काउंटी मैचों में इस वर्ष उन्होंने जो दहशत फैलायी है, उससे उन्हें काफी प्रसिद्धि मिली है। विलेट ने १९७३ में आस्ट्रेलिया के विरुद्ध पहला टेस्ट मैच खेला था। वे तीन टेस्ट मैचों में सात विकेट ले चुके हैं।

—५९१२, गली जट्ट मिस्सर, फाटक रशीदखां बल्लीमारान, दिल्ली-११०००७

एक दिन मुझे अपने न्यायालय में राजस्थान-सरकार के नियुक्ति-विभाग से एक विस्तृत आरोप-पत्र मिला। उसमें लिखा था कि कुछ वर्ष पूर्व जब मैं चित्तौड़गढ़ में डिप्टी कलक्टर था तब मैंने एक जागीरदार को जान-बूझकर मुआवजे की अधिक रकम दिला दी और आडिट द्वारा इस त्रुटि की ओर ध्यान आकर्षित कराने पर भी अधिक रकम की वसूली की कोई कार्यवाही नहीं की। इसका एकमात्र कारण मेरी बदनीयती बतलायी गयी।
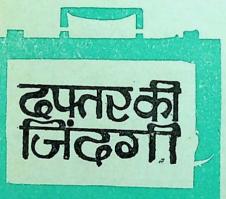
मैंने अविलंब विस्तृत स्पष्टीकरण प्रस्तुत किया कि 'मेरे द्वारा दी गयी आज्ञा न्यायिक थी और सरकारी वकील की उपस्थिति में पूरी बहस सुनकर दी गयी थी, और नियमानुसार संबंधित आज्ञा से मैंने सरकार को भी यथासमय अवगत करा दिया था। सरकार मेरी आज्ञा के विरुद्ध अपील कर सकती थी। दूसरे यह कि मैंने आडिट रिपोर्ट आने पर यथोचित कार्यवाही की थी। अपनी निष्पक्षता व ईमानदारी के संदर्भ में मैंने लगभग कलक्टरों की सूची भेज कर लिखा कि उनसे मेरे संबंध में पूछा जा सकता है, इत्यादि।'

बार-बार स्मरणपत्र देने पर भी उपर्युक्त स्पष्टीकरण का कोई उत्तर नहीं मिला। इसी अवधि में अधिकारियों की पदोन्नति पर विचार हुआ और उपर्युक्त आरोप-पत्र के कारण मेरी उपेक्षा कर दी गयी। एक दिन मैं अनायास सचिवालय पहुंचा और मैंने वहां संबंधित पत्रावली देखी तो ज्ञात हुआ कि क्षतिपूर्ति की दी गयी विवादग्रस्त आज्ञा मैंने नहीं, मेरे पूर्ववर्ती अधिकारी ने दी थी, और आडिट द्वारा आपत्ति किये जाने पर अधिक दी गयी रकम की वसूली के लिए मैंने नोटिस भी दिया था।

मैंने नये मुख्य सचिव को अर्द्धशासकीय पत्र लिखा तब कहीं वह आरोप-पत्र वापस लिया गया।

—सुरेन्द्रप्रसाद गर्ग, जयपुर

एक दिन हमारे विभाग में किसी महोत्सव का आयोजन था, जिसमें राजनीतिज्ञ, पत्रकार आदि को एक विषय पर विचार प्रकट करने के लिए आमंत्रित किया गया था। विभाग की तरफ से उस विषय पर बोलने का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ। पुरस्कार के कारण यह आयोजन प्रतियोगिता का रूप ले चुका था।

दिनों हमारे विभाग में आडिट चल रहा था। आडिटर से मेरी दोस्ती हो गयी थी, मैंने उनसे कहा कि वे मुझे दस रुपये पुरस्कार दे दें और वह राशि मैं उन्हें बाद में लौटा दूंगा। एक माला भी मैंने उन्हें दे दी। सौभाग्य से मेरी कविता जंच गयी। किंतु जब पुरस्कार-वितरण हुआ, तो मेरा नाम न सुनकर भी आडिटर महोदय ने दस रुपये का पुरस्कार दे दिया। बधाइयां मिलने लगीं। लोगों ने मुझे कंधों पर उठा लिया, मगर मुझे लगा कि मैं अपनी शवयात्रा देख रहा हूं। जब मुझे मालूम पड़ा कि पुरस्कार मुझे इसलिए नहीं दिया गया कि मैं सरकारी कर्मचारी था (उसी विभाग का) तब सचमुच मुझे अपना जीवन मृत्यु से बदतर लगने लगा।

—अशोक तिवारी, गड़ियाबंद (बिहार)

सचाई एवं परिश्रम से किये कार्य की शीघ्र फल-प्राप्ति के लिए सरकारी नौकरी को ठुकराकर किसी गैरसरकारी प्रतिष्ठान में काम करना उचित समझता था। मैं एक छोटे व्यापारिक प्रतिष्ठान में प्रविष्ट हुआ। ईमानदारी एवं कठोर परिश्रम का फल यह हुआ कि वेतन-वृद्धि की रफ्तार पद-वृद्धि की रफ्तार से पीछे हो गयी और मैं शीघ्र ही व्यवस्थापक बन गया। अपने सम्मान एवं प्रतिष्ठानाधिकारी की सुविधा का खयाल करते हुए अपनी पिछड़ी 'रफ्तार' को बढ़ाने की मैंने कभी कोशिश नहीं की। कमरतोड़ महंगाई में भी अपने को मौन रखा, लेकिन अधीनस्थ एक कर्मचारी ने वेतन-वृद्धि के लिए त्यागपत्र की धमकी दी और अधिकारी ने गुप्त रूप से उसकी वेतन-वृद्धि भी कर दी, पर अपने स्वभावानुसार मैं अब भी मौन हूं।

—महेन्द्रनाथ पाण्डेय, रोहतास

कलक्ट्रेट में ड्राफ्ट्समैन की सर्विस मिली। आत्मनिर्भरता के ऊंचे आदर्श तथा समाज में बराबरी पाने की उच्चाभिलाषा को लेकर सेवा करने का महत्त्वपूर्ण कदम इस छोटे और पिछड़े हुए क्षेत्र में उठाया था। पहले ही दिन घूरती नजरों से घबराकर चाहने लगी कि धरती फट जाए और मैं उसमें समा जाऊं।

जब आठ घंटे काम करके तथा सौ-डेढ़ सौ फुट ऊंचे स्थित दफ्तर से उतरते हुए बहुत थक जाती हूं तब लगता है कि नौकरी छोड़ दूं और अपनी पढ़ाई पूरी कर लूं, पर स्वाभिमान आगे आ जाता है और थोड़ा पैसों का लालच भी।

—सरोज, दतिया (म. प्र.)

इस स्तंभ के अंतर्गत चपरासी से लेकर मंत्री तक के संस्मरणों का स्वागत है। संस्मरण व्यक्तिगत हों और वे १५० शब्दों से अधिक नहीं होने चाहिए।

—संपादक

आज के जनतंत्रीय युग में हड़ताल का अधिकार महत्त्वपूर्ण अधिकार माना जाता है और इसलिए लगभग सभी जनतंत्रीय देशों में यह अधिकार जनता को प्राप्त है। वास्तव में हड़ताल करना असंतोष का प्रदर्शन मात्र है। मगर आजकल हड़तालें प्राय: राजनीतिक उद्देश्य की पूर्ति के लिए आयोजित की जाती हैं।

विश्व की सर्वप्रथम हड़ताल, आज से पांच हजार वर्ष पूर्व मिस्र में हुई थी। यह हड़ताल उन मजदूरों ने की थी, जो पिरामिड बनाने में लगे हुए थे। उन्होंने प्रबंधकों से मांग की थी कि उन्हें गेहूं के दलिये में डालने के लिए कुछ लहसुन दिया जाए। प्रबंधकों ने इस मांग की उपेक्षा की। इसलिए मजदूरों ने अपना कार्य बंद कर दिया। प्रबंधकों को झुकना पड़ा और विवश होकर मजदूरों की मांग माननी पड़ी।

इसी प्रकार भारत में पहली हड़ताल, लगभग डेढ़ सौ वर्ष पूर्व मई, १८२७ में कलकत्ता में हुई थी। यह हड़ताल क
अंगरेजों के विरुद्ध की थी। उन दिनों
अकसर पालकी ही में बैठकर आ
करते थे। पालकी ढोनेवाले
उड़िया कहार। यात्रा पूरी हो ज
प्राय: अंगरेज पूरा किराया नहीं चुका
कहार जब पूरे किराये की मांग करते
वे उन्हें डांट-डपटकर भगा देते।
कहार बड़े परेशान रहा करते थे।

एक संगठन बनाया और यह निर्णय लि
कि वे रवाना होने से पहले ही स
से अपना किराया ले लिया करेंगे। अं
ने यह सुना तो बहुत बिगड़े। क
पुलिस कमिश्नर ने कहारों के इस नि
के विरुद्ध कारवाई के रूप में उनके लि
लाइसेंस लेना और बिल्ला लगाना आ
श्यक घोषित कर दिया। कहारों ने
व्यवस्था को समाप्त करने की मांग
मगर अधिकारी अपनी जिद पर अड़े र
इस पर, कहारों ने २२ मई, १८२

काम करना बंद कर दिया। इस हड़ताल की सारे देश में बड़ी चर्चा हुई। उन दिनों सवारी के अधिक साधन भी उपलब्ध नहीं थे। इससे जनता को बहुत परेशानी हुई। अंगरेज भी इस हड़ताल पर बहुत क्रुद्ध थे। अधिकारियों ने कहारों पर काफी अत्याचार किये और उन्हें हड़ताल तोड़ने के लिए बाध्य किया। परिणाम हुआ कि अत्याचारों के आगे कहारों को झुकना पड़ा और चार दिन बाद ही यह हड़ताल टूट गयी। भले ही यह हड़ताल ऊपरी तौर से असफल रही, किंतु इससे मजदूरों को अपने संगठन का महत्त्व समझ में आ गया और अंगरेज भी उन्हें पूरा किराया चुकाने के मामले में सावधान रहने लगे।

विश्व में कई विचित्र हड़तालें भी हो चुकी हैं। १८३७ में, इंगलैंड के दो पुलिस अधिकारियों ने इस बात पर हड़ताल कर दी कि वे आपस में इस बात का फैसला न कर सके कि एक विशेष अपराधी को मृत्युदंड देने का उत्तरदायित्व किस पर है? इस हड़ताल के कारण अपराधी का मृत्युदंड स्थगित होता रहा। मामला विभाग के उच्च अधिकारियों के पास पहुंचा। उन्होंने अधिकारियों के अलग-अलग कार्यक्षेत्र की व्याख्या कर दी। साथ ही उस अपराधी के अतिरिक्त, उनमें से एक पुलिस अधिकारी को भी मृत्युदंड दिया गया क्योंकि उच्च अधिकारियों के अनुसार उस अधिकारी ने हड़ताल करके अनुशासन भंग किया था।

इसी प्रकार एक अत्यंत मनोरंजक हड़ताल सन १९५२ में इटली में हुई थी। वहां पर त्रिवागिया नाम के एक गांव के नागरिकों ने महंगाई के विरुद्ध अपनी भावनाएं व्यक्त करने के लिए यह निश्चय
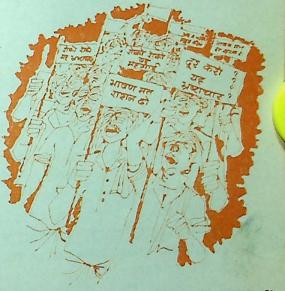
किया कि अब उस गांव में कोई बच्चा नहीं पैदा किया जाएगा। यह हड़ताल लगातार तेरह माह तक चलती रही। इसके बाद अचानक एक परिवार में बच्चा पैदा हो गया। इस समय तक गांव के निवासी भी अपनी इस हड़ताल से काफी तंग आ चुके थे। पादरी और प्रशासन के अधिकारी भी हड़ताल तोड़ने के लिए गांववालों पर

काफी दबाव डाल रहे थे। परिणाम यह हुआ कि जब उस परिवार में बच्चा उत्पन्न हुआ तब उसका विरोध करने के स्थान पर उन्होंने उसे शुभ माना, और इस तरह हड़ताल अपने-आप समाप्त हो गयी।

अमरीका की एक हड़ताल काफी प्रसिद्ध है। वहां एक फैक्टरी का मालिक किसी पर-स्त्री के प्रेम-पाश में बंध गया और उस पर वह काफी धन खर्च करने लगा। मामले की जानकारी जब उसकी पत्नी के पास पहुंची तब उसने इस बात के लिए पति का सख्त विरोध किया। पति ने इस विरोध की तरफ कोई ध्यान नहीं दिया। तब पत्नी फैक्टरी के मजदूरों के पास पहुंची और उन्हें हड़ताल के लिए उकसाया। उसका तर्क था कि जब फैक्टरी-मालिक अपनी अय्याशी के लिए इतना धन नष्ट कर सकता है तब वह मजदूरों का वेतन भी बढ़ा सकता है। मजदूरों ने हड़ताल कर दी। फैक्टरी-मालिक की पत्नी ने उनका नेतृत्व किया। परिणाम यह हुआ कि कुछ दिनों की हड़ताल के बाद, फैक्टरी-मालिक को मजदूरों का वेतन बढ़ाना पड़ा, लेकिन साथ ही उसने पत्नी को तलाक दे दिया।

पुराने समय में होनेवाली हड़तालों और आजकल की हड़तालों में कोई विशेष अंतर नहीं आया है। तब भी छोटी-छोटी बातों को लेकर हड़ताल हो जाया करती थी और आजकल भी प्रायः बिना किसी महत्त्वपूर्ण कारण के हड़ताल कर दी जाती है जिससे उत्पादन और वितरण-व्यवस्था

कबीर का लोटा

प्रातःकाल के समय लोग गंगा-स्नान कर रहे थे। पानी काफी गहरा था। अतः कुछ ब्राह्मणों को जल में घुसकर स्नान करने का साहस नहीं हो रहा था। एक किनारे पर संत कबीर स्नान कर रहे थे। उन्होंने अपना लोटा मांज-धोकर एक व्यक्ति को दिया और कहा कि जाओ ब्राह्मणों को दे आओ ताकि वे भी सुविधा से स्नान कर लें।

कबीर का लोटा देखकर ब्राह्मण चिल्ला उठे, "अरे जुलाहे के लोटे को दूर रखो! इससे स्नान करके तो हम अपवित्र हो जाएंगे।"

"इस लोटे को कई बार मिट्टी से मांजा और गंगाजल से धोया, फिर भी साफ न हुआ, तो दुर्भावनाओं से भरा यह मानव-शरीर गंगाजी में स्नान करने से कैसे पवित्र होगा?" कबीर बोल पड़े।

पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है। इस हानि की आशंका को टालने के लिए ही, जापान में अधिकतर हड़तालें कार्यालयों का समय समाप्त हो जाने के बाद आयोजित की जाती हैं। जनतंत्र में अपना उत्तरदायित्व समझते हुए कर्मचारी हड़ताल के मामले में जापान का अनुकरण करें तो समस्याएं सहज ही सुलझ सकती हैं।

—राजकीय कालेज, दौसा (राजस्थान)

कालेज के कम्पाउंड से

मैंने और मेरे बड़े भाई ने एल. एल. बी. (प्रीवियस) में हाल ही में ऐडमीशन लिया था। पहले दिन ही अपने लंबे-चौड़े डील-डौल की बदौलत भाई लोगों से 'बास' और 'दादा' उपाधियों से भूषित होकर अंदर गयी। अंतिम घंटा खत्म होते ही मैं भाई साहब के साथ-साथ चल दी। तभी पीछे से आवाज आयी—"अरे वाह, आपका तो आते ही एनगेजमेंट, हो गया!" मैं उन्हें क्या उत्तर देती कि जनाब जिससे एनगेजमेंट करवा रहे हैं, वे मेरे सगे भाई हैं। शायद एक-दो दिन में उन्हें वास्तविकता ज्ञात हो गयी, क्योंकि चौथे दिन ही आगे की सीट से फिर आवाज आयी—"अरे साहब, कभी-कभी समझने में भूल हो ही जाती है!"

मैंने भी तुरंत अपनी सहपाठिनी को कुहनी मारकर कह दिया—"अरे साहब, देर आयद, दुरुस्त आयद!

—पुष्पवल्लरी पाण्डेय, एम. एल. बी. कालेज, लश्कर (ग्वालियर)

सितंबर '७३ में विद्यालय छात्र... के चुनाव हो रहे थे। अपना ... इंचार्ज होने के कारण मुझे अत्यंत ... करना पड़ रहा था। परिणामस्वरूप ... जोरी के कारण चुनाववाले दिन ... विद्यालय में साथियों से बातचीत के ... बेहोश हो गिर पड़ा और संध्या तक ... होश में आ पाया। होश में आने पर ... ज्ञात हुआ कि हमारे सभी साथी विजयी हुए हैं, बधाइयों का तांता लग ... तभी कुछ साथी कहने लगे, "आज तु... इस बेहोशी के नाटक ने लाज रख ली ... मैंने उन्हें समझाया कि यह नाटक नहीं ... परंतु कोई भी मानने को तैयार नहीं ... पर जब मेरा अभिन्न मित्र 'रवि' ... छात्रसंघ का नव-निर्वाचित अध्यक्ष ... मुझे इस नाटक के लिए बधाई देने आ ... तब मैंने सिर धुन लिया।

—रजनीकान्त मुद्गल, लाजपतराय ... विद्यालय, साहिबाबाद (गाजियाबाद)

बी. ए. (द्वितीय वर्ष) की कक्षाएं ... लगतीं थीं। प्रायः हीरो-स्टाइल ... छात्राओं को तंग करते थे। एक दिन ... विज्ञान के प्रोफेसर रंजीतसिंहजी ने ... ए. प्रथम वर्ष और द्वितीय वर्ष की ... कक्षाएं लीं। छात्रों की संख्या बड़ी ... अतः हम छात्राओं की शामत थी। ... बजने में दस मिनट की देर थी, पर ... हम लोगों की ओर मुखातिब हुए और ... "आप लोगों की पढ़ाई समाप्त! आप ...

नीचे चली जाइए।" छात्र वर्ग कुछ बेचैन हुआ तो 'सर' ने बड़ी गंभीरता से कहा, "आप लोगों को एक बात बतानी है। छात्राएं चली जाएं तो बताऊंगा।" सभी छात्रों के चेहरों पर उपहासास्पद मुसकानें तैरने लगीं। हम चुपचाप नीचे चली गयीं।

बाद में पता लगा, सीढ़ियों पर टकराहट से बचाव के लिए 'सर' ने बहाना बनाकर छात्रों को रोका था।

--मुकुलरानी त्रिपाठी, एम. ए. (पूर्वार्द्ध)
साकेत महाविद्यालय, फैजाबाद

लगे। मुझे भी हंसी आ गयी। अब वे छात्रा का पीछा छोड़ मेरे पास आकर कहने लगे, "क्यों साहब, आप क्यों मुसकराये?"

मैंने जवाब दिया, "मौसम ही ऐसा है!" उन्होंने शायद मुझे नया विद्यार्थी समझकर रोब से पूछा, "क्या आप ऐडमीशन लेने आये हैं?" मेरे 'हां' कहने पर एक छात्र ने अन्य दोनों की तरफ देखकर चुटकी लेते कहा, "देखिए, ये साहब बुढ़ापे में यहां प्री-यूनीवर्सिटी में ऐडमीशन लेने आये हैं।" फिर उन सज्जन ने अकड़ते हुए मेरा परिचय जानना चाहा। मैंने जब बताया कि इसी

बायें से: पुष्पवल्लरी पाण्डेय, आर. डी. शर्मा, मुकुल रानी त्रिपाठी, रजनीकांत मुद्गल
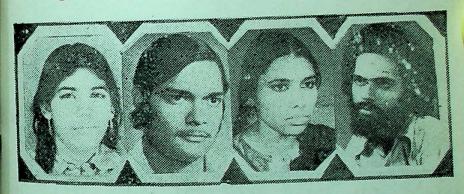
विश्वविद्यालय में प्रवेश लेनेवालों की काफी भीड़ थी। मैं लेखा-विभाग में प्रवेश-शुल्क जमा करने के लिए पर्ची देकर बैठा था। इसी बीच तीन पुराने छात्र बरामदे में एक छात्रा के पीछे-पीछे उसका ध्यान आकर्षित करने के लिए जोर से आवाजें लगाते गुजरे। छात्रा ने घबराकर पीछे देखा तो वे लोग हंसने

विश्वविद्यालय से मैंने आनर्स सहित इंजीनियरिंग की डिग्री ली है, और यहां एम. एस-सी. इंजीनियरिंग में ऐडमीशन के लिए आया हूं। फिर तो उनके चेहरे देखने लायक थे।

—आर. डी. शर्मा, जाकिर हुसेन इंजीनियरिंग कालेज, मुस्लिम विश्वविद्यालय, अलीगढ़

केशराशि

बिखेर दी तुमने
केशराशि अपनी पीठ पर
जैसे—
आमंत्रण हो यह
चंदा के आने का
सूरज के जाने का

स्मृति

मन के कमरे में भटकते-भटकते
तुम्हारी स्मृति आयी
जैसे कोई किरायेदार
खाली मकान पा जाए
मिन्नतें कर
सहमा-सहमा
बस जाए

पुराने दोहे : नया संदर्भ

जहां झूठ तहं लूट है
जहां सत्य तहं कष्ट
जहां लोभ तहं लाभ है
लोकतंत्र यह भ्रष्ट
कार नयी बंगला नया
मनुआं बेपरवाह
नये-नये परमिट मिलें
सोई शाहंशाह
काम उसी का कीजिए
जिससे मतलब होय
काला धन भी अति बढ़े
बंगला मोटर दोय

—श्याममोहन दुबे

जीवन

तीन पायदानों की एक सीढ़ी
जिन्हें चढ़ते-चढ़ते
समाप्त हो जाती है
मनुष्यों की पीढ़ी-दर-पीढ़ी

—शशि तिवारी

चंद प्रतिक्रियाएं

सात रंगों का बना करके धनुष
ढक लिया आकाश ने सारा कलुष
सोचता हूं देखकर इतना वसंत
कब बहारों का भला आएगा अंत

धूप में अटके हुए दो-चार कण
भोग पाएंगे नहीं अभिसार-क्षण

दो-एक पत्ते सड़क के किनारे
चुपचाप लगते हैं कितने बेचारे

झांकना खिड़की से दोपहर में
और उबा देता है इस शहर में

—विकास राय

महंगाई

पच्चीस वर्ष पहले मरा हुआ आदमी
अगर आज जीवित हो जाए
तो महंगाई देखकर कहेगा—
मैं पुनः मर जाऊं लेकिन इतना महंगा
गेहूं कभी न खाऊं

—दशरथपाल 'सागर'

प्रवेश
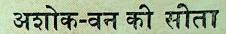
अशोक-वन की सीता

ओ अयाची मन की सीता
कामनाओं की पंचवटी में
फिर कोई तृष्णा, कनक-मृग बन
न जाए छल तुझे
तेरी आस्था को

बात मेरी सुन
अब न कोई राम साधेगा लक्ष्य उस मृग पर
अब नहीं कोई गीध जटायु-सा
जो कनक काया पर तुम्हारी
पाप की छाया न पड़ पाये

इसी कारण
स्वयं को विसर्जित कर दे
तू रहेगी निर्वसित ही, सिंधु-पार
अशोक-वन में
बाट तकते युग मिटेंगे
किंतु
नहीं आएगा कोई हनुमान-सा संबल
तुझे धीरज बंधाने
इसलिए ओ मन, बात मेरी सुन ! न बुन सपने
कनक-मृग यह, मृग नहीं, छल है

—नमिता तिवारी

जन्म : १ जुलाई १९५३,
शिक्षा : एम. ए. (हिंदी)
(संप्रति राजनीतिशास्त्र में अध्ययनरत)

"आसपास फैली सामाजिक विसंगतियों के प्रति विद्रोह-भावना की अभिव्यक्ति कविताओं तथा कहानियों के माध्यम से होती रही है। कभी किसी के आगे किसी भी रूप में हाथ फैलाकर अपमानित नहीं हुई हूं, किंतु किसी-न-किसी माध्यम से समाज की सड़ांध को थोड़ा-सा कम करके ताजी हवा का एक झोंका ही महसूस करने को बेकल हूं।"

बीमादारों के लाभ के लिए

पत्ते के हेरफेर की सूचना निगम को दीजिए।
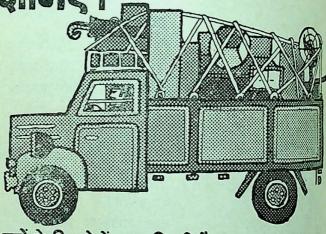
इससे दावों के निपटारे में मदद मिलती है

जीवन बीमे के कई दावों का निपटारा इसलिए नहीं होता या उसमें देरी इसलिए लगती है कि बीमेदार अपने दिये हुए पते पर नहीं पाये जाते। अतः यह आपके हित में है कि आप अपने परिवर्तित पते की सूचना तत्काल निगम के कार्यालय को दे दें।

दावे के शीघ्र निपटारे के लिए कृपया इन कदमों को उठाइए • अपने वारिसों का नाम तुरन्त दर्ज करा लीजिए • अपनी आयु का प्रमाण-पत्र भेजकर पालिसी पर आयु प्रमाणित करा लीजिए • प्रीमियमों का भुगतान समय पर और सही कार्यालय में कीजिए।

जिससे आप ने बीमा पालिसी ली थी उसी जीवन बीमा एजेंट से सहायता लीजिए या निगम के निकटतम कार्यालय से सम्पर्क प्रस्थापित करके यकीन कर लीजिए कि आपकी पालिसी पूर्ण रूप से चालू है या नहीं।

लाइफ इन्श्योरेन्स कारपोरेशन आफ इण्डिया

पिछले अंक में प्रख्यात हस्तरेखाविद प्रो. पी. टी. सुन्दरम् ने धन रेखा के बारे में बताया था--यहां प्रस्तुत है विवाह रेखा के बारे में कुछ महत्त्वपूर्ण जानकारी

• पी. टी. सुन्दरम्

गौण रेखाओं में प्रमुख विवाह रेखा

विवाह रेखा महत्त्वपूर्ण रेखा नहीं है, फिर भी गौण रेखाओं में उसका प्रमुख स्थान है। उसे किसी पुरुष और स्त्री के मध्य होनेवाले प्रेम को द्योतक करनेवाली रेखा भी माना गया है। प्रेम भी विवाह का एक स्वरूप ही है। विवाह रेखा के वास्तविक महत्त्व को स्पष्ट करना बहुत कठिन है। जब हम किसी व्यक्ति के हाथ में विवाह रेखा देखते हैं तब हमारे लिए यह कह पाना मुश्किल होता है कि उस व्यक्ति का विवाह हो गया है या होनेवाला है। दूसरे शब्दों में, विवाह रेखा देखकर यह कह पाना कठिन है कि व्यक्ति विवाहित है या अविवाहित। फिर भी हस्तरेखाविद विवाह की रेखा देखते हैं और भविष्यवाणियां करते हैं, और वह भी सही-सही। यूरोपीय हस्तरेखाविदों का विश्वास है कि इस रेखा के आधार पर

विवाह का समय बताना मुश्किल है।

भारतीय हस्तरेखाविदों का मत इससे अलग है। उनका कहना है कि विवाह रेखा के साथ-साथ हाथ के अन्य चिह्नों, जैसे पर्वतों आदि को देखकर विवाह रेखा के बारे में सही-सही भविष्यवाणी की जा सकती है।

विवाह रेखा कहां से शुरू होती है?

१. विवाह रेखा बुध पर्वत पर हृदय रेखा के समानांतर होती है। २. जीवन रेखा से निकलकर शुक्र पर्वत की ओर जानेवाली रेखा भी विवाह रेखा मानी गयी है। ३. गुरु पर्वत पर क्रास। ४. चंद्र पर्वत से निकलकर भाग्य रेखा की ओर जानेवाली रेखा।

कुछ व्यक्तियों के हाथों में विवाह रेखा या संबंधित चिह्न होते ही नहीं, पर इससे यह अर्थ लगा लेना कि उस व्यक्ति का विवाह होगा ही नहीं, गलत है। हां, यह अवश्य कहा जा सकता है कि उस समय उस व्यक्ति के विवाह के कोई आसार नहीं हैं।

भारतीय हस्तरेखाविदों के अनुसार बुध पर्वत पर सीधी रेखा सफल, सुखी वैवाहिक एवं पारिवारिक जीवन की प्रतीक होती है। पुरुष के हाथ में विवाह रेखा का हृदय रेखा की ओर मुड़ना अशुभ है। ऐसी रेखावाले व्यक्ति की पत्नी की मृत्यु किसी रोग के कारण होती है (चित्र १, २-१)। यह बात निश्चयात्मक रूप से कही जा सकती है। यदि विवाह रेखा के अंत में दो शाखाएं हों तो पति-
अलगाव की स्थिति पैदा होती है।
के हाथ में ऐसी दो शाखाओंवाली
रेखा असफल एवं कष्टप्रद वैवाहिक
का पता देती है पर निश्चित रूप से
वाणी करने के लिए और चिह्नों
देखना जरूरी है। जैसे हृदय रेखा में
कोई एक रेखा मस्तिष्क रेखा
करती हुई भाग्य रेखा को काटे।
स्त्री के पैर की दूसरी अंगुली,
बड़ी होती है। सूर्य रेखा को
या उसमें मिल जानेवाली विवाह
चाहे पुरुष के हाथ में हो अथवा
अतिशय सौभाग्य और संपन्नता की
होती है। उनका जीवन-साथी
अत्यंत प्रसिद्ध होता है। स्वतंत्र
भारत के वायसराय लार्ड कर्जन की
जो कि अमरीकी थी, के हाथ में
रेखा थी। (चित्र १, १)

विवाह रेखा के अंत में दो
हों तथा उनमें से एक शाखा हृदय
ओर झुकती हो तो निर्दयी एवं
पति के कारण स्त्री का घरेलू जीवन
ड़ालू हो जाता है। यदि ऐसी
स्त्री के पति के हाथ में भी ऐसी ही
तो पारिवारिक जीवन समाप्त हो

यदि विवाह रेखा के अंत में दो
हों और उनसे आगे एक द्वीप
(चित्र १, ३-३) तो प्रतिष्ठा की
है। ऐसे चिह्नों वाले व्यक्ति को
हो:ा पड़ता है। किसी द्वीप से

वाली विवाह रेखा विवाह के पूर्व चरित्र-दोष की सूचक होती है। यदि विवाह रेखा ऊपर की ओर मुड़े तो व्यक्ति आजन्म कुंआरा रहता है। (चित्र १–४) यदि विवाह रेखा शुक्र पर्वत की ओर मुड़कर दो भागों में विभाजित हो तो वैवाहिक जीवन का अंत तलाक में होता है। कुछ अनुभव शून्य हस्तरेखा विद मानते हैं कि यदि बुध पर्वत पर विवाह रेखा एक से अधिक विवाह रेखाएं होने के बावजूद व्यक्ति एक ही विवाह करता है, जबकि उसे विवाह रेखा जितने विवाह करने चाहिए। ऐसा क्यों?

असल में विवाह रेखा देखते समय तथा शुक्र चंद्र पर्वत पर स्थित अन्य रेखाओं का भी अध्ययन करना चाहिए।

विवाह कब?

यदि विवाह रेखा, हृदय रेखा के
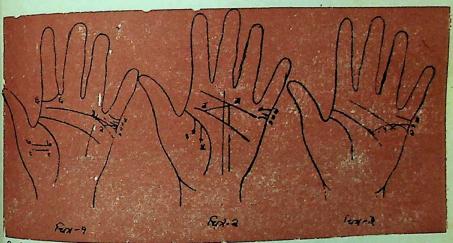
किसी प्रभावक रेखा से न मिले, पर उन्हें जोड़नेवाली रेखा पर द्वीप हो तो विवाह के पूर्व कोई अनुचित संबंध होता है। वैवाहिक जीवन संबंधी किसी भी भविष्य-कथन के पूर्व बुध पर्वत पर स्थित प्रणय रेखाओं का तथा शुक्र एवं चंद्र पर्वतों पर स्थित अन्य चिह्नों व रेखाओं का भी अध्ययन करना चाहिए। इनके जरिए विवाह का समय भी जाना जा सकता है।

निकट हो तो विवाह शीघ्र होता है। यदि हृदय रेखा तथा कनिष्ठा की अंतिम पोर की रेखा के मध्य में हो तो सामान्यतः विवाह ३० तथा ३२ वर्ष की अवस्था में होता है। यदि विवाह रेखा इससे भी अधिक ऊपर की ओर हो तो विवाह काफी विलंब से होता है।

बुध पर्वत पर रेखाएं लंबी हों। छोटी रेखाएं विवाह की बनिस्बत विपरीत

सेक्सवाले व्यक्ति के प्रभाव को बतलाती है। बुध पर्वत पर स्थित लंबी विवाह रेखा शुभ मानी गयी है। शुक्र पर्वत पर स्थित प्रभावक रेखाओं को विवाह रेखाएं मानना ठीक न होगा। इसी तरह चंद्र पर्वत से आती रेखाओं को भी विवाह रेखा मानना गलत होगा। चंद्र पर्वत पर स्थित प्रभावक रेखाएं विपरीत सेक्स अथवा पत्नी से सहायता मिलने की द्योतक होती है।

चंद्र पर्वत से ऊपर की ओर निकल कर भाग्य रेखा में मिल जानेवाली रेखा सुखी वैवाहिक जीवन की परिचायक होती है। यदि विवाह रेखा अंत में दो शाखाओं में विभाजित हो जाए तथा एक शाखा हाथ के मध्य भाग की ओर जाए तो अथवा कानूनी अलगाव होता है। एक बारीक-सी रेखा मंगल क्षेत्र को जाए तो इस बात की पुष्टि हो जाती है। (चित्र २, १–१)

सही जीवन साथी के चुनाव में हस्तरेखाविद् काफी सहायता कर सकता है। कारण स्पष्ट है। वह हाथ की रेखाओं को देखकर हमारे भावी जीवन-साथी की नैतिक-सामाजिक आकांक्षाओं तथा शारीरिक लालसाओं के बारे में बतला सकता है। वह मानवीय प्रवृत्तियों का विश्लेषण कर कह सकता है कि दोनों पक्ष एक दूसरे के उपर्युक्त होंगे या नहीं!

तर्जनी के मूल में क्रॉस अथवा खड़ी रेखाओं की उपस्थिति व्यक्ति के संसार त्यागकर संन्यासी हो जाने की सूचना देती है। हालांकि ऐसे व्यक्ति के हाथ में अच्छी विवाह रेखाएं होती हैं फिर भी उसका विवाह नहीं होता। (चित्र १, ६–६)

शुक्र पर्वत पर खड़ी रेखाएं व्यक्ति की उप-पत्नियों की सूचक होती है। रेखाओं की संख्या उपपत्नियों की संख्या दर्शाती है। स्त्री के हाथ में ऐसी रेखाओं की उपस्थिति भी उसके उतने ही 'संबंधों' की सूचक होती है। (चित्र १, ७–७)

यदि किसी पुरुष के हाथ में हृदय रेखा की एक शाखा तर्जनी तथा मध्यमा के बीच जाती हो तथा दूसरी तर्जनी की ओर जाती हो तो वह अच्छा, समझदार पति होता है। यदि तर्जनी सीधी और लंबी हो, उसकी तीनों पोरें समान एवं विकसित हों तो भी व्यक्ति अच्छा पति सिद्ध होता है। आम तौर पर विकसित शुक्र एवं चंद्र पर्वत औरों का हृदय जीतनेवाले गुणों—यथा सहानुभूति-प्रेम आदि को सूचित करते हैं। सीधी कनिष्ठा मानसिक शक्ति की परिचायक होती है। ऐसी अंगुलीवाला व्यक्ति जीवन को आसानी से गुजारता है। अच्छी भाग्य रेखा तथा सूर्य रेखा के साथ यदि जीवन रेखा से गुरु, शनि तथा सूर्य पर्वत की ओर रेखाएं जाती हों तो व्यक्ति अच्छा पति सिद्ध होता है।

चौड़ी हथेली के साथ कनिष्ठा नुकीली हो तथा मस्तिष्क रेखा जरा-सा नीचे की ओर झुकी हुई हो एवं गुरु पर्वत पर अच्छी रेखाएं हों तो ऐसी स्त्री अच्छी पत्नी सिद्ध होती है। वह परिस्थितियों के अनुसार स्वयं को ढाल सकती है। उसका व्यवहार भी अच्छा होता है। ऐसी स्त्री के हृदय में प्रेम भी होता है। मणिबंध पर मछली का चिह्न मान-सम्मान एवं यथेष्ट सम्पत्ति मिलने का द्योतक है। वह संतानवती भी होती है।

यदि शुक्र पर्वत पर, अंगूठे के नीचे खड़ी रेखाएं हों तो उनसे उस स्त्री के अवैध संबंधों का पता चलता है।

वैधव्यसूचक चिह्न

स्त्रियों के हाथों में वैधव्यसूचक चिह्न भी देखे जा सकते हैं। ये इस प्रकार हैं: (चित्र २–१, २, ३, ४, ५, ब-ब) १. बुध पर्वत पर, हृदय रेखा की ओर झुकती हुई विवाह रेखा, २. विवाह रेखा पर काला बिंदु, ३. नीचे की ओर झुकती विवाह रेखा तथा जिस स्थान पर वह झुकी हो वहां काले बिंदु की उपस्थिति, ४. शुक्र पर्वत पर स्थित प्रभावक रेखा पर तारा, ५. प्रभावक रेखा को काटती आड़ी रेखा (ब-ब) हृदय रेखा से निकलकर भाग्य रेखा को काटते हुए मस्तिष्क रेखा में मिलने वाली रेखा, टूटी हुई भाग्य रेखा। इसके साथ अन्य चिह्नों का भी अध्ययन करना चाहिए। पुरुष के हाथ में ऐसे चिह्नों की उपस्थिति उसके जीवन-साथी की मृत्यु की सूचक होती है। ●
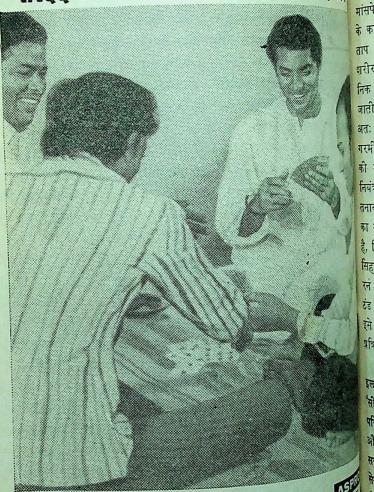
अभिलाषा जायसवाल, कानपुर : ठंड के दिनों में शरीर में सिहरन और कंप-कंपी क्यों होती है?

सिहरन या कंपकंपी शरीर की मांसपेशियों में स्वतः ही होनेवाले कंपन के कारण होती है। यह कंपन शरीर में ताप का उत्पादन बढ़ाता है। हमारा शरीर जब गतिमान होता है तो रासायनिक ऊर्जा यांत्रिक ऊर्जा में परिणत हो जाती है, जिससे ताप उत्पन्न होता है। अतः मांसपेशियों के कंपन से शरीर में गरमी आती है। ठंड लगने पर शरीर की मांसपेशियां स्वचालित नाड़ी-तंत्र के नियंत्रण में सिकुड़ने लगती हैं। जब उनका तनाव काफी बढ़ जाता है तो मांसपेशियों का यह संकुचन तरंगायित भी हो जाता है, जिसके परिणामस्वरूप सारे शरीर में सिहरन फैल जाती है। लेकिन यह सिहरन या कंपकंपी शरीर में ताप उत्पन्न करके ठंड से हमारी रक्षा करती है। इस प्रकार इसे शरीर के ताप-नियंत्रण की जटिल प्रक्रिया का ही एक अंग कहा जा सकता है।

शैलबाला सिंह, रांची : जुकाम का इलाज करने के लिए आजकल विटामिन 'सी' का प्रयोग खूब होने लगा है। कई पत्रिकाओं में भी इसे जुकाम की रामबाण औषध बताया गया है। लेकिन क्या यह सचमुच हानिरहित है? क्या इसका सेवन गोली के रूप में ही किया जा सकता है या खाद्य-पदार्थों से भी इसे प्राप्त किया जा सकता है? यदि हां, तो कौन-कौन से खाद्य-पदार्थों से?

विटामिन 'सी' वास्तव में एक अम्ल है, जिसे एस्कार्बिक अम्ल कहते हैं। मानव-शरीर न तो इसे स्वयं बना सकता है, न अपने भीतर जमा करके रख सकता है, इसलिए आहार के द्वारा इसे प्रतिदिन प्राप्त करना आवश्यक है। जुकाम दूर करने के लिए एक दिन में २५० मि. ग्रा. विटामिन 'सी' लेने की राय दी जाती है। इससे अधिक मात्रा में और नियमित रूप

से यह विटामिन यदि गोली के रूप में सेवन किया जाए तो उससे स्वास्थ्य को हानि हो सकती है। एस्कार्बिक अम्ल की अधिकता से पेट खराब हो सकता है और दस्त लग सकते हैं। यदि इस अम्ल की मात्रा बहुत अधिक बढ़ जाए तो रक्त के जम जाने का भी खतरा पैदा हो जाता है। गर्भवती स्त्रियों को तो इसका सेवन विशेष सावधानी के साथ करना चाहिए, क्योंकि प्रतिदिन बड़ी मात्रा में इसके सेवन से

गर्भस्थ भ्रूण पर दुष्प्रभाव पड़ सकता है। सामान्यत: यदि आहार के द्वारा ३० से ९० मि. ग्रा. तक विटामिन 'सी' प्राप्त होता रहे तो शरीर को जरूरत भर का एस्कार्बिक अम्ल मिलता रहता है। नीबू तथा नीबू-वर्ग के फलों (जैसे संतरा, मौसमी, खट्टा आदि) में और टमाटर, आलू, शकरकंद, मटर, फूलगोभी, आंवला तथा पालक आदि सब्जियों में विटामिन 'सी' खूब रहता है। दैनिक आहार में यदि ये चीजें रहें तब शायद विटामिन 'सी' की गोलियां अलग से खाने की जरूरत न पड़े।

संतोषकुमार जैन, खंडवा : ईश्वर-प्रणिधान क्या है?

पतंजलि ने मन की हलचल को रोकने के कई उपाय बताये हैं, उनमें से ही एक उपाय है ईश्वर-प्रणिधान। इसका अर्थ है ईश्वर का नाम अर्थ-भावना के साथ जपना और उसके स्वरूप का विचार करना।

पतंजलि ने ईश्वर का जप करने के लिए प्रणव अर्थात ओंकार का सुझाव दिया है।

पवन चंदेल, मुजफ्फरपुर : 'ट्राइकोग्रामा' और 'कीसोपा' नामक कीड़ों से फसलों की रक्षा हो सकती है, ऐसा सुनने में आया है। ये क्या है और फसलों की रक्षा के लिए इनका प्रयोग कैसे किया जाता है?

ट्राइकोग्रामा ततैया से मिलता-जुलता एक छोटा-सा कीड़ा होता है। इस कीड़े की खूबी यह है कि यह फसल [illegible] पहुंचानेवाले अन्य कीड़ों को [illegible] है। यह बड़ी चतुराई से [illegible] अंडों पर अपने अंडे देता है [illegible] अंडों से निकलनेवाली सुंडियां [illegible] के अंडों को खाकर नष्ट कर [illegible] ट्राइकोग्रामा (डिब-मक्खी) [illegible] शलजम, सेब, मटर, मक्का [illegible] पौधों पर लगनेवाले कीड़ों को [illegible] देता है।

कीसोपा भी इसी प्रकार [illegible] नुकसान पहुंचानेवाले कीड़ों को [illegible] देता है। इसलिए इन कीड़ों [illegible] के कृत्रिम प्रजनन के द्वारा इनकी [illegible] बढ़ाकर आवश्यकतानुसार इन [illegible] करने के उपाय खोजे जा रहे हैं [illegible] लेनिनग्राद स्थित अखिल संघीय [illegible] संस्थान के वैज्ञानिकों ने प्रयोग[illegible] ट्राइकोग्रामा का ठीक उसी प्रकार [illegible] प्रजनन शुरू कर दिया है, जि[illegible] इन्क्यूबेटरों में मुर्गी के अंडों से [illegible] किया जाता है। प्रयोगशाला में [illegible] के बाद इन कीड़ों को हानिकारक [illegible] पतंगों से ग्रस्त खेतों में छोड़ दिया [illegible]

[illegible]लते-चलते एक प्रश्न और

आनन्दप्रकाश भारद्वाज, पुरतुर[illegible] कैसे टूटता है?

इस पर निर्भर करता है कि [illegible] वाला कौन है!

—बिंदु [illegible]

पंजाबी की श्रेष्ठ कहानियां : पंजाबी कहानी-साहित्य के विभिन्न सोपानों का प्रतिनिधित्व करती हुई ये कहानियां पाठकों के समक्ष अपना संक्षिप्त विकास प्रस्तुत करती हैं। प्रायः कहा जाता रहा है कि पंजाबी कहानी प्रेम की भूमि पर पलती है, किंतु प्रस्तुत संग्रह इस धारणा को निर्मूल सिद्ध करता है। जीवन के संघर्ष, टकराव, टूटन, घुटन, संत्रास, एकाकीपन को भोगती ये कहानियां किसी कोने में कोमल भावों को भी पालती हैं। 'मैना भाभी' भावों के द्वंद्व की ऐसी ही कहानी है। जीवन की गंदगी से अछूते आकर्षण कभी-कभी मन को इतना बांध लेते हैं कि उसकी हलकी-सी चटकन पूरे आधार को मिटा देती है। उनकी परिणति घुटन की खोह में सिसकती है। इसी प्रकार 'कहवाघर की सुंदरी' प्रेम, सौंदर्य की उपासना और उसके व्यवसाय की टकराहट है। अंगों की सुडौलता जब मन के तारों को छू लेती है तब उसमें अनायास ही एक पवित्रता झलकने लगती है, जो सभी व्यापारों को लांघती नितांत अपनी हो जाती है।

कुछ कहानियां अंतर्मन की गुत्थियां खोलती हैं। 'हाइड्रोफोबिया' तथा 'लोरी' ऐसी ही कहानियां है। पहली कहानी मानव के अर्धविक्षिप्त मन की यात्रा है जो औरों के लिए पागलपन के अतिरिक्त कुछ नहीं। दूसरी कहानी कुंवारी मां के 'मैटर्नल इंसटिंक्ट' की कथा है। 'तू तो हार गया' व्यावहारिक धरातल पर भावों की हार-जीत है जबकि 'नारियल की कुंजी', 'हीरामंडी के चौबारे' तथा 'अफसर' में नैतिकता की सीमाएं तोड़ती नारी के तन-मन का उन्मुक्त खिलवाड़ है। 'गौना' इसके विपरीत नारी की दृष्टि में पुरुष के पुरुषत्व की घटती-बढ़ती रेखा का अंकन है। इन सबसे अलग 'मुर्गीखाना' सेक्स की सूक्ष्म समस्या 'होमोसेक्सुएलिटी' पर लिखी एक प्रौढ़ कहानी है।

दो सशक्त कहानी-संग्रह

'एरियल' जीवन में बजती सम-विषम तालों का संचार करनेवाली कहानी है। जीवन एक सागर है, जिसके किनारे की सबको तलाश रहती है, किंतु जब यह किनारा मिल जाता है तब मन में छिपा

कोई 'ऐडवेंचर' फिर लहरों की ओर आमंत्रित करता है। व्यक्ति बढ़ता है, पर किनारे को पकड़े हुए। यहीं जीवन की विडंबना शुरू होती है। पत्नी, जो जीवन की सुरक्षित सीमा है, उसका खंडन या विस्तार उस निःस्सीम रेगिस्तान की तरह है जिसकी मरीचिका जीवन को अंतिम सांस तक लील जाती है। कहानी में एनी अपने पति अनवर और उसकी सेक्रेटरी लिज के संबंधों से समझौता नहीं कर पाती, वरन किनारे की सुरक्षा के मूल्य पर उन्हें मुक्त कर देती है।

संग्रह की प्रायः सभी कहानियां कथ्य और शिल्प, दोनों दृष्टियों से प्रयोगात्मक धरातल पर आधुनिक परिवेश को जीती हैं। इस प्रकार के संकलन अंतर्देशीय पाठक बनाने में सहयोग देते हैं, इसमें संदेह नहीं।

पंजाबी की श्रेष्ठ कहानियां

संपादिका——अमृता प्रीतम, प्रकाशक—— पराग प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ—— १९२, मूल्य—२०.०० रुपये

'जहर' में मानव-नियति और उससे खिलवाड़ करती सामाजिक व्यवस्था के संघर्ष के साथ समाज के कर्णधार कहलानेवाले तथाकथित अभिजात वर्ग के प्रति तीव्र आक्रोश है। मशीनों की बढ़ती हुई संख्या मानव-पशु का निर्माण कर रही है, जिसे 'जंगल' की तलाश है। इस कहानी में समाज में निर्द्वंद्व घूम रहे भेड़िये भय के कारण अनिवार्य अंग मान लिये गये हैं जिनके समक्ष समाज द्वारा [illegible] संवेदना जाग्रत करता है। [illegible] के खतरे से भयभीत व्यक्ति [illegible] है 'बौना'। अस्तित्व को [illegible] की कोशिश ही आज अस्तित्व [illegible] जा रही है। यही नियति [illegible] जीवन से मौत की घुटन में [illegible] जीवन की रिक्तता, शून्यता [illegible] ऐसी ही एक अन्य सशक्त [illegible] 'जुर्म'। बिखरे हुए जीवन के [illegible] को सहेजती संग्रह की प्रायः [illegible] नियां विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में [illegible] हो चुकी हैं। कथ्य की आधुनिकता [illegible] कथन की सघनता पाठकों को [illegible] में सक्षम है।

जहर

लेखक——श्रवणकुमार, प्रकाशक—[illegible] ज्ञानपीठ प्रकाशन; कनाट[illegible] दिल्ली, पृष्ठ—१४८; मूल्य—[illegible] रुपये।

एक करारा व्यंग्य

'राजा राज करें' [illegible] शासन-पद्धति पर एक करारा [illegible] है, जो राजतंत्र के पश्चात [illegible] उभरी लोक-चेतना के परि[illegible] बीसवीं शताब्दी की विशेष [illegible] 'डेमोक्रेसी' को दर्पण दिखाती है [illegible] कहलानेवाली जनता जिस [illegible] रही है, जनता के शुभचिंतक [illegible] वाले नेता चेहरे पर जिस [illegible]

हुए हैं, यह रचना उन सब पर निर्मम प्रहार करती है। यहां चौपट राजा एक 'आॅटोक्रेट' है, जो कभी जनतंत्र का और कभी राजतंत्र का मुखौटा लगाये जनता का शोषण करता रहता है। प्रजा की नियति केवल इतनी है कि वह हर ठोकर पर निकले आंसुओं को नारों की मुसकान पहनाती जाए। कथ्य की रोचकता बनाये हुए लेखक ने गंभीर चिंतन प्रस्तुत किया है, जिसे पचाना देश के लिए आवश्यक होते हुए भी सरल नहीं है।

राजा राज करे
लेखक—फिक्र तौंसवीं, प्रकाशक—भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, कनाटप्लेस, नयी दिल्ली, पृष्ठ—११४, मूल्य—८.०० रुपये

संस्मरण

'याद रही बातें' लेखक के जीवन में घटी कुछ घटनाओं का संस्मरणात्मक संग्रह है। छोटी-छोटी घटनाओं का सजीव चित्रण लेखक की विचारधारा, दृष्टिकोण और जीवन-दर्शन का हलका-सा आभास देता है। देश, संस्कृति और इतिहास में रुचि रखनेवाले पाठकों के लिए यह पुस्तक मनोरंजक और उपादेय है।

याद रही बातें
लेखक—अक्षयकुमार जैन, प्रकाशक—पंजाबी पुस्तक भंडार, दरीबा कलां, दिल्ली, पृष्ठ—१२६, मूल्य—८.०० रुपये

दुख-दर्द

उन दिनों विक्टर ह्यूगो को देश-निकाला मिला था। वे जरसी द्वीप में थे। वहां एक पथरीले टीले से सारा बंदरगाह दिखायी पड़ता था। ह्यूगो रोज सांझ को टीले पर बैठते थे और सूर्यास्त देखते हुए सोच-विचार में खो जाते थे। बड़ी देर बाद जब उठते, तब कुछ कंकड़ चुनकर बड़े संतोष से सागर में फेंक देते थे। एक बच्ची ने पूछा, "आप यहां रोज कंकड़ फेंकने क्यों आते हैं?"

ह्यूगो बोले, "बेटी, कंकड़ नहीं अपना दुख-दर्द फेंकता हूं।"

गीत-संग्रह

'ऋतुगंधा' में जहां परंपरागत प्रेम-गीत संकलित हैं वहां आधुनिक बोध से संयुक्त कविताएं भी हैं। ऐसी कविताओं में कवि के शिल्पगत प्रयोग सुंदर हैं। यहां एक उदाहरण पर्याप्त है—

एक रुपया है
जिससे हम तसल्ली के बिस्कुट
और हमदर्दी की चाय
खरीदना चाहें तो खरीद सकते हैं

ऋतुगंधा
लेखक—रमेश गुप्ता 'चातक', प्रकाशक—विशाला प्रकाशन, मालीपुर, उज्जैन, पृष्ठ—६८, मूल्य—६.०० रुपये

—डॉ. शशि शर्मा

र-संक्षेप

एक अंतहीन

फ्रेडरिख ड्यू

यह पिछले मार्च की बात है। मैं चुर साहित्य परिषद के समक्ष 'जासूसी-कथा लेखनकला' पर भाषण देने गया था पर भाषण कुछ जमा नहीं। कई श्रोता तो बीच में ही उठकर चले गये। मैंने अपनी फीस तथा यात्रा-व्यय लिया और स्टेशन के पास होटल स्टीनकॉख में शीघ्रातिशीघ्र चला आया।

होटल में भी वही आलम था। होटल बार में मेरा परिचय हर एक से हुआ। वह ज्यूरिख कैंटन पुलिस का भूतपूर्व चीफ था। बातों-बातों में उसने प्रस्ताव किया कि वह मुझे अपनी 'ओपल' में ज्यूरिख छोड़ देगा। स्विट्जरलैंड के उस भाग से मैं परिचित नहीं था, मैंने तुरंत स्वीकार लिया।

हम सुबह जल्दी ही चल दिये थे। सूरज निकल आया था, पर बादल हर कहीं उसके आड़े आ रहे थे। चुर शहर पर्वतों से घिरा था, पर मुझे उनमें कोई विशेषता नजर नहीं आयी।

थोड़ी देर बाद कार खुले में आ गयी। पहाड़ दूर चले गये। यहां आकर मौसम भी एकाएक ठीक हो गया था। हमारी कार एक पेट्रोल-स्टेशन पर रुकी। उसकी इमारत एकदम जर्जर थी। आधी लकड़ी और आधी पत्थर की। आसपास की खुश-नुमा एवं साफ-सुथरी इमारतों के बीच अजूबा। उस पर ढेर सारे फिल्मी पोस्टर चिपके हुए थे। वहीं पत्थर की बेंच पर एक

बूढ़ा बैठा हुआ था। दाढ़ी बेतरतीबी से बढ़ी हुई। चेहरे से लगता था, कई दिनों से नहाया नहीं है। हम उतरकर उसकी ओर बढ़े तो शराब की तेज गंध आयी।

उसे कार में पेट्रोल भरने को कहकर एक मकान में घुस गया। अब मैंने देखा, बाहर जुर रोज टेवर्न का छोटा-सा लाल बोर्ड लगा था। अंदर अंधेरे गलियारे की भारी हवा में बीयर की गंध तैर रही थी। बार रूम में भी अंधेरा था। काउंटर के पीछे एक छरहरी महिला सिगरेट पीती

रहस्य, रोमांच से भरपूर साहित्य रचने में सिद्धहस्त फ्रेडरिख ड्यूरनमट एक विश्वविख्यात उपन्यासकार हैं। 'कादम्बिनी' में प्रकाशित उनके एक प्रसिद्ध उपन्यास 'द डेंजरस गेम' के सार-संक्षेप को पाठकों ने काफी पसंद किया था। यहां प्रस्तुत है उनकी कृति 'द प्लेज' का सार। प्रस्तोता हैं—संगीत कुमार।

हुई गिलास धो रही थी। तभी अंदर के कमरे में एक लड़की आयी। मुझे वह तीस के आसपास लगी. . . "वह सोलह की है। सोलह . . " एम धीरे से गुर्राया।

कॉफी पीकर हम बाहर आये। कार में पेट्रोल भरा जा चुका था। 'फिर मिलेंगे', एम ने धीमी, उदास आवाज़ में कहा। लेकिन बूढ़े ने उसकी बात का कोई जवाब नहीं दिया। वह बेंच पर बैठा रीती आंखों से आकाश में न जाने क्या देख रहा... हम कार में बैठ रहे थे तो वह... उठा। मुट्ठियां बांधकर चिल्ला... प्रतीक्षा करता रहूंगा। वह आएगा... जरूर आएगा. . ."

कार करेंज दर्रे की ओर... थी। सड़क दोबारा बर्फ से ढंक... हमारे बहुत नीचे वालेन झील... बर्फ से जमी चमक रही थी। एम... कल के भाषण पर चर्चा कर रहा... रहस्य-रोमांच की कहानियों को... बहुत महत्त्व नहीं दिया। मैं उन्हें... की बरबादी समझता हूं। 'अपराधी... अपने किये का दंड मिल गया', 'बुरे... अंत बुरा होता है'-जैसे वाक्य... समाज का मनोबल ऊंचा रखने के... गढ़े गये हैं। सबसे ज्यादा चिढ़ मुझे... लोगों के कथा-सूत्र के ढांचे से होती... आप लेखक लोग प्लाट को शतरंज... बाजी की तरह सजाते हैं। यहां... वहां अपराधी; इधर पुलिस और... जासूस। दो-चार दांवपेच होते हैं... अपराधी पकड़ा जाता है। नाटकीयता... समावेश करने के लिए तुम लोग... बलि चढ़ा देते हो, सत्य जो कि... है; पर तुम लोगों को यथार्थ से... तुम्हारा जासूस अमानवीय, चमत्... होता है। कभी असफल नहीं हो...

तुम्हें शायद ताज्जुब हो कि मैं... पेट्रोल स्टेशन पर क्यों रुका! वह... व्यक्ति जिसने हमारी कार में पेट्रोल...

था, कभी पुलिस का सबसे योग्य आदमी था। सच! मथाई एक जीनियस था। तुम्हारे किसी भी नकली जासूस से अधिक चतुर एवं कुशल। यह कहानी नौ साल पहले की है। मथाई मेरे पास इंस्पेक्टर था। बहुत ही लगनशील एवं कुशल। अकेला रहता था। न शराब छूता था, न सिगरेट।

मेग्नदोर्फ से उनके किसी पुराने 'आसामी' गुंटेन फेरीवाले ने फोन किया था। एक छोटी-सी लड़की की हत्या हो गयी थी। मेग्नदोर्फ ज्यूरिख के पास एक छोटा-सा गांव है। अप्रैल के आखिरी दिन थे। बाहर पानी बेतरह बरस रहा था। फोहेन के पीछे-पीछे आनेवाला तूफान शहर में
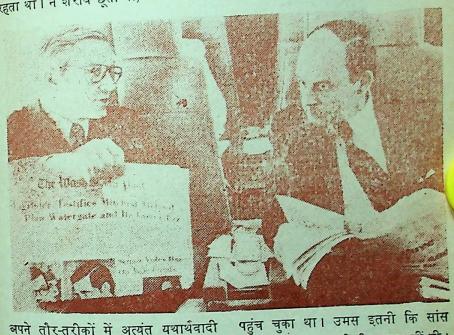
अपने तौर-तरीकों में अत्यंत यथार्थवादी और एक हद तक क्रूर। लोग उसे 'मैट द् आटोमैट' कहते थे। वह जितना सफल था, उतना ही अलोकप्रिय।

उन्हीं दिनों जोडर्न सरकार को एक कुशल पुलिस अधिकारी की आवश्यकता पड़ी। स्विस फेडरल सरकार ने उसके लिए मथाई का नाम दिया। उसके जोडर्न जाने में दो-तीन दिन थे, तभी यह घटना घटी।

पहुंच चुका था। उमस इतनी कि सांस लेना दूभर था। मथाई की इच्छा नहीं थी। पर हेडक्वार्टर में किसी जिम्मेदार व्यक्ति के न होने से उसे जाना पड़ा। उसने मेग्न-दोर्फ के पुलिसमैन से गुंटेन पर नजर रखने को कहा और एमरजेंसी स्क्वेड के साथ चल दिया। साथ में निरीक्षण मजिस्ट्रेट एवं लैफ्टिनेंट हैंजी भी थे।

गुंटेन पर नजर रखने का आदेश भयंकर

मूल सिद्ध हुआ। मेग्नदोर्फ में अधिकांशतः किसान रहते थे। कुछ नीचे घाटी के कारखाने में या ईंटों के भट्टों में काम करते थे। स्टैग टेवर्न में गुंटेन को पुलिस की निगरानी में बैठा देख पूरी बस्ती में यह खबर आग की तरह फैल गयी कि पुलिस गुंटेन को अपराधी समझती है। मथाई वहां पहुंचा। उसने गुंटेन को साथ लिया और घटनास्थल की ओर चल दिया। गीली घास को रौंदते हुए वे झाड़ियों के बीच, मरे हुए पत्तों के गीले बिछौने पर पड़ी लड़की के गिर्द जा खड़े हुए। आसपास के घने पेड़ों में अटकी बारिश की बूंदें गिरकर हीरों-सी दमक रही थीं। लड़की की हत्या तेज धारवाले ब्लेड से की गयी थी। उसकी लाल, फटी हुई स्कर्ट पानी और खून में डूबी झाड़ियों में पड़ी थी। यह एक सेक्स-हत्या थी।

गांववालों ने बताया वह मोसर परिवार की लड़की ग्रिटली थी। वे लोग थोड़ी दूर पर मूजबाख में रहते थे। मथाई ने खुद ही उनके पास जाने का निश्चय किया। उसने लाश के पास पड़ी छोटी-सी टोकरी उठा ली। उसमें चाकलेट, कुछ मनके और कुछ खिलौने थे।

मोसर अपने घर के बाहर खड़ा लकड़ियां चीर रहा था। मथाई ने अपना परिचय दिया, फिर ग्रिटली की लाश के पास मिली टोकरी नीचे रख दी। वह समझ नहीं पा रहा था कि ग्रिटली के बारे में दुखद समाचार किस तरह दे, तभी मोसर की नजर उस टोकरी पर पड़ी। उसने एकाएक पूछ लिया, "क्या हुआ ग्रिटली को?"

"उसकी लाश मेग्नदोर्फ के निकट जंगल में मिली है।"

मोसर जैसे अपनी जगह जम-सा गया। एकाएक ग्रिटली की मां की आवाज गूंजी....

"मेरी बेटी का हत्यारा कौन है?"

"मैं उसे ही ढूंढ़ने निकला हूं, श्रीमती मोसर।"

"तो तुम वादा करते हो, उसे ढूंढ़कर पकड़ लोगे?"—श्रीमती मोसर ने आतंकित कर देनेवाले स्वर में पूछा।

"हां, मैं वादा करता हूं," मथाई ने जल्दी से कह दिया। वह किसी भी तरह वहां से भाग निकलना चाहता था।

"याद रखना तुमने प्रण किया है।" श्रीमती मोसर ने कहा।

मथाई ने धीरे से सिर हिलाया और मुड़कर तेज-तेज कदमों से लौट पड़ा। एकाएक पीछे से किसी पशु-जैसी अमानवीय चीख उभरी, पर उसने मुड़कर देखा नहीं। देखने का साहस भी नहीं था।

मेग्नदोर्फ में अप्रत्याशित हो रहा था। पूरा गांव सिमटकर पुलिस की गाड़ियों के इर्द-गिर्द इकट्ठा हो गया था। वे चाहते थे कि पुलिस गुंटेन को उनके हवाले कर दे। वह हत्यारा जो था। भीड़ से आतंकित होकर पुलिस अधिकारी अंदर टेवर्न में चले गये थे। मजिस्ट्रेट कह रहा था, "और कोई उपाय नहीं, कुमुक मंगवाओ—जल्दी।"

मथाई चुपचाप बाहर चला आया। कुछ पल उत्तेजित भीड़ का चेहरा देखता

रहा, फिर कहा, "मैं इंसपेक्टर मथाई हूं। हम फेरीवाले को आपलोगों के हवाले करने को तैयार हैं।"

यह प्रस्ताव इतना अप्रत्याशित था कि भीड़ में खामोशी छा गयी।

"तुम पागल तो नहीं हो गये हो?" मजिस्ट्रेट मथाई के कान में फुसफुसाया।

मथाई भीड़ से बात कर रहा था, "लेकिन उसे आपके हवाले करने से पहले मैं इस बात के प्रति आश्वस्त होना चाहता हूं कि आप लोग न्याय ही करेंगे।"

फिर अपनी तर्क-शक्ति से मथाई ने लोगों को समझा दिया कि पुलिस ही असली अपराधी को पकड़ सकती है।

भीड़ उसके तर्क से सहमत थी। मथाई कहे जा रहा था— के पास अपार साधन हैं, अपराधी के। मैं आपसे इतना ही कह हम निरपराध को दंड नहीं देंगे।

"अब...तुम गुंटेन को जाओ। हमें कोई एतराज नहीं भीड़ पुलिस की गाड़ियों के पास गयी। एक रास्ता बन गया।

पुलिस की गाड़ियां ज्यूरिख चल दी। गुंटेन दबा-दबा-सा पास बैठा कह रहा था, "मैं निर्दो

"बेशक ।"

"लेकिन कोई मेरी बात पर विश्वास नहीं करता ।"

"यह तुम्हारा वहम है । मैं तुम्हें सिर्फ इसलिए ले जा रहा हूं कि तुम हमारे सबसे महत्त्वपूर्ण गवाह हो।" मथाई बोला ।

हर एम ने बताया, "जब मैं बर्न से आया, तब मुझे इस बारे में पूरी बात पता चली । यह इस प्रकार की तीसरी हत्या थी। इससे पहले भी दो छोटी लड़कियों को इसी तरह तेज ब्लेड से गला काटकर मार दिया गया था । गुंटेन ने बताया था—मैं मेग्नदोर्फ की ओर जा रहा था । जंगल में लेटकर मैंने थोड़ी देर आराम किया । दोपहर को मैंने भारी खाना खाया था, खूब सारी बीयर पी थी, इसलिए आलस आ रहा था । पास में ही किसान खेतों में काम कर रहे थे । एकाएक मैंने किसी लड़की की चीख सुनी । आसपास कार्यरत किसान भी उत्सुक हो उठे, लेकिन कुछ देर इंतजार करने के बाद वे फिर अपने-अपने काम में लग गये । आकाश में बादल घिर आये थे । मौसम खराब हो चला था, इसलिए मैंने नये सिपाही की नजरों में पड़ना ठीक नहीं समझा । मैं मेग्नदोर्फ जाने के बजाय जंगल से होकर शहर की ओर चल दिया । बस, तभी उस लड़की पर मेरी निगाह पड़ी । अब मुझे मेग्नदोर्फ जाना पड़ा । वहीं से मैंने इंसक्पेटर मथाई को फोन पर सूचना दे दी ।"

मैंने मथाई से उस केस के बारे में बात की तो उसने केस हेंजी को देने का प्रस्ताव रखा क्योंकि उस समय वह सिर्फ जोर्डन-यात्रा के बारे में सोच रहा था । पुलिस पूरे जोर-शोर से अपराधी की खोज में जुट गयी । जंगल का चप्पा-चप्पा छान मारा गया । सैकड़ों व्यक्तियों से पूछताछ भी की गयी, पर कुछ पता न चला । मैं और मथाई उस स्कूल में गये जहां ग्रिटली पढ़ती थी । सब बच्चे उत्सुक आंखों से हमें ताक रहे थे। मैंने बच्चों से ग्रिटली के बारे में पूछताछ की, पर वे कुछ बता न सके । क्लास में उर्सुला फैहमान उसकी सबसे घनिष्ठ सहेली थी । मैंने उससे पूछा, "क्या ग्रिटली किसी से मिलती थी ?"

"हां, एक देव से ।" उर्सुला ने जवाब दिया ।

"तुम्हारा मतलब एक लंबे आदमी से है न ?"

"नहीं, लंबे तो मेरे पिताजी भी हैं । ग्रिटली एक दैत्य से मिलती थी।" उर्सुला अपनी बात पर अड़ी रही। हम लोग चुप-चाप शहर लौट आये ।

रास्ते में मथाई ने कहा, "हत्यारा कोई लंबा-तगड़ा आदमी है । मुझे लगता है, वह ज्यूरिख में रहता है । कार में सफर करता है । किसान गर्बर का कहना है कि उसने जंगल में एक कार खड़ी देखी थी ।"

मैं खामोश रहा ।

हेडक्वार्टर के एक बंद कमरे में गुंटेन से पूछताछ चल रही थी ।

"तो तुमने उस लड़की को देखा,

उसकी लाश को छुआ नहीं ।" सार्जेंट ने पूछा ।

"मैं निर्दोष हूं इंसपेक्टर । इंसपेक्टर मथाई जानते हैं, मैं अपराधी नहीं हूं ।" गुंटेन ने कहा ।

"वे कल जोर्डन जा रहे हैं । अब उन्हें इस केस से कुछ लेना-देना नहीं है ।"

यह सुनते ही गुंटेन की अंतिम आशा भी जैसे टूट गयी ।

अगली सुबह हैंजी ने बताया, "गुंटेन ने अपना अपराध स्वीकार कर लिया है । उससे २४ घंटे से अधिक समय तक पूछताछ की गयी थी । यह कानूनी नहीं था, लेकिन..."

मैंने गुंटेन को देखा, उसे दो पुलिसमैन सहारा देकर पकड़े हुए थे । शायद वह खड़ा होने की स्थिति में भी नहीं था ।

"मैंने ग्रिटली मोसर की हत्या की है । अब मुझे अकेला छोड़ दो ।" उसने धीरे से कहा और लड़खड़ाता हुआ बढ़ गया ।

कुछ देर बाद हैंजी धड़धड़ाता हुआ आया, "गुंटेन ने आत्महत्या कर ली है ।"

मैं और मथाई दौड़ पड़े । गुंटेन का निष्प्राण शरीर फर्श पर पड़ा था ।

"गुंटेन !" मथाई चीख पड़ा ।

मैंने मुसकराकर मथाई की ओर देखा, "ग्रिटली मोसर हत्याकांड का अध्याय समाप्त हुआ । अब तुम आराम से जोर्डन जाओ ।"

"शायद !" मथाई कुछ सोच रहा था ।

●

मथाई का सामान कार में लाद दिया गया, तो उसने कहा, "हम लोग
से होकर हवाईअड्डे जाएंगे
ग्रिटली को दफनाया जाएगा।"
के चौक में पहुंची तो शव-यात्रा
आ गयी थी । मथाई की नजरें
की मां से मिलीं । उसका चेहरा और
एकदम भावहीन थीं । मोसर
चल रहा था ।

कार एयरपोर्ट जा पहुंची ।
जानेवाला विमान रनवे पर खड़ा
तभी मथाई ने देखा, हवाईअड्डे की
पर बच्चों की बेशुमार भीड़ । वे
हवाईअड्डा देखने आये थे । वे हाथों
पकड़ी नन्ही-नन्ही झंडियां हिला रहे
उत्सुक आनंद से चीख-चिल्ला रहे
मथाई कुछ सोचता-सा, अपने में
हवाईजहाज की ओर बढ़ चला ।
एक बार फिर बच्चों की ओर देखा,
टिकट लेने के लिए हाथ बढ़ा रही
चारिका की ओर देखकर बोला, "
मैं इस फ्लाइट से नहीं जा रहा हूं।"

●

मथाई मेरे पास अगले रविवार
नहीं आया । जोर्डन सरकार ने
फेडरल सरकार से मथाई के न पहुंचने पर
विरोध प्रकट किया था । मेरी समझ
भी मथाई का व्यवहार नहीं आ रहा था।
मथाई आया तो मैंने कहा, "दोनों
के संबंध न बिगड़ें इसलिए तुम जल्दी
जल्दी जोर्डन चले जाओ।"

"मैं जोर्डन नहीं जा रहा हूं, क्योंकि

ग्रिटली मोसर का हत्यारा अभी पकड़ा नहीं गया है। मैं गुंटेन को हत्यारा नहीं मानता। वह आदमी मुझ पर निर्भर कर रहा था, पर मैंने उसकी मदद नहीं की। मैं केवल जोर्डन के बारे में सोच रहा था। मैं चाहता हूं, वह केस आप फिर से मुझे सौंप दें।" मथाई बोला।

मैंने अपनी असमर्थता व्यक्त की तो वह क्षुब्ध हो उठा और हम पहली बार हाथ मिलाये बिना विदा हो गये।

मथाई मेग्नदोर्फ जा पहुंचा। लोग गांव के अहाते में जमा थे। कुछ बच्चे लुका-छिपी खेल रहे थे। मथाई उन बच्चों को देखता रहा। वहीं उसे उर्सुला दिखायी दी। वह उससे ग्रिटली के बारे में बातें करने लगा। वह बता रही थी, "ग्रिटली उस दैत्य से हर हफ्ते मिलती थी। जंगल में। वह उसे चाकलेट देता था। ग्रिटली ने उस दैत्य की तसवीर भी बनायी थी। वह कक्षा में टंगी है।"

मथाई विस्फारित आंखों से उर्सुला की ओर देखता रहा। उसकी आंखों में एक दानव की तसवीर तैर रही थी।

मुझे सोमवार को जो समाचार मिले वे और भी परेशान कर देने वाले थे। मेग्नदोर्फ के कौंसलर ने फोन किया था, 'मथाई जबरदस्ती स्कूल में घुस गया था और मृत लड़की द्वारा बनायी गयी एक तसवीर चुराकर ले गया था।' फिर हेंजी ने खबर दी कि मथाई शराब के नशे में उससे लड़ पड़ा था। उसे 'न्याय का हत्यारा' कहा था, वही मथाई जो शराब को छूता तक नहीं था। कुछ और भी खबरें मिलीं। मथाई ने अपना रहने का ठिकाना बदल दिया था। बाजार में मिलनेवाली सबसे सस्ती सिगरेटें पीता था। मुझे वह नर्वस-ब्रेकडाउन के कगार पर खड़ा लगा। मैंने उस मनश्चिकित्सक को फोन किया जिससे हम अकसर सलाह लेते थे। लेकिन मथाई पहले ही उससे मिलने का समय ले चुका

था। मैंने फोन पर डाक्टर को सारी घटना बता दी।

मनश्चिकित्सक का क्लीनिक शहर से बाहर था, रोथेन गांव के पास। डाक्टर ने एक बार अपने चश्मे को ऊपर-नीचे कर मथाई की ओर देखा, फिर वैसे ही प्रश्न पूछने लगा जैसे अपने अस्पताल में आने वाले रोगियों से पूछा करता था।

"तुम्हें मेरी जांच करने का काम सौंपा गया है क्योंकि केंटोनल पुलिस मुझे पूरी तरह नार्मल नहीं समझती।"

"आखिर बात क्या है, मथाई ?"

"डाक्टर, ग्रिटली मोसर की हत्या का मामला मुझे चैन से नहीं बैठने देता। मैंने ग्रिटली की मां से वादा कि... उस नन्ही मुन्नी के हत्यारे को ढूंढ़... का। मैं अपने उसी वादे को पूरा... चाहता हूं। इसे देखो।" उसने डाक्... सामने ग्रिटली मोसर का बनाया हुआ... फैला दिया। उसे वह स्कूल में... था। बिंदियों से एक चेहरा बना... ग्रिटली का दानव इतना लंबा था... आसपास के पेड़ बहुत छोटे दिखाई दे... थे। उन्हीं पेड़ों के नीचे एक नन्ही... लड़की खड़ी थी। उसमें ग्रिटली ने... व्यक्त किया था। पेड़ों के पीछे एक... बनी हुई थी। उसी के पास अजीब से... वाला एक जानवर खड़ा था।
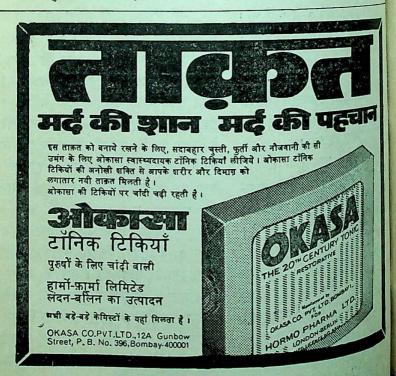
डाक्टर ध्यान से चित्र की ओर देखता रहा, फिर बोला, "मुझे हत्यारा एक ऐसा आदमी लगता है, जो स्त्रियों से घृणा करता है। उनसे बदला लेना चाहता है।"

"लेकिन ग्रिटली या उससे पहले जिन लड़कियों की हत्या हुई वे तो बहुत ही कमउम्र थीं," मथाई ने कहा।

"मानसिक रूप से बीमार आदमी के लिए लड़की ही स्त्री का प्रतीक है। हत्यारा बड़ी उम्र की महिलाओं पर हमला करने का साहस नहीं जुटा पाता, इसीलिए वह कमउम्र लड़कियों का चुनाव करता था। उसके दिमाग में जिस स्त्री की तसवीर है, वह उन लड़कियों के रूप में उसी स्त्री की हत्या करता है। इसीलिए वह बार-बार एक-जैसी लड़कियों की ही हत्या करेगा। मैं शर्त बद सकता हूं, वे तीनों लड़कियां एक-दूसरे से मिलती-जुलती होंगी।"

"लेकिन इस प्रतिशोध का कारण ?"

डाक्टर ने कंधे झटकारे, "संभवतः सेक्स-संघर्ष। शायद हत्यारा महिलाओं से शोषित है। शायद उसकी पत्नी अधिक पैसेवाली है और वह गरीब है। यह भी हो सकता है कि पत्नी की सामाजिक प्रतिष्ठा उससे कहीं अधिक ऊंची हो।"

मथाई, गुंटेन के बारे में सोच रहा था। शायद उस पर डाक्टर की एक भी बात लागू नहीं होती थी।

डाक्टर कहता जा रहा था, "ऐसी हर हत्या के बाद हत्यारे को आराम महसूस होता है, लेकिन जल्दी ही फिर बेचैन हो उठेगा। शुरू-शुरू में वह बच्चों के आसपास घूमेगा, स्कूलों के आसपास। उसके बाद कार में अपने शिकार की खोज में घूमना शुरू कर देगा। जब कोई मिलती-जुलती लड़की नजर आएगी तब उससे मैत्री कर लेगा और कुछ दिन बाद तुम एक नयी हत्या का समाचार सुनोगे।"

मथाई ग्रिटली के बनाये चित्र को लेकर उठ खड़ा हुआ, "धन्यवाद डाक्टर, तुमने मेरे सामने एक रास्ता खोल दिया।"

ये बातें स्वयं डाक्टर ने मुझे लिख भेजी थीं। और, फिर मुझे खबर मिली कि मथाई अकसर एक चिड़ियाघर के चक्कर काटा करता है। फिर खबर मिली कि मथाई ने नया धंधा शुरू किया है। वह चुर के निकट ग्रिसोन में पेट्रोल पंप चला रहा है।

और एक दिन मैं मीटिंग में था तो एक अनाथालय की संरक्षिका का फोन आया। उसने बताया, "मथाई मेरे पास आया था। वह एक विशेष लड़की को गोद लेना चाहता था, पर मैंने मना कर दिया। उसका व्यवहार मुझे कुछ विचित्र लगा, इसीलिए आपको फोन कर रही हूं।"

बात यहीं तक नहीं रुकी। उसके बाद जो समाचार मिला, उसने मुझे पागल बना दिया। मथाई ने पेट्रोल स्टेशन पर लिसल हेलर नामक एक वेश्या को रख लिया था।

मैं मथाई से मिलने चल दिया। तब उस पेट्रोल स्टेशन की आज-जैसी हालत नहीं थी। सड़क से दूर से ही देखने पर

वहां एक बच्चे की उपस्थिति के स्पष्ट आभास मिलते थे। एक रंगीन झूला था। एक बेंच पर गुड़ियाघर बना हुआ था। एक गुड़िया गाड़ी और एक हिलनेवाला घोड़ा। जब मैं पहुंचा तो मथाई एक कार में पेट्रोल भर रहा था। उसके पास ही सात-आठ साल की एक लड़की खड़ी थी। उसके हाथों में एक गुड़िया थी। उसने लाल स्कर्ट पहन रखी थी। उसे देखते ही मुझे ग्रिटली याद आ गयी।

"मथाई, यह क्या बचपना है ?"

"चीफ मैंने वादा किया था कि मैं तुम्हें ग्रिटली मोसर के बारे में परेशान नहीं करूंगा।" कहता हुआ वह मुझे घर में ले गया। अंदर लिसल हैलर ने मुझे देखा तो वह भी मुझे पहचान गयी थी।

"यह बच्ची हैलर की है ?" मैंने पूछा।

मथाई ने सिर हिलाकर हामी भर दी।

मैं लिसल के बारे में पूछ रहा था।

"मैंने उसे और लड़की को एक किसी कारण से यहां रखा है। या समझो लिसल इसलिए है कि वह अन्ना मेरी की मां है। ग्रिटली मोसर ने हत्यारे का ठीक चित्र बनाया था। चित्र में सींगोंवाला जानवर आइबेक्स है। मैंने चिड़ियाघर में उसे देखा था। वह ग्रिसोन का प्रतीक है। ग्रिसोन के रहने वाले अकसर अपनी कार की नंबर-प्लेटों

पर उसका चिह्न बनाते हैं। ग्रिटली ने भी हत्यारे की कार पर यही चिह्न देखा था। हत्यारा ग्रिसोन में कहीं रहता है। मैंने तीनों हत्या-स्थलों का पता लगा लिया है, वे सभी ग्रिसोन-ज्यूरिख मार्ग पर पड़ते हैं।"

मुझे मथाई की पागल–जैसी बातों में कुछ सार नजर आ रहा था।

"और फिर मैं कुछ मछेरों से मिला।"

मैं आश्चर्य से उसे घूरता रह गया।

"इसके बाद मैं सीधा ग्रिसोन पहुंचा। लेकिन जल्दी ही मैं अपनी बेवकूफी समझ गया। ग्रिसोन केंटन २,७०० वर्गमील में फैला है। यहां १ लाख ३० हजार लोग बसते हैं। सैकड़ों छोटी-छोटी घाटियों में। मैं इस तरह हत्यारे को कभी नहीं पकड़ सकता था। एक दिन मैं परेशान-सा इंगेडाइन में सराय के बाहर बैठा था। सामने कुछ लड़के नदी पर मछलियां पकड़ रहे थे। मैं ध्यान से उन्हें देखता रहा। एक लड़का मेरे पास आकर बात करने लगा। उसने मुझे बताया, 'मछली पकड़ने के लिए दो बातें होनी बहुत जरूरी हैं—एक तो सही जगह का चुनाव, दूसरा चारे का प्रयोग। मछली वहीं मिलेगी जहां वह चारे से सुरक्षित भी हो और आसपास तेज धारा भी हो, ताकि शिकार बहकर उसके सामने चले आये। ऐसी जगह नदी के बहाव पर, किसी चट्टान के पीछे होगी या किसी पुल के खंभे के पास।"

मुझे लड़कों की बातों में मजा आ रहा था। "और चारे के बारे में ?" मैंने पूछा।

"यह इस पर निर्भर है कि आप कैसी मछली पकड़ना चाहते हैं। आप एक बरबोट को तो कांटे में बेरी लगाकर भी फंसा सकते हैं, पर अगर ट्राउट पकड़नी है तो कांटे में जिंदा चीज का चारा फंसाना होगा—कोई कीड़ा या छोटी मछली का चारा।" उस लड़के की बातों से मेरी आंखें खुल गयीं, "ट्राउट पकड़नी है तो जीवित चारा लगाना होगा।"

मैं अब मथाई का मतलब समझ गया। "मथाई, यह पेट्रोल-स्टेशन उचित स्थान है और यह मुख्य सड़क नदी है। और यह लड़की ... जिंदा चारा ... क्योंकि तुम्हें साधारण नहीं ट्राउट मछली पकड़नी है।" कहते-कहते मैं किसी अनजानी आशंका से कांप उठा।

"हां चीफ, जो भी ग्रिसोन से ज्यूरिख जाना चाहता है, उसे इसी सड़क से होकर जाना होगा, बशर्ते कि वह ओबर आल्प दर्रे से लंबा चक्कर लगाने को तैयार न हो," मथाई ने कहा।

"तो तुम्हारी योजना है कि हत्यारा इस सड़क से गुजरते हुए अन्नामेरी को देखे और फिर तुम्हारे बिछाये हुए जाल में फंस जाए।"

"हत्यारा इधर से अवश्य गुजरेगा।" मथाई ने गंभीर स्वर में कहा।

"हो सकता है, तुम्हारी बात सच हो, पर इसमें बहुत खतरा है," मैंने कहा,
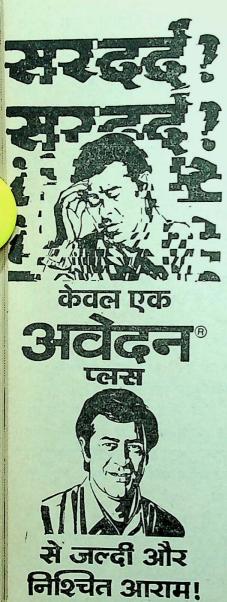
और फिर तुम बच्ची को हर... पेट्रोल पंप के पास नहीं रख सकते... स्कूल जाएगी। सोएगी... इधर-उधर खेलेगी।"

"मछली पकड़नी है तो फिर प्रतीक्षा करनी पड़ेगी।"

●

और वह इंतजार करता रहा। ... स्कूल से लौटकर पेट्रोल पंप के पास ... जाती। कभी गुड़ियों से खेलती, कभी ... पर झूलती। उसकी लाल स्कर्ट दूर से ही दिखायी देती थी। वैसी ही लाल ... ग्रिटली पहनती थी। नयी, पुरानी हर तरह की कारें वहां आतीं, मथाई के हाथ काम करते, आंखें कारवालों के चेहरे पढ़तीं।

लिसल हैलर पहाड़ की छाया में बसे गांव की छोटी-सी फैक्टरी में काम करती थी। शाम को लौटती तो उसके बैग में घरेलू चीजें भरी होतीं।

गरमियां आ गयीं। उमस भरे दिन। स्कूलों की छुट्टियां थीं। अन्ना मेरी अब सारा दिन पेट्रोल पंप पर रहती। मथाई उसे वहां बैठाये रखने के लिए तरह-तरह की कहानियां सुनाता, आनेवाले लोग ... को अजीब नजरों से देखते, और मथाई की आंखें सपना देखने लगतीं—लंबा-... हत्यारा पेट्रोल स्टेशन पर आएगा, अन्ना मेरी को देखेगा, फिर बार-बार आएगा। ऊपर से सहज स्वाभाविक, पर अंदर से बीमार, प्रतिशोध से प्रताड़ित। अन्ना ...

को फुसलाकर जंगल में ले जाएगा। चाक-लेट देगा और तब मथाई खामोश कदमों पीछा करेगा। एक पेड़ के पीछे छिपकर देखता रहेगा और अंतिम क्षण फिर कूदकर हत्यारे को पकड़ लेगा।

कभी-कभी वह लड़की को खुला घूमने देता और फिर चुपचाप पीछा करता।

गरमियों की छुट्टियां बीत गयीं। वनश्री का रंग लाल और पीला हो गया। लड़की स्कूल जाने लगी। वह उसे हर रोज लेने जाता। सड़क पर एक जगह प्रतीक्षा करता। इसी तरह दिन बीत रहे थे। उसे अब अपनी योजना बेवकूफी-भरी लगने लगी थी। तभी एक दिन उसने पाया कि अन्ना मेरी स्कूल से नहीं लौटी है। वह तुरंत शिकारी कुत्ते-सा सतर्क हो गया। उसे ढूंढ़ने चल दिया। उसकी शिरा-शिरा में विचित्र स्पंदन था। वह दिन आ गया। सड़क पर वह दूर-दूर तक नहीं थी। वह जंगल में घुस गया। झाड़ियों से लड़ता, रुकता-बढ़ता गया—जल्दी-जल्दी। और फिर उसने अन्ना मेरी को जंगल में बैठे देखा। वह छोटे-से नाले के किनारे बैठी थी। वह उसके पास जा पहुंचा। धीरे से आवाज दी। अन्ना मेरी ने उसकी ओर देखा, "मैं इंतजार कर रही हूं।"

"किसका?"

"जादूगर का।" कुछ पल वह इधर-उधर देखता रहा, फिर उसे ले आया।

अगले दिन वह स्कूल से कुछ जल्दी लौट आयी। वह उसे लेने जाने की सोच ही रहा था, तभी वह आती दिखायी दी। लिसल अंदर से निकली, "अन्ना कहां गयी थी?"

"स्कूल," मथाई ने कहा।

"स्कूल आज बंद था।"

ये शब्द हथौड़े की चोट की तरह पड़े। वह सोते से जाग उठा—"तो अन्ना घर से झूट बोलकर गयी थी।" अगले दिन वह चुपचाप स्कूल गया। अध्यापिका ने बताया, "वह तो कई दिन से नहीं आ रही।"

मथाई ने बहाना बना दिया कि वह बीमार है और फिर पागलों की तरह जंगल की ओर कार में चल दिया। अन्ना जंगल में नहीं, सड़क पर मिली। उसने उसे कार में बैठाया तो हाथ चिपचिपे लगे। अन्ना के हाथों में चाकलेट की गंध थी।

"चाकलेट किसने दिये?"

"स्कूल में एक लड़की ने।"

अन्ना झूठ बोल रही थी। शायद किसी ने उसे ऐसा सिखाया था। शायद हत्यारा उसे जंगल में मिला था।

अगली सुबह मथाई मेरे पास आया। वह बहुत उत्तेजित था। उसने कुछ चाकलेट निकालकर मेरे सामने रख दिये। न उसने दाढ़ी बनायी थी, न टाई लगाकर आया था। उसने मुझे पूरी कहानी सुना दी।

अब अविश्वास का कोई कारण नहीं था। मैंने तुरंत पुलिस को आदेश दिये।

उस दिन गुरुवार था। ग्रिटली मोसर की हत्या भी गुरुवार को हुई थी। हम जंगल में जाकर छिप गये। कोई दो बजे अन्ना
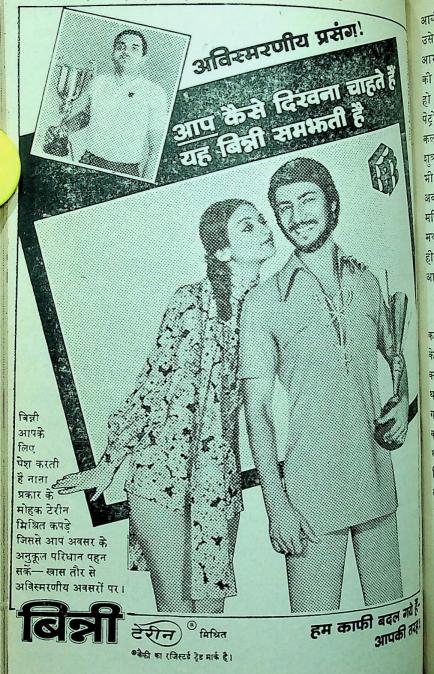
अविस्मरणीय प्रसंग!
आप कैसे दिखना चाहते हैं
यह बिन्नी समझती है
बिन्नी
आपके
लिए
पेश करती
है नाना
प्रकार के
मोहक टेरीन
मिश्रित कपड़े
जिससे आप अवसर के
अनुकूल परिधान पहन
सकें— खास तौर से
अविस्मरणीय अवसरों पर।
बिन्नी
टेरीन ® मिश्रित
®कैफी का रजिस्टर्ड ट्रेड मार्क है।
हम काफी बदल गये हैं
आपकी तरह!

आयी और नाले के किनारे बैठ गयी। उसे हमलोगों के वहां होने का जरा भी आभास नहीं था। निश्चित रूप से वह किसी की प्रतीक्षा कर रही थी। धीरे-धीरे शाम हो गयी। कोई नहीं आया। अन्ना उठकर पेट्रोल स्टेशन की ओर चल दी। हम भी कल लौटने का निश्चय लेकर चल दिये। शुक्र उसी तरह गुजर गया, फिर शनिवार भी। रविवार भी बीता जा रहा था। अब मुझे खीझ होने लगी। साथ में आये मजिस्ट्रेट और हैंजी भी कुढ़ रहे थे। लेकिन मथाई अपनी बात पर दृढ़ था, 'हत्यारे ने ही अन्ना को वहां बुलाया था, वह जरूर आएगा। हमें प्रतीक्षा करनी चाहिए।'

"लेकिन कब तक? ..."

हम अन्ना को दूरबीन से देखते। कभी-कभी वह जंगल में घूमती लेकिन नाले के किनारे अवश्य जाकर बैठती थी। लेकिन क्यों? हम सब का धैर्य सीमाएं तोड़ गया था। मन होता था, मैं ही उस लड़की का गला दबा दूं, जो हमें खामख्वाह परेशान कर रही थी। अब यह सब बर्दाश्त से बाहर था। तभी पेड़ के पीछे छिपा मजिस्ट्रेट निकलकर अन्ना की तरफ आया, "ऐ लड़की तू, किसका इंतजार कर रही है?" वह दहाड़ा।

हम सब भी छिपने के स्थानों से निकले और अन्ना को घेरकर खड़े हो गये। वह डरी-डरी आंखों से बारी-बारी से हम सब को देख रही थी।

"अन्ना, एक हफ्ता पहले तुम्हें किसने चाकलेट दिये थे?" मैंने क्रोध से कांपती आवाज से पूछा।

वह बोली नहीं, आंसूभरी आंखों से मुझे देखती रही।

मथाई भी उससे यह पूछ रहा था, "बताओ अन्ना प्लीज।"

मजिस्ट्रेट ने अन्ना का कंधा पकड़कर झकझोर दिया। उसे मारने लगा। हम सब भी चीखकर उस पर टूट पड़े। वह जमीन पर पड़ी तड़पती रही, चीखती रही। फिर एकाएक चिल्लायी और भाग खड़ी हुई। मुझे लगा, वह पागल हो गयी है। जाकर सीधी लिसल की गोदी में गिर गयी। लिसल न जाने कब वहां आ गयी थी। बच्ची सुबक रही थी। लिसल विचित्र नजरों से हमें देख रही थी।

मथाई धीरे-धीरे लिसल के पास पहुंचा, "लिसल ..." वह उसे सब कुछ सच-सच बता गया।

"तो तुमने हम दोनों को सिर्फ इसीलिए अपने पास रखा था।" लिसल ने ठंडी आवाज में कहा और बच्ची का हाथ पकड़कर चली गयी।

लेकिन मथाई पर जैसे अब भी कुछ असर नहीं हुआ था। वह कह रहा था। "हमें प्रतीक्षा करनी चाहिए। तुम मुझे छह आदमी दे दो। और ..."

मैं समझ नहीं पा रहा था कि उसे क्या कहूं।

"मैं उसकी प्रतीक्षा करूंगा। वह अवश्य आएगा," मथाई ने धीरे से कहा।

मैंने सोच लिया था, अब मथाई से कभी नहीं मिलूंगा। वह पागल जो हो गया था।

●

हम लोग एक रेस्तरां में बैठे थे— मैं और हर एम। वह मुझे मथाई के बारे में बता रहा था—"जहां तक मथाई का संबंध है, यह कहानी उसके लिए समाप्त हो चुकी है क्योंकि वह हत्यारा कभी नहीं आया। उसकी आशा के विपरीत उस तरह के सेक्स हत्याकांड भी नहीं हुए, पर मथाई और कुछ भी मानने को तैयार नहीं था। वह प्रतीक्षा किये जा रहा था। उससे न मिलने के अपने निर्णय के बावजूद मैं उससे मिलने जाता रहा था। मैं देख रहा था कि वह टुकड़े-टुकड़े करके टूट रहा है। वह बच्ची धीरे-धीरे बड़ी हो रही थी, बिगड़ रही थी, क्योंकि बहुत सारे कल्याण-संगठन उसे सुधारने में जुट गये थे। लेकिन वह कहीं नहीं टिकती थी। भागकर सीधे पेट्रोल-स्टेशन पर जाती। उसकी मां लिसेल ने वहीं जुर रोज टेवर्न खोल दिया। उसे मथाई से कुछ लेना-देना नहीं था, फिर भी वह वहां रह रही है।

"जानते हो, तुम होते तो अंत में अपनी कहानी में मथाई से चमत्कार करा देते। अपराधी को पकड़वा देते। उसे हीरो बना देते। इसलिए मैं तुम्हारी आलोचना कर रहा था, सत्य कहानी से बहुत दूर की चीज है। ऐसा नहीं, मथाई हत्यारे का इंतजार करता रहा और आज भी कर रहा है।"

मरी समझ में ही न आया कि कहूं। एम ने फिर कहना शुरू यह पिछले वर्ष की बात है। दिन था। एक कैथोलिक पादरी केंटन अस्पताल में बुलवाया। सन्न वृद्धा मुझसे अपने अंतिम कुछ महत्त्वपूर्ण बात कहना चाहती यह मेरे सेवा-निवृत्त होने से कुछ दिन की बात है। दिसंबर का महीना। पर ठंडी उदासी की परत जमी

वह बहुत अधिक उम्र की थी। में एक पादरी भी मौजूद था। शायद ने मुझे फोन किया था। वह शायद के अंतिम समय की प्रतीक्षा कर रहा

मेरे बैठने पर उसने बुढ़िया से "कमिश्नर साहब आ गये हैं। क्या कहना चाहती हो उनसे।"

बुढ़िया मुसकरायी। उसने मेरी देखा। वह कुछ कह रही थी, पर आवाज बहुत धीमी थी, "यह कोई बात नहीं थी। ऐसा तो हर परिवार कभी न कभी हो जाता है। मैंने महोदय को बताया क्योंकि मेरी मुझसे मिलने आयी थी, वह पहने हुए थी। इसी से मुझे कुछ बातें याद आ गयी थीं। मैंने को बताया था, उन्होंने मुझे वह सब बताने को कहा था।"

उसकी बातें मेरी समझ में नहीं रही थीं, फिर भी मैं शिष्टतावश रहा था।

"आप कमिश्नर साहब को अपनी कहानी सुनाइए," पादरी ने फिर श्रीमती श्रोट से कहा।

'हां, तो अपने पति के मरने के बाद मैंने अपने प्यारे अलबर्ट श्रोट से विवाह कर लिया। मैं पचपन की थी, वह तेईस का। वह हमारे घर में ड्राइवर था। घर के दूसरे छोटे-मोटे काम, बागबानी, मरम्मत आदि भी करता था। हालांकि मेरी बहन ने इस विवाह को पसंद नहीं किया था, लेकिन फिर भी . . . श्रोट अनाथ था। उसकी मां . . . कोई श्रोट के पिता के बारे में नहीं जानता था। मेरे पति ने उसे तब घर में रखा था, जब वह सोलह साल का था। वह दिमाग से कुछ कमजोर था, इसलिए पढ़ नहीं पाया। देखने - भालने में खूब ऊंचा तगड़ा। हम लोग आपस में कम बातें करते थे। वह सिर्फ इतना कहता था, 'यस ममी। हलो ममी।' और हरदम अपने काम में जुटा रहता था। हमेशा मेरा कहना मानता था। कम से कम उस शोफर से तो अच्छा ही था, जिससे मेरी बहन ने शादी की थी।"

"श्रीमती श्रोट, अपनी कहानी सुनाइए", पादरी ने फिर कहा।

धीरे-धीरे अलबर्ट का दिमाग और भी सुस्त होता गया। वह बैठा-बैठा आसमान में घूरता रहता था। यह द्वितीय विश्व-युद्ध के दिन थे। लेकिन उसे सेना में भरती नहीं किया गया। वे लोग उसका दिमाग ठीक नहीं समझते थे। वह अकसर काले कपड़े पहनता था। हर हफ्ते ज्यूरिख में मेरी बहन के पास अंडे ले जाता था। एक रात वह लौटा तो काफी देर तक बाथरूम में हाथ-पैर धोता रहा। मैं गयी तो देखा, खून ही खून फैला था। हालांकि उसके बदन

पर कहीं चोट के निशान नहीं थे। सुबह मैंने अखबार में गाल कैंटन में एक लड़की की हत्या का समाचार पढ़ा। हत्या रेजर से की गयी थी। बस, मैं सब समझ गयी।

मैंने अलबर्ट से पूछा तो बोला, "ऊपर से आदेश मिला था।" उसने आकाश की ओर इशारा करके कहा, "मैं उस लाल स्कर्टवाली लड़की से जंगल में मिलता था। तभी एक दिन ऊपर से आवाज आयी और मैंने उसे मार दिया।" मैंने बहुत कहा-सुना तो उसने कहा, "अब कभी ऐसा नहीं होगा।"

कई साल गुजर गये। एक रात फिर अलबर्ट घर आया और बाथरूम में . . . हां ढेर सारा खून! कार भी खून से भरी थी। मेरे पूछने पर उसने बताया, "हां ममी, इस बार भी वह हो गया है। पर गाल केंटन में नहीं श्वाईज केंटन में हुआ है। वही ऊपर की आवाज . . ." मैं उस बार सब कह देना चाहती थी, पर मेरी उत्सुकता बढ़ती जा रही थी।

और कुछ दिन बाद अलबर्ट ने फिर वैसा ही किया। इस बार हत्या ज्यूरिख केंटन में हुई थी।

"क्या उसका नाम ग्रिटली था?" मैंने पूछा।

"हां, तीसरी लड़की का नाम ग्रिटली था। उसके बाद कुछ दिन तक अलबर्ट ठीक रहा, पर जल्दी ही उसकी तबीयत खराब होने लगी। घर का कोई भी काम ठीक से नहीं होता था। एक दिन फिर मैंने उसे जाते देखा, वह जेब में ब्लेड रख रहा था। मैंने पूछा तो बोला, "हां, ममी, इस बार सर्विस-स्टेशन पर फिर वैसी ही लड़की है—अन्ना। ऊपर की आवाज... आदेश दे रही है, मैं जा रहा हूं।"... रह गयी, पर वह कार में बैठकर... पंद्रह मिनट बाद पुलिस का... -- एक एक्सीडेंट में अलबर्ट की... हो गयी।

अब ग्रिटली मोसर की पूरी... मेरे सामने उभर रही थी। मथाई... बार-बार सामने तैर रहा था।... वहां से उठ गया। मैं जैसे... सर्विस-स्टेशन पर मथाई के पास पहुंच... चाहता था। वह ग्रिटली मोसर के... का इंतजार कर रहा था, लेकिन... कभी आनेवाला नहीं था।

टेवर्न में लोगों की भीड़... रही थी। उस ठंड में भी मथाई बाहर... था। उसके आसपास शराब की... रही थी। मैं उसके पास जाकर बैठ... उसने मेरी ओर देखा, पर वह... मेरे पार देख रहा था। मैंने... श्रीमती श्रोट से सुनी सारी कहानी... दी। पर शायद उसने एक भी शब्द... सुना। वह सुन नहीं रहा था, कुछ... भी नहीं पा रहा था। वह सिर्फ... कर रहा था। "तुम सही थे मथाई!"... कहा, पर मथाई ने कुछ नहीं सुना।... मुट्ठियां भींचकर चिल्लाया, "मैं... करता रहूंगा। प्रतीक्षा करता... वह आएगा, जरूर आएगा।"

दी हिन्दुस्तान टाइम्स की ओर से रामनन्दन सिन्हा द्वारा हिन्दुस्तान टाइम्स प्रेस, नई दिल्ली में मुद्रित तथा प्रकाशित

चलते चलते ....

सुशील कालरा

आप तो जनता के आदमी हैं। आप ब्लैक मार्केट और जमाखोरी करने वालों को पकड़ने में हमारी मदद करें

जब तक ब्लैक-मार्केट का कलंक इस पवित्र भूमि के नक्शे से नहीं मिट जाएगा, मैं चैन से नहीं बैठूंगा

इन्होंने इस क्षेत्र से चुनाव लड़ने की भी हमारी प्रार्थना मान ली है। अब गरीबों को कोई लूट नहीं सकेगा

नेता जी, आप के भतीजे ने काफी ब्लैक का धन इकट्ठा कर रखा है। घी, गेहूं आदि का भंडार भी जमा कर रखा है। क्यों न वहीं से श्रीगणेश करें

की न वही घटिया विरोधी दल वालों की सी बात..

..... समाजिक उत्थान के महान कार्य से आप तो एकदम व्यक्तिगत छीछालेदर पर उतर आए

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खटाऊ
टेरकोसा साड़ियां
'टेरीन'

100
1874-1974
Khatau THROUGH
100 YEARS

कादम्बिनी

मासिक प्रकाशन

मई १९७२

अगला बच्चा होने से पहले...ज़रा
सोचिये

क्या आप
पहले इस बच्चे
की सही देखभाल
करना नहीं चाहेंगे ?

इसकी अच्छी पढ़ाई-लिखाई का इन्तजाम इसके जीवन को सफल बनाना...आप उसे पूरा लाड़-प्यार देना
लेकिन अगला बच्चा जल्दी हो गया तो यह सब करना मुश्किल होगा। आप ऐसी स्थिति से बचना
निरोध की सहायता से अब आप अगले बच्चे के जन्म को तब तक टाल सकते हैं जब तक उसकी पूरी देखभाल
लायक नहीं हो जाते। निरोध पुरुषों के लिये है। यह परिवार को छोटा रखने का अच्छा और आसान
दुनिया भर में लाखों लोग वर्षों से इस्तेमाल कर रहे हैं। आप भी निरोध इस्तेमाल कीजिये

निरोध हर जगह मिलता है। सरकारी रियायती मूल्य : केवल 15 पैसे में 3

जब तक न चाहें, बच्चा न पायें

निरोध

लाखों की पसन्द • बढ़िया और आसान

जनरल मर्चेन्ट, दवा, परचून और पान आदि की दुकानों में

davp 71/460

संपादक
राजेन्द्र

आकल्पं कवि नूतनाम्बुदमयी कादम्बिनी वर्षतु

१४. कारवाँ साँस का राह में लुट गया ... राजेन्द्र अवस्थी

१८. मैं बताता हूँ तालाब में तैरने का सही तरीका...डॉ.शंकर-दयाल शर्मा

२६. भारतीय सम्राटों के हस्ताक्षर एवं मुहरें...लक्ष्मीकांत सरस

३०. आइंस्टाइन : भूली-बिसरी यादें ... साहब दयाल

३७. पाकिस्तान : अस्तित्व के लिए संघर्ष ... राजेश्वर दयाल

४३. अनभरा ही लौटा दिया... वियोगी हरि

४६. हिंदी पुस्तकें : विदेशों में संभावनाएँ ... डॉ. गोपाल शर्मा

५१. नटवरलाल .... देवेन्द्र उपाध्याय

५६. छह विवाह और छह सौ रोमांस ... बीरेन्द्र पांडेय

६१. हमारे शास्त्रीय नृत्य और रंगमंच .... मृणालिनी साराभाई

६७. शारदाग्राम .... ए. के. सिन्हा

८५. नजर चूकी माल यारों का ... सत्य सुमन

८७. प्रेतात्मा एक विदूषक की ... केन्नेथ एँडरसन

९२. दिल्ली की कहानी : चांदनी चौक. . . . महेश्वर दयाल

१०३. अनूदिता ... राजशेखर

१०८. कराहती हुई कालकोठरी ... अनंतगोपाल शेवड़े

११३. समर्थक से पिछलग्गू तक ... ओमप्रकाश गाबा

११५. एक सफर भूत के साथ ... कीर्तिस्वरूप रावत

१२०. नन्हे परमाणु की विराट शक्ति (२) ... गुणाकर मुळे

१२६. वही सो गये दास्तां कहते-कहते ...रामकुमार भ्रमर

१३२. मेघों का देश मेघालय — डॉ. श्यामसिंह शशि

वर्ष १२ : अंक ७
मई, १९७२

१३६. चमत्कार काव्य का . . . सतीशचन्द्र चतुर्वेदी

१४४. द्वारका . . . रामनारायण अग्रवाल

१४९. आइन रैंड . . . कुंथा जैन

१५३. देवफल आम . . . . पीताम्बर भागचंदानी

१५८. भिखारी भी चतुर होते हैं . . . वेदप्रकाश वर्मा

१६१. जानवरों का बचपन. . . चार्ल्स शर्मन

कविताएं

२४. यंत्र . . . . . भारतभूषण अग्रवाल

६६. पारमिता मन . . . प्रणवकुमार वंद्योपाध्याय

१२५. सार्थकता (प्रवेश) . . . सुरेन्द्र प्रबुद्ध

१६६. अनकहे हम-तुम . . . . . रमेश रंजक

कथा-साहित्य

७०. रात में आग...मिलेन ब्रांड

८०. आखिरी सीढ़ी . . . नरेन्द्र खजूरिया

१३८. खाँचे . . . . . .शशिप्रभा शास्त्री

स्तंभ

शब्द-सामर्थ्य—११, महकते जीवन-फूल — ३५, हँसने का मौसम—६५, क्षणिकाएँ—७८, मंच बहुरंगी—१०१, गोष्ठी—१६७, खोयी हुई आवाजें (सार-संक्षेप) — रणजीत देसाई — १७२, पुस्तक-दीर्घा—१९५.

चित्र परिचय

मुखपृष्ठ : धूप से बचने के लिए, छाया—ब्रह्मदेव
शारदाग्राम के दृश्य (पृष्ठ ६७, ६८) : प्रेषक—ए. के. सिन्हा
मेघालय की बालाएँ (पृष्ठ १३३, १३४) : छाया — मुल्कराज सिडाना

हिन्दुस्तान टाइम्स प्रकाशन
नयी दिल्ली–१
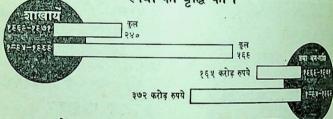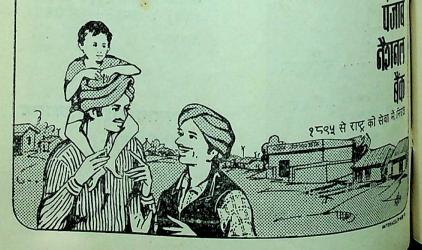
'कादम्बिनी' का अप्रैल अंक मुझे भारत आने पर देखने को मिला। जब मैं यहाँ था, 'कादम्बिनी' नियमित रूप से पढ़ता था। इस बार पूरे एक सप्ताह बराबर इस का पारायण करता रहा, इस अंक की रचनाएँ मुझे पसंद आयीं। 'संस्कृत के जरमन वैयाकरण डॉ. कीलहार्न' लेख विशेष रूप से अच्छा था। क्योंकि फ्रैंकफर्त में रहते हुए मुझे उन के बारे में जानने का मौका मिला है। वहाँ की जनता संस्कृत भाषा के पीछे पागल है। वहाँ के विद्वान रुचि के साथ संस्कृत पढ़ते हैं। उन का कहना है कि संस्कृत अगाध ज्ञान का अक्षुण्ण भंडार है और उसे पढ़ कर आसानी से यह अनुमान लगाया जा सकता है कि भारतवर्ष का वह युग बौद्धिक दृष्टि से बहुत संपन्न और समृद्ध था। डॉ. कीलहार्न ने संस्कृत के सारे ग्रंथों का बड़ी लगन के साथ अध्ययन कर उसे जरमन भाषा-भाषियों के लिए उपलब्ध किया था। उन का वहाँ आदरणीय स्थान है। उन्हें भारत में भी वही आदर मिलना चाहिए क्योंकि वे इस भूमि के बौद्धिक राजदूत माने जा सकते हैं।

'सार-संक्षेप' के अंतर्गत ईरान की भूतपूर्व मलिका सुरैया का जीवन-चरित्र प्रकाशित कर आप ने हिंदी पाठकों के ज्ञान का विस्तार किया है। ऐसी सामग्री निश्चित रूप से 'कादम्बिनी' के पाठकों को रुचिकर लगेगी।

पश्चिमी जरमनी से प्रकाशित होने वाले कई मासिक पत्रों को देखने का मुझे अवसर मिलता है। आज के जीवन की वास्तविकता को देखते हुए यह सही ढंग से समझ लेना चाहिए कि आज का पाठक बोझिल बौद्धिकता का पथगामी कदापि नहीं बन सकता। मासिक-पत्र उन के मनोरंजन और ज्ञान-वर्द्धन का माध्यम होते हैं। इसलिए उन्हें युग-सापेक्ष होना चाहिए। 'कादम्बिनी' मुझे अधिक बोझिल प्रतीत हुई, इसलिए यह

सुझाव देने का साहस कर रहा हूँ।

वैसे भी 'कादम्बिनी'-जैसी सुरुचि-संपन्न पत्रिकाएँ हिंदी भाषा और साहित्य के विकास में बहुत सहायक हो सकती हैं। यह काम आप कर रहे हैं और अधिक तत्परता के साथ करते जाएँगे, यह मैं आशा करता हूँ।

—डॉ. इन्दुप्रकाश पांडेय,
भारतीय संस्कृति विभाग, फ्रेंकफर्त विश्वविद्यालय, फ्रेंकफर्त (पश्चिमी जरमनी)

अप्रैल-अंक में 'आप की दृष्टि' के अंतर्गत डॉ. विनयकुमार मिश्र का पत्र पढ़ा। उन्होंने जो तथ्य प्रस्तुत किये हैं, उन से मैं सहमत नहीं हूँ। मांसाहारी होने के लिए पंजे प्रमाण नहीं हैं। मांसाहारी एवं दूसरे पशुओं में भिन्नता दीखती है, किंतु मनुष्य इन सब से अलग है। मांसाहारी पशुओं के पंजे होते हैं, तेज नाखून होते हैं, हाथ नहीं। प्रकृति ने हाथ केवल मनुष्यों को दिये हैं, या फिर बंदरों को। बंदर शाकाहारी होते हैं। अपवादस्वरूप गोरिल्ला के मांसाहारी होने का उल्लेख किया जा सकता है, किंतु वे मूलतः शाकाहारी ही होते हैं।

मांसाहारी और शाकाहारी पशुओं के दाँतों में भी भिन्नता होती है। [illegible] ने बताया है कि अंडा हानिकारक नहीं होता, यह भ्रम है। अंडे में प्राकृतिक डी. डी. टी. विष होता है, जो स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है। अंडा [illegible] रक्त-दोष पैदा करता है। फेफड़ों की शक्ति घटाता है। मछली का सेवन भी अधिक लाभदायक नहीं।

प्रायः देखा गया है कि तपेदिक के रोगी अधिक अंडे एवं मांसाहार के कारण फिर से रोगग्रस्त हो जाते हैं। उत्तम स्वास्थ्य के लिए मांसाहार हानिकारक होता है। इस से आयु घटती है। संसार के दीर्घजीवी लोग शाकाहारी हैं। पश्चिमी देशों में शाकाहार के प्रचलन का यह भी एक कारण है।

—डॉ. कृष्णचन्द्र त्रिपाठी,
बीसलपुर, जिला पीलीभीत (उ.प्र.)

पाठकों से निवेदन

'कादम्बिनी' के प्रस्तुत अंक में प्रकाशित कुछ रचनाएँ आप को अच्छे स्तर की लगेंगी, हो सकता है कुछ रचनाएँ पसंद न आयें। कृपया अपनी निष्पक्ष, निर्भीक राय हमें भेजें। जो चुनी हुई प्रतिक्रियाएँ इस स्तंभ में प्रकाशित होंगी, उन पर पारिश्रमिक स्वरूप दस रुपये दिये जायेंगे. — सं.

निम्नलिखित शब्दों के जो सही अर्थ हों उन पर चिह्न लगाइये और पृष्ठ १३ पर दिये गये उत्तर से मिलाइये

१. **निरापद**——क. स्वच्छंद, ख. निर्विघ्न, ग. सुखी, घ. बिना पैर का।

२. **फलापेक्षा**——क. सफलता, ख. कामना, ग. दूरदर्शिता, घ. फल की आशा।

३. **सृष्ट**——क. संसार, ख. रचना, ग. निर्मित, घ. सब।

४. **अनावासिक**—— क. जो जरूरी न हो, ख. घूमने-फिरनें वाला, ग. कहीं और निवास करने वाला, घ. बिना घर का।

५. **यूथ**——क. युवावस्था, ख. स्तंभ, ग. समूह, घ. शीघ्रता।

६. **सत्यात्मक**——क. यथार्थ, ख. सच बोलने वाला, ग. सच्चाई को परखने वाला, घ. सच्चाई जिस का सार हो।

७. **अनिकेत**——क. अनिश्चित, ख. अविश्वसनीय, ग. जिस का अपना कोई रहने का स्थान न हो, घ. अनियमित।

८. **ऊष्मा**——क. सुंदरता, ख. गरमी, ग. कोप, घ. तेजी।

९. **अचिंत्य**——क. बेफिक्र, ख. लापरवाह, ग. जिस का चिंतन न हो सके, घ. आशाप्रद।

१०. **प्रतिपरीक्षण**——क. दोबारा परीक्षा, ख. जाँच-पड़ताल, ग. गवाह से जिरह, घ. अवलोकन।

११. **वास्तुविद**—— क. व्यापारी, ख. भवन-निर्माण कला जानने वाला, ग. वस्तुओं को परखने वाला, घ. यथार्थवादी।

१२. **साश्रु**——क. सचेत, ख. चकित, ग. अश्रुसहित, घ. धीरे।
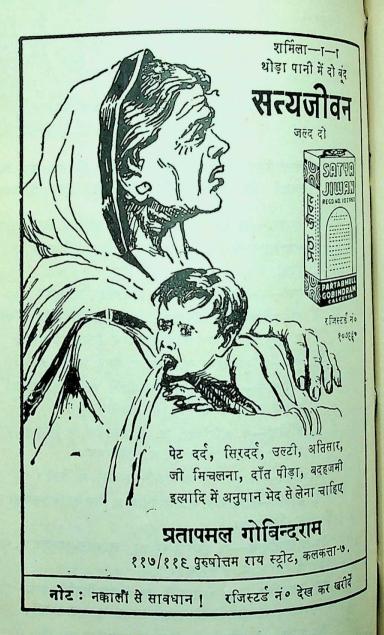
शब्द-सामर्थ्य के उत्तर

१. **निरापद**--ख. निर्विघ्न। मेरी यात्रा **निरापद** रही।

२. **फलापेक्षा**--घ. फल की आशा। सामान्यतः हमारे प्रत्येक कार्य के पीछे **फलापेक्षा** होती है।

३. **सृष्ट**--ग. निर्मित। आस्थावान लोग समस्त विश्व को ईश्वर-**सृष्ट** मानते हैं।

४. **अनावासिक**--ग. कहीं और निवास करने वाला (नान-रेजीडेंट)। **अनावासिक** छात्रों (डे-स्कालर्स) के लिए हर प्रकार की सुविधाएँ जुटायी हैं।

५. **यूथ**-- ग. समूह। मैसूर के जंगलों में हाथियों के **यूथ** देखे जा सकते हैं।

६. **सत्यात्मक**--घ. सच्चाई जिस का सार हो। **सत्यात्मक** ज्ञान ही लाभप्रद होता है।

७. **अनिकेत**--ग. जिस का अपना कोई रहने का स्थान न हो। उस का सारा जीवन ही **अनिकेत** रह कर बीता।

८. **ऊष्मा**--ख. गरमी। सौर-**ऊष्मा** से पृथ्वी का जीवन पलता है।

९. **अचिंत्य**--ग. जिस का चिंतन न हो सके, ईश्वर का स्वरूप **अचिंत्य** है।

१०. **प्रतिपरीक्षण**--ग. गवाह से जिरह (क्रास-एग्जामिनेशन)। कठोर **प्रतिपरीक्षण** से गवाह घबरा गया।

११. **वास्तुविद**--ख. भवन-निर्माण कला जानने वाला (आर्कीटेक्ट)। पुरातन **वास्तुविद** आधुनिक वास्तुविदों से कम कुशल नहीं थे।

१२. **साश्रु**--ग. अश्रुसहित। उस ने मुझे **साश्रु** विदाई दी।

जन्म : २१ फरवरी, १९२१   निधन : १३ अप्रैल, १९७२

कारवाँ साँस का

'दोषी' जी नहीं रहे, यह विश्वास नहीं होता। अब भी ऐसा भान होता रहता है कि किसी भी वक्त 'दोषी' जी का फोन आ सकता है या किसी भी वक्त वे स्वयं आ धमकेंगे। आदमी का आदमी के साथ दुख का रिश्ता है, इसीलिए एक अपरिचित आदमी की मौत भी दूसरे को दुख पहुँचाती है। फिर जो एक-दूसरे के इतने निकट रहे हों और कई बड़ी समस्याओं, चिंताओं और परेशानियों में जिन्होंने साथ दिया हो, उन का बिछुड़ना कितना मर्मांतक हो सकता है!

'दोषी' जी की अंतिम कविता जो उन्होंने अस्पताल में लिखी थी

बस री फुरकैया अब और नहीं बस
सखियारे पीपल की उंगलियाँ मरोड़ कर
बौराए बरगद के कंधे झिंझोड़ कर
जा बैठी चौबारे कूद कर मुँडेर से
दाँत भींच कस कर जा लिपटी कनेर से
कुछ नहीं लाज-शरम
नहीं कोई धरम-करम
कौन फड़ पी आई बैठ कर चरस
बस री फुरकैया —

रामानन्द दोषी

राह में लुट गया

• राजेन्द्र अवस्थी

कार्यालय में जाते ही न जाने क्यों लगता रहता है कि लकड़ी के परदे के पीछे अब भी 'दोषी' जी बैठे हैं। उन का उन्मुक्त हँसता हुआ चेहरा सहज ही नहीं भूल सकता। पिछले सात वर्षों से मुझे 'दोषी' जी को निकट से जानने का अवसर मिला है। इस के पूर्व मैं उन्हें एक समर्थ गीतकार के रूप में जानता रहा हूँ।

एक बार मैं ने उन के गीत पढ़े थे और उन गीतों की इन दो पंक्तियों पर आ कर सहसा मैं रुक गया था :

हर दिल है कबरिस्तान
जहाँ अरमा दफनाये जाते हैं

और

जीवन प्यासा ही लौट चला
पनघट से भी मरघट से भी

'दोषी' जी का दिल कबरिस्तान रहा है, इस में मुझे संदेह है। उन के रसमय मधुसिक्त जीवन में विजय-पताकाओं और प्राचीरों की कमी नहीं रही। वे यदि एक सहृदय कवि थे तो उतने ही उदार और प्रेमी-हृदय के विशाल व्यक्तित्व-संपन्न प्रतिभाशील पुरुष। एक अच्छे मित्र और अच्छे साथी के उन में गुण विद्यमान थे। इन के बावजूद वे अरमानों की अतृप्ति का बोझ नहीं ढोते रहे, मैं नहीं कह सकता। तृप्त कौन है? तृष्णा ही जीवन है और उस की पूर्ति जीवन का अंतिम लक्ष्य-बिंदु। उस बिंदु तक पहुँचने में साँसों की सार्थकता नहीं है।

'दोषी' जी छायावादी युग में न हो कर भी छायावादी कवि थे। उन के आरंभिक गीत इस के प्रमाण हैं। उन में प्रणय की अदम्य लालसा है, लेकिन न जाने क्यों उन के हर गीत का अंतिम स्वर जीवन की सार्थकता के समापन में टूटा है। क्या मृत्युबोध की कोई अलक्ष्य प्रतिध्वनि उन के भीतर निरंतर गूँजती रही है? कदाचित इसीलिए ५१ वर्ष की आयु में ही काल के क्रूर हाथों ने उन्हें हम से छीन लिया। न जाने कब और किन क्षणों में उन्होंने लिखा था कि उन का जीवन पनघट से और मरघट से दोनों जगह से प्यासा ही लौट रहा है। मृत्यु के बाद की उस शाम जो मित्र निगमबोध घाट से लौटे हैं और जिन्होंने इस के पूर्व 'दोषी' जी को मृत्यु से सतत संघर्ष करते हुए देखा है, उन्होंने इन पंक्तियों की सार्थकता का अवश्य ही अनुभव किया होगा।

'दोषी' जी के निजी जीवन का मुझे बहुत ज्ञान नहीं है, लेकिन इतना अवश्य जानता हूँ कि वे संघर्षशील जीवन के प्रतीक रहे हैं। द्वितीय महायुद्ध के समय बर्मा के युद्ध-मोर्चे की रोमांचक घटनाओं का उल्लेख उन्होंने बहुत बार किया है। यदि उन का मन कवित्व की विहंगमता से ओतप्रोत न होता तो शायद वे एक सफल सैनिक होते, लेकिन उन्मुक्त नरसंहार को एक कवि-हृदय व्यक्ति कैसे देख सकता है। सन १९४६ में उन्होंने पत्रकारिता में प्रवेश किया। वे पिछले ११ वर्षों से 'कादम्बिनी' का संपादन कर रहे थे।

'दोषी' जी ने कम लिखा है, लेकिन जितना लिखा है, ठोस और मार्मिक है। 'गीलेपंख' उन की कविताओं का उपलब्ध संकलन है। उन का एक और काव्यसंकलन छप कर तैयार है, जिस के अनेक गीत उन की स्मृति के कीर्तिस्तंभ बन कर हिंदी जगत में छाये रहेंगे। पिछले २-३ वर्षों से 'दोषी' जी का कवि नये प्रतीकों और नये प्रतिमानों को स्वीकार करता जा रहा था। कई बार अपनी नयी कविताएँ उन्होंने मुझे सुनायी हैं और सहज शब्दों और छोटे कलेवर में उन्होंने गंभीर बातें कह डाली हैं। यह निश्चय ही उन के कवि का बदलता हुआ युग-सापेक्ष नया रूप था और इसी वेला में उन के स्वर अचानक मौन हो गये।

'दोषी' जी एक गंभीर रोग से पीड़ित थे, लेकिन उस का पता तब चला जब साँसों की गिनती पूरी होने का समय निकट था। आपरेशन के बाद पता चला कि उन के मस्तिष्क में पेरासाइट्स थे। ये हरी सलाद, सूअर के कच्चे मांस या भेड़ के मांस के साथ शरीर में प्रवेश कर जाते हैं और सीधे मस्तिष्क में शरण लेते हैं। एक कवि के मस्तिष्क में यह विकार भी एक विडंबना है। 'दोषी' जी का जीवन जितना नियमित, सहज और स्थिर रहा है, उस में ऐसे रोग की कल्पना भी नहीं की जा सकती। लेकिन लगता है ऊपर से शांत दिखायी देने वाली इस स्थिरता के भीतर कोई-न-कोई कीड़ा बहुत पहले ही उन में लग गया था और उस ने उन के भीतर को छेदना शुरू कर दिया था। उन्हीं के शब्दों में—

एक क्षण यदि हँसी का कभी जुट गया
कारवाँ साँस का राह में लुट गया
जिंदगी आँसुओं में रही भीगती
प्यार का शव बिना ही कफन उठ गया

आज जब 'दोषी' जी नहीं हैं तो अचानक कई प्रश्न हमारे मन में उठ खड़े होते हैं। यह उन प्रश्नों के विश्लेषण का अवसर नहीं है। 'दोषी' जी हमारी साँसों के अंतिम क्षणों तक उन अलक्ष्य प्रश्नों के साथ जीवित बने रहेंगे, इस में संदेह नहीं है।

जीवन-यात्रा के अंतिम लक्ष्य तक पहुँचने में जितने भी संघर्ष करने होते हैं, सभी दूसरे सुखद जीवन का पथ प्रस्तुत करते हैं। जीवन यहीं समाप्त नहीं होता, वह निरंतन चक्र की तरह चलता ही रहता है।

—मिलर

डॉ. शंकरदयाल शर्मा
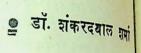
पंडित नेहरू का व्यक्तित्व सचमुच ही गुलाब का वह फूल था जो न कभी कुम्हलाया और न कभी मुरझाया और जिस की हर पंखुरी में एक नया आकर्षण, एक नयी ताजगी और एक नयी खूबसूरती थी। भारत की पुरानी धरती पर प्रमुक्त वे एक नयी शक्ति थे। लोगों को पहले उन्हें जानना पड़ा, समझना पड़ा, जानने के बाद कुछ सीमा तक अभ्यस्त भी होना पड़ा। यही अभ्यस्तता समय पा कर आदर का रूप ले लेती थी और फिर आदर अटूट प्रेम में बदल जाता था।

पंडितजी को सर्वप्रथम मैं ने १९३५ में देखा था। उस समय मैं इलाहाबाद विश्वविद्यालय में बी. ए. का छात्र था। विश्वविद्यालय में समाजवाद के प्रशिक्षणार्थ एक स्वयंसेवक दल संगठित किया जा रहा था। पंडितजी इस दल के संगठन और कार्यक्रमों में विशेषरूप से दिलचस्पी ले रहे थे। उन के पहले भाषण ने ही हम लोगों को उन का मुरीद बना दिया, हालांकि वह भाषण सही अर्थों में भाषण न हो कर

मैं बताता हूँ तालाब में तैरने का सही तरीका !

आपसी बातचीत-जैसा ही था। दल की बैठकों के सिलसिले में मुझे अनेक बार उन्हें देखने और सुनने का अवसर मिला और मेरे मन-मानस पर अंकित उन के व्यक्तित्व की छाप उत्तरोत्तर गहरी होती गयी।

मैं ने देखा कि जो भी संवेदनशील हो कर स्वस्थ भावनाओं के साथ उन के निकट आया वह उन की ईमानदारी और सहज व्यक्तित्व से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सका। उन के व्यक्तित्व की आकर्षण-शक्ति सीधे हृदय को स्पर्श करती थी और वह स्पर्श इतना कार्य-प्रेरक और चेतनावर्धक होता था कि उस की तुलना में अनेक प्राकृतिक शक्तियाँ भी अकसर फीकी जान पड़ती थीं।

जहाँ तक पंडितजी के निकट संपर्क में आने की बात है इस का सौभाग्य मुझे १९५१ में उस समय प्राप्त हुआ जब मैं मध्यप्रदेश कांग्रेस का अध्यक्ष निर्वाचित किया गया। यह पंडितजी के प्रति मेरे अनुराग और मेरे ऊपर उन की विशेष

कृपा का ही परिणाम था कि मैं लखनऊ विश्वविद्यालय से रीडर का पद त्याग कर एक दिन राजनीति के क्षेत्र में आया। बाद में ज्यों-ज्यों मेरे ऊपर उन की कृपा-अनुकंपा बढ़ती गयी त्यों-त्यों मैं उन के व्यक्तित्व के उन पहलुओं से और भी परिचित होता गया जो मनुष्य को 'महापुरुष' की संज्ञा प्रदान करते हैं।

एक अभिभावक

पंडितजी की कुछ बातें मुझे अकसर याद आती हैं। एक दिलचस्प बात उस समय की है जब मध्यप्रदेश के मुख्यमंत्री-पद के लिए किसी व्यक्ति के चुनाव का प्रश्न सामने आया। मैं उस समय लखनऊ विश्वविद्यालय में कानून का प्राध्यापक था। अध्ययन और अध्यापन की दुनिया का एक अपना अलग आकर्षण होता है। उस की एक अपनी गरिमा है। मैं उस समय यद्यपि एक दृष्टि से पूरी तरह राजनीति में प्रविष्ट हो चुका था, फिर भी अपने प्रिय विषय 'कानून' के प्रति मेरा मोह पूर्ववत था पंडितजी ने फैसला किया कि मैं मध्यप्रदेश जा कर मुख्यमंत्री का पद सँभालूं। किंतु मेरी इच्छा थी कि मैं लोकसभा में जाऊँ। मैं ने कांग्रेस संसदीय बोर्ड में मौलाना आजाद, श्री पुरुषोत्तमदास टंडन आदि से अपनी इच्छा व्यक्त की। मौलाना ने मेरे निवेदन पर पंडितजी से कहा, "डॉ. शर्मा लोकसभा में आना चाहते हैं। उन का कहना है कि कानून के प्रोफेसर होने के नाते वे लोकसभा में कुछ सीख भी सकेंगे।"

"वहाँ क्या सीखेंगे, फिजूल की बात है।" पंडितजी ने एक ही वाक्य में बात के सिलसिले का अंत कर दिया। दूसरे दिन कुछ मित्रों और साथियों द्वारा प्रेरित किए जाने पर मैं ने अपने मंतव्य की सिद्धि के लिए स्वयं पंडितजी से बात करने की चेष्टा की। मैं ने पंडितजी से कहा, "पंडितजी, आप जानते ही हैं मैं ने 'ला' (कानून) पढ़ा है और लोकसभा में ..."

इस के पहले कि मैं कुछ आगे कहूं पंडितजी ने बड़े प्यार से झिड़कते हुए कहा, "हाँ, . . . हाँ मालूम है, बहुत 'ला' पढ़े हो! "

और इस के बाद वे इस प्रकार खामोश हो गये जैसे एक अभिभावक अपने बच्चे की अबोधता को देख कर मन ही मन मुसकरा रहा हो।

निश्चय के पक्के

पंडितजी जहाँ अपने निश्चय के पक्के थे वहीं लोकतंत्र में उन की आस्था भी गजब की थी। यह उन्हीं की इच्छा थी कि मैं मध्यप्रदेश का मुख्यमंत्री-पद सँभालूं। उन की इच्छा मेरे लिए उन की आज्ञा से बढ़ कर थी। मैं मध्यप्रदेश गया। इसी बीच कुछ लोगों ने यह कहना शुरू किया कि मुख्यमंत्री-पद के लिए मेरे नाम का निर्णय लोकतंत्रीय पद्धति से नहीं हुआ। पंडितजी पर उस की तुरंत प्रतिक्रिया हुई। उन्होंने मुझे बताया और कहा कि मुख्यमंत्री-पद के लिए विधिवत चुनाव होगा। उन की इस बात पर रफी साहब और नवीनजी

जैसे मेरे अनेक हितैषी चौंक पड़े। नवीनजी ने मुझ से कहा, "शर्मा, तुम पंडितजी से कह दो जा कर–'ले सँभाल अपनी घोड़ी, मैं ने तेरी नौकरी छोड़ी।'

कुछ ऐसे भी थे जो यह नहीं चाहते थे कि मैं मुख्यमंत्री बनूं। उन में से एक वरिष्ठ नेता पंडितजी के बड़े आत्मीय थे। वह निश्चय ही मेरे विरोधी न थे किंतु मुख्यमंत्री के रूप में मुझे शायद पसंद नहीं करते थे। अ. भा. कांग्रेस कमेटी की मीटिंग होने वाली थी। उसी समय उन्होंने मौका ढूंढ़ कर पंडितजी से मुझे मुख्यमंत्री न बनाने की सलाह देने का प्रयत्न किया। पंडितजी टहल रहे थे। वे उन के पास पहुँचे और बातचीत का सिलसिला शुरू करते हुए उन्होंने कहा, "डॉ. शर्मा आदमी तो अच्छे हैं लेकिन जरा घमंडी लगते हैं..."

"आदमी घमंडी नहीं शानदार है। मुझे पसंद है।"

बुजुर्गवार यह समझ कर कि पंडितजी अब आगे उन की बात सुनने के मूड में नहीं हैं, वापस लौट आये। बाद में जब मैं मुख्यमंत्री-पद के लिए निर्वाचित हो गया तो पंडितजी ने मुझे एकांत में बुला कर कहा, "देखो...से हमेशा पूरी शिष्टता से बात करना। उन्हें कभी यह महसूस न होने पाये कि चूंकि उन्होंने तुम्हारा विरोध किया है इसलिए तुम उन्हें पसंद नहीं करते और तुम्हारे प्रशासन में उन्हें पूरा सम्मान नहीं मिल रहा है।

वचन-वीथी

- प्रसन्नता से बोझ हलके हो जाते हैं।
  —ओविड
- चरित्र निश्चित रूप से सधी हुई इच्छा है।
  —नोवेलिस
- मैं चाहूंगा कि मेरे हाथ से अधिकतम कल्याण हो, क्योंकि मुझे एक ही बार इस पथ से गुजरना है।
  —बाइबिल
- प्रत्येक व्यक्ति अपने परिवेश का प्रतीक है।
  —शेक्सपियर
- बाधाएँ मन को दृढ़ बनाती हैं, जैसे परिश्रम शरीर को।
  —सेनेका
- पुरुष किसी स्त्री का सम्मान इसलिए नहीं करता कि वह क्या कहती है, बल्कि इसलिए करता है कि वह क्या सुनती है।
  —जार्ज नाथन
- भाग्य छाया की तरह होता है। समय पर उस का आभास पा लेने में ही सफलता निहित है।
  —बेकन

दंगों से चिढ़

पंडितजी लगभग सभी पूर्वादर्शों, दृष्टांतों और नजीरों से ऊपर थे। उन का हृदय, उन का रोम-रोम भारत और भारत-वासियों के प्रति उन के अगाध प्रेम से आप्लावित रहा। इसीलिए उन्हें सांप्रदायिक दंगों से बेतहाशा चिढ़ थी।

एक बार कांग्रेस-महासमिति की बैठक चल रही थी। मैं और डॉ. काटजू एक स्थान पर एकसाथ खड़े बातें कर रहे थे। पंडितजी आये और हम लोगों को देखते ही सब को पीछे छोड़ते हुए तेजी से हमारी ओर बढ़ने लगे। मुद्रा और चाल-ढाल से बहुत क्रोधित और व्यथित जान पड़ते थे। पास आते ही वे मुझ पर बरस पड़े। कारण था भोपाल में सांप्रदायिक दंगे। उन्होंने उन दंगों के लिए मुझे काफी खरीखोटी सुनायी और पूछा, "तुम्हारे होते हुए ये दंगे कैसे हुए? तुम क्या कर रहे थे उस वक्त?"

डॉ. काटजू मेरे साथ ही खड़े थे, लेकिन पंडितजी उन की ओर मुखातिब नहीं हुए, जैसे सारी जिम्मेदारी मेरी ही थी। मैं ने दबी आवाज से कहा कि 'होम' का 'पोर्टफोलियो' मेरा नहीं था।" इस पर वे और भी भड़क उठे, "पोर्टफोलियो था या नहीं, तुम ने ऐसा होने क्यों दिया?"

मैं मन-ही-मन बड़ा परेशान था। साथ ही मुझे इस बात का अहसास भी हुआ कि पंडितजी का गुस्सा बेमानी नहीं था। मानवता का रक्षक मानवता का ह्रास और उस की पीड़ा को भला कैसे सह सकता था?

ताल तो भूपाल

पंडितजी दूसरी ओर चले गये। मैं अपने चेहरे की उदासी पर काबू पाने का प्रयत्न करने लगा। बैठक का समय होने पर जब सभी लोग हाल के भीतर जाने लगे तो मैं ने पुनः पंडितजी को अपनी ओर आते देखा। इस बार वे मुसकरा रहे थे। उन्होंने मेरे कंधे पर हाथ रखा और मंच की ओर बढ़ने लगे। मंच तक वे मुझ से हँस-हँस कर तरह-तरह की बात करते रहे। मंच के पास पहुँच कर जहां अनेक वरिष्ठ नेता उन की प्रतीक्षा कर रहे थे, उन्होंने कदाचित दूसरों को सुनाते हुए विनोद के स्वर में मुझ से पूछा, "क्यों जी, तुम्हारे यहाँ की वह कहावत क्या है... 'ताल तो भूपाल ताल . . .'"

इस पर सभी लोग जोर से हँस पड़े। मुझे भी हँसी आ गयी।

बाद में मेरे कंधे पर हाथ रखे-रखे ही मंच पर गये और बड़े प्रेम से उन्होंने मुझे अपने पास ही बिठा लिया। मुझे यह समझते देर न लगी कि पंडितजी आवेश में आ कर पहले तो सब के सामने मुझे डांट गये, किंतु बाद में कदाचित जब उन्होंने महसूस किया कि उन से अनजाने में एक अनुचित कार्य हो गया है तो उन्होंने मुझे प्रोत्साहित करने के लिए मेरे प्रति अपने अगाध स्नेह का सार्वजनिक प्रदर्शन ही नहीं किया वरन मेरा मन बहलाने के लिए हास्य एवं विनोद की बातें भी छेड़ीं।

किस्मत नहीं बाँधी जा सकती

जनता का हित उन की दृष्टि में सर्वोपरि था। इस का एक उदाहरण मुझे और याद आता है। भोपाल की एक बड़ी हस्ती ने कानून का सहारा ले कर लगभग ३३ गाँवों को अपनी वैयक्तिक संपत्ति घोषित कर दिया था। कानून उन के साथ था, लेकिन जनहित की दृष्टि से यह सरासर अन्याय था। बड़े-बड़े विधिवेत्ता उसी का समर्थन कर रहे थे, राज्य में भी और केंद्र में भी। मैं पंडितजी के पास आया। उन्होंने बड़े ध्यान से समस्या के हर पहलू को सुना और एक क्षण में ही अपना निर्णय देते हुए कहा, "कानून क्या होता है, यह तो 'ह्यूमन प्राबलम' (मानवीय समस्या) है। इसे मानवीय हित की दृष्टि से हल किया जायेगा। ३३ गाँवों के निवासियों की किस्मत किसी नवाब के खूँटे से नहीं बाँधी जा सकती।"

क्रोध की सीमा

मैं ने पंडितजी को गुस्सा होते हुए भी देखा है, द्रवित होते हुए भी देखा है। गरीब जनता की दयनीय स्थिति उन्हें हर समय व्यथित किये रहती थी। भोपाल में ही जब वे मेडीकल कालिज के समारोह का उद्घाटन करने जा रहे थे तो रास्ते में उन मजदूरों की बस्ती पड़ी जिन्होंने मेडीकल कालिज के निर्माण में कार्य किया था। पंडितजी ने गाड़ी रोक दी और मुझ से बोले, "इन लोगों के रहने का कम से कम ऐसा इंतजाम तो होना ही चाहिए कि ये अपने घरों में सीधे खड़े हो सकें।"

बच्चों के साथ उन्हें मैं ने बच्चों-जैसा सरल और सहज पाया। एक बार वे भोपाल आये तो वहाँ लालकोठी में उन के ठहरने की व्यवस्था की गयी। उन दिनों भगवानसहायजी भी वहीं थे। उन की दोनों छोटी बच्चियों ने पंडितजी को बताया कि वे अकसर कोठी के प्रांगण में बने तालाब में तैरती हैं। पंडितजी उन के कहने पर उन्हें तैरते हुए देखने गये। जब दोनों बालिकाएँ तैर रही थीं तो पंडितजी ने उन्हें बुलाया और कहा, "ठहरो, मैं बताता हूँ तालाब में तैरने का सही तरीका।"

और कोठी में मौजूद सभी व्यक्ति उस समय आश्चर्यचकित-से रह गये जब भारत का प्रधानमंत्री सचमुच ही उस तालाब में उतर कर इन बालिकाओं को तैरना सिखाने लगा।

पंडितजी एक महान राजनीतिज्ञ, दार्शनिक ऋषि, भविष्य-दृष्टा, मसीहा या पैगंबर थे—कहने में हिचक होती है। उन के महान व्यक्तित्व में इन सभी का समावेश था। और इस से भी अधिक महत्त्वपूर्ण बात यह थी कि उन के द्वारा एक पूरे महाद्वीप का जन-समाज एकाएक प्रमुदित और आह्लादित हो उठा और उसे मिली विजयोल्लास की वह सशक्त वाणी, जिस से आगे चल कर स्वदेशगौरव के स्वर मुखरित हो सकें।

(महामंत्री, अखिल भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस कमेटी, ४० कॅनिंग लेन, नयी दिल्ली-१)
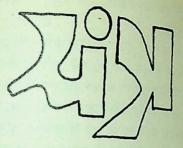
यंत्र के अनगिनत रूप हैं

बिजली फेल होने से
अस्पताल में आपरेशन-टेबिल पर
अँधेरा हो जाने की जो विडंबना है
यंत्र का रूप सिर्फ उतना ही नहीं है
उस का एक अदृश्य, अमूर्त और इसीलिए अधिक मारक रूप भी है
जिस को हम अनदेखा नहीं कर सकते

एक और बिजली है जो वाशिंगटन में फेल हो गयी है
और बाँग्ल्य देश में अँधेरा छा गया है
हम ठिठक कर खड़े चीखें सुन रहे हैं
क्योंकि हर यंत्र हमें छोटा कर देता है
चाहे वह शांति का ही यंत्र हो
इंसान के सीने की धड़कन से दूर
कागजों के अंबार में
प्यार की धार सूख जाती है
उजड़े गाँव का दर्द
जब अपील का पोस्टर
या चैरिटी डांस बनता है
तो वह भी मशीन बन जाता है—

रुपया, संस्था, तंत्र : सब यंत्र हैं
यंत्र--खुशी की बात है--खोखला होता है
चाहे वह माचिस हो या सातवाँ बेड़ा
उस की सारी शक्ति डराने में है
उस से डरो तो आसमान जेल बन जाता है
और फूल परमाणु-बम
झूठ से बने उस के फौलादी पंजे
हमारा गला घोंटने को बढ़ते हैं
और धरती मरघट बन जाती है
उस से बचने का एक ही उपाय है
कि जब सड़कों पर सुरंगें बिछी हों
तोपों से गोलियाँ और विमानों से बम बरसते हों
तब अपनी मुट्ठियाँ हवा में उछाल कर
यंत्र को चुनौती दो
हमें जीने का अधिकार है
हम जियेंगे
हम जियेंगे

– भारतभूषण अग्रवाल –
(सी. ५६, जंगपुरा एक्सटेंशन, नयी दिल्ली–१४)

• लक्ष्मीकान्त सरस
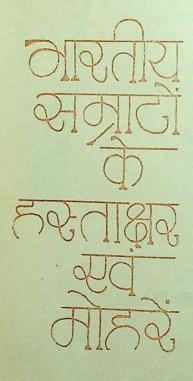
अतीत में झाँक कर देखें तो हस्ताक्षरों का एक दिलचस्प इतिहास मिलेगा। किसी भी सरकारी या गैर-सरकारी लिखित प्रारूप के नीचे अँगरेजी में 'सिगनेचर', उर्दू में 'दस्तखत' और हिंदी में 'हस्ताक्षर' शब्द लिखा रहता है। इस के ऊपर कलम द्वारा हस्ताक्षर किया जाता है। इसी प्रकार प्राचीन भारत में 'स्वहस्तोमम' शब्द जोड़ा जाता था। यह उपसर्ग विशेष कर राजाओं के नाम के आगे लगाया जाता था। धार के राजा भोज के एक हस्ताक्षर पर 'स्वहस्तोमम श्री भोजदेवस्य' लिखा है। साजसज्जा युक्त एक सुंदर हस्ताक्षर है—राजा हर्षवर्धन का, जिस में 'स्वहस्तोमम महाराजाधिराज श्री हर्षस्य' लिखा है।

राजाओं के अब तक मिले हस्ताक्षरों में यह पहला और अद्वितीय हस्ताक्षर है जो बहुत ही कलात्मक ढंग से किया गया हस्ताक्षर है।

तेलुगु राजाओं के अभिलेखों में उन के नाम के पीछे प्रत्यय रूप में 'वरलू' लिखा जाता था। एक उदाहरण मिलता है जिस में 'सिगनयनिवरलू' लिखा है। कभी-कभी मात्र 'हस्ताक्षर' या 'स्वहस्तोमम' शब्द लिख कर उस के आगे राजा का हस्ताक्षर ले लिया जाता था। एक हस्ताक्षर राजा मूलराज का है जिस में केवल 'श्री मूलराजस्य' लिखा है। विजयनगर के स्वीकृति-पत्रों में भी केवल राजा का नाम इस तरह लिखा है—श्री हरिहर। कभी-कभी हम्पी श्री विरुपक्ष के

पूर्वी चालुक्यीय ताम्रपत्र में मुहर (बायें) विष्णुकुन्दि विक्रमन्दवर्मन द्वितीय की मुहर (दायें)

प्रमुख मंदिर के प्रमुख देवी या देवता का नाम राजा के हस्ताक्षर के बदले दे दिया जाता था। प्रयोजन यह होता था कि राजा ईश्वर की ओर से कार्य कर रहा है। राजा के हस्ताक्षर हों या न हों, या हस्ताक्षर कैसे भी किये गये हों, उन पर राजकीय

श्री हरिहर

मुहर लगाना आवश्यक था।

हस्ताक्षर के बाद लिखित अभिलेख या कागजातों में किसी का महत्त्व है तो वह है मुहर या ठप्पा का निशान। प्राचीन काल में भी स्वीकृति-पत्रों या अभिलेखों में मुहर लगाना सब से महत्त्वपूर्ण कार्य था। प्राचीन साहित्य में कई स्थानों पर मुहरों की महत्ता पर लघु कहानियाँ, नाटक आदि लिखे गये हैं। 'रामायण' में उल्लेख है कि सीताजी हनुमानजी को रामचंद्रजी का दूत मान कर तब ही विश्वास करती हैं जब हनुमानजी वह अँगूठी प्रस्तुत करते हैं जिस में रामचंद्रजी का नाम खुदा था।

राजकीय चिह्न वाली अँगूठी का प्रयोग कभी-कभी ही होता था। दुष्यंत ने शकुंतला को जो अँगूठी स्मरण के लिए दी थी उस में राजा की मुहर थी। यह लघु कथा 'अभिज्ञान-शाकुन्तलम्' में वर्णित है। लेकिन इस राजमुहर का प्रयोग विशेष रूप से ही होता था।

खुदाई में बहुत-सी राजकीय मुहरें पायी गयी हैं जो छोटे, बड़े, चौकोर, गोल आदि आकृतियों में विभिन्न धातुओं और

स्वहस्तोमम महाराजाधिराज श्री हर्षस्य

मिट्टी की बनी हैं। व्यक्तिगत मुहरें, संस्था या परिषद की सामाजिक मुहरें, उच्च पदाधिकारियों एवं प्रतिष्ठित व्यक्तियों की मुहरें, सामान्य व्यक्तियों की मुहरें, मंत्रियों, राजकुमारों की शासकीय मुहरें आदि प्राप्त हुई हैं। नालंदा बिहार –जैसे मठों, शिक्षण तथा धार्मिक संस्थाओं की मुहरें भी हुआ करती थीं। धार्मिक तथा सम्मतिपत्रों की मुहरें रायपुर के अजायबघर में भी देखी जा सकती हैं। भारत की प्रारंभिक सीलें, जो मोहन-जोदड़ों से प्राप्त हुई हैं, समझ में नहीं आ सकी हैं क्योंकि वे स्पष्ट नहीं हैं। मुहरों में जानवरों की आकृतियाँ या उस समय की महत्त्वपूर्ण वस्तुओं के चिह्न अंकित हैं। मोहनजोदड़ो की कुछ मुहरों पर नावों के चित्र हैं।

ऋग्वेद में एक शब्द है 'निष्क'। कुछ लोग इस का अर्थ प्राचीन सिक्के से लगाते हैं तो कुछ स्वर्ण के आभूषणों से। आर्य साहित्य मंडल, अजमेर ने ऋग्वेद के भाष्य में 'निष्क' का अर्थ मुहरों से लिया है। गुप्तकालीन इतिहास की संपन्नता का एक प्रमाण उस समय की उन मुहरों में भी मिलता है जो आज हमारी पुरातात्विक निधि हैं। समुद्रगुप्त के इलाहाबाद वाले शिलालेख में गरुड़ के चिह्न बहुत-सी मुहरों में खुदे हुए हैं जो उन के सामंतों द्वारा वर्णित किये गये है। गुप्त वंश की शाही मुहरों में प्रायः सुंदर कारी-गरी की जाती थी। सर्ववर्मन मौखरी की मुहर एक सुंदर उदाहरण है। बैल को मुहरों में महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त था। मैत्रक-भातृक की मुहर तथा हर्षवर्धन की सोनपत मुहर में बैलों की सुंदर आकृ-

सिगनयनिवरलू

तियाँ है। वाराह को पश्चिमी चालुक्य, काकतीय तथा उस के बाद, और विजयनगर के शासकों द्वारा मुहर में स्थान दिया गया।

पश्चिमी गंगा में मुहर में हाथियों के चित्र दिये जाते थे जब कि पूर्वीय गंगा के शासकों ने बैल का चुनाव किया था। पल्लवों की मुहर में भी बैलों को स्थान प्राप्त था। शेर को चोल लोगों ने मुहर में आँका था, वह एक मछली और तीर के ऊपर अंकित किया जाता था। वाराह के साथ भी चालुक्य राजाओं के राजमहलों में अनेक राजसिंहासन या शाही छतरियाँ, शुभ दीपक, शंख, कमल आदि को दर्शाया जाता था। शंख और कमल राजा की निधि (कोष) के लिए, छत्र और चौरी शक्ति के लिए तथा अंकुश और भाला-डंडा सैनिक शक्ति हेतु, दीप राजा की बुद्धि-मत्ता के लिए और सूर्य, चंद्र घर की अक्षुण्ण महिमा के प्रतीक माने जाते थे।

ये चिह्न पूर्वीय गंगा के कुछ स्थानों में प्रचलित थे। शंख, सुनहरी चौरी, सफेद छत्र, बैल का चित्र उन में से प्रमुख है। पाल राजाओं की मुहरों में बुद्ध का प्रथम उद्देश्य प्रकट किया गया है। उस में धर्मचक्र का चिह्न है। वे मुहरें कभी लंबी तो कभी चौड़ी बनायी जाती थीं। उन में राजाओं के नाम, राजवंश तथा वंशावली क्रम का उल्लेख रहता था। वाकाटक मुहर में ऐसा दर्शाया गया है। शिलालेख के नीचे भी मुहर देने की प्रथा थी। राजराज की मुहर में जो शिलालेख में खुदा हुआ है, एक पौरा-णिक कथा है। शक्ति और विजय की चर्चायुक्त मुहर राजा राजेन्द्र की है जो तिरुवालंगाड़ पत्रों में है।

तान्दम्दोत्तम पत्रों में बैल पर सुंदर कारीगरी है। विष्णुकुन्दि विक्रमन्दर्मन के पत्र में जो मुहर है उस में सिंह की छाप है। मगध के पेनुगोंड पत्रों में पश्चिमी गंगा की मुहरों में पाँचवीं शती का एक उत्कृष्ट हाथी अंकित है। किंवदंती है कि उस चित्र को सुप्रसिद्ध सुनार अय्या के पुत्र अप्पा ने पिता द्वारा बनाये गये एक जीवित हाथी के चित्र को देख बनाया था।

मुहरें आमतौर पर धातु की होती थीं। सोने की मुहरें राजसी होती थीं। प्राचीन काल में पाटल मुद्राएँ या मिट्टी की मुहरें बनाने की प्रथा भी थी। किसी कड़ी वस्तु, विशेषकर अकीक या गोमेद-जैसे पत्थर या ताँबे-जैसी धातु के टुकड़ों पर अक्षर, खोद कर उस की छाप गीली मिट्टी पर डाल कर बनायी जाती थी। फिर इन्हें पकाया जाता था।

'धम्मपद,' 'अत्थाकत्था' बुद्ध से संबंधित ग्रंथों, हर्ष चरित, दिव्यावदान चच-नामा आदि में मुहरों की उल्लेख मिलता है। नालंदा से प्राप्त पाटल मुद्राओं में बड़े-बड़े विहारों के नाम लिखे हुए हैं।

(संपादक 'अंकन', १२२ नेताजी सुभाषचन्द्र रोड, मद्रास-१)

आइंस्टाइन

भूली-बिसरी यादें

• साहब दयाल

बिखरे वालों वाला वह आदमी 'इंस्टीट्यूट ऑफ ऐडवांस्ड स्टडीज', प्रिंसटन से बाहर निकलता है। चमड़े की पुरानी जाकेट उस की कुहनी पर घिस गयी है। ढीली-ढाली पतलून बार-बार कमर से नीचे खिसक आती है। ये सब बातें महसूस नहीं होने देतीं कि यही प्रो. अल्बर्ट आइंस्टाइन हैं जिन के क्रांतिकारी विचारों ने बीसवीं शताब्दी के मानव ज्ञान को एक नया मोड़ दिया था।
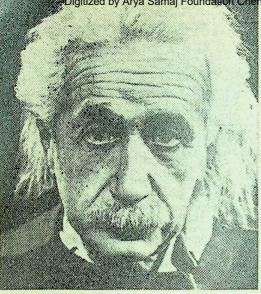
वे केवल वैज्ञानिक नहीं वरन एक प्रतीक भी थे—मानवता, उदारता एवं महानता के। उन का जीवन एक तपस्वी के जीवन से किसी प्रकार कम नहीं था। एकनिष्ठ हो कर उन्होंने जो कुछ विज्ञान, सामाजिक कल्याण एवं विश्व-शांति के लिए किया वह बेमिसाल है। वे क्लर्क का काम भी करते, साथ ही मौलिक विषयों पर

चिंतन कर शोध-पत्र भी लिखते थे। एक बार विश्वयुद्ध से पीड़ित एवं विस्थापित जरमन वैज्ञानिकों के सम्मुख भाषण करते हुए उन्होंने कहा था, "आप लोगों के लिए उपयुक्त काम लाइटहाउस की रखवाली अथवा जूते ठीक करना है, क्योंकि इस काम में चिंतन के लिए समुचित अवकाश मिलता है।" उन के लिए विज्ञान रोजी-रोटी का साधन न हो कर ज्ञान-पिपासा की तुष्टि के लिए किया गया कार्य था।

इस साधना ने उन्हें असाधारण बना दिया था। एक चमड़े की जाकेट में अनेक साल बिता देना, बिना संस्पेंडर की पतलून पहनना, लंबे बाल रखना और बिना मोजे के जूते पहनना आदि उन के जीवन की सहज बातें बन गयी थीं। उन के अनुसार चमड़े की जाकेट ओवरकोट से मुक्ति दिलाती है, लंबे बाल नाई से छुट्टी दिलाते हैं और मोजे आदि भी रोजाना के झंझटों से छुटकारा दिलाते हैं। चमड़े की जाकेट से उन्हें बहुत लगाव था, यह जाकेट उन्हें जरमनी में किसी मित्र ने भेंट की थी जिसे वे अंत तक पहनते रहे। नोबल पुरस्कार प्राप्त करने जब वे स्टाकहोम गए तो भी वही जाकेट पहने हुए थे। उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ जब उपस्थित गण्यमान्य अतिथियों ने उन के अति साधारण पहनावे को भुला कर प्रेम से अपने पास बैठाया और सम्मानित किया था।

एक साधारण बालक

चौदह मार्च, १८७९ में जरमनी के उल्म नगर में एक साधारण परिवार में जन्मा अल्बर्ट हर प्रकार से साधारण था। पिता का बिजली का सामान बनाने का एक छोटा कारखाना था तथा माँ एक कुशल गृहिणी थी। अल्बर्ट को माँ से तथा अपने चाचा से विशेष लगाव था। चाचा से ही उस ने विज्ञान में रुचि लेना सीखा था। बचपन में चाचा द्वारा भेंट की गयी दिशासूचक चुंबकीय सुई उस के लिए कौतूहल का विषय थी। उसे केवल एक खेल से घृणा थी, जो उन दिनों बालकों को बहुत प्रिय था। उसे यह बिलकुल नहीं भाता था कि उस के साथी झूठमूठ को भी मारकाट का खेल खेलें। कभी-कभी अल्बर्ट बैठे-बैठे ही खयालों में खो जाता। तब माँ फब्ती कसती, "मेरा बेटा बड़ा हो कर प्रोफेसर बनेगा!" तब माँ को पता नहीं था कि यह मजाक एक दिन सच्चाई बन जायेगा!

वह एक साधारण विद्यार्थी समझा जाता था। उसे केवल वही विषय भाते थे जिन के द्वारा प्रकृति के नियमों को समझा जा सकता है। गणित की कुछ शाखाओं में उस की रुचि नहीं थी। यहाँ तक कि एक प्रश्नपत्र में वह अनुत्तीर्ण भी हो गया। इस के विपरीत विज्ञान-संबंधी विषयों पर उस के द्वारा पूछे गये प्रश्न कभी-कभी शिक्षकों तक को निरुत्तर कर देते थे, जिस से कक्षा में अनुशासनहीनता का वातावरण फैल जाता था। इसी कारण अल्बर्ट को स्कूल से निकाल दिया गया

था। स्कूल छूट जाने से अल्बर्ट को जरमनी से इटली जाना पड़ा। आर्थिक कठिनाइयों के कारण उस का परिवार पहले ही इटली चला गया था।

ऐसा क्यों?

विषम आर्थिक परिस्थितियों के कारण पिता ने अल्बर्ट को आगे पढ़ाने में अपनी असमर्थता प्रकट की। सौभाग्य से उस के चाचा जेकब ने उस की शिक्षा का भार अपने ऊपर ले लिया। उस के बाद उस की सारी शिक्षा स्विट्जरलैंड के एक अच्छे पॉलिटेकनिक विद्यालय में हुई। अल्बर्ट ने प्रकृति के नियमों का गहन अध्ययन किया और उसे न्यूटन के सिद्धांत में भी कमी दिखायी दी।

शिक्षा-समाप्ति के पश्चात अल्बर्ट का विचार शोध-कार्य करने का था, परंतु आर्थिक कठिनाइयों ने नौकरी खोजने के लिए मजबूर कर दिया। उन्हें स्विस पेटेंट आफिस में नौकरी मिल गयी और वे बर्न में रहने लगे। यहीं उन्होंने गृहस्थी भी बसायी। उन्होंने अपनी एक सहपाठिन मिल्वा से विवाह किया था। उन का यह गार्हस्थ्य-जीवन कई वर्षों तक चला परंतु अंत में कुछ कटुता आ जाने के कारण संबंध टूट गये।

सापेक्षवाद क्या है?

एक दिन उन्होंने सापेक्षवाद के बारे में बताया—हम जो कुछ देखते हैं और जो कुछ वास्तव में प्रकृति में घटित हो रहा है, वह बहुत भिन्न है। हमारा प्रेक्षण मुख्यतः इस बात पर निर्भर है कि हम किस स्थिति में हैं। सारे प्रेक्षण सापेक्ष हैं। यदि हम उड़ती चिड़िया को एक रेलगाड़ी में बैठ कर देखते हैं और यदि उस का वेग रेलगाड़ी के वेग के बराबर है तो वह गाड़ी के सापेक्ष स्थिर प्रतीत होगी। परंतु एक स्थिर खड़े व्यक्ति को उड़ती चिड़िया अधिक वेग से उड़ती दिखायी देगी। इसी प्रकार किसी पिंड का गति-संबंधी प्रेक्षण भी प्रेक्षक की गति के सापेक्ष प्रतीत होता है। यदि एक तेज चलती गाड़ी में किसी पिंड को उछाला जाये तो वह सीधी रेखा में गति करता प्रतीत होगा, परंतु उसी पिंड को यदि पटरी के पास खड़ा व्यक्ति देखेगा तो वह एक वक्र रेखा में गति करता प्रतीत होगा।

सापेक्षवाद का आधार

१९०५ में सापेक्षवाद को जन्म देने वाला आइंस्टाइन का शोधपत्र 'गतिशील माध्यम की विद्युत गतिकी' शीर्षक से प्रकाशित हुआ। उन के चार अन्य शोध-पत्र भी प्रकाशित हुए। ये पाँचों शोध-पत्र भौतिक विज्ञान में अपना विशेष महत्त्व रखते हैं और इन के द्वारा वैज्ञानिक विचार-धारा को एक नया मोड़ मिला। समय के बीतने की गति भी सापेक्ष है, एक अंतरिक्ष-यान में बैठ कर यदि कोई व्यक्ति तीव्र वेग से किसी दूसरे सितारे की यात्रा पर जा कर लौटता है तो उस के यान में बीता समय पृथ्वी पर उसी अवधि में बीते समय के बराबर नहीं होगा। यान के यात्री

की उम्र का परिवर्तन उतना नहीं होगा जितना उस के समकालीन पृथ्वी पर रहने वाले अन्य व्यक्ति की उम्र में होगा। इस अंतरिक्ष-यात्री के लिए घड़ियाँ बहुत धीरे-धीरे बीती होंगी और वह अपेक्षाकृत कम बूढ़ा होगा। घड़ियों के धीमी गति से बीतने का कारण कवियों द्वारा वर्णित 'प्रिय की प्रतीक्षा में बीती लंबी घड़ियाँ' नहीं अपितु प्रकृति के नियम हैं।

प्रसिद्धि से परेशान

आइंसटाइन के क्रांतिकारी विचारों को वैज्ञानिक समाज तुरंत ग्रहण नहीं कर पाया और उन्हें समझने में ही छह वर्ष बीत गये। परंतु, जब उन्हें प्रसिद्धि मिली तो इतनी कि कभी-कभी तो वे उस से उकता जाते थे। १९०९ में उन्हें ज्यूरिख विश्वविद्यालय में प्रोफेसर का पद दिया गया। ३४ वर्ष की अवस्था में वे बर्लिन स्थित 'कैसर विल्हेल्म संस्थान' के निदेशक बनाये गये, जो उस समय विज्ञान का सब से बड़ा केंद्र समझा जाता था।

वैज्ञानिक से पहले मानव

वे जितने ही महान वैज्ञानिक थे उतने ही महान इनसान। उन्हें सादगी से लगाव तथा आडंबर से घृणा थी। दलितों और पीड़ितों की तरफदारी करने में उन का सानी नहीं था। जरमनी में जब नाजियों ने यहूदियों पर अत्याचार करना प्रारंभ किया तो उन्होंने इस कृत्य की घोर भर्त्सना की थी। उन्हें जरमनी छोड़नी पड़ी थी। नाजियों ने उन का सिर काट कर लाने

आगामी अंक में

युद्ध-बंदियों की अंतर्व्यथा

भारतीय पत्र-पत्रिकाओं में सब से पहले 'कादम्बिनी' द्वारा प्रस्तुत, युद्ध-बंदियों का सनसनीखेज लेखा-जोखा। भारत स्थित युद्ध-बंदी क्या पाकिस्तान लौटना चाहते हैं? क्या वे भारत में रहना चाहते हैं? उन से हुई मुलाकात पर आधारित एक रोमांचकारी दस्तावेज

नींद क्यों आती नहीं?

सोने से बड़ा सुख और नहीं। लेकिन कुछ ऐसे भी हैं, जिन्हें रात-रात भर तारे गिनने पड़ते हैं। आखिर क्यों?

समस्या डाक्टरों की : समस्या मरीजों की

क्या भारत में डॉक्टरों की बेरोजगारी की समस्या है? क्या भारत में अस्पतालों की संख्या कम है? इलाज रोगियों का जरूरी है या रुग्ण नौकरशाही का?

*

औद्योगिक नीति तथा औद्योगिक वृद्धि के संबंध में सुप्रसिद्ध अर्थशास्त्री ए. एम. खुसरो का चिंतनपूर्ण लेख

● लड़के बिकाऊ हैं ● हीरा हीरा है पत्थर नहीं ● कलंगुट बीच में उतरती एक शाम ● सप्ताह का सफर आदि

*

राजेन्द्र यादव की ताजा कहानी

वाले को एक मोटी रकम देने की घोषणा की थी। परंतु वे निर्भय हो अपने पथ पर चलते रहे।

वायलिन-प्रेमी

अपने कठिनतम क्षणों को उन्होंने वायलिन बजा कर काटा था। वे दर्दीला राग बजाते-बजाते भूल जाते थे कि कहीं दु:ख है।

जब पहली बार वे अमरीका गये तो हाथ में वायलिन का बक्सा होने के कारण लोग उन्हें संगीतज्ञ समझ बैठे थे।

अल्बर्ट जब काम में डूबे रहते तो वे खाना-पीना तक भूल जाते थे। उन की पत्नी मिल्वा देर तक उन की प्रतीक्षा में बैठी रह जाती थीं। इसी कारण संबंधों में कटुता आ गयी और अंत में उन्हें तलाक लेना पड़ा था। उन की दूसरी पत्नी एल्जा ने जीवनपर्यंत उन की अच्छी तरह देख-भाल की। जब वे काम करते-करते खाना तक भूल जाते थे तो एल्जा की प्यार-भरी झिड़कियाँ उन्हें खाने पर आमंत्रित करती थीं—"अल्बर्ट, खाना खा लो फिर सोचते रहना।" और जब फार्मूलों के ताने-बाने बुनते प्रो. साहब खाने की मेज पर आ कर निर्लिप्त से बैठे रह जाते तब खूब मजाक उड़ायी जाती थी। इस कार्य में उन की दोनों बेटियाँ इल्सी और मारगोट भी साथ देती थीं। कभी एल्जा मजाक में कहती थीं, "अल्बर्ट! तुम गणित के इतने बड़े-बड़े फामूर्ले याद रख सकते हो, लेकिन अपना बैंक का हिसाब क्यों भूल जाते हो?"

गाँधीजी के प्रति आस्था

अपने समकालीन व्यक्तियों में से गाँधीजी के प्रति गहन आस्था थी। बापू की मृत्यु पर शोक प्रकट करते हुए उन्होंने कहा था—**"आने वाली पीढ़ियाँ इस बात पर विश्वास नहीं करेंगी कि इस प्रकार का व्यक्ति हाड़-मांस के पुतले के रूप में कभी पृथ्वी पर विचरण करता था।"**

अमरीका स्थित तत्कालीन भारतीय राजदूत श्री गगनबिहारी मेहता ने आइंस्टाइन से बातचीत करते हुए जब उन की तुलना बापू से की तो उन्होंने कहा था—"मेरी तुलना उस महान व्यक्ति से न करो जिस ने मानव-जाति के लिए बहुत कुछ किया है, मैं तो कहीं भी नहीं हूँ।"

एकला चलो रे

जीवन के अंतिम वर्षों में वे एकदम अकेलापन अनुभव करते रहे थे। वैसे उन्हें अकेलापन अच्छा लगता था, क्योंकि वे कहा करते थे--**"मैं उन तनहाइयों में जीता हूँ जो यौवन में दु:खदाई तथा जीवन के परिपक्व वर्षों में आनंददायक होती हैं।"**

उन के लिए सारा विश्व एक था, समूची मानवता एक थी। अपनी इसी भावना के कारण युद्ध-समाप्ति का एक-मात्र हल सुझाते हुए उन्होंने एक विश्व-कांग्रेस की कल्पना की थी, जिस में विश्व के सारे राष्ट्र परस्पर सीमाओं और जाति के बंधन तोड़ कर एक हो जायें।

(३८, टीचर होस्टल, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर)

मृत्यु-शय्या पर पड़े हुए औरंगजेब ने कहा था, "मेरे दिल पर तीन बोझ हैं, जो मुझे चैन नहीं लेने देते—पिता को कैद में रखने का जुर्म, दारा की हत्या तथा सरमद का सिर कटवाने का पछतावा।" एक पेड़ के नीचे यही सरमद दिल्ली में आज जहाँ उन की समाधि है, नंग-धड़ंग बैठे थे। औरंगजेब की सवारी उधर से गुजर रही थी। बादशाह को यह देख कर बुरा लगा, रुक कर बोला, "सरमद! खुदा के वास्ते बगल में रखे उस कंबल को तो अपने शरीर पर डाल लो।" इस पर सरमद ने मुसकराते हुए कहा, "अगर तुम्हें मेरा नंगा रहना खटक रहा है तो कंबल मेरे शरीर पर डाल क्यों नहीं देते? मुझ में तो इतनी ताकत नहीं कि इसे अपने ऊपर डाल सकूँ।" औरंगजेब सवारी से उतरा, कंबल उठाया, पर तुरंत ही घबरा कर उसे जहाँ का तहाँ रख दिया। उस का शरीर पसीना-पसीना हो गया। कंबल के नीचे उसे उन लोगों के कटे सिर दिखायी दिये जिन के सिर उस ने उतरवा डाले थे। तब सरमद ने हँसते हुए कहा, "अब तुम्हीं बताओ कि कौन-सा ज्यादा जरूरी है, तुम्हारे पापों को ढँकना या मेरे शरीर को?"

क्रांतिकारी चंद्रशेखर 'आजाद' फरारी का जीवन बिता रहे थे। सरकार की तरफ से उन्हें पकड़वाने वाले को पाँच हजार रुपयों के पुरस्कार की घोषणा हो चुकी थी।

एक तूफानी रात को उन्हें एक विधवा के घर शरण लेने को मजबूर होना पड़ा। पहले तो वह उन्हें कोई डाकू समझ कर बहुत घबरायी, परंतु जब उन्होंने अपना परिचय दिया तो वह उन्हें आशीष देने लगी। 'आजाद' भूखे थे। विधवा ने उन्हें भोजन देने के लिए अपनी पुत्री को आवाज दी। पुत्री जब भोजन ले कर आयी तो 'आजाद' को मालूम हुआ कि वह शादी के योग्य हो चुकी है परंतु दहेज न जुटा पाने के कारण कहीं शादी तय नहीं हो सकी है।

'आजाद' को एक उपाय सूझा। वे

• शाहआलम खां
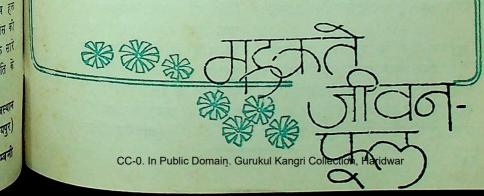
बोले, "माँ ! तुम ने एक क्रांतिकारी को शरण दे कर बहुत त्याग किया है। मैं इस उपकार का बदला चुकाना चाहता हूँ, जिस से तुम्हारी समस्या हल हो जाये और मेरी बहिन के हाथ पीले हो जायें।"

विधवा ने उत्सुकता से पूछा, "सो कैसे ?" आजाद बोले, "माँ ! सरकार ने मेरी गिरफ्तारी के लिए पाँच हजार रुपये देने की घोषणा की है। आप मुझे सवेरा होते ही पुलिस के हवाले कर दें। उन रुपयों का उपयोग भला इस से अच्छा क्या होगा कि मेरी बहिन के हाथ पीले हो जायें !"

'आजाद' की सहृदयता देख विधवा की आँखों से आँसुओं की धारा बह चली। रुँधे कंठ से वह बोली, "बेटा ! पाँच हजार क्या, पाँच जन्म भी मुझे इस के लिए मिलें तो मैं कभी तैयार नहीं होऊँगी।"

सवेरे जब विधवा जागी तो उस ने 'आजाद' की चारपाई खाली पायी। हाँ, चारपाई के सिरहाने उसे रुपयों के ढेर के ऊपर एक खत मिला। 'आजाद' ने पत्र में लिखा था--माँ ! मेरी बहिन को इन पाँच हजार रुपयों से एक सुंदर जीवन दान दे देना। क्या एक भाई अपनी बहिन के लिए इतना भी नहीं कर सकता ?--आजाद।

अरब देश में इस्लाम जब अपने प्रथम चरण में था, लोग इस नये मजहब के संस्थापक को तरह-तरह से कसौटियों पर कस रहे थे। एक बार कुछ लोग उन के पास आये। मुहम्मद साहब ने उन की मेहमानदारी का प्रबंध कि[illegible] उन्होंने अपने मित्रों से कहा कि एक[illegible] आदमी ले लो और उन की अच्छी [illegible] सेवा करो। इन मेहमानों में एक [illegible] अपनी उद्दंडता के लिए कुख्यात [illegible] उसे अपने यहाँ मेहमान बनाना कि[illegible] स्वीकार नहीं किया। मुहम्मद साहब [illegible] उसे अपने यहाँ अतिथि बनाया। [illegible] सब लोगों के लिए जितना भोजन [illegible] था, वह इस नीयत से सब खा गया कि सब भूखे पेट सोयें। मुहम्मद साहब ने उसे एक अलग कोठरी में सुलाया और आरामदेह बिछौना बिछा दिया। [illegible] भोजन कर लेने से उसे बदहजमी हो [illegible] उस ने बिस्तर भी खराब कर दिया।

सुबह जल्दी उठ कर वह डर [illegible] भाग गया। जब मुहम्मद साहब उस को जलपान देने पहुँचे तो उसे न पा कर [illegible] अफसोस हुआ। फिर वे बिस्तर और कमरे की सफाई में लग गये।

वह आदमी अपनी तलवार कोठरी में ही भूल गया था। उसे लेने के लिए वह लौट पड़ा। उसे यह देख कर बड़ा आश्चर्य हुआ कि उस के द्वारा [illegible] किये गये कपड़े मुहम्मद साहब स्वयं साफ कर रहे हैं और उन के चेहरे पर क्रोध का कोई चिह्न नहीं है। जब मुहम्मद साहब ने उसे देखा तो प्रसन्नता-पूर्वक उस से बोले, "भाई, कहाँ चले गये थे ? चलो, नाश्ता कर लो।"

(बांसडीह, जिला बलिया)

अस्तित्व के लिए संघर्ष

• राजेश्वर दयाल
(पाकिस्तान में भारत के
भू. पू. उप-उच्चायुक्त)

भारतीय उप-महाद्वीप आवश्यकता से अधिक समय तक पारस्परिक कलह और संघर्ष के झटकों का शिकार हो चुका है। विभाजन को स्वीकार करते समय न तो यह उद्देश्य था और न इस की आशंका ही थी। सोचा यह गया था कि संपन्न दोनों देश शांति के वातावरण में आदर्श पड़ोसियों की भाँति रह सकेंगे, किंतु हुआ ठीक इस के विपरीत। विभाजन की दुःखद विरासत के रूप में दोनों देशों के आपसी मतभेदों ने बढ़ते-बढ़ते अंतरराष्ट्रीय रूप ले लिया, तर्कों को पुष्ट करने के लिए फौजी धमकियों का सहारा लिया गया और दोनों के बीच चलने वाले शीत-युद्ध के दौर में वास्तविक युद्ध के अध्याय जोड़े गये।

समझौता असंभव नहीं

कुछ मतभेद तो विभाजन के अधूरे छोड़े गये काम के अंश के रूप में सामने आये। एक सही और महत्त्वपूर्ण समस्या सिंधु नदी के पानी के बँटवारे की थी, जिस पर भारत-पाक सीमा के दोनों ओर बसे करोड़ों इनसानों का भविष्य और सुख-समृद्धि निर्भर थी। जहाँ तक कश्मीर पर पाकिस्तान के दावों का प्रश्न है वे सभी जाली वादों और बेतुकी महत्त्वाकांक्षाओं पर आधारित थे। कुछ अन्य मामले, उदाहरणार्थ सीमाओं का अंकन आदि, सफलता के साथ हल भी कर लिये गये। तो भी विभाजन के बाद की कुछ समस्याएँ अभी शेष हैं किंतु वे उतनी विस्फोटक नहीं हैं। यह तथ्य कि अनेक समस्याओं
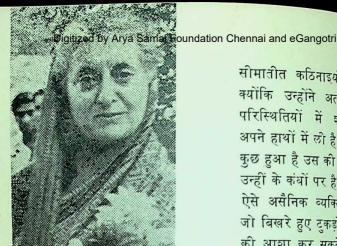
श्रीमती गाँधी : समझौते की पहल

को चाहे वे बड़ी हों या छोटी, प्रचारित हों या अप्रचारित, शांतिपूर्वक हल किया जा चुका है, इस बात का परिचायक है कि इन पड़ोसी देशों के बीच पारस्परिक समझौता कोई ऐसी चीज नहीं है जिसे असंभव माना जाये । लेकिन इस के लिए राजनीतिक स्वेच्छा और थोड़ी राजनयिक दक्षता की आवश्यकता है ।

गत युद्ध के फलस्वरूप दोनों देशों के बीच ऐसी बातचीत आवश्यक और अवश्यंभावी हो चुकी है जो युद्ध के अवशेषों को मिटाने के साथ ही भविष्य के लिए एक ठोस एवं रचनात्मक योजना का सूत्रपात कर सके ।

समय कम है

श्री भुट्टो वहशियाने ढंग की तेजी के साथ तरह-तरह की घोषणाएँ करते रहे हैं । उन के वक्तव्य कभी-कभी सुसंगत किंतु अधिकांशतः परस्पर-विरोधी रहे हैं । यही हाल उन के कार्यों का रहा । वे सीमातीत कठिनाइयों की स्थिति में हैं, क्योंकि उन्होंने अत्यधिक निराशाजनक परिस्थितियों में शासन की बागडोर अपने हाथों में ली है । यह सही है कि जो कुछ हुआ है उस की बहुत कुछ जिम्मेदारी उन्हीं के कंधों पर है । फिर भी, वही एक ऐसे असैनिक व्यक्ति नजर में आते हैं जो बिखरे हुए टुकड़ों को परस्पर मिलाने की आशा कर सकते हैं । वे ऐसे समय सत्तारूढ़ हुए हैं जब उन का मार्ग देश एक भयानक निराशा और मायूसी के गर्त में था और इसीलिए वे अपना अस्तित्व बनाये रखने के लिए गुमराह और भ्रम में डूबी हुई जनता का समर्थन प्राप्त करने का निरंतर प्रयत्न कर रहे हैं । उन्होंने जिस जल्दबाजी में आर्थिक एवं सामाजिक कदम उठाये हैं उस का उद्देश्य अंततः जनता के दिलो-दिमाग को प्रभावित करना ही था । उन्होंने अपने विरोधी पठान और बिलोची नेताओं से भी समझौता करने की कोशिश की है । किंतु, पराजय के संताप में झुलसी हुई क्षुब्ध पाकिस्तानी सेना की उद्धत दृष्टि उन के हर काम को बारीकी से परख रही है ।

यदि श्री भुट्टो यथाशीघ्र किन्हीं ठोस परिणामों को प्रस्तुत करने में असफल होते हैं तो टिक्काखाँ-जैसे जंगबाज सेनाध्यक्ष द्वारा सत्ता को अपने हाथ में ले लेने का खतरा भी सामने है । यदि ऐसा कुछ हुआ तो सीमाप्रांत और बलूचिस्तान में जनक्रांति भी हो सकती है, जिसे दबाने में

पाकिस्तानी फौज का, जिस में पठान और बलूची दोनों हैं, पूरा-पूरा इस्तेमाल भी नहीं हो सकता। स्वयं सेना में भी दरार पड़ सकती है। पठान और बलूची परस्पर भिड़ सकते हैं और एक प्रकार का सैनिक विद्रोह भी हो सकता है। पाकिस्तान में गृहयुद्ध की स्थिति उस के लिए तो विनाशक सिद्ध होगी ही, साथ ही वह भारत के सामने भी गंभीर समस्याएँ पैदा कर सकती है। इन समस्याओं में शरणार्थियों की वह बाढ़ भी शामिल है जो घरेलू अशांति के दिनों में भारतीय सीमा को पार कर इस देश के जीवन और विकास के लिए एक चुनौती बन सकती है।

यह सही है कि भारत आज अजेय होने की स्थिति में है और प्रतीक्षा भी कर सकता है जबकि पाकिस्तान की न तो स्थिति वैसी है और न वह प्रतीक्षा ही कर सकता है। तो भी प्रतीक्षा करना भारत के हित में नहीं है और वह श्री भुट्टो की सीमातीत कठिनाइयों के प्रति संवेदन शून्य भी नहीं हो सकता। उसे श्री भुट्टो को उन की कठिनाइयों से उबारने के लिए ऐसी वार्त्ता प्रारंभ करना चाहिए जिस से श्री भुट्टो को अपना मुँह दिखाने का थोड़ा-बहुत अवसर भी मिल सके। लेकिन साथ ही इस बात की पूरी व्यवस्था भी कर ली जानी चाहिए कि भारत और पाकिस्तान के बीच मतभेद और परस्पर खींचातानी के जो भी मुद्दे हैं उन सब को एकसाथ और एक ही समय में हमेशा के लिए हल कर लिया जाये। पाकिस्तान और स्वयं श्री भुट्टो का हित इसी में है कि वे दोनों देशों के बीच सभी अधूरे मामलों को निबटाने के लिए सीधे, सच्चे और स्पष्ट प्रस्ताव रखें।

श्रीमती गाँधी जोरदार शब्दों में यह व्यक्त कर चुकी हैं कि भारत को इस बात में गहरी दिल चस्पी है कि पाकिस्तान एक मजबूत, शांतिपूर्ण और प्रगतिशील

श्री भुट्टो : ख्वाबों का महल

राष्ट्र हो। इसलिए, भारत बातचीत के प्रबंध और विषयों के बारे में उदारता भी बरत सकता है। किंतु, इस प्रकार की बात-चीत में अब विलंब नहीं होना चाहिए, अन्यथा सीमा के उस पार स्थिति के बिगड़ने और बेकाबू होने की आशंका है।

दोनों देशों के नेताओं के सामने सब से पहली आवश्यकता परस्पर मिलने की है। उन की मुलाकात के लिए यदि
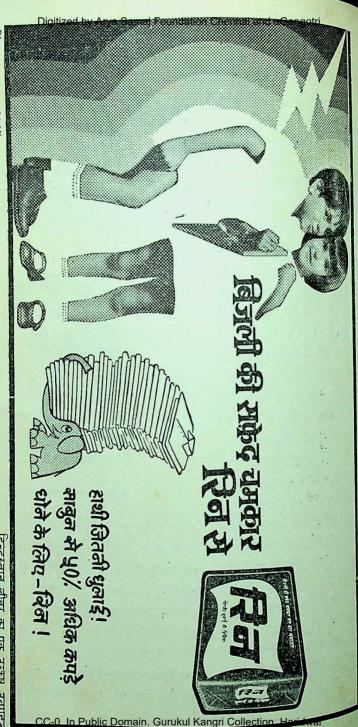
बिजली की सफ़ेद चमकार
रिन से
रिन
हाथी जितनी धुलाई!
साबुन से ५0% अधिक कपड़े
धोने के लिए–रिन !
लिंटास-RIN. 4B-694 HI
हिन्दुस्तान लीवर का एक उत्कृष्ट उत्पादन

जरूरी समझा जाये तो दोनों देशों के कुछ अधिकारियों की एक बैठक भी आयोजित की जा सकती है जिस में वे नेताओं की मुलाकात के लिए आवश्यक तैयारियों पर विचार-विनिमय कर सकते हैं। इस प्रकार की मुलाकात के लिए पहले से विषय सूची तैयार करने की जरूरत नहीं है। उस का सर्वोपरि प्रयोजन गतिरोध की समाप्ति होना चाहिए। १९५९ में पालम हवाईअडडे पर पाक राष्ट्रपति अयूब खाँ और प्रधानमंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू की मुलाकात के परिणामस्वरूप अनेक आशाजनक घटनाएँ सामने आयी थीं। आज भी दोनों देशों के नेताओं की मुलाकात से उसी प्रकार के परिणामों की आशा की जा सकती है।

अनाक्रमण संधि--पहली आवश्यकता

अब प्रश्न उठता है कि समस्याएँ क्या हैं और उन के समाधान में रुकावटें कौन-सी हैं? यदि हमेशा के लिए युद्ध न करने का निर्णय कर लिया जाये तो सर्वप्रथम आवश्यकता है अनाक्रमण-संधि की। पाकिस्तान को इसे स्वीकार करने के लिए तैयार होना चाहिए क्योंकि अपनी मौजूदा क्षत-विक्षत दशा में शक्ति के इस्तेमाल का सहारा लेना उस के लिए न केवल अव्यावहारिक वरन आत्मघाती भी होगा। इस प्रकार की संधि से दोनों देशों के बीच तनाव तुरंत ही घट जायेगा और मतभेदों को शांतिपूर्ण ढंग से हल करने की दिशा में प्रगति होगी। नेताओं की शीर्षस्थ वार्त्ता में एक ऐसे समझौते पर विचार किया जा सकता है जिस का मुख्य लक्ष्य राजनीतिक समस्याओं के समाधान के लिए सैनिक शक्ति के उपयोग का परित्याग होना चाहिए।

दूसरा कदम मंत्री-स्तर के एक संयुक्त आयोग की स्थापना हो सकता है। एक सुनिर्धारित कार्यक्रम के अनुसार समय-समय पर, जैसे प्रति दो या तीन महीने बाद, इस की बैठक हो सकती है और उस बैठक में आयोग के अधिकारी बारी-बारी से उन समस्याओं को हल करने का प्रयास कर सकते हैं जो दोनों देशों के बीच मतभेदों का कारण बनी हुई हैं। आवश्यकतानुसार, विभिन्न मुख्य समस्याओं के लिए उप-आयोगों की नियुक्ति भी की जा सकती है। ये आयोग तथा उप-आयोग तब तक कार्य करते रह सकते हैं जब तक कि सभी समस्याओं का समाधान नहीं हो जाता। उस के बाद, यदि दोनों पक्ष सहमत हों तो यही आयोग दोनों देशों के बीच सहयोग के क्षेत्रों के विकास के लिए भी कार्य कर सकता है।

विचारणीय विषयों की सूची विस्तृत और व्यापक होनी चाहिए। इस में वे सभी प्रश्न और समस्याएँ शामिल की जानी चाहिएँ जिन के बारे में किसी भी पक्ष को थोड़ा-बहुत कहना है। इस में युद्धबंदियों तथा युद्ध में जीती या हारी गयी भूमि के प्रश्न भी शामिल किये जा सकते हैं। ताशकंद की भाँति पाकिस्तान, निस्संदेह यह

चाहेगा कि युद्ध के दौरान उस की जिस भूमि पर भारत का कब्जा हो गया है उसे तथा पाकिस्तानी युद्ध-बंदियों को छोड़ दिया जाये। किंतु, ऐसा समझौता तभी माना जाना चाहिए जब वे तमाम मसले पूरी तरह और हमेशा के लिए हल हो जायें जिन के कारण दोनों देशों के बीच तनाव पैदा होता और बढ़ता आया है।

कश्मीर का सवाल

श्री भुट्टो ने कश्मीर में 'आत्मनिर्णय' की बात उठायी है। साथ ही उन्होंने यह भी कहा है कि यह मामला पूरी तरह से कश्मीरी जनता का है, और किसी भी बाहरी एजेंसी का इस से कोई सरोकार नहीं है। उन का यह कथन पहले की स्थिति में कुछ प्रगति का परिचायक है। फिर भी, श्री भुट्टो को यह समझ लेना चाहिए कि कोई भी समाधान, जो मौजूदा युद्धविराम-रेखा पर आधारित नहीं होगा, पूरी तरह असंभव होगा।

पाकिस्तान के लिए यह संभव है कि वह भारत की ओर से मुँह मोड़ कर पश्चिम के मुस्लिम राष्ट्रों का मुँह देखे? भौगोलिक, आर्थिक, ऐतिहासिक और सांस्कृतिक मजबूरियाँ उसे भारतीय उप-महाद्वीप में रहने के लिए बाध्य करेंगी। वह पश्चिमी एशिया की शक्ति कदापि नहीं बन सकता। श्री भुट्टो का कथन है कि वे बाँगला देश से संबंध स्थापित करना चाहते हैं। किंतु, यह संबंध तभी स्थापित हो सकेगा जब वे बाँगला देश के अस्तित्व को बिना शर्त स्वीकार करें। बाँगला देश से पाकिस्तान के अच्छे संबंधों की स्थापना तभी व्यावहारिक है जब भारत के साथ भी उस के अच्छे संबंध हों। युद्धबंदियों का प्रश्न भारत और बाँगला देश से बातचीत करके ही हल किया जा सकता है।

भारत, बाँगला देश और पाकिस्तान यदि सच्चे अर्थों में एक-दूसरे के साथ सह-योग करने लगें तो निश्चय ही इस महाद्वीप में भी यूरोप की भाँति एक 'साझा बाजार' की दिशा में प्रगति की जा सकती है।

'राज्यसंघ' की कल्पना

भारतीय उपमहाद्वीप के देशों में स्थायी शांति और सहयोग का आधार क्या हो सकता है? इस प्रश्न पर श्री जवा-हरलाल नेहरू ने एक बार कहा था कि भविष्य में किसी भी समय इस महाद्वीप के देशों में किसी-न-किसी प्रकार के संघीय संबंध होने अवश्यंभावी हैं। श्री भुट्टो ने अभी हाल ही में 'कान्फेडरेशन' (राज्य-संघ) की बात की थी। किंतु साथ ही उन्होंने यह कह कर अपना कदम पीछे भी हटा लिया कि उन के अपने देश में बहुत-से लोग इस शब्द को 'अभिशाप'-जैसा समझते है। किंतु, समस्या किसी शब्द विशेष पर आधारित नहीं है।

भारत ने अपने और बाँगला देश के बीच जिस प्रकार की व्यवस्थाएँ की हैं उसी प्रकार की व्यवस्थाएँ वह पाकिस्तान के साथ भी कर सकता है बशर्ते पाकिस्तान उन्हें मंजूर करे।

● वियोगी हरि

अनभरा ही लौटा दिया

सभी उसे 'संग्राहक महाशय' के नाम से जानते व पहचानते हैं। उस के थैले में एक लंबी सूची और परिचय-फार्मों का पुलंदा हमेशा रहता है। पता लगा कर कि अमुक आदमी सार्वजनिक कार्यकर्त्ता है वह जा कर उस का दरवाजा खटखटाता है। थोड़ी-सी औपचारिक बातचीत के बाद वह उस के हाथ में एक फार्म दे देता है और कहता है कि 'इसे भर दो, इस की खानापूरी कर दो।' सैकड़ों फार्म भरा कर उस ने एकत्र कर लिये हैं। फिर भी उस की लंबी सूची में काफी जगह खाली पड़ी है। उसे जल्दी है एक अच्छी परिचय-पुस्तिका प्रकाशित करने की।

सार्वजनिक कार्यकर्त्ताओं को तलाशने में उसे कोई खास कठिनाई नहीं होती है। वे उसे आसानी से मिल जाते हैं और उस का फार्म भर देते हैं, मन से और बेमन से भी। बेमन से इसलिए कि वह बुरी तरह उन के पीछे पड़ जाता है।

उस से जब पूछा जाता है कि उस पुस्तिका से, जिसे वह प्रकाशित करना चाहता है, उसे स्वयं तथा दूसरे लोगों को क्या लाभ होगा, तो उस का उत्तर होता है कि जब भी समाज या राष्ट्र के सामने किसी अभाव या विपदा की घड़ी उपस्थित होगी तब उस की पुस्तिका को देख कर कार्यकर्त्ताओं की सेना उस संकट-स्थल पर तत्काल पहुँच जायेगी। स्वेच्छा-सैनिक वे अच्छे परखे हुए होंगे। अपने-अपने कार्य-क्षेत्र का उन्हें पूरा अनुभव होगा और उन्हें जुटाने में कुछ भी कठिनाई नहीं होगी।

एक दिन उस से पूछा गया कि उन के कार्य और अनुभव की कसौटी क्या होगी? जवाब था कि उन के हाथ के भरे फार्मों को ही वह एकमात्र कसौटी मानता है। जो खानापूरी किसी कार्यकर्त्ता ने कर दी, उस पर संदेह करना बेजा है।

एक दिन बीसियों फार्मों को भरा कर बड़े विश्वास के साथ एक ऐसे व्यक्ति के पास वह पहुँचा जिसे उस ने सार्वजनिक

कार्यकर्त्ता मान रखा था। वह व्यक्ति सहज भाव से खाट पर बैठा अपने कपड़ों की तह लगा रहा था। दो-तीन किताबें और कुछ कागज उस के पास वहीं बिखरे पड़े थे। खड़े हो कर उस ने संग्राहक महाशय का अभिवादन किया और बड़े प्रेम से उसे अपने पास बिठा लिया।

थैले में से एक फार्म निकाल कर संग्राहक ने उस के सामने रख दिया और कहा, "इस की खानापूरी कर दो। दो मिनट में इसे तुम भर सकते हो। सोच-विचार करने की कोई ऐसी बात नहीं, क्योंकि मैं ने सुना है और मैं मानता हूँ कि तुम एक मँजे हुए सार्वजनिक कार्य-कर्त्ता हो, और रचनात्मक कार्यों में तुम्हारी हमेशा दिलचस्पी रही है।"

फार्म का एक-एक खाना वह ध्यान से देखने लगा और फिर हँस पड़ा, "आप गलत जगह आ गये हैं। यहाँ ऐसा कोई नहीं रहता है जो इस फार्म को भर सके।"

"विनम्रता के कारण दूसरे कार्यकर्त्ता भी शुरू में ऐसा ही कहा करते हैं, पर मेरे आग्रह पर वे फार्म के सारे ही खाने खुशी-खुशी भर देते हैं। तुम्हें ही क्यों संकोच हो रहा है? नम्रता अच्छी चीज है, पर वह औपचारिक होनी चाहिए। ऐसी नहीं कि उस से हीनभावना प्रकट हो। फार्म का ऐसा कौन-सा मुश्किल खाना है जिसे भरने में तुम्हें संकोच हो रहा है?"

"अच्छा भाई, मैं ये तीन खाने भर देता हूँ—अपना नाम, अपनी उम्र और अपना स्थान लिख देता हूँ। इस से अधिक और कुछ नहीं।"

संग्राहक को लगा कि वह उस के साथ मजाक कर रहा है। जान-मान कर छिपा रहा है अपने सेवा-कार्यों और अपने लंबे अनुभवों को। और कहने लगा कि ये सारे खाने क्या तुम खाली ही छोड़ दोगे? बरसों तुम ने लोक-सेवा की, किसी-न-किसी संस्था से तुम संबद्ध रहे, तुम्हारा नाम अखबारों और पुस्तकों में देखा, फिर भी तुम इनकार कर रहे हो हमारा फार्म भरने से! मालूम होता है कि तुम ने मुझे अपने सामने बहुत छोटा आदमी समझ लिया है और इस फार्म को महज एक रद्दी का टुकड़ा।

"नहीं भाई, ऐसी बात नहीं है। आप को मैं छोटा क्यों समझने लगा। मैं ने कब कहा कि यह फार्म रद्दी का टुकड़ा है? लेकिन मैं अपने आप को कैसे धोखा दूँ इसे भर कर? मैं ने कोई सेवा-कार्य किया यह आप का निरा भ्रम है। अपनी कमियों और कमजोरियों को मैं जानता हूँ। सेवा एक ऊँची और पवित्र चीज है। वह 'अहम' को क्षीण कर देती है। मुझे नहीं लगता कि मेरा 'अहम' क्षीण हुआ है। मैं मानता हूँ कि वे लोग अपने प्रति कहीं अधिक सच्चे हैं जो अपने को नौकर कहते हैं, 'सेवक' नहीं। जो काम उन्हें सौंप दिया गया उसे वे लगन से और परि-श्रमपूर्वक करते हैं। सही है कि आप ने अखबारों और पुस्तकों में मेरा नाम छपा

देखा होगा, पर हरेक छपे हुए नाम को और काम को आप सच्चा क्यों मान लेते हैं ?"

"यह सच है कि एक या अधिक संस्थाओं से मेरा कुछ-न-कुछ संबंध रहा है किंतु वहाँ मैं ने यंत्रवत काम किया है, और वह भी केवल यश कमाने की कामना से। सभाओं और शिविरों में जब भी भाषण देता, तब अंदर जैसे कोई कचोटता था कि 'जिस बात पर तेरा खुद का विश्वास नहीं और जिसे तू अपने आचरण में स्वयं नहीं उतार सका, उस पर बोलते हुए तुझे लज्जा क्यों नहीं आ रही'?

"सत्य को ग्रहण करना तो दूर उस का गहरे उतर कर कभी चिंतन भी नहीं किया। बात बना-बना कर बोलने की जो आदत बन गयी वह आज तक छूटी नहीं।

"और, अहिंसा! अपनी कमजोरी और कायरता के हथियार के तौर पर उस का मैं ने उपयोग किया। मन में द्वेष और वैर को पालता रहा और ऊपर से अहिंसा तथा मैत्री पर प्रवचन-पर-प्रवचन किये। जिन बातों और कामों पर विश्वास नहीं जम सका उन को भी छोड़ा नहीं, पकड़े ही रहा।

"बताया गया है कि परिचय-फार्म को वही व्यक्ति भरे जिस का दलगत या सक्रिय राजनीति से संबंध न हो। सही है कि ऐसी किसी राजनीति से मेरा संबंध नहीं रहा। पर सच बात तो यह है कि मैं उस के योग्य ही नहीं हूँ। राजनीति-शास्त्र के धुरंधर ही वहाँ सफलतापूर्वक भाग ले सकते हैं। चाहूँ भी तो उस क्षेत्र में मुझ-जैसे बुद्दू को कौन दाखिल होने देगा? इसलिए यह मेरा कोई त्याग या विराग नहीं कहा जा सकता।

"रचनात्मक कार्यक्रम की याद आप ने दिलायी है। रचनात्मक तो कुछ नहीं बना, सारा 'वचनात्मक' ही रहा। माफ कीजिये, आप मुझे एक रचनात्मक कार्यकर्त्ता समझ बैठने में गलती कर रहे हैं।

"जानता हूँ कि अच्छे साध्य तक पहुँचने के लिए अच्छे साधन आवश्यक होते हैं। पर यहाँ भी मैं ने अपने आप को धोखा ही दिया। चाहे जैसे अच्छे-बुरे साधनों से काम ले कर अपना काम निकाला। आज देखता हूँ कि मैं ने जो कुछ कहा और जो कुछ लिखा वह दूसरों को अपनी ओर खींचने के लिए। अपने दिल को भी बहलाने व फुसलाने को कहा और लिखा। संग्राहक महाशय, हो सकता है कि जो कुछ मैं आप से कह रहा हूँ वह भी बनावटी ही समझा जाये और उसे झूठी विनम्रता में शामिल कर लिया जाये। कुछ भी हो, मन नहीं करता कि आप के इस फार्म की खानापूरी करूँ और सार्वजनिक कार्यकर्त्ताओं या लोक-सेवकों की परिचय-पुस्तिका में अपना नाम प्रकाशित कराऊँ। उन की पंक्ति में बैठने की हिम्मत मुझ में नहीं है।"

संग्राहक को उस व्यक्ति ने माफी माँगते हुए फार्म अनभरा ही लौटा दिया।

(एफ. १३/२ माडल टाउन, दिल्ली–९)

• डॉ. गोपाल शर्मा

भारतीय इतिहास और संस्कृति से संबंधित अँगरेजी पुस्तकें तो काफी मात्रा में बाहर जाती रही हैं। कभी-कभी विदेशी छुटपुट रूप से भारतीय भाषाओं की पुस्तकें भी मँगाते रहे हैं, किंतु एक मझोले या बड़े पैमाने पर हिंदी की पुस्तकों के निर्यात की बात न केवल मन को प्रसन्न करती है बल्कि आश्चर्य में भी डालती है। क्या वह जमाना आ गया है कि जब हम हिंदी की पुस्तकों का बड़े पैमाने पर निर्यात कर सकेंगे ? पिछले कुछ सालों से थोड़ा निर्यात हम अवश्य कर रहे हैं। यह हिंदी के भविष्य के लिए शुभ है। यह तथ्य इस बात की सूचना देता है कि विदेशों में न केवल भारतमूलक वासियों के बीच बल्कि अन्य क्षेत्रों में भी हिंदी के प्रति रुचि निरंतर बढ़ रही है और हिंदी क्रमशः अंतरराष्ट्रीय क्षेत्र में महत्त्व पा रही है। इस संबंध में मैं ने जानकारी हासिल करने की कोशिश की थी। मुझे निश्चत रूप से पता नहीं लग सका कि कितनी रकम की पुस्तकें बाहर जा रही हैं किंतु एक वितरक ने सूचना दी कि दो-तीन लाख की पुस्तकें तो वे कई स्थानों को भेजते ही हैं।

निर्यात पर ढंग से विचार करने के लिए यह जरूरी है कि हम पिछले कुछ वर्षों के आँकड़े एकत्र करें। ये आँकड़े पुस्तकों की समग्र संख्या तक ही सीमित न हों वरन विभिन्न विषयों से भी संबंधित हों। उदाहरण के लिए किस स्तर की कितनी पाठ्यपुस्तकें भेजी गयी हैं— कितने उपन्यास, कितने कहानी-संग्रह, कितने काव्य-संग्रह, नाटक, समालोचना-ग्रंथ, संस्कृति और इतिहास से संबंधित सामग्री आदि। इस से हमें विभिन्न विदेशी क्षेत्रों में हिंदी की पुस्तकों की खपत के सिलसिले में एक अन्वेषणमूलक नीति तय करने में मदद मिलेगी। दूसरे यह भी देखना होगा कि कौन-से देश हैं जहाँ पर थोक निर्यात की गुंजाइश है और कौन-से ऐसे देश हैं जहाँ पर कम मात्रा में परंतु निश्चित रूप से प्रति वर्ष पुस्तकें मँगायी जाती हैं। इन आँकड़ों के अध्ययन से हमें अपनी कार्यप्रणाली तय करने में मदद
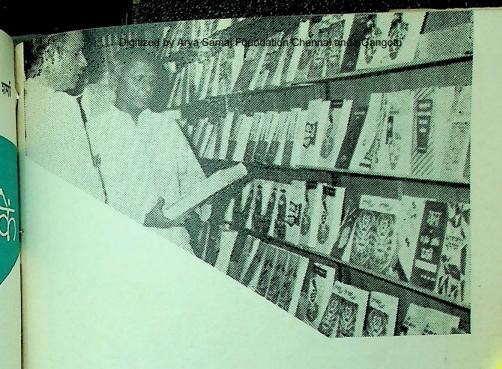
मिलेगी और हम भविष्य की रूपरेखा बना सकेंगे ।

विदेशों में प्रायः सभी समृद्ध देशों के विश्वविद्यालयों में भारतीय भाषाओं के विभाग हैं। इन में हिंदी प्रधान भाषा के रूप में पढ़ायी जा रही है। रूस, अमरीका, ब्रिटेन, चेकोस्लोवाकिया, स्वीडन, जरमनी, जापान आदि में ऐसे प्रमुख विश्वविद्यालय हैं जहाँ हिंदी के विद्वान अध्यापक नियुक्त हैं और वे न केवल हिंदी भाषा बल्कि हिंदी साहित्य के अध्ययन और लेखन का भी कार्य करते हैं । समय-समय पर वे भारत आते रहते हैं और यहाँ पुस्तकों का चयन कर जाते हैं, प्रकाशकों से मिल भी जाते हैं। इन की आवश्यकताओं की पूर्ति हमारे हिंदी पुस्तक-निर्यात का एक सीमित हिस्सा है। परंतु बड़ा क्षेत्र तो वह है जहाँ भारत मूल के लोग काफी संख्या में रहते हैं—फिजी, मारिशस, त्रिनिडाड, नेपाल, ब्रिटेन आदि । अफ्रीका और दक्षिण-पूर्वी एशिया के कुछ देशों में भी हिंदी पुस्तकों की खपत काफी मात्रा में हो सकती है। इन देशों को पुस्तकों का निर्यात करने के लिए एक सुनिश्चित व्यवस्था की आवश्यकता है। इस सुनिश्चित व्यवस्था के लिए हमारे प्रकाशक इन क्षेत्रों में जा कर स्थानीय बाजार का अध्ययन करें, लोगों से मिलें, उन की आवश्यकताएँ

समझें और जन-रुचि के विषयों की तालिका बना कर उन की भाषा-क्षमता को भली-भांति समझते हुए पुस्तकें तैयार करायें। बाजार का सर्वेक्षण मैं इसीलिए बहुत महत्त्व का मानता हूँ। भारत सरकार इस संबंध में समुचित सहायता करने के लिए राजी है। यदि एक बार हम इन क्षेत्रों में विकसित होने वाले पुस्तकालयों की संख्या आँक लें और पिछले कुछ सालों में हुई बिक्री और हिंदी अध्यापन की व्यवस्था का जायजा ले लें तो अच्छी पद्धति से काम किया जा सकता है।

इन क्षेत्रों में भेजी जाने वाली-पाठ्य पुस्तकें भी वैज्ञानिक तरीकों से लिखी और संकलित की गयी थीं। जहाँ विदेशी भाषाओं का बहुत प्रभाव है और विश्व-विद्यालयों में भाषा-शिक्षण आधुनिक पद्धतियों से होता है वहाँ हिंदी अध्यापन से संबंधित पुस्तकें परंपरागत पद्धति की नहीं होनी चाहिएँ। वे भाषा-शिक्षण के संबंध में हाल तक की खोजों के आधार पर तैयार की जायें। यदि हम मामूली दर्जों की पाठ्यपुस्तकें भेजते हैं तो वे हमारे विषय में ऐसी धारणा बना सकते हैं कि हम ने इतनी महत्त्वपूर्ण भाषा के अध्यापन का समुचित रूप से विकास नहीं किया।

विदेशों को भेजे जाने वाले संकलन किसी निश्चित दर्शन और प्रणाली को सामने रख कर तैयार होने चाहिएँ और यदि ऐसे संकलन उपलब्ध हैं तो वे बहुत ही उपयोगी सिद्ध होंगे। भारतमूलक निवासी जहाँ ज्यादा हैं, वहाँ धर्म, इतिहास और संस्कृति, लोकजीवन तथा अन्य साम-यिक घटनाओं से संबंधित ग्रंथ भी काफी मात्रा में खप सकते हैं। स्त्रियों और बच्चों के लिए लिखे गये साहित्य का भी वहाँ स्वागत हो सकता है।

इसी सिलसिले में एक बात यह भी है कि हमें इन क्षेत्रों में वहाँ के लेखकों को प्रोत्साहित करना चाहिए, प्रकाशन द्वारा उन को ऊपर आने का मौका देना चाहिए। भारत सरकार की एक योजना के अधीन इन देशों के लेखकों को भारत में होने वाले लेखक-सम्मेलनों या कार्य-शिविरों में आमंत्रित करने की व्यवस्था है। इन क्षेत्रों में अभी हिंदी के अच्छे स्तर के प्रकाशन की व्यवस्था नहीं है। हो सकता है कि हम इन देशों की सरकारों से अनुमति ले कर अपने प्रतिनिधि-कार्यालय बनायें और वहाँ के लेखकों के माध्यम से साहित्य तैयार करवायें। इस से उन क्षेत्रों में नयी जागृति पैदा होगी और वहाँ की प्रतिभाओं का लाभ उठा सकेंगे। बहुत से अँगरेजी के विदेशी प्रकाशक अपने दफ्तर भारतवर्ष में खोले हुए हैं। हम भी चाहें तो ऐसा कर सकते हैं। इस से न केवल हिंदी शिक्षा को बढ़ावा मिलेगा बल्कि अप्रत्यक्ष रूप से हम लोगों को अपने साथ ले सकेंगे। इस के अतिरिक्त ब्रिटेन, मारीशस और फिजी-जैसे देशों में हमें आरंभिक रूप से कुछ त्याग की भावना से पुस्तकालयों की स्थापना करवानी चाहिए। एक बार यदि

हम अनेक पुस्तकालय स्थापित कर सके और उन्हें सद्भावना के रूप में पुस्तकें प्रदान कर मजबूत नींव पर खड़ा कर सके तो ये पुस्तकालय निश्चित रूप से हमारे निर्यात को प्रोत्साहित करने के अच्छे स्रोत बन जायेंगे। इस के अतिरिक्त वर्ष के दौरान हिंदी पुस्तकों की प्रदर्शनी भी इन देशों या क्षेत्रों में आयोजित की जा सकती है ताकि प्रचार में सहायता मिले और हिंदी पुस्तक व्यवसाय की वर्तमान प्रगति का परिचय कराया जा सके।

विदेशों को भेजी जाने वाली पुस्तकों का कागज, गेट-अप बहुत अच्छा होना चाहिए। अंतरराष्ट्रीय क्षेत्र में हमारी पुस्तकों को अँगरेजी, फ्रेंच आदि भाषाओं में छपी पुस्तकों के समकक्ष खड़ा होना है। यह एक प्रतिस्पर्धात्मक बाजार की अनिवार्यता है। यदि हम यह समझ कर चलते हैं कि हिंदी के विदेशी पाठक इन बातों की ओर ध्यान न देंगे, केवल सामग्री उन्हें चाहिए तो इस से अप्रत्यक्ष रूप से जो हानि होगी, उस की कल्पना कर लेना जरूरी है। विदेशों में भी उसी तरह भाषाओं का संघर्ष चल रहा है जिस तरह हमारे देश में। कम-से-कम अपने देश में हिंदी की स्थिति तो हमें मालूम है। उन देशों में भारतमूलक लोग होने से ही हिंदी की स्थिति को मजबूत समझना या इसे संतोष का कारण मानना बड़ी गलतफहमी होगी। वहाँ अपने-अपने संघर्ष हैं और इन संघर्षों के बीच गुणवत्ता की दृष्टि से हमारा ऊँचाई पर खड़ा होना हिंदी पुस्तक-निर्यात के भविष्य के लिए महत्वपूर्ण माना जाना चाहिए। अतएव विदेशों को भेजी जाने वाली पुस्तकों की छपाई, गेट-अप आदि की ओर विशेष ध्यान देना होगा और खास तौर से यूरोप, अमरीका आदि को भेजी जाने वाली हिंदी पुस्तकों के अलग संस्करण निकालने के विषय में गंभीरता से विचार करना होगा। भारत सरकार अप्रत्यक्ष रूप से निर्यात में सहायता कर रही है।

हिंदी पुस्तकों के निर्यात का मामला केवल व्यापार का मामला नहीं है, बड़े सांस्कृतिक संबंध का मामला भी है। इसे संस्कृति और शिक्षा की दृष्टि से ही पनपाना होगा और उस की गतिविधियों का ही एक भाग मानना होगा। सुना है कि हिंदी प्रकाशकों के प्रतिनिधि-मंडल बाहर जाने वाले हैं। अच्छा हो वे स्वयं एक प्रश्नावली तैयार कर लें और यात्रा में सूचनाएँ एकत्रित करते जायें।

सहयोग द्वारा प्रकाशन की बात भी की जा सकती है। पुस्तकालयों के विकास की रूपरेखा तैयार की जा सकती है।

(निदेशक, केंद्रीय हिंदी निदेशालय, भारत सरकार, नयी दिल्ली)

विचारों के युद्ध में किताबें अस्त्र होती हैं। --बर्नार्ड शा

ठगी का बादशाह नटवरलाल

● देवेन्द्र उपाध्याय

'ठगी का बादशाह' नाम से कुख्यात नटवरलाल को उस की जालसाजी के व्यापक कारनामों के कारण ही पुलिस ने उसे 'आधुनिक हुडिनी' कहा है।

चेहरे से टपकती भद्रता और अपटु-डेट वस्त्रों में सुशोभित हलके साँवले चेहरे को देख कर शायद कोई भी नहीं कह सकता कि यही कुख्यात जालसाज है, जो कई बार पुलिस की आँखों में धूल झोंक कर भागा है।

लगभग ५५ वर्षीय नटवरलाल का वास्तविक नाम मिथिलेशकुमार है। यह बिहार के छपरा जिले के रुइया-बाँगरा गाँव का निवासी है। यह हर बार नये-नये नामों और ओहदों के आधार पर बड़ी-बड़ी जालसाजियाँ करता रहा। इस पर आज भी एकसाथ २०० से भी अधिक केस बंगलौर, मद्रास, बिहार, पंजाब, उत्तर-प्रदेश, मध्यप्रदेश और राजस्थान में चल रहे हैं और नये-नये केसों में जिस की खोज होती है।

नटवरलाल का मुख्य धंधा—नकली चेकों के द्वारा बैंकों से रुपया निकालना, जाली रेलवे रसीदों द्वारा गोदामों से हजारों

से ले कर लाखों रुपयों तक का माल छुड़ा ले जाना, व्यापारी वर्ग से कार या जवाहरात ले कर उन्हें जाली चेकों के द्वारा भुगतान कर चकमा दे कर निकल जाना और जालसाजी के नये-नये करिश्मे दिखाना।

लखनऊ के एक धनी ठेकेदार से मेरी भेंट हुई। वे '५६-'५७ में नटवरलाल की जालसाजी का शिकार हुए और उन्हें लगभग ५० हजार रुपये का नुकसान उठाना पड़ा था।

उन्होंने बताया, "मेरे पास लगभग तीन लाख रुपये का सरकारी ठेका था। मेरे पास एक व्यक्ति आया। जिस ने अपना नाम राधेश्याम अग्रवाल एम. ए., एल-एल. बी. बताया। मैं ने उसे अपने काम में शामिल कर लिया। धीरे-धीरे उस ने मेरा पूरा विश्वास जीत लिया। मैं ने उसे अपने साथ दो आने का साझेदार बना लिया। उस व्यक्ति ने पूरी तरह से मुझे सम्मोहित-सा कर दिया। उस ने मेरा परिचय अपने बड़े भाई के रूप में देना शुरू कर दिया।

"एक दिन मेरे साझेदार ने मुझे बताया कि एक बड़े सेठ श्रीकृष्ण अग्रवाल अमीनाबाद के एक होटल में ठहरे हैं। उन्होंने लखनऊ का कैलाश स्टूडियो खरीद लिया और चाहते हैं कि उन्हें कोई अच्छा साझेदार मिले। मेरे साथी ने मुझे सेठजी से मिलने के लिए तैयार कर लिया। वे मसनद के सहारे बैठे हुए थे। दो दिन तक भेंट का सिलसिला चलता रहा, लेकिन साझेदारी की कोई बात तय नहीं हुई। मेरे साथी ने बताया कि सेठजी ने कहा है—मैं आदमी (ठेकेदार) से पैसा नहीं निकाल सकता, इसलिए साझेदारी के विषय में बात करने की कोई गुंजाइश नहीं।

"तीन-चार दिन बाद मुझे रिक्शे में सेठ श्रीकृष्ण अग्रवाल अकेले आते दिखाई दिये। पास आ कर उन्होंने रिक्शा रोका और उतर पड़े। मैं ने पूछा—इधर कहां?

"सेठजी ने बताया—रेसकोर्स जाने का इरादा है।

"तभी एक फेरीवाला गुड़ के लड्डू बेचता उधर आ निकला। सेठजी ने उस से चार आने के लड्डू ले कर खाये। कुछ देर बाद सेठजी चले गये। मेरे मन में सेठजी के प्रति इज्जत हो गयी कि इतना बड़ा सेठ है, लेकिन कितना सादा! रिक्शे में घूमता है और गुड़ के लड्डू खाता है!

"इस घटना के कोई हफ्ते भर बाद मेरा साझेदार ३८ हजार रुपया नकद ले कर और १५-२० हजार रुपये का सामान (लोहा, सीमेंट आदि) बेच कर एक रात चलता बना और फिर आज तक लौट कर नहीं आया।

"१९६१ में लखनऊ में नटवरलाल के पकड़े जाने की चर्चा थी। अदालत में उसे देखने वालों की भीड़ होती थी। एक दिन मैं भी उसे देखने जा पहुँचा। ज्यों ही मैं ने नटवरलाल को देखा, मैं सन्न रह गया। सेठ श्रीकृष्ण अग्रवाल ही नटवरलाल था और मेरा साझीदार भी उसी के साथ था।"

अमीनाबाद के जिस होटल में तथा-कथित सेठ श्रीकृष्ण अग्रवाल ठहरे थे उस होटल के मालिक की लड़की आई. ए. एस. की तैयारी कर रही थी। सेठजी ने अपनी विद्वत्ता का ऐसा रोब जमाया कि वे उस लड़की को पढ़ाने लगे। एक दिन सेठजी होटल-मालिक से बोले, "इस लड़की को आई. ए. एस. में निकलवा देना मेरे लिए कोई बड़ी बात नहीं है, क्योंकि मेरी दोस्ती राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्र-प्रसाद और प्रधानमंत्री नेहरू से है।"

सेठजी अपनी अटैची वहीं छोड़ कर राष्ट्रपति और प्रधानमंत्री से सिफारिश के लिए दिल्ली चले गये। होटल-मालिक ने उन्हें हवाईजहाज के दोनों तरफ के किराये सहित लगभग पाँच हजार रुपये नकद दे दिये। होटल का बिल तो पढ़ाने के बदले में चुकाया ही नहीं गया था। सेठजी सिफा-रिश के लिए दिल्ली चले गये। जब दो-तीन सप्ताह तक सेठजी नहीं लौटे तो होटल-मालिक ने उन के कमरे का ताला तोड़ कर उन की अटैची की तलाशी ली। अटैची में एक पैंट, कमीज और एक कंघी के सिवा कुछ नहीं था।

तीन-चार वर्ष बाद लखनऊ में नट-वरलाल की चर्चा सुन कर होटल-मालिक भी उसे देखने अदालत में पहुँचा। नटवर-लाल को देखते ही उस का सिर एकदम चकरा गया। सेठ श्रीकृष्ण अग्रवाल को होटल मालिक ने नटवरलाल के रूप में पुलिस के सशस्त्र पहरे में देखा।

नटवरलाल लगातार लगभग पंद्रह वर्षों से बहुरूपिया बन कर लोगों को धोखा देता रहा। जेल में बंद होने के बावजूद उस ने जाली कूपनों द्वारा जेल की कैंटीन से लगातार कई महीनों तक सामान मँगाते रहने में अपनी जालसाजी का एक और करिश्मा कर दिखाया!

हजरतगंज, लखनऊ के एक आलीशान होटल के बाहर एक बहुत बढ़िया कार में एक व्यक्ति कुछ देर तक बैठा रहा, तभी पास ही एक दूसरी कार आ कर खड़ी हो गयी। वह अपटुडेट व्यक्ति अपनी कार से निकला और दूसरी कार वाले के पास आ कर कहने लगा, "माफ करें, मेरी कार में पेट्रोल खत्म हो गया है। मेरी कार और चाबी यह लीजिये। जरा देर के लिए अपनी कार दे दीजिये। मैं पेट्रोल ले कर अभी लौटता हूँ।" कार गयी तो फिर लौटी ही नहीं। पता लगा कि छोड़ी गयी कार भी चुरायी गयी है।

कहा जाता है कि नटवरलाल का प्राइवेट सेक्रेटरी दिल्ली के एक अधिकारी का पुत्र था जो उस के हथकंडों में उसे पूरी तरह से सहयोग देता था और पकड़े जाने पर उसे छुड़ाने के लिए पूरी कोशिश करता था। बताया जाता है कि बाद में वह मुखबिर हो गया।

सन '६१ में नटवरलाल लखनऊ जेल में बीस वर्ष की सजा भुगत रहा था किंतु वह चकमा दे कर वहाँ से भाग निकला।
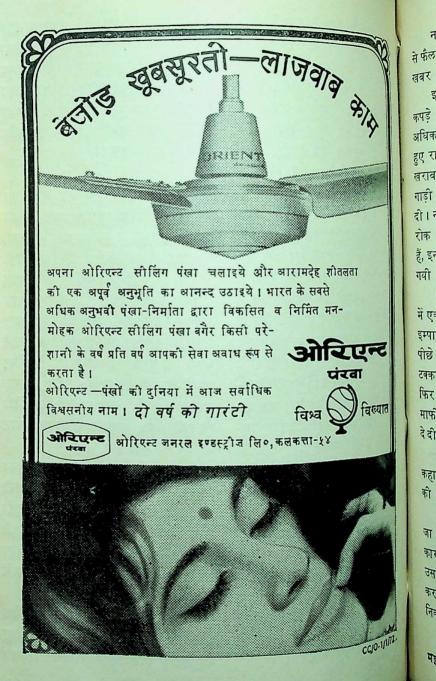
नटवरलाल के भागने की खबर तेजी से फैल गयी। वायरलेस द्वारा चारों ओर खबर भेज दी गयी।

इधर नटवरलाल ने कार में ही अपने कपड़े बदले। अब वह एक 'सरकारी अधिकारी' था। कानपुर की ओर जाते हुए रास्ते में उन्नाव के पास उस की कार खराब हो गयी। तभी एक मुरदा ढोने वाली गाड़ी कानपुर की ओर जाती दिखायी दी। नटवरलाल के प्राइवेट सेक्रेटरी ने उसे रोक कर कहा, "कानपुर के डी. एम. हैं, इन्हें अर्जेंट पहुँचना है। कार खराब हो गयी है, बाद में आती रहेगी।"

कहा जाता है कि हजरतगंज लखनऊ में एक रेस्तराँ के पास एक महिला अपनी इम्पाला कार स्वयं चलाती हुई आयी। पीछे से नटवरलाल ने अपनी कार से टक्कर मार कर उसे नुकसान पहुँचा दिया। फिर कार से उतर कर उस महिला से माफी माँगी और कहा, "आप अपनी कार दे दीजिये, मैं मरम्मत कराके ले आता हूँ।"

नटवरलाल ने कार स्टार्ट करते हुए कहा, "आप कहीं ऐसा न सोचें कि मैं आप की कार उड़ाये ले जा रहा हूँ!"

महिला मुसकराती हुई रेस्तराँ में जा कर बैठ गयी। नटवरलाल महिला की कार ले कर निकल गया। थोड़ी देर बाद उस का प्राइवेट सेक्रेटरी उस की कार ले कर चलता बना। महिला काफी देर बाद निकली तो दोनों कारों का पता न था।

सुना गया है कि जब लखनऊ के एक होटल में नटवरलाल पकड़ा गया तो उस से पहले वह अपने कमरे में लखनऊ के एक संगीतज्ञ से संगीत सुन रहा था। नटवरलाल के साथ ही वह संगीतज्ञ भी एक रात थाने में बंद रहा। संगीतज्ञ ने बताया, "मुझ से कहा गया कि एक रात के पचास रुपये मिलेंगे और मैं संगीत सुनाने आ गया।"

सन '६१ में लखनऊ के जिस होटल में वह ठहरा था वहाँ के बैरे को उस पर शक हो गया। वह जब शौचादि के लिए गया तो उसे बंद कर दिया गया। बाहर निकलने का कोई उपाय नहीं था। ऐसी स्थिति में पुलिस ने उसे गिरफ्तार कर लिया।

६ जनवरी, '७० का अंतिम बार जयपुर स्टेशन पर रेलवे-पुलिस ने उसे उस समय रँगे हाथों गिरफ्तार कर लिया जब वह जयपुर की ही एक फर्म के नाम आये लगभग डेढ़ लाख रुपये की लागत के ४०० बोरे तिल रेलवे की जाली रसीदों द्वारा गोदाम से निकलवा रहा था। उस के कब्जे से पंद्रह हजार रुपये नकद भी बरामद किये गये।

जाँच-पड़ताल के दौरान उसे छपरा ले जाया गया, जहाँ एक निजी प्रेस में छपी हुई जाली रेलवे-रसीदें पुलिस ने अपने कब्जे में ले लीं।

नटवरलाल अपने केसों की पैरवी स्वयं करता है और अपने बचाव के लिए कोई वकील नहीं रखता।

(एफ डी-३५, टैगोर गार्डेन, नयी दिल्ली-२७)

• वीरेन्द्र पांडेय

उस की कहानी बेमिसाल और दिलचस्प है। नारी के रूप में वह एक ऐसी आँधी थी जिस ने हर जगह कहर ढाया और जो उस की लपेट में आया उस के पैर उखड़ गये। उसे अपने यौवन और रूप पर गर्व था। वह सौंदर्य-सम्राज्ञी पुरुष-जगत के लिए एक खुली चुनौती थी। उस का कहना था कि संसार भर में स्त्री इसलिए असहाय और बेबस है क्योंकि उस ने अपने यौवन और सौंदर्य का सही उपयोग नहीं किया। उसे पुरुषों में पुरुषों में मौजूद नारी पर आधिपत्य जमाने की भावना से घृणा थी। उन की इस भावना को क्षत-विक्षत और पराजित करने के उद्देश्य से उस ने अपने ४३ वर्षों के छोटे-से जीवनकाल में ही अनेक उच्च पदाधिकारियों, सामंतों, बुद्धिवादियों और कलाकारों को अपने रूप का दास बनाया। यूरोप, इंगलैंड, अमरीका, आस्ट्रेलिया और भारत में वह बिजली की तरह चमकी। और उसी की चकाचौंध में जरमनी के एक राजा को अपना राजसिंहासन तक छोड़ना पड़ा।

उस की हवस अजीब थी। उस ने लगभग छह विवाह और छह सौ रोमांस किये और एक दर्जन से अधिक देशों के लाखों लोगों की नींदें हराम कीं। उस का नाम था लोला मोंटेज।

लोला मोंटेज अपने समय में ऐसी सौंदर्य की विश्व-विख्यात और बेजोड़ मिसाल थी। घने काले रेशमी बाल, ताजे गुलाब-जैसा मासूम चेहरा, आबनूसी आभा से प्रदीप्त बड़ी-बड़ी काली आँखें और कुंदन की कांति-सा दमकता हुआ तरंगाकार मक्खनी शरीर।

सौंदर्य का जादू

शरीर और सौंदर्य उसे अपनी माँ से मिला था, जो स्पेन की एक सुप्रसिद्ध नर्तकी थी। प्रकृति की चंचलता, साह-सिकता और तर्कहीन जिंदादिली उस के पिता की देन थी जो आयरलैंड की उच

केल्ट जाति में पैदा हुए थे। जो अपने इन गुणों के लिए प्राचीन काल से प्रसिद्ध रही है। वह नजाकत और नफासत जिस ने पश्चिमवासियों को उस का दीवाना बना दिया था, उस ने बचपन में भारत से पायी थी। इस प्रकार लोला मोंटेज का व्यक्तित्व स्पेन का स्वप्निल रोमांस, आयरलैंड की बेलौस जिंदादिली और पूरब की तहजीब का एक ऐसा अनोखा संगम था जो उस के संपर्क में आने वाले हर व्यक्ति को अपना मुरीद बना लेता था।

उस का बचपन का नाम था मेरी डोलरेस एलिजा रोसाना गिलबर्ट। उस का पिता एडवर्ड गिलबर्ट एक अँगरेज अफसर था और आयरलैंड के 'नाइट' का पुत्र था। उस की माँ का नाम लोला ओलिवर था। डोलरेस का संक्षिप्त रूप 'लोला' है। लोला गिलबर्ट का जन्म १८१८ में लिमेरिक में हुआ था। उस के पिता को अपनी शादी के कारण अपने घर से अलग होना पड़ा था, इसलिए लोला के जन्म के कुछ समय बाद ही वह अपने परिवार के साथ भारत चला आया।

लोला का पिता भारत में अधिक समय तक सुख की जिंदगी नहीं बिता सका। १८२५ में उस की अचानक मृत्यु हो गयी। लोला और उस की माँ अनाथ और असहाय हो गयीं। कोई अन्य रास्ता न देख लोला की माँ को दूसरी शादी करनी पड़ी।

उस का नया पति एक बड़ा सरकारी अफसर था। उस का दृष्टिकोण
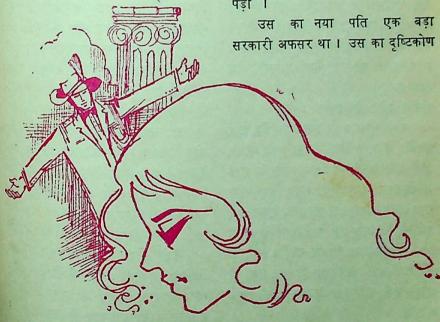
बहुत ही रूढ़िवादी था। इसलिए लोला की माँ को, जो कभी स्पेन में एक नर्तकी का स्वच्छंद जीवन बिता चुकी थी, घर की चहारदीवारी में कैद होना पड़ा। माँ ने नयी परिस्थितियों के साथ समझौता करके अपने को नये घर के वातावरण के अनुकूल ढाल लिया, किंतु पुत्री लोला ने अपने अनुशासनप्रिय नये पिता की सौजन्यता को नहीं स्वीकारा। माता-पिता के प्रति उस में विद्रोह की तीव्र भावना उत्तरोत्तर बढ़ती गयी। वह उन के बजाय घर में नौकरों के बीच ज्यादा प्रसन्न रहती थी। नौकरों ने उसे अनेक ऐसी बात भी सिखायीं जिन्हें उस उम्र में उसे नहीं जानना चाहिए था। एक बार उस के पिता ने उसे एक नौकर के साथ बहुत ही बेशर्मी का खेल खेलते हुए पकड़ा। फलस्वरूप नौकर निकाल दिया गया और लोला को पढ़ने के लिए यूरोप भेज दिया गया।

संगीत और प्रेम-लीला

लोला कुछ समय तक स्काटलैंड और इंगलैंड में रही, फिर पेरिस चली आयी, जहाँ उसे अपने संगीत-मास्टर के साथ अविवेकपूर्ण प्रेम-लीला करते हुए पाया गया। इस समय उस की उम्र केवल १५ वर्ष की थी किंतु उस के प्रेमियों की संख्या दिन-प्रति-दिन बढ़ती ही गयी। उस के सौतेले पिता ने परेशान हो कर उस की शादी एक बड़ी उम्र के जज के साथ तय कर दी।

शादी की सूचना पाते ही वह [illegible] उठी। उस ने अपने अनेक प्रेमियों में से एक से पूछा, "अब मैं क्या करूँ?"

"करना क्या है! मुझ से शादी कर लो," उस के प्रेमी कैप्टेन टामस जेम्स ने सलाह दी। दूसरे ही दिन दोनों इंग्लैंड भाग गये और उन की शादी हो गयी।

लोला का पति कैप्टेन टामस जेम्स उस के प्रेम में पागल था, लेकिन लोला के अन्य प्रेमियों ने भी निराश होना नहीं सीखा था। एक दिन कैप्टेन जेम्स लोला के साथ वाइसराय के दरबार में गया। दरबार में उपस्थित सभी लोग लोला की सुंदरता देख कर हतप्रभ से हो गये। स्वयं वाइसराय लार्ड नारमैंडी भी उस पर निसार हो गये। उन्होंने आगे बढ़ कर लोला की बाँह पकड़ ली और उसे एक किनारे ले जा कर प्रणय-याचना करने लगे। बेचारा पति कैप्टेन जेम्स दूर एक कोने में खड़ा क्रोध और ईर्ष्या की अग्नि में जलता हुआ होंठ चबाता रहा।

फलस्वरूप, कैप्टेन जेम्स ने शहर छोड़ दिया। लोला को ले कर वह एक देहात में चला गया, किंतु देहात में लोला तेजी से ऊबने लगी और पति के प्रति उस का आकर्षण कम होने लगा।

भारत से अफगानिस्तान

कैप्टेन जेम्स से उस की यह मनोदशा छिपी न रह सकी। वह उसे ले कर भारत चला आया। भारत आ कर उसे अफगानिस्तान के अभियान में जाना पड़ा।

लोला उस के साथ गयी। अफगानिस्तान के अभियान में वह बहुत प्रसन्न रही, क्योंकि सेना के लगभग सभी अफसर उस पर आसक्त थे और उस के लिए सब कुछ करने को तैयार रहते थे। पुरुषों पर शासन करने का उसे शौक था और अफगानिस्तान के अभियान में उसे इस का पूरा अवसर मिला।

१८४२ में वह लंदन लौटी। लंदन की वापसी यात्रा में उस की मुलाकात कैप्टेन लेनाक्स से हुई। लंदन पहुँचते-पहुँचते यह मुलाकात मित्रता में बदल गयी और पति से उस के तलाक का कारण बनी। किंतु, किन्हीं व्यावहारिक कारणों से उस की शादी कैप्टेन लेनाक्स से नहीं हो सकी।

लंदन में उस के कुछ प्रशंसकों ने उसे एक नयी स्पेनी नर्तकी के रूप में 'हिज मैजेस्टी थियेटर' में पेश किया। उस का नृत्य प्रभावशाली नहीं सिद्ध हो सका, किंतु उस के सौंदर्य ने निश्चित रूप से लंदन के कलाप्रेमियों को प्रभावित किया। एक स्थानीय पत्र ने उस के नृत्य का वर्णन करते हुए लिखा—"ऐसा लगता था कि एक सुंदर कमनीय फूल हवा में तैर रहा था।"

लंदन में सफलता की कोई खास आशा न देख कर वह पुनः पेरिस चली आयी। जहाँ एक नौजवान पत्रकार ने उस पर अपना सब कुछ निछावर कर दिया। वह उस के एक अन्य प्रेमी द्वारा द्वंद्व-युद्ध में मारा गया। मरते समय वह अपने जीवन भर की कमाई—बीस हजार फ्रैंक और कुछ सिक्योरिटीज—अपने स्वप्नों की रानी लोला को भेंट कर गया।

काउंटेस की उपाधि

पत्रकार के इस धन ने लोला को अपने दैनिक खर्च की समस्या से मुक्त कर दिया। वह पेरिस से बवेरिया की राजधानी म्यूनिख चली आयी। जरमनी के उस राज्य में लुटविग प्रथम का राज था। उसे कविता लिखने का शौक था और उस के महल में एक ऐसी चित्र-दीर्घा थी जिस में उन सभी सुंदरियों के चित्र लगे थे जिन्होंने उसे कभी-न-कभी प्रभावित किया था। जब लोला पहली बार उस के शाही रंगमहल में लायी गयी तब वह पहली ही नजर में लोला का गुलाम हो गया। एक महीने के भीतर राजा ने उसे 'काउंटेस ऑव लैंडफेल्ड' की उपाधि से अलंकृत किया। उस के लिए एक खूबसूरत महल बनवाया गया और २० हजार फोरिक की पेंशन बाँध दी गयी।

किंतु, म्यूनिख की जनता उसे पसंद न कर सकी। अपने राजा की विलक्षणता और सनक की उसे चिंता न थी, किंतु एक विदेशी स्त्री का अभद्र व्यवहार उस के लिए असह्य था।

लोला में सौंदर्य था, किंतु उस के स्वभाव में कोमलता का सर्वथा अभाव था। वह राज्य के कार्य में अधिकाधिक हस्तक्षेप करने लगी। जिस किसी को वह

नापसंद करती थी उसे वह राजा के सामने झूठे आरोप लगा कर भरे दरबार में बेइज्जत कर देती थी। म्यूनिख के सभी लोग उस से और उस के साथ रहने वाले बुलडाग से नफरत करते थे।

अपनी लोकप्रियता बढ़ाने के लिए लोला ने स्थानीय विश्वविद्यालय में एक स्वयंसेवक दल बनाने की चेष्टा की। विश्वविद्यालय के अधिकांश छात्र उस के विरोधी थे। उन्होंने एक दिन अपने एक सहपाठी को इसलिए पीट दिया क्योंकि वह 'काउंटेस' के स्वयंसेवक दल का बिल्ला लगाये हुए था। स्थानीय पुलिस ने भी उसी छात्र को गिरफ्तार किया जिस ने 'काउंटेस' के दल का बिल्ला लगा कर शांति भंग की थी। 'काउंटेस' उसे बचाने के लिए स्वयं घटनास्थल पर पहुँची।

भीड़ पर गोली

तलवारें खिच गयीं। जनता विद्रोह पर उतर आयी। राजा लुडविग प्रथम अपनी प्रेमिका के सार्वजनिक अपमान को सहन न कर सका। उस ने साल भर के लिए विश्वविद्यालय को बंद कर देने की घोषणा की। अपनी क्रुद्ध प्रेमिका को बाँहों में ले कर जब वह लौट रहा था तो लोला ने भीड़ पर गोली चला दी।

उत्तेजित भीड़ ने राजमहल को घेर लिया और एक स्वर से लोला को देश से बाहर निकालने की माँग की गयी। देश के अभिजातवर्ग की सभा ने जब कड़े शब्दों में राजा के सामने इस माँग को दोहराया तो राजा लुडविग प्रथम को यह समझने देर न लगी कि उन सभी की आँखों में निश्चय की दृढ़ता है। एक ओर राजसिंहासन था और दूसरी ओर थी सुंदरी लोला। राजा सुंदरी का मोह नहीं छोड़ सका और उस ने कहा, "मैं राज सिंहासन छोड़ सकता हूँ पर लोला को नहीं।"

उस ने राजसिंहासन छोड़ा

दूसरे दिन एक शाही फरमान द्वारा लोला के नागरिक अधिकार छीन लिये गये और उसे तुरंत ही देश से बाहर जाने का आदेश दिया गया। राजा लुडविग प्रथम उसे अब भी बहुत प्यार करता था। उस ने उसे अपने राज्य में रखने की बहुत चेष्टा की। परिणामस्वरूप जन-प्रतिनिधियों ने उसे राजा का पद छोड़ने के लिए मजबूर कर दिया। उस का पुत्र मैक्सीमिलन राजगद्दी पर बिठाया गया।

रूपगर्विता लोला फिर भी नहीं झुकी। उस ने म्यूनिख छोड़ दिया। उस के जाने के आधे घंटे के भीतर म्यूनिख की क्रुद्ध जनता ने उस का महल फूंक दिया और बेचारा अपदस्थ राजा लुडविग प्रथम अपनी महबूबा के महल से उठती हुई लपटों को तब तक देखता रहा जब तक कि वह राख और मलबे के ढेर में नहीं बदल गया।

(एच एस-६, कैलाश कालोनी,
नयी दिल्ली-४८)

• मृणालिनी साराभाई

हमारे शास्त्रीय नृत्य और रंगमंच

प्राचीन भारत में नाटक, संगीत, नृत्य, कविता और भाषा के मिश्रण को नाट्य कहा जाता था। हिंदी विचारधारा के अनुसार जीवन-प्रक्रिया स्वयं एक नाटक है। सनातनता के विस्तार में ब्रह्मांड एक घटना है। महानतम अभिनेताओं नटराज और नटवर से एक निरंतर प्रवाह के रूप में हम सब ने जन्म लिया है और अविद्या की पृष्ठभूमि में कुछ समय के लिए हम अपनी भूमिका निभाते हैं। हम प्रायः भूल जाते हैं कि हम अभिनेता हैं, क्योंकि हम अपनी गतिविधियों से बहुत गहराई से जुड़ जाते हैं, परंतु एकाएक नाटक समाप्त होता है और अभिनेताओं को विलीन होना पड़ता है। बुद्धिमान अच्छा अभिनय करते हैं। जैसा कि गीता में श्रीकृष्ण ने कहा है, वे यह समझ कर जीवन का अभिनय करते हैं कि मानव देह में निहित सर्वोच्च आत्मा दर्शक और अनुभवकर्ता है।

किसी अन्य सभ्यता ने ईश्वरीय अनुभूति या मानव की वास्तविक प्रकृति को जानने के लिए नाटक का प्रयोग नहीं किया। हमारे देवतागण सर्वोच्च नर्तक और अभिनेता थे। स्वयं ब्रह्मा ने नाट्य वेद की सृष्टि की और मुनि भरत ने अपनी पुस्तक 'नाट्यशास्त्र' में लिखा है कि नाटक का निर्माण केवल सुखानुभूति के लिए नहीं बल्कि नैतिक सत्यों को जानने के लिए हुआ है। यह एक ऐसा खेल है जो सदैव कार्यों, मनोवेगों एवं विचार-

धाराओं से आपूरित होता रहता है ।

क्षीर सागर के मंथन को चित्रित करते हुए, जिस में शिव और पार्वती ने नृत्य जोड़ लिया, नाटक को बौद्धिक नाटक और लोक-नाटक में विभाजित कर दिया गया । ये नाट्य-प्रदर्शन धर्मानुष्ठान से आरंभ होते थे और धार्मिक अवसरों पर किये जाते थे । भरत ने इंद्र के ध्वजदंड समारोह का वर्णन किया है, जिस में प्रथम नाटक प्रस्तुत किया गया था । तब से नाट्यकला का विकास हुआ । प्रत्येक हाव-भाव और गतिविधि का सूक्ष्मता से विश्लेषण किया गया । अभिनय मानव क्षमता का मानदंड था और मंच-सामग्री पर बल नहीं दिया गया । अभिनय, जिस में अभिनेता ने मानव अभिव्यक्ति के संपूर्ण विस्तार को निरूपित किया, तकनीक की दृष्टि से उत्कृष्ट था । हाथ सभी वस्तुओं और आकारों को मुद्राओं में अभिव्यक्त करते थे । आँख, मुख, नाक, पलक, प्रत्येक के नियम थे जिन के अंतर्गत ही वे संचालित हो सकते थे । किसी भी अंग को नहीं छोड़ा गया । यहाँ तक कि गरदन को भी अभिव्यंजना और सूक्ष्मता दे दी गयी । रंगमंच की विशिष्टताओं की भूमिका को सूचक तक सीमित कर दिया गया । अभिनेता केंद्र-बिंदु था और उस के चारों ओर काल्पनिक जगत था । इस प्रकार वह चरित्र बन गया । उस की भावनाओं में श्रोताओं ने भी भाग लिया और इसे रस कहा गया । शैलीबद्ध प्राचीन नाट्यकला ने शक्तिशाली और सांसारिक रूप ले लिया जिस के ढाँचे में सभी कलाओं ने आश्रय पाया । मुनि भरत ने लिखा—"कोई ज्ञान, कला, शिल्प, उपाय तथा गतिविधि नहीं जो नाट्य में न पायी जाती हो ।" इस समृद्ध स्रोत से नृत्यनाट्य की पद्धति का विकास हुआ, जिस का आज भी अस्तित्व है, न केवल भारत में अपितु संपूर्ण दक्षिण-पूर्वी एशिया में ।

दक्षिणी भारत में प्राचीन शैलियों की सहज पवित्रता अक्षुण्ण रही है । मंदिर सभी सामाजिक गतिविधियों के केंद्र थे । आंध्र का 'भगवत मेला नाटकम्' और 'केरल कूडियट्टम' प्राचीन संस्कृत रंगमंच के सब से निकट हैं ।

'भगवत मेला नाटकम्' पूर्वरंग से आरंभ होता है, जैसा कि भरत ने लिखा है। चारों वेदों से मंत्रोच्चारण, रंगभूमि को पवित्र करने के लिए जल का छिड़काव, नौ दिशाओं में रंगमंच के देवताओं को अर्पण तथा सुरक्षा-हेतु इंद्र के ध्वजदंड के स्थान से कार्यक्रम आरंभ होता है। तत्पश्चात गणेश के रूप में एक अभिनेता अन्य अभिनेताओं को आशीर्वाद देता है, सूत्रधार घोषणा करता है और नाटक तथा अभिनेताओं का परिचय देता है । उस के हाथ में एक मुड़ी हुई छड़ी होती है जो ब्रह्मा द्वारा भरत को दी गयी 'कुटिलक' की प्रतीक है। अभिनेता हाथों की सांकेतिक मुद्राओं के साथ गाते, नाचते, बोलते हैं।

कथकली और कृष्णत्तमकली में कला के प्रतीकात्मक पक्ष पर अधिक बल दिया जाता है। भावबोधक आँखों, अर्थपूर्ण हस्त-मुद्राओं, शरीर-संचालन और कलापूर्ण अंगराग के माध्यम से नर्तक श्रोता की भावनाओं को छूने में सफल रहता है। अपने अंतर से वह विश्व की सच्चाइयों को चित्रित एवं संप्रेषित करता और अपने पात्र में स्वयं अपनी प्रकृति को ऐसे बींध देता है कि दर्शक के अंतर को छू लेता है।

कथकली नर्तकों द्वारा खेली गयी कथाएँ विस्मयजनक हैं। वर्षों से सुनी-सुनायी जा रही इन कथाओं में आज भी वास्तविकता और ओज है।

नृत्य नाट्य की रंगमंच-संबंधी धारणा से पृथक हो गया, परंतु कहानी कहने तथा भावनात्मक और धार्मिक विषयवस्तु की अनिवार्य नाटकीयता विशिष्टताओं को अब भी अपनाये हुए हैं। जब कि परंपरागत शैलियाँ अभी तक प्रचलित हैं और कला की दृष्टि से शक्तिशाली हैं, आधुनिक युग ने पाश्चात्य नाटक से संबद्ध रंगमंच शैली में अभिव्यक्ति पायी है। आज नृत्य-मंडलियाँ, चाहे वे एकाकी नृत्य की हों या नृत्य-नाटक की, रंगमंच के अभिनेता अब भी कभी-कभी संस्कृत नाटक खेलते हैं। उन का मुख्य ध्येय मंच नाटक खेलना होता है, जैसा कि पाश्चात्य रंगमंच ने प्रभावित किया है। बहुत कम आधुनिक नाटक भारतीय पद्धति से प्रेरणा ग्रहण करते हैं, चाहे नाटक भारतीय विचारधारा पर आधारित हों। यह निंदनीय नहीं है, क्योंकि नाट्य की कलात्मक परंपराएँ नर्तकों ने सुरक्षित रखी हैं।

रंगमंच हमारे आसपास की प्रवृत्तियों का प्रतिबिंब है। सैकड़ों वर्षों से भारत ने असंख्य धर्मों और संस्कृतियों को पचाया है। नानाविध स्रोतों से हमारी विरासत प्राचीन परंपराएँ समृद्ध होती गयी हैं। इस से एक नयी नाट्यकला का आविर्भाव होगा जिस में प्राचीन और नवीन दोनों पद्धतियों का समावेश होगा। लोक-साहित्य, प्राचीन गाथाओं और संगीत-नाटकों पर आधारित नाटकों की खोज आरंभ हो चुकी है। एक नयी घटना यह है कि अब चित्रकार भी रंगमंच से संबद्ध होते जा रहे हैं और सेट के अभिकल्पन को नये आयाम मिल गये हैं। यह न केवल हमारी खोज है बल्कि पाश्चात्य रंगमंच की भी है जिस ने भारतीय संगीत और नृत्य से बहुत कुछ ग्रहण किया है। अंततः प्रत्येक अपनी शैली विकसित कर लेगा।

"तीन महीने पहले मैं ने सुरेश से विवाह करने से इनकार कर दिया था...तभी से वह शराब में डूबा रहता है" कमला ने अपनी सहेली को बताया।

"वाह ! इसे कहते हैं महीनों तक खुशियाँ मनाना !"

पुलिस अधीक्षक पत्रकारों को प्रशिक्षित कुत्त के बारे में बता रहे थे। उन्होंने बड़े गर्व से कहा, "जैसे ही मैं सीटी बजाऊँगा कुत्ता दौड़ कर मेरे पास आयेगा और आदेश की प्रतीक्षा में खड़ा हो जायेगा।"

"वह दिन भी कभी आयेगा जब हम पुलिस को ऐसा प्रशिक्षण दे सकेंगे ?" एक पत्रकार ने प्रश्न किया।

*

झनकू मित्र के सामने शेखी बघार रहे थे, "अब मैं तुम्हें साफ बात बता ही दूं....तुम्हें शायद यह पता नहीं है कि मैं ने पुरानी कार खरीदी है।" और वे बड़े प्यार से कार पर हाथ फेरने लगे।

मित्र ने मुसकरा कर कहा, "अब मैं भी तुम्हें सच बात बता ही दूं... मैं तो यह समझे बैठा था कि कार तुम्हारी ही बनायी हुई है!"

*

दो विदेशी मित्र जॉन और रिचर्ड दिल्ली आये। भूख लगने पर वे एक पंजाबी होटल में गये। प्लेट में कच्ची प्याज के साथ हरी मिर्चें देख कर उन्हें बड़ी उत्सुकता हुई। रिचर्ड ने उन्हें चबाना शुरू कर दिया। एकाएक बड़ी तेजी से उस की आँखों से पानी बहने लगा। जॉन बड़ी व्यग्रता से पूछ बैठा, "क्या हुआ? रो क्यों रहे हो?"

"मुझे एकाएक अपने पिताजी की याद हो आयी जिन्हें फाँसी दे दी गयी थी।" जॉन ने सहानुभूति जतायी फिर मिर्चें चबानी शुरू कीं तो उस की आँखों से भी पानी बहने लगा। अब रिचर्ड ने पूछा कि क्यों रो रहे हो।

"मैं इसलिए रो रहा हूँ कि तुम्हारे पिता के साथ तुम्हें भी फाँसी पर क्यों न लटका दिया गया," जॉन ने जवाब दिया।

पारमिता मन

वबूल के झरे पत्तों पर खरगोशों के बीच उस का
सो जाना अब कोई संगीत नहीं रचता संध्याक्लांत मौसम में
कहीं कोई गोपन लज्जा नहीं
प्रतीक्षाक्लांत प्रहर नहीं--
सिवा इस के कि गौरैये को देख कर कुछ सोचना
उस के थके पंखों के बारे में; अब
उस कंठ से कोई कविता निकल कर
शामिल नहीं हो पायेगी शंखचील की महायात्रा में
सिर्फ अनादृत कुंतल बिखर जाते हैं
दक्षिणी के जन्मलग्न के संग...
फिर शायद उन आँखों में उतर आये
शंखचील की वही महायात्रा समुद्र की अनंतता में
रिक्त और प्रशांत कंठ पर
हवा में उड़ते कुंतल के साथ
अब कभी भी उतर नहीं आयेगा वह संगीत
जिसे सुन कर पिंजरे में बंदी
मेरी वनवासी सो जाती थी
अंतिम निस्संगता में...

— प्रणवकुमार वंद्योपाध्याय —
(ए-२/४ मॉडल टाउन, दिल्ली-९)
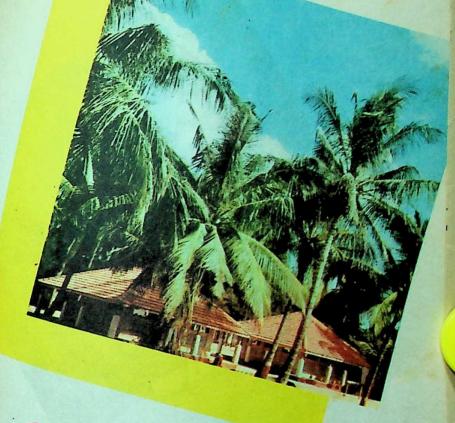
शारदाग्राम

सौराष्ट्र के जूनागढ़ जिले में गाँवों के बीच एकांत में ११० एकड़ भूमि में स्थित शारदाग्राम एक अनोखा स्थल है। यहाँ की इंट-इंट से प्रेरणाएँ मिलती हैं। सेवा, त्याग और उत्साह की भावनाओं से ओत-प्रोत, आदर्श एवं यथार्थ, व्यावहारिक एवं फलमूलक शिक्षा के क्षेत्र में यहाँ पर किये जा रहे प्रयोगों के संबंध में संभवतः गुजरात के बाहर कुछ ही लोग जानते होंगे। बापू के स्वप्न का प्रतिरूपण
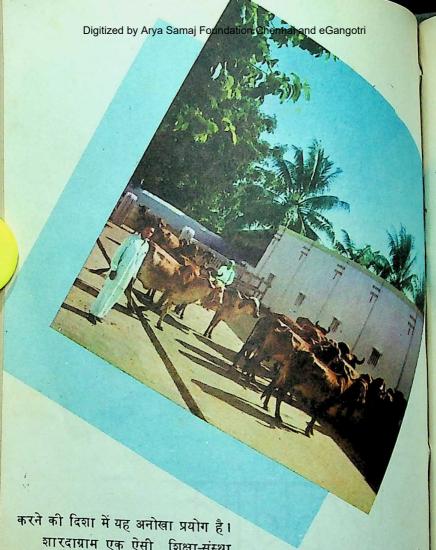
करने की दिशा में यह अनोखा प्रयोग है।

शारदाग्राम एक ऐसी शिक्षा-संस्था है जहाँ नवयुवकों की एक नयी पीढ़ी को तैयार करने के लिए भारतीय संस्कृति के उच्चतम आदर्शों तथा शिक्षा की अत्याधुनिक प्रयोगात्मक विधियों का सफलतापूर्वक प्रयोग किया जा रहा है। भारत की कृषि तथा 'भारत की आत्मा' (ग्रामीणों) के जीवन को सामुदायिक विकास द्वारा उन्नत करना तथा आधुनिक आवश्यकताओं की पूर्ति इस प्रयोग का लक्ष्य है। शारदाग्राम को 'पश्चिम भारत का शांतिनिकेतन' भी कहते हैं क्योंकि यहाँ बापू और गुरुदेव के शिक्षा-संबंधी दर्शनों का सामं-

जस्य मिलता है। बापू की राष्ट्रीय शिक्षा के आह्वान के प्रत्युत्तर में श्रीमनसुखराम जीवनपुत्र ने असहयोग-आंदोलन के बाद सन १९२१ में कराची में एक खुले उद्यान में 'शारदा मंदिर' के नाम से इस की स्थापना की। धीरे-धीरे इस ने प्रगतिशील राष्ट्रीय संस्था का रूप धारण कर लिया और २८ वर्षों तक यह महत्त्वपूर्ण कार्य करती रही।

१९४७ में विभाजन ने कराची में फलते-फूलते 'शारदा मंदिर' का एकाएक अंत कर दिया।

गाँधी स्मारक-निधि तथा अन्य संस्थाओं की सहायता से १ अप्रैल, १९४९ को बहुद्देशीय ग्रामीण शैक्षिक परियोजना के रूप में शारदा मंदिर 'शारदाग्राम' के नाम से मंगोल के पिछड़े हुए गाँवों के बीच फिर से शुरू किया गया। संस्था को कराची में दस लाख रुपये मूल्य की संपत्ति छोड़नी पड़ी।

यहाँ के. जी. से ले कर माध्यमिक कक्षाओं तक शिक्षा दी जाती है। अधिकांश छात्र छात्रावास में रहते हैं। पाठ्यक्रम का उद्देश्य है कि कृषकों के लड़के नौकरियों के लिए शहरों में न जायें। नगरों से जाने वाले छात्रों के लिए विविध पाठ्य विषयों का व्यापक वर्णक्रम है।

विद्यालय का टेली कम्यूनिकेशन सिस्टम ११० एकड़ भूमि में फैला हुआ है। झाड़ू लगाना तथा सफाई छात्रों और सहवासियों की दिनचर्या का एक भाग है। स्वास्थ्य-केंद्र तथा चिकित्सा-सेवाओं में विविध पद्धतियाँ प्रयोग में लायी जाती हैं।

'शारदाग्राम' अनेक इकाइयों की परियोजना है। प्रत्येक इकाई ३० ग्राम-केंद्रों द्वारा पड़ोस के पचास गाँवों में कार्य करेगी। 'शारदाग्राम' को शीघ्रातिशीघ्र पूर्ण रूप से ग्रामीण-संस्थान में परिणत कर देना, उच्च शिक्षा आरंभ करना तथा एक प्लैनेटेरियम का निर्माण आदि भविष्य के कार्यक्रम हैं।

'शारदाग्राम' एक अत्यंत कार्यक्षम तथा संभाव्य संस्था के रूप में विकसित हुआ है। इस के प्रयत्न का राष्ट्रीय महत्त्व है। यह राष्ट्रपिता के स्वप्नों को सँजो कर उसे यथार्थ में परिणत करने का उदाहरण भारतीय समाज के सम्मुख प्रस्तुत कर रहा है। हमारे समाज की अनूठी ऐतिहासिक स्थिति तथा सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिवर्तन से उत्पन्न समस्याओं के समाधान के लिए आगामी पीढ़ी को यथायोग्य प्रशिक्षण देने के लिए देश में ऐसी अनेक संस्थाओं की आवश्यकता है।

● ए. के. सिन्हा

(५५/२१, हैवी इलेक्ट्रिकल्स, रानीपुर, हरद्वार)

क्रुद्ध व्यक्ति का मुख तो खुला रहता है किंतु नेत्र बंद रहते हैं।

—कैटो

काफी रात बीत जाने पर ओका-होमा सड़क के दूसरे सिरे पर हलकी रोशनी का प्रभामंडल चमकने लगा तो फ्रेड मींस को विश्वास हो गया कि अब वह किसी शहर के करीब है। शायद अब उसे आराम करने की जगह मिल जायेगी। लेकिन पास पहुँचने पर मालूम हुआ कि वह जंगल की आग थी जो सड़क के करीब लगी थी। आग इतनी बढ़ चुकी थी कि अब अकेले आदमी के लिए उसे बुझाना संभव न था।

उस ने अपने थके पाँव पीछे की ओर मोड़े और काफी आगे निकल आने पर फिर आग की तरफ देखा। काफी विचित्र था यह सब—आग लगी थी और कोई बुझाने वाला न था! वह चुपचाप सुलगती-फैलती जा रही थी। रात काफी बाकी थी—शायद आधी रात, इसीलिए किसी का ध्यान नहीं जा पाया था।

उसे आग बिलकुल भी पसंद न थी। जब वह बच्चा था तब एक रात उस की माँ उसे फार्म-हाउस से बाहर ले आयी थीं। पास ही मकान के बाहरी हिस्से में आग लगी थी। हालाँकि उस के घर तक नहीं पहुँची थी लेकिन वह बुरी तरह डरा हुआ था। आज भी वह रात के वक्त की उस गरमी की लहर और अस्वाभाविक किस्म की रोशनी महसूस करता है। इसी के साथ उसे कार्पसक्रस्टी के समीप लगी आग का ध्यान आया। वह आग भी मामूली झाड़ियों से फैली थी, जिसे बुझाने से पहले ही पाँच आदमी उस में जल चुके थे। यह भी ठीक वैसी ही आग थी।

उस की कार का अगला हिस्सा सीमेंट के एक छोटे पुल से टकराया। अब वह धीरे-धीरे चल कर ट्रकों के एक अड्डे के करीब पहुँचा। अंदर जा कर उस ने एक लड़की का ध्यान अपनी ओर खींचने की कोशिश की। लड़की सभी तरफ दौड़-दौड़ कर ट्रक वालों को खाने-पीने का सामान परोस रही थी।

"हे ऽ," उस ने आवाज दे कर उसे आखिर में बुला ही लिया, "सुनो, सड़क के करीब ही झाड़ियों में आग लगी है!"

"आग!" लड़की ने पूछा।

"हाँ, क्या तुम्हारे पास टेलीफोन है जिस से इस की सूचना तुरंत दी जा सके!"

"किस तरफ लगी है?"

"सड़क के करीब।"

"केटक्रीक के पास न!"

"हाँ, तुम्हें कैसे मालूम?"

"उस तरफ केटक्रीक पुल है न!"

"हाँ!"

"आग क्रीक के इलाके के पार आ

रात में आग

ही नहीं सकती, और क्रीक के दूसरी तरफ कुछ भी नहीं है जहाँ आग पहुँचे !"

"पर इतने पर भी क्या फोन नहीं किया जाना चाहिए, आखिर आग ..."

"यहाँ आग बुझाने वाले स्वयंसेवकों का दस्ता है। जब तक क्रीक के दूसरी तरफ आग न हो वे वहाँ नहीं जायेंगे।"

"मैं जानता हूँ, पर आग तो बुझानी ही चाहिए।"

"आप को कॉफी चाहिए ?"

"मैं ने आग फैलती देखी है," उस ने दोबारा कहा। लड़की उस के लिए कॉफी लायी और फिर काउंटर की ओर चली गयी। वह अचानक अपने आप को
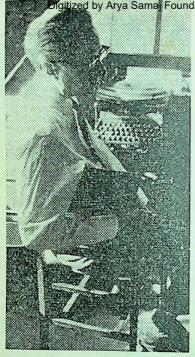
लेखक

ले कर चेता, वह गंदा है। काउंटर के पीछे-पीछे धब्बेदार शीशा पूरी दीवारों पर लगा था। वह जरूर गंदा लग रहा होगा ! इस से पहले दिन उस ने रास्ते भर धूल-भरी आँधी का सामना किया था। आँधी इतनी तेज थी कि डलास के आस-पास के इलाकों में ट्रंक बुरी तरह मिट्टी से भरे थे। वे रात का इंतजार कर रहे थे जब अकसर हवा की तेजी मंद पड़ जाती थी। वह सारे रास्ते बिना इंतजार किये चलता रहा, हालाँकि यह बड़ी गलती थी। कार का इंजन धूल से बुरी तरह सना था। और कार्बोरेटर बेहद गंदा हो गया था। वह समय बचाना चाहता था। ओक्लाहोमा के खेतों में जुताई का काम शुरू हो गया था। पाँच हजार एकड़ के फार्म में काम करने वह जा रहा था जहाँ उस ने पिछले साल काम किया था।

कॉफी पीने के बाद वह बाहर चला आया। ठंडी हवा जोरों से बहने लगी थी। उस ने मिट्टी की गंध महसूस की। वह अपनी कार में बैठा और उसे स्टार्ट किया।

उस ने पास ही एक मकान का दरवाजा खटखटाया। अंदर दूधिया बत्ती जलने पर बाहर थोड़ी-सी उजास फैली।

"क्या चाहिए ?" किसी महिला की आवाज थी। उस ने अपने शरीर के चारों तरफ एक पीला कपड़ा लपेटा हुआ था, जैसे वह भूसे के तिनकों का लिबास हो।

"सड़क के करीब ही सूखी घास में जोरों की आग लगी है, मैं ने सोचा यह बेहतर होगा कि आप को खबर कर दूं।"

महिला नींद की खुमारी में थी। उस ने अपने जिस्म से लपेटे कपड़े को जोर से कसा, "आग... ! ठीक है, गाड़ियों को खड़ी करने की जगह में, थोड़ी सी दूर पर फोन है।"

वह जाने ही वाला था कि उसे याद आया, "क्या आप सड़क के करीब ही कोई जगह बता सकेंगी, जहाँ सोने के लिए जगह मिल सके ? मैं बहुत दूर से अपनी गाड़ी चला कर जगह खोज रहा हूं।"

"हाँ, देखो दो मील दूर केटकीज

बैंड नामक जगह है। वहाँ दो होटल हैं। लिकाट होटल भी है।"

साठ मील के उस इलाके में केट-क्रीक बैंड ही पहला शहर था, जो अपनी ही तरह का एक था। वहाँ गोल पत्थरों से बनी सड़क थी जिस के दोनों ओर घने बसे लकड़ियों के मकान थे। पूरी सड़क पर अँधेरा था। अभी कार का पंप मातमी आवाज निकाल ही रहा था कि वह एक जगह जलती बत्ती के करीब पहुँचा, वहाँ लिकाट होटल का नाम लिखा था।

उस ने रोशनी के करीब ही अपनी कार रोकी। वहाँ एक क्लर्क ने आगे बढ़ कर पूरी विनम्रता से उस से पूछा "कमरा चाहिए?"

"हाँ, सस्ता-सा..."

"पाँच डॉलर वाला ठीक रहेगा?"

"कोई और सस्ता!"

थोड़ी-सी नाराजी से क्लर्क बोला, "हाँ, एक कमरा है, तीन डॉलर वाला।"

"यही ठीक है," मींस ने कहा। उस के बोलते ही तेज लाल बत्तियों वाला एक बल्व हॉल की तरफ चमका, जहाँ दस-बारह काली कुरसियाँ बेतरतीब पड़ी थीं। लाल बल्व के पास वाली कुरसी पर एक आदमी पालथी मारे बैठा था। उस के बायें हाथ में एक बटी हुई रस्सी झूल रही थी जिस का सिरा फर्श के कालीन के दूसरे सिरे तक फैला था। उस का चेहरा गोल था। आँखें काली और कान—जैसे चेहरे की हड्डियों से जुड़े हों।

वह बल्व की चमक देख कर थोड़ा पसरा और जब आश्वस्त हुआ तो उस ने बटी हुई रस्सी खींची। पंजे झटकता और चीखता एक छोटा-सा चूहा कालीन के नीचे से ऊपर सतह पर आ खिंचा। उस आदमी ने रूखे ढंग से मींस से कहा, "कहिये महाशय, कैसे हैं?" और कहता गया, "मैं देख रहा हूँ आप इस चूहे की तरफ देख रहे हैं। कुछ ही देर पहले मैं और रेनडॉल्फ सीढ़ियों के नीचे नल पर हाथ धो रहे थे। उस से आप को मिला कर मुझे बहुत खुशी होती। वह अभी थोड़ी देर पहले चला गया। किसी तरह हम ने मिल कर इस चूहे को ला घेरा और बाँध दिया।"

क्लर्क अनिच्छा से बोला, "बर्ट, इसे मार क्यों नहीं डालते!"

"मुझे यह काम पसंद नहीं," मींस को खड़ा देख बर्ट फिर बोला, "आइये महाशय, इस चूहे को ध्यान से देखिये।"

मींस आगे बढ़ा। लाल बत्ती की चमक से चूहा डर कर काँप रहा था।

"जरा सावधान! ये चूहे आदमी की टाँगों की तरफ दौड़ते हैं," बर्ट ने कहा।

"चूहा तो आज ही यहाँ आया था। महीनों से कोई चूहा नहीं था।"

"ठीक है बिली," बर्ट ने कहा। "हफ्ते में एक बार तो जगह पवित्र करनी ही चाहिए।"

"वाह वाह, अडोरा के इस इलाके में यही साफ-सुथरा होटल है," बर्ट ने चूहा मींस की तरफ किया, "अब दोस्त,

ठीक से देखो इसे। इस का सिर देखो और बताओ यह कैसा लगता है!"

मींस ने कोई उत्तर नहीं दिया।

"यह तो खरगोश-जैसा दिखायी देता है। तुम्हें कैसा लगता है?"

बर्ट फुरती से नीचे उतरा। उस ने चूहे का सिर जा दबोचा और उस के कान इस ढंग से पकड़े कि चूहे के कान और आँखें फैल कर लाल हो गये, जैसे खरगोश के सफेद बाल और लाल आँखें हों।

"यह खरगोश नहीं!" अपनी इच्छा के विपरीत मींस ने सहमति में सिर हिला दिया था। दूसरे को यों ही मूर्ख बनाने की अपनी विजय की खुशी में बर्ट चिल्लाया, "नहीं, यह तो अमरीकी पोसुम की तरह दिखायी देता है," उस ने चूहे के कान फैलाये। वह ठीक पोसुम की तरह दिखायी पड़ रहा था, "बुरा न मानना दोस्त !" बर्ट ने फिर चूहे को ढील दी, वह भागा और आखिर में डर के मारे ठिठक गया।

क्लर्क को सूझ नहीं रहा था कि क्या कहे। अपनी परेशानी में उस ने पेंसिल नीचे गिरा दी और उसे उठाने के लिए झुका नहीं। मींस की ओर मुड़ कर वह चीख उठा, "आइये, मैं आप का कमरा दिखा दूँ आप को।"

बर्ट ने उस का खौफ देखा और धीमे बोलने का इशारा किया, "तुम्हें याद नहीं कि २०३ की चाबियाँ खो चुके हो!"

बिली अचानक मुड़ा और उस ने नामपट्ट पर लटकती चाबियाँ खड़खड़ायीं और बोला, "हाँ तो, मैं खो चुका।"

"तो फिर कोई भी कमरा पाँच डालर से कम नहीं है," बर्ट ने तुरंत बिली के कहने से पहले कह डाला।

"रखो अपने कमरे," मींस ने अपना झोला उठाते हुए कहा।

बर्ट नम्रता से बोला, "मैं आप की जगह होता तो इतनी जल्दी न करता। इस बात पर ढंग से विचार कीजिये। यहाँ के बाकी होटलों में दोगुने से कम पर कमरा नहीं मिलेगा।

मींस ने कड़वाहट में क्लर्क से कहा, "अच्छा, कमरा दिखाओ।" क्लर्क अपनी गुफा से बाहर आया और मींस को किनारे की तरफ ले चला। हॉल के किनारे पर अँधेरे में ऊपरी मंजिल के लिए सीढ़ियाँ जाती थीं। उस भुतही रोशनी में वे आगे बढ़े। कई हॉल और कमरे पार करने के बाद वे एक कमरे में पहुँचे, जहाँ सामान के नाम पर सिर्फ एक बिस्तर था। उस पर चादर बिछी थी--जैसी कब्र पर बिछी रहती है।

क्लर्क इंतजार करने लगा।

"मैं यही लूँगा। हाँ, यह बर्ट कौन है?"

"क्यों? यह ओवरसियर है, रंडोल्फ कंपनी में। वही रंडोल्फ जो इस होटल के मालिक है। अपना झोला कमरे में ही रख दें। और नीचे चलें तो आप का नाम रजिस्टर में लिख लें।"

बिली ने दरवाजा बंद किया, "आप भाग्यशाली हैं कि आप को कमरा मिल

गया। आजकल खेतों में जुताई हो रही है इसलिए नियमित रहने वालों के अलावा साठ लोग दिन का काम पूरा कर सो रहे हैं," मींस ने दीवारों को वेध कर आ रही लंबी साँसों और आवाजों को सुना।

हॉल में बर्ट इंतजार में था। चूहा अपने छिपने की जगह वापस कालीन के नीचे चला गया था। रजिस्टर पर दस्तखत करते हुए मींस जरूरत से ज्यादा सचेत था कि बर्ट उसे देख रहा है। वह तब भी चौकन्ना था जब अपनी जेब से पैसे निकालते हुए उस ने बर्ट को अपनी ओर ताकते पाया। उस ने देखा बिली के हाथ में कमरे की चाबी थी।

"चाबी मुझे दे दो," मींस ने कहा।

"हमेशा आदमी को चाबी पहले दिया करो," बर्ट ने बिना मुड़े कहा, "आदमी उतना तो चाहता ही है, जितने के वह पैसे देता है। बताइये महाशय, क्या आप अपने परिवार में बिलकुल अकेले हैं या यों ही इस इलाके से गुजर रहे हैं ?"

"सिर्फ रात के लिए यहाँ हूँ।"

"यहाँ से बस जा रहे थे ! मेरा खयाल है कि आप किसी फायदे के काम में दिलचस्पी रखेंगे। ट्रैक्टर चलाया है ?"

"हाँ।"

"आप को मेरे साथ काम करना पड़ेगा, मेरे ही तरह आप को काम चाहिए न !" बर्ट ने रस्सी खींची तो चूहा काँपता हुआ कालीन पर दिखायी दिया। मींस ने रस्सी पकड़ कर उस के हाथ की ओर घूरा। कहा, "मैं काम चाहता हूँ।"

"बहुत अच्छा। अगर ट्रैक्टर से जुताई करो, स्पीड ठीक रखो और जोत ज्यादा चौड़ी न हो तो अच्छा रहता है।" मींस ने सहमति प्रकट की।

"हमें तुम्हारी जरूरत है। कुछ दिनों के लिए हमें बहुत से आदमी चाहिए।"

"लेकिन बर्ट," विली ने टोका।

"हाँऽ, क्या ?"

"ट्रैक्सलर ने तो कहा था कि वह कल सुबह दस आदमी ले कर आयेगा।"

"हमारा यह दोस्त कहता है कि यह ट्रैक्टर चला सकता है। अगर यह चला सकता है तो इसे एक कार्ड मिल जायेगा। यह काम करे," बर्ट ने चूहे को खींचा।

"या खुदा ! अरे, मारो इस चूहे को।"

"बिली, तुम्हें क्या हो रहा है ! तुम्हारा इस मामले में भावुक होने का क्या कारण है ? तुम तो जानते ही हो कि जब रंडोल्फ आयेगा मैं इस चूहे को गोली मार दूँगा। उसी ने तो पकड़ने में सहायता की, अब वही ठीक आदमी है जिस के सामने मारूँगा। हर चीज ठीक वक्त पर—मेरा खयाल है तुम समझ गये होंगे !" बिली का चेहरा क्षुब्धता में सिकुड़ा। उस ने बुदबुदा कर विरोध जाहिर किया, "आगंतुक को कमरा चाहिए, वह सोना चाहता है।"

"मैं ने चूहा बाँधा है। वह भागेगा नहीं, तुम्हें आश्वस्त होना चाहिए," रस्सी

को मजबूती से पकड़े बर्ट बोला, "बहुत-सी चीजें मेरे पास से नहीं छूटतीं। यह याद रखना है।"

"कहते हो मुझे कार्ड मिलेगा!"

"हाँ, तुम कौन-सी पारी में काम करना पसंद करते हो—दिन या रात? हम रात में रोशनी करके हल चलाते हैं।"

"दोपहर के वक्त!"

"ऐसा ही मैं भी सोचता हूँ। तुम काम करते रहना जब तक हमें जरूरत होगी।"

"कितने दिन?" मींस ने कहा।

"बुध या वृहस्पतिवार तक।"

"मैं बुरा न मानूँगा, यदि मुझे कुछ पहले ही छोड़ दें।"

"वृहस्पतिवार तक हफ्ता होता है," बर्ट ने कहा।

"तुम्हें ट्रेक्सलेर के आदमी भी मिल जायेंगे," बिली ने याद दिलाया।

"मैं ने तुम्हें बताया न कि हमें आदमियों की सख्त जरूरत है," बर्ट ने चूहे वाली रस्सी झुलायी, "हम अपने दोस्त को अगले हफ्ते बृहस्पतिवार तक यहाँ चाहते हैं। केवल जोत का काम तो हमारे पास नहीं बिली! हमारे पास और बहुत काम हैं जो बृहस्पतिवार तक हरेक को व्यस्त रख सकते हैं।"

जैसे ही उस ने कहा—'पूरे हफ्ते,' तभी बाहर से कोई चिल्लाया "आग!"

हॉल का बाहरी दरवाजा जोरों-से खुला और एक आदमी डेस्क की तरफ बढ़ा। वह चिल्लाया, "बिली... आग क्रीक पार करने वाली है। उस ने पाँच खेत तो ही जला दिये हैं। हमें सब को ले जाना है।"

"पर आग ठीक शहर की ओर आ रही है।"

"घास पर लगने वाली इस आग को मैं अच्छी तरह जानता हूँ। शहर को कोई खतरा नहीं। शहर के बाहर ताजे जुते खेतों के इलाके हैं—पाँच मील चौड़े। कुछ जगहों पर देखना जरूरी है, पर ज्यादातर आग खेतों तक आते-आते बुझ जायेगी।"

"लेकिन बर्ट..." होर्टन अभी भी हाँफ रहा था, "आग खेत जला रही है और बिली, तुम्हारे पास कितने लोग हैं इस वक्त?"

बर्ट ने बिली को रोका, "बिली, तुम उन लोगों को याद करो जो सुबह उठ कर खेत जोतने वाले हैं। फिर होर्टन की तरफ मुड़ कर बोला, "तुम सोच सकते हो ये लोग कितने थके हैं! ये ऐसे सोये हैं कि इन्होंने हमारी बातें भी न सुनी होंगी।"

"लेकिन बर्ट!"

"नहीं, उन के बाहर जाने से कोई फायदा नहीं होगा।"

होर्टन जोरों से चिल्लाया, "लेकिन बर्ट, किसानों के घर जल रहे हैं!"

"हाँ, मैं तुम्हें पहली बार कहते सुन रहा हूँ, मैं भी जानता हूँ। पर तुम्हारा इस मामले में विचार गलत है। तुम्हें मालूम होना चाहिए कि उन गरीब किसानों और नीग्रो लोगों के लिए यह आग वरदान है जो क्रीक के पार छोटे-छोटे

जमीन के टुकड़ों पर मुश्किल से जीवन-यापन कर पाते हैं। वे तो आधे से भी ज्यादा उस जमीन के मालिक नहीं हैं। जलने दो ताकि उन्हें काम मिले, सही अर्थ में पैसा मिले। जिस किसी ने भी आग लगायी है, उस ने अच्छा किया।"

होर्टन कड़वाहट से बोला, "मैं कहीं और से आदमियों का इंतजाम करूँगा।"

"हाँ, चौकीदारों से कहना कि उन इलाकों पर नजर रखें जहाँ जुताई नहीं हुई है," बर्ट ने होर्टन के जाते-जाते कहा।

मींस ने उस का अनुकरण किया, पर बर्ट ने उसे रोका, "अरे आप कहाँ जा रहे हैं?" उस की आवाज फिर रूखी हो गयी, "मेरा अनुमान है कि आप समझे नहीं। उस आग में आप के जाने की जरूरत नहीं। आप को यहीं ठहरना है। आराम कीजिये, जिस से काम कर सकें।" उस ने चूहे वाली रस्सी झटके से खींची और चूहे को मींस के आगे ला पटका।

मींस दरवाजे की ओर बढ़ा।

"मैं नहीं समझता कि आप यह होटल छोड़ना चाहते हैं," वह चीखा, "मैं नहीं सोचता कि अभी जाना बेहतर होगा। हमें बहुत आदमी चाहिए जुताई के लिए।" बोलते-बोलते उस ने रस्सी बायें हाथ में ली और दायाँ हाथ अपनी कोट की जेब में डाला। पिस्तौल मींस की तरफ तन गयी। बर्ट की आँखें थीं—स्थिर चुप। मींस ने फिर लोगों की बाहर दौड़ने की आवाज सुनी।

उन की पदचापों की आवाज में वह आगे की ओर बढ़ा। पिस्तौल का मुँह अपनी ओर जान कर भी वह धीरे-धीरे होटल के बाहर की अपनी छाया का अनुकरण करता हुआ शहर की ओर बढ़ा। तभी उस ने पिस्तौल चलने की आवाज सुनी। आवाज पूरी बिल्डिंग में गूँजी।

तो वह गोली चूहे के लिए थी!

बस, तभी वह जैसे मुक्त हुआ और जल्दी-जल्दी चलने लगा।

—अनु. गंगाप्रसाद विमल

कलकत्ते के विश्रुत विद्वान विश्वनाथजी एक बार बीमार पड़ गये। वैद्य ने कहा, "आप को पानी का प्रयोग बंद करना होगा, तभी रोग काबू में आ सकेगा।" पंडितजी को बड़ी प्यास लगी। अब क्या करें! कुछ सोच कर उन्होंने स्वजनों से कहा, "शास्त्र कहते हैं—सब प्राणियों में एक ही आत्मा है, अतः ब्राह्मणों को बुला कर उन को मधुर पेय पिलाओ।" वैसा ही किया गया। ब्राह्मण तृप्ति के साथ मधुर पेय पी रहे थे और उन्हें मात्र निहार कर पंडितजी की पानी पीने की इच्छा शांत हो गयी।

पश्चाताप
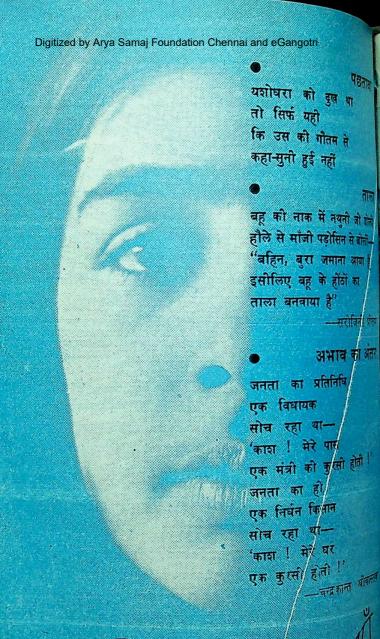
यशोधरा को दुख था
तो सिर्फ यही
कि उस की गौतम से
कहा-सुनी हुई नहीं

ताला

बहू की नाक में नथुनी जो डोली
हौले से माँजी पड़ोसिन से बोलीं—
"बहिन, बुरा जमाना आया है
इसीलिए बहू के होंठों का
ताला बनवाया है"

—सरोजिनी प्रीतम

अभाव का अंतर

जनता का प्रतिनिधि
एक विधायक
सोच रहा था—
'काश ! मेरे पास
एक मंत्री की कुरसी होती !'
जनता का ही
एक निर्धन किसान
सोच रहा था—
'काश ! मेरे घर
एक कुरसी होती !'

—चन्द्रकान्त श्रीवास्तव

क्षणिकाएँ क्षणिकाएँ

क्षणिकाएँ क्षणिकाएँ क्षणिकाएँ

प्रतिबिंब

ईश्वर दर्पण में
अपना प्रतिबिंब देख रहा था
कि अचानक
दर्पण टूट गया
काँच के असंख्य टुकड़े
जहाँ भी बिखरे
मानव हो गये

—वन्दना पाराशर

प्रगतिशील

लीक से हटने के
चक्कर में
वे गड्ढे में गिर गये
और गिरते-गिरते
हमें रूढ़िवादी कह गये

—वीरेन्द्रकुमार जैन

जिंदगी

पानी की एक बूँद
धूप में धरी है
भाप बन कर
शनैः-शनैः उड़ रही है

—राजेन्द्रसिंह राजू

पाप-पुण्य

क्या तुम पाप करते हो ?
क्या मैं पुण्य करता हूँ ?
नहीं, हम वही करते हैं
जो हमें करना पड़ता है

—धर्मवीर काठपालिया

डोगरी कहानी

● नरेन्द्र खजूरिया

आखिरी
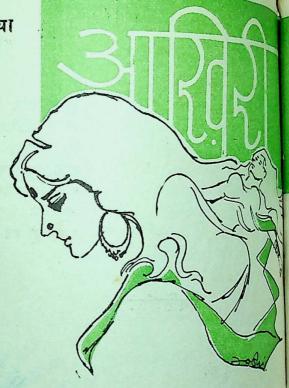
वही साढ़े आठ रुपये की हरी बूटियों वाली धोती जगह-जगह से जली! जली हुई जगह से झाँकता अधजला मांस। आँखें, पलकें और सिर के बाल जले हुए और पास ही मिट्टी के तेल का डब्बा!

यह विचार उस के शरीर पर गीले कपड़े की तरह चिपका था। अपने आप वह इस से बाहर निकलने का प्रयत्न करता। उसे लगता अंदर ही अंदर उस की आँतों को कोई काट रहा है।

ठसाठस भरी हुई बस बिना वहाँ रुके आगे बढ़ गयी। बस-स्टाप पर बचे-खुचे लोग भी बड़बड़ाते हुए बिखर गये। जाते हुए जैसे वे अपनी सारी खिन्नता, बेबसी और रोष केवल उसी के लिए छोड़ गये हों... और वह इन सभी के बोझ से दबा हुआ खड़ा रहा।

एक खाली टैक्सी उस के सामने हॉर्न बजाती हुई गुजर गयी। उस ने मुँह फेर लिया। लेकिन मन जैसे 'खटाक' से दरवाजा खोल कर उस में जा बैठा। चार मील का रास्ता जैसे सिकुड़ गया। बड़े
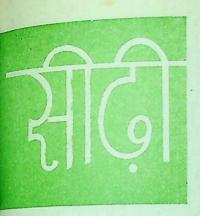
आराम से वह पिछली सीट पर अधलेटा-सा पड़ गया।

नयी चमचमाती टैक्सी । आराम-देह गद्दियाँ । उसे लगा जैसे वह अपनी ही कार में बैठा है । यह विचार आते ही उसे अपनी माँ की याद आयी। मुक्के की तरह कसा-तना हुआ माँ का मुँह ! वे कहती थीं---श्रवण ने अपने माँ-बाप को बँगी में डाल कर सभी तीर्थों की यात्रा करायी थी और मेरा पुत्र मुझे अपनी कार में बिठा कर चार-धाम की यात्रा करायेगा। उस की माँ की हसरत ही नहीं, जिद भी थी कि वह पढ़-लिख कर अवश्य ही एक दिन बड़ा आदमी बनेगा। 'जिस के पास मोटर-कार, बँगला...' माँ के मुँह से ये शब्द सुन कर तब उसे डी. एफ. ओ. साहब के ग्रामोफोन के रिकार्ड के बोल याद आ जाते---'एक बँगला बने न्यारा ऽ !' यह न्यारा बँगला उसे यों लगता जैसे उड़ने वाला घोड़ा हो। पता नहीं कब उस की माँ ने यह सपना देखा था ! उस ने जब से होश संभाला, यही समझा था कि वह एक बछेड़ा है, जिस की माँ एक नये चरागाह में घूम रही है, जहाँ हरी घास...स्लेटी कार...

रात को पढ़ते हुए उस की आँखें मुँदने लगतीं । पास ही माँ नाड़े बुन रही होतीं । सहसा नाड़े वाली एक तीली तड़क से उस के सिर पर आ पड़ती ! और उस की आँखे खुल जातीं। वह फिर जोर-जोर से पढ़ने लगता---दिल्ली हिंदुस्तान की राजधानी है।

माँ पूछतीं, "बेटा, दिल्ली से मथुरा कितनी दूर है ?" उस की आँखें डबने लगतीं। तभी माँ का हाथ रुक जाता। एक तीली अपनी ओर बढ़ते हुए देख कर वह झटपट पूरी आँखें खोल देता। कहता, "माँ, सो थोड़े ही रहा हूँ, सोच रहा हूँ कि दिल्ली से मथुरा कितनी दूर है !"

सुबह तड़के माँ उसे जगा देतीं। उस की आँखें जोर लगाने पर भी नहीं खुलतीं। माँ उस की चोटी पकड़ कर घसीटतीं। वह पूरा जोर लगाता, पर आँखों के बदले उस का मुँह खुल जाता । माँ फिर ठंडे पानी के छींटे उस के मुँह पर मारतीं । नींद उड़न-छू हो जाती और वह अंदर आ कर पढ़ने लग जाता। पानी के छींटों से कमीज का सारा गरेबान भीग जाता । उसे अपने सीने में ठंड महसूस होती । सोचता, जिस दिन माँ मरेंगी, मैं जी भर कर सोऊँगा। फिर वह घूम कर माँ की ओर देखता— वही कसा-तना हुआ चेहरा !

कहतीं, "मेरे मुँह पर क्या लिखा है?"

"कुछ नहीं।"

"फिर, किताब पढ़।"

"सारी आती है।"

"मुँह-जबानी याद कर।"

"याद कर लिया है।"

और फिर वह किताब में से कोई कविता सुनाने लगता।

लहरिया नाड़े के इंद्रधनुषी धागे माँ के मुँह पर नाच जाते। वे दाँत दबा कर कहतीं, "शाबाश!"

"अब सो जाऊँ?"

"नहीं, सवाल कर।" माँ फिर 'माँ' बन जातीं।

"सभी सवाल आते हैं।"

"तो पहाड़े याद कर।"

"वह भी आते है," वह नींद की खुमारी में कहता।

"सुना!" माँ बिलकुल भूपचंद मास्टर की तरह कहतीं।

उस की माँ कई बार स्कूल जा कर उस की पढ़ाई के बारे में पूछताछ करतीं। मास्टर भूपचंद कहता, "शाहनी, जब तक मेरे हाथ सलामत हैं, तुम चिंता न करो।"

बाद में उस के सहपाठी नाक से आवाज निकाल कर उस की माँ की नकल उतारते। घर आ कर रुआँसा हो कर वह माँ से कहता, "तुम क्यों रोज स्कूल आती हो?"

माँ के चेहरे की रेखाएँ एक बार फिर तन जातीं। वे तिलमिला कर कहतीं, "तेरा मतलब है कि तू मक्खन हो बना रहे! तू बिगड़ जाये और मैं पता भी न करूँ!"

आधा सफर तय हो गया। अभी दो मील और चलना था। जैसे-जैसे घर निकट आ रहा था, उस की आँखों के सामने वह दृश्य फिर घूमने लगा था। साढ़े आठ रुपये की हरी बूटियों वाली धोती, जगह-जगह से जली हुई। जली हुई जगह में से झाँकता अधजला मांस। आँखें, पलकें और सिर के बाल जले हुए! और पास ही मिट्टी के तेल का डब्बा! यह सोचते ही जैसे उस की टाँगें लड़खड़ाने लगती हैं। उसे लगता उस के धड़ और टाँगों का आपस में कोई ताल-मेल नहीं है। अभी आधी मंजिल और थी। उस के बाद अँधेरी सीढ़ियाँ! एक सीढ़ी चढ़ने पर छोटी-सी छत। एक बालिश्त भर रास्ता। पंजों के बल वह उसे लाँघता। आगे फिर वैसी ही सीढ़ियाँ। फिर एक छतनुमा आँगन। बच्चों की लड़ाई। सयाने लोगों का कोलाहल। हँसी-मजाक। तवे पर जलते करेले की गंध! खाट पर पड़े मैले-कुचैले बिस्तरों की बदबू। सड़ी-गली सब्जी की दुर्गंध। उस के बाद एक कमरा और एक छोटी-सी रसोई। रसोई में एक पचीस वोल्ट का बल्व जिस के नीचे दो जलती हुई आँखें!

वह अंदर आ कर बिना बत्ती जलाये लेट जाता। अंदर उस समय भी घुप

अँधेरा और उमस थी, पर खिड़की खोलने की उस की हिम्मत न हुई।

उस की पत्नी आ कर खिड़की खोलती। खिड़की से हवा नहीं, केवल दो नजरें अंदर आ जातीं। सामने मकान में खाट पर एक बीमार स्त्री लेटी हुई होती। खिड़की खुलते ही उस की बीमार और व्याकुल नजर झट से यों अंदर आ जाती जैसे वह बहुत देर से इस खिड़की के किवाड़ों से खड़ी प्रतीक्षा कर रही हो।

कपड़े उतार कर बाहर आ जाता। पसीने से भीगे अपने शरीर से उसे बू-सी आने लगती। वदन पर डालने के लिए दो लोटे पानी माँगता।

"पानी तो आज मिला ही नहीं," उस की पत्नी थके-हारे स्वर में रसोई में से कहती। सुन कर वह लाल-पीला हो उठता। दिन भर की थकान, खिन्नता, और क्षुब्धता वह कसैले शब्दों से अपनी पत्नी पर उतारने लगता।

रसोई में से आने वाले स्टोव की आवाज एकदम तेज हो जाती। वह और उद्विग्न हो उठता। उसे पता था ऐसे समय उस की पत्नी जल्दी-जल्दी पंप चला कर स्टोव की भरभराहट में अपनी सिसकियों को डुबो लेती है।

"बस कर! बस कर! स्टोब फट जायेगा!" वह बाहर चीखता-चिल्लाता रसोई की दलहीज पर आ खड़ा होता।

गरदन ऊपर उठा कर पत्नी कहती, "नहीं, यह नहीं फटेगा। टंकी की चादर भी मेरी खाल की तरह बड़ी मजबूत है, कभी नहीं फटेगी।"

"याद रखना, जिस दिन यह फटेगी, तेरी बोटी भी नहीं मिलेगी।"

बिना नहाये ही वह बाहर खाट पर लेट जाता। पसीने की दुर्गंध यद्यपि खत्म होने लगी थी, तथापि उस का ध्यान बार-बार पानी के दो लोटों की ओर चला जाता। तीसरी मंजिल तक पानी नहीं पहुँचता। दूसरी मंजिल वाले भी निचले नल पर जा कर पानी भरते हैं। इतने घड़े वहाँ भरे नहीं जाते जितने टूट जाते हैं!

पता नहीं कहाँ से हवा का झोंका आता, उस का गुस्सा शांत हो जाता। वह सोचता——मैं भी कितना चिड़चिड़ा होता जा रहा हूँ। जैसे यह बेचारी इनसान ही न हो। उसे अपने दो रूप जान पड़ते। एक—वह सोचता कि ऐसी पत्नी पा कर मुझे सब कुछ मिल गया है। यदि लाखों में से मुझे किसी एक को चुनना होता तो मैं इसी को चुनता। और दूसरा रूप था—पसीने से निचुड़ता थका-हारा, क्रोधी!

पैरों को घसीटता हुआ वह आया करता था। क्षण-प्रति-क्षण उसे यों अहसास हो रहा था कि आज जरूर ही उस ने कुछ-न-कुछ उपद्रव खड़ा कर दिया होगा! वही साढ़े आठ रुपये की हरी बूटियों वाली धोती...जगह-जगह से जली हुई...

आज सुबह वह दफ्तर आने की तैयारी कर रहा था कि रसोई में कुछ

गिरने की आवाज सुनायी दी। जा कर देखा, गरम-गरम घी वाला पतीला चूल्हे के पास पड़ा था। खालिस एक किलो देशी घी मोरी के रास्ते तीसरी मंजिल से नीचे की ओर बह रहा था। एक ओर डरी-सहमी पत्नी खड़ी थी।

वह भड़क उठा, "कितनी बार कहा कि गरम बरतन को जतन से उठाया कर! पर तू ने जब से सरकस देखा है, करतब ही करती रहती है।" पत्नी के भाग्य खोटे थे, वह बोल पड़ी, "जो नुकसान होना था हो गया। अब क्या हो सकता है!" सुन कर उसे जैसे सिर से पैरों तक आग लग गयी, "हाँ! हाँ! तू फूँके जा। तुझे कौन-सा कमा कर लाना है।"

पत्नी बोली "आप को कमाने वाली से शादी करनी थी न!"

"उस से तो मैं शादी न करता, पर तेरी नाव भी किसी खोटे भाग्य वाले को पार करनी थी! न अक्ल, न शक्ल!"

अक्ल वाला कटाक्ष तो वह कुछ सहन भी कर लेती, पर शक्ल तो सचमुच ही उस की बुरी नहीं थी। यह कटाक्ष उसे गोली की तरह लगा। टप-टप आँसू बहाते हुए वह बोली, "यदि मेरी शक्ल आप को बुरी लगती है तो मुझे मार ही क्यों नहीं देते, ताकि आप किसी सुंदर शक्ल वाली को ब्याह सकें!"

"मौका आयेगा तो ब्याह भी लेंगे।"

"यह तो मेरी मौत के बाद ही आयेगा!"

"पर, तू मुझे मार कर ही मरेगी!"

पत्नी का गला भर आया। बड़ी कठिनाई से बोली, "मैं आप के रास्ते से स्वयं ही हट जाऊँगी। तेल की दो बोतलें उड़ेल कर यहीं भस्म हो जाऊँगी। दफ्तर से आ कर देख लेना।"

जैसे-जैसे घर निकट आ रहा था, उसे अपना शरीर निढाल प्रतीत हो रहा था। अखबारों में भी इस प्रकार की आत्महत्याओं के समाचार छपते रहे थे।

उस की मुट्ठियाँ अपने आप भिंचने लगीं——मैं अपने अंदर के साम्राज्यवाद को सदा के लिए मिटा दूंगा। पर इस के लिए मुझे एक मौका तो मिलना ही चाहिए।

और उस के सामने फिर वही साढ़े आठ रुपये की हरी बूटियों वाली धोती... जगह-जगह से जली हुई...

दो आँगन पार करके, दो सीढ़ियां चढ़ते हुए आज जैसे युग बीत गया। सीने में से बेचैनी गले तक आ पहुंची थी।

आखिरी सीढ़ी चढ़ कर वह अपने आँगन में आ खड़ा हुआ। सामने रसोई में वही साढ़े आठ रुपये की हरी बूटियों वाली धोती। पर आज धोयी हुई ही नहीं, प्रेस भी की हुई थी। पत्नी ने हलका-सा मेकअप भी किया हुआ था, जिस की खुशबू उसे इस प्रकार लग रही थी जैसे हरी बूटियों को मानो फूल लग गये हों और उन की सुगंध तीसरी मंजिल के इन दो कमरों में और छोटे-से आंगन में भर गयी हो।

—अनु. सुरजीत

● सत्य सुमन

नज़र चूकी माल यारों का
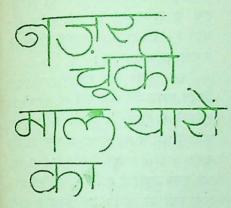
ड्राइवर ने अपने दस टन वजनी ट्रक की खिड़की से फिर पीछे की ओर झाँका। काली कार अब भी उस के पीछे लगी हुई थी। अब संदेह की कोई गुंजाइश नहीं रह गयी थी। उस ने वायरलेस सेट का चोंगा उठाया।

"हेलो, कंट्रोल-रूम ! मैं चार्ली बोल रहा हूँ। मैं अपने रास्ते पर पाँच मील आगे आ गया हूँ। एक काली कार मेरे पीछे लगी हुई है। उस का नंबर पढ़ पाना मुश्किल है। ओवर !"

"सड़क से हटो नहीं और कोई इशारा भी करे तो रुको नहीं। हम पुलिस को खबर कर रहे हैं," जवाब आया।

इस संक्षिप्त बातचीत ने दिनदहाड़े एक बड़ी डकैती होने से रोक दी। तीस हजार पौंड की सिगरेट ले कर एक प्रसिद्ध व्यापारिक फर्म का यह ट्रक नाटिंघम से लंदन जा रहा था। इंगलैंड के राष्ट्रीय पथों पर दिनदहाड़े डकैती करने वाले एक युवा गिरोह की इस पर आरंभ से ही आँख लगी हुई थी।

बड़े मार्गों पर जा रही माल से लदी गाड़ियों के ड्राइवरों और व्यापारिक फर्मों के मुख्यालयों के बीच इस प्रकार के संक्षिप्त संदेशों का आदान-प्रदान अब रोजमर्रा की बात हो गयी है। इस प्रकार हर वर्ष करोड़ों पौंड का माल ब्रिटेन के इन नये युवा डकैतों द्वारा लूट लिये जाने से बच जाता है।

कुछ फर्मों ने, जो अपना माल प्रतिदिन ब्रिटेन के विभिन्न भागों में भेजती हैं, एक नयी व्यवस्था भी की है। ड्राइवरों को आदेश होते हैं कि वे सारे मार्ग पर बीच-बीच में निर्धारित समयानुसार मुख्यालय से संपर्क करें। यदि समय पर संदेश नहीं आता है तो पुलिस को फौरन इत्तला दे दी जाती है और उसे वह स्थान भी बता दिया जाता है जहाँ से अंतिम बार ड्राइवर का संदेश आया था।

करोड़ों का माल रास्ते में गायब कर देना ब्रिटेन के गिरोहों का नया धंधा बन चुका है। आमतौर पर व्यापारिक फर्मों

के पुराने ड्राइवर, जिन्हें चोरी या बहुत अधिक लापरवाही से गाड़ी चलाने के आरोप में नौकरी से निकाला जा चुका है, इस प्रकार के गिरोहों में शामिल होते हैं। योजना किसी शराबघर अथवा रेस्त्राँ में बैठ कर बनायी जाती है। यहाँ तक कि लूट के माल के संभावित खरीदार से भी बातचीत हो जाती है और कुछ रकम पेशगी ले ली जाती है।

गिरोह के दो सदस्य बारी-बारी से मालगोदाम पर नजर रखते हैं और ज्यों ही ट्रक में लद कर माल रवाना होता है, अन्य साथियों को सूचना दे दी जाती है। इस के बाद दल के कुछ सदस्य एक कार में ट्रक के पीछे लग जाते हैं। जैसे ही ट्रक किसी चौराहे पर लालबत्ती के पास रुकता है गिरोह के आदमी कूद-कर ड्राइवर की सीट पर चढ़ जाते हैं और उसे पिस्तौल या चाकू दिखा कर ठंडा कर दिया जाता है। अकसर ड्राइवर को धक्का दे कर बाहर गिरा दिया जाता है और गिरोह ट्रक भगा ले जाता है। दूसरे-तीसरे दिन खाली ट्रक किसी निर्जन स्थान पर खड़ा मिलता है। कभी-कभी गिरोह एक ट्रक में, जिस में माल उठाने वाली हलकी क्रेन लगी होती है, माल से लदे ट्रक का पीछा करता है। ट्रक के ड्राइवर को उसी की सीट पर बाँध देते हैं और माल उठा लिया जाता है।

कई बार तो ऐसे गिरोह का कोई सदस्य ट्रैफिक-पुलिस की वर्दी में ट्रक रुकवा लेता है। धूर्त एक और तरीका भी अपनाते हैं। अपनी कार ट्रक से आगे निकाल कर वे चिल्ला कर ड्राइवर को बताते हैं कि उस के माल की पेटी या ट्रक के पीछे लगी हुई नंबर-प्लेट गिर गयी है। जैसे ही ड्राइवर गाड़ी रोकता है वे उसे धर दबोचते हैं।

इन चोरों का मालगोदाम किसी निर्जन स्थान पर, जंगल में या पहाड़ों की तलहटी में होता है। दूर से देखने में वह कोई जीर्णशीर्ण मकान या बड़ा-सा झोंपड़ा नजर आता है। यहाँ माल कुछ दिन दबा कर रखा जाता है ताकि पुलिस की पूछ-ताछ ठंडी हो जाये। इस के बाद माल-गोदाम में ही सामान की दो-तिहाई या आधे दामों पर बिक्री हो जाती है।

लेकिन वायरलेस से युक्त ट्रकों और पुलिस तथा ड्राइवरों की मिलीजुली सत-र्कता ने अब इन गिरोहों के हौसले पस्त कर दिये हैं। इतना ही नहीं, बड़ी व्यापा-रिक फर्मों ने मिल कर एक गाड़ी-निगरानी-सेवा भी आरंभ कर दी है। जैसे ही किसी ड्राइवर से अनिष्ट की सूचना मिलती है निगरानी-सेवा सभी फर्मों को तत्काल सूचना दे दी जाती है। ये फर्में अपने ड्राइवरों को तुरंत अपने-अपने क्षेत्र में खोजबीन के लिए भेज देती हैं और शीघ्र ही ट्रक को ढूँढ़ लिया जाता है। कई बार इन ड्राइवरों के समय पर पहुँच जाने के कारण गिरोह के सदस्य पकड़ लिये गये हैं।

समाचार भारती, राउज एवेन्यू, नयी दिल्ली

● केन्नेथ ऍंडरसन

आप को जो घटना मैं बता रहा हूँ वह मेरे साथ शीतलदुर्ग नामक नगर के पास एक जंगल में घटी थी। मैसूर राज्य के शिमोगा जिले के पूर्व में स्थित यह जंगल किसी जमाने में चीतों के लिए प्रसिद्ध था। शीतलदुर्ग से कुछ मील दूर स्थित सामपिगे नामक एक गाँव है। यह गाँव घने जंगल से घिरा हुआ है। इस गाँव से जंगल में ही बसे एक और गाँव बुघल्ली के लिए एक पगडंडी जाती है। सामपिगे से चार मील दूर पर घने जंगल में ही एक मंदिर के खँडहर हैं। मंदिर में एक गहरा कुआँ है। कहते हैं कि इस मंदिर और कुएँ में प्रेतात्माओं का निवास है। इसीलिए दिन में भी मंदिर के एक फर्लांग पास भी कोई नहीं फटकता।

कुछ समय पहले सामपिगे गाँव से एक देहाती गायब हो गया। उस के बाद बुघल्ली गाँव से एक ग्रामीण गायब हो गया। कोई नहीं जानता था कि उन दोनों का क्या हुआ। इन्हीं दिनों एक बहुत बड़े चीते ने इसी क्षेत्र में या स्वयं मंदिर में अपनी माँद बना ली। ग्रामीणों का विश्वास था कि इसी चीते ने उन के दो साथियों को खाया था। उन्होंने अधिकारियों से नरभक्षी से मुक्ति दिलाने के लिए अनुरोध किया।

सामपिगे मेरा प्रिय शिकार-स्थल था। वहाँ रहने वाले मेरे कई ग्रामीण मित्रों ने मुझे पत्र लिख कर सहायता के लिए आने का अनुरोध किया। एक पखवाड़े बाद मैं गाँव पहुँचा। दूसरे दिन लंच के तुरंत बाद पुराने मंदिर जाने और छिपने लायक कोई अच्छी जगह ढूंढ़ने का फैसला किया। मुझे उम्मीद थी कि इस तरह नरभक्षी चीता दिखायी दे जायेगा। मेरा मन कहता था कि असली अपराधी यह चीता नहीं है।

फिर मैं पुराने मंदिर की ओर चला। एक घंटे में मैं अपनी मंजिल पर पहुँच गया। मंदिर ग्रेनाइट, लोहा और उजाड़ पत्थरों का बना एक छोटा-सा भवन था। उस के चारों ओर परकोटा था। कभी यह परकोटा काफी ऊँचा रहा होगा। परकोटे के भीतर

प्रेतात्मा एक विदूषक की
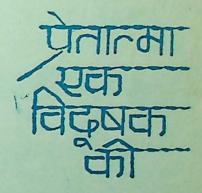
मंदिर के सामने एक काफी गहरा कुआँ था और उस में अब भी पानी था। कुएँ का घेरा पंद्रह फुट था। उस के ऊपर गज भर ऊँची जगत थी। मंदिर, अहाते और कुएँ के जगत के कई पत्थरों के जोड़ उखड़ चुके थे और अपनी मूल जगह से हट गये थे। जहाँ-जहाँ काई नहीं जमने पायी थी,

छोटे-छोटे जंगली पेड़-पौधे उग आये थे। सारा दृश्य उदासी से भरा हुआ था।

मंदिर के द्वार के ठीक सामने, मैं ने कुएँ की जगत के पीछे अपनी जगह सँभाली। उस समय सूरज पूरी तेजी से चमक रहा था। मुझे अपना सिर कुएँ की जगत के कुछ ऊपर दिखायी देता मालूम हुआ। इसलिए मैं ने यहाँ-वहाँ पड़े पत्थरों को

क्या प्रेतात्माएं भी बदला लेती हैं? यह आप को विश्वविख्यात शिकारी केन्नेथ ऍंडरसन की प्रस्तुत रोमांचक आपबीती पढ़ कर ही पता चलेगा। ऍंडरसन अँगरेज हैं और भारत-विभाजन से पूर्व से ही इस देश में रहे हुए हैं। दक्षिण भारत के जंगलों में किये गये शिकारों की उन की कथाएं विश्व-शिकार-साहित्य में अपना स्थान बना चुकी हैं।

उठा कर अपने सामने रख लिया। बीच में झाँकने के लिए केवल छह इंच की जगह छोड़ दी। यदि चीते के दिखते ही मैं उस के शिकार का निश्चय करता तो इस छेद से आसानी से गोली चला सकता था।

मुझ पता ही नहीं चला कि कब दिन गया और कब रात आ गयी!

इसी समय मैं ने पहली बार वह आवाज सुनी। तीन साफ, तीखी सीटियां- जो ठीक मेरे सामने से आती हुई लग रही थीं। पहली सीटी कुछ धीमी, दूसरी कुछ ऊँची और तीसरी दोनों से छोटी-तीखी, ऊँचे स्वरों में बजायी गयी थी।

मैं क्षण भर के लिए अचरज में पड़ गया। आखिर इस कुएँ में कौन छिपा है? मैं कुछ झल्ला भी उठा था। एक तो मैं दिन भर की तपती धूप में पसीना बहाता रहा, दूसरे ठीक इसी नाजुक क्षण में, जब कि मंदिर से चीते के आने का

समय था, कोई सीटियाँ बजा मुझे डरा रहा था।

दस-पंद्रह मिनट शांति से बीते होंगे कि मैं ने फिर से तीन जोरदार और साफ-साफ सीटियों की आवाज सुनी। पहली सीटी धीमी और लंबी, दूसरी जोरदार, छोटी और ऊँची तथा तीसरी जोरदार, छोटी और ऊँचे स्वर में थी। इस तीसरी सीटी के बाद फिर शांति छा गयी।

मैं उठ कर, कुएँ में झाँक कर देखना चाहता था कि मंदिर के द्वार में छाये अंधकार के बीच हुई हरकत ने मेरा ध्यान आकर्षित कर लिया। ऐसा लगा, जैसे भूरे रंग का एक धब्बा उस कालेपन को बेधते हुए गायब हो गया। अगले क्षण वह फिर दिखायी दिया। इस के बाद फिर गायब हो गया। कुछ क्षण बाद चाँदनी में खड़ा चीता स्पष्ट दिखायी दे रहा था।

यह साफ था कि उसे मेरी उपस्थिति का संदेह तक नहीं हुआ। उस ने मेरी ओर नजर तक नहीं डाली थी। जब मैं ने उसे पहली बार देखा, उस समय वह बिलकुल अपने बीच में देख रहा था। पर उसी क्षण उस ने रुक कर, गरदन झुका कर अपने अगले दायें पैर को चाटना शुरू कर दिया। मैं उस की प्रत्येक हलचल साफ-साफ देख रहा था और उस की खुरदरी जीभ द्वारा पैर चाटने के कारण उत्पन्न हुई आवाज को भी सुन रहा था। इसी समय तीसरी बार सीटियों की तीन आवाजें आयीं।

लो, अब तो काम हो गया, मैं ने सोचा। चीते ने जरूर इन आवाजों को सुन लिया होगा। अब स्वभाव के अनुसार वह खाँसेगा, गुर्रायेगा और मंदिर के भीतर अपनी माँद में घुस जायेगा या फिर घबरा कर कहीं और भाग जायेगा। पर ऐसा कुछ न हुआ। बिना परेशान हुए चीता अपना दायाँ पैर चाटता रहा। साफ था कि उस ने सीटियों की आवाजें नहीं सुनी थीं। इस के दो कारण हो सकते हैं। या तो चीता एकदम बहरा था या सीटियाँ उस की श्रवणशक्ति पर कोई प्रभाव नहीं पैदा कर पायी थीं।

चारों ओर बिखरी चाँदनी साफ और चमकदार थी। मैं कुएँ के जगत की ओर निगाह गड़ाये था। इस बात में कोई शक नहीं था कि मैं ने कुछ देखा जरूर था, पर उस का कोई वास्तविक रूप या आकार न था। लगता था, जैसे कुएँ के भीतर से काले धुएँ का एक बादल निकल रहा है। उस का घेरा, उस की ऊँचाई लगभग छह फुट थी।

इस क्षण एक अजीब तरह की निराशा ने मुझे घेर लिया। मैं ने सोचा, क्या यह बात कोई माने रखती है कि कुएँ से बाहर क्या निकला है? क्या तमाम मुसीबतों के साथ यह जिंदगी जीने लायक है? क्यों नहीं कुएँ में छलाँग लगा दी जाये और सारी बातें भुला दी जायें? मैं ने स्वयं को झकझोरा और सामने ताकने लगा। मैं ने देखा वह बादल क्षण भर के लिए कुएँ की जगत पर तैरता रहा, फिर गायब हो गया।

मैं इन विचारों में इस तरह खो गया था कि मुझे भान ही नहीं रहा कि कितना समय बीत गया है। मैं आसपास के वातावरण से बिलकुल बेखबर हो गया था। सहसा पीछे से एक भारी और फिर एक हलकी-सी गुर्राहट ने मुझे धरती पर ला पटका। मेरे पीछे चीता खड़ा था।

चीते का मन कब बदल जाये, यह खतरा तो था ही। इस खतरे से बचने के लिए मैं ने राइफल सँभाले-सँभाले कुएँ में रोशनी फेंकी। काफी गहरे में जमे पानी पर मेरी टार्च का प्रकाश प्रतिबिंबित हो उठा। मैं ने कुएँ के भीतर की इंच-इंच जगह देख डाली, पर वहाँ कोई नहीं छिपा था। इस के बाद मैं घूम कर उस स्थान से चल पड़ा। इस समय मेरे दिमाग में विचारों की आँधी-सी चल पड़ी थी। मुझे चीता कहीं भी नजर नहीं आ रहा था। मेरा मन तब भी परेशान था। मैं दूसरे दिन गाँव वापस आ गया। मैं ने समझाया कि चीता नरभक्षी नहीं है।

तभी मेरे एक मित्र ने पूछा—"आप किस स्थान पर छिपे थे?" यह सुनते ही कि 'मैं पुराने कुएँ की जगत के पीछे छिपा था,' मुझे अजीब ढंग से देखने लगा।

जब मैं ने उसे कुएँ से निकलने वाली उस धूमिल आकृति के बारे में बताया तो वह घबरा उठा। एक बात साफ थी। और लोगों ने सीटियों और पंखों की फड़-फड़ाहट की आवाजें तो सुनी थीं, पर

किसी ने कुछ देखा नहीं था। उस का भी कारण स्पष्ट था, कोई व्यक्ति कुछ देखने के लिए वहाँ ठहर ही नहीं पाया था।

पूरी घटना सुनने के बाद मेरे दोस्त ने मुझे एक कहानी सुनायी। उस ने कहा कि सौ-दो-सौ वर्ष पहले मंदिर काफी संपन्न और पूजा पाठ का केंद्र था। उस के आसपास के क्षेत्र पर एक राजा के सरदार का राज्य था। उसकी राजधानी काफी दूर थी, इसलिए इस सरदार ने अपनी स्वतंत्र सत्ता की घोषणा कर दी थी। इस सरदार के दरबार में एक व्यक्ति सलाहकार और दरबारी विदूषक की भूमिका निबाहता था।

मंदिर की देखरेख के लिए कई ब्राह्मण पुजारी नियुक्त थे। उन सब पर एक प्रमुख पुजारी था। वह काफी दृढ़ चरित्र वाला था। एक-दूसरे के संपर्क में आने पर दृढ़ इच्छाशक्ति वाले अकसर स्वार्थों के संघर्ष के शिकार होते हैं। यहाँ भी यही हुआ।

लोग इस घटना से संबंधित सारी बातें भूल चुके थे। पर उन्हें यह ज्ञात था कि प्रमुख पुजारी ने अपने विद्रोही विदूषक के विरुद्ध कई आरोप लगा दिये थे। उसे सत्तारूढ़ कराने के खिलाफ षड्यंत्र करने का दोषी ठहराया गया। परिणाम यह हुआ कि उस अभागे विदूषक पर खुले आम मुकदमा चलाया गया तथा राजद्रोह के अभियोग में उसे मृत्युदंड सुना दिया गया। उसे जीवित ही उस कुएँ के भीतर डाल दिया गया। पर कुएँ में डाले जाने के पूर्व विदूषक ने प्रमुख पुजारी और कुछ अन्य साधुओं से बदला लेने की कसम खायी।

परिणाम यह हुआ कि एक सप्ताह के भीतर ही प्रमुख पुजारी गायब पाया गया। कुछ दिन बाद उस का शव कुएँ में तैरता मिला। विदूषक ने अपना पहला शिकार कर लिया था। प्रमुख पुजारी का शव भी इसी तरह पाया गया था। मंदिर में और भी पुजारी आये, पर उन सब का यही हाल हुआ।

विदूषक की आत्मा बदला लेने के लिए आमादा थी। उसे शांत करने के लिए समय-समय पर कई समारोह किये गये, पर कोई लाभ न हुआ। पुजारियों के शव कुएँ में पाये ही जाते रहे। लगभग सौ वर्ष तक विदूषक की आत्मा यह बदला लेती रही। अंत में यह स्थिति हो गयी कि कोई भी पुजारी मंदिर में काम कर जान जोखिम में डालने के लिए तैयार न होता और इस तरह मंदिर और उस के आसपास का कुएँ वाला क्षेत्र धीरे-धीरे निर्जन और उजाड़ हो गया।

इस विचित्र कहानी को सुनाने वाले ने अंत में एक महत्त्वपूर्ण वाक्य कहा। वह बोला, "खुशकिस्मती समझिये जो स्वयं को आज जीवित पा रहे हैं। भूतकाल में वह सौ से अधिक पुजारियों की जान ले चुकी थी।"

दोबारा जब मैं सामपिगे गया तब भी विदूषक की आत्मा से भेंट हुई।
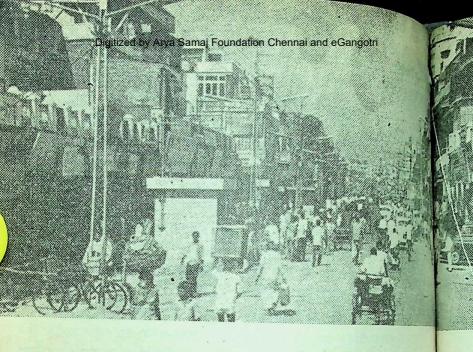
दिल्ली अगर हिंदुस्तान का दिल है तो चाँदनी चौक इस दिल की धड़कन। चाँदनी चौक का चप्पा-चप्पा और उस की एक-एक ईंट बीते दिनों की याद दिलाती है। चाँदनी चौक ने क्या कुछ नहीं देखा! शहंशाहों के जलवे देखे। शाहजहाँ के चहेते बेटे दाराशिकोह का अपमान, सिखों के नवें गुरु तेगबहादुर का कत्ल, नादिरशाह के सैनिकों के हाथों हजारों दिल्ली वालों का खून, अहमदशाह अब्दाली की लूटमार, गुलाम कादिर रुहेले का सितम, मरहठों और जाटों की आपाधापी और अँगरेजों का दौर-दौरा देखा। १८५७ की आजादी की लड़ाई में मुगल शहजादों, झज्जर के नवाब, वल्लभगढ़ के राजा और सैकड़ों बेगुनाहों को फाँसी पर लटकते देखा।

सन १९१२ में लार्ड हार्डिंग की सवारी पर बम गिरता देखा। 'महात्मा गाँधी की जय' और 'इनकलाब जिंदाबाद' के नारे सुने। सत्याग्रहियों पर गोलियों की बारिश, १९४२ में आजादी के हजारों

आज की दिल्ली और बीते इतिहास की दिल्ली में जमीन-आसमान का अंतर है। यह जान कर सहसा आश्चर्य हो सकता है कि जहां आज घना बाजार है, वहाँ कभी पानी की नहर थी। दिल्ली की ऐसी ही दिलचस्प कहानी का प्रकाशन हम इस अंक से आरंभ कर रहे हैं —संपादक

• महेश्वर दयाल

चाँदनी चौक-नहीं, चंदा की चाँदनी

परवानों की गिरफ्तारियाँ और 'भारत छोड़ो' आंदोलन देखा। अगस्त, १९४७ में आजादी के दिन की बहारें, पश्चिमी पंजाब से आये हुए शरणार्थियों की विपदा देखी। दिल्ली के लाल किले के घूंघट की दीवार से आजादी के दिन हिंदुस्तान के प्रधान-मंत्रियों के भाषण, १९५० में हिंदुस्तान के पहले राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्रप्रसाद की सवारी देखी।

आज से सवा तीन सौ वर्ष पहले शाहजहाँ की लाड़ली बेटी शहजादी जहाँआरा बेगम ने, जो बेगम साहिबा भी कहलाती थी, दिल्ली के लाल किले के लाहौरी दरवाजे और फतेहपुरी मस्जिद के बीच बाजार में एक चौक बनवाया। चौक में चंदा की चाँदनी खिली हुई बहुत भली

मालूम होती थी, इसलिए यह बाजार चाँदनी चौक कहलाया। चौक के बीचों-बीच एक आठ-पहलू हौज बना। इस हौज में अली मरदान खाँ की खोली हुई नहर का पानी काबुली दरवाजे से होता हुआ आया। चौक के एक तरफ आधे चाँद की शक्ल में दुकानें बनायी गयीं। इन दुकानों में शाहजहाँ के राज में काबुल और कंधार के फल वालों ने अपना सौदा लगाया। मुहम्मद शाह रंगीले के राज में यहाँ कहवेखाने खुल गये, जिन में शाम के वक्त शायरों, कलाकारों के जमघट लग जाते थे। १८५७ के बाद जब अँगरेजों का दिल्ली में राज्य हुआ तो इन दुकानों में बजाज बैठने लगे। १८६८ में अँगरेजों ने चौक के हौज को पाट कर ११० फुट ऊँचा घंटाघर बनवाया। घंटाघर बनवाने में जितना रुपया लगा, दिल्ली के छुन्नामल के परिवार ने अपनी जेब से दिया। दशहरे के दिनों में घंटाघर के चारों तरफ मंच बनाया जाता। भरत-मिलाप होता। १९५१ में यह घंटाघर जाने कैसे गिर गया और नौ आदमी दब कर मर गये।

चाँदनी चौक के दो ऊँचे-ऊँचे और शानदार दरवाजे भी थे। एक शहर के गली-कूचों की तरफ खुलता, दूसरा बेगम की सराय की तरफ, जिस जगह आज दिल्ली का नगर-निगम कार्यालय है।

शाहजहाँ आगरा से दिल्ली क्या आये, दिल्ली के चमन में बहारें आ गयीं। किले और शहर में आये-दिन जश्न मनाये जाते। लेकिन कुछ साल बाद किले पर आफत आयी। शाहजहाँ ऐसा बीमार पड़ा कि झरोखे में दर्शन देने को भी न आ सका। देश भर में बुरी-बुरी खबरें फैल गयीं। दाराशिकोह ने लोगों को बहुतेरा समझाया और एक दिन बीमार बादशाह को अपने साथ झरोखे में भी लाया, लेकिन लोग बादशाह को पहचान न सके। उन्हें दाराशिकोह की बातों पर विश्वास नहीं हुआ। शाहजहाँ के बेटों में कटा-छिनी शुरू हो गयी। बाप की गद्दी पर बैठने के लिए सभी एक-दूसरे से लड़ने के लिए मैदान में आ गये। औरंगजेब ने सब पर विजय पायी। सामूगढ़ की लड़ाई में हार कर दाराशिकोह बहुत दिन तक इधर-उधर मारा-मारा फिरा और एक दिन मलिक जीवन के हाथों गिरफ्तार हो कर दिल्ली लाया गया। मलिक जीवन जब शहजादे दाराशिकोह के हाथों में हथकड़ियाँ और पाँवों में बेड़ियाँ डाल कर एक छोटे-से हाथी पर सवार करके दिल्ली के चाँदनी-चौक में लाया तो दिल्ली वाले अपने प्यारे शहजादे को इस हालत में देख कर गुस्से में भर आये और मलिक जीवन पर पत्थर बरसाये, कूड़ा-करकट फेंका और गालियाँ दीं। दारा के बदन पर चिथड़े थे। सिर पर फटी चादर और एक फटा कंबल बदन पर लिपटा था। एक फकीर भीड़ को चीरता हुआ दारा के पास पहुँचा और दुखभरी आवाज में बोला, "ऐ, साहबे-आलम! शहंशाह के लाड़ले! संतों की संगत में

चाँदनी चौक : एक पुराना दृश्य

बैठने वाले ! गरीबों की सुनवाई करने वाले ! आज तुझे हुआ क्या है ? बोलता क्यों नहीं । देख, मेरी तरफ देख ! मैं वही हूँ जो हर रोज तेरे दरवाजे पर भीख माँगने आता था और तू मुझे मुट्ठियाँ भर-भर कर दान देता था । क्या आज कुछ भी नहीं देगा ? खाली हाथ जाना होगा ?"

दारा कुछ न बोला । अपने बदन पर लिपटा हुआ कंबल फकीर की तरफ फेंक दिया । यह देख कर लोगों की आँखें भर आयीं । वह अपने प्यारे शहजादे को बचाने के लिए दौड़े लेकिन शाही फौजों ने उन्हें कुचल कर रख दिया । दाराशिकोह को बंदीखाने में डाल दिया गया और उस का सिर काट कर औरंगजेब को पेश कर दिया गया ।

औरंगजेब ने ५० वर्ष जम कर राज्य किया लेकिन आँख बंद होने की देर थी कि देश भर में बेचैनी फैल गयी । उस का बड़ा बेटा मोअज्जम 'बहादुरशाह प्रथम' राज-काज से दूर रहा । पाँच वर्ष बाद उस का बेटा जहाँदारशाह गद्दी पर बैठा । इस बादशाह ने एक नाचने-गाने वाली को, जिस का नाम लालकुँवर था, अपनी मलिका बनाया । लालकुँवर किले में आयी । उस के सब भाई-बंद सूबेदारियाँ माँगने लगे । बादशाह के मंत्री ने लाल-कुँवर के भाई-भतीजों से कहा कि अगर तुम मुझे एक हजार सारंगियाँ ला कर दो तो मैं तुम सब को सूबेदार बना दूं । इन बेचारों ने बड़े जतन से दो सौ बड़ी बढ़िया सारंगियाँ ला कर मंत्री के सामने रख दीं और कहा कि ये सारंगियाँ ले कर सूबेदारी का हुक्म दिया जाये । लेकिन

मंत्री अपनी बात पर अड़ा रहा और एक हजार से कम सारंगियों पर न माना। इस पर उन्होंने बादशाह से मंत्री की शिकायत की, बादशाह ने मंत्री को बुला कर पूछा तो मंत्री ने जवाब दिया, "हुजूर, आप के राज्य में आजकल एक हजार मनसबदार हैं। मैं हर एक को एक-एक सारंगी यह लिख कर भेजना चाहता हूँ कि आज से पीछे सूबेदारी उस को मिलेगी जो सारंगी बजाने में नाम पैदा कर चुका हो," बादशाह मंत्री की बात सुन कर चुप हो गया।

जहाँदारशाह के राज्य में दिल्ली में गली-गली, कूचे-कूचे, कलालखाने खुल गये। दिन-दहाड़े शराब बिकने लगी। बादशाह अपनी लालकुँवर के साथ किले से रथ में बैठ कर चाँदनी चौक से हो कर कटरा बड़ियाँ के कलालखाने में शराब पीने आते। एक रात इन दोनों ने इतनी शराब पी कि नशे में धुत किले में पहुँचे। लालकुँवर तो फिर भी गिरती-पड़ती रथ से उतर महल में जा पहुँची, लेकिन बादशाह रथ में ही पड़े रहे। सवेरे जब महल में शोर मचा तो पता चला कि बादशाह रथ में सो रहे हैं। रथवान रात में बैलों को खोल, थान पर बाँध कर घर चला गया था और उस ने यह भी न देखा कि बादशाह सलामत रथ में पड़े हैं।

लालकुँवर की सब से मुँहचढ़ी सहेली जोहरा नाम की एक कुँजड़िन थी। ये दोनों हाथी पर सवार हो कर दिल्ली के चाँदनी चौक के बाजार से बड़े ठाठ से निकलती थीं। दो सौ हथियारबंद सिपाहियों का दस्ता साथ होता। एक दिन नवाब निजामुल्मुल्क अपने हाथी पर सवार हो कर सामने से चले आ रहे थे। लालकुँवर को निजाम के नाम से चिढ़ थी। उस की सूरत से जलती थी। लालकुँवर ने महावत को हुक्म दिया कि अपने हाथी को निजाम के हाथी से भिड़ा दे। महावत ने जब निजाम का रास्ता रोका तो लालकुँवर ने कहा, "निजामुल्मुल्क दिखायी नहीं देता, हिंदुस्तान की मलिका की सवारी आ रही है। क्या तेरी आँखें फूट गयी हैं?"

कहते हैं, जहाँदार शाह जब फर्रुखसियर से लड़ने गये तो लालकुँवर भी बादशाह के साथ उन के हाथी पर सवार हो कर लड़ाई के मैदान में गयी। फौज में बहुत-से ढोल और सारंगी बजाने वाले भी थे। लड़ाई जीत सकते तो क्योंकर! जहाँदार शाह मारे गये। फर्रुखसियर गद्दी पर बैठे लेकिन ये भी बहुत दिन राज न कर सके और मुहम्मदशाह रंगीले विराजमान हुए। उन के राज्य में तो नादिरशाह ने दिल्ली के चाँदनीचौक में वह कत्ले-आम किया कि खून की नदियाँ बह गयीं। नादिरशाह गया तो अहमदशाह अब्दाली आ पहुँचा। रही-सही कसर मरहठों, जाटों, सिखों और रुहेलों ने पूरी कर दी। मुगलों के बादशाह मुहम्मदशाह रंगीले थे, तो उन के बेटे अहमदशाह अलबेले थे। अल-

बेले अहमदशाह के बाद आलमगीर आये और फिर शाह आलम। इन के राज्य में यह बात बच्चे-बच्चे की जुबान पर थी—हुकूमते शाह-आलम अज दिल्ली ता-पालम (शाहआलम का राज्य दिल्ली से पालम तक) अकबर शाह और बहादुर-शाह नाम के बादशाह रह गये। उन के राज्य में मुगलों का सारा कस-बल निकल गया।

अँगरेज यहाँ व्यापार करने आये थे, हिंदुस्तान के मालिक बन बैठे। १८५७ में मेरठ से एक चिंगारी उठी और दिल्ली के चाँदनी चौक में भी आजादी पर जान देने वालों ने मोरचे बाँधे लेकिन जीत अँगरेजों की हुई। चाँदनीचौक में मस्जिद फतहपुरी की जायदाद नीलाम हो गयी। जामा मस्जिद में घोड़े बँधे। मस्जिद को तोप से उड़ा देने का इरादा किया गया। चाँदनी चौक में कोतवाली के सामने फाँसियाँ गाड़ी गयीं। मेजर हडसन ने मुगल शहजादों को हुमायूँ के मकबरे से पकड़ कर गोली का निशाना बनाया। सिसकते शहजादों को चाँदनी चौक की कोतवाली में ला कर लटकाया गया। अँगरेजों के सिपाही और उन के पिट्ठू जिस को चाहते फाँसी के तख्ते के आगे ला कर खड़ा कर देते। एक फाँसी पाता तो दूसरा अपने मरने की राह देखता। शहर के भंगी कूड़ा ढोने के कराचियाँ लिये पास खड़े रहते। लाशों को शहर में या शहर के बाहर जहाँ जगह मिलती गढ़ों में दबा आते। कोई पूछने वाला न था। १८५७ की दहकती आग में पुराना हिंदुस्तान जल कर राख हो गया। लेकिन धीरे-धीरे यह आग सुलगती रही। अंग-रेजों ने अपनी शान दिखाने के लिए अपने देश के बादशाह की सवारियाँ लालकिले और चाँदनी चौक से निकालीं। लेकिन १९१२ में जब लार्ड हार्डिंग हाथी पर सवार चाँदनी चौक से होते हुए लाल किले की तरफ जा रहे थे तो किसी ने धूलिया वालों के कटड़े के पास बैंक की छत से वाइसराय पर बम फेंका। लार्ड हार्डिंग तो बच गये लेकिन लाट साहब के दो मोर-छल-बरदारों में से एक का आधा धड़ उड़ गया और दूसरा घायल हो गया। वाइ-सराय की गरदन और कंधों को बम के लोहे के टुकड़ों ने थोड़ी-बहुत चोटें पहुँचायीं। वाइसराय को हाथी से उतार लिया गया और पास ही एक डॉक्टर की दुकान में मरहम-पट्टी कर दी गयी। वाइसराय की जगह एक दूसरे अंगरेज को हाथी पर बिठा कर सवारी निकाली गयी। बम फेंकने वाले पकड़े न गये लेकिन और बहुत-से लोगों को पकड़ लिया गया और फाँसी दे दी गयी। फाँसी पाने वालों में दिल्ली के मिशन स्कूल के मास्टर अमीर-चंद भी थे, जिन की याद ताजा रखने के लिए अभी कुछ दिन पहले दिल्ली की नयी सड़क का नाम बदल कर अमीरचंद मार्ग रख दिया गया है।

१९१४ में दुनिया की पहली बड़ी लड़ाई हुई। अँगरेजों ने हजारों हिंदुस्तानी सिपाहियों को लड़ाई की आग में झोंक दिया। इस लड़ाई में तुर्की भी जरमनी के साथ पिस गया। अरब से तुर्की का नाता टूट गया। अरब देश ब्रिटेन ने अपने बस में कर लिये। हिंदुस्तान में मौलाना शौकत अली, मुहम्मद अली और हकीम अजमल खाँ ने खिलाफत कमेटियाँ बनायीं। मुसलमानों का यह आंदोलन सारे देश का आंदोलन बन गया। अँगरेजों ने रौलट ऐक्ट लागू कर दिया। एक धार्मिक आंदोलन राजनीतिक आंदोलन में बदल गया।

दिल्ली के चाँदनी चौक में पत्थरवाले कुएँ के पास मैदान में, जहाँ आजकल लाजपतराय मार्केट है, जलसे हुए। स्वामी श्रद्धानंद, लाला देशबंधु गुप्त, मौलाना अहमद सईद, हकीम अजमल खाँ, डॉक्टर एम. ए. अंसारी-जैसे नेताओं ने भाषण दिये। महात्मा गाँधी भी दिल्ली आये। चाँदनी चौक के महल्ले बिल्लीमारान में हकीम अजमल खाँ के घर शरीफ मंजिल में जलसा हुआ। आंदोलन की चाल और तेज हो गयी और थोड़े दिन बाद जब गाँधीजी दिल्ली आ रहे थे तो उन्हें पलवल के स्टेशन पर गिरफ्तार कर लिया गया। इस खबर ने आग का काम किया। लोग अँगरेजों को मारने पर उतारू हो गये। अमृतसर के जलियाँवाला बाग में निहत्थे हिंदुस्तानियों को अँगरेज फौजों ने भून कर रख दिया। दिल्ली में कई बार गोलियाँ चलीं। मरने वालों की अर्थियाँ और जनाजे चाँदनी चौक के घंटाघर पर लाये जाते और वहाँ से श्मशान और कब्रिस्तान ले जाये जाते।

एक दिन अर्थी फूंक कर लोग निगमबोध घाट से वापस चाँदनी चौक पहुँचे तो सिपाहियों ने उन्हें ललकारा और उन पर गोली चलाने की धमकी दी। स्वामी श्रद्धानंद भीड़ को चीरते हुए आगे बढ़े। फौजों के सामने सीना तान कर खड़े हो गये और कहा, "तुम लोग गोली चलाना चाहते हो तो मुझ पर चलाओ।" इतना सुन कर फौजियों ने अपनी बंदूकें नीची कर लीं और जुलूस बड़ी शांति से चाँदनी चौक में 'रौलट ऐक्ट वापस लो' के नारे लगाता हुआ आगे निकल गया।

अहिंसा के पुजारी महात्मा गाँधी ने सत्याग्रह शुरू कर दिया। हिंदुस्तान भर की जेलें आजादी के परवानों से भर गयीं। वाइसराय लार्ड हार्डिंग परेशान हो गये। देश आजाद हो जाता, लेकिन अँगरेजों ने महात्मा गाँधी को पाँच साल के लिए जेल में ठूंस दिया। जेल से जब नेता छूटे तो आजादी की लड़ाई फिर तेज हो गयी। चाँदनी चौक में घंटाघर के नीचे कांग्रेस का जलसा हुआ। यह एक अनोखा जलसा था। इस जलसे के सभापति पंडित मदनमोहन मालवीय चुने गये थे, लेकिन वे दिल्ली पहुँचने से पहले ही पकड़ लिये गये। जलसा फिर भी हुआ। अँगरेज देखते के देखते रह गये। जलसे के सभापति रण-

छोड़दास अमृतलाल बनाये गये।

१९४२ में गाँधीजी ने 'भारत छोड़ो' का नारा लगाया। देश भर में जलसे हुए। नेताओं की गिरफ्तारियाँ हुईं। दिल्ली में इस आंदोलन का पहला जत्था चाँदनी चौक के घंटाघर के नीचे पहुँचा। हकीम खलील-उल-रहमान इस जत्थे के सरदार चुने गये, लेकिन पुलिस ने उन के मकान को घेर लिया और बाहर निकलने न दिया। हकीम साहब महल्ले की छतों से कूद कर बाहर सड़क पर आ गये और बुर्का ओढ़ कर डोली में सवार घंटाघर पहुँच गये। भीड़ को चीरती हुई जब उन की डोली घंटाघर पहुँची तो लोगों ने कहारों को डाँटा कि कहाँ घुसे चले आ रहे हो? घंटाघर पहुँच कर हकीम साहब बुर्का उतार अपनी दाढ़ी समेत डोली से निकल पड़े। उन को देखते ही लोगों ने 'इनकलाब जिंदाबाद,' 'पंडित नेहरू की जय' के नारे लगाने शुरू कर दिये। पुलिस ने लाठियाँ बरसायीं। लेकिन आजादी के दीवाने अपनी जान की फिक्र ही कहाँ करते हैं!

अँगरेज जितना अत्याचार करते गये आजादी की लड़ाई उतनी ही तेज होती गयी। दिल्ली के चाँदनी चौक में आये-दिन कुछ-न-कुछ होता रहा। आज विदेशी माल की होलियाँ जल रही हैं तो कल कोई जुलूस निकल रहा है। कभी किसी नेता को पकड़ कर जेल में ठूँसने के लिए ले जाया जा रहा है तो कभी निहत्थे हिंदुस्तानियों पर लाठियाँ बरसायी जा रही हैं। कभी आँसू-गैस छोड़ी जा रही है तो कभी द[illegible] दन गोलियाँ चल रही हैं।

१९१९ में आजादी की जो कि[illegible] चमकी थी उस की चमक-दमक सब के चेहरों को जगमगा रही थी। और फि[illegible] वह दिन आ पहुँचा जिसे देखने के लि[illegible] सब बेचैन थे। अँगरेज भारत छोड़ने के लिए तैयार हो गये। लेकिन जाते-जाते एक चाल खेल ही गये। देश का बटवारा हुआ। हिंदुस्तान, पाकिस्तान बनने से देश के दो टुकड़े हो गये। लाखों, करोड़ लोग बेघर हो गये। पश्चिमी पाकिस्तान से लाखों लोग शरणार्थी बन कर दिल्ली आये और दिल्ली के गली-कूचों, बाजारों में लकड़ी के खोखे बना कर, पटरियों पर बैठ कर, पीठ पर गठरियाँ बाँध कर व्यापार करने लगे और पुरुषार्थी कहलाये। इन शरणार्थियों को बसाना आसान काम न था। सिर छिपाने के लिए छत भी चाहिए थी और व्यापार करने के लिए अच्छी जगहें भी। बहुत-से नगर और मार्केट बनाये गये। दिल्ली के चाँदनी चौक की पटरियों पर बैठने वाले दुकानदारों के लिए लाजपतराय मार्केट बना और १९५० में २६ जनवरी के दिन चाँदनी चौक के ऐतिहासिक बाजार से हिंदुस्तान के प्रथम राष्ट्रपति डॉक्टर राजेन्द्रप्रसाद की सवारी बहुत धूमधाम से निकली। जुलूस तो बादशाहों का-सा था, लेकिन एक बेताज बादशाह का।

(९६-बाबर रोड, नयी दिल्ली-१)

मंच बहुरंगी
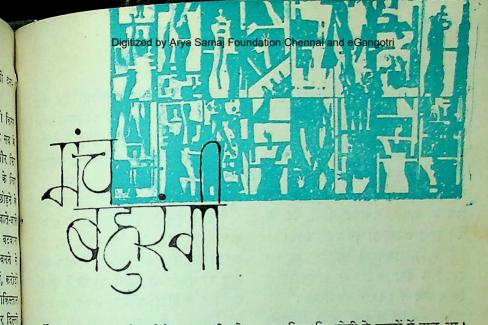
मेरे पिताजी और मेरे बब्बाजी के बीच जायदाद के संबंध में झगड़ा चल रहा था। पिताजी वकील हैं, और बब्बाजी मुंशी। बब्बाजी ने पिताजी पर कई मुकदमे चलाये, और पिताजी ने बब्बाजी के विरुद्ध कई मुकदमे दायर किये। मेरे ऊपर भी दुर्भाग्य से एक मुकदमा चल रहा था। एक दिन पहली पुकार कचहरी में बब्बाजी की हुई। वे कठघरे में मुलजिम के रूप में खड़े हुए। उस के बाद पिताजी की पुकार हुई। उसी दिन मेरी पुकार हुई। मैं भी कठघरे में खड़ा हुआ। वह मेरी जिंदगी का बड़ा मनहूस दिन था।

—जयपाल कुमार श्रीवास्तव, होशंगाबाद

हमारा धोबी रामभरोसे काफी विश्वस्त था। एक दिन पिताजी ने पैंट, कमीज उतारी और जेबें टटोले बिना नौकर से कह दिया कि धोबी के कपड़ों में डाल आ। दूसरे दिन रामभरोसे को कपड़े दे दिये गये।

उसी शाम करीब चार बजे पिताजी का दफ्तर से फोन आया कि मैं अपना बटुआ कल रात पैंट से निकालना भूल गया था। पिताजी से पूछा कि बटुए में कितने रुपये थे?

वे बोले, "चार, साढ़े चार सौ होंगे।"

मैं ने घबरा कर कहा, "पिताजी, कपड़े तो सुबह धोबी ले गया है। आप कहें तो सुमन (मेरा छोटा भाई) को धोबी के घर भेज दूं?"

वे बोले, "भेज दो।"

तुरंत सुमन को धोबी के घर दौड़ाया, वह आधा घंटे बाद आ कर बोला, "जीजी, रामभरोसे तो कपड़े भट्टी पर चढ़ा कर न मालूम कहाँ चला गया है, उस के घर वालों को कुछ पता नहीं।"

अभी हम बात कर ही रहे थे कि दरवाजे की घंटी बजी। मैं झल्लाती हुई दरवाजा खोलने गयी। सामने रामभरोसे खड़ा था। मेरे कुछ पूछने से पूर्व ही वह बोला, "मुन्नी, कपड़ा देख कर डाला करो! ये बाबूजी का बटुआ सँभालो और रुपये गिन लो। मैं ने तो भट्टी पर चढ़ा दिये थे, बाद में अचानक गीली पैंट की जेब पर हाथ गया तो जेब भारी लगी।"

मैं ने रामभरोसे को दस का नोट इनाम में देना चाहा, पर रामभरोसे ने इनाम लेने से इनकार कर दिया।

—मंजु सोढ़ानी, नयी दिल्ली-५

मैं बी. एस-सी. प्रथम वर्ष में क्रिश्चियन कालिज, लखनऊ का छात्र था। मेरे सहपाठी सुरेशचन्द्र जोशी को चुटकले सुनाने की आदत थी।

हमारी प्रायोगिक परीक्षा बाकी थी। वनस्पति विज्ञान की प्रायोगिक परीक्षा के एक दिन पूर्व सुरेश मुझ से मिला। बातों में समय का ध्यान ही न रहा। मैं ने जब देखा कि वह हर बार मुझे रोक लेता है तो मैं जबरन चलने को तैयार हो गया। फिर उस ने मुझे नहीं रोका, लेकिन यह जरूर कहा कि तुम से और बातें करने को जी चाह रहा है, पता नहीं कल तुम से मिल भी सकूँ या नहीं।

दूसरे दिन जब मैं परीक्षा देने गया तो पता चला कि मस्तिष्क की शिरा फटने के कारण सुबह सुरेश की मृत्यु हो गयी।

—प्रमोदचन्द्र नौटियाल, लखनऊ

मैं अपने मित्र के साथ दिल्ली जा रहा था! ट्रेन में हमारी सीट के सामने वाली सीट पर एक १८-१९ वर्ष की लड़की बैठी थी। उस की गोद में तीन-चार माह की बच्ची थी। उस लड़की ने बच्ची को गोद में लिटाया और स्वयं न जाने किन विचारों में डूब गयी कि उसे बच्ची का ध्यान तक न रहा।

अचानक बच्ची को नीचे गिरता देख मैं ने लपक कर उसे पकड़ लिया। बच्ची की माँ चौंकी और उस के मुँह से केवल 'ओह' निकला। मेरे मित्र ने शरारत से टिप्पणी की, "यार, पता नहीं कि आज-कल लोगों के ध्यान कहाँ चले जाते हैं!"

यह सुनते ही वह लड़की फफक-फफक कर रोने लगी और इतना ही बोली, "आज वे जिंदा होते तो मुझे यह न सुनना पड़ता!"

मैं और मेरा मित्र पश्चात्ताप की अग्नि में सुलगने लगे।

—गोकुलचन्द्र दुआ, अजमेर

लेबनान की नदी 'नहर-अल-अरुप' सप्ताह में सिर्फ छह दिन बहने वाली विलक्षण नदी है। सातवें दिन बहती ही नहीं, लेकिन आठवें दिन फिर अगले छह दिनों के लिए बहना शुरू कर देती है।
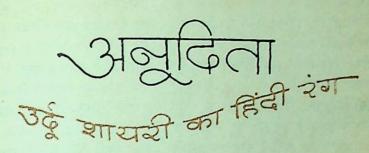
● राजशेखर

भारतीय साहित्य की गाथा सप्तशती से ले कर आज तक चली आ रही सतसई की समृद्ध परंपरा में इधर एक और कड़ी जुड़ी है। यह है, 'कृष्णायन' के प्रणेता पंडित द्वारकाप्रसाद मिश्र द्वारा रचित 'अनूदिता'। जैसा कि नाम से स्पष्ट है, 'अनूदिता' अनुवाद है। इस में मिश्रजी ने उर्दू के आदिकवि वली से ले कर आधुनिक काल के प्रख्यात उर्दू शायरों के सात सौ शेरों का दोहा छंद में अनुवाद प्रस्तुत किया है।

मिश्रजी भारतीय राजनीति में 'आधुनिक चाणक्य' के रूप में ख्यात हैं। लोग उन्हें 'कृष्णायनकार' के रूप में भी जानते हैं, पर यह बहुत कम लोगों को पता है कि मिश्रजी उर्दू काव्य के भी मर्मज्ञ हैं। यह उन के द्वारा अनुवाद के लिए चयन किये गये सात सौ शेरों को पढ़ने से स्पष्ट हो जाता है।

उर्दू का भारतीय भाषाओं में महत्त्वपूर्ण स्थान है। उसे किसी विशेष धर्म अथवा संप्रदाय से संबद्ध करना भ्रामक ही नहीं, अहितकर भी होगा। उसे विदेशी भाषा का जामा पहनाना भी गलत होगा। उर्दू और हिंदी का मूल स्रोत एक ही है और यह है शौरसेनी प्राकृत। यह भाषा गंगा और जमना के दोआबे के उत्तरी भाग एवं पंजाब के पूर्वी क्षेत्र में बोली जाती थी। यही प्राकृत समयांतर में शौरसेनी अपभ्रंश बन कर पश्चिमी हिंदी और पूर्वी पंजाबी के उन भिन्न-भिन्न रूपों की जन्मदात्री बनी,

जिन में हिंदी और उर्दू, दोनों की ही गणना होती है। मिश्रजी का मत है कि इस देश के अधिकांश भू-भाग में बोलचाल की भाषा खड़ी बोली अथवा हिंदुस्तानी है, पर उच्च विचारों के प्रकट करने के लिए इसी हिंदुस्तानी में जब फारसी का प्रचुर मिश्रण होता है तब वह उर्दू भाषा का रूप धारण कर लेती है और जब उस में संस्कृत शब्दावली का बाहुल्य हो जाता है तो वह हिंदी कही जाती है। इस तरह एक ही मूल हिंदुस्तानी भाषा की दो पृथक-पृथक भाषाएँ हो गयी हैं। मिश्रजी की यह स्वस्थ मान्यता हिंदी और उर्दू के तथाकथित पूर्वाग्रह दूषित विद्वेष को जड़ से ही काटने वाली है। उन का यह कहना भी सही है कि बोलचाल की भाषा होने के कारण दोनों भाषाओं में बहुत कुछ साम्य है। यदि हम एक-दूसरे के साहित्य का अध्ययन करें तो दोनों भाषाएँ लाभान्वित हो सकती हैं। और यही नहीं, दोनों भाषाओं के साहित्य का यह अध्ययन इस देश के दो विशाल संप्रदायों को भी परस्पर निकट ला सकता है। इस दृष्टि से भी 'अनूदिता' का बड़ा महत्त्व है। वह एक प्रकार से साहित्य सेतु है। एक ऐसा सेतु, जिस के माध्यम से हम उर्दू साहित्य के बहुरंगी काव्य कानन की सैर कर सकते हैं।

उर्दू शायरी का एक अलग रंग है। उस में व्यवहृत शब्दों की एक अपनी अलग कहानी है, एक अपना अलग इतिहास है। उदाहरण के लिए 'इश्क' को ही ले लें। यह शब्द एक साथ लौकिक और अलौकिक प्रेम को व्यक्त करता है। उर्दू शायरी में काल और परिस्थितियों के अनुसार इस एक शब्द ने अलग-अलग अर्थ पाये हैं। पुरानी गजल में यह केवल सामान्य प्रणय संबंधों का परिचायक है, जब कि नयी गजल में वह देश, जनता, मानवता और विश्व के प्रति प्रेम का द्योतक बन गया। लखनवी शायरों के हाथों में पड़ कर इश्क की काफी छीछालेदर हुई, किंतु अल्लामा इकबाल की शायरी ने इस शब्द को एक सर्वथा नया और भव्य अर्थ प्रदान किया। उस ने इस शब्द को जीवनानुभूति का पर्याय बना दिया। यही बात उर्दू शायरी में प्रयुक्त होने वाले अन्य शब्दों यथा--महबूब, आशिक रकीब, फलक, रिन्द, साकी, मैखाना, शेख, जाहिद, वायज, नासेह, बाग, चमन, बागवां, गुंची हाशिया, गुल, बुलबुल, कफस, कारवां, मंजिल, गरेबाँ आदि पर भी लागू होती है। 'अनूदिता' को पढ़ते समय इन शब्दों के भिन्न-भिन्न अवसरों पर मिलने वाले भिन्न-भिन्न अर्थों का पता चलता है।

'अनूदिता' के दोहों की एक अलग सत्ता भी प्रतीत होती है। यह शायद इस-लिए कि कुशल अनुवादक ने प्रत्येक शेर के अंतरंग आशय को भलीभाँति आत्मसात कर उसे दोहा छंद में मार्मिकता से प्रस्तुत किया है। मिश्रजी ने इन दोहों में संबंधित शेरों की मूल आत्मा को उसी भावोत्पाद-

कता के साथ सुरक्षित रखा है, वरन अपनी तीक्ष्ण भावानुभूति एवं विदग्धता से उसे एक नयी आभा से भी मंडित किया है। वली के 'अजब कुछ लुत्फ रखता है शबे खिलवत में दिलबर सूं, सवाल आहिस्ता आहिस्ता, जवाब आहिस्ता आहिस्ता' शेर का मिश्रजी द्वारा प्रस्तुत यह
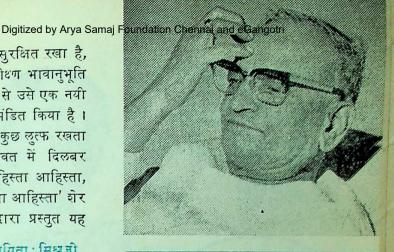
'अनूदिता' के रचयिता : मिश्रजी

अनुवाद बिलकुल मूल शेर का आनंद देता है--

मिलता प्रिय-संग निशि निभृत, अनुपम ही आनंद
मंद-मंद कुछ पूछना, उत्तर स्वर भी मंद

इसी तरह नसीम के एक शेर का यह अनुवाद भी उतना ही मार्मिक है--

खोज खोज प्रिय गेह पथ, मैं अति हुआ अशक्त
ज्योंही आँखें मुंद गयीं पथ हो गया प्रशस्त

'अनूदिता' के दोहों में कहीं-कहीं रहीम के दोहों-सा आनंद आता है, उसी सरल शैली और भाषा में जीवन के गूढ़ रहस्यों का सफल दिग्दर्शन। दाग के एक शेर का यह अनुमान, खास कर उस की अंतिम पंक्ति एक सूक्ति ही कही जा सकती है--

चल दिल्ली से दाग तू, कर दक्षिण प्रस्थान
निकल सिंधु से ही हुआ, मोती का सम्मान

मीर के एक प्रसिद्ध शेर के इस अनुवाद की बानगी भी दृष्टव्य है--

व्यर्थ घूमता ही रहा, लिये सुमरिनी हाथ
फिरता तेरा दिल नहीं, इन गुरियों के साथ

गालिब का एक शेर है, 'जहाँ तेरा नक्शे कदम देखते हैं, खयाबाँ-खयाबाँ करम देखते हैं'; 'अनूदिता' में मिश्रजी ने उपर्युक्त शेर का यह अनुवाद प्रस्तुत किया है--

जहाँ दीख पड़ती मुझे, तेरे पद की छाप
क्यारी क्यारी में वहाँ, स्वयं दीखता आप

मिश्रजी के अनुवाद की यह खूबी है कि उस में मूल का सारा सौंदर्य यथावत अक्षुण्ण है। चाहे वह दार्शनिकता भरे शेर का अनुवाद हो या हलके-फुलके व्यंग्य से सराबोर। अकबर इलाहाबादी का यह शेर काफी लोकप्रिय है--

पारले ग्लुको–
ज़्यादा स्वादवाले–
ज़्यादा शक्ति से
भरपूर
हमेशा मिले हुए–
विटामिन ए-डी-बी$_1$-बी$_2$
कैल्शियम-प्रोटीन, दूध, गेहूँ,
शक्कर, ग्लुकोज़
PARLE
BISCUITS
Gluco
बच्चे बढ़ते मज़े उठा कर
पारले ग्लुको बिस्किट खा कर
भारत के सबसे ज़्यादा बिकनेवाले बिस्किट पारले ग्लुको

फरमा गये हैं खूब ये भाई घूरन
दुनिया रोटी है और मजहब चूरन

अब अनुवाद का मुलाहजा फरमायें—

गये पते की बात कह, घूरन भाई जान
दुनिया को रोटी समझ, मजहब चूरन मान

कहीं-कहीं मिश्रजी ने मूल के सौंदर्य को और भी प्रखर बना दिया है।

अकबर का ही शेर है—

वे बसर वो हैं जो बहसों में यहाँ खुरसंद हैं
जिन की आँखें खुल गयीं उन की जबान
बंद हैं

मिश्रजी ने इसी शेर का और भी सरल बोधगम्य अनुवाद दिया है—

जिन्हें बहस में ही खुशी अंधे वे इंसान
जिनकी आँखें खुल गयीं, उनकी बंद जबान

'अनूदिता' में प्रस्तुत दोहों का एक महत्त्व यह भी है कि वे उर्दू से अपरिचित, साधारण पाठक को भी इस समृद्ध भाषा की गूढ़ शेरो-शायरी से परिचित कराते हैं। मेरा तो यह भी विचार है कि 'अनूदिता' के कुछ चुने हुए शेरों के अनुवाद भिन्न-भिन्न कक्षाओं की पाठ्यपुस्तकों में भी समाविष्ट किये जा सकते हैं।

'अनूदिता' के रूप में मिश्रजी ने हिंदी साहित्य की समृद्ध परंपरा को और महिमामंडित किया है। मिश्रजी कवि, पत्रकार, नेता, देशभक्त, राजनीति के महिमामंडित संचालक, वक्ता, शिक्षाविद आदि के रूप में ख्यात रहे हैं। 'अनूदिता' उन के व्यक्तित्व के एक और पहलू को उजागर करती है। 'अनूदिता' का एक और महत्त्व है। इस कृति के माध्यम से मिश्रजी ने आम हिंदी पाठकों के निकट एक ऐसे विश्व की सृष्टि कर दी है, जो उस के लिए अब तक अपरिचित था।

अपनी विचारोत्तेजक भूमिका में मिश्रजी ने एक विचारणीय सुझाव दिया है। उन्हीं के शब्दों में—"हिंदी भाषा के ऐसे अनेक कवि हैं, जिन्होंने उर्दू साहित्य का अवगाहन किया है और उस से लाभ उठाया है, पर उर्दू के कवियों में हिंदी के अध्ययन की रुचि क्वचित ही देखने को मिलती है, किसी को यह भी नहीं भूलना चाहिए कि ऋग्वेद के काल से ले कर आज तक संस्कृत भाषा एवं विभिन्न भारतीय भाषाओं में प्रचुर काव्य लिखा गया है, जिस की तुलना में बहुत कम देशों के काव्य ठहरने का साहस कर सकते हैं. . .अतः यदि हम एक-दूसरे के साहित्य का अध्ययन करें तो दोनों भाषाएँ लाभान्वित हो सकती हैं।"

सचमुच यदि उर्दू और अन्य भारतीय भाषाओं, विशेषकर द्रविड़ मूल की भाषाओं में अन्य भारतीय भाषाओं के काव्य और साहित्य की अन्य विधाओं के अनुवाद का कार्य शुरू किया जाये तो वह न केवल भारतीय भाषाओं के साहित्य को समृद्धि प्रदान करेगा वरन विविध संस्कृतियों वाले इस विशाल देश के लोगों को भी परस्पर निकट लायेगा और राष्ट्रीय एकीकरण के महायज्ञ में पुण्य हविष सिद्ध होगा। इस पुस्तक का प्रकाशन नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली ने किया है।

कराहती हुई कालकोठरी

● अनंतगोपाल शेवड़े
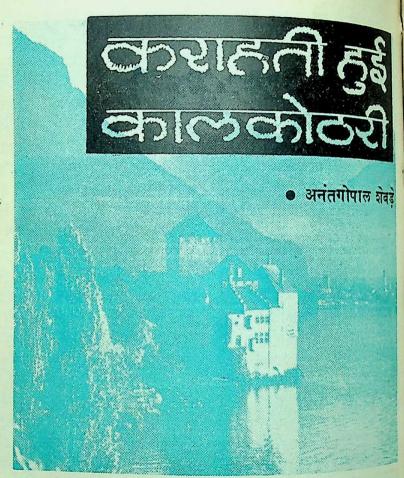
स्विस आल्प्स के शुभ्र हिम-शिखरों की उपत्यका में नितांत रमणीय लेमान नामक झील का सुरम्य तट कभी किसी लोहश्रृंखला से बद्ध कैदी को आहों और कराहों से सहम उठा होगा, इस की कल्पना करना भी कठिन है। लेकिन शियॉन का किला देख कर लगा कि यह विरोधाभास कोरी कल्पना नहीं वरन इतिहास का एक दारुण एवं दुःखद सत्य है जिस के अवशेष आज भी हैं।

मैं मोटर से जेनेवा द्वारा कॉ जा रहा था जहाँ 'मॉरल रिआर्मामेंट' नामक अंतर-राष्ट्रीय संस्था का केंद्रीय कार्यालय है। साथ में उस शांतिवादी संगठन के प्रधान मंत्री श्री पियरे स्पोरी तथा उन की पत्नी भी थीं। हमारा मार्ग स्विस रिवेरिया के

प्राकृतिक सौंदर्य से ओतप्रोत प्रदेश में से गुजर रहा था। दाहिनी ओर सेवॉय के आल्प्स की हिमाच्छादित पर्वतमालाएँ थीं और बायीं तरफ हरी-भरी पहाड़ियों से घिरी हुई, नील-वर्ण जल से लबलबाती हुई विशाल लेमान झील थी। उस की चमचमाती सतह पर श्वेत फेनिल लहरें अठखेलियाँ कर रही थीं। सहसा एक काल-धूसरित पुराने किले की तरफ अँगुली दिखाते हुए पियरे ने कहा, "जानते हैं वह क्या है?"

"नहीं तो!"

"वही शियॉन का प्रसिद्ध किला है जिस की कालकोठरी में लगभग साढ़े चार साल तक एक ईसाई धर्मगुरु को लोहे की शृंखला से जकड़ कर ठूँस दिया गया था। बॉयरन ने इस घटना पर एक कविता लिख कर उसे अमर कर दिया है।"

"हाँ, हाँ, वह कविता तो मैं ने भी

(बायें पृष्ठ पर) लेमान झील के किनारे शियोन का किला। (इस पृष्ठ पर) शियोन के किले की क्रूर कालकोठरी

पढ़ी है—'शियॉन का कैदी'। उस का मुझ पर गहरा असर पड़ा था।" मैं ने तुरंत जवाब दिया और कहा, "क्या मैं वह कालकोठरी देख सकता हूँ?"

"क्यों नहीं? पर इस समय नहीं। अभी कार में लोग दोपहर के भोजन के लिए हमारा इंतजार करते होंगे। लेकिन भोजन के बाद अपराह्न में आप निस्संदेह इस किले को देख सकते हैं। मैं इस की पूरी व्यवस्था कर दूँगा।" पियरे ने कहा।

मुझे उस हृदयस्पर्शी कविता का पूरा स्मरण था। मैं ने १९३०–३१ के सत्याग्रह-संग्राम में भाग लेने के लिए एक वर्ष के लिए कॉलिज छोड़ा था। गाँधीजी के नेतृत्व में सारे देश में स्वाधीनता की भावना की लहर फैल गयी थी। गाँधी-इर्विन समझौते के बाद बी. ए. का कोर्स पूरा करने के लिए जब मैं फिर से कालिज में भरती हुआ तो अँगरेजी साहित्य विषय
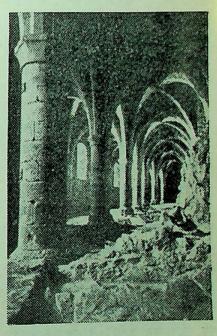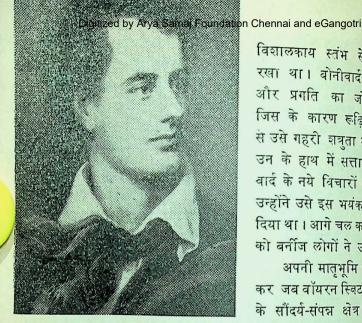
प्रणय और स्वातंत्र्य का उपासक : कविवर बॉयरन

के अंतर्गत मुझे वह अविस्मरणीय कविता पढ़नी पड़ी थी—

अनिर्बंध मन की चिरंतन आत्मा, स्वतंत्रते ! जो गुनहखानों की काल-कोठरी में ही सब से अधिक जगमगाती है...

लॉर्ड बॉयरन प्रणय और स्वतंत्रता का गायक श्रेष्ठ कवि था जो स्वयं उस कालकोठरी को देखने आया था। शियॉन के प्रसिद्ध किले के तलघर के रूप में वह काल-कोठरी अब भी ज्यों-की-त्यों मौजूद है। इस में जेनेवा के सेंट विक्टर के धर्म-गुरू बोनीवार्द को लगभग साढ़े-चार वर्ष तक लोहे की जंजीरों से एक पत्थर के विशालकाय स्तंभ से जकड़ कर बांध रखा था। बोनीवार्द धार्मिक पुनरुत्थान और प्रगति का जोरदार समर्थक था जिस के कारण रूढ़िवादी, धर्मावलंबियों से उसे गहरी शत्रुता मोल लेनी पड़ी थी। उन के हाथ में सत्ता थी इसलिए बोनीवार्द के नये विचारों को कुचलने के लिए उन्होंने उसे इस भयंकर कारागृह में धकेल दिया था। आगे चल कर २९ मार्च, १५३६ को बर्नीज लोगों ने उसे रिहा कराया।

अपनी मातृभूमि इंगलैंड का परित्याग कर जब बॉयरन स्विटजरलैंड और इटली के सौंदर्य-संपन्न क्षेत्र में बसने के लिए आया तो उसे शियॉन के किले को भी देखने का अवसर मिला। वह कोमल हृदय का संवेदनशील कवि था। बोनीवार्द की मर्मांतिक पीड़ा की कल्पना कर वह रो उठा। उसी भावोत्कटता के परिणाम-स्वरूप ही यह सुंदर कविता उत्स्फूर्त हुई थी।

बॉयरन स्वतंत्रता का कट्टर उपासक था, चाहे वह स्वतंत्रता धार्मिक हो या राजनीतिक। आश्चर्य की बात तो यह थी कि स्वतंत्रता का यह प्रेम केवल शब्दों तक सीमित नहीं था बल्कि कृति में भी अभिव्यक्त होना था। देखने में वह बड़ा सुंदर था।। तरुण स्त्रियों के लिए उस का व्यक्तित्व विशेष रूप से आकर्षक था। इसलिए वह इंग्लैंड में कई प्रेम-प्रकरणों में उलझ गया था। इन में से एक ने तो लोकापवाद का ऐसा गहरा स्वरूप ले लिया कि

बॉयरन को बड़ी बदनामी सहनी पड़ी जिस के फलस्वरूप उसे अपनी मातृभूमि का परित्याग करने की नौबत आ गयी। स्वभाव से अलमस्त और फक्कड़ तो वह था ही, सब-कुछ छोड़-छाड़ कर इंगलैंड से भाग निकला और इस रमणीय प्रदेश में आ कर बस गया।

उन दिनों यूनान तुर्किस्तान के अधीन था। यूनान के लोग अपनी स्वतंत्रता की लड़ाई लड़ रहे थे। यह सन १८२३ की बात थी। लॉर्ड बॉयरन की संपूर्ण सहानुभूति यूनान के साथ थी। यूनान की पुरानी संस्कृति और सभ्यता से वह अत्यधिक प्रभावित था और उसे यह हर्गिज बर्दाश्त नहीं था कि ऐसा प्राचीन देश तुर्कों-जैसी पिछड़ी जाति का, जिन्हें वह बर्बर मानता था, गुलाम रहे। उस ने आव देखा न ताव और वह लड़ाई में कूद पड़ा—मिसोलांघी की यूनानी सेना में भरती हो गया। शरीर से तो वह दुबला-पतला और नाजुक ही था, पर दिल और आत्मा से वह दिलेर था। दुर्भाग्य से तीन महीने में ही वह ठंड खा कर बीमार पड़ गया और अप्रैल, १८२४ में उस की मृत्यु हो गयी। उस के हजारों-लाखों चाहने वालों के दिल को गहरा धक्का लगा। इंगलैंड में तो उस की शहादत की विशेष प्रतिक्रिया हुई। लोग उस के चारित्र्य संबंधी लोकापवादों को भूल गये। वह उन की नजरों में एकदम ऊँचा, बहुत ऊँचा उठ गया। जन-मन के दबाव के कारण अंततोगत्वा इंगलैंड को भी यूनान का समर्थन करने के लिए बाध्य होना पड़ा।

जब मैं ने शियॉन के उस ऐतिहासिक कालकोठरी में, जो बोनीवार्द की तपस्या से तथा बॉयरन की उपस्थिति से पुनीत हो गया था, प्रवेश किया तो मेरा मन एकदम भारी हो गया। मैं ने पत्थर का वह भीमकाय स्तंभ देखा जिस से बोनीवार्द जकड़ा गया था। उस का लोहे का हुक अभी भी मौजूद है हालाँकि लोहे की शृंखला अब वहाँ नहीं है। उस के सहारे बोनीवार्द आस-पास चार-पाँच फुट तक रेंग कर हाल-चाल कर सकता था। जिस पत्थर की चट्टान पर वह अपना सिर टिका कर विश्राम करता था वह स्थान घिस कर कुछ चिकना बन गया है और उस के निशान अब भी दिखायी देते हैं। जिस स्तंभ से वह बाँधा गया था वह प्रवेश-द्वार से पाँचवाँ स्तंभ है। बॉयरन ने अपनी यात्रा की स्मृति में पास ही के तीसरे स्तंभ पर अपना नाम लोहे की कील से उत्कीर्ण कर रखा है जो अब भी आसानी से पढ़ा जा सकता है।

काल कोठरी की दीवार पर ऊपर की तरफ एक छोटा-सा झरोखा है जहाँ से नील-गगन का एक छोटा-सा टुकड़ा दिखायी देता है। बाहरी विश्व के अनंत विस्तार के साथ उस अभागे कैदी का वही एकमात्र संपर्क था। दूसरी ओर ऊँची दीवार पर, छत के करीब एक सींकचों वाली खिड़की थी जिस में से बंदी के लिए

खाना डाल दिया जाता था।

उस स्थान को देख कर मेरा मन उदास हो गया। सचमुच धर्म के नाम पर भी मानव ने मानव के साथ कितना छल किया है! वे स्वयं धर्म की आत्मा को समझते भी थे इस में गहरा शक है। अपने विचारों और आस्थाओं के लिए मनुष्य को हमेशा कीमत ही चुकानी पड़ी है। इतिहास ऐसी बातों से भरा पड़ा है। स्वतंत्रता और प्रगति का विरोधी असहिष्णु समाज हमेशा उन्हें संताप ही देता आया है। कृष्ण भगवान से ले कर तो विश्व के सभी शहीदों और उद्धारकों को——हमारे देश के गाँधी-नेहरू-जैसे महापुरुषों को भी ——कारावास की काल-कोठरी का प्रश्रय ही लेना पड़ा है।

मुझे स्वयं अपने कारावास के दिन याद आ गये। भारतीय स्वतंत्रता-संग्राम में भाग लेने वाले लाखों नर-नारियों की तरह मैं भी एक था। पर हमारा जेलखाना तो बोनीवार्द की काल कोठरी के मुकाबले में एक राजमहल-जैसा रहा होगा। बोनीवार्द के उस एकांकी, कठोर एवं घोर वेदना-युक्त जीवन के स्मरणमात्र से रोंगटे खड़े हो जाते थे।

मेरा हृदय उस अज्ञात तपस्वी के प्रति श्रद्धा और आदर से भर गया और मस्तक सहज ही नत हो गया। अनजाने मेरे मुँह से एक गहरा निःश्वास छूट गया। कुछ देर बाद मुझे लगा कि दम घुट रहा है।

आज यह कारागृह तपोभूमि बन गया है जिसे देखने के लिए देश-विदेश से लाखों लोग आते रहते हैं। जब मैं वहां से लौटने लगा तो रह-रह कर कवि बॉयरन की ये पंक्तियाँ (श्री पारसनाथ सिंह द्वारा अनुवादित) याद आती थीं—

ये पदचिह्न न मिटने पावें
रहे सभी को इनकी याद
जालिम के जुल्मों की करते
क्योंकि खुदा से ये फरियाद

बाहर आ कर देखा, तो वही आल्प्स के स्वच्छ धवल शैल-शृंग एवं लहलहाती पर्वतमालाएँ तथा विशाल लेमान झील की हरी-नीली पृष्ठभूमि पर नर्तन करते वाली लहरें। ऊपर निर्मल, अनंत आकाश।

लेकिन सौंदर्य के इस विराट साम्राज्य के इतने निकट होते हुए भी बोनीवार्द को लगभग साढ़े चार वर्षों तक इस अप्रतिम रूप-राशि के दर्शन नहीं हो पाये क्योंकि पत्थर की विशाल दीवारों ने उसे एक जिंदा कब्र में बंद कर रखा था।

लेकिन कौन कह सकता है कि उस की मन की आँखों के सामने यही उन्मुक्त सौंदर्य प्रभु के रूप में उसे आशा और आश्वासन का संदेश न दे रहा होगा?

काया को तो सीमा में बाँध कर जकड़ा जा सकता है पर आत्मा को?

(रामदास पेठ, नागपुर-१)

• ओमप्रकाश गाबा

समर्थक से पिछलग्गू तक

समर्थक, पोषक, पक्षधर, हिमायती, पैरोकार और अलमबरदार—इस वर्ग के शब्दों का प्रयोग ऐसे व्यक्तियों के लिए होता है जो किसी विचारधारा या किसी पक्ष को उस के विरोधी पक्ष के मुकाबले अपना सक्रिय सहयोग प्रदान करते हैं। इन में **समर्थक** शब्द सब से सामान्य है और इस का प्रयोग सब से व्यापक रूप से होता है। चुनाव में किसी उम्मीदवार का समर्थक वह भी हो सकता है जो मात्र उस के पक्ष में मतदान करता है, और वह भी जो उस के चुनाव-अभियान में अग्रणी भूमिका निभाता है। किसी विचारधारा का समर्थक वह भी हो सकता है जो उस की प्रतिष्ठा के लिए बड़े-से-बड़ा उत्सर्ग करने को तैयार हो जाये, और वह भी जो उस के प्रचार में कोई हिस्सा नहीं लेता, केवल समय आने पर उस के प्रति अपनी सहमति व्यक्त कर देता है। **पोषक** की भूमिका समर्थक की तुलना में अधिक सुनिश्चित होती है। पोषक का मूल अर्थ है पोषण करने वाला, अर्थात किसी वस्तु के अस्तित्व को कायम रखने और उसे नष्ट होने से बचाने वाला। प्रस्तुत संदर्भ में भी इस का अर्थ बहुत हद तक वही रहता है। किन्हीं सिद्धांतों या आदर्शों का समर्थक उन सिद्धांतों की श्रेष्ठता को स्वीकार करता है और उन की श्रेष्ठता स्थापित करने को प्रवृत्त हो सकता है, परंतु उन सिद्धांतों या आदर्शों का पोषक उन्हें जीवित रखने का ठोस प्रयत्न भी करेगा। किसी परंपरा का पोषक विपरीत परिस्थितियों में भी उस परंपरा को नष्ट नहीं होने देगा, चाहे उसे अपने सुख या स्वार्थ का त्याग भी क्यों न करना पड़े। समर्थक के मुकाबले पोषक शब्द का प्रयोग कुछ सीमित क्षेत्र में होता है; कोई किसी व्यक्ति, दल या विचार का समर्थक हो सकता है, परंतु पोषक शब्द का प्रयोग किसी विचार-पद्धति के संदर्भ में ही होगा। हाँ, **पक्ष-पोषक** (किसी पक्ष को उस के विरोधी पक्ष के मुकाबले सुदृढ़ बनाने का प्रयत्न करने वाला) और **पृष्ठपोषक** (किसी के

पीछे या साथ रह कर उसे प्रतिद्वंद्वियों के मुकाबले के लिए सहायता या प्रोत्साहन देने वाला) किसी पक्ष-व्यक्ति या दल इत्यादि के संदर्भ में प्रयुक्त हो सकते हैं। **पक्षधर** का प्रयोग वहाँ होता है जहाँ किसी पक्ष का दूसरे पक्ष से सीधा मुकाबला हो, और कोई व्यक्ति स्पष्ट रूप से एक पक्ष के साथ हो जाये। पक्षधर के प्रयोग का क्षेत्र समर्थक की तुलना में थोड़ा संकुचित और पोषक की तुलना में थोड़ा व्यापक है। हम किसी प्रस्ताव या नीति का समर्थन करते हैं तो यह आवश्यक नहीं होता कि हम उस के विरोध का साक्षात्कार कर चुके हों; परंतु हम पक्षधर के रूप में तभी आते हैं जब हम विरोधी पक्ष का अस्तित्व स्पष्ट रूप से अनुभव कर चुके हों।

हामी और **हिमायती** मूलतः अरबी के शब्द हैं और हिंदी में ये समर्थक के पर्यायों के रूप में आते हैं। हामी या हिमायती प्रायः उसे कहा जाता है जो किसी विवाद या प्रतिद्वंद्विता में एक पक्ष को अपना लेता है, उसे सहायता और प्रोत्साहन देता है और उस की श्रेष्ठता स्थापित करने के लिए जी-जान से जुट जाता है। **पैरोकार** और **पैरवीकार** शब्द हिंदी में फ़ारसी से लिये गये हैं और इन का मूल अर्थ अनुयायी या अनुसरण करने वाला है। न्यायालय में किसी मुकदमे में एक पक्ष को प्रामाणिक सिद्ध करने और उसे जितवाने की कोशिश करने वाले के लिए भी इन शब्दों का प्रयोग होता है। अधिक व्यापक स्तर पर यदि कोई किसी पक्ष या किसी विचार-धारा के विरोधी पक्ष की आलोचना और आक्षेपों के विरुद्ध तर्क दे कर अपने पक्ष को सही सिद्ध करने में प्रवृत्त होता है तो उसे भी उस पक्ष या विचारधारा का पैरोकार या पैरवीकार कहा जाता है।

प्रस्तुत प्रसंग में **अलमबरदार** शब्द पर ध्यान जाना भी स्वाभाविक है। अलम शब्द अरबी का है और उस का अर्थ है झंडा या ध्वजा। अलमबरदार का अर्थ है झंडा उठाने वाला, सेना के आगे झंडा ले कर चलने वाला—ध्वजा-वाहक। अधिक व्यापक अर्थ में यदि कोई व्यक्ति या कोई राष्ट्र किसी सिद्धांत-विशेष की प्रतिष्ठा के लिए या किसी आंदोलन का नेतृत्व करते हुए अग्रणी की भूमिका सँभाल लेता है तो उसे उस सिद्धांत या आंदोलन का अलमबरदार कहा जाता है।

समर्थक के दो तिरस्कारसूचक पर्याय हैं—पिट्ठू और पिछलग्गू। इन शब्दों का प्रयोग स्वभावतः किसी मूर्त व्यक्ति या पक्ष के संदर्भ में होता है; विचारधारा, सिद्धांत या आदर्श के संदर्भ में नहीं। **पिट्ठू** जिस पक्ष का साथ देता है, उस की तुलना में वह अपने आप को अत्यंत तुच्छ समझता है, अतः उस के इशारों पर नाचता है। **पिछलग्गू**—पीछे लगने या चलने वाला, जो किसी को अपना बड़ा मान और आँख मीच कर उस के पीछे चलता है।

(एफ–३/१०, मॉडल टाउन, दिल्ली-९)
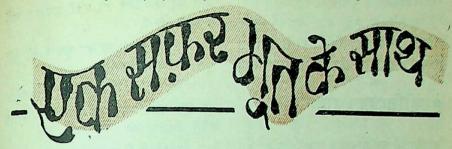
उस दिन चेतक-एक्सप्रेस के खाली डब्बे में सामने की सीट पर बैठी मिस शर्मा ने जब मुझे अपनी कहानी सुनायी तो एक बार मेरे अहं को बड़ी चोट लगी। भूतों के संबंध में काफी अध्ययन के बाद भी मैं कोई इतनी अच्छी भूतकथा नहीं रच पाया था।

"कमाल है मिस शर्मा! आप इतनी अच्छी भूत-कथाएँ गढ़ सकती हैं . . ." मुझे तुरंत टोक कर प्रतिवाद किया उन्होंने, "अरे आप इसे कहानी समझ रहे हैं? सच मानिये भौतिक शास्त्र में एम. एस-सी. किया है लेकिन विज्ञान पढ़ लेने से हम अपने यथार्थ अनुभवों को तो नहीं झुठला सकते!" उन के बात करने का लटका हूबहू उन दिनों जैसा था जब हम कालिज में साथ-साथ पढ़ते थे। अपने मित्रों से दर्शनशास्त्र संबंधी पुस्तकें ले कर और रात-रात भर उन के अध्ययन में डूबे रहने के बाद मैं ने निश्चय कर लिया था कि विज्ञान के साथ फिलहाल मेरा नाम का ही साथ रह सकता है, और अगले वर्ष बी. एस-सी. (प्रीवियस) पास कर लेने पर मैं ने पुनः बी. ए. में प्रवेश ले कर दर्शन-शास्त्र को विषय के रूप में चुना था। विज्ञान छोड़ने के बाद मिस शर्मा से मेरा साथ एक वर्ष रहा लेकिन फिर मैं एम. ए. के लिए बनारस चला गया। इस के बाद उन से कभी मुलाकात नहीं हो सकी।

उस दिन अचानक ही जब मैं जयपुर लौट रहा था तो दौसा स्टेशन पर दो मिनट रुक कर जैसे ही चेतक रवाना हुई तो मुझे आश्चर्य हुआ कि इस छोटे-से स्टेशन से फर्स्ट क्लास में कौन चढ़ आया है! मैं ने देखा, एड़ी से चोटी तक एकदम सफेद परिधान में कोई पचीस, छब्बीस वर्ष की युवती हाथ में एक-दो पुस्तकें, एक गुलाब का फूल, पर्स आदि लिये डब्बे में चढ़ आयी है। अरे, यह तो वही मिस शर्मा हैं जिन की फैशनपरस्ती पर कटाक्ष करते हुए अकसर सुकरात की उक्ति दोहराया करता था—"हे ईश्वर! मुझे अंदर से सुंदर बना!

उस अप्रत्याशित मुलाकात और मिस शर्मा की सादगी से मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ, लेकिन मुझे देख कर मिस शर्मा ने इस तरह मुसकरा कर नमस्कार किया और सामने

● कीर्तिस्वरूप रावत

वाली बर्थ पर ठीक मेरे सामने आ कर बैठ गयीं, मानो सात साल बाद इस तरह अचानक मिलने से उन्हें जरा भी आश्चर्य नहीं हुआ हो!

गाड़ी उस दिन कुछ लेट थी, और शाम के उस गहराते से आँचल में सामने बैठी मिस शर्मा की ओर जैसे ही मैं ने देखा उन की आँखों में उस अँधेरे में भी मुझे बहुत गहराई में तीव्र ज्योति से चमकते दो बिंदु दिखायी दिये। मैं सिहर-सा गया, लेकिन अपने क्वांरेपन को मैं समझता था अच्छी तरह; क्योंकि उस से कई वर्ष से संघर्ष करता चला आ रहा था। अतः दूसरे ही पल मैं पुनः स्वस्थ हो गया।

इस के पूर्व कि मैं उन से कोई प्रश्न करता वे बोलीं, "मैं यहाँ लेक्चरर हो गयी हूँ। जयपुर पास ही है न, इसलिए रोज आती-जाती हूँ इसी ट्रेन से। कितनी अजीब बात है आज सुबह ही कैलेंडर पर दृष्टि पड़ते ही मुझे आप के जन्म-दिन का ध्यान आया था। याद है, पिछली बार इसी दिन हम अंतिम बार १९६३ में बिरजू के यहाँ पार्टी में मिले थे! मुझे बड़ा अफसोस रहा कि अचानक ही पहुँचने के कारण मैं आप को जन्मदिन का कोई उपहार नहीं दे सकी थी?"

"अरे, वह गुलाब का फूल मैं तो नहीं भूला?" मैं ने कहा।

"वह भी कोई उपहार था? उपहार तो ऐसा होना चाहिए जिसे पाने वाला कभी भुला न सके।"

वास्तव में मिस शर्मा के उस उपहार को मैं कभी भुला न सकूंगा।

फिर कुछ देर बाद वे बोलीं, "आप की एक भूत-कथा हाल ही में पढ़ी है मैं ने। आप को अपना एक अनुभव सुनाऊं? इस अनुभव के बाद मेरी बहुत इच्छा होती है कि आप के शोध-कार्य में सहायता करूं..."

मैं उत्सुकता से सुन रहा था—

"ऐसी ही एक शाम की बात है। १४ नवंबर, १९६९ को मैं इसी तरह बैठी थी। प्रथम श्रेणी में कभी-कभार ही कोई मुसाफिर मिलता है वर्ना प्रायः खाली ही होता है। उस दिन भी मैं ने सोचा कि यह खाली ही होगा, लेकिन जैसे ही गाड़ी रवाना हुई मैं ने देखा कि एक वृद्ध-से सज्जन मेरे सामने वाली बर्थ के दूसरे छोर पर बैठे हैं। मैं जान ही नहीं पायी कि वे पहले से वहाँ थे या कि उसी समय आ बैठे थे। दाढ़ी बढ़ी हुई थी और सिर के बाल भी कुछ रूखे और बिखरे थे। पहनावा आदि विचित्र-सा लगा। बाद में पता चला कि लेखक हैं और अपनी किसी नवप्रकाशित पुस्तक के विमोचन-समारोह में भाग लेने जयपुर जा रहे थे।

"वृद्ध सज्जन ने घड़ी की ओर देख कर पूछा—'यहाँ से तो करीब एक घंटे का ही रास्ता और होगा ?

"मैं ने कहा—हाँ करीब इतना ही—क्या समारोह आज ही है ?

"हाँ आज ही है—आठ बजे ।

"तब तक तो आराम से पहुँच जायेंगे आप । किस जगह जाना है आप को ?

"वीनस प्रकाशन, घामानी मार्केट ।

"चौड़े रास्ते में है...कोई बहुत दूर तो नहीं है स्टेशन से । ऑटोरिक्शा कर लीजियेगा । कोई पंद्रह मिनट में पहुँच जायेंगे ।

"क्या है पुस्तक का शीर्षक ?

"वे मुसकराये और बोले—मृत्यु के उस पार ।

"मुझे तुरंत आप के शोधकार्य का ध्यान आया ।"

मैं ने मिस शर्मा को टोकते हुए कहा, "कैसे ? तुम्हें क्या मालूम कि मैं इसी तरह के विषय पर शोध कर रहा हूँ?"

"मैं क्या पत्र-पत्रिकाएँ नहीं पढ़ती कभी ? आप का हर लेख पढ़ा है मैं ने ।"

फिर वे आगे की बात सुनाने लगीं, "मैं ने लेखक महोदय से कहा कि क्या पता मृत्यु के उस पार क्या है ? मरने के बाद हम रहते भी हैं या नहीं, कौन जानता है ?

"तुम भूतों में विश्वास करती हो बेटी ?

"नहीं, लेकिन मुझे उन से बड़ा डर लगता है ।

"वे बहुत जोर-जोर से हँसने लगे—विश्वास ही नहीं करतीं तो डर कैसा ?" हँसी भी कितनी भयानक हो सकती है, यह उसी दिन जाना था मैं ने ।

"स्टेशन से सीधी मैं घामानी मार्केट पहुँची । वहाँ तो एक नहीं, कई प्रकाशकों की दुकानें थीं लेकिन 'वीनस प्रकाशन' के नाम से कोई दुकान नहीं थी और किसी भी प्रकाशक के यहाँ पुस्तक-विमोचन का कोई कार्यक्रम नहीं था उस दिन । मैं उलझन में पड़ गयी—क्या सभी कुछ एक स्वप्न की भाँति था ? यहाँ तक कि उस शीर्षक की कोई पुस्तक भी किसी के यहाँ नहीं मिली ! लेकिन मुझे बार-बार लगता रहा कि यह सभी कुछ मिथ्या नहीं हो सकता ।

"दूसरे दिन मैं ने जयपुर का एक-एक पुस्तकालय ढूँढ़ मारा । मेरी खुशी का अंदाज आप नहीं लगा सकते जो मुझे उस शाम महाराजा लाइब्रेरी के रजिस्टर में उस पुस्तक का नाम देख कर हुई थी । वह खुशी भी लेकिन टिक नहीं सकी । पूछताछ करने पर मालूम हुआ, वह पुस्तक कोई पाँच वर्ष पूर्व किसी सदस्य को दी गयी हुई थी और फिर कभी लौटी ही नहीं । मैं ने उन सदस्य महोदय का पता निकलवाया, और रात साढ़े दस बजे उन के घर का दरवाजा खटखटा रही थी । एक प्रौढ़ा ने दरवाजा खोला ।

"मनमोहनजी यहीं रहते हैं ?

"यह क्रायलिन से रंगवाई है क्या?"
"हां! मैंने खुदही रंगा है।"
मुफ्त
नया, बंद होनेवाला ब्रश और डिझाईनका तक्ता, आठ क्रायलिन के शीशियों के खास डिब्बे के साथ।
आकर्षक भेंट, स्टॉक समाप्त होने तक
क्रायलिन चित्रकारी सीखिये।
हमारे पत्र-व्यवहार स्कूलमे शामिल होइये।
कैमल क्रायलिन निर्माताओंने खास तौरसे तय्यार किया है। १२ रु. की रंग बिरंगी पुस्तिका मुफ्त लीजीये। और उसी के साथ २० रु. मे घर बैठे कपड़ोंपर चित्रकारी सीखिए। और आसानी से कुशलता प्राप्त कीजिये।
प्रसिद्ध चित्रकार और हमारे आर्ट डायरेक्टर श्री. बाल वाड, इस विषय में आपका मार्गदर्शन करेंगे।
क्रायलिन पत्र व्यवहार स्कूल
कैमलिन प्रा. लि.
जे. बी. नगर,
बम्बई-५९ ए. एस.
camel
Crylin
COLOURS
VISION 721 HIN

यह प्रश्न पूछते-पूछते एक क्षण मस्तिष्क में विचार कौंधा कि कहीं यह उत्तर न मिले कि वे तो कभी का यह मकान छोड़ गये हैं। लेकिन, अब आगे का मार्ग अधिक कठिन नहीं था। आगे तो मुश्किल नहीं थी, आश्चर्य था।

"मनमोहनजी ने बतलाया कि उन की इस विषय में बहुत रुचि थी अतः कुछ जानबूझ कर और कुछ आलस्यवश उन्होंने वह पुस्तक नहीं लौटायी थी !

"मैं ने पुस्तक खोली––अंदर के कवर पर नीचे एक कोने में छपा था—दूसरा संस्करण–– १९५२। आगे के पृष्ठ पर लेखक का चित्र था और उस के नीचे छपा था—जन्म १८९७—मृत्यु १९४४। प्रकाशक की ओर से छपे एक नोट में लिखा था—खेद है १४ नवंबर, १९४४ की उस शाम जब लेखक इस पुस्तक के प्रथम संस्करण के विमोचन-समारोह के लिए पधार रहे थे तो जयपुर के निकट ही ट्रेन में हृदय-गति रुक जाने के कारण उन का देहावसान हो गया।

"मैं आश्चर्य में डूब गयी ! १४ नवंबर, १९४४ में जिस की मृत्यु हो गयी थी वही वृद्ध मुझे १४ नवंबर, १९६९ को कैसे मिला !"

और, इसी कहानी के लिए मिस शर्मा शपथ खा कर कह रहीं थी कि वह अक्षरशः सत्य है।

मैं ने खिड़की के बाहर देखा–– गाड़ी जयपुर के आउटर सिगनल के करीब पहुँच गयी थी। मिस शर्मा बोलीं, "अभी एक पुलिया आयेगी। उस की छोटी-सी सुरंग में ही वह वृद्ध अपनी उस भीषण हँसी के साथ लुप्त हो गया था उस दिन ! ऐसे भी क्या किसी का लुप्त हो जाना संभव है? लो आ गयी वह पुलिया..."

डब्बे में एक क्षण के लिए घोर अंधकार छा गया। जैसे ही गाड़ी पुलिया के नीचे से बाहर आयी मैं ने देखा सामने की सीट पर गुलाब का एक फूल पड़ा है... बस !

(सम्यक ज्ञान अनुसंधान अनुशीलन संस्थान, दौसा, राजस्थान)

"क्या शोभासिंह बहुत धनी व्यक्ति हैं?"
"अब आप इसी से अंदाज लगा लें कि उन का बेटा रोज जुए में अनाप-शनाप हारता है, पर उन के माथे पर शिकन तक नहीं आती।"

• गुणाकर मुले

हमारी धरती के तेल एवं कोयले के भंडार असीमित नहीं हैं। विशेषज्ञों का कहना है कि यही रफ्तार रही तो अगले सौ साल में तेल एवं कोयले के भंडार लगभग समाप्त हो जायेंगे। तब हम क्या करेंगे?

दूसरा उपाय हम ने खोज लिया है। यह उपाय है—परमाणु-ऊर्जा। दूसरे महायुद्ध के समय में परमाणु-बम का विस्फोट हुआ और हमें परमाणु-ऊर्जा के बारे में जानकारी मिली। पंद्रह साल के भीतर ही परमाणु-शक्ति रिएक्टर की स्थापना हुई और इस से बिजली पैदा होने लगी।

भारत-जैसे विकासशील देश में भी अब परमाणु-ऊर्जा से बिजली पैदा होने लगी है। १९७१ के प्रारंभ में सारे संसार में १०२ परमाणु-शक्ति रिएक्टर बिजली पैदा कर रहे थे और १३१ रिएक्टरों का निर्माण हो रहा था। १९७० तक ये रिएक्टर १९,००० मेगावाट बिजली पैदा कर रहे थे। अनुमान है कि १९८० तक संसार के सारे रिएक्टर ३,००,०००
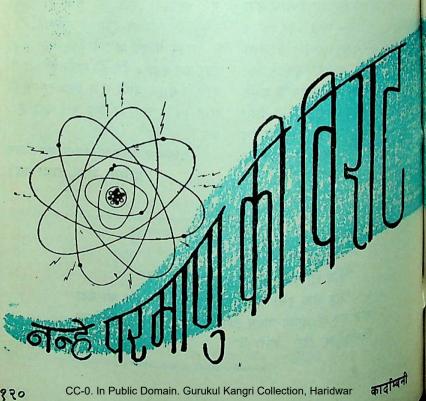
मेगावाट बिजली पैदा करेंगे। यह संपूर्ण बिजली के उत्पादन का पंद्रह प्रतिशत होगा। इस शताब्दी के अंत तक परमाणु-रिएक्टरों से करीब पचास प्रतिशत बिजली पैदा होगी।

परमाणु-शक्ति से पैदा होने वाली बिजली पानी एवं कोयले से पैदा होने वाली बिजली से महँगी भी नहीं है। और फिर, तेल एवं कोयले-जैसे प्राकृतिक ईंधनों के दूसरे लाभ भी हैं। इन से विविध प्रकार की रंग-सामग्री, दवाइयाँ तथा प्लास्टिक तैयार किये जाते हैं।

(२)
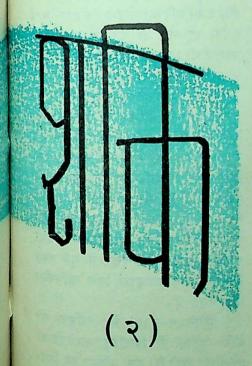
अप्रैल अंक में आप ने परमाणु, उस के कणों और प्रतिकणों के बारे में पढ़ा था। उसी कड़ी में अब प्रस्तुत है ऊर्जा के नये स्रोत प्राप्त करने की नयी संभावनाओं का विवरण

रिएक्टरों में यूरेनियम, प्लूटोनियम, थोरियम-जैसे ईंधनों का इस्तेमाल होता-है। पर हमारी धरती पर इन के भंडार भी असीमित नहीं हैं।

लेकिन चिंता की कोई बात नहीं है। वैज्ञानिकों को पूरा यकीन है कि यूरेनियम एवं थोरियम-जैसे ईंधनों के भंडार घट जाने के पहले ही ऊर्जा-उत्पादन के नये स्रोत खोज लिये जायेंगे। इस दिशा में अनुसंधान जारी हैं और सफलताएँ भी मिल रही हैं। ऊर्जा का यह नया स्रोत है **तापनाभिकीय ऊर्जा**।

यूरेनियम-जैसे ईंधनों पर चलने वाले रिएक्टर यूरेनियम के नाभिक से ऊर्जा प्राप्त करते हैं। तापनाभिकीय प्रक्रिया में भी नाभिक से ही ऊर्जा प्राप्त होती है पर इन दोनों प्रक्रियाओं में बहुत, अंतर है। इसे समझने के लिए पहले हमें यह जानना होगा कि परमाणु के भीतर क्या है और इस के भीतर से ऊर्जा का उत्सर्जन कैसे होता है।

सारी वस्तुएँ, सारी द्रव्य-राशि, परमाणुओं से निर्मित हैं। परमाणु के भीतर एक नाभिक होता है जो मुख्यतः

प्रोटोन एवं न्यूट्रोन कणों से बना होता है और इस नाभिक के इर्द-गिर्द इलेक्ट्रोन चक्कर काटते रहते हैं। सब से सरल परमाणु हाइड्रोजन का होता है। इस के नाभिक में एक प्रोटोन होता है और एक इलेक्ट्रोन इस का चक्कर काटता रहता है। जिस हाइड्रोजन परमाणु के नाभिक में एक प्रोटोन के अलावा एक न्यूट्रोन भी होता है, उसे 'ड्यूटेरियम' कहते हैं। जिस हाइड्रोजन परमाणु में दो न्यूट्रोन होते हैं, उसे 'ट्रिटियम' का नाम दिया गया है। ड्यूटेरियम को 'भारी हाइड्रोजन' के नाम से भी जानते हैं। ड्यूटेरियम एवं ट्रिटियम कुछ भिन्न प्रकार के हाइड्रोजन के समस्थानिक कहते हैं।

यूरेनियम परमाणु के नाभिक में बहुत-से प्रोटोन और न्यूट्रोन होते हैं और ९२ इलेक्ट्रोन इस नाभिक के चक्कर काटते रहते हैं। न्यूट्रोनों की कम-अधिक संख्या के अनुसार यूरेनियम के भी कई प्रकार हैं। **यूरेनियम–२३८** के नाभिक में ९१ प्रोटोन एवं १४७ न्यूट्रोन होते हैं। इस के अलावा यूरेनियम का और एक प्रकार है जिसे **यूरेनियम–२३५** कहते हैं और जो स्वल्प मात्रा में ही उपलब्ध हो सकता है। दरअसल, इसी यूरेनियम–२३५ से ऊर्जा प्राप्त की जाती है और इसी से परमाणु-बम बनते हैं।

परमाणु-नाभिक की रचना की गहराई में न उतर कर हम सिर्फ इतना बतायेंगे कि इन नाभिकों की संरचना को जब बदला जाता है—जब इन्हें विखंडित किया जाता है या जोड़ा जाता है—तो भिन्न तत्त्वों के नाभिक जन्म लेते हैं और साथ ही इस प्रक्रिया में ऊर्जा का उत्सर्जन होता है। नाभिक के द्रव्य का आंशिक रूप से क्षय होने से ही यह ऊर्जा प्राप्त होती है। महान आइंस्टाइन के प्रसिद्ध समीकरण से हमें मालूम हो जाता है कि कितने द्रव्य का क्षय होने से कितनी ऊर्जा प्राप्त होती है। इस समीकरण के अनुसार, एक ग्राम द्रव्य यदि ऊर्जा में बदल जाये तो हमें १,००,००,००,००,००० अरब अर्ग ऊर्जा प्राप्त होगी। २५ हजार अश्व-शक्ति का कोई इंजन यदि कई सप्ताह तक सतत कार्य करता रहे तब जा कर हमें इतनी ऊर्जा प्राप्त होगी। पर अभी द्रव्य को पूर्णतः ऊर्जा में बदलना संभव नहीं हुआ है।

परमाणु के इलेक्ट्रोन ऋणावेशी होते हैं और इस के नाभिक के प्रोटोन धना-वेशी होते हैं। न्यूट्रोन आवेश-रहित कण हैं। अब यह एक सामान्य नियम है कि समान आवेश वाले कण एक-दूसरे को दूर धकेलते हैं; पर परमाणु के नाभिक पर यह नियम लागू नहीं होता। यही कारण है कि नाभिक के भीतर के सभी धनावेशी प्रोटोन एक-दूसरे से जुड़े रहते हैं—एक खास बल द्वारा, जिसे 'नाभिकीय बल' कहते हैं।

'यूरेनियम–२३५' के नाभिक को धीमे न्यूट्रोनों से विखंडित करके ऊर्जा प्राप्त की जाती है। इस प्रक्रिया पर नियं-

त्रण प्राप्त करके परमाणु-बम का निर्माण हो चुका है और परमाणु-रिएक्टरों से पैदा की जाने वाली बिजली का उत्पादन भी इसी विखंडन की प्रक्रिया पर आधारित है।

लेकिन नाभिकीय ऊर्जा के उत्पादन की एक अन्य प्रक्रिया भी है जिसे संगलन, अर्थात नाभिकों को जोड़ने की प्रक्रिया कहते हैं। उदाहरणार्थ, विशेष प्रक्रिया से यदि हाइड्रोजन के नाभिकों को जोड़ा जाये तो हीलियम तत्त्व के नाभिक जन्म लेते हैं। इस प्रक्रिया में हाइड्रोजन-नाभिकों के द्रव्य का एक अंश ऊर्जा में बदल जाता है। वस्तुतः सामान्य हाइड्रोजन के नाभिकों के संगलन से ऊर्जा पैदा नहीं होती। इस के लिए ड्यूटेरियम एवं ट्रिटियम (हाइड्रोजन के समस्थानिक) का इस्तेमाल करना पड़ता है।

नाभिकीय संगलन की इस प्रक्रिया में भीषण ऊर्जा पैदा होती है। डयूटेरियम के नाभिकों का संगलन करके यदि एक किलाग्राम हीलियम तैयार होता है, तो इस प्रक्रिया में जो ऊर्जा पैदा होगी वह १३,६०० टन पेट्रोल को जलाने से पैदा होने वाली ऊर्जा के बराबर होगी।

हमारी धरती पर हाइड्रोजन पर्याप्त मात्रा में मौजूद है। ऑक्सीजन और हाइड्रोजन के मेल से पानी बनता है, और सागरों के रूप में बहुत सारा पानी धरती पर मौजूद है। हाइड्रोजन में ड्यूटेरियम का हिस्सा बहुत कम होता है--सिर्फ ०.०७ प्रतिशत। फिर भी इस ईंधन की कमी नहीं पड़ेगी क्योंकि इसे सागरों के पानी से प्राप्त किया जा सकता है। इसीलिए हम कहते हैं कि ऊर्जा के इस स्रोत का लाखों-करोड़ों वर्षों तक इस्तेमाल किया जा सकता है।

लेकिन एक कठिनाई है। ड्यूटेरियम के नाभिकों को जोड़ना सहज संभव नहीं है। अति उच्च तापमान में ही इन का संगलन संभव है। २० करोड़ डिग्री तापमान में ही ड्यूटेरियम का संगलन हो सकता है। और, हाइड्रोजन-बम के विस्फोट की प्रक्रिया में ठीक यही होता है। इस प्रक्रिया का पूर्वरूप परमाणु-बम है। सर्वप्रथम परमाणु-बम की प्रक्रिया से अति उच्च तापमान प्राप्त किया जाता है और तब ड्यूटेरियम का संगलन हो कर भीषण ऊर्जा का उत्सर्जन होता है। यही है हाइड्रोजन-बम। सूर्य और अन्य तारों में भी इसी प्रक्रिया से ऊर्जा का उत्सर्जन होता है।

नाभिकों के संगलन की इस प्रक्रिया में अति उच्च तापमान की आवश्यकता पड़ती है, इसलिए इसे **तापनाभिकीय संगलन** (थर्मोन्यूक्लियर फ्यूजन) कहते हैं। हाइड्रोजन-बम के रूप में हम ने इस प्रकार की ऊर्जा का निर्माण कर लिया है। पर विस्फोट के रूप में--विनाश के लिए!

इन नाभिकों को हम किस पात्र में रखें? स्पष्ट है कि किसी भी धातु का पात्र करोड़ों डिग्री तापमान वाले द्रव्य को धारण नहीं कर सकता। दरअसल इतने ऊँचे तापमान में हाइड्रोजन-जैसी

गैस भी परमाणुओं की स्थिति में नहीं रह पाती । हाइड्रोजन-परमाणु के इलेक्ट्रोन इस से टूट कर अलग हो जाते हैं और नाभिक भी आजाद हो जाते हैं । द्रव्य की इस प्रकार की स्थिति को **प्लाज्मा** का नाम दिया गया है ।

द्रव्य के तीन स्वरूपों से हम परिचित हैं । ये हैं--ठोस, द्रव और गैस । द्रव्य की चौथी स्थिति प्लाज्मा है । प्लाज्मा ठंडा भी हो सकता है और अति उष्ण भी । जब हम दियासलाई जलाते हैं तो उस की लौ प्लाज्मा है ।

अत्यधिक तापमान वाला प्लाज्मा इलेक्ट्रोनों और नाभिकों का मिश्रण होता है । पर कठिनाई यह है कि इस प्लाज्मा को किसी पात्र में नहीं रखा जा सकता । एक उपाय है—शक्तिशाली विद्युत-चुंबकों की दीवारों से इसे दूर रखा जा सकता है । टायर के आकार की गोलाकार दीवारें तैयार की जायें, तो इस की दीवारों को बिना स्पर्श किये तप्त प्लाज्मा इस के भीतर तेजी से दौड़ता रह सकता है । इस दिशा में अनुसंधान जारी है और आंशिक सफलताएँ भी मिल रही हैं ।

रूसी वैज्ञानिकों ने करोड़ों डिग्री तापमान पर प्लाज्मा को धारण कर सकने वाले संयंत्र प्रायोगिक स्तर पर तैयार किये हैं । उच्च तापमान वाले प्लाज्मा से सीधे बिजली प्राप्त होने की भी संभावना है । इस प्रक्रिया का और एक लाभ यह है कि इस में खतरनाक विकिरणों का उत्सर्जन नहीं होता ।

अतः जिस दिन प्लाज्मा पर नियंत्रण प्राप्त होगा और इस से बिजली पैदा होने लगेगी, उस दिन से हमारी सारी चिंताएं दूर हो जायेंगी । हम बता ही चुके हैं कि धरती पर पर्याप्त हाइड्रोजन है ।

प्रायः सभी भौतिकवेत्ता मानते हैं कि इस सदी के अंत तक तापनाभिकीय ऊर्जा पर पूर्ण रूप से अधिकार हो जायेगा । जिस दिन यह संभव होगा, वह इतिहास में एक महान दिन होगा ।

(४७|११, पूर्वी पटेलनगर, नयी दिल्ली-८)

पुलिस की भरती हो रही थी । एक उम्मीदवार से पूछा गया, "मान लो तुम पुलिस की गाड़ी में अकेले बैठे हो और अपराधियों की एक हिंसक टोली दूसरी कार में चालीस मील की गति से तुम्हारा पीछा कर रही है और सड़क बिलकुल सुनसान है तो तुम क्या करोगे ?"

उम्मीदवार ने हैरानी से प्रश्न करने वाले का मुख देखा और फिर बोला, "गति पचास मील कर दूंगा ।"

प्रवेश
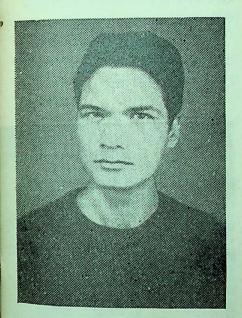
"जन्म—१४ मई, १९४६, एक ग्रामीण मध्यवर्गीय कृषक परिवार में। शिक्षा के नाम पर एक प्रमाण-पत्र है जिस में 'बी.ए. द्वितीय श्रेणी में उत्तीर्ण' लिखा गया है। लिखता बहुत रहा हूँ, मगर अभी है अप्रकाशित। साहित्य में उपलब्धि नगण्य है।"

सार्थकता

मेरी लँगड़ी और गूंगी बहिन की भांति
दिन भर यौवन के भार को
दहलीज पर खींचती रहती है
जिसे जब अवसर मिला
सीढ़ी चढ़ती मेरी पत्नी
उलाहनों से बेधती रहती है

—सुरेन्द्र प्रबुद्ध

(कक्ष-१३, कान्यकुब्ज छात्रावास, बैरन बाजार, रायपुर, म.प्र.)

'हम वे लाशें हैं, जिन की कब्रें खुली पड़ी रहती हैं...' फिल्म 'पाकीजा' का यह संवाद जिन लोगों ने सुना है वे जानते हैं कि उस संवाद के पीछे छिपी पीड़ा कितनी तीव्र है और उस तीव्र पीड़ा को कितनी स्वाभाविकता के साथ मीना-कुमारी ने परदे पर उभारा है।

शायद उस पीड़ा को उभारने, दर्शाने के लिए मीनाकुमारी को अभिनय नहीं करना पड़ा होगा। वह पीड़ा उस के अपने भीतर थी और यह संवाद एक तेज नश्तर की तरह उस के भीतर चुभा होगा और दर्दीली धुन के साथ खुद-ब-खुद फोड़ा फूट पड़ा होगा! भीतर खौलते रहे घाव की तरह!

'पाकीजा' की साहबजान को कितनी वेदना होती है, जब वह सब कुछ पचाये रखने की कोशिश करती है! और 'साहब बीबी गुलाम' की बहू क्या-क्या नहीं सहती!

साहबजान दूसरों के लिए नाचती-गाती, मुसकराती और थिरकती रहती है। धन और विलास की सामग्रियों से

● रामकुमार भ्रमर
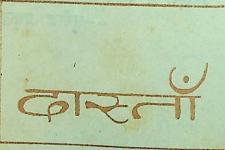
घिरी हुई, पर उस के भीतर लाचारी, सामाजिक बाध्यता और भावनाओं की जलन है...कौन समझ सकता है कि चमकते जिस्म और रौशन चेहरे के पीछे दर्द की कितनी गहरी अनजानी घाटियाँ हैं...मुसकराहटों में कितने आँसू घुले हुए हैं और अपवित्रता में कितनी पवित्रता है!

कोई नहीं जानता। जानता है तो स्वीकारता नहीं। स्वीकार ले तो मूक दर्शक बना रहता है। न सिर्फ यह बल्कि वह उस के घावों को छींटाकशियों से कुरेदता है। हर कुरेदन साहबजान की आँख से एक आँसू बन कर चुपचाप वह निकलती है...आह बन कर आसमानी ऊँचाइयों में गुम जाती है...

और सब कुछ ज्यों-का-त्यों! गति-शील लगता हुआ भी स्थिर!

मीनाकुमारी कितनी अलग थी साहबजान की स्थिति से! संदर्भ, पात्र और बदलाव होते हुए भी कितनी समान! किसी और रूप में, किसी और अर्थ में और किसी और तरह मीनाकुमारी ने अपने जीवन के आधे से अधिक वर्षों में वह सब झेला जो 'पाकीजा' की साहबजान ने झेला। अंतर था तो मात्र यह कि साहबजान का आत्मसंघर्ष जीत गया था और मीनाकुमारी हार गयी!

अब से लगभग नौ-दस वर्ष पूर्व की एक याद मेरे मन-मस्तिष्क में कौंधती है। 'बेनजीर' फिल्म की शूटिंग चल रही थी फिल्मिस्तान स्टूडियो में। मीना-कुमारी सेट पर जाने के लिए तैयार बैठी थी। जिन मित्र महोदय के साथ मैं शूटिंग देखने गया था उन्होंने परिचय करवाया।

चाँदनी की लकीर-जैसी शांत, स्निग्ध और चमकती हुई वह मुसकान मुझे अब
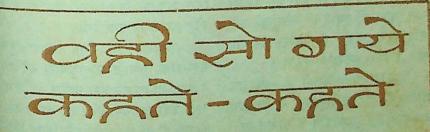
भी याद है। मीनाकुमारी ने अभिवादन का उत्तर दे कर इधर-उधर की बात शुरू की, "शूटिंग पहली बार देख रहे हैं ना?"

"जी।"

"कैसा लगता है आप को?"

"अजीब-सा। सब कुछ नकली। पर परदे पर पहुँच कर यह सब बिलकुल असली हो जाता है!"

चाँदनी की एक और लकीर, और तुरंत गंभीरता—जैसे सब कुछ पल भर में डूब गया हो, "कभी-कभी इस नकली के पीछे भी बहुत कुछ असली होता है। असली, फिर नकली, फिर असली।"

मैं चुप देखता रहता हूँ। मीना की आँखों में एक गहरी नदी तिर आयी है।

मीना पूछती है, "आप तो अदीब हैं। क्या ऐसा नहीं लगता कि जिंदगी में हम जो बाहर से हैं वह फिल्म की शूटिंग की तरह है। हमें वही करना होता है जो लोग चाहते हैं। हम वह नहीं कर सकते जो हम चाहते हैं। और तो और हम वह भी नहीं रहते जो हम हैं।" आँखों की नदी और गहरी हो गयी है। मैं उस की थाह पाने के लिए छटपटाता रहता हूँ।

...और थाह मिलती है तब जब शूटिंग के बाद मीनाकुमारी से देर तक बातें होती हैं। 'माहजबीन' से 'मीनाकुमारी' बनने तक की कहानी। कहानी के संयोग। संयोगों की दुर्घटनाएँ और दुर्घटनाओं में लगे घाव। और इस सारे दौर में मीनाकुमारी का जीवन और अभिनय-यात्रा।

"बहुत से अखबार और पत्रिकाएं लिखती रहती हैं कि आप बहुत पीती हैं," सहम के साथ मैं पूछता हूँ। देर की बात-चीत ने इतना पूछने का साहस जगा दिया है।

मीना मुसकराती है। यह मुसकान असामान्य है। विचित्र-सी भूलभुलैया। इसे सचमुच मुसकान कहूँ या कराह—तय नहीं कर पाता। वह कहती है, "लिखने पर पाबंदी नहीं है। पाबंदी है सिर्फ जीने पर। मेरा मतलब है कि आप को उसी तरह जीना चाहिए जिस तरह कि लोग आप को डायरेक्ट करें।"

बातचीत की वह शाम मैं कभी नहीं भूलूँगा। मीनाकुमारी में मधुरता और तल्खी एक साथ समायी हुई थी। हर शब्द नपा-तुला। हर वाक्य दर्शन की परत उजागर करता हुआ। हर मुसकान सौजन्य के बावजूद अपने आप से ऊबती हुई। मालूम ही नहीं हो पाता था कि वह कब, किस प्रश्न को किस तरह अपने आप से जोड़ कर उत्तर बना देगी।

बहरहाल उस दिन जितना कुछ सुना-जाना, उस से मीनाकुमारी मेरे मन में शरत की सरल-हृदया नायिका की तरह बहुत ऊँची उठ गयी थी। हर क्षण अंतर्द्वंद्व को पचाती हुई उस औरत ने कितने विष-घूँट पिये, इस का उदाहरण है उस की समूची जिंदगी। और शायद यही जिंदगी थी जिस ने उसे भारतीय फिल्माकाश की सर्वश्रेष्ठ नायिका के रूप में प्रतिष्ठित
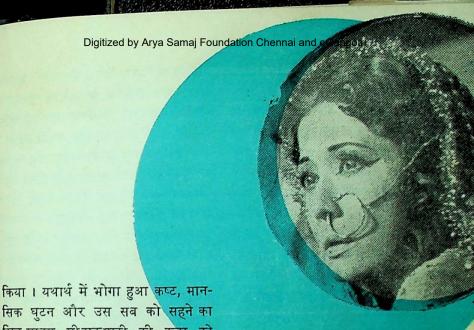
किया। यथार्थ में भोगा हुआ कष्ट, मानसिक घुटन और उस सब को सहने का शिव-साहस मीनाकुमारी की कला को ऊँचाई के चरम पर ले पहुँचा था। यही कारण था कि एक स्टंट फिल्म 'अलादीन और जादुई चिराग' में सर्वप्रथम नायिका रूप में प्रस्तुत हुई मीनाकुमारी बाद में सामाजिक फिल्मों की सर्वाधिक सफल अभिनेत्री बनी।

भारतीय नारी की सरलता, सहृदयता, लज्जा और करुणा का जितना सहज-स्वाभाविक अभिनय मीनाकुमारी ने किया है संभवतः उतना प्रभावशाली अभिनय और कोई अभिनेत्री नहीं कर सकी।

'बैजू बावरा' की अल्हड़, प्रेमल नायिका, 'परिणीता' की स्निग्ध, शांत बंगाली किशोरी, 'साहब बीबी गुलाम' की सामंती अत्याचार और रूढ़िवादी परंपरा की निष्ठुर यातनाएँ झेलती बहू, 'शारदा' की शारदा—गौरवशालिनी, ममतामयी भारतीय नारी!

एक ओर मीनाकुमारी कई-कई फिल्मों में कई-कई नारी-चरित्र निबाहती, दूसरी ओर वह निजी जीवन में क्रमशः चोटें, छल और कष्ट झेलती। मीना का वैवाहिक जीवन कभी सुखी नहीं रहा। पति कमाल अमरोही और मीना के बीच कब, क्या-क्या घटा, अब से बरसों पहले फिल्मी पत्र-पत्रिकाओं की सुर्खियों में छपा करता था। मीनाकुमारी ने पति से अलग हो कर क्रमशः अपने रिश्तेदारों की शरण ली और

वहाँ भी उसे कटु अनुभव ही हुए। ऐसे हर अनुभव ने उसे कुंठाओं की ओर धकेला। निराशा और अविश्वास के कुहरे में ढँक कर उस ने अपनों से दूर बिरानों की छाँह पानी चाही। जाने कितने नये चेहरों को परदे की दुनिया के दरवाजे खोले, जाने कितने चेहरों के साथ अपने पर टिप्पणियाँ झेलीं... पर व्यर्थ !

सब ओर अँधेरा। सब ओर छल। कभी किसी अपने की धन के लिए चापलूसी और कभी किसी बिराने का मीना को सीढ़ी बना लेना——मीना सब कुछ पा कर भी सारे जीवन खाली रही।

मीना को बच्चों से बहुत प्यार था। कहते हैं कि कई अनाथ बच्चों की पढ़ाई-लिखाई का उस ने अपने ऊपर भार ले रखा था। कई लोग कहते हैं कि वह किसी-किसी दिन को पूरी तरह अनाथालय के बच्चों के बीच बिता दिया करती थी।

क्या इतना ही सच था ? शायद नहीं। सच यह था कि मीनाकुमारी के भीतर माँ बनने की अतृप्त इच्छा बैठी हुई थी।

कैसा विरोधाभास ! फिल्मों में सुखी मातृत्व का जीवंत अभिनय करते हुए मीना के भीतर कितने जलजले उठते रहे होंगे ! कितनी शक्ति से उस ने अपने आप को ऐसे दृश्यों की शूटिंग के समय थामे रखा होगा ! और जब-जब वह माँ का पात्र बन कर किसी बेटे या बेटी के लिए बिलखी होगी——तब क्या सच ही अभिनय करना पड़ा होगा उसे ?

खामोशियों भरे मीना के कमरे में उस के पास सिर्फ उस के अहसास रहा करते थे और अहसासों की गवाह उस की साँसें——धीमे-धीमे चुप की ओर बढ़ती हुई।

इन चुप्पियों के बीच उस की चाहतें शूलों की तरह उसे चुभती रही होंगी और करीब ही खड़े रहे होंगे वे पात्र जिन्हें मीना ने स्वयं निबाहा था——दर्दभरी वे गजलें, हवा के हर झोंके के साथ उसे छूती रही होंगीं जिन्हें उस ने स्वयं ही शब्द और अर्थ दिये थे, जिन की लय थी वह स्वयं। उन मुशायरों की साँझें आज भी जिंदा हैं जिन्हें मीना की गजलों ने साँसें दीं।

मीनाकुमारी ने अनेक बार श्रेष्ठ अभिनय के लिए 'फिल्मफेयर पुरस्कार' लिये। 'परिणीता', 'बैजूबावरा', 'साहब बीबी गुलाम' और 'काजल' में उसे श्रेष्ठतम अभिनेत्री के रूप में पुरस्कृत किया गया। लोगों ने वाहवाहियाँ और सराहना की, लाखों घरों में उस के कैलेंडर जड़े गये, करोड़ों दर्शकों ने उस का अभिनय यादों में सँजो लिया....इस के बावजूद मीनाकुमारी रिक्त रही।

गंभीर आर्थिक स्थिति के परिवार में जन्म लेने के कारण मीना का बचपन कठोर संघर्ष में बीता। बहुत छोटी उम्र में ही उसे फिल्मों की सूरजमुखी रोशनी का सामना करना पड़ा। अपनी पहली फिल्म 'बच्चों का खेल' में मीना ने बड़ी कुशलता के साथ अपनी छोटी-सी भूमिका निबाह कर फिल्म-जगत के लोगों को आक-

षित कर लिया था और ज्यों ही नायिका के नाते वह फिल्मों में आयी उस ने अपने अविस्मरणीय अभिनय से जनमन जीत लिया। मीनाकुमारी को जो सम्मान और धन प्राप्त हुआ वह आज भी फिल्म-जगत में अकल्पित है। यह भी उतना ही सही है कि उस ने जो भोगा वह भी अकल्पित है।

बीस वर्ष से अधिक के अपने फिल्मी जीवन में मीनाकुमारी को यथार्थ के ऐसे क्रूर और कठोर सचों का सामना करना पड़ा जिन्होंने उसे क्रमशः तोड़ा। यही टूटन थी जिसे भूलने की कोशिश में वह घर से बाहर दूर-दूर तक किसी 'अपने' की तलाश करती रही या फिर नशे की शरण ले बैठी। अपने को भुलाने और भूल जाने के इस छलावे ने मीना के शरीर में रोगों को उत्पन्न किया और चालीस वर्ष की अल्पायु में ही ३१ मार्च, १९७२ को उस का देहांत हो गया।

किंतु अपूर्व साहस था उस में। अभिनय के समय अपनी पीड़ाओं पर वह बड़ी शक्ति से काबू करती थी। यही शक्ति थी जो उस से मिलनेवाले का मुसकान के साथ स्वागत करती थी। यही शक्ति थी जिस ने उस से कहलवाया था—

हँस-हँस के जवाँ दिल के हम क्यों न चुनें टुकड़े
हर शख्स की किस्मत में इनाम नहीं होता

मीना की किस्मत में इनाम नहीं था! पर बहुमुखी प्रतिभा की धनी मीना ने किन-किन को क्या-क्या इनाम दिये— समय प्रमाण है। किसी को अभिनय मिला, किसी ने ईमानदारी सीखी और किसी नये शायर ने एक सुलझी हुई शायरा की संगत पायी! जन्मतः कलाकार मीना न केवल परदे पर भावनाओं के बारीक क्षणों को उतारने में सफल हुई बल्कि उस ने उसी खूबी के साथ नज्मों को रचा। मीना ने दसियों मुशायरों को रौनक दी, और भावभरे शब्दों से अपनी अंतर-पीड़ा कही, सुनायी—

चाँद तन्हा है आसमाँ तन्हा
दिल मिला है कहाँ-कहाँ तन्हा
जिंदगी क्या इसी को कहते हैं
जिस्म तन्हा है और जाँ तन्हा

भावनामयी मीना के बारे में कहनेवाले कहते हैं कि यदि वह फिल्म-क्षेत्र में न गयी होती तो उर्दू की महान शायरा के रूप में लोग उसे पहचानते। मीनाकुमारी ने प्रारंभ में अपने उपनाम 'नाज' से कुछेक कहानियाँ भी लिखी थीं।

अपार ख्याति, सम्मान और वैभव के बावजूद सादगी और सरलता की निर्मल-धारा बन कर वह अपने प्रशंसकों और मिलनेवालों से निर्बंध भेंटती रही। दमन सह कर उस ने दया और क्षमा पर अपना विश्वास बनाये रखा और बड़ी ईमानदारी से कलाकार-जीवन निबाहा। वह उन में से थी जिन के लिए किसी शायर ने कहा है—

बड़े शौक से सुन रहा था जमाना
तुम्हीं सो गये दास्ताँ कहते-कहते

(७८/५६५२, रैगड़पुरा, करोलबाग,
नयी दिल्ली–५)

मेघों का देश : मेघालय

● डॉ. श्यामसिंह शशि

गारो सुंदरी का पति घर से निकला ही था कि वर्षा की रिमझिम शुरू हो गयी। बादल गरजने लगे, बिजली कड़कने लगी। आकाश और पर्वत मेघ के घर बन गये। वह पति को सचेत ही तो कर सकती थी किंतु रोके कैसे! एक दिन की बात हो तो रोक लिया जाये। यहां तो सभी मास सावन-भादों। सभी दिन बरखा-बहार—

मेरे प्रियतम
इस पगडंडी के मोड़ बड़े
तीखे हैं
टेढ़े हैं
मेघों में लिपटे हैं
मेघों से चिमटे हैं
इसलिए
इस राह पर मत चलो
क्योंकि यहां गिरने का भय है
वर्षा के जल से आपूरित
नद-नालों में लुढ़कने का भय है।

(मेघालय का एक लोकगीत)

यह प्रदेश है मेघालय— सचमुच मेघ का प्रदेश या सावन-भादों का देश! संसार का सर्वाधिक जल-वृष्टि वाला स्थान चेरापूंजी इसी प्रदेश में है। १९६१ में यहाँ ९०५ इंच वार्षिक जलवृष्टि हुई।

मेघालय पहले असम का ही एक भाग था किंतु बाद में वह एक स्वतंत्र राज्य बन गया। यहां मुख्य रूप से गारो, खासी तथा मिकिर जनजातियां पायी जाती हैं। कहीं-कहीं नगाओं के समूह भी 'हो-हो' करते नजर आ जाते हैं। इस प्रदेश के बारे में एक रोचक कहावत है। कहते हैं कि जब कोई इस प्रदेश में पहली बार आता है तो वह यहाँ के निश्छल सौंदर्य

तथा प्राकृतिक छटा पर मोहित हो जाता है। दूसरी बार वह यहाँ आता है तो यहाँ का जन-जीवन उसे इतना आकर्षित करता है कि वह स्वतः इस प्रदेश से प्यार करने लग जाता है। तीसरी बार आने पर तो वह यहाँ इतना घुल-मिल जाता है कि जाने का नाम ही नहीं लेता। शायद यही कारण था कि समय-समय पर तिब्बत, बर्मा, स्याम तथा अन्य सीमांत प्रदेशों से लोग उस प्रदेश में आये किंतु लौट कर नहीं गये। कामरूप का जादू तो इंद्रजाल-जैसे तंत्रों का मूलाधार ही बन गया था। यहाँ के सौंदर्य में कुछ ऐसा जादू है कि वह अजनबी पथिकों को बरबस अपनी ओर खींच लेता है।

मंगोलों की भाँति गारो जनजाति छोटे कद की होती है। उन्नत कपोल, चपटी नाक, नन्ही आँखें, गौर वर्ण, चुस्त
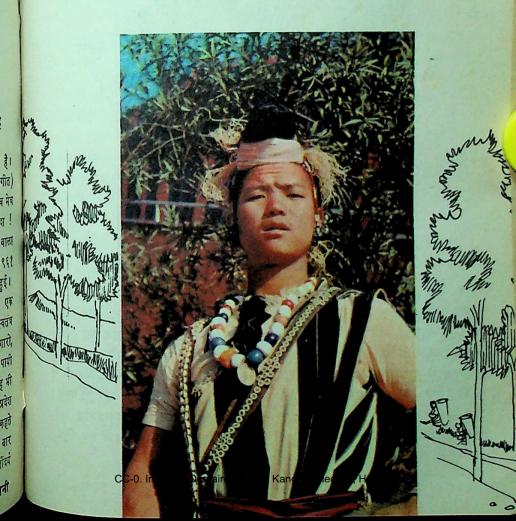
शरीर—यह है यहाँ के निवासियों का आकार-प्रकार। कुछ यूरोपीय इतिहासकारों के अनुसार यहाँ आदिवासियों में सिर के शिकार की प्रथा थी। संभवतः नगा जनजाति से यह प्रथा अन्य जन-जातियों में भी पहुँची होगी। नगाओं में जिस के पास जितनी अधिक खोपड़ियाँ होतीं वह उतना ही धनवान माना जाता था।

गारो जनजाति में 'युवा गृह' भी होते हैं जिन में लड़के-लड़कियों को स्वतंत्र वार्त्तालाप का अवसर दिया जाता है। वे उन पर किसी प्रकार का बंधन लगाना उचित नहीं समझते। लेकिन मध्य प्रदेश के 'घोटुल' की अपेक्षा ये 'युवा गृह' अधिक विकसित नहीं हो पाये। हाँ, प्रणय का उन्मुक्त आदान-प्रदान अब अँगरेजी शिक्षा के कारण दूसरा रूप लेता जा रहा है।

यों तो गारो लोगों में एक पत्नी-प्रथा है किंतु कुछ लोग एक से अधिक पत्नियों वाले भी हैं। गारो युवक विवाह होते ही अपने माँ-बाप का घर छोड़ देता है और पत्नी के गाँव में बस जाता है। किसी पितृ-सत्तात्मक परिवार में जब दुल्हन पिया के देश जाती है तो उस के माँ-बाप आँसुओं से भीग जाते हैं।

गारो और खासी जनजातियाँ मातृ-सत्तात्मक परंपरा की अनुयायी हैं। इन जातियों में पिता सामान्यतया बाहरी व्यक्ति होता है। यहाँ संपत्ति लड़के के नाम नहीं बल्कि लड़की के नाम होती है। घर में बड़ी लड़की ही अधिकारिणी होती है। उसे यहाँ की भाषा में 'नोकना' की संज्ञा से विभूषित किया जाता है। लेकिन यदि परिवार में कोई लड़की नहीं होती तो किसी अन्य बहिन की लड़की को गोद ले लिया जाता है। वहाँ लड़के की अपेक्षा लड़की के जन्म पर अधिक खुशियाँ मनायी जाती हैं। अब आप स्वयं सोचिये कि वर के विदा होने पर पिता के अतिरिक्त और कौन रोता-धोता होगा।

अपहरण-विवाह भी मेघालय की जनजातियों में होते हैं। 'युवागृहों' के अतिरिक्त लड़के-लड़कियों को जंगलों और खेतों में भी घनिष्ठ संबंध बढ़ाने के अनेक अवसर मिलते हैं। परिणामस्वरूप वे स्वेच्छा से विवाह कर लेते हैं। लड़का लड़की को ले कर अपने गाँव से भाग जाता है और अन्यत्र जा कर विवाह कर लेता है। यदि लड़की गर्भवती हो जाती है तो वे जल्दी ही उस गाँव को छोड़ कर दूसरे गाँव में बस जाते हैं। अपने गोत्र में विवाह-संबंध करना निषिद्ध है। शादी का प्रस्ताव लड़की करती है। नातेदारी के संबंध भी महिलाओं द्वारा ही तय किये जाते हैं।

इस के विपरीत 'मिकिर' जनजाति पितृ-सत्तात्मक होती है। कितना आश्चर्य है कि पहाड़ी के इस पार लड़की संपत्ति की अधिकारिणी है किंतु उस तरफ लड़का ही अपने खेत का मालिक होता है! वहाँ संपत्ति का विभाजन लड़कियों में नहीं होगा बल्कि लड़के ही सारी धन-दौलत के अधिकारी होंगे। वहाँ लड़कियाँ गोद नहीं ली जातीं, लड़कों को ऊँचा स्थान मिलता है। मिकिर एक पत्नी-प्रथा का पालन करते हैं। तलाक भी कम होता है।

आज अधिकांश गारो ईसाई बन चुके हैं। रोमन कैथोलिकों तथा अमरीकी मिशनरियों के अनवरत प्रचार से यहाँ का आदिवासी समाज अपने देवी-देवताओं की अपेक्षा ईसामसीह को ही अपना जनक मानने लगा है। मिकिर लोगों में अभी भी जादू-टोना काफी है। उन का खयाल है कि कुछ स्त्रियाँ जादूगरनी बन जाती हैं और जिसे चाहें मार डालती हैं।

(एच-४६, साउथ एक्सटेंशन, भाग-१, नयी दिल्ली-३)

● सतीशचन्द्र चतुर्वेदी

पंडित हृषिकेश चतुर्वेदी हास्यरस के तो प्रसिद्ध कवि थे ही, साथ ही चमत्कार काव्य के समर्थ कवि भी थे। चमत्कारों से पाठक स्तंभित भी रह जाता है और कई बार उस से गुदगुदी भी आने लगती है। चतुर्वेदीजी का शब्दों पर बड़ा अधिकार था। 'श्रीराम कृष्ण काव्य' हिंदी में अपने ढंग का ही काव्य है। यह दोनों ओर से पढ़ा जा सकता है। एक ओर से श्रीराम का इतिवृत्त और दूसरी ओर से इतिहास-क्रम में श्रीकृष्ण का जीवन। यहाँ एक पंक्ति प्रस्तुत है—

रामा हरें कष्टइ तीव्र धारा

दूसरी ओर से श्रीकृष्ण-पक्ष में इसे यों पढ़ा जायेगा—

राधाव्रती इष्ट करें हमारा

दूसरा काव्य है 'श्रीरामकृष्णायन'। इस में एक-एक पंक्ति के दो अर्थ एक ही ओर से निकलते हैं। एक बार में श्रीराम का और दूसरी बार में श्रीकृष्ण का इतिवृत्त। यह पुस्तक यमक-श्लेष युक्त है। चमत्कारिक कलाबाजियाँ हँसाये बिना नहीं रहतीं, शर्त है कि बिना होंठ लगे दोहा पढ़ा जाये—

नन्द-नंदन ! आनंद घन ! सील सनेह निधान
नारायण ! नटराज ! जय, नर, नायक रस-खान

अब दूसरा दोहा है जिसे पढ़ने पर प्रत्येक अक्षर पर होंठ-से-होंठ लगेंगे—

पावें प्रेमी प्रेम में भुविविभु-वैभव-भाव
विप्लव-विभ्रम में भ्रमें, पापी पाप-प्रभाव

चतुर्वेदीजी ने सोचा कि एक ही अक्षर से दोहा बनना चाहिए और उन्होंने बनाया—

सेसेसै, संसैं स-ससि, सो सासीस ससीस
सेसै, साँसैं सास सो, साँसै-साँसै सीस

चतुर्वेदीजी के पद्य का एक चरण यहाँ प्रस्तुत है जिस में प्रत्येक अक्षर मात्रा-युक्त है—

है सो अंतः पूज्य ऋषी-साधुनि केरो

चतुर्वेदीजी ने निश्चय किया कि

कोई ऐसी कविता लिखी जाये जिस में संयुक्ताक्षर ही न हों अतः उन्होंने एक कवित्त लिखा—

नटवर नटखट झगरत झपटत
झपत न मन झटपट पट झटकत
अचक अरत, अकरत, पकरत कर
करत न डर बरबस घट पटकत
नव-नव छल-बल रचत अनवरत
अटपट वचन कहत, मग मटकत
अटकत अबलन सन पनघट पर
डटत; करत हठ; हटत न हटकत

'स' को 'फ' बोलने वाले तथा तुतला कर बोलने वाले एक सज्जन के लिए चतुर्वेदीजी ने गद्यात्मक पंक्ति लिख दी और उन से पढ़वाया—

कैलास के रास्ते में सड़क के किनारे सेठ सूरजभान का फाटक, सोंठ की मण्डी और सिकन्दरा है।

चतुर्वेदीजी ने एक चित्रात्मक-पत्र लिखा जिस में पूरे पत्र में चित्र ही हैं। चित्रों के नामों का उच्चारण करने पर पत्र के शब्द और उस का मनोरंजक मैटर बन जाता है।

उन की एक प्रसिद्ध हास्य कविता है, 'लाला-लीला'। 'लाला-लीला' कविता का एक छंद उन्होंने लिखा 'अनुपम सेठजी', अर्थात दूसरा अर्थ हुआ जिस में ड, प, म अक्षर न हों। साथ ही उ की मात्रा न हो—

सरग, नरक, दस-दिसि, छिति गगनहिं
नहिं, लखियत इन-सरिस इतर जन
निज लगनहिं रत रहत सतत इहँ
जिनहिं न रति जग-हित-अनहित सन
अघ-गन-गरत गिरत नर-तन लहि
गहत न इक छन कहँ हरि-चरनन
असत 'असित' निसि-दिन निधरक करि
धरत धरनि नित-नित अगनित धन

चतुर्वेदीजी शब्दों की कला-बाजियाँ ही नहीं दिखाते थे, उन की दृष्टि राजनीतिक स्थिति का भी ज्ञान रखती थी। उन दिनों जब चीन की दृष्टि भारत पर आक्रमण की बनती जा रही थी तब उन्होंने एक पंक्ति लिखी जो दोनों ओर से पढ़ी जा सकती है और एक ही बात कहती है—

लगै चीनी की नीची गैल

बात-में-से बात निकालना, शब्दों और अक्षरों के सीधे और तोड़ कर दोनों प्रकार के अर्थों से चमत्कार उत्पन्न करना और विलोम अर्थ निकाल देना उन की शाब्दिक कला-बाजियाँ थीं। इस प्रकार उन्होंने लगभग चार सौ चुटकुले तैयार किये। राग-रागनियों के शुद्ध अर्थ उन्होंने किये और संगीत की सरगम से चमत्कारिक छेड़छाड़ भी। उन्होंने कहा—सा, रे, गा और इस का उल्टा पढ़िये 'गा, सा रे'। भला, किसे हँसी नहीं आयेगी!

(चौबेजी का कटरा, किनारी बाजार, आगरा)

"मैं कंगाल हो गया दोस्त!"
"बधाई हो, लड़का या लड़की?"

ढाँचे

• शशिप्रभा शास्त्री
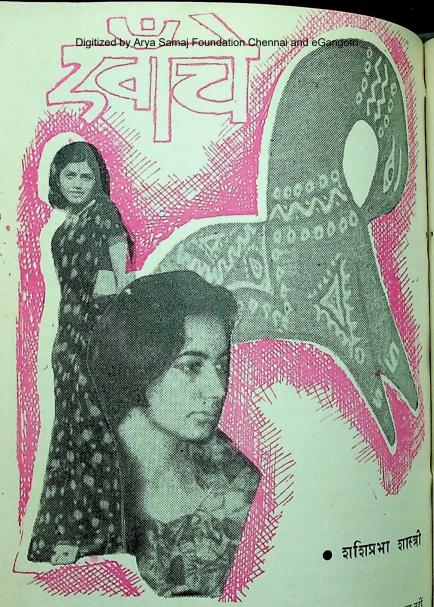
धड़ाके-से दरवाजा खुला तो चिलचिलाती धूप की चमक ने आँखों को चौंधिया दिया। बड़ी मुश्किल से झपकी आयी थी, सिर भन्ना उठा। चौंधियायी आँखों से देखा—अचला छत पर गयी है।

कैसी है यह लड़की! जरा ध्यान नहीं किया कि कमरे में सीतल-पाटी पर मौसी सो रही हैं अतः धीरे-से दरवाजा खोल कर निकल जाये। यह तो तब है जब इसे मालूम था कि मौसी सिरदर्द की शिका-

यत करके सोयी है...आँखें खुलीं तो खुली रहीं और उन में तिर गयी मृणाल--

'तू कब आयी ? यह तू ने डाला है मेरे ऊपर ?' कंबल के बोझ को पीठ पर अनुभव करते हुए मंजुला ने पूछा था।

'तख्त पर यों ही पड़ी थीं। सोचा जाड़ा लग रहा होगा !'

'हाँ, मशीन चलाते-चलाते थक कर जरा लेट गयी थी,' मंजुला के प्रत्युत्तर में मृणाल की ओर से कोई जवाब नहीं था। बस उस के पहले कहे हुए दो छोटे-छोटे वाक्य, न किसी प्रकार की औपचारिकता, न अपने आने-जाने के संबंध में किसी प्रकार का स्पष्टीकरण। दोनों हाथों में अभी तक पत्रिका ज्यों-की-त्यों थी। सामने मूढ़े पर बैठी मृणाल ने उत्तर देने के लिए गरदन घुमाने की आवश्यकता भी नहीं समझी। पर उस दिन मृणाल का संवेदन एक धुंधली सर्द शाम को उस के द्वारा डाले कंबल की वह गरम गरमाहट, इस भयंकर गरमी में भी मंजुला को शीतल-पेय का आनंद दे रही थी।

सामने खुले चौड़े दरवाजे से धूप कमरे में भरी चली आ रही थी। बड़ी मुश्किल से सारी चीजें समेट कर लेटी थी। महिला-सभा की संचालिका और अध्यक्षा श्रीमती रमाबाई सभा के अगले कार्यक्रमों पर विचार करने के लिए प्रबंध-कारिणा समिति की सदस्याओं के साथ आज घर ही आ गयी थीं।

'शनिवार के दिन अचला जल्दी लौटती है, उसी दिन रख लें !' श्रीमती रमाबाई ने खुद प्रस्ताव रखा था।

'ओह, इसीलिए शनिवार के दिन मंजुला' दी ने हामी भर ली थी, अब समझे ! आज मौसी-भानजी लगी रही होंगी। इतने सारे व्यंजन तैयार करना एक अकेले के वश की नहीं,' सदस्यों ने मेज पर सजे सुमधुर व्यंजन देख कर टीका की थी।

काश, अचला भी इतना समझती ! काश, वे सब यह जानतीं कि यह आडंबर, इतने सारे व्यंजन, इस अकेले इंसान ने ही जुटाये हैं... अचला तो बैंक से जल्दी लौट कर भी पूरे समय आज अपने कपड़ों की आलमारी ही ठीक करती रही थी। सब से सब कुछ कहना मुश्किल होता है और फिर घर की बातें बाहर के व्यक्ति से कहना ठीक भी तो नहीं। रमाबाई ने ढेरों बातें पूछी थीं।

'जी हाँ, बहिन की ही बेटी है, पूना से आयी है। उधर जीजा का परिवार बहुत बड़ा है। अचला के लिए उधर नौकरी ढूँढ़ पाना जीजा के बूते की बात न थी। इधर शहर बड़ा है और कुछ अपने रसूख भी हैं। इसलिए बैंक में नौकरी लगवायी है। कुछ दिन काम करेगी तो कुछ रुपया जुड़ जायेगा। खर्च तो कुछ है नहीं। फिर यहाँ रहेगी तो हम लोग शादी-विवाह का ध्यान भी रखेंगे ही ...'

'रमा बहिन, आप से सच कहूँ ! शादी के बाद मीना पति के साथ इंग्लैंड

चली गयी। शुरू में तो मैं बहुत घबरायी थी, पागल-सी हो गयी थी। उन्हीं दिनों आप की सभा की सदस्या बनी थी। बाद में मैं ने अपने को अकेलेपन का काफी अभ्यस्त बना लिया था। बहिन ने अचला के बारे में लिखा तो सोचना पड़ा...'

रमाबाई से कुछ उंड़ेल कर भी वह मुक्त कहाँ हो पायी थी! और सब कुछ उस ने उंड़ेला भी कहाँ था! कैसे कह देती कि अचला मीना की रिक्तता को नहीं भर पायी है और मृणाल की रिक्तता? नहीं, मृणाल की रिक्तता तो सब से अलग है। मीना के होते भी मृणाल ने अपने लिए एक पृथक सुरक्षित स्थान स्वयं ही बना लिया था। अचला को उस दिन मृणाल की बात सुनायी थी पर सुन कर भी अचला कहाँ सुन पायी थी?

सो कर उठी तो घर में सन्नाटा था। अचला के कमरे में जाकर देखा—वह तख्त पर पड़ी सो रही थी। पढ़ते-पढ़ते सो गयी होगी। बेतुके ढंग से खुली हुई पत्रिका सिर के नीचे दबी पड़ी थी। पत्रिका के मुड़े पन्नों को बराबर करते हुए मंजुला के मस्तिष्क का जैसे किसी ने खट्ट से बटन दबा दिया हो—एक बीता हुआ दिन याद आ पड़ा—

'आज इस मेगजीन में टीकोजी बनाने का बहुत सुंदर छपा है।'

'देखूँ!' मृणाल ने कहा। फिर पत्रिका उठा कर बोली, 'सुंदर है, मंजुला 'दी मैं बनाऊँगी।'

कुछ रुक कर मृणाल ने कहा, 'और यह सलाद सजाने का तरीका आप ने देखा! मन कर रहा है कि इसी तरह का सलाद सजा कर सामने रख लो और उसे कभी तितर-बितर न होने दें।' कलात्मक सौंदर्य की बारीकी के प्रति मृणाल का सहज आकर्षण उसे बहुत भला लगा था।

"अचला तू कब उठी! जा जरा दो आलू मुझे ला कर दे दे। आलू-मेथी की सब्जी और बना लें!"

अचला ने आलू ला कर दिये।

पनीर के छोटे टुकड़े किये, सब्जी के लिए पनीर के टुकड़े तले जा चुके, तब कहीं अचला आ कर खड़ी हुई, "बताओ मौसी क्या करूँ?"

'क्या करूँ?' दो नन्हें-नन्हें शब्द जैसे अनुत्साह के बड़े-बड़े पहाड़ों के बोझ से दरके जा रहे हों। घर में मेहमान आये हैं, पर कोई तत्परता नहीं दीखती! बैंक में क्या इतनी थक जाती है? पर अपनत्व प्रदर्शित करने के लिए क्या खाली बैठ कर शक्ति अर्जित करने की आवश्यकता होती है? मृणाल भी तो आफिस जाती थी। ऊंह, मृणाल से अब क्या लेना-देना। उस ने अचला को क्या मृणाल को पालने की संभावना से ही आमंत्रित किया है? अचला तो उस की अपनी बेटी है, उस का अपना रक्त! बहिन और उस में कोई अंतर है क्या? अचला उसे मीना से कम

प्यारी नहीं । बेटी के प्यार को फिर से दोहराने का उसे मौका मिला था, उस ने उसे छोड़ना नहीं चाहा, बस यही ! बहिन-जीजा के साथ नेकी करने की बात तो उस के मन में बाद में आयी थी । उस की अपनी बेटी काम में हिल-मिल कर उस का हाथ नहीं बँटाती, तब वह क्या करती ? समझाती-बुझाती, किन्हीं मौकों पर उस की कई बातों को यों ही टाल जाती । गलती उसी की है। अचला उस में शायद 'माँ' को नहीं पा सकी है तभी ! माँ का सूखा हाथ भी बच्चे को लहलहाये रखता है।

"अंदाज से परोसना, फिर माँगें तो और दे देना; सवेरे की चीजें भी रखी हैं । दही-बड़ों की प्लेट आलमारी में से निकाल लो, हुँ . . !" अचला चुपचाप प्लेटें निकाल लायी थी । सब कुछ सजा कर अचला थालियाँ ले गयी तो मंजुला को अच्छा लगा । घर में लड़की है तो कितना सहारा है, चलो अच्छा है . . .

कुछ टूटा ! तत्काल ही खन्न से कोई आवाज आयी तो मंजुला चौंकी । कमरे में गयी तो अचला प्लेट के टुकड़े बटोर रही थी ।

"मौसा ने दही-बड़े की प्लेट थाली से निकाल दी थी ।"

"तू ला रही थी, हाथ से छूट गयी ?"

अचला टुकड़े बटोरती रही थी ।

"तुम्हें मालूम है, मैं शाम को दही नहीं खाता !"

"सुनो काँच बटोरने के लिए कपड़े को गीला कर लो और सँभाल कर उठाओ । हाथ में काँच न लग जाये ।"

उस रात सब काम निबटाने के बाद मंजुला को काँच उठाना पड़ा था । अचला के द्वारा समेट लेने के बाद भी काँच कोनों और दरवाजों की दहलीज की संदों में घुसा हुआ था ।

"फूहड़ कहीं की !" मंजुला ने कहना चाहा था, फिर बचा गयी थी । लड़कियाँ क्या सब काम पेट से सीख कर निकलती हैं ! पढ़ने-लिखने में लगी रही, इसीलिए अभी कुछ नहीं सीख पायी । माँ तो कितनी होशियार है । चलो अब सीख लेगी ।

सचमुच सवेरे मंजुला को कुछ भी सोचने का मौका नहीं मिला । श्रीमती रमाबाई ने सुबह ही कहला भेजा कि दस बजे तैयार रहना । दिनभर के लिए बाहर चलना है । कहाँ, क्यों, कैसे ? इस चलने के आदेश के संबंध में वह आने वाले से कुछ जान ही नहीं पायी । श्रीमती रमाबाई ने ही दस बजे घर आ कर बताया कि नासिक से एक पूर्व सदस्या बहिन का पत्र आया है । शाम तक नहीं पहुँचे तो कुछ भी हो सकता है । जा कर ही पता लगेगा, आखिर सही बात क्या है !

मंजुला को जाना पड़ा ।

बाहर जा कर सचमुच उस का मस्तिष्क कुछ स्थिर हुआ । अचला के प्रति

वात्सल्य-भाव ने फिर तरंग ली। लौटते हुए वह अचला के लिए मीनाकारी किये मोतियों की एक माला खरीद लायी। माला सुंदर थी। अचला को देख कर प्रसन्न होना चाहिए था, किंतु मौसी से माला ले कर उस ने कार्निस पर रख दी और अपने कामों में उलझ गयी। जैसे यह एक संस्कार था, जिसे औपचारिक रूप से दोनों को पूरा कर लेना था। जिस के लिए किसी संवाद-संभाषण या उल्लास की आवश्यकता नहीं थी। मंजुला को विचित्र लगा। वह बड़े उत्साह से अनेक मालाओं में से चुन कर लायी थी। किंतु अचला ने जब उसे यों ही एक निरर्थक वस्तु की तरह कार्निस के कोने को सौंप दिया तो उस से रहा नहीं गया पूछा, "क्यों, माला अच्छी नहीं लगी?"

"ठीक है" स्वर में तटस्थता थी। यदि मंजुला का प्रश्न नकारात्मक न हो कर समर्थन स्वरूप प्रस्तुत किया गया होता तो भी अचला के स्वर में कोई अंतर नहीं आना था। बड़े मन से उस ने अचला के लिए चीज खरीदी थी।

क्या सचमुच अचला इतनी शुष्क है या अपनी आदत से ही लाचार है। या यह मंजुला की आँखों का ही दोष है कि अचला के हर कृत्य में वह दोष पाती है?

मंजुला सोचने लगी—अभाव क्या व्यक्ति को एकदम सपाट बना देते हैं—शुष्क, तटस्थ! पर मृणाल में यह सब न था। हमेशा उन्मुक्त हँसी, तनिक-तनिक-सी बात पर उल्लसित हो उठने वाली आँखें, नन्हा सा स्नेहसिक्त उपहार पाने पर कली-सी खिल उठने वाली दंत-पंक्ति, पूरी तरह निरीक्षण-परीक्षण कर महत्त्वपूर्ण ढंग से उस को संचित कर लेने की बालभावना। नहीं नहीं, मृणाल मृणाल ही थी—मंजुला 'दी की तारीफ, मंजुला 'दी की लायी हुई चीज की तारीफ, मृणाल हमेशा मंजुला 'दी के लिए एक संकोचपूर्ण स्थिति उत्पन्न कर देती थी। अचला अच्छी है, छोटी-छोटी बातों को व्यर्थ का तूल देने की जरूरत नहीं समझती। तब उस के मस्तिष्क में यह मंथन क्यों चल रहा है? वह इतना क्यों चाहती है कि उस के पास रहने वाला व्यक्ति उस से खुले, उस से कुछ कहे। तभी सहदेव ने उसे पुकार लिया, "इधर सुनो! आज तुम्हारे जाने के बाद यह खत इंदौर से आया है, मेहता का। उस ने अचला के लिए दो लड़कों के संबंध में लिखा है कि मैं चाहूं तो देख जाऊं।"

थोड़ी देर के लिए मंजुला धक्क्-सी खड़ी रह गयी, फिर अपने को समेट कर बोली, "चले जाओ, अच्छा ही है। आखिर लड़की का ठिकाना तो करना ही है। जीजा को तार दे दो कि वे भी साथ चले जायेंगे। सोच-विचार कर ही करना है सब कुछ," सहदेव ने स्वीकार कर लिया।

समझौते के बाद कमरे में लौटी तो अचला कोई पत्रिका देख रही थी। मंजुला भी साथ लगे अपने बिस्तर पर लेटी तो बोली, "मौसी!" अचला का सुमधुर स्वर! मंजुला चौंकी।

"हूँ!"

"मैं बुधवार को घर जा रही हूँ, दो दिन के लिए बैंक की छुट्टी है। मैं ने दादू को लिख दिया है।"

"लिख दिया है तो ठीक ही है फिर क्या कहना सुनना!" मंजुला ने करवट ले ली। हृदय में एक गहरा दर्द जगा—माँ-बाप के प्रति इतना ममत्व कि जिन के पास रह रही है, उन से भी कहने-सुनने की कोई जरूरत महसूस नहीं की! उसे मीना का स्मरण हुआ। शुरू-शुरू में मीना ससुराल से लौटती थी तो वह ललक कर पूछती थी, "माँ-अप्पा किसी की भी याद नहीं आती तुझे? इतने-इतने दिन लगा देती है!"

मीना उसे डपट देती थी, "तुम कैसी पागल हो माँ! मैं तुम्हें ही याद करती रहूँगी! तुम्हारे ही प्रति अपनी प्रीति दर्शाती रहूँगी, तो वहाँ मुझे कौन पसंद करेगा?" मीना उस से अधिक समझदार थी और अचला ने भी क्या बुरा किया? मन की भावनाओं को वह क्या मौसी से ही छिपाने लगेगी? फिर वह स्वयं अचला से सब कुछ क्यों नहीं कह पाती? अपने ही व्यक्ति से सब कुछ कह पाना क्या सचमुच इतना मुश्किल होता है?

विदा की वेला! अचला एक-एक के गले से जुड़ती चली जा रही थी। क्या इस अवसर पर नातेदारों से पृथक होने की पीड़ा लड़की को इतना ही सालती है? इतने बरस हो गये... सब कुछ भूल गयी है वह। सगी मौसी की आँखें तनिक भी गीली नहीं! गृहस्थी के अलाव में क्या सब-कुछ झुलस गया! पर अचला तो उस के पास रही है। उस के सुख-सौभाग्य का पूरा सरंजाम उस ने ही जुटाया है। अचला को छू कर क्या वह यों ही सूखी-सी हट जायेगी?

अचला उस से जुड़ी खड़ी है, "सुखी रहो बेटी!" उस के होंठ फुसफुसा रहे हैं। अचला का नन्हा स्पर्श, एक हल्की-सी सिहरन, उस से मृणाल जुड़ी खड़ी है। मृणाल के लिए किसी ने कुछ भी व्यय नहीं किया था, न सापै, न श्रम, न समय! मृणाल खुद ही चुन ली गयी थी। फर्म के छोटे मैनेजर ने अपने बड़े बेटे के लिए मृणाल को उस की माँ से खुद माँग लिया था ... और मंजुला फूट कर रो उठी। इधर-उधर खड़ी स्त्रियाँ अचला के चले जाने पर भी बहुत देर तक उसे पानी पिला कर पंखा झल कर होश में लाती रही थीं, "अपने पास रखने की ममता माँ से कम थोड़ी होती है! आखिर मौसी है, अपना खून! खून-से-खून अलग होगा तो उबाल खायेगा ही!" आसपास खड़ी औरतों के हृदय को जैसे किसी ने स्पंज की तरह निचोड़ दिया हो। सारा रक्त रिस कर नीचे ही नीचे बह निकला हो।

स्नेह-ममता के लिए नाते-रिश्तेदारी के ये खाँचे आखिर क्यों? वह सोच रही थी।

(३–६ भगवान नगर, देहरादून)

● रामनारायण अग्रवाल

द्वारका

पुराणों में द्वारका के जो भव्य वर्णन हैं उन्हें बचपन में ही पढ़ लेने के कारण हमें भी इस पवित्र धाम के दर्शनों की बड़ी उत्सुकता थी।

सहस्रों वर्ष बीत जाने के बाद यह आशा नहीं की जा सकती थी कि द्वारका अब भी कोई बहुत बड़ी नगरी होगी पर हमारी धारणा यह अवश्य थी कि द्वारका की विशालता उस के पुरातत्त्वीय अवशेषों के रूप में अवश्य ही महिमामंडित होगी। भारत के पश्चिमी छोर पर स्थित द्वारका, उन चार धामों में मानी जाती है। पर दो दिन की थकान से
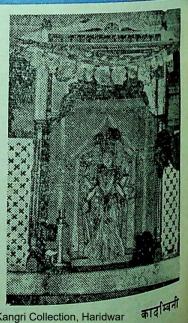
चूर लंबी यात्रा करने के उपरांत जब हम द्वारका स्टेशन पर उतर कर वहाँ से भगवान कृष्ण की इस राजनगरी की ओर ताँगे में बैठ कर बढ़े तो हमें यह देख कर आश्चर्य हुआ कि वर्तमान द्वारका में अधिकांश छोटे-छोटे मकान थे और उन में सर्वत्र छत के स्थान पर खपरैल पड़े थे। द्वारका की पूरी बस्ती में हमें एक भी ऐसा पुरातन भवन देखने को नहीं मिला जो उस के प्राचीन गौरव या वास्तुकला का कोई प्रतिनिधित्व करता हो। वहाँ मथुरा, काशी या अयोध्या की भाँति ऐसे प्राचीन खंडहर भी देखने में नहीं आये जो इस गाँव को सौराष्ट्र के अन्य गाँवों या कस्बों

बायें पृष्ठ पर (ऊपर)
द्वारकाधीश की मूर्ति
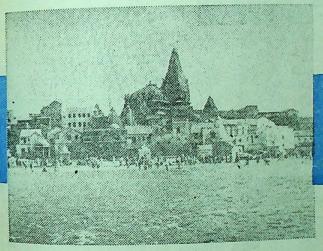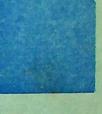
बायें पृष्ठ पर (नीचे)
रुक्मणीजी की मूर्ति

(इस पृष्ठ पर) वर्तमान
द्वारकापुरी

से प्रथक किसी विशेष परिवेश में प्रस्तुत करते हों। बस्ती में धार्मिकता का वातावरण, धर्मशालाओं की अधिकता, एक कीर्तन-भवन तथा कुछ दुकानों पर सजे द्वारकाधीश के प्लास्टिक आदि के मॉडल तथा भगवान के विभिन्न आकार-प्रकार के चित्र ही हमें इस नगरी को द्वारका मान लेने के लिए बाध्य कर रहे थे।

एक धर्मशाला में ठहर जाने के बाद जब हम ने यहाँ के निवासियों से कुछ
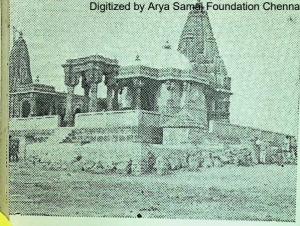
द्वारका से दूर निर्जन में रुक्मणी - मंदिर

अधिक जिज्ञासा प्रगट की तो हमें नगरी की एक ही विशेषता बतलायी गयी और वह यह कि यहाँ चार-पाँच मील तक मीठे जल का सर्वथा अभाव है। इसी कारण यहाँ की भूमि पर कोई फसल तो दूर, साग-भाजी तक नहीं उग पाती। सब्जी तक जामनगर से आती है।

मीठे जल के अभाव की गाथा रुक्मणि के मंदिर में, जो द्वारकाधीश के मंदिर से लगभग ३ मील दूर एकांत में है, अब भित्ति चित्रों पर भी अंकित कर दी गयी है। रुक्मणि का यह मंदिर द्वारकाधीश मंदिर की अपेक्षा छोटा अवश्य है, पर है द्वारकाधीश मंदिर के समकालीन ही। मंदिर के व्यय की कोई स्थायी व्यवस्था न होने के कारण यह केवल यात्रियों की दान-दक्षिणा पर ही आधारित है।

द्वारकाधीश का यह मंदिर कब और किस के द्वारा बनवाया गया इस का कोई प्रामाणिक विवरण हमें वहाँ उपलब्ध नहीं हो सका।

द्वारकाधीश का प्राचीन मूल मंदिर बलुआ पीले पत्थर से निर्मित है। बाद में मंदिर का विस्तार होता रहा और अब उस की पूरी चारदीवारी को दो द्वारों के निर्माण द्वारा घेर कर एकाकार कर दिया गया है। इन में से एक द्वार बस्ती की ओर है और दूसरा गोमती-तट की ओर। इन द्वारों को 'स्वर्ग द्वार' और 'मोक्ष द्वार' कहा जाता है।

द्वारकाधीश का मंदिर वास्तुकला और मूर्तिकला की प्रतिनिधि सुंदर कृति है।

इस सुंदर मंदिर की बहुत-सी मूर्तियाँ द्वारका की क्षारीय जलवायु के कारण लोनी लग जाने से गल गयी हैं। मंदिर के बहुत-से झरोखे, गवाक्ष आदि भी लोनी ने खा डाले हैं। आजकल मंदिर की मरम्मत का काम चल रहा है।

जब हम द्वारकाधीश के दर्शन करने गये तब श्रृंगार भोग के कारण वह बंद थे अतः हम मंदिर की पूरी झाँकी लेने के लिए ऊपर चढ़ गये। मंदिर की पहली मंजिल पर चढ़ने के बाद हम ने देखा कि ऊपर की

मंजिलों में चढ़ने के लिए अलग से एक जीना नहीं है वरन एक मंजिल से दूसरी मंजिल तक जाने के लिए पत्थरों को इस ढंग से खंभों के साथ सज्जित किया गया है कि ऊपर आने-जाने के लिए जो जीने स्वयं बन गये हैं वे मंदिर की विभिन्न मंजिलों पर छतें बनाने के लिए उटाये गये खंभों के अलंकरण वन गये हैं। अतः यात्री इन सीढ़ियों को पार करते समय आगे का रास्ता पाने के लिए बीच में भटक सकता है।

जब हम सीढ़ियाँ चढ़ कर अंतिम मंजिल पर पहुँचे, जहाँ मंदिर के आंतरिक शिखर का अंत होता है तो हमें यह देख कर आश्चर्य हुआ कि द्वारकानाथ के इस शिखर पर सिंदूर-मंडित एक बड़ी आकर्षक देवी-प्रतिमा विराजमान है। उस प्रतिमा के नेत्र ऐसे विशाल और तेजोमय थे कि कि मैं जीवन में कभी भूल नहीं सकता। नीचे उतरने पर जब मैं ने द्वारका के पंडों से शिखर पर देवी की प्रतिमा होने का कारण पूछा कि विष्णु मंदिर में शाक्त-मूर्ति को यह शीर्ष स्थान क्यों प्राप्त है तब एक सज्जन ने बतलाया कि यह मूर्ति योगमाया का रूप है जिन्होंने जन्म के समय भगवान की कंस से रक्षा की थी। यह भगवान की बहिन हैं और उन की रक्षार्थ उन के शिखर पर विराजमान हैं। एक दूसरे व्यक्ति ने इन्हें द्वारकानाथ की कुल-देवी बतलाया। बाद में द्वारकाधीश के चतुर्दिक बने छोटे मंदिरों में भी हमें भगवान कृष्ण की कुल-देवी की एक छोटी काली प्रतिमा के दर्शन हुए।

द्वारकाधीश के मुख्य मंदिर में सर्व प्रमुख है उन का रनिवास जो द्वारकाधीश मंदिर के पृष्ठभाग में स्थापित है। इस में सत्यभामा, जांववती आदि चार रानियों की मूर्तियाँ हैं। इसी मंदिर में एक स्थान पर राधिका भी विराजमान हैं। हमें द्वारका में राधिका के दर्शन करके आश्चर्य हुआ पर बतलाया गया कि यह भगवान की बचपन की सखी हैं। रनिवास में श्रीकृष्ण की चार पटरानियाँ (कालिंदी आदि) की मूर्तियाँ नहीं हैं। कारण यह बतलाया गया कि यह चारों स्वयं नदियों के रूप में प्रगट हैं इसलिए उन की मूर्तियाँ यहाँ नहीं हैं। रुक्मणि के स्थान पर इस रनिवास में लक्ष्मी विराजमान हैं। लक्ष्मी की यह श्वेत संगमरमर की मूर्ति ठीक वैसी ही है जैसी कि रुक्मणि मंदिर में है।

द्वारकाधीश की प्रतिमा इस मंदिर की सर्वाधिक आकर्षक चतुर्भुजी प्रतिमा है जो श्याम पत्थर की है। प्रतिमा के हाथ आगे बढ़े हुए हैं और उस के हस्त-कमलों में शंख, चक्र, गदा और पद्म हैं जो विष्णु और कृष्ण की एकरूपता प्रगट करते हैं। गर्भ गृह के चाँदी के द्वार के भीतर यह प्रतिमा शिखर के ठीक नीचे विराजमान है। इस कारण कैमरे से इस का चित्र स्पष्ट अंकित नहीं हो पाता। वह सौंदर्य तो साक्षात दर्शनों से ही देखा जा सकता है। मंदिर के गर्भगृह तथा जग

मोहन के बीच एक बरामदा है जिस के दो खंभों पर दोनों ओर मूँछधारी सजीले दो द्वारपालों की मूर्तियाँ हैं जो जय और विजय माने जाते हैं । इस प्रकार द्वारकाधीश का मंदिर बैकुंठ की भावना की अनुभूति माना जाना चाहिए जो विष्णु स्वामी संप्रदाय से संबंधित इस देश का सब से प्रसिद्ध मंदिर है ।

द्वारका के मंदिर की जिस विशेषता ने हमें सर्वाधिक आकृष्ट किया वह यह थी कि सौराष्ट्र का क्षेत्र होते हुए भी यहाँ पर ब्रज की छाप बहुत स्पष्ट है ।

द्वारकाधीश के ठीक सामने वाले जगमोहन के पार्श्व में एक कोठरी बनी है जिस में ब्रज के गिरिराज महाराजा की एक शिला है। प्रातःकाल मंगला के बाद मूंगफली की बहुलता से उत्पादन करने वाले इस क्षेत्र में भी द्वारकाधीश बाल-भोग में माखन, मिश्री ही लेते हैं । उन का शृंगार भी वृजबासी ठाठ से ही होता है। पुजारी पट बंद करके एकांत में नहीं, वरन स्नान-भोग के उपरांत दर्शन खुलने के बाद खुले में जनता के समक्ष एक लोकनायक की भाँति ही द्वारकानाथ का श्रृंगार करते हैं । मंदिर में प्रातःकाल जब हम दर्शन करने गये तो द्वारकाधीश की पाग बाँधी जा रही थी । भगवान के अंग पर भी बगलबंदी और पीतांबर यथावत सुशोभित थे । हाँ, वंशी और मोर मुकुट के दर्शन हमें द्वारका में नहीं हुए । द्वारकानाथ के पुजारी भी पीतांबर तथा केसरिया बगलबंदी धारण किये थे।

द्वारकाधीश की पूजा-सेवा यद्यपि विष्णु स्वामी संप्रदाय के अनुसार है पर उस पर बल्लभाचार्य की भी स्पष्ट छाप है । बल्लभाचार्यजी का पुष्टि संप्रदाय वैसे भी विष्णु स्वामी मत का ही मध्यकालीन विकसित रूप कहा जा सकता है।

द्वारकाधीश की सेवा का विधान राजसी है पर इस कमरतोड़ महँगाई का प्रभाव वहाँ भी पड़ा है । द्वारकाधीश का पूरे दिन का भोग ढाई सौ रु. में पूरा होता है । घी की इस महँगाई में गुजरात जा बसने वाले ब्रज के रणछोड़ का इस में पूरा पड़ना कठिन होता है क्योंकि वे गुजरात के समान तेल नहीं खा सकते । रुक्मणिजी के मंदिर की दशा तो बहुत ही खराब है । वहाँ तो मूंगफली को कूट कर हमें माता रुक्मणि के प्रसाद के रूप में दिया गया।

द्वारका में हमेशा से द्वारकाधीश का जन्म भाद्रपद शुक्ला अष्टमी को ही बड़ी धूमधाम से होता है जो वहाँ के सर्वप्रमुख उत्सवों में है । वहाँ झूलनोत्सव भी ब्रज की ही भाँति जाता है ।

(गली रावलिया, लाल दरवाजा, मथुरा)

वैज्ञानिक संशोधनों द्वारा फल, अनाज और सब्जियों के आकार-प्रकार और वजन बढ़ाये जा रहे हैं। कोलारेडो में एक आलू का वजन ९६ पौंड १० औंस हुआ। उस की लंबाई २ फुट और ५ इंच थी।

• कुंथा जैन

आइन रैंड

जिस ने एक नये दर्शन को जन्म किया

आइन रैंड अमरीका-निवासिनी ऐसी लेखिका थी जो ७० वर्ष की होने पर भी सदा युवती कहाने के उपयुक्त रही। पिछले वर्ष उस की मृत्यु अमरीका के एक मानसिक चिकित्सालय में हुई। आइन रैंड का जन्म रूस के सैंटपीटर्सवर्ग नगर में हुआ था। रूसी क्रांति के युग में वह पली और लेनिनग्राड विश्वविद्यालय में पढ़ी। साम्यवाद की वह घोर विरोधी रही और इसी कारण १९२६ में अपने देश को छोड़ 'नयी दुनिया' में आ बसी। अँगरेजी भाषा में लिखने का स्वप्न पहली बार १९३६ में, उस की पहली पुस्तक 'वी द लिविंग' के प्रकाशन से हुआ। दो वर्ष बाद दूसरी पुस्तक 'ऐंथम' छपी और फिर तीसरी प्रसिद्ध कृति 'द फाउन्टेन हेड' प्रकाश में आयी, जिस पर बाद में फिल्म भी बनी। वर्षों के संघर्ष से रचित हुई, लेखिका की सर्वोत्कृष्ट कृति 'ऐटलस श्रग्ड' है। इस कृति को लेखिका न केवल एक उपन्यास मानती है, बल्कि अपने उस दर्शन का शास्त्र मानती है जिस के द्वारा अमरीका में प्रतिलक्षित परिवर्तनों की दिशा एकदम उलटा मोड़ खा जाये और मनुष्य-मात्र की विचार-धारा साम्यवाद, 'आध्यात्म' और 'हम' की संकीर्ण स्वपनिल वादियों से हट कर आत्म-निर्भरतापरक 'पूंजीवाद', पुरुषार्थमय 'भौतिकवाद' और स्वावलम्बी 'मैं' की यथार्थ भूमि को सींचे।

इस साहसी लेखिका ने अपने भौतिक विचारों को उपन्यासों के माध्यम से प्रतिपादित किया है और ऐसे चरित्र गढ़े हैं, जो सामर्थ्य में पौराणिक एवं शास्त्रीय साहित्य-नायकों के समकक्ष खड़े हो सकते हैं, किंतु शारीरिक बल पर नहीं, बुद्धि

और मानसिक विकास के उच्चतम स्तर पर पहुँचने के कारण।

आइन रैंड ने अपने इस वस्तुवादी दर्शन को ऐसे अकाट्य तर्कों और विचारों के स्पष्ट, सुलझे, कसे; पर बहुमुखी गुंफन के साथ प्रस्तुत किया है कि पाठक की विचार-धारा अनायास ही लेखिका की समानांतर लीक पर दौड़ पड़ती है। जितना सशक्त और प्रभावशाली दर्शन लेखिका के उपन्यासों में एक-प्राण हो बोलता है। उतना ही प्रभाववादी, और झकझोरने वाला शब्द एवं वाक्यों का नियोजन है।

अमरीका के सांस्कृतिक दीवालियेपन के लक्षण देखिये। दर्शन सिखाता है कि मनुष्य का मानस नपुंसक है, वास्तविकता, अभेद्य, ज्ञान एक माया और तर्क-शक्ति एक अंधविश्वासी वहम। मनोविज्ञान कहता है कि मनुष्य एक विवश यंत्र है जिस का संचालन ऐसी शक्ति द्वारा होता है जो उस के नियंत्रण में नहीं है और जिस का उद्देश्य निर्धारित करनेवाली मनुष्य की स्वाभाविक निम्न-स्तरीय प्रवृत्तियाँ हैं। साहित्य के क्षेत्र में मनुष्य की आत्मा का प्रतिनिधित्व करती हुई एक लंबी कतार खड़ी है कातिलों की, नशेबाजों की, मानसिक रोगों से पीड़ित विक्षिप्त मानवों की। पाठक से अनुरोध होता है कि वह अपने को उन में से पहचाने।

लेखिका पूछती है कि क्या आधुनिक भौतिकवादी औद्योगिक सभ्यता में रेल, सड़क, उद्जन बम और अंतरराष्ट्रीय प्रक्षेपणास्त्र का उत्पादन और प्रयोग उन दार्शनिक सिद्धांतों के द्वारा होगा जिन का प्रतिपादन उन नंगे पैर चलने वाले जंगलियों ने किया था जो मिट्टी के गढ़ों में रहते थे। एक मुट्ठी अनाज के लिए धरती कुरेदते थे और पशुओं के विकृत रूपों के आकार की मूर्तियों को अपने से अधिक सशक्त और समर्थ मान कर उन की पूजा कर कृतज्ञता-ज्ञापन करते थे?

अमरीका पहला देश था जिस के 'स्थापना करने वाले पिता' चिंतनशील व्यक्ति भी थे और कर्मठ भी। उन्होंने पहली बार तर्क से आत्मविश्वास, आत्मसम्मान और व्यक्ति स्वातंत्र्य की स्थापना की थी और १९वीं शताब्दी में सभ्य जगत के सामने पूँजीवाद पद्धति को प्रस्तुत किया। इस सिद्धांत ने मानसिक और भौतिक दासता से मुक्ति प्रदान की।

पूँजीवाद द्वारा व्यक्ति की सर्वोत्तम क्षमता, उस की कार्य-कारण से युक्त बुद्धि को सार्थक उपयोगिता प्राप्त होती है। 'स्थापक-पिताओं' का आधारगत सिद्धांत यही था कि मनुष्य को अपने जीवन पर पूरा अधिकार है; वह अपनी आजादी और खुशी का अधिकारी है, जिस का अर्थ है कि मनुष्य अपने लिए जीता है।

नैतिक आदर्श और मानसिक शक्ति के रूप में 'समूह-वाद' एक मुरदा नारा है। स्वतंत्रता और व्यक्तिवाद को यदि राज-नीतिक शब्दावली में अभिव्यक्त करें तो वह 'पूँजीवाद' के अधिक सम-निकट है

पर ऐसा 'पूँजीवाद' जिस की सामर्थ्य और आकार को अभी पहचाना नहीं गया है ।

आइन रैंड को अमरीका की वर्तमान राजनीति पसंद है, न आर्थिक व्यवस्था और न ही नारी, व्यापार, कला और धर्म के प्रति वहाँ का दृष्टिकोण ।

लेखिका के वस्तुवादी दर्शन के घेरे में केवल राजनीति और आर्थिक शास्त्र नहीं आते । इस दर्शन का केंद्र-बिंदु एक नयी चरित्र-नीति है, जिसे वह 'कारण-संगत स्वार्थ' का नाम देती है । इस नीति का आधार उस का 'वस्तुवादी दर्शन' या 'ऑवजेक्टिविस्ट ऐथिक्स' है, अर्थात यह सिद्धांत कि व्यक्ति की उदात्त नैतिक आस्था अपनी खुशी को जुटाना है और न उसे किसी और के लिए कोई बलिदान या त्याग करना चाहिए और न ही किसी और से यह अपेक्षा रखनी चाहिए ।

जो यह समझते हैं कि एक स्पष्ट उद्देश्य के प्रति समर्पित होना अपने क्षितिज की असीमता को बाँध देना है, वे भ्रम में हैं । केंद्रीय उद्देश्य स्थित हो जाने पर जीवन की बहुमुखी अनेक चिंताएँ और सोच-विचार उसी एक उद्देश्य में समाहित हो जाते हैं, और इस प्रकार मूल्यों के एक ऐसे संपुष्ट पुंज का निर्माण होता है जो जीवन के अन्य मूल्यों के क्रमशः स्थान निर्धारित करता जाता है । ऐसा होने से व्यर्थ के अंतर्द्वंद्व खत्म होते हैं और आनंद का भोग विशाल पैमाने पर हो पाता है।

जो यह कहते हैं कि भावनांकुर की झोंक में न आना और सदैव कारण-युक्त भावना से प्रेरित रहना, जीवन को रसहीन बनाता है वे भी एक विचित्र भ्रम के शिकार हैं । भावना द्वारा हमें यथार्थ का 'बोध' नहीं, केवल 'आभास' मात्र होता है । 'भावना' फल है निश्चित ही 'कारण' नहीं। मस्तिष्क और भावनाओं का समन्वित सम्मिश्रण व्यक्ति की चेतना ऊर्जा को सरस आनंद से विभोर कर देता है ।

आइन रैंड की मान्यता है कि प्रत्येक बुद्धिजीवी के लिए दो सिद्धांतों को स्वीकार करना आवश्यक है । एक तो यह कि 'संवेदनाएँ' वस्तु के मर्म या तलस्पर्शी ज्ञान तक पहुँचाने में असमर्थ हैं और दूसरे यह कि किसी के विरोध में शारीरिक बल का प्रयोग करना अनाधिकार चेष्टा है । 'विचार' और 'संवेदना' के भेद का सूक्ष्म विवेक होना आवश्यक है ।

दूसरा सिद्धांत यह है कि अपने विचारों को दूसरों पर स्थापित करने के लिए या निजी स्वार्थ की सफलता के लिए शारीरिक बल का प्रयोग करना नैतिकता, बुद्धि और मनुष्य के अधिकारों का निकृष्ट दुरुपयोग है एवं सभ्यता की ओर अग्रसर कदमों का पीछे की ओर वापस करना है—जहाँ मानसिक और बौद्धिक शक्ति के स्थान पर पाशविक शक्ति का बोलबाला था । पाशविक शक्ति के बल पर घमंड करने वाले व्यक्ति से भी सह-अस्तित्व, सहयोग या समझौते की बात असंभव है ।

आइन रैंड की दृष्टि में जो व्यक्ति मित्रता और पारिवारिक बंधनों को अपने निर्माणकारी कार्यों से अधिक महत्त्व देता है, वह भावना-पराधीन या अन्य भावना-पोषण पर आश्रित प्राणी है। यदि, मनुष्य जीवन में अपने कार्य को मुख्यतम बना कर रखे तो उस के कार्य और मानवीय संबंधों द्वारा आनंदप्राप्ति में कोई संघर्ष या विरोधाभास उत्पन्न नहीं होगा।

अपने साहित्य-सृजन के विषय में लेखिका दो छोरों की बात करती है। वह कहती है कि एक ओर तो मैं साहित्य तक उतनी ही सरलता से बांहें फैला कर पहुँचती हूँ जैसे एक बालक। मैं 'कथा' के लिए लिखती हूँ और 'कथा' के लिए पढ़ती हूँ। और दूसरी ओर, इस मनोभाव को वयस्कों के पठनयोग्य रूप में ढालना बेहद जटिल और पेचीदा काम होता है।

आइन रैंड का कहना है कि वह उपन्यासकार को दृष्टा और जौहरी दोनों सम्मिश्रित रूप मानती है। लेखक को चाहिए कि वह मनुष्य की आत्मा की शक्ति, 'कंचन की खान' का पता लगाये और उस में से सोना निखार कर अपनी क्षमता और दूरदर्शी स्वप्नवत्ता के अनुकूल, अधिक से अधिक सुषमायुक्त मुकुट गढ़े। जिस प्रकार भौतिक संपदा के खोजी, शहर के कूड़े-करकट के ढेरों में विचरण नहीं करते बल्कि सोने की खोज में एकांत पर्वतों पर रमण करते हैं, उसी प्रकार मानसिक मूल्यों के महान अभिलाषी अपने पिछवाड़े में बैठक जमा कर नहीं बैठते बल्कि सर्वोत्कृष्ट सुस्वच्छ तथ्यों के साहसी खोजक होते हैं।

अरस्तू ने कहा था—'दर्शन की दृष्टि से कथा–साहित्य का महत्त्व इतिहास से अधिक है, और आइन रैंड के लिए यह धारणा उस की निजी अंतःप्रेरणा की उपज है। जिस प्रकार मनुष्य, निजी भौतिक संपदा से निर्मित एक अस्तित्व है उसी प्रकार स्वयं-रचित आत्मा भी उस के अस्तित्व में है। जिस प्रकार मनुष्य की शारीरिक अतिजीविता उस के अपने प्रयत्नों पर निर्भर है उसी प्रकार उस की मनोवैज्ञानिक या मानसिक उत्तर-जीविता भी। मनुष्य के सामने परस्पर आश्रित दो कार्य-क्षेत्र सदा उपस्थित रहते हैं, जिन में से हर पल, एक को चुन कर कार्य-रत होना होता है। एक कार्य-क्षेत्र होता है चारों तरफ बिखरी दुनिया का और एक अपनी 'आत्मा' या अंतः प्रेरित चेतना-विवेक का। जैसे जीवन के लिए भौतिक द्रव्यों को संजोना होता है उसी तरह चरित्र के कुछ मूल्यों को अपनाना होता है जिस से जीवन में शक्ति-सत रहे।

आइन रैंड का साहित्य 'समर्पित है मनुष्य की महिमा को'। उस का साहित्य मनुष्य की स्तुति है।

(एम. ११९, ग्रेटर कैलाश, नयी दिल्ली-४८)

देवफल आम

• पीताम्बर भागचंदानी

फलों में आम सर्वाधिक लोकप्रिय फल है। इसे यदि भारत का समाजवादी फल कहा जाये तो कोई अतिशयोक्ति नहीं। वनस्पतिशास्त्रियों के अनुसार आम की जन्म-भूमि भारत, ब्रह्मा तथा थाई देश के क्षेत्र में है। भारत का प्राचीन साहित्य 'देवफल आम' के मादक वर्णनों से भरा पड़ा है। आम्रवृक्ष के फलों तथा पत्रों को धार्मिक महत्त्व प्राप्त है। 'शाकुंतल' एवं 'रघुवंश' में काम के उद्दीपन के पंचबाणों में इस को भी एक बताया गया है। बौद्ध काल में आम्रवनों का विशेष संवर्द्धन हुआ। आम्रों के उपवन की स्वामिनी होने के कारण ही वैशाली की नगरवधू आम्रपाली कहलायी।

मुगल बादशाहों में आम बहुत लोकप्रिय हुए। बताया जाता है कि प्रथम मुगल सम्राट बाबर को भारतीय फल पसंद नहीं आते थे परंतु वह भी आम के प्रति आर्कषित हुए बिना नहीं रह सका। अकबर भी आमों का बहुत प्रेमी था। उस ने दरभंगा के निकट एक लाख आम्रवृक्षों के बाग लगवाये थे। औरंगजेब तक आंमों की प्रशंसा किये बिना नहीं रह सका। मुहम्मद तुगलक के समय के सुप्रसिद्ध कवि अमीर खुसरो ने आमों की प्रशंसा करते हुए लिखा है, "आम का फल बाग का सिरमौर है तथा हिंदुस्तान का सब से अधिक स्वादिष्ट फल है।" उर्दू के प्रसिद्ध शायर गालिब को भी आम बहुत पसंद थे। एक बार गालिब अंतिम मुगल बादशाह बहादुरशाह के साथ शाही बाग में टहल रहे थे। उस बाग के आम शाही परिवार के लिए ही उपलब्ध थे। खूब पके हुए आम...गालिब उन को बार-बार देख रहे थे। बादशाह ने पूछ ही लिया, "जनाब, आप बार-बार गौर से क्या देख रहे हैं?"

गालिब ने झट उत्तर दिया, "जहाँ-पनाह, यह देख रहा हूँ कि क्या किसी दाने पर बंदे का भी नाम लिखा है?" अगले ही दिन आमों की एक बहँगी गालिब के घर पहुँच गयी।

विदेशी यात्रियों में भी आम बहुत लोकिप्रिय हुए। चीनी यात्री ह्वेनसांग तो 'भारतीय आमों के दूत' के रूप में विख्यात हुआ था। मिल्टन ने गोवा के आम को संसार का सर्वाधिक सुस्वादु एवं स्वादिष्ट फल लिखा। महारानी विक्टोरिया और सप्तम एडवर्ड के काल में उन के लिए हैदराबाद से आम भेजे जाते थे। पुर्तगाली और फ्रांसीसी शासकों ने भी इसे खूब पसंद किया।

आम का भारत में कम-से-कम चार हजार वर्ष से निरंतर उत्पादन हो रहा है। साधारणतः आम्रवृक्ष दो-ढाई मीटर से ले कर छह-सात मीटर तक ऊँचे और एक-या-दो मीटर तक व्यास वाले होते हैं। चंडीगढ़ में आम का ऐसा वृक्ष है जिस का व्यास साढ़े नौ मीटर है और वह २.२५० वर्गमीटर क्षेत्र को घेरे है। इस से प्रतिवर्ष ४५० मन फल प्राप्त होते हैं।

भारत में आम की सैकड़ों किस्में पायी जाती हैं जिन में दशहरी, सफेदा, चौसा, वनगपल्ली, तैमूरिया, फजली, स्वर्ण रेखा, कलिया, 'सुंदरजा' बंबई के पापरी एवं अलफांसों आदि अधिक लोकप्रिय किस्में हैं। आम बीजू एवं कलमी दोनों प्रकार का होता है। कलमी आमों का आजकल अधिक जोर है पर बीजू आम सुपाच्य होते हैं। बीजू वृक्ष बड़े-बड़े, पर कलमी अपेक्षाकृत लंबाई में छोटे होते हैं। बीजू के वृक्ष लंबी आयु के और कलमी वृक्ष अल्पायु होते हैं।

आम के विभिन्न भाषाओं में विभिन्न नाम हैं। हिंदी और बंगला में 'आम', मराठी में 'अंबा', गुजराती में 'आंबो', सिंधी में 'अंबु', तेलुगु में 'आमिडिचेट्टू', कन्नड़ में 'अंब', या 'अंभ', फारसी में 'अंब', अरबी में 'अंबज', तमिल में इसे 'मैनर्गे' या 'मांगाय' कहते हैं। पुर्तगाली में यह 'मांगा' का रूप धारण कर 'मैंगो' हो गया है। पाली भाषा में 'आमरिया', 'आंबिया' और 'आंबो' नाम से इस का उल्लेख है। ईरानी लोग इसे 'अंबाड़' भी कहते हैं। संस्कृत में तो इस के अनेक नाम हैं--आम्र, रसाल, हसहकार, अतिसौरभ, कामांग, मधुदूत, मांकद, पिकवल्लभ आदि।

आम को फलों में जो सर्वाधिक लोकप्रिय स्थान प्राप्त हुआ है वह इस के स्वाद के कारण ही नहीं है वरन इस में अनेक स्वास्थ्य हितकारी पोषक तत्त्व हैं। आयुर्वेद में आम के गुण इस प्रकार वर्णित हैं—"आरंभ में मधुर किंतु अंत में कषाय रसयुक्त, वृण्य (वीर्यवर्धक) स्निग्ध बल एवं सुखदाता, गुरु वातनाशक, हृदय के लिए हितकर, वर्ण निखारने वाला, शीतल, थोड़ा पित्त कर किंतु जठराग्निवर्धक, कफ तथा शुक्र को बढ़ाने वाला होता है।"

चरक के अनुसार--'पके आम का फल वायु को दूर करता है मांस, शुक्र और बलवर्धक होता है ।"

आम का गूदा सारे फल का ४८ से ७३ प्रतिशत तक होता है । इन में सुक्रोन, ग्लूकोज एवं फ्रुक्टोडा तीन मुख्य सुपाच्य एवं ऊर्जाप्रदायक शर्कराएँ (कार्बोहाइड्रेट) होती हैं । सुक्रोज की मात्रा विभिन्न किस्म के आमों में ६.८७ प्रतिशत से १६.९९ प्रतिशत तथा ग्लूकोज एवं फ्रुक्टोज की मात्रा डेढ़ से छह प्रतिशत तक होती है । इस के अतिरिक्त पके आम में नमी ८.६ प्र., प्रोटीन ०.६ प्र., वसा ०.१ प्र., खनिज लवण ०.३ प्र., रेशा १.१ प्र. होते हैं साथ ही इस में लौह ०.३ मि. ग्रा., निकोटनिक एसिड ०.३ मि. ग्रा. और एस्कार्बिक एसिड १३ मि. ग्रा. प्रति सौ ग्राम होते हैं ।

आम में विटामिन ए तथा सी मुख्य रूप से पाया जाता है। इस में विटामिन ए की मात्रा ४, ८०० (केसेटिन) अंतरराष्ट्रीय इकाई प्रति सौ ग्राम है । अन्य कोई भी फल इस दृष्टि से आम की बराबरी नहीं कर सकता । विटामिन ए शरीर के लिए अत्यंत आवश्यक है । विटामिन ए से शरीर का विकास, रक्तसंचालन एवं वृद्धि ठीक-ठीक होती है । यह आयु, उत्साह एवं रोगप्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाता है । एक वयस्क के लिए नित्य ५,००० (अ. इ.) विटामिन ए की आवश्यकता होती है जो केवल सौ ग्राम या ३.५ औंस पके आम को खा कर प्राप्त की जा सकती है । यह स्मरणीय है कि शरीर में विटामिन ए का आधिक्य भविष्य के लिए भी संचित रह सकता है अतः मौसम में पर्याप्त मात्रा में आम खाना लाभदायक है। विटामिन ए के अतिरिक्त इस में नियासिन, रिबोफ्लाविन तथा विटामिन सी होता है । आम में विटामिन सी की मात्रा सेब से अधिक होती है । यह स्कर्वी (मसूड़ों से खून आना), पायरिया एवं दाँतों के अन्य रोगों से रक्षा करता तथा त्वचा को ठीक रखता है । विटामिन ए तथा सी की मात्रा सभी किस्मों के आमों में समान नहीं होती । भारतीय आमों की ३२ बहुप्रचलित किस्मों में 'अलफांसों' (रतन गिरी किस्म) कैलशियम की दृष्टि से अधिक समृद्ध है जब कि 'सिंदूरी', 'तमूरी' तथा 'तोता' किस्मों के आम लौह की दृष्टि से अधिक समृद्ध है । 'भांकुर गोआ' किस्म में सब से अधिक विटामिन ए लगभग २६, ००० (अ. इ.) प्रति सौ ग्राम है । 'अलफांसों' (रतनगिरी) तथा 'पैरीरा' (रतनगिरी) में विटामिन ए की मात्रा लगभग १५,००० (अ. इ) है जब कि सहारनपुरी किस्म के आम में यह मात्रा ३,२५० (अ. ई) है । दूसरी अन्य किस्मों में विटामिन ए की मात्रा केवल लगभग १,००० से १,८०० (अ. इ) प्रति सौ ग्राम मिली । 'चौसा', 'मालदा', 'नीलम', 'रसवहार' आदि किस्में विटामिन ए की दृष्टि से सब से हीन हैं । इन में विटामिन ए ५०० (अ. इ) प्रति सौ ग्राम है ।

आम की 'लांगदा' किस्म विटामिन सी की दृष्टि से सब से अधिक समृद्ध है। इस किस्म में विटामिन सी की मात्रा लगभग ८३ मिली ग्राम प्रति सौ ग्राम है जो कि 'चौसा' तथा 'मांकुर गोआ' किस्म के आमों से लगभग दोगुनी, 'तोता' किस्म के आमों से चौगुनी तथा दशहरी आमों से छह गुनी है। 'बनारसी', 'फजली', 'गोला,' 'सफेदा' तथा 'सहारनपुरी' किस्म के आमों में विटामिन सी नाम मात्र को है। साधारणतया आम का औसत उष्णांक मूल्य करीब ५० कैलोरी प्रति सौ ग्राम है पर 'भांकुरगोआ' और 'सिपिया' किस्मों का उष्णांक मूल्य सब से अधिक करीब १०० कैलोरी है। इस के बाद बंबइया किस्मों का नंबर आता है जिन का उष्णांक मूल्य ९० कैलोरी प्रति सौ ग्राम है।

कच्चे हरे आमों में विटामिन सी की मात्रा अधिक होती है जो पकने के साथ-साथ कम होती जाती है। कच्चे आमों में साइट्रिक, मैलिक एवं आक्जैलिक अम्ल होते हैं। देश के विभिन्न किस्मों के २२ आमों के विश्लेषण से पता चला है कि जहाँ कच्चे आम में मैलिक अम्ल ०.६७ से ३. ६६ तक होता है वहाँ पके आम में यह ०.१८ से ०. ५६ तक रह जाता है। कच्चे आमों से विविध घरेलू तथा व्यापारिक खाद्य बनाये जाते हैं। इस को सलाद, चटनी, आचार, अंबचूर, जैम, जेली आदि के निर्माण म प्रयुक्त किया जाता है। सभ्य जगत में ये खाद्य अधिकाधिक लोकप्रिय हो रहे हैं। वर्मा में कच्चे आम के टुकड़ों को दूध में उबाल कर फिर उसे बर्फ से ठंडा कर गरमियों में स्वादिष्ट पेय के रूप में लिया जाता है। पके हुए आमों से शर्बत, पाक, हलवा, अमावट आदि अनेक स्वादिष्ट खाद्य तैयार किये जाते हैं।

कहावत है—'आम के आम, गुठलियों के दाम'–अर्थात आम तो खाया जाता ही है पर आम की गुठली भी बड़े काम की चीज है। गुठली में भी अनेक पोषक तत्त्व होते हैं। इस में प्रोटीन ९. ५ प्र., वसा १०.७ प्र., स्टार्च ७२. ८० प्र., टेनिनि ०. ११ तथा आर ३. ६६ प्र. होता है। यह गुठलियाँ अकाल के समय गरीबों की प्राण-रक्षा करती हैं। इन गुठलियों के श्वेतसार का उपयोग अनेक, कागज कपड़े एवं पटसन आदि के उद्योगों में किया जाता है। आम की लकड़ी भी बढ़िया ईंधन का काम देती है। यज्ञ-पूजा में इस की लकड़ी से हवन-अग्नि तैयार की जाती है। इस के अतिरिक्त घर का फर्नीचर, फर्श, बक्स, सीलिंग बोर्ड, नावें आदि भी बनायी जाती हैं। यह अत्यंत ही मजबूत और उपयोगी होती है। आम के पत्तों से तेल बनाया जाता है जो अनेक रोगों में प्रयुक्त होता है। छाल से काढ़ा, दवा एवं स्याही तैयार होती है।

(गुरु नानक धाम, कनखल, सहारनपुर)

• वेदप्रकाश वर्मा

हमारे देश में लाखों स्त्री-पुरुष भिक्षा-वृत्ति द्वारा जीविका कमाते हैं। चार-पाँच साल के बच्चों से ले कर साठ-सत्तर वर्ष के बूढ़ों तक, सभी अवस्थाओं के लोग सम्मिलित हैं। सड़कें, गलियाँ, पार्क, बस-स्टॉप, रेलवे-स्टेशन आदि कोई भी सार्वजनिक स्थान ऐसा नहीं है जिस पर इन भिखारियों के दर्शन न होते हों। हाथ में एक गंदा-सा टीन का प्याला लिये, मैले चीथड़ों में लिपटे, बड़ी दीनता भरी आवाज लगाते हुए ये लोग आने-जाने वाले व्यक्तियों का कुछ इस तरह पीछा करते हैं कि उन्हें छुटकारा पाने के लिए इन को कुछ-न-कुछ देना ही पड़ता है।

मनुष्य में दूसरों के कष्ट एवं पीड़ा के प्रति सहानुभूति तथा दया की जो स्वाभाविक प्रवृत्ति पायी जाती है वही इन भिखारियों के धंधे का मूल आधार है। किसी असहाय प्राणी को कष्टदायक स्थिति में देख कर अनायास ही हमारे मन में उस के प्रति दया उत्पन्न होती है और इस सम्वेग से प्रेरित हो कर हम उस की सहायता करने का प्रयत्न करते हैं। प्रत्येक चतुर भिखारी इस बात को अच्छी तरह जानता और समझता है, इसी कारण वह हमारी नैसर्गिक सहानुभूति एवं दया का अनुचित लाभ उठाने की पूरी कोशिश करता है। वह अपने आप को हमारे सामने कुछ इस तरह पेश करता है कि उसे हम संसार में सब से अधिक दुःखी व्यक्ति समझ कर अधिक से अधिक भीख दें। इसी उद्देश्य से वह अपने फटे और गंदे वस्त्रों, दुर्बल शरीर, विकृत अंगों तथा घावों का निरंतर प्रदर्शन करता है और अत्यंत करुणाजनक स्वर में भीख माँगता है।
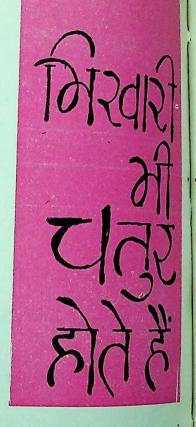
लोगों से अधिकतम भीख वसूल करने के लिए भिखारियों द्वारा जो तरीके

अपनाये जाते हैं वे निश्चय ही बहुत निंदनीय तथा समाज-घातक हैं। भिखारी अपने अनुभव से इस बात को भली-भाँति जानते हैं कि ऐसे व्यक्तियों को भीख सब से ज्यादा मिलती है जो लंगड़े, लूले, अंधे या कोढ़ी हों अथवा जिन के अंग विकृत तथा दयनीय स्थिति में हों। यही कारण है कि भीख माँगते समय वे कभी अंधे होने का अभिनय करते हैं और कभी लंगड़े, लूले या गूँगे होने का। भीख देने वाले दयालु व्यक्ति प्रायः यह जान ही नहीं पाते कि धोखा दे कर उन्हें मूर्ख बनाया जा रहा है। अनुभवी तथा अपने व्यवसाय में निपुण कुछ भिखारी स्वयं भीख न माँग कर कुछ अन्य व्यक्तियों को यह काम सौंप देते हैं और इस के लिए उन्हें उचित प्रशिक्षण तथा पारिश्रमिक भी दिया जाता है। भीख का धंधा चलाने वाले गिरोहों के ये सरदार निर्मम-से-निर्मम तथा घृणित-से-घृणित काम करने में कोई संकोच नहीं करते। गलियों में खेलते अबोध बालक-बालिकाओं को बहला-फुसला कर उठा ले जाना और फिर बड़ी निर्दयता से उन के विभिन्न अंगों को विकृत करके उन्हें भीख माँगने के लिए मजबूर करना इन का मुख्य धंधा है। स्वस्थ और सुंदर बच्चों को कुरूप तथा विकलांग बना कर भीख माँगने के लिए सड़क पर बिठा दिया जाता है।

यहाँ स्वभावतः यह प्रश्न उठता है कि कुछ लोग भिक्षा-वृत्ति को ही अपना धंधा क्यों बना लेते हैं और वे कोई अन्य व्यवसाय क्यों नहीं करते? वस्तुतः भिक्षा-वृत्ति को व्यवसाय के रूप में अपनाये जाने के बहुत-से कारण हैं जिन में से कुछ तो सामाजिक संगठन से संबंधित हैं और कुछ मनुष्य के अपने व्यक्तिगत चरित्र से। हमारे समाज में फैली हुई बेकारी, निरंतर बढ़ती हुई जनसंख्या, अत्यधिक आर्थिक विषमता आदि ऐसे कारण हैं जिन के परिणामस्वरूप बहुत-से व्यक्तियों को जीविकोपार्जन का कोई साधन ही नहीं मिलता। वे कभी-कभी इतने निर्धन तथा असहाय हो जाते हैं कि जीवन-यापन के लिए भिक्षावृत्ति के अतिरिक्त उन के समक्ष और कोई उपाय ही नहीं रह जाता।

ऐसी स्थिति में हम सब का यह आवश्यक कर्तव्य हो जाता है कि हम अपने देश में शताब्दियों से प्रचलित इस भिक्षावृत्ति का अंत करने के लिए अधिकाधिक प्रयत्न करें। वस्तुतः इसे समाप्त करने के लिए प्रशासन और जनता को मिल कर दृढ़तापूर्वक निरंतर प्रयास करना होगा। सर्वप्रथम भिक्षावृत्ति के विरुद्ध कानून बना कर सार्वजनिक स्थानों पर भीख माँगना दंडनीय अपराध घोषित कर दिया जाना चाहिए और ऐसी व्यवस्था की जानी चाहिए कि इस कानून से कोई भी सरलतापूर्वक बच न सके। इस के पश्चात भिखारियों की शारीरिक और मानसिक क्षमता के अनुसार उन्हें कृषि तथा विभिन्न उद्योगों में काम दिलाने का प्रयत्न किया जाना चाहिए। जो भिखारी काम करने में बिलकुल असमर्थ हैं उन के लिए कुछ ऐसे आश्रमों अथवा सदनों की स्थापना करनी होगी जहाँ वे अपना शेष जीवन बिता सकें। मेरे विचार में यह कार्य बहुत कठिन नहीं है क्योंकि ऐसे भिखारियों की संख्या अपेक्षाकृत कम ही है जो बिलकुल असहाय और अपाहिज हों। वस्तुतः अधिकतर भिखारी ऐसे ही हैं जो कुछ न कुछ काम करके अपनी जीविका कमा सकते हैं। इन के लिए रोजगार की व्यवस्था करना और उन से बलपूर्वक काम लेना सरकार का कर्तव्य है।

परंतु यहाँ यह स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि केवल सरकार के प्रयत्नों द्वारा भिक्षावृत्ति कभी समाप्त नहीं हो सकती। इस के लिए जनता का पूर्ण सहयोग बहुत आवश्यक है। सब से पहले हमें इस परंपरागत धारणा को छोड़ना होगा कि भिक्षा देना बहुत बड़े पुण्य का कार्य है।

हम सब को इस समाजवादी सिद्धांत का पूर्णरूपेण पालन करना चाहिए कि शारीरिक और मानसिक दृष्टि से स्वस्थ होते हुए भी जो व्यक्ति जीविकोपार्जन के लिए काम नहीं करता उसे दूसरों के श्रम पर जीवित रहने का कोई अधिकार नहीं है। यहाँ मुझे गाँधीजी का एक अमूल्य विचार याद आ रहा है जो इस प्रसंग में उल्लेखनीय है। एक बार उन्होंने कहा था कि ऐसे सभी भोजन-गृहों को बंद कर देना चाहिए जिन में लोगों को मुफ्त भोजन दिया जाता है। व्यक्ति और राष्ट्र की उन्नति के लिए गाँधीजी का यह विचार निश्चय ही अनुकरणीय है।

वास्तव में भिक्षावृत्ति-जैसी घृणास्पद प्रथा से मुक्ति पाने के लिए हमें अपनी दानशीलता पर यह समझ कर नियंत्रण रखना होगा कि कुपात्र को दिया गया दान व्यक्ति और समाज दोनों के लिए बहुत हानिकारक है। जब हम सब इसी सिद्धांत के अनुसार आचरण करते हुए किसी भी स्वस्थ व्यक्ति को भीख न देने का दृढ़ निश्चय कर लेंगे तभी हमारा समाज भिक्षावृत्ति-जैसे कलंक से छुटकारा पा सकेगा।

जानवरों का बचपन

• चार्ल्स शर्मन

हमारे मकान के सामने एक बड़ा मालगोदाम था, जिस में काठ-कवाड़ भरा रहता था। इस के अतिरिक्त यहाँ जानवरों की बस्ती भी बसी हुई थी। बंदर, बिल्लियाँ, तोते, जंगली कबूतर, चमगादड़, चूहे, साँप, बिच्छू और अनेक कीट-पतंग मिल-जुल कर रहते थे। कभी-कभी आवारा कुत्ते भी गोदाम के टूटे दरवाजे से अंदर चले जाते और वहाँ कुतियें अकसर बच्चे दिया करती थीं। गोदाम के मालिकों ने जानवरों को निकालने का बहुत प्रयत्न किया, पर सफल न हुए। इस के विपरीत जानवरों की संख्या बढ़ती ही चली गयी।

एक दिन महल्ले के कुछ नटखट लड़कों ने बंदरिया का एक बच्चा पकड़ लिया। बच्चे की चीख-पुकार सुन कर बहुत-से बंदर जमा हो गये। लड़के बच्चे को ले कर हमारे घर आ गये। बच्चा बुरी तरह चीख रहा था और उस की माँ बेचैनी से हमारी छत पर घूम रही थी। मैं ने डाँट-डपट कर बच्चा छुड़वाया। मुक्त होते ही वह माँ की ओर दौड़ा। माँ भी उसे सीने से चिपटा कर प्यार करने लगी।

कुछ दिन बाद मैं ने उसी बच्चे को
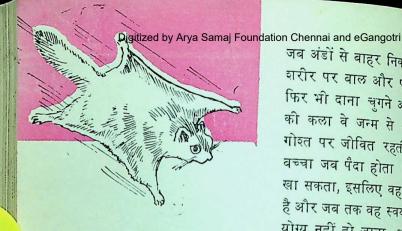
पुनः देखा, पर तब वह मर चुका था और बंदरिया उस की लाश छाती से लगाये फिर रही थी। मकान की छत पर उस ने अपने बच्चे की लाश सावधानी से रखी। दो-तीन बार ममता से लाश पर हाथ फेरा। फिर उसे सीने से चिपटाया और गोदाम की ओर चली गयी। हम ने बड़े प्रयत्न किये कि बंदरिया बच्चे की लाश अलग कर दे, पर व्यर्थ। इस दुःख में उस ने खाना-पीना छोड़ दिया और सूख कर काँटा हो गयी। आखिर एक दिन बंदरिया की भी लाश गोदाम की मुँडेर पर पायी गयी। मृत बच्चा उस समय भी माँ ने सीने से चिपटा रखा था।

जानवरों के बच्चे पैदा होने के बाद अलग-अलग प्राकृतिक नियमों के अनुसार विकास पाते हैं। बिल्ली के बच्चे मांस के निर्जीव लोथड़े-से नजर आते हैं। उन की आँखें भी बंद होती हैं, पर धीरे-धीरे उन की अवस्था में आश्चर्यजनक परिवर्तन होने लगता है। मुर्गी या बत्तख के बच्चे जब अंडों से बाहर निकलते हैं तो उन के शरीर पर बाल और पंख पूरे नहीं होते, फिर भी दाना चुगने और पानी में तैरने की कला वे जन्म से जानते हैं। शेरनी गोश्त पर जीवित रहती है, पर उस का बच्चा जब पैदा होता है, तो गोश्त नहीं खा सकता, इसलिए वह उसे दूध पिलाती है और जब तक वह स्वयं शिकार करने के योग्य नहीं हो जाता, अपनी माँ के साथ लगा रहता है।

हजारों जानवर ऐसे हैं कि जिस अवस्था में पैदा होते हैं उसी अवस्था में मरते भी हैं। उन के लिए प्रकृति ने बचपन, जवानी और बुढ़ापे के नियम नहीं बनाये। कई जानवर ऐसे हैं जो पैदा होते हैं तो उन का कद-काठ अपने माता-पिता की तुलना में बहुत छोटा होता है, पर स्वाभाविक गुण पूरे होते हैं, जैसे साँप के बच्चे। मादा अंडे देने के बाद उन्हें सेने का कष्ट नहीं उठाती, बल्कि समय और धूप के हवाले कर देती है। बच्चे निश्चित समय पर अंडों से बाहर निकलते हैं और यद्यपि, देखने में बहुत छोटे नजर आते हैं, फिर भी उन के दाँत उस समय भी होते हैं और यदि वे बच्चे किसी को डस लें तो उस की वही दुर्गति हो सकती है, जो बड़े साँप के डसने से होती है।

यही अवस्था कछुओं, छिपकलियों और अन्य बहुत-से जानवरों के बच्चों की है। उन का प्रशिक्षण और मातृ-स्नेह माता-पिता की बजाय स्वयं प्रकृति ने

अपने जिम्मे ले रखा है। मादा कछुआ नदी के तटवर्ती रेत या किसी गढ़े में अंडे दे कर अपना काम पूरा कर देती है। उस के बाद प्रकृति अपना काम आरंभ करती है। एक विशेष अवधि के बाद अंडों से बच्चे बाहर निकलते हैं। उन्हें चारों ओर रेत की दीवार, ऊपर नीला आकाश या चमकता सूर्य नजर आता है। वे तुरंत गढ़े से निकलने का प्रयत्न करते हैं और थोड़ी देर बाद बाहर आ जाते हैं। अब उन्हें अपने सामने नदी का पानी लहरें मारता नजर आता है। वह प्रकृति की प्रेरणा से पानी की ओर लपकते और उस में कूद जाते हैं। जल्दी ही वे दूसरे कछुओं में मिल-जुल कर छोटी-छोटी मछलियों और कीड़ों को पकड़ कर पेट भरना सीख लेते हैं। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि कोई कछुआ कभी 'बच्चा' नहीं होता, बल्कि पैदा होते ही बड़े कछुओं की तरह जीवन बिताने लगता है।

कई कीटाणु ऐसे भी हैं जो सही अर्थों में उत्पत्ति-सिद्धांत के स्वाभाविक तकाजों पर पूरे नहीं उतरते, उदाहरणार्थ, अमीवा और पैरामीसियम, जो तालाबों, झीलों, समुद्रों आदि में पैदा होते हैं। इन कीड़ों का कद इंच के सौवें हिस्से से अधिक नहीं बढ़ता और ये खुर्दबीन की सहायता से देखे जाते हैं। इन के जन्म या वंश-वृद्धि का ढंग प्रकृति ने अति विस्मयकारी बनाया है। ये कीड़े एक विशेष अवधि तक जल में पलते हैं। शनैः शनैः इन का शरीर बारीक हो जाता है और फिर एक दिन हर कीड़े के बीच में से दो टुकड़े हो जाते हैं। अब यह दो अलग-अलग कीड़े हो गये। उन में से हर कीड़ा अपने आप में नर भी है और मादा भी।

पक्षियों का संसार रेंगने वाले जानवरों से भिन्न है। एक मादा पंछी अपने नवजात बच्चे को परवान चढ़ाने में जिस धीरज और दृढ़ता का प्रदर्शन करती है, उसे देख कर जीव-विशेषज्ञ प्रशंसा से
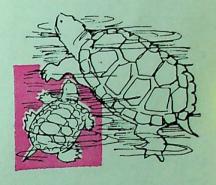
भाव-विभोर हो उठते हैं। विभिन्न मादा-पंछी विभिन्न संख्या में अंडे देते हैं। कई चार, कई पाँच और कई छह। इस में प्रकृति का यह सिद्धांत प्रतीत होता है कि अधिक अंडे देने वाले पंछियों को कम अंडे देने वाले पंछियों की तुलना में कम परिश्रम करना पड़ता है। उदाहरणार्थ, मादा गिद्ध एक ही अंडा देती है और जब बच्चा निकलता है तो वह बिलकुल नाकारा लोथड़ा-सा नजर आता है। उसे अपने

यह वही उम्मीदवार है जो चुनाव में अपने मतदाताओं की गरीबी को जड़ से खत्म करने का आश्वासन दे रहा था

पैरों पर खड़ा करने के लिए मादा-गिद्ध को पूरे दो वर्ष अति कठोर परिश्रम करना पड़ता है। अपने बच्चे की कड़ी निगरानी के अतिरिक्त वह उस की खुराक का प्रबंध भी करती है। गरमी, सर्दी और शत्रुओं के हमलों से बचाती है। पंख निकल आयें तो उड़ने का अभ्यास कराती है और उस समय तक उसे अपने घोंसले से नहीं निकालती, जब तक वह अच्छी तरह उड़ने, स्वयं खुराक ढूंढ़ कर खाने और अपनी रक्षा करने के योग्य नहीं हो जाता।

साँप, कछुआ और मछली के प्रतिकूल पंछियों को अपने अंडों से बेहद लगाव होता है। किसी कौए, चील या बाज के घोंसले से अंडे निकालने का प्रयत्न तो कीजिये, ठोंगे मार-मार कर वे आप को लहूलुहान कर देंगे।

पंछी अपने बच्चों के अतिरिक्त अन्य पंछियों के बच्चों को भी स्नेह दे सकते हैं। एक व्यक्ति ने घोंसलों से फाख्ताओं के दस बच्चे पकड़े। ये बच्चे बिलकुल नवजात थे और यदि उन का उचित पालन-पोषण न किया जाता तो निश्चय ही मर जाते। आखिर उस ने एक फाख्ता को पकड़ लिया और सभी बच्चे उस के हवाले कर दिये। फाख्ता ने उन सभी बच्चों को पालने का बोझ सँभाल लिया। वह सब बच्चों को बहुत स्नेह से दाना खिलाती थी।

पेंगुइन चिड़ियाँ बर्फानी प्रदेशों, विशेषतः कनाडा में पायी जाती हैं। ये नियमित बस्तियाँ बना कर रहती हैं, किंतु जब गृहयुद्ध होता है और बहुत-सी नन्ही पेंगुइन अनाथ हो जाती हैं तो बड़ी पेंगुइन उन्हें नियमित ढंग से पालती हैं। प्रायः देखा गया है कि असहाय पेंगुइनों को लेने के लिए बड़ों में लड़ाई छिड़ जाती है।

दूध पिलाने वाले जानवरों को अपने बच्चों को पालने के लिए बड़ा परिश्रम करना पड़ता है। आस्ट्रेलिया के कंगारू अपने बच्चों को शत्रु से बचाने के संघर्ष में प्राणों का बलिदान देने से भी नहीं चूकते। आस्ट्रेलिया की यात्रा करने वाले एक जापानी सैलानी ने लिखा है—एक

बार जंगल में मैं ने एक मादा कंगारू को एक अजगर से लड़ते देखा। अजगर लगभग सात फुट लंबा था और कंगारू के खेलते हुए बच्चे को पकड़ना चाहता था। जैसे ही वह बच्चे की ओर लपका मादा कंगारू उछल कर उस के और बच्चे के बीच आ गयी। अजगर अब उस की ओर मुड़ा पर उसे काबू में न कर सका।

घोड़ी का बच्चा जन्म के कुछ मिनट बाद ही अपने पैरों पर खड़ा होने लगता है और एकाध घंटे बाद दूध के लिए अपनी माँ के पीछे-पीछे चल पड़ता है। दरियाई घोड़े, बारहसिंहे, हिरन और इसी कबीले के अन्य जंगली जानवरों की संतान भी यही विशेषताएँ रखती हैं, पर उन का बचपन का दौर बहुत लंबा होता है—पाँच-छह वर्ष। इस बीच उन की माएँ उन का पूरा-पूरा ध्यान रखती हैं।

छछूंदरें, बिज्जू, गीदड़ और चूहे सदा अँधेरे, दुर्गंधयुक्त किंतु सुरक्षित स्थानों पर बच्चे देते हैं। गिलहरियाँ पेड़ के खोखले तनों में बच्चे जनती हैं। ये बच्चे अपनी माँ से इतने हिले होते हैं कि उस के संकेत पर दौड़ते-भागते हैं। ये जानवर आवश्यकता पड़ने पर अपने बच्चों के लिए घास-फूस, टहनियों और खुश्क पत्तों से घर भी बनाते हैं। जंगली खरगोश लंबी घास और बिज्जू नदी किनारे नरम रेत में मकान बनाते हैं।

शेरनी अपने बच्चों की कड़ी देखभाल करती है और यदि उस से बच्चे छीन लिये जायें तो उन के दुःख में मारी-मारी फिरती है। बच्चों के दाँत निकल आने पर उन्हें जानवरों पर हमला करने और शिकार को चीरने-फाड़ने का प्रशिक्षण भी देती है।

मित्र आलोचना कर रहे थे कि पुलिस द्वारा अंधाधुंध गोली चलाने से ५० व्यक्ति मारे गये।

"इस में तुम्हें दुःखी होने की क्या जरूरत है ? सरकार तो कहती ही है कि जनता की वस्तु का जनता के हित में उपयोग किया जायेगा," झनकू ने कहा।

"मैं आप का मतलब समझा नहीं !" मित्र ने कहा।

"सीधी-सादी बात है। गोला-बारूद सरकारी कारखानों में बनता है और ये कारखाने जनता के पैसे से बनाये जाते हैं, सरकार जनता के पैसे से बनी गोलियां पुलिस द्वारा अगर जनता पर चलवाती है, तो इस में दुःख मानने की क्या जरूरत है ?"

दूरियों के पास
बैठे रहे हम-तुम
बेवजह ही जल-सतह
छू आदतन
एक संजीदा हवा-से
बहे हम-तुम
दूरियों के पास
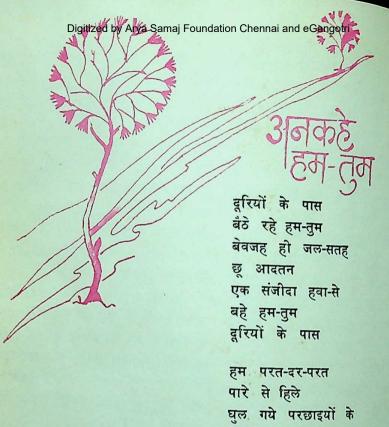
हम परत-दर-परत
पारे से हिले
घुल गये परछाइयों के
सिलसिले
कथ्य सारा कह गये
अनकहे हम-तुम
दूरियों के पास

पास के
जिद्दी पहाड़ों की तरह
रोक ली है
किरन-सी चंचल सुलह
ढह रहे हैं
दीखते अनढहे हम-तुम
दूरियों के पास

—रमेश रंजक—

स्टस
किया

अदाल
में इ
कहते
एस्बे
यम
(हेम
राई
तरित
तीन
होने
दीवा
पिंड
मिला
आते
कारण
इन
जा स
बुझाने
मई,
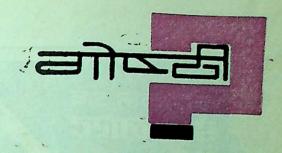
भुवनलाल साहू, किसडोल: एस्बेस्टस क्या है और इस का उपयोग किस में किया जाता है ?

एस्बेस्टस एक प्रकार का तंतुमय और अदात्य सैकतीय खनिज होता है। हिंदी में इसे अश्मतंतु, शिलातंतु और अदह भी कहते हैं। सामान्य व्यवहार में आने वाला एस्बेस्टस मुख्य रूप से सर्पिल धातुक मुलायम चट्टानों से निकला हुआ क्रिसोलाइट (हेमाश्म) होता है। इस के भंडार गहराई में स्थित आग्नेय चट्टानों के कायांतरित रूप में प्राप्त होते हैं। इस के तंतु तीन प्रकार के होते हैं—पिंड रूप में प्राप्त होने वाले, आड़े-टेढ़े और चट्टान की दीवारों के समानांतर सीधे पाये जाने वाले। पिंड रूप में पाये जाने वाले तंतु सीमेंट मिला कर इमारती सामान बनाने के काम आते हैं। सीधे तंतु अधिक लंबे होने के कारण अधिक उपयोगी होते हैं, क्योंकि इन से अधिकतम लंबी-चौड़ी चीजें बुनी जा सकती हैं। इन से बने 'कपड़े' आग बुझाने वालों की पोशाकों, दस्तानों और अदाह्य परदों आदि को बनाने के काम आते हैं। छोटे तंतु कागज, पाइप, ऊष्मारोधी चादरें और विद्युतरोधी सामग्री बनाने के काम आते हैं।

●

राधेश्याम, मोदीनगर : उन वस्तुओं का काल व प्राचीनता कैसे ज्ञात की जाती है जो पृथ्वी के गर्भ से प्राप्त होती हैं ?

भूगर्भ से प्राप्त वस्तुओं की प्राचीनता रेडियो-समस्थानिकों से मालूम की जा सकती है। समस्त रेडियो-समस्थानिकों में एक खास दर से परमाणुओं का क्षय होता रहता है और ऐसा माना जाता है कि पृथ्वी के निर्माण-काल से अब तक इस दर में परिवर्तन नहीं हुआ है। जब किसी रेडियो-सक्रिय तत्त्व के परमाणुओं का क्षय होता है तब एक नये तत्त्व के परमाणुओं का निर्माण होता रहता है। इसलिए यदि पृथ्वी के गर्भ से प्राप्त किसी रेडियो-समस्थानिक के क्षय की दर और उस के परिणामस्वरूप निर्मित नये तत्त्व का परिणाम निश्चित कर लिया जाये
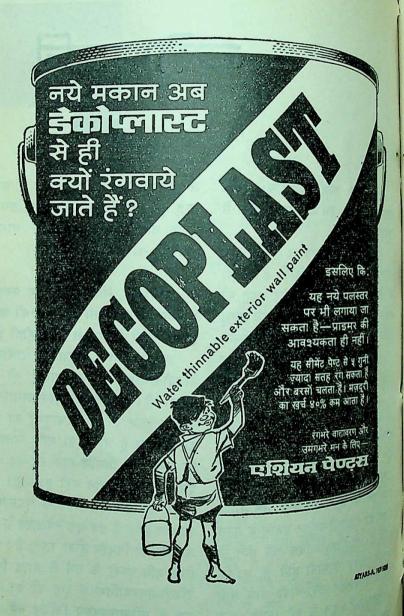
नये मकान अब
डेकोप्लास्ट
से ही
क्यों रंगवाये
जाते हैं ?
DECOPLAST
Water thinnable exterior wall paint
इसलिए कि:
यह नये पलस्तर
पर भी लगाया जा
सकता है—प्राइमर की
आवश्यकता ही नहीं।
यह सीमेंट पेण्ट से ५ गुनी
ज़्यादा सतह रंग सकता है
और बरसों चलता है। मज़दूरी
का खर्च ४०% कम आता है।
रंगभरे वातावरण और
उमंगभरे मन के लिए—
एशियन पेण्ट्स

तो उस तत्त्व की आयु जानी जा सकती है।

पृथ्वी में प्राकृतिक रूप से पाये जाने वाले विभिन्न रेडियो-समस्थानिकों में कार्बन १४ और ट्रीटियम (हाइड्रोजन३) इस काम के लिए बहुत उपयोगी होते हैं। कार्बन १४ प्रत्येक जीवित पदार्थ के जीवनचक्र में निहित रहता है, लेकिन उस पदार्थ की मृत्यु के बाद उस की प्रक्रिया रुक जाती है। इस प्रकार भूगर्भ से प्राप्त किसी चीज में निहित कार्बन १४ की जाँच से यह पता लगाया जा सकता है कि उस चीज का जीवन समाप्त हुए कितना समय बीत चुका है। कार्बन १४ की जाँच-प्रणाली से चमड़ा, लकड़ी, कपड़ा, गोंद, हड्डियाँ, दाँत, सींग आदि अनेक चीजों का काल-निर्धारण किया जा सकता है, भले ही वे ४०,००० वर्ष पहले तक की हों।

●

किशोर पटवर्धन, कानपुर : विद्युत-नियंत्रक क्या है ? इस का आविष्कार किस ने किया और इस की कार्य-प्रणाली क्या है ?

विद्युत-नियंत्रक प्रत्यावर्ती विद्युत-धारा का एक उपकरण होता है जो विद्युत शक्ति को चुंबकीय सर्किट के द्वारा एक सर्किट से दूसरे सर्किट में बदल देता है। इस का उपयोग विद्युत-दाब का परिणाम बदलने के लिए किया जाता है। इस के द्वारा विद्युत-शक्ति को क्षय किये बिना बहुत-बहुत दूर तक पहुँचाया जा सकता है। इस का आविष्कार माइकेल फैराडे ने १८३१ में अपने प्रेरण-सिद्धांत के आधार पर किया था।

विद्युत-नियंत्रक में तार की दो कुंडलियाँ होती हैं जो इस्पात की चद्दरों की आपस में जुड़ी हुई परतों के इर्द-गिर्द लिपटी रहती हैं। प्रत्यावर्ती विद्युत-धारा पहली कुंडली में एक चुंबकीय क्षेत्र उत्पन्न करती है, जो दूसरी कुंडली में एक प्रत्यावर्ती विद्युत-वोल्टता प्रेरित करता है। यदि दूसरी कुंडली में पहली से अधिक तार लिपटे होते हैं तो दूसरी कुंडली की वोल्टता पहली से अधिक होती है। इसी प्रकार यदि उस में तार कम हुए तो उस की वोल्टता जितनी अधिक होती है, विद्युत-क्षय उतना ही कम होता है। विद्युत-नियंत्रक के द्वारा उस के उपयोग-स्थल पर वोल्टता उपयोग के अनुसार कम या अधिक कर ली जाती है।

●

राधेश्याम शर्मा, चुरू तथा इदरीस कुरेशी, छिंदवाड़ा : टाइपराइटर में अक्षर क्रमविहीन क्यों रखे जाते हैं ? ए से जेड तक क्रमशः क्यों नहीं रखे जाते ? और टाइप किया हुआ वह कौन-सा वाक्य है, जिस में अँगरेजी वर्णमाला के सभी वर्णों का उपयोग होता है ?

टाइपराइटर में अक्षरों का व्यक्ति-क्रम अँगुलियों की सुविधा के लिए रखा गया है। उन की स्थिति की-बोर्ड पर इस प्रकार निश्चित की गयी है कि जो अक्षर अधिक काम में आयें, उन पर अँगुलियाँ

आसानी से पहुँच सकें। दूसरा कारण यह है कि व्यतिक्रम के कारण दोनों हाथों की अँगुलियों को टाइप का अभ्यास करने में भी सुविधा रहती है और गलतियाँ होने की गुंजाइश भी कम रहती है।

अँगरेजी वर्णमाला के समस्त वर्णों वाला वाक्य यह है :

A Quick Brown fox jumps over a white lazy dog.

●

सुलभा देव, अहमदाबाद : सूर्य के प्रकाश से विद्युत-शक्ति प्राप्त करने का सिद्धांत और उस की विधि क्या है?

सूर्य के प्रकाश से विद्युत प्राप्त करने के पीछे काम करने वाला सिद्धांत यह है कि प्रकाश-ऊर्जा के फोटाणु जब कुछ खास पदार्थों के परमाणुओं से टकराते हैं तो परमाणुओं से इलेक्ट्राणुओं को अलग कर देते हैं। यदि इन इलेक्ट्राणुओं को इन के यथास्थान लौट जाने से पहले ही अलग कर दिया जाये तो ये विद्युत-धारा के रूप में अन्यत्र ले जाये जा सकते हैं। इलेक्ट्राणुओं के अलग होने से जो स्थान रिक्त होते हैं वे विद्युत-धनावेशों में परिवर्तित हो जाते हैं और उन में भी विद्युत-धारा प्रवाहित हो जाती है।

विधि जानने के लिए सौर-सेल का उदाहरण लिया जा सकता है। इस में एक पतली सिलिकन (सैकत) पपड़ी ली जाती है, जिस की एक सतह पर आर्सेनिक-जैसे किसी पदार्थ के घोल की परत चढ़ा दी जाती है और दूसरी सतह पर बोरोन या ऐसे ही किसी अन्य पदार्थ की परत चढ़ायी जाती है। इन दोनों परतों के बीच की जगह एक विद्युत-क्षेत्र का काम करती है। प्रकाश जब इन दोनों परतों में से गुजरता है तो दोनों परतों में इलेक्ट्राणुओं और रिक्त स्थानों के जोड़े उत्पन्न करता जाता है और दोनों परतों को जोड़ने वाला क्षेत्र इलेक्ट्राणुओं को आर्सेनिक की ओर तथा धनावेशों को बोरोन की ओर ठेल देता है। जब इन दोनों सतहों को तार से जोड़ दिया जाता है तो विद्युत-धारा प्रवाहित होने लगती है और विद्युतशक्ति उत्पन्न करती है।

●

अतुलकुमार अग्रवाल, धामपुर : 'ज्ञ' का उच्चारण 'ग्य' किया जाता है तो इसे 'ग्य' ही क्यों नहीं लिखा जाता?

'ज्ञ' के विभिन्न स्थानों पर विभिन्न उच्चारण पाये जाते हैं, जैसे प्रज्ञा को कहीं 'प्रग्या' बोलते हैं, कहीं 'प्रग्न्या', कहीं 'प्रज्यां' और कहीं 'प्रद्न्या'। भाषाविज्ञानियों का मत है कि वैदिक संस्कृत में 'ज्ञ' का जो उच्चारण था, वह लुप्त हो चुका है और यह निर्णय करना कठिन है कि इस का शुद्ध उच्चारण क्या था।

कंगारू आस्ट्रेलिया का जानवर है। लेकिन आस्ट्रेलिया में इस शब्द का अर्थ होता है 'मैं समझता नहीं हूँ'।

सार-संक्षेप
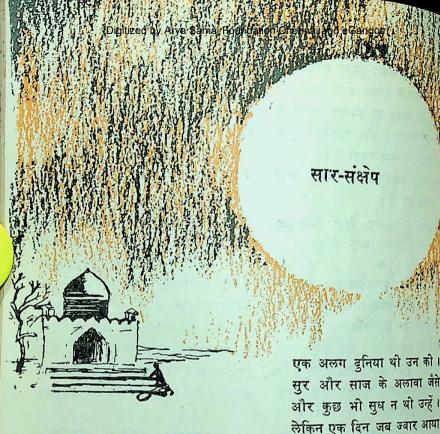
एक अलग दुनिया थी उन की। सुर और साज के अलावा जैसे और कुछ भी सुध न थी उन्हें। लेकिन एक दिन जब ज्वार आया तो अनेक प्रश्न-चिह्न सहसा उभर आये। एक समर्पित संगीतज्ञ की मर्मस्पर्शी जीवन-कहानी—मराठी के यशस्वी लेखक रणजीत देसाई की लेखनी से। इस का अनुवाद प्रस्तुत किया है सरोजिनी वर्मा ने

• रणजीत देसाई

ग्वालियर के महाराजा जियाजीराव कलाकारों के आश्रयदाता और संगीत रसिक के रूप में विख्यात थे। उन के राज्य में आयोजित एक विशाल संगीत-समारोह में भारत के अनेक श्रेष्ठ गायक आने वाले थे—पखावज-वादक कुदऊँसिंह, सरोद-वादक फिदा हुसेन, सितार-वादक अमृतसेन, गायक तानरस खाँ, अन्ना फत्तू तथा रहमत खाँ। इन सुविख्यात संगीतज्ञों के साथ एक और नाम बार-बार लिया जा रहा था वह था—बीन (वीणा) वादक बंदेअली का। महाराजा के स्नेहभाजन होने की वजह से बंदेअली समय से कुछ पूर्व ही ग्वालियर पधार गये थे और महाराजा के निजी राजमहल में ही बड़े स्नेह एवं सम्मान से ठहरा
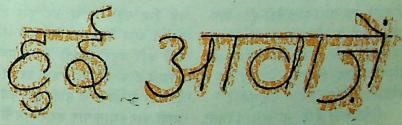
दिये गये थे ।

दोपहरी बीत चली थी । बंदेअली के कक्ष से बीन के स्वर गूँज रहे थे। स्थूल देह, गौर वर्ण--बंदेअली राजमहल में अकेले ही बैठे बीन छेड़ रहे थे । तन पर बुंदेलखंडी अँगरखा और कमर पर अँगरखे को घेर कर कसी हुई गुलाबी दुपट्टे की गाँठ थी । उन्नत भाल पर गहरी रेखाएँ। घनी भौंहों के नीचे मुँदी हुई बड़ी-बड़ी पलकें । तीखी नासिका, जिस के नथुने स्वर की विभोरता में तन्मय हो कर कुछ फूल उठे थे। दोनों ओर समान आकार के दो तूंबे जिन में से एक दाहिने कंधे से पीछे झुका हुआ था । दाहिने हाथ की अँगुली तारों को छेड़ रही थी और वातावरण उस स्वर में रस-विभोर हो उठा था। तभी सहसा बंदेअली ने बीन रख दी । महल में एकाएक निस्तब्धता फैल गयी। एक हलके निःश्वास से महल का सन्नाटा और बंदेअली की तंद्रा टूटी । आँखें अनायास द्वार पर किसी को खोजने लगीं मगर कोई नहीं था वहाँ ।

वे फुर्ती से उठे । दरवाजे से बाहर झाँका और ठिठक गये। महल के दरवाजे के पास संगमरमर के फर्श पर दीवार के सहारे एक नारी-मूर्ति बैठी थी। पारदर्शी ओढ़नी के भीतर से उस के मुँदे हुए नयन झाँक रहे थे। कुरता और सलवार का परिधान साफ दिखायी दे रहा था । बंदेअली ने पूछा, "कौन हो तुम ?"

निश्चल-सी बैठी नारी ने बंदेअली की ओर देख कर कहा, "जी!" ओढ़नी तनिक पीछे सरक गयी। बंदेअली को उस का मुख दिखायी दिया। साँवली रूप-छटा कृशकाय--वह तरुणी बंदेअली को सामने देख कर घबरा उठी । हड़बड़ी में उठती हुई बोली, "मैं...मैं..."

"कौन हो तुम ?" बंदेअली ने पूछा।

"मैंऽ दासी..."

"दासी ! यहाँ क्या कर रही थी?"

"जी, बीन सुन रही थी।"

"बीन सुन रही थी ?" बंदेअली के होठों पर व्यंग्य मुसकान झलक उठी।

"इतना सस्ता समझ रखा था तुम ने मेरी बीन को ?"

"जी..."

"बेवकूफ लड़की ! पता नहीं कि बंदेअली की बीन सुनने के लिए गंडा बाँधना पड़ता है ! झाड़ू लगाने वाली दासी ने यह गुस्ताखी कैसे की ?"

"ओह !" युवती की आँखें एक विचित्र चमक से फैल गयीं ।

"क्या कहा ?" बंदेअली आपे से बाहर हो उठे ।

"कुछ नहीं, जाती हूँ मैं ..."

बंदेअली कुछ बोलने को हुए कि वह बोल पड़ी, "कृपा कर कुछ और न बोलें ! आप के स्वरों के आगे आप की बातें बड़ी बेसुरी लगती हैं ।" युवती ने ओढ़नी ठीक की और चल पड़ी । दूसरे ही पल बारादरी से होती हुई उद्यान में आयी और उद्यान पार कर सामने के महल

में अदृश्य हो गयी । बंदेअली हतप्रभ से खड़े रहे । उन की आँखों में बड़ी-बड़ी सलोनी आँखें, शांतिस्निग्ध रूप, रस बस गया था ।

शाम का समय था । बंदेअली महल में बाहर चहलकदमी कर रहे थे । सहसा कान में आती हुई किसी जादुई आवाज से वे ठिठक कर खड़े हो गये । उस आवाज में अद्भुत माधुर्य और वेदना थी । अनजाने ही वे आवाज की दिशा में बढ़ने लगे ।

रैन गयी दिन जाय

रमैया बिन रहियो न जाय ।

गीत के बोल रह-रह कर उन के मन के भीतर कहीं उतरते चले जा रहे थे । एकाएक उन के बढ़ते कदम रुक गये । किसी सेवक ने दौड़ कर उन्हें रोक लिया था, "हुजूर आगे न बढ़ें !"

"क्यों ?"

"इधर गोशा है सरकार !"

उस की बात अनसुनी कर बंदेअली ने पूछा, "गा कौन रहा था ?"

"राजगायिका चुन्ना है सरकार ।"

संगीत रुक गया । बंदेअली की नजर महल पर गयी । खिड़कियों के परदों में सरसराहट होने लगी । अनेक झाँकती हुई आँखों का अहसास हो रहा था । हलकी खिलखिलाहट ने उन्हें विश्वास दिला दिया कि यह स्थान सचमुच उन के लिए निषिद्ध है । वे बोले, "अच्छा सुनो ! मेरा एक काम कर दो मैं चला जाऊँगा ।"

"जी !"

"भीतर जाकर चुन्ना से कह दो कि अभी जो गा रही थी वही गाती रहे ।"

सेवक चला गया । कुछ क्षणों में भीतर से एक दासी ने आ कर बंदेअली को प्रणाम किया और बोली, "हुजूर का संदेश महल के भीतर पहुँच गया है ।"

"फिर ?"

"आप के लिए संदेश लायी हूँ ।"

"कहो !"

"चुन्ना का गाना सुनना हो तो गंडा बँधवाना होता है—कहलाया है उन्होंने ।"

दासी इतना कह कर तुरंत लौट गयी । बंदेअली क्रोध से सुलग उठे । मगर तभी कुछ याद आया । गरूर उतर गया । चेहरे पर मुसकराहट बिखर आयी । एक नजर खिड़की पर डाल कर वे अपने महल की ओर लौट पड़े ।

महल में उन का शिष्य मुराद मौजूद था । बंदेअली को देख कर बोला, "एक अर्ज है !"

"कहो !"

"दीवान बहादुर आये थे । आप की मर्जी हो तो महाराजा ने कहा है कि आज रात..."

"जरूर जरूर ! ऐसा रसिया अन्नदाता कहाँ मिलेगा ! महाराजा को मेरा आदाब पहुँचाना । हुक्म होते ही उन की सेवा में हाजिर हो जाऊँगा ।"

प्रसन्न हो कर मुराद चला गया।

"बेटा, जाने से पहले सुराही और प्याला यहाँ रख देना।"

मदिरा की सुराही बंदेअली के सामने रख कर मुराद चला गया। बंदेअली विचारों में खोये-खोये सुरा-पान करते रहे।

दरबारे खास सजा था। विशिष्ट आमंत्रित सरदार महफिल में उपस्थित थे। परदे के पीछ रानियाँ बैठी थीं। महाराजा के पधारते ही सब ने उठ कर उन का अभिवादन किया। जरी-कलाबत्तू से सुसज्जित विशेष दीवान पर महाराजा विराजमान हुए। दरबार के बीच में सुसज्जित बैठकी पर खड़े हुए बंदेअली और मुराद महाराजा का इशारा पा कर वीरासन ले कर बैठ गये। मिली हुई बीन को हाथ से उठा कर बंदेअली ने बीन की वंदना की। स्वर गूंजने लगे। आँखें बंद हो गयीं। स्वरों के बीच से उभर कर मल्हार-राग आकार लेने लगा। बीन की गूंजती हुई स्वर लहरी रसिक श्रोताओं को विभोर करने लगी। समय और काल का भेदभाव भुला कर सारा जन-समुदाय उस नादब्रह्म में स्वयं को डुबो बैठा।

पता नहीं कब बंदेअली ने बीन नीचे रख कर सब की तंद्रा तोड़ी। प्रसन्न हो महाराज ने बंदेअली को बाँहों में भींच लिया।

"बंदेअली, कितना भाग्यशाली हूँ मैं! आप की कला का जवाब नहीं।"

बंदेअली ने संकोच से महाराजा की ओर देखा।

महाराजा ने अपने गले से बहुमूल्य हार उतार कर बंदेअली के गले में डाल दिया और हाथ थाम कर उन्हें अपने सिंहासन पर ला कर बिठाया। महफिल उठ गयी। लोग महाराज का इशारा पा कर जाने लगे। दरबार खाली होने के बाद महाराज और बंदेअली की बातों में रंग भर उठा। जिस समय बंदेअली उठे आधी रात गुजर चुकी थी।

बंदेअली की आँखें नींद और नशे से बोझिल हो रही थीं। लड़खड़ाते हुए कदमों से वे स्फटिक की बारहदरी के बीच से चले जा रहे थे। बारहदरी की नक्काशीदार मेहराबों में आलोकित शमादान लटक रहे थे। बाहर बगीचे में फैली दूधिया चाँदनी में बारहदरी के चाँदी के मेहराब चमक रहे थे। बंदेअली अलसाये उनींदे-से चले जा रहे थे कि एकाएक सामने कोई चीज आ कर गिरी। वे उसी तरह लपके। तभी सहसा कुछ खयाल आया। वे वापस लौटे। देखा—फर्श पर गिरी हुई वस्तु को एक नाजुक हाथ उठा रहा है! फुर्ती से बढ़ कर उन्होंने उस हाथ को पकड़ लिया। दुपट्टे में लिपटी एक नारी-मूर्ति थी। चाँदनी पीछे से पड़ने के कारण चेहरे पर अँधेरा था। उस के हाथ को एकटक देखते हुए बंदेअली ने पूछा, "क्या है हाथ में?"

नाजुक अँगुलियों वाली हथेली खुल गयी। मेंहदी से रंगे उस कोमल हाथ पर चाँदनी का आलोक ठहर गया था। खुली हथेली पर चंपा का एक फूल था।

"क्या है यह?"

"जी, सेवा...."

"बेवकूफ लड़की," कह कर बंदेअली ने हाथ छोड़ दिया। अभी वे दो कदम ही आगे बढ़े कि फिर सहसा कुछ सोच कर वापस लौटे। गंभीर होकर पूछा, "मगर तुम हो कौन?"

पर उत्तर देने के लिए वहाँ कोई नहीं था। बारहदरी खाली थी। नारी जा चुकी थी। अचरज से कंधे को झटका दे कर बंदेअली लौट पड़े।

दूसरे दिन मुराद राजमहल से फिर संदेश ले कर आया। बंदेअली के माथे पर किंचित बल पड़े मगर उन्होंने स्वीकृति भेज दी। दिन भर वे मदिरा में डूबे रहे। चित्त अशांत हो उठा था उन का। रात होने पर वे अपने शिष्य मुराद के साथ दरबार में पहुँचे। लपक कर महाराजा ने उन का स्वागत किया और हाथ थाम कर अपने दीवान के पास ही सजे हुए एक दीवान पर बिठाया। बंदेअली को असमंजस में देख महाराजा बोले, "बंदेअली!"

"जी, अन्नदाता!"

"आज का संगीत-समारोह खास आप के ही लिए हम ने आयोजित किया है।"

"जी, समझा नहीं सरकार।"

"कल आप की बीन सुन कर मन विभोर हो उठा था। सोचा, कुछ सेवा हमारी ओर से भी! आज हम आप को कष्ट न दे कर अपने दरबार का एक खास गायन सुनवायेंगे।"

बंदेअली मुसकराये, "आप की ख्वाहिश की मैं इज्जत करता हूँ सरकार मगर..."

"कहिये।"

"जी, मैं माफी चाहूँगा। जाने क्यों ऐसे-वैसे गाने में अब अपना मन रमता नहीं सरकार!"

"मैं भी जानता हूँ बंदेअली! फिर भी इस महफिल का आयोजन किया है मैं ने।"

"जैसा हुकुम..."

महफिल का बदला हुआ रंग भाँप कर मुराद ने बीन बंदेअली के पास ला कर रख दी और खुद उन के पीछे जा कर खड़ा हो गया। बीच में लगे हुए दीवान पर साजिंदे आ कर बैठ गये और थोड़ी देर बाद उसी दीवान पर चुन्ना खड़ी हुई। जरी-कलाबत्तू के काम का काला कुरता, तंग पायजामा, सिर पर झीनी ओढ़नी। दीवान पर आते ही ओढ़नी सिर से सरक कर कंधे पर स्थिर हो गयी। भावभरी आँखों से उस ने बारी-बारी से महाराज और बंदेअली—दोनों को देखा और आदाब बजाने के लिए झुक कर हाथ को माथे पर लगाया।

"बंदेअली, यह हमारी राजगायिका

चुन्ना है।"

चुन्ना बैठ गयी। तानपूरे बजने लगे। गीत के स्वर उठने लगे। चुन्ना के गले का वेदना भरा स्वर मन के भीतर पैंठने लगा। चुन्ना गाती रही—

पानी बिन मीन पियासी रे
मोहे सुन-सुन आवत हाँसी रे
आत्मज्ञान बिन नर भटकत है
कहाँ है मथुरा काशी रे
मीरा के प्रभु गिरधर नागर
सहज मिले अविनाशी रे

बंदेअली स्वर के दर्द में डूब गये! यही तो है वह आवाज जिस में खिंचे-खिंचे-से वे उद्यान में...

भजन पूरा हो गया और अपने में खोये-खोये-से बंदेअली दरबार का रिवाज भूल कर बोल पड़े, "सुभान अल्लाह! वाहऽ वाहऽ"

"अच्छा लगा?" महाराजा ने पूछा।

"जी, बहुत अच्छा..."

"मगर बंदेअली, हमारी चुन्ना सिवा भजनों के और कुछ भी नहीं गाती।"

"गाने की जरूरत ही क्या है महाराज? इस के पास अल्लाह की देन है और अल्लाह की देन ही सब से बड़ी..."

बंदेअली उठ और महाराजा द्वारा दिया गया हार उन्होंने अपने गले से उतारा और चुन्ना के पास जा कर उसे देने लगे। चुन्ना ने सलाम किया और बोली, "इस के लिए माफी चाहती हूँ। मुझे मेरा इनाम पहले ही मिल चुका है।"

"मतलब?"

चुन्ना ने कमर में खोसा नन्हा बटुआ निकाला और उस में से चाँदी की एक डब्बी निकाल कर खोली और बंदेअली की ओर बढ़ायी। डबिया में चंपा का सूखा हुआ फूल था। बंदेअली की आँखें उस फूल पर अटक गयीं। नशा तेजी से उतरने लगा। मन की कई परतें सहसा खुल गयीं। वे मुसकरा उठे। बोले, "ओह, ठीक है! मैं यह हार दे कर तुम्हारा अपमान नहीं करूँगा।"

बंदेअली वापस लौट पड़े। क्या बात हो गयी, कोई समझ न सका। बंदेअली को यों वापस लौटते देख कर महाराजा ने पूछा, "चुन्ना ने हार लिया नहीं?"

"जी नहीं।"

क्रोध में भर कर महाराजा ने पूछा, "क्यों?"

"महाराज नाराज न हों। मेरा कोई अपमान नहीं हुआ! उल्टे यह हार न

ले कर उस ने मुझे जो इज्जत बख्शी है उस का जवाब नहीं । सचमुच आप के दरबार के कलाकार बहुत रसिया हैं, यह देख कर मुझे बहुत खुशी हुई ।"

बंदेअली को खुश देख कर महाराजा को इत्मीनान हुआ । एक अनोखा आत्म-संतोष ले कर बंदेअली उस रात अपने महल में लौटे । दूसरे दिन बगीचे में टहलते हुए बंदेअली के कान में फिर वही दर्द भरी आवाज पड़ी । सामने वाली हवेली से गीत के बोल उठ रहे थे—

जिन संग मैं ने नेह लगाया
वाको ढूंढ़त जाऊंगी

अब बंदेअली दिन ढले जब भी बगीचे में आते वही जादूभरी मीठी आवाज उन की अगवानी करती हुई मिलती । बंदेअली अनजाने ही दिन ढलने की प्रतीक्षा करते ।

समारोह का दिन आ गया । विशेष रूप से सजे सभा-पंडप में समारोह का आयोजन था । कलाकारों के लिए बहुत अच्छे-अच्छे आसन लगाये गये थे । सामने सब से पहले महाराजा के लिए जरी, कलाबत्तू के खूबसूरत आच्छादन और तोषक से सजा हुआ दीवान दिखायी दे रहा था । दरबार के खास-खास सरदार, अमीर-उमराव आ चुके थे । महाराजा पधारे । सब ने उठ कर अगवानी की ।

महफिल के कार्यक्रम की घोषणा की गयी । साथ ही हर कलाकार के लिए कार्यक्रम की अवधि निश्चित की गयी । महफिल का पहला कलाकार होने का गौरव बंदेअली को मिला । महाराज का इशारा पाते ही बंदेअली ने सिर झुका कर आदाब किया और सभा-मंडप के मध्य भाग में सजे हुए दीवान पर जा कर बैठ गये । साज मिलाये गये । बीन उठा ली गयी । महाराजा ने पूछा, "क्यों बंदेअली, संगत नहीं चाहिए ?"

"मिल जाये तो अच्छा है ?"

महाराजा ने दरबार पर सरसरी नजर डाली । नजर मिलते ही विख्यात पखावजी कुदऊंसिंग खड़े हुए । बंदेअली ने उन्हें उठता देख बीन नीचे रख दी और खड़े हो कर बोले, "मेरी इस मामूली बीन में आप संगत करें, इसे मैं अल्लाह की मेहरबानी ही समझूंगा ।"

कुदऊंसिंग ने पखावज सँभाल ली । साज के सुरों का अंदाज लेती हुई बंदेअली की लंबी अँगुलियाँ परदे के साथ-साथ तारों को स्पर्श करने को उतावली हो

उठीं । दाहिने हाथ की पहली अँगुली ने विश्वास के साथ तार को छेड़ दिया और एक अलौकिक झंकार से सभा-मंडप झंकृत हो उठा । बंदेअली ललित जोड़ छेड़ रहे थे । मध्यम ऐसा लगता था कि जी चाहता था सारी जिंदगी यह स्वर उठता ही रहे ।

विलंबित खतम हुआ और गत आरंभ हो गयी । कुदऊँसिंग की पखावज थिरक रही थी और सारे श्रोता झूम रहे थे । कुदऊँसिंग स्वयं भी झूम रहे थे, पर पखावज पर थिरकते उन के हाथ कब रुके इस का भी पता उन्हें नहीं चल पाया ! बीन रुकी और दरबार तालियों की गड़गड़ाहट से गूँज उठा । कुदऊँसिंग ने बंदेअली की पीठ को थपथपाया और छलछलाती आँखों से उन्हें देखते हुए बोले, "जियो बेटा ! जियो !"

महाराजा जियाजीराव अपने दीवान पर से उठ खड़े हुए । आनंद से उन का चेहरा खिला हुआ था । उन के उठते ही बंदेअली भी खड़े हो गये । महाराजा बोले, "जवाब नहीं बंदेअली ! आप की कला बेजोड़ है । आज आप ने सिद्ध कर दिया कि कला देश-काल का कोई बंधन नहीं मानती । बोलिये क्या दूँ इनाम में आप को ?"

"अन्नदाता, आप खुश हो गये तो मुझे सब कुछ मिल गया ।"

"नहीं, आज यह जवाब मुझे नहीं सुनना है । कुछ-न-कुछ तो माँगिये"!

"अन्नदाता, माँगना आसान है मगर देना मुश्किल ।"

"खाँ साहब, मेरी जबान खाली नहीं जायेगी । माँगिये तो सही !" विश्वास के साथ महाराजा बोले ।

"सचमुच माँगूँ ?" जियाजीराव की आँखों की तरफ देखते हुए बंदेअली बोले, "कलाकार का दिमाग बहुत ऊँचा होता है हुजूर ! मामूली चीजें उस की नजरों में नहीं चढ़तीं । जो चढ़ती हैं उस का देना..."

"बोलिये भी बंदेअली ! जो चाहिए जी खोल कर माँगिये — धन-दौलत, सम्मान जो चाहें । चाहें तो मुझे भी । कम-से-कम इसी निमित्त हमें अपनी दरिद्रता का अहसास तो होगा । ऐश्वर्य का घमंड भी दूर हो जायेगा ।"

"तो माँगूँ ?"

"हाँ, हाँ जरूर ।"

बंदेअली की निगाह चिक की तरफ मुड़ी । अँगुली से इशारा कर बोले, "महाराज, माँगने को कह रहे हैं तो एक ही चीज माँगता हूँ—आप के दरबार की राजगायिका है न चुन्ना ! उसे पा कर अपने को निहाल समझूँगा ।"

इस अनोखी माँग से सभा स्तब्ध हो गयी । महाराजा खुद भी बेचैन हो उठे । बोले, "बंदेअली, इस के अलावा और कुछ भी आप माँगते तो खुशी से देता मगर... चुन्ना ? असंभव है ।"

"क्यों महाराज ?"

"खाँ साहब ! कम-से-कम अपनी उम्र का तो खयाल कीजिये ! आप की उम्र कितनी अधिक है, और चुन्ना ...!"

"मुहब्बत उम्र नहीं देखा करती अन्नदाता !"

महाराजा के लिए हँसी रोकना कठिन हो गया। फिर भी गंभीर हो कर बोले, "यह भी मंजूर है। मगर मुहब्बत एकतरफा नहीं होती बंदेअली ! फिर चुन्ना सिर्फ राजगायिका नहीं, मेरी बेटी की तरह इस महल में पली है। संगीत के लिए मनुष्य का सौदा करने वाला स्वार्थी मैं नहीं हूँ बंदेअली !"

"अगर चुन्ना राजी हो जाये तो ?"

बंदेअली की ढिठाई पर सारा दरबार स्तंभित था।

"यह असंभव है।"

"महाराज खुद चुन्ना से पूछ लें, उस के इनकार करने पर मैं अपनी माँग लौटा लूँगा।"

"ठीक है।"

महाराजा अंदर गये। चुन्ना को बुलाया गया। महाराजा बोले, "चुन्ना सब कुछ सुन चुकी हो ! मेरी कोई जबरदस्ती नहीं ! तुम जो चाहोगी वही निर्णय लूँगा, बोलो !"

चुन्ना ने महाराज के पाँव पकड़ लिये। बोली, "मेरा अहोभाग्य महाराज !"

महाराजा सब कुछ समझ गये। दरबार के उत्सुकता की सीमा नहीं थी। बंदेअली ने महाराजा की तरफ देखा, "बंदेअली, मैं हार गया ! आप ठीक कह रहे थे। सचमुच ही कला के राज्य में उम्र का बंधन नहीं होता। आज ही शाही व्यय से आप का विवाह होगा।"

बंदेअली और चुन्ना का विवाह बड़ी धूमधाम से किया गया। शाही बरात दुलहिन को ले कर बंदेअली के निवास की ओर चल पड़ी। दरबार के अनेक रसिक सरदारों और उमरावों को यह उत्सुकता हो उठी कि आखिर षोडशी चुन्ना और अधेड़ बंदेअली की पहली रात कैसे बीतती है। उन्होंने बंदेअली के शयन-कक्ष में गुप्त झरोखे बना डाले और आँखें लगा कर बैठे रहे। कुछ छप्पर पर चढ़ कर चुपचाप बैठ गये और सूराखों में नजर लगाये बैठे रहे।

हँसी-ठिठोली के वातावरण में चुन्ना और बंदेअली ने भीतर प्रवेश किया। फूलों से सुसज्जित शयन-कक्ष में बंदेअली चुन्ना की प्रतीक्षा में खड़े थे। वह आयी। द्वार बंद हो गये। झरोखों में लगी आँखें सतर्क हो गयीं। अचकन उतार कर बंदेअली लाज से सिमटी खड़ी चुन्ना के निकट गये। चेहरे पर पड़ी फूलों की झालर को हौले से उठाया। लज्जा से उस के नयन तनिक झुक गये। उस के सौंदर्य में खोये-खोये-से बंदेअली बोले, "चुन्ना !"

चुन्ना चुप रही। उसे हाथ पकड़ कर दीवान पर बिठाते हुए एकाएक वे जोर से हँस पड़े, "निकाह हो जाने के बाद क्या बोलना नहीं चाहिए चुन्ना ?"
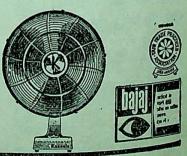
चुन्ना मुसकरा उठी ।

"तुम ने मेरी बात नहीं रखी । मगर मैं ने तुम्हारी बात मानी है ।"

"जी !" चुन्ना ने अब बंदेअली की तरफ देखा ।

"शायद भूल गयीं ! तुम ने कहलाया था कि तुम्हारा गाना सुनने के लिए गंडा बाँधना होगा ? और देखो, मैं ने तुम से निकाह ही कर डाला । अब तो सुन सकूँगा न !"

चुन्ना खिलखिला कर हँस पड़ी ।

"उस दिन तुम क्या गा रही थीं ?"

"रमैया बिन रहियो न जाये !" चुन्ना बोली ।

"हाँ वही । आज गाओगी ? आज हमारी शादी की पहली रात है । जी करता है तुम गाती रहो और मैं बीन बजाता रहूँ !"

"जी !"

बंदेअली ने बीन मिलायी । मदिरा पास ही रखी थी । तानपूरा मिला कर चुन्ना के हाथ में पकड़ा दिया । चुन्ना गाने लगी —

रमैया बिन रहियो न जाये
खान पान मोहे फीको लागे
रैन गयी दिन जाये
मीरा कहे प्रभु तुम मिलिया बिन
तरस-तरस तन जाये ।

भजन पूरा होने पर बंदेअली दूसरा भजन गाने का आग्रह करते । बीन बजती रही । रात गुजरती रही । छिप कर झरोखे और खपरैले पर बैठे लोग मुग्ध हो भीतर का यह दृश्य देखते रहे । उगते सूर्य का आलोक छप्पर पर जब पड़ा तब छप्पर पर चढ़े लोग होश में आये । घर के चारों तरफ बढ़ती भीड़ देख कर लोग घबरा कर जल्दी-जल्दी हटने लगे ।

पहली रात बीत गयी और फिर अनेक रातें और दिन इसी तरह बीतने लगे । चुन्ना बंदेअली के जीवन में आयी और बंदेअली मानो जिंदगी का सर्वस्व पा गये । गृहस्थी का एक दाँव बंदेअली पहले खेल चुके थे । मगर उस में उन्हें जो नहीं मिल सका था, इस संगिनी में मिल गया था । बंदेअली बीन छेड़ते और चुन्ना तंतुवाद्य से निकलती हुई क्लिष्ट-से-क्लिष्ट तानें अपने कंठ से जैसी की तैसी उतार देती । मदिरा की खुमारी और चुन्ना-सी संगिनी पा बंदेअली सब कुछ बिसार बैठे । सिर्फ भजन गाने वाली चुन्ना उन के साथ रह कर शास्त्रीय-संगीत-गायिका के रूप में विख्यात हो गयी । इंदौर, धार, देवास, जयपुर, जोधपुर सभी राज-दरबार चुन्ना और बंदेअली की युगल जोड़ी से परिचित हो उठे । इंदौर के संगीत रसिकों के अनुरोध पर चुन्ना को ले कर बंदेअली इंदौर पधारे हुए थे । इंदौर की उस महफिल में उन की जोड़ी ने अद्भुत रंग भरा । सारी सभा विभोर हो कर झूम रही थी । बंदेअली ने बंबई से पधारे नारायण बुवा से सहज ही पूछ लिया, "कहिये बुवा साहब, कैसा लगा

आप को ?"

"हाँ, इंदौर-जैसी जगह के लिए ठीक ही है।"

"यानी... क्या ?" बंदेअली के माथे पर सलवटें पड़ीं।

"खाँ साहब ! खरी बात कहूँगा तो आप बुरा मान बैठेंगे।"

"कहिये बुवा साहब। आधी बात कहने से खरी बात ही कहना बेहतर है।"

"गाना पसंद आया, मगर उस गाने की कोई मिसाल नहीं ..."

"किस गाने की ?"

"बंबई में कृष्णाबाई जैसा गाती है ! वाह, क्या आवाज है ! यह सब तो उस के सामने कुछ भी नहीं।"

"अच्छा ! सचमुच ?"

"क्या झूठ लगता है ?" बुवा भी अब उत्साह में थे, "तैयारी हो तो खुद देख लीजिये, मैं उस के साथ चुन्ना का गायन आयोजित कर दूँगा।"

बंदेअली को उन की बातों से चुन्ना का अपमान होता लगा। चुन्ना केवल उन की पत्नी नहीं, शिष्या भी थी। बड़ी लगन से उसे सिखाया था बंदेअली ने। चुन्ना ने अपने कंठ में बीन की समस्त बारीकियाँ और स्वर का सुरीलापन सहज रूप से सही-सही ग्रहण कर लिया था। उन के बुलावे को बंदेअली ने तुरंत स्वीकार कर लिया और समारोह की निश्चित तारीख पर वे बंबई पहुँच गये।

कृष्णाबाई 'कोल्हापुरकरणी' के नाम से बंबई का संपूर्ण रसिक समुदाय परिचित था। अद्‌भुत सुरीले कंठ के साथ-साथ अनिंद्य सौंदर्य भी उन्हें ईश्वर की ओर से मिला था। कृष्णाबाई के घर सारा रसिया समाज एकत्र था। बंदेअली मुराद और चुन्ना को ले कर पहुँचे थे। कृष्णाबाई ने आदर से उन का स्वागत किया।

चुन्ना साँवली-सलोनी थी तो कृष्णाबाई लावण्यमयी। कुछ मानिनी भी। बंदेअली का वह सम्मान करती थी मगर चुन्ना को मानने को तैयार न थी। महफिल कौन शुरू करे, इस पर विवाद हुआ और निश्चय किया गया कि चुन्ना पहले गा कर हट जाये, फिर श्रोता कृष्णाबाई का जी-भर गायन सुनें।

इस चर्चा से बंदेअली की मदिरा से आरक्त आँखें आवेश के कारण और आरक्त हो उठीं, किंतु उन्होंने क्रोध को पी लिया और चुन्ना के कान में कुछ कहा जिस की स्वीकृति चुन्ना ने सहज ही दे दी।

साज मिल गये। चुन्ना गाने के लिए बैठ गयी। संगत देने के लिए बंदेअली स्वयं वीरासन ले कर बैठे। सारी सभा तटस्थ-सी थी। झनकारते हुए तानपूरे के बीच से बीन का आलौकिक स्वर कब उठा और उस स्वर में कब आ कर चुन्ना का कंठ-स्वर मिल गया, यह कोई जान न सका। बंदेअली अपनी बीन में नयी-नयी रचनाओं का सृजन करते और चुन्ना वैसी की वैसी ही उन्हें अपने कंठ से उतार देती। गुरु-

शिष्या के बीच रचा गया वह एक नाटक-सा था। मगर उस नाटक में सारे श्रोता मंत्र-मुग्ध हो उठे थे। चुन्ना का गायन खत्म हुआ। विजयी मुसकान के साथ बंदेअली ने विश्वास भरी दृष्टि श्रोताओं पर डाली। सब विभोर हो कर गुमसुम बैठे थे।

आँखों में भरे आनंद के आँसुओं को कृष्णाबाई ने अँगुलियों से पोंछा। भरी महफिल में चुन्ना को गले से लगा लिया और मुक्त कंठ से चुन्ना की प्रशंसा करती हुई अपनी पराजय स्वीकार कर ली। बंदेअली से माफी माँगी। हँस कर बंदेअली बोले, "कृष्णाबाई, गुनाह तो सचमुच ही आप ने किया है! सजा मिलनी ही चाहिए।"

"आप दें तो उसे वरदान के रूप में सहर्ष स्वीकार कर लूँगी खाँ साहब।"

"तो सुनिये, हम लोग इतनी दूर से सिर्फ इम्तिहान देने नहीं आये हैं। आप को भी कुछ सुनाना होगा।"

"पर एक अनुरोध है," कृष्णाबाई बोलीं।

"कहिये!"

"चुन्नाबाई को भी मेरे संग गाना होगा।"

"जरूर," बंदेअली प्रसन्न हो कर बोले, "चुन्ना ही क्यों, मैं भी साथ दूँगा आप का!"

महफिल का रंग पलट गया। कृष्णाबाई और चुन्ना साथ-साथ गाने के लिए बैठीं। बंदेअली की अँगुलियाँ बीन पर नृत्य करने लगीं। तीन उत्कृष्ट कलाकार आपस में ही एक-दूसरे की प्रशंसा करते-करते महफिल को ही भुला बैठे थे।

चुन्ना की बढ़ती हुई ख्याति के साथ-साथ बंदेअली की प्रसन्नता भी बढ़ रही थी। अनेक महफिलें आयोजित हो रही थीं। इसी बीच इंदौर की एक महफिल में पहुँच कर चुन्ना सहसा अस्वस्थ हो गयी। उस की आँखों में किसी तरह घाव हो गया और दिन-ब-दिन गहरा होता चला गया। इंदौर के सारे वैद्य-हकीम हार गये। लखनऊ, दिल्ली, ग्वालियर, अहमदाबाद, कलकत्ता, बंबई सभी जगह बंदेअली चुन्ना को ले कर घूमते रहे, मगर कोई लाभ नहीं हुआ। बंदेअली की घबराहट बढ़ने लगी। बीन से जी उचट गया। सब का दिलासा झूठा लगने लगा। तभी पूना के वैद्यराज मेहेंदड़े का नाम किसी ने सुझाया। उन के हाथ में सिद्धि थी। बंदेअली के हृदय में फिर आशा बँधी। इंदौर से पूना की यात्रा की योजना बन गयी। अस्वस्थता और सफर से त्रस्त चुन्ना ऊब कर बोली, "क्या फायदा?"

"ऐसे न बोल चुन्ना!" बंदेअली आकुल हो उठे, "आखिरी कोशिश है, जरूर करूँगा। अल्लाह सुनेगा मेरी।"

चुन्ना खिन्न हँसी हँसी। निराशा-भरी उस हँसी से बंदेअली बेचैन हो उठे।

"मैं जो कर रहा हूँ उस पर भरोसा रखो चुन्ना! सिर्फ संगीत की साधना मैं ने नहीं की, अजमेर के फकीर की दुआ

आप हमेशा "इंडाना" घी का ही प्रयोग क्यों करें ?
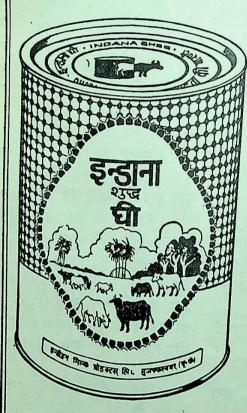
* यह उच्च कोटि के ताजा मक्खन से बनाया जाता हैं तथा उपलब्ध ब्रांडों में सर्वोत्तम हैं।
* यह वातानुकूलित फैक्ट्री में आधुनिकतम मशीनों से बनाया जाता हैं।
* इसके निर्माण में कहीं भी हाथों का स्पर्श नहीं होता हैं।

इन्डाना कण्डेन्स्ड मिल्क
इन्डाना क्रीमरी मक्खन
इन्डाना स्किम्ड मिल्क पाउडर

एवं

भारत भर में प्रसिद्ध 'इन्डाना' शुद्ध घी

फोरमोस्ट डेयरीज लिमिटेड

सहारनपुर (यू. पी.)

एवं

इंडोडन मिल्क प्रोडक्ट्स लि०

मुजफ्फर नगर (यू. पी.)

भी पायी है। उन की दुआ कभी खाली नहीं जायेगी । उन की रहमत जरूर होगी।"

"उन की रहमत से ही सब कुछ मिला है। आप का साथ मिला है फिर और क्या चाहिए ? अब तो बस एक ही ख्वाहिश है !"

"क्या ?"

"यही कि आप से पहले मैं चली जाऊँ । जिस दुनिया में आप नहीं, आप की बीन नहीं, वहाँ रह कर भी क्या करूँगी ?"

"चुन्ना !" बंदेअली की आँखों में आँसू भर आये ।

"अच्छा जाने दीजिये । चलिए हम लोग पूना चलें।"

पूना पहुँच कर सुबह-सुबह बापू साहब मेहेदड़े की सेवा में बंदेअली हाजिर हुए। पैनी नजर से चुन्ना को देखते हुए मेहेदड़े बोले, "नाम क्या है ?"

"जी, चुन्ना।"

घाव की जाँच करते हुए मेहेदड़े बोले, "बस इसे ही ठीक करना है न ?"

"जी अच्छा हो जायेगा न !"

"अच्छा होना न होता तो यहाँ क्यों आते !" वैद्यराज गर्व से बोले।

"आप की बड़ी मेहरबानी होगी।"

"मेहरबानी क्यों ? मैं मुफ्त इलाज नहीं करूँगा । रोग मैं ठीक कर दूंगा मगर रकम भी करारी लूंगा।"

"जो, कहेंगे दूंगा।"

"अच्छा, बहुत बड़े सेठ मालूम होते हो ।"

"जी नहीं, हाथ में बीन की कला है—अल्लाह की देन । मैं घर-घर बीन बजाऊँगा, भीख मागूंगा, मगर आप का छदाम बाकी नहीं रखूंगा ।"

"तो ठीक है । कल से इलाज शुरू हो जायेगा ।"

"आप का पैसा ?"

"बाद में बताऊँगा ।"

"कितने दिन लगेंगे ?"

"ज्यादा नहीं, तीन महीने । दवा देना वैद्य का काम है, अच्छा करना भगवान का । मन से उस को भी याद करते रहो।"

पूना में छोटा-सा मकान ले कर बंदेअली रहने लगे । इलाज शुरू हो गया । फायदा होने लगा । बंदेअली शेखसलाह की दरगाह पर रोज शाम जाने लगे। वैद्यराज की कृपा से एक दिन चुन्ना पूर्ण स्वस्थ हो गयी। बंदेअली खुशी से बदहवास हो उठे । वैद्यराज के पाँवों पर गिर पड़े ।

"अरे, अरे उठो, यह क्या करते हो ? कलाकार को इतना नहीं झुकना चाहिए," वैद्यराज बोले, "पाँव पकड़ने से फीस की रकम में कानी कौड़ी भी कम होने की नहीं ।"

"एक अर्ज है," बंदेअली हाथ जोड़ कर बोले, "रकम जितनी चाहें बढ़ा दें।"

"अच्छा ?" वैद्यराज कुछ सोचने लगे।

बंदेअली रकम सुनने के लिए उतावले थे। कुछ देर बाद वैद्यराज बोले, "सुनिये

बंदेअली ! वैद्य भी रसिया होते हैं। बल्कि और लोगों से कुछ ज्यादा ही । मैं भी कभी-कभी सितार छेड़ता हूँ मनोरंजन के लिए । चाहता हूँ कि किसी दिन आप मुझे जी भर कर अपनी बीन सुनायें। कब इस के लिए मुझे समय मिलेगा, कह नहीं सकता मगर इस के पहले आप पूना से जायेंगे नहीं । यही मेरी रकम है। जब भी खबर दूँ आप आ जाइयेगा ।"

अचरज से बंदेअली वैद्यराज मेहेदड़े का मुँह ताकते रहे । रकम की उस शर्त को उन्होंने खुशी से मान लिया और घर लौट आये । चुन्ना के स्वस्थ हो जाने से बंदेअली बहुत प्रसन्न थे । चुन्ना फिर गाने लगी, बंदेअली बीन बजाने लगे । शराब और संगीत के नशे में वे फिर खो गये । महफिलें अब नहीं होती थीं । बीन सुनने का हक अब सिर्फ वैद्यराज को था।

बंदेअली का यह नया रंग-ढंग देख कर मुराद परेशान हो उठा । घर की दरिद्रता बढ़ने लगी पर संगीत में खोये बंदेअली और चुन्ना इस से बेखबर थे । देनदारों को कर्ज की रकम के बदले में बर्तन और बहुमूल्य वस्तुएँ दी जाने लगीं । मुराद ऐसी दशा में उन्हें अकेला छोड़ कर जा भी नहीं सकता था । कर्ज के बढ़ने की चिंता सिर्फ मुराद को थी । गुरु की अनुमति न पाने से वह खुद महफिलों में बीन भी नहीं बजा सकता था । तकाजे वालों से बहाना करते-करते मुराद परेशान हो उठा था।

आखिर एक दिन बनिया ने उधार देने से इनकार कर दिया । घर में अन्न का एक भी दाना न था । मन में संताप और खाली थैलियाँ ले कर बनिया को कोसता हुआ मुराद घर लौटा तो भीतर से आ रही बीन और संगीत की आवाज सुन कर दरवाजे पर मंत्रमुग्ध-सा ठिठका रहा । फिर पाँव पटकता हुआ रसोईघर में गया । एक रीता कटोरा उठा कर उस ने चुन्ना और बंदेअली के बीच फर्श पर रख दिया । बंदेअली की तल्लीनता में बाधा पड़ी । वे क्रोध से चिल्ला पड़े, "यह क्या मजाक है ?"

"मजाक नहीं," मुराद साहस बटोर कर बोला, "देख रहा था कि बीन के स्वर कटोरे को अनाज से भरते हैं या नहीं !"

"मुराद !" बंदेअली कराह उठे।

"माफ कीजिये अब्बाजान ! आज तक मैं चुपचाप सब सहता रहा । मगर अब ताकत नहीं है । सारा घर खाली हो चुका है । महफिलें बंद हो गयी हैं । मुझे

आप इजाजत देते नहीं कि मैं ही दो-चार जगह बीन बजा कर पेट भर सकूँ !"

मुराद कहता जा रहा था । बंदेअली उस की बात को समझ रहे थे । ग्लानि से उन का सिर झुक गया । चुन्ना परेशान थी । बंदेअली ने सिर उठाया तो उन के चेहरे पर क्रोध की जगह अब व्यथा उभर गयी थी ।

"समझ गया बेटा ! ठीक कहते हो तुम । बूढ़ा हो गया न ! खयाल ही न रहा । तुम फिक्र मत करो । तुम्हें बीन बजा कर पैसा कमाने की जरूरत नहीं । बगैर पके तो असली आम भी बाजार में नहीं आते । मैं अभी जाता हूँ ।"

परिस्थिति किसी की समझ में आने से पहले ही बंदेअली बीन उठा कर बाहर निकल पड़े । मुराद और चुन्ना की आँखों में आँसू आ गये ।

बंदेअली जब लौटे तो धूप से उन का चेहरा तमतमाया हुआ था । उन्होंने आते ही बीन नीचे रखी और गट-गट करके दो गिलास शराब गले नीचे उतार दी । मुराद और चुन्ना भयभीत हो कर उन्हें देख रहे थे । बंदेअली मुराद को देख कर बोले, "मुँह क्या देख रहे हो ! जाओ घर में जितने बर्तन, थैले हैं ले कर नुक्कड़ वाले बनिया के यहाँ चले जाओ । जो-जो माँगोगे सब दे देगा ।"

मुराद को अचरज हुआ । साहस बटोर कर पूछा, "मगर आप ने उसे क्या दिया है?"

"क्या दिया है?" बंदेअली ने लाल आँखें उठा कर मुराद की ओर देखा और बोले, "क्या नहीं दिया यह पूछ ? अरे बेटा, उस की दूकान के सामने सड़क पर बैठ कर बीन बजायी मैं ने । शेखसलाह के दरगाह की हाजिरी आज उस बनिया की दूकान के सामने इस पेट की खातिर बजा आया । खूब मजा आया बेटा... खूब..." कहते-कहते बंदेअली के गाल पर आँसू की धार बह चली । मगर अब भी वे हँस रहे थे । मुराद घबरा कर उन के पैरों से लिपट गया । और रोने लगा ।

बंदेअली ने उसे थपथपा कर चुप किया । मुराद ने उन के चेहरे को देखा—वे अब भी हँस रहे थे और आँसू पोंछ रहे थे ।

"रो मत बेटा ! एक दिन तो यह सब होना ही था । अपनी जिंदगी में ठाठ क्या कम किये हैं ? एक किस्सा सुनाता हूँ, सुन । एक बार निजाम ने हमें बुलाया था । खास महफिल रची गयी थी । सामने निजाम बैठे थे । मैं बीन बजा रहा था ।

मुँह में राजसी गिरौली थी। बजाते-बजाते बीच में ही थूकने की जरूरत महसूस हुई। सामने निजाम का सोने का पीकदान रखा था। उसे ही मैं ने उठा लिया और थूक कर मुँह हलका कर लिया।"

उस घटना की याद आते ही बंदेअली खिलखिला कर हँस पड़े, "दरबार के नौकर-चाकर हमारे इस काम से घबरा उठे। मगर मुझे अपनी गलती महसूस नहीं हुई। महफिल खत्म हुई। निजाम ने पाँच हजार रुपये दे कर हमें विदा किया। विदा ले कर हम महल से बाहर निकले तो देखा कि निजाम का एक नौकर सोने का वही पीकदान लिये भागा आ रहा है। उस ने आ कर मुझे वह पीकदान दिया और बोला —खाँ साहब, यह पीकदान आप को भेंट दिया गया है।

"अँ..." मैं ने कहा।

'आला हजरत का पीकदान आप के पीक डालने से नापाक हो गया, इसलिए हुजूर ने इसे आप को ही भेंट करने को कहा है।'

"हम ने उस के हाथ से पीकदान ले लिया और बगल से जाती एक नौकरानी को दे कर कहा कि लो भई! इस में तुम्हारे आला हजरत थूकते हैं। तुम भी थूका करो इस में। उस के बाद ही बाहर आ कर आला हजरत को दिये पाँच हजार रुपये भी हम ने फकीरों में बाँट दिये।"

एक ठंडी साँस ले कर मुराद का कंधा थपथपा कर बंदेअली आगे बोले, "वह रौब, वह गरूर, सब चला गया बेटा! इस दुनिया में उसे बचाये रखना आसान नहीं।"

दिन बीतते गये। एक दिन काशी से एक पत्र आया, जिसे पढ़ कर मुराद की बाँछें खिल गयीं। नवाब शहाउद्दीन बंदेअली के बड़े भक्त थे। बंदेअली की बीन सुनने इंदौर, ग्वालियर पहुँच जाया करते थे। खुले हाथ धन देने वाला उन-जैसा और कोई नहीं था। वे गंभीर रूप से बीमार थे। बंदेअली की बीन सुनने की उन की उत्कट इच्छा थी। पत्र अल्लाह की दुआ की तरह आया था। घर की गरीबी से छुटकारा पाने के लिए यह सुनहरा मौका था। मुराद ने चुन्ना को पहले ही राजी कर लिया। फिर बंदेअली के पास गया। मगर बंदेअली ने सुनते ही अपनी मजबूरी बतायी, "तुम्हारा कहना ठीक है। मगर तुम नवाब साहब को हमारा आदाब भेज कर माफी माँग लो। मुझ से अब सफर नहीं हो पायेगा।"

"एक अर्ज है अब्बाजान!"

"बोलो!"

"नवाब साहब ने आप को बहुत प्यार दिया है। हमारे ऊपर उन का बहुत बड़ा अहसान है। गुण की कदर करने वाला ऐसा आदमी फिर आप को नहीं मिलेगा।"

"सही है बेटा। बड़ा दिलेर आदमी है वह। नवाब साहब की मेहरबानी

से हमारे कुछ दिन बहुत चैन में गुजरे हैं।"

"तो उन की आखिरी ख्वाहिश फिर आप क्यों ठुकरा रहे हैं ?"

"अ ऽ ?" बंदेअली चिंता में पड़ गये।

"आप जरूर जाइये। आप के न पहुँचने से नवाब साहब को दिली तकलीफ होगी।" चुन्ना बोली।

"तुम भी कहती हो ?"

बंदेअली को बात माननी ही पड़ी। काशी जाने का निश्चय कर लिया। खुशी से पागल हो कर मुराद ने जल्दी-जल्दी इंदौर, ग्वालियर, जयपुर, जोधपुर, अयोध्या सब जगह खत भेज दिये। हर जगह से महफिलें तय होने की खबर आ गयीं।

काशी में महफिल खूब जमी, पर दूसरे ही दिन चुन्ना की अस्वस्थता की सूचना आ गयी। मुराद घबरा उठा। सोचने लगा खत को देखते ही बंदेअली महफिल छोड़ कर वापस लौट पड़ेंगे और यहाँ से पूना लौट जाने का अर्थ होगा—फिर वही गरीबी! मुराद ने मन को कड़ा किया और बंदेअली को बिना बताये ही खत अपने पास रख लिया। बंदेअली अपने चहेतों से, रसिकों से कई वर्ष के बाद मिल रहे थे। उन्हें प्रसन्न देख कर बंदेअली का उत्साह बढ़ रहा था। महफिलों पर महफिलें हो रही थीं। सफर हो रहे थे। उदार हाथों से प्राप्त विदा की रकम दोनों हाथ से मुराद बटोर रहा था।

आखिरी महफिल में शामिल होने के लिए बंदेअली इंदौर आये। किसी सामंत ने अपने यहाँ उस का आयोजन किया था। दीवानखाने में लोग बैठे-बैठे बंदेअली की प्रतीक्षा कर रहे थे और अंदर के कमरे में बंदेअली बीन को मिला रहे थे कि अचानक पंचम का तार टूट गया। बंदेअली ने आँखें मींच लीं। आँसू बह चले। मुराद ने झट से दूसरा तार निकाला, मगर उसे रोक कर भर्रायी आवाज में बंदेअली बोले, "अब और तार की जरूरत नहीं रही, बेटा! उमर बीत गयी, साज मिलाते समय तार ने कभी धोखा नहीं दिया। मेरा जी घबरा रहा है। जाओ सामंत साहब की खिदमत में मेरी मजबूरी बता दो। अब आज बीन नहीं बजेगी। महफिल नहीं हो सकेगी।"

बंदेअली वहाँ से अपने डेरे पर लौट आये। मुराद उन के पैर पर गिर कर रोने लगा।

"अरे, उठ उठ! तार टूट गया इस में तेरा क्या कसूर ?"

"अब्बाजान मुझे माफ कीजिये, तब उठूंगा।"

"अच्छा उठ, बता क्या बात है?"

मुराद ने काँपते हाथों से चुन्ना की बीमारी का पुराना खत उन के हाथ में रख दिया और सारी बात सच-सच बता दी। बंदेअली ठगे-ठगे-से उस को देखते रहे। आँखों से अविरल आँसू बहने लगे।

"अब जाने दे। जो हुआ, हुआ।

चल हम पूना वापस चलें। तार तो टूट गया, स्वर नहीं खोया तो समझ सब कुछ मिल गया बेटा! चल!"

पहली गाड़ी से बंदेअली पूना की तरफ चल पड़े। बीन, स्वर, शराब, महफिलें—सब कुछ दिमाग से उड़ चुके थे। बदहवास-से वे गाड़ी में बैठे हुए पेड़ों की कतार को गुजरते हुए देखते रहे। हाथ फैला-फैला कर अल्लाह से चुन्ना के लिए दुआएँ माँगते रहे।

पूना आ गया। बंदेअली ताँगे से घर की तरफ जा रहे थे। घर के सामने ताँगा आ कर रुका। बंदेअली उतरे। घर का दरवाजा बंद था। बिलखते हुए बंदेअली दरवाजे की तरफ दौड़े। दरवाजे पर ताला लटक रहा था। बंदेअली चीख-चीख कर पुकार रहे थे, "चुन्नाऽ चुन्नाऽ!"

पड़ोस के लोग दौड़े-दौड़े आये। कोई आदमी चाबी ले कर आया। बंदेअली को घर के भीतर ले गये। घर बीरान था।

चुन्ना की मृत्यु एक महीने पूर्व हो चुकी थी!

मुराद दुःख से पागल हो उठा। उसे लगा कि उस ने ही यह सब किया है। वह फूट-फूट कर रोने लगा। बंदेअली दुःख को पी कर उसे समझाने लगे, "तेरा कोई कुसूर नहीं बेटा! उस की यही मरजी थी। तू कहता था न कि पैसे से सब कुछ मिल जाता है। अब बहुत पैसा है बेटा। लेकिन मेरी चुन्ना मुझे ला कर दे सकेगा बोल, बोल?"

"अब्बाऽ!"

"रो मत बेटा। जो होना था सो हो गया। मैं तुझ से नाराज नहीं हूँ। तुझे और चुन्ना को मैं ने अपना सब कुछ दे दिया। अब सुर तो चला गया, बोल बचे हैं। जा अब तू महफिलें कर, खूब नाम कमा। मगर बेटा, यह बात हमेशा याद रख कि पैसे के लिए अगर कभी तू ने बीन बजायी तो वह पैसा तुझे कभी रास नहीं आयेगा।"

चुन्ना चली गयी और बंदेअली का रहा-सहा मोह भी समाप्त हो चला। अब दिनरात वे शराब में डूबे रहने लगे। चुन्ना की मजार और शेखसलाह की दरगाह पर वक्त-बेवक्त बीन बजाने लगे।

पूना के संगीत-रसिया लोग खाँ साहब की यह अवस्था देख कर बहुत दुःखी हो उठे मगर बंदेअली अब किसी की सुनते नहीं थे।

शरद पूर्णिमा का दिन था। जादूभरी चाँदनी फैली थी। पूना के संगीत-रसिकों ने संगीत समारोह का आयोजन किया मगर उस में रस नहीं आया। आधे लोग बीच से ही उठ कर चले गये। सहसा उन्हें बंदेअली का स्मरण हो आया। उन की बीन सुनने की तीव्रता से इच्छा हुई। बंदेअली के घर में ताला पड़ा था। मगर व निराश नहीं हुए। उन्हें तलाश करते हुए वे चुन्ना की मजार के पास पहुँचे।

बंदेअली वहाँ भी नहीं थे। शेखसलाह की दरगाह की तरफ अपने आप ही सब के कदम मुड़ गये।

नदी के किनारे खड़ी शेखसलाह की दरगाह चाँदनी में डूबी थी। आधीरात की हल्की सर्दी देह में झुरझुरी पैदा कर रही थी। रसिकों का अंदाज सही उतरा। दरगाह की सीढ़ियों पर बीन को छाती से लिपटाये हुए बंदेअली शराब और नींद में बेहोश पड़े थे। रसिकों ने उन्हें जगाया। वे उठ बैठे। इतने लोगों को एकसाथ अपने पास आया देख कर उन्हें मन में कुछ खुशी हुई, "क्या हुकुम है?"

"तबीयत कैसी है खाँ साहब?"

"सब ठीक ही है भाई। अल्लाह की दुआ है..."

"खाँ साहब आज शरद पूर्णिमा है। संगीत-समारोह में कुछ रंग जमा नहीं।"

"अपनी ख्वाहिश से महफिल जमा नहीं करती भाई।"

"वही तो, हम लोग निराश हो कर घर जा रहे थे कि आप का स्मरण हो आया।"

"इस बंदे को याद किया! तकदीर हमारी!"

"हम लोग अभी आप के घर गये थे। वहाँ ताला बंद था। फिर चुन्नाबाई की मजार पर आप को खोजा, आप वहाँ भी नहीं थे। तब सोचा भूला पीर तो मस्जिद में ही मिलता है। इस उम्मीद से सीधे यहाँ आ गये।"

सब लोग हँस पड़े। बंदेअली ने गंभीर हो पूछा, "क्यों भाई?"

"आज हम लोग आप की बीन सुनने आये हैं।"

"नामुमकिन है। बंदेअली की बीन तो दफन हो चुकी।"

"मजाक नहीं खाँ साहब," एक व्यक्ति बीन की तरफ अँगुली दिखा कर बोला, "यह क्या है फिर?"

बीन हाथ में उठा कर बंदेअली बोले, "यह? यह तो सिर्फ साज है। सुर कहाँ है? सुर तो चला गया..."

सब हठ करने लगे। एक ने उन की कमजोरी का फायदा उठाना चाहा।

"खाँ साहब, आप को चुन्नाबाई की कसम! हमारी बात आज आप को माननी ही होगी। बिना बीन सुने आज हम नहीं जायेंगे।"

बंदेअली सिहर उठे। स्मृति से व्याकुल और कातर हो कर बोले, "उसे क्यों कसम में समेटते हो भई! वह तो गयी। चलो, बीन ही सुननी है न! यहाँ से चलो। यह दरगाह है। यहाँ तो सिर्फ अल्लाह की खिदमत हो सकती है इंसान की नहीं।"

सारे लोग खुशी से फूले नहीं समाये। बंदेअली के पीछे-पीछे बाहर खुली चाँदनी में निकल आये। बरगद की छाया छोड़ कर और आगे बढ़े। पास ही नदी का पानी चाँदनी के साथ मिल कर रूपहला हो उठा था। पृष्ठभूमि में शेखसलाह की

सफेद दरगाह वातावरण को रहस्यमय बना रही थी। नीम का एक छोटा-सा पेड़ हवा में झूम रहा था। बंदेअली ने वहाँ पर सब को बैठने का इशारा किया। आनंदित हो सब बैठ गये। बंदेअली हाथ में बीन ले कर खड़े रहे। बोले, "सचमुच आप सब मेरी बीन सुनना चाहते हैं?"

"हाँ, हाँ, खाँ साहब!"

"तो फिर सुनिये," कहते हुए बंदेअली ने बीन को ऊपर उठाया और पूरी ताकत से जमीन पर पटक दिया! फूटते बीन के तूंबों से भीषण आवाज के साथ-साथ मिले हुए तारों की अलौकिक झंकार अंतिम बार झंकृत हो कर वातावरण में खो गयी। सहमे हुए संगीत-रसिकों को खंडित बीन दिखा कर बंदेअली बोले, "सुन ली बीन! जानते नहीं बंदेअली का स्वर खो चुका। अब तो खाली बंदेअली रह गया है। खोखला, बेसुरा बंदेअली! जी चाहे तो इस फूटी हुई बीन को यहीं दफना देना। यही मेरा घर है।" सब विमूढ़-से उन्हें देखते रहे।

बंदेअली अपनी बात कह कर तुरंत मुड़े और निरासक्त हो वहाँ से चल दिये। चलते-चलते कुछ बोलते रहे, हाथ हिलाते रहे। शेखसलाह की दरगाह पर पहुँचे। डगमगाते हुए पैरों से वे दरगाह की सीढ़ियाँ चढ़ कर भीतर ओझल हो गये।

पूना में शनिवार वाड़े के पास से नये पुल की तरफ चलिये। पुल के पहले मेहराब के पास रुकिये और दाहिने हाथ की तरफ देखिये—एक छोटी-सी मजार दिखायी देगी। नजदीक से देखिये तो मजार पर बंदेअली का नाम भी खुदा हुआ आप को दिखायी देगा। नीम के उस वृक्ष में अब भी जब बहार आती है वह उस छोटी मजार पर अपने सारे नन्हे फूल अर्पण कर देता है। शेखसलाह की दरगाह से उठती हुई अगरबत्ती की सुगंध उस मजार के चारों ओर ठिठक-ठिठक कर वलय बनाती है। पूर्णिमा की किसी रात को जब कभी आप अकेले उस स्थान पर जायें तो बीन का स्वर आज भी आप को सुनायी देगा। भाग्यशाली हुए तो...

पृथ्वी एकसाथ तीन विभिन्न दिशाओं में घूमती है। अपनी अक्ष पर, लगभग ५०० गज प्रति सेकंड की गति से। सूर्य के चारों ओर, १९ मील प्रति सेकंड की गति से। सूर्य भी स्थिर नहीं है। इसलिए सूर्य के साथ की ही दिशा में पृथ्वी और चलती है। सूर्य लाइरा तारामंडल के स्थिर वेगा तारा की तरफ चलता है। पृथ्वी सूर्य का अनुगमन करती है। पृथ्वी की यह गति १२ मील प्रति सेकंड है। ये तीनों गतियाँ एक साथ चलती हैं।

बहता हुआ पानी

उपन्यासकार— राजेन्द्र अवस्थी ; प्रकाशक— नेशनल पब्लिशिंग हाउस, २३, दरियागंज, दिल्ली-६; पृष्ठ— १३०; मूल्य—४.५०

'बहता हुआ पानी' राजेन्द्र अवस्थी का पाँचवाँ उपन्यास है। इसे उस व्यक्ति की नवीनतम देन कहा जा सकता है जो कभी कवि था। उपन्यास में अनेक स्थलों पर विभिन्न चरित्रों के चिंतनों, संवादों और कार्य-कलापों में लेखक का कवि उभरता है और चरित्र विशेष के लिए पाठकों की संवेदना जगाने में समर्थ है। उन्होंने विलियम फॉकनर की तरह अपने उपन्यासों में काव्योचित संवेदनशीलता का पूरा-पूरा लाभ उठाने का प्रयास किया है।

प्रस्तुत कृति एक चित्रकार की कहानी है जो निगार, वीना और जरीना नाम की तीन विभिन्न प्रवृत्तियों की लड़कियों के त्रिकोण में उसी प्रकार आचरण करता नजर आता है जिस के लिए सामान्य रूप से 'कलाकारों' की प्रशंसा की जाती है और आलोचना भी। लड़कियों के प्रति उस की प्यास 'चिरंतन'-सी है किंतु 'सेकंड थॉट' में उस का कलाकार उन में शरीर के अलावा आत्मिक एवं चारित्रिक सौंदर्य की खोज करने लगता है। उस में एक कलाकार की भीरुता भी है और निहंगपन भी।

इस उपन्यास के नारी पात्र, लेखक के ही शब्दों में, 'जिंदगी चाहती हैं। अपनी हरकतों द्वारा पुरुष को अपनी ओर खींचना चाहती हैं, जैसे हर लड़की एक बंदरगाह है और हर पुरुष एक भटकता हुआ जहाज'।

नायक 'जतीन' एक भटकता हुआ जहाज हो सकता है किंतु वह एक ऐसा भटकता हुआ जहाज है जिस के पास उस का बंदरगाह स्वयं चल कर आया है।

उपन्यास का समूचा परिवेश बंबई होते हुए भी, वह अन्य कोई महानगर भी हो सकता है। सारे पात्र महानगर की मनःस्थितियों का सही मायने में प्रतिनिधित्व करते हैं और इस दृष्टि से यह उपन्यास आधुनिक सभ्यता और महानगरीय जीवन का एक ज्वलंत चित्र है।

भाषा में प्रवाह है। छोटे-छोटे वाक्यों ने कहीं-कहीं वही सौंदर्य और आकर्षण पैदा कर दिया है जो शांत समुद्र की छोटी-छोटी लहरों में होता है।

यह एक सरस एवं सशक्त कृति है। लेखक ने एक नयी शैली अपनायी है और नयी आधुनिकता-बोध के कथानक को माध्यम बनाया है।

—वीरेन्द्र पाण्डेय,
एच.एस. ६, कैलाश मार्केट, नयी दिल्ली-४८

सूरजमुखी अँधेरे के

लेखिका—कृष्णा सोबती; प्रकाशक—राजकमल प्रकाशन, दरियागंज, दिल्ली—६; पृष्ठ—१२६; मूल्य—५.५०

बहुत-सी रचनाओं को आज की समस्याओं, बौद्धिक-बिंदुओं और प्रयोग के नयेपन के आधार पर श्रेष्ठ सिद्ध किया जा सकता है, किंतु मैं किसी भी अच्छी रचना से यह अपेक्षा रखता हूँ कि वह अपनी समग्रता के साथ-साथ अपने-आप हमारे भीतर उतरे। प्रभाव की समर्थता से कटी हुई रचनाएँ बौद्धिक संदर्भ में तर्क-वितर्क का सहारा ले कर अपनी विशिष्ट पहचान करना चाहती हैं। कृष्णा सोबती एक ऐसी लेखिका हैं जिन की रचनाएँ सीधे हमारे भीतर उतरती हैं। रचनाएँ अपनी पहचान अपने प्रभाव से ही कराना चाहती है, किसी वाह्य साधन से नहीं। किंतु प्रस्तुत पुस्तक पढ़ कर मैं प्रभावित नहीं हो सका। यथार्थ की जिस क्रूरता, भयावहता और अकुलाहट को उभारने की महत्त्वाकांक्षा इस कृति से रही है और उपलब्धि के जो दावे प्रकाशकीय वक्तव्य में किये गये हैं, उन की अनुभूति मुझे नहीं हो सकी।

इस उपन्यास में रत्ती की व्यथा-कथा है। कथा से संकेतित है कि बचपन में ही उस के साथ बलात्कार कर दिया गया था। इस बलात्कार के कारण उस के साथी सहपाठी चिढ़ा-चिढ़ा कर अपमानित करते हैं और वह सब को पीटती रहती है। धीरे-धीरे वह उत्तेजनाहीन हो कर दैहिक सुख-भोग के प्रति जड़ हो जाती है।

उपन्यास का पहला खंड बहुत स्थिर है। रत्ती की नियति की पहचान के बिना ही उस से इस स्थिर खंड का जुड़ जाना पाठक के मन में कोई प्रतिक्रिया ही नहीं जगाता। आगे चल कर भी यह खंड पूरी कथा के साथ अपरिहार्य प्रासंगिकता सिद्ध कर पाता हो, ऐसा नहीं लगता। 'सरतों' का सारा प्रारंभिक अंश ही स्त्री

के प्रति हमें उत्सुक करता है। इस में संदेह नहीं कि कुछ प्रसंगों को चुन कर लेखिका ने नारी की नियति और नियति से उस की लड़ाई तथा बेबसी का अहसास जगा दिया है। उस के बाद कथा जैसे एक चट्टान से दूसरी चट्टान पर कूदती चलती है। इसी क्रम में वह हरेक पुरुषों के बीच से जल्दी-जल्दी गुजरी है, जिस की कोई आवश्यकता न थी; क्योंकि अपने उद्देश्य में सारे ही एकमुखी हैं।

तीसरा खंड 'फुलफिलमेंट' का है। यह इतना रूमानी हो उठा है कि अप्रासंगिक लगता है।

प्रस्तुत उपन्यास में भाषा की काव्यात्मकता, सांकेतिकता एवं व्यंजकता बड़े कलात्मक ढंग से उभर कर आयी हैं। किंतु रूमानी आभा के कारण उतनी प्रभावशाली नहीं हो पाती जितनी उस से अपेक्षा हो सकती है।

—डॉ. रामदरश मिश्र,
ई ४/११ माडल टाउन, दिल्ली-९

लौ पर रखी हथेली

कहानीकार — रामकुमार भ्रमर,
प्रकाशक—नेशनल पब्लिशिंग हाउस, २३, दरियागंज, दिल्ली-६; पृष्ठ—१५२; मूल्य—६.००

लेखक का यह चौथा कहानी-संग्रह है। आकर्षक शैली के कारण पात्र बड़े सहज रूप से उभर कर सामने आते हैं। घटनाएँ सजीव लगती हैं। अपनी सूक्ष्म दृष्टि के कारण ये कहानियाँ रोचक ही नहीं, मार्मिक भी हैं। नारी पात्रों के चित्रण में भ्रमर काफी सफल लगते हैं।

डी. एच. लॉरेंस ने कहा था कि समाज में नारी-पुरुष संबंध तीन प्रकार से वर्णित होते हैं। यदि उन में से एक पक्ष अधिक सफल रहा, यानी शिकारी-शिकार का संबंध रहा तो पाठक को उस में कोई रस नहीं आयेगा, क्योंकि उस का परिणाम पूर्व परिचित होता है। त्याग, बलिदान आदि की प्रतीक नारी मूर्तियाँ शरच्चंद्र में पढ़ते-पढ़ते पाठक अघा गये हैं। यदि दोनों के अहं इतने प्रबल हों कि दोनों के बीच में कोई संवाद ही पैदा न हो तो फिर वे पात्र बौद्धिक लगने लगते हैं। कृत्रिमता के कारण वे आकर्षक नहीं रहते। जैनेंद्र, अज्ञेय आदि में ऐसी नारियों की (और पुरुष-पात्रों की भी) कमी नहीं। सच्चा कहानी का आनंद तब है जब दोनों में सही मानों में द्वंद्व हो। भ्रमर की कहानियों में यह सब उभर कर सामने आती है।

पंद्रह कहानियों में निश्चय ही पाँच ऐसी हैं जो अविस्मरणीय हैं। 'बर्फ में सुलगती आग', 'लौ पर रखी हथेली', 'किसी का मरना', 'अपने घर का पराया फासला', 'गलत गली', मुझे बहुत अच्छी लगीं।

इन कहानियों में लेखक की ईमानदारी, साधारण-से-साधारण विषय को छू कर उसे विशिष्ट बनाने की कुशलता और सब से बड़ी बात—अपने लेखन के

प्रति सचेतनता स्पष्ट है। लेखक न तो नैतिक आदर्श थोपने, या झूठे 'वादों' के मुखौटे पहन कर अ-संदर्भ में उलझने की कोशिश करता है, न उस के लिए एक चक्करदार भाषा या फूहड़ शब्दावली का सहारा लेता है। वह जीवन की विकृति से कतराता नहीं। उस की कृतियाँ जीवन की 'आकृति' का भी ध्यान रखती हैं। इसलिए उस से आशाएँ बँधती हैं।

—डॉ. प्रभाकर माचवे, सचिव, साहित्य अकादेमी, रवींद्रभवन, नयी दिल्ली

गुड़ियों के देश में

(जापान यात्रा संस्मरण)

लेखक—प्रमोदचन्द्र शुक्ल; प्रकाशक—शब्दकार, २२०३, गली डकोतान, तुर्कमान गेट, दिल्ली-६; पृष्ठ—१३२; मूल्य—५.७०

'गुड़ियों के देश में' शीर्षक से भ्रम नहीं होना चाहिए। जापान ने जहाँ औद्योगिक क्षेत्र में इतनी उन्नति की है वहाँ उस ने गुड़िया बनाने में भी कमाल किया है।

लेखक ने भारत से बाहर पैर रखते ही, (जापान-जैसे उन्नत देश में भी) यह परख लिया कि अँगरेजी के सहारे विश्व के अनेक देशों में यात्रा करना बहुत कठिन है। जहाँ अपनी भाषा से जापानी बहुत प्रेम करते हैं वहाँ उन का राष्ट्रीय चरित्र, उन का परिश्रम और उन की परंपराएँ आधुनिकता तथा प्रगति के सभी सुख-साधनों के बावजूद सुरक्षित हैं।

पुस्तक में जन-जीवन से परिचय कराया गया है और जापानियों की अनुशासनप्रियता का भी। लेखक जापानी नारियों के सौंदर्य के प्रशंसक हैं। वे लिखते हैं, "जापानी स्त्रियाँ जब सुंदर फूलों से सजे किमोनो पहन कर निकलती हैं तो ऐसा जान पड़ता है कि फूलों से सजी वन देवियाँ हैं ..."

जापान की आय का बड़ा साधन है पर्यटन। यह क्षेत्र बहुत ही व्यवस्थित है। लेखक ने सामूहिक सैर की सहायिका (गाइड) का वर्णन किया तो मुझे भी अपना अनुभव याद आ गया। गाइड बहुत ही कुशल और मधुरभाषिणी होती है।

जापानियों की नैतिकता की चर्चा करते हुए लेखक ने लिखा है—"वहाँ भोग और नैतिकता के दायरे अलग-अलग हैं। नैतिकता का अर्थ सच्चरित्रता है जिस में शिष्टता, डट कर अपना कर्तव्य निभाना, रोज के लेन-देन में ईमानदारी बरतना, और अपने देश के प्रति प्रेम और उसे ऊपर उठाने की लालसा बहुत आवश्यक गुण हैं ..."

छपाई अच्छी है, प्रूफ की भूल अपवाद के रूप में एक-आध जगह ही है—शायद बुरी नजर से बचाने के लिए।

—यतीन्द्र भटनागर, विशेष प्रतिनिधि, दैनिक हिन्दुस्तान, नयी दिल्ली

दी हिन्दुस्तान टाइम्स लिमिटेड की ओर से रामनन्दन सिन्हा द्वारा हिन्दुस्तान टाइम्स प्रेस, नयी दिल्ली में मुद्रित तथा प्रकाशित

श्रीमानजी